প্রণবকুমার বন্দ্যোপাধ্যায়



इस उपन्यास के सारे चरित्र और घटनाएं काल्पनिक हैं
किसी भी प्रकार का सादृश्य आकस्मिक ही समझा जाए।

Khabar (Awarded Novel) : Pranav Kumar Vandyopadhyaya

अरविन्द की पुण्य स्मृति में ......

रुहेलों का देश

खपर

ढेलों का देश

•

उत्तर-प्रदेश की बरेली का
एक मुहल्ला है
बिहारीपुर । यहां के बाशिंदों में
लुक्का पहलवान, नैनामेम,
मर्गीरज, नारैंगी वकील,
क्रिश्चियन, कुन्ती जैसे सामान्य लोगों के साथ है
विनायक—श्रमिक संघ का
आदर्शवादी नेता और
होम्योपैथ ।
इस बिहारीपुर मुहल्ले
की घटनाओं को केन्द्र में रखकर
कथाकार प्रणवकुमार ने
मानवीय जिजीविषा की जो गाथा
प्रस्तुत की है
सम्पूर्ण भारतीय कथा-साहित्य
के लिए
वह एक अमूल्य धरोहर है ।

गली के नुक्कड़ पर भगीरथ की चाय की दुकान है. न्यू जनता होटल. बोर्ड पर 'होटल' का नाम कभी लिखा गया था. अब यह धूप और बरसात के प्रकोप की कहानी कह रहा है. जंग के नीचे सारे अक्षर ढक गए हैं. अब न तो होटल के नाम का पता चलता है, न उसके लाल-नीले रंगों के बारे में ही कोई धारणा बनती है. न बने धारणा, इससे इस इलाके में रहने वालों को कोई दिक़्क़त नहीं होती. आख़िर यह कोई अय्यूब ख़ां का चौराहा नहीं है. होटल-रेस्ट्रां के लिए एक बढ़िया नाम की ज़रूरत यहां नहीं पड़ती. इस बिहारीपुर में नाम का फ़िक्र कोई नहीं करता. नाम चाहे विलायती-अमरीकी भी क्यों न हो, लोग कहेंगे 'भगीरथ का होटल' ही.

अब 'होटल' के मानचित्र के बारे में संक्षेप में कुछ.

घुसते ही बाईं तरफ़ भट्ठी-सा चूल्हा. चूल्हे के चारों तरफ मर्तबानों में बिस्कुट, डबल रोटी, दस पैसे वाले केक वग़ैरह. अन्दर दोनों तरफ की दीवारों से सटी दो मेज़ें हैं. कभी इन पर काली पालिश थी. ऐसा सोचने के लिए दिमाग पर थोड़ा दबाव डालना पड़ेगा. एक मेज़ के चारों पाए साबुत हैं लेकिन दूसरी के कोने के एक पाए की जगह एक लकड़ी की पट्टी डटी हुई है. सातेक अलग-अलग आकारों की कुर्सियां भी हैं लेकिन कोई ज़रूरी नहीं है लोग सिर्फ़ इन्हीं पर बैठें. भीड़ का वक़्त होता है तो लोग कोकाकोला के लाल संदूक से लेकर मेज़ के कोनों तक कहीं भी बैठ जाते हैं. अन्दर पंचम जार्ज के वक़्त का एक रेडियो भी है. इसका काम तब तक बजते है जब तक कि रेडियो में 'जय हिन्द' कहकर दिन-भर के कार्यक्रमों की समाप्ति की सूचना नहीं दी जाती. इसके अलावा दीवारों पर पिछले ग्यारह सालों के कैलेण्डर, फ़िल्मी पोस्टर, साबुन और चाय के विज्ञापन, बापू के तीन बन्दर और भारत माता की तस्वीरें फैली हुई मिल जाएंगी.

सुबह यहां हिन्दी का एक अख़बार भी आता है. लेकिन शाम होने तक या तो उसकी मौजूदगी का पता ही नहीं चलता या उसके फ़िल्मी विज्ञापनों के हिस्से अलग कर दिए जाते हैं. इसमें से कुछ इस 'होटल' की दीवारों पर चिपके हुए मिल जाएंगे लेकिन ज़्यादातर लोगों के साथ बाहर निकल जाते हैं.

राजनीति की बातें यहां होती ही न हों, ऐसा तो और नहीं है लेकिन लोगों की दिलचस्पी दूसरी ख़बरों में ही ज़्यादा रहती. इन ख़बरों में, मुरारी डॉक्टर की पचासेक साल तक क्वांरे रहने के बाद शादी से लेकर सरजू ड्राईवर की बीवी उर्फ़ डलेवरनी की मौत या बिंद्रानिवास तिवारी की लड़की जानकी के घर छोड़कर मलूकपुर के ठर्रे के भट्ठी वाले मूलचन्द की घरवाली बनने तक की हर कहानी रहती.

कहानियां कहां से शुरू हुईं और कहां तक चल सकती हैं, इसकी परवाह किसी को नहीं है. शर्त सिर्फ़ एक है—कहानियों में रस का होना. इस सिद्धान्त की यह शर्त अगर पूरी हुई तो क्यों न कोई पच्चीसवीं बार सुना रहा हो या बीच में से ही शुरू कर रहा हो, कोई आपत्ति नहीं करता.

कुछेक पंक्तियां पहले बिद्यानिवास तिवारी का जिक्र हुआ है. वह चुंगी के प्राइमरी स्कूल में संस्कृत और हिसाब पढ़ाते और बाक़ी समय यजमानी का धंधा करते. ज्योतिषशास्त्र का रिवाज उनकी वंश-परम्परा का है. लिहाज़ा नवजातक की जनमपत्री बनाना, हाथ की रेखाएं देखकर लोगों को भविष्य के बारे में बताना उनका मूल काम न सही, कामों की शाखाएं ज़रूर हैं. संक्षेप में आचार-विचार में वह शुरू से ही संयत हैं, पूरे बरेली शहर में काफी लोग उन्हें जानते हैं लेकिन कोई जानी दुश्मन भी कभी कोई ऐसा वक़्त नहीं बता पाएगा, जब उनके क़दम डगमगाए हों. सुबह-शाम नित्य नियमित पूजा-पाठ करना, पाठ किए बिना अन्न-जल न ग्रहण करना, कुछ ऐसी क्रियाएं हैं, जो इस पूरे बिहारीपुर, मलूकपुर मुहल्लों के इलाकों में उन्हें एक पवित्र और निष्कलंक व्यक्ति के रूप में साबित करतीं.

आज से पहले ऐसा सोचा था किसी ने कि ऐसा सात्त्विक पुरुष भी कभी भगीरथ के 'होटल' की मजलिस में चर्चा का सिलसिला बनेगा ? जानकी फ़रार हो गई. बिद्यानिवास की तीसरी संतान है यह जानकी. शुरू में तीन लड़कियां फिर चार लड़के. पहली दो लड़कियों की शादी हो चुकी है. आख़री बोझ थी यह जानकी. बिद्यानिवास इसके लिए चिंतित तो थे लेकिन कभी अपना फ़िक्र लोगों के सामने ज़ाहिर नहीं किया. कोई कुछ कहता तो मुस्कुरा कर यही उत्तर देते—सब समय की माया है, बन्धु. सुनने में आश्चर्य होता है कि इन्होंने कभी भी किसी के सामने ईश्वर की दुहाई नहीं दी. जहां 'ईश्वर' जैसा कोई शब्द आना चाहिए, वहां वह पूरी निश्चितता से 'समय' कह जाते.

कहते हैं, एक बार मलूकपुर की मछलीगली के साथ की लकड़ी की टाल के पीछे किसीने जानकी को मूलचन्द के साथ ठी ! ठी ! ही ! ही ! करते देख लिया था. पान के रंग से उसके होंठ लाल थे और मूलचन्द की आंखों में लाल डोरे झूल रहे थे. मूलचन्द की उंगलियों में बीड़ी फंसी थी लेकिन वह फंसी की फंसी रह गई थी. आख़िर में शायद वह बुझ सी गई थी लेकिन मूलचन्द ने उसे दुबारा जलाया नहीं था.

यह सब देखा था बिरजू ने. पंडित ने नाम दिया था वृजेन्द्र. लेकिन वह तो एक पुरानी कथा हुई. टूटते-मरोड़ते अब यह नाम बिरजू तक आकर ठहरा. दर्जा छह तक पढ़ लिया था. यह तालीम इस बिहारीपुर मुहल्ले के हिसाब से कम भी नहीं है. और अगर कम भी होती तो उसकी फ़िक्र कम-से-कम बिरजू के दिमाग को नहीं होती. बिद्यानिवास पंडित के स्कूल में पढ़ा था, लिहाज़ा उनका अब भी थोड़ा लिहाज़ करता है, लेकिन जब तक स्कूल में था, हर मास्टर को, पीछे से मुर्गे की बांग देकर, धूल के बराबर समझता रहा है. इसके अलावा उसकी ख़ासी-अच्छी टोली थी. टोली के लोगों ने हर मास्टर का एक-एक नाम और गढ़ लिया था. बिद्यानिवास तिवारी का नाम था 'पोंगा पंडित'. इसके सूत्र की जानकारी के लिए कोई इतिहास नहीं छानना पड़ेगा. शोध की ज़रूरत नहीं होगी. बिद्यानिवास मस्तक पर चंदन का टीका लगाते हैं. बात-बात में पुराणों के उद्धरण सुनाते हैं, सुबह-शाम पूजा-पाठ करते हैं—ये उपकरण ऐसे एक नाम की सृष्टि के लिए कम नहीं हैं. लेकिन ये सब बातें बिरजू का अतीत हैं. अब एक परचूनी की दूकान का मालिक बन बैठा वह. बिहारीपुर ढाल पर दूकान है, लिहाज़ा सुबह से लेकर शाम तक, जब तक कि दूकान के पलड़े बन्द न हो जाएं, सांस लेने की

भी फ़ुर्सत नहीं रहती. कोई अगर इतनी मेहनत करे, पैसा कमाए, तो किस लिए ? घर पर जोरू नहीं है जो और कहीं न हुआ तो उसी पर सब कुछ खर्च करो. चारेक साल पहले बच्चा जनते वक़्त बीवी मर गई थी. न बच्चा ही ज़िन्दा निकल पाया न बीवी ही सौरी से बाहर आ पाई वहां से तो उसकी अर्थी निकली थी. तब से घर खाली है. तेरह भाई-बहनों में एक बिरजू ही अब तक जिन्दा है. अट्ठाईस बरस का पूरा जवान भी हो गया अब. लेकिन उसके भाई-बहनों में से किसी ने भी पांच साल पार नहीं किए थे. मां-बाप की आखरी संतान है बिरजू. मां के बारे में उसे याद तो कुछ भी नहीं आता लेकिन लोग कहते हैं, वह दो बरस का था, तब मां तपेदिक की बीमारी से गुजर गई. फ़िलहाल तस्वीर यह है कि घर में सिर्फ़ दो प्राणी हैं—एक वह दूसरा सत्तर बरस का बाप. दूसरा प्राणी चारपाई पर पड़ा-पड़ा खांसता रहता है और उसके दहलीज़ पर पांव रखते ही कातर स्वर मे अनुनय शुरू कर देता—बिरजू बेटा, शादी करले नाय तो तेरे बाद घर में भूत-परेत नाचेंगे. ये बातें इतनी बार कही गई हैं कि सुनते-सुनते अब कान पक गए हैं. पहले वह कभी-कभी ऊबकर जवाब भी दे दिया करता था, लेकिन अब खामोश रहता है. जैसे अगर इसी वक्त कहदो कि तुम्हें बिल्कुल अभी मर जाना है, तो भी कुछ फ़र्क नहीं पड़ने का. रसोई में मिसरानी का बनाया हुआ खाना रखा होता है. वह हाथ-पांव धो लेता, चेहरे पर पानी के झटके मारता फिर बरामदे में बैठकर रोटी के कौर तोड़ने लगता.

इस कथा का लेखक अभी थोड़ी देर पहले दूसरी कहानी तक रुका था. जो शख्स इतना पैसा कमाए वह खर्च करे भी तो कैसे करे ? ऐसे में अगर कोई आलमगिरी गंज की गलियों में घूमे, आखिर में किसी का बुलावा सुनकर खुले हुए दरवाज़े से सीधे अन्दर को घुस जाए तो इसमें क्या बुरा ? होगा कुछ भला या बुरा लेकिन ऐसी उल्टी-सीधी बातों में मगज़पच्ची करने का मिजाज बिरजू का नहीं होता कभी. बिरजू को सिर्फ़ एक बात आती है समझ में. बिना दारू के कोई जिन्दा रह लेगा लेकिन बगैर औरत के नहीं औरत को तो वैसे वही समझ सकता है, जिसके अन्दर समझने की ताकत भी हो. और फिर कोई एकबार समझ गया तो इसके बिना जीना बिल्कुल ना-मुमकिन होता है कोई जरूरी नहीं है कि रात घर ही पर गुजरे. कहीं भी गुजर सकती है—किसी यार-दोस्त के यहां या आलमगिरी गंज की तंग गलियों में नजदीक ही एक कच्ची की भट्टी भी है. वहां महीने का हिसाब चलता है. वैसे महीने के हिसाब का कोई कायदा तो नहीं है लेकिन कोई मिजाजी ग्राहक होता है तो ठेकेदार इन्कार नहीं करता. लेकिन यह सब अकेले आज तक कभी नहीं हुआ साथ चार यार-दोस्त भी होते है और जेब सिर्फ़ एक बिरजू की इसके बावजूद उसे कभी भी यह महसूस नहीं हुआ कि खामख्वाह पैसे बर्बाद हो रहे हैं.

एक बार बिरजू की आंख लड़ गई थी जानकी से. मूल कथा से इस कहानी का एक रिश्ता है.

बरेली से बदायूं की तरफ छोटी लाईन की जो गाड़ियां जाती है, उनपर सवार होने से, जंक्शन स्टेशन के बाद एक छोटी-सी नदी पड़ेगी नाम है रामगंगा. पूरी कहानी तो खैर किसी को नहीं मालूम. लेकिन लोग कहते यही हैं कि रामायण के रामचन्द्र ने यहां सीता के साथ एक बार स्नान किया था रामायण में इसका कोई ज़िक्र तो नहीं है लेकिन बरेली के बड़े-बूढ़ों का यकीन यही है. हर साल माघ सक्रान्ति में वहां मेला लगता है जोरों का जाड़ा रहता है तब. लेकिन लोग अंधेरा छटने से पहले ही वहां पहुंच जाते हैं. गंगामैया में डुबकी लगाकर दांत किटकिटाते और प्रार्थना करते है कि मरने के बाद वे सीधे स्वर्ग पहुंचें. उनकी प्रार्थना पूरी होती है या नहीं, यह भले

ही कोई न बता पाए लेकिन वे मेले में इस तरह विचरण करते रहते हैं, गोया यह नंदनवन हो.

मेले में मिठाइयां मिलतीं. यानी रेत के उत्कृष्ट परिमाण के साथ बेसन के लड्डू, कलाकंद, पेड़े वगैरह, बच्चों के लिए लकड़ी और मिट्टी के दस पैसे से लेकर पचास पैसे तक की कीमत के खिलौने मिलते, औरतों के लिए चूड़ी, लाल बिंदिया मिलती. इनके अलावा बाकी जो चीजें मिलती हैं उनका विवरण दिया जाए तो बनिये के पास जैसा बहीखाता रहता है, वैसा एक पूरा भर जाएगा.

जानकी मेले में चहक-सी रही थी. साथ थी सरजू ड्राईवर की बीवी—डलेवरनी. बिद्दानिवास पुजारी ब्राह्मण हैं लेकिन मेले में, भीड़ में जाना पसंद नहीं करते. वह खुद तो नहीं गए लेकिन डलेवरनी के साथ जानकी को जाने से रोका नहीं. मेले के ठीक पन्द्रह दिन बाद डलेवरनी गर्दन-तोड़ बुखार से जाती रही. लेकिन मेले में उस दिन वह भी जानकी की तरह उछली थी. अरसे बाद खुश हुई हो जैसे. दोनों बिंदिया-चूड़ी वगैरह की दूकान के सामने आकर रुक गईं. जानकी ने गुलाबी कांच की चूड़ियां पहनीं और हाथों को घुमाकर कांच के टकराने की आवाज़ से फुदक-सी उठी. फिर उसने माथे पर प्लास्टिक की बड़ी-सी लाल बिंदिया लगाई और शीशे पर अपना चेहरा देखने लगी. बिरजू कब से पीछे खड़ा था, बिल्कुल पता नहीं था. शीशे पर जानकी ने अपना चेहरा देखा तो बिरजू दिख गया था एकदम से. वह मुस्कुरा रहा था. फिर वह सामने आया और जेब से बण्डल निकाल कर एक बीड़ी सुलगाने लगा. जानकी ने उसकी तरफ देखा तो अजीब-सी सिहरन महसूस हुई. उसने महसूस किया, सिहरन से देह मन सबकुछ भर जाता है. फिर बिरजू ने कहा था—बड़ी जालिम लगती हो. डलेवरनी सिंदूर की डिब्बी खरीदकर नज़दीक आ गई थी तब तक जानकी को एकदम से शर्म महसूस हुई थी फिर. बिरजू ने डलेवरनी की गुस्सैल आखें देखीं तो जोर से बीड़ी का एक कश खींच लिया. फिर जानकी की तरफ संक्षिप्त-सी एक मुस्कान फेंक-कर आगे बढ़ गया.

यह जानकी से पहला निवेदन था बिरजू का. उसके बाद दो-चार बार इधर-उधर दिखाई पड़ती रही वह लेकिन नजदीक पहुंचने के मौके कभी नहीं मिले. खैर चलो मौके फिर मिलते रहेंगे लेकिन ये वक्त याद करने लायक बन जाना चाहिए. वक्त के साथ 'याद करने लायक' विशेषण जोड़ने की कोशिश में बिरजू करता यह कि फ़िल्म का एक चटपटा-सा संवाद सुना देता. या जोरों की सीटी मारकर चेहरे को एकदम से संजीदा बना लेता. फिर जानकी उस तरफ़ देखती तो वह बड़ी अदा से आंख मार देता. आखिर में बाएं हाथ से अपना सीना पकड़कर दाहिनी हथेली को चूम लेता और फिल्म के नायक की अदाकारी से कह देता—हाय !

आखिर तक जानकी कभी भी हाथ नहीं आई थी. बिद्दानिवास मास्टर कभी सड़क पर या कुतुबखाने की सब्जी मण्डी की तरफ झोला लेकर जाते हुए मिल जाते तो बिरजू विनय के साथ दोनों हाथ जोड़ लेता—कभी-कभी तो पांव छू लेने दिया करो, पंडिज्जी.

बिद्दानिवास पूरे मन से उसे आशीर्वाद देते—सुखी रहो, बेटे.

बिरजू को हंसी सी आ जाती. सुख ? सुख क्या है पंडिज्जी महाराज ? अपन को तो दूकानदारी और खाने पीने से ही फुर्सत नहीं मिलती ! इसे सुख कहो, जो मर्जी में आए कह लो, कोई फर्क नहीं पड़ने का. ये बातें इकट्ठे ज़बान पर आ जातीं. ज़बान पर आ जातीं लेकिन उंडेले बिना बिरजू सविनय मुस्कुराता-सा रहता. आखिर में कह पड़ता—आपकी मेहरबानी होनी चाहिए, पंडिज्जी.

यह सिलसिला पुराना है. बिद्दानिवास को एक तरह से अच्छा ही लगता है. वैसे भी बुरा लगने की बात तो यह नही है. कोई शिष्य मजे का खाता-कमाता दिखाई पड़े तो खुशी ही होती है. हर आदमी कालेज तक पहुच कर बी. ए. पास तो नही हो सकता लेकिन रोजी रोटी का जुगाड़ आज के ज़माने में मजे से होने लगे तो देख-कर अच्छा लगता है. और फिर बिरजू कभी अपना शिष्य रहा है, यह बिद्दानिवास के सतोष का असली कारण है.

आखिर मे बिरजू ने उस दिन कह ही डाला—तुम्हे दिल मे बहुत मानता हू, पडिज्जी, सो कैना पड़ग्यिा फिर वह खामोश हो गया था

बिद्दानिवास मास्टर सजीदा हो गए थे – बात क्या है, बोलो बेटा.

बिरजू थोडा सकुचाया, फिर मुह खोल लिया—अपन को तो पडिज्जी, नाम क्या बदनाम क्या ! लेकिन तुम्हारे जैसे किसी पर कोई उगली उठाए तो गुस्सा तो आता ही है लेकिन कलेजा भी दुखता है.

बिद्दानिवास हक्के-बक्के से रह गए थे तू कह क्या रहा है, बेटा ?

इस बार बिरजू सभला. तैयार-सा हो गया – तुम ठेरे देवता समान पुरानी दुनिया के मैल-मलोट से तुमे लेना देना भी क्या ! लेकिन पडिज्जी, रैना तो इसी दुनिया मे ही पडता है सो देखना भी पडता है आस-पास का सब कुछ फिर बिरजू असली मसले पर आ गया था वो मूलचन्द है न, मलूकपुर का भट्ठी वाला, उसके साथ जानकी दिखाई पड गई थी एक दिन

--क्या ? बिद्दानिवास की आवाज मे आर्तनाद-सा था

– जी मे तो बहुत आया था कि आगे बढकर मूलचन्द की गर्दन मरोड दू लेकिन जानकी थी, लिहाजा तुम्हारी बदनामी की बात सोचके अपन को रोक लिया. वैसे तुम कोई फिकर नाय करना, पडिज्जी. कभी कोई काम पडे, चुपके से जरा बता भर देना. बाकी काम हमारे जिम्मे. अभी तक जिसम मे ताकत इत्ती है कि दस मूलचन्द के सर से धड़ अलग करने का ठेका किसी भी वक्त अकेला ले सकता हू. तुम्हारी मैरबानी बनी रही तो अपन को कोई फिकर नही फिर उसने उसी तरह पुरानी अदा मे अपनी हथेली चूम ली थी.

बिद्दानिवास ने उत्तर मे कुछ कहना चाहा था लेकिन यह एक चाह भर थी. गले मे जो आवाज निकली थी इतनी स्पष्ट ओर कापती हुई थी कि उसका अर्थ खुद बिद्दानिवास के लिए भी साफ नही हो पाया होगा आखिर में वह मुडे ओर पराजित की तरह लडखडा कर वापस घर की तरफ चलने लगे लग रहा था, लोग इस तरफ खुसुर-पुसुर-सी कर रहे है सडक से गुजरता हुआ हर आदमी जैसे इसी हारे हुए की तरफ़ देखकर मजा ले रहा है.

●●

भगीरथ के 'होटल' मे जिन बातो पर लोग मशगूल होते, कोई जरूरी नही है कि वे अखबार मे छपी हुई हों, या रेडियो मे सुनी गई हो. इस कथा की शुरुआत भगीरथ के 'होटल' से होती है. 'होटल' के बारे मे जो सूचनाए इन पक्तियो के लेखक ने आपको दी, उनसे आप समझ सकते है कि यहा आने बैठने वाले कौन-कौन से लोग है. इन आने वालो मे से एक है जगदम्बा छरहरा-सा बदन, शरीर का रग आबनूसी और बड़े-बडे बढे हुए बाल पहले चौराहे पर नीम के नीचे बर्फ की मिठाई बेचता था बच्चो के लिए, अब माचिस फैक्ट्री मे खलासी है. जब से माचिस फैक्ट्री की नौकरी मिल गई, तब से इज्जत भी पहले से बढ़ ही गई है. जगदम्बा 'होटल' में आता तो चार-छह लोगो को चाय पिलाता, कभी-कभी बिस्कुट भी दिलाता और कभी अगर

मूड थोड़ा बहता हुआ तो मूलचन्द की भट्टी से बोतल मंगवाकर दोस्तों के सामने रख देता. लोग चुस्कियां लेकर उसकी तारीफ़ का पुल बांधते. वह धीरे-धीरे इस तरह मुस्कुराता रहता, गोया अभी एकदम से कह पड़ेगा— इस नाचीज़ को अभी जाना ही कहां तुम लोगों ने !

जगदम्बा जिस वक्त 'होटल' में घुसा, भगीरथ सीखचे से भट्टी के कोयले निकाल रहा था. अंदर लोग खचाखच भरे हुए हैं. ऐसे में तो सांस लेने की भी फुर्सत नहीं होती. लेकिन जगदम्बा की बात ही और है. भगीरथ ने सर उठाकर मुस्कराया—आओ मालिक, बहुत मिज़ाज में लग रहे हो !

ऐसी बातों का जवाब जगदम्बा नहीं देता. भगीरथ ने अभिवादन के उत्तर में सर थोड़ा हिला दिया था. फिर हुक्म-सा फेंक दिया—चार-छह मलाई वाली चाय बना दे फटाफट. अपन वाले में मीठा ज़रा 'पेशल' मिलाना.

रेडियो पूरी ताकत से बज रहा था. शाम का यही वक्त है, जब लोग यहां आकर गाना भी सुन लेते हैं, चटपटी कोई बात हुई तो उसका ज़ायका भी ले लेते हैं. सारी कुर्सियां भरी हुई थी. लेकिन जगदम्बा अंदर घुसा तो बाबूलाल उठ खड़ा हुआ था—लो, तुम्हारे लिए कुर्सी खाली है.

इस तरह के विनय से जगदम्बा का सीना फूलकर गुब्बारा बन जाता. अभी भी लोग हैं, जो आदमी की कद्र जानते हैं, इज्ज़त करते हैं. लेकिन चेहरे को संजीदा कर उसने डांट दिया था—बैठा रह तू.

बाबूलाल मुस्कराया—तुम ना बैठा तो लोग फिर हमीं को कहेंगे.

जगदम्बा फिर इत्मीनान से बैठ गया था. बंडल निकालकर उसने एक बीड़ी सुलगा ली और उस बंडल को मेज पर पटक दिया, बल्कि उछाल-सा दिया. लोग इसका अहसान मानते हैं और बीड़ी का कश खींचते हुए वे महसूस करते रहते कि जगदम्बा सचमुच दिलेर आदमी है.

भगीरथ छह गिलासों में चाय रख गया था. चाय के ऊपर की मलाई लोगों ने देखी तो खुश हो गए. 'पेशल' चाय सिर्फ़ जगदम्बा की थी. 'स्पेशल' चाय का मतलब हुआ, मलाई और चीनी दोनों डबल.

जगदम्बा ने चाय की चुस्की ली और टांगों को ऊपर उठाकर मोड़ लिया. लोग तैयार हो गए. इसका मतलब सिर्फ़ एक ही होता है. जगदम्बा लाया है कोई खबर.

बाबूलाल मुस्कराया—फ़िलम के हीरो की तरह मूड में लगते हो आज.

जगदम्बा संजीदा था, संजीदा ही रहा. सिर्फ़ होंठ खोल लिए थे—आजकल का जो ज़माना है ना, पूरा ही फिलम है. तू पट्ठा समझेगा नहीं जे सब. यह पट्ठा संबोधन, सिर्फ़ बाबूलाल के लिए ही था लेकिन दूसरे लोग भी खुश हुए थे, जैसे इसमें से कुछ उन्हें भी मिल गया हो.

—फिलम की बात तो इसलिए थी कि बिंद्रानिवास मास्टर भी बड़ा मजेदार निकला. जगदम्बा दाहिनी हथेली नचा रहा था—फिलम में होता है न, कुछ सोचो लेकिन निकलता कुछ और ही.

भगीरथ ने चाय में चीनी मिलाते हुए आवाज़ फेंक दी थी—ज़रा ज़ोर से कैना बड़े भाई, हम भी सुन लेंगे.

—देख भई, रंडीबाजी करनी हो तो बेशक करो. हम बिल्कुल मना नाय करेंगे. लेकिन उसके लिए आलमगिरी गंज जाना पड़ेगा. फिर चाहे अपनी लुगाई को चौराहे पे नचाओ, चाहे अपनी लौंडिया को, हम कुछ नाय कैंगे. जगदम्बा ने बीड़ी का कश

ज़ोर से खींचा और एकदम से अपनी बात खत्म कर दी.

—रंडीबाज़ी ? कोने की तरफ़ रामधनी बैठा था. उसके गले से सातों स्वर अलग-अलग निकल आए थे.

भगीरथ ने चाय के गिलास खटाक् से दूसरी मेज़ पर रखे और नज़दीक आ गया—थोड़ा खोलकर बोलो, बड़े भाई. बिद्दा पंडित का रंडीबाज़ी से क्या रिश्ता ? उसके लिए भगीरथ मर तो नहीं गया ? फिर एक घिसा हुआ क़हक़हा.

जगदम्बा ने चाय की चुस्की ली, बीड़ी का कश खींचा और टेबल पर मुक्का मार दिया.

—हम ठैरे घर-गिरस्ती वाले लोग, लेकिन कान खोल कै सुन लो, इस बिहारीपुर के मुहल्ले में चकलेबाज़ी नहीं चलने देंगे. फिर ना कैना कुछ, हां. बिद्दा मास्टर अब भी होश में न आया तो फिर कुछ हो ही जाएगा. फिर अपन को जिम्मेदार न बनाना, हां. भई, हम ठैरे मामूली लोग. तुम पंडित हो, किताब पढ़ाते हो. सो तुमें इज्ज़त करने में कसर नाय छोड़ी, लेकिन इसका मतलब जे तो नाय होता कि अपनी लौंडिया से मुहल्ले के सबका घर बिगाड़ो. जगदम्बा की आवाज़ काफ़ी चढ़ गई थी. रेडियो में कोई चटपटा-सा गाना आ रहा था लेकिन किसी ने उस पर ध्यान नहीं दिया.

—अमां, साफ़-साफ़ बताओ तो हम भी कुछ समझें. यह रामधनी था.

—तो सुन फिर. जगदम्बा ने कहना शुरू किया—मलूकपुर का मूलचंद मानता हूं, खाता-कमाता है, पैसे वाला है, नीलामी में मोटी रकम की बोली चढ़ाकर भट्टी का ठेका ले सकता है. लेकिन बात जे है कि बिद्दा पंडित की लौंडिया को लेकर ऐश करने का हक़ किसने दिया ? हम ठैरे बीवी-बच्चों वाले लोग. हमारी घरवाली पर, बच्चों पर क्या असर पड़ेगा इसका ? वाह भई, वाह ! एक तरफ़ तो तुम तिलक लगा कर पंडिताई करते हो, दूसरी ओर लौंडिया की कमाई खाकर ऐश करते हो. हम मूतते हैं तुम जैसे लोगन के मुंह पर.

—मास्टर का यह सब, हमें मालूम ही कहां था ? रामधनी की बगल में शंकर बैठा था. उसने एक नई बीड़ी सुलगाकर ज़ोरों का कश खींचा—लेकिन चलरिया कब से जे फिलम है.

भगीरथ ने अपनी जगह से ही आवाज़ फेंक दी—फिलम नहीं, नौटंकी बोलो प्यारे, नौटंकी. नौटंकी देसी है, फिलम विलायती. जिस पर एक बार देसी चढ़ जाती विलायती हल्की हो जाती. फिर आखिर में वह ठहाका मारने लगा था, ज़ोरों से.

—मालूम तो हमें अरसे से है सब कुछ लेकिन मुंह इसलिए नाय खोला, सोचा था, पंडित संभाल लेगा अपनी लौंडिया को. और वैसे भी बामन है, पंडित हैं, सो हम सिरफ़ पांव ही छूते रहे है. लेकिन तुम्हारी वजह से बिहारीपुर को आलमगिरी गंज समझते रहें, ऐसा नाय होने का. हम लोग मज़दूरी कर सकते हैं लेकिन हैं तो इज्ज़तदार ही. जगदम्बा इकट्ठे सबकुछ कह गया था.

—वैसे एक बात है, पंचों, बुरा न मानो तो कहूं. ठहाका मारने के बाद भगीरथ का लहज़ा बदल गया था.

—बोल, बेटे. तू भी बोल ले. रामधनी ने इजाज़त दे दी.

—उमर का भी तो कोई तकाज़ा होता है ! पंडित अपनी लौंडिया को अगर ब्याहता नहीं है तो इसमें लौंडिया का क्या दोष ? आग लगती है तो या तो जल कर कोयला बना लो या फिर बुझाने का इंतज़ाम करो उसे. सब चलता है, चलने दो.

कभी मौक़ा लगे तो तुम भी एक हाथ मार लेना. बात ख़त्म कर भगीरथ ने जगदम्बा की तरफ़ आंख मार दी थी.

जगदम्बा चेहरे को संजीदा कर सिर्फ़ दीवार की तरफ़ देख रहा था. भगीरथ ने दुबारा उसे घूरा और सीने में दाहिना हाथ रखकर एक बनावटी सांस ली.

यह सब एकदम से नहीं हो गया था. न यह सिर्फ़ नाटकीय ही है. भगीरथ को मालूम है, जानकी के पीछे जगदम्बा कैसी-कैसी आहें भरता रहा. माचिस फैक्ट्री वाली नौकरी लग गई तो सोचा था, अब जब क़िस्मत का बदलना शुरू हुआ, सबकुछ बदल कर रहेगा. एकदम ही उसे लगता रहा कि जानकी गुज़रते वक़्त कनखियों से उसे निहार लेती है. फिर रात को चारपाई पर लेटकर कसमसाती होगी, सपने देखती होगी, यह सब जवानी में किसका नहीं होता? लेकिन लोग इतने डरपोक हैं कि अरमानों का खून कर देते हैं. याद है, जानकी एक बार नीम के नीचे आई थी. बर्फ़ की मिठाई ख़रीदनी थी. बर्फ़ छीलते हुए जगदम्बा ने जानबूझकर बहुत देर लगा दी थी. तैयारी कई तरह से करता रहा लेकिन हिम्मत नहीं हुई कि कहे—तू मेरी नींद हराम कर रही है जानकी. तेरे लिए मैं सबकुछ छोड़ सकता हूं—अपने बच्चों को, कलूटी बीवी को, सबको•••.

आख़िर तक वह सोचता रहा और फिर कुछ भी कहे बिना मिठाई उसकी तरफ़ बढ़ा दी थी. जानकी ने दस का सिक्का आगे बढ़ाया तो जगदम्बा ने मना कर दिया था—रख ले इसे अपने पास. जगदम्बा की तरफ़ से एक भेंट ही समझ ले. जानकी कुछ भी बिना समझे कोई मिनट-भर खड़ी रह गई थी. फिर जैसे एकदम से कुछ याद आ गया था. तेज़ी से निकल गई थी आख़िर में.

जगदम्बा बहुत खुश था उस दिन. इसका गवाह भगीरथ है. शाम को दूकानदारी के बाद वह भगीरथ को मूलचंद की भट्टी तक ले गया था. फिर एक पूरे अद्धे के साथ पकोड़ियां और तली हुई मछलियां खिलाई थीं. भगीरथ अपने हिस्से को पाकर 'होटल' में लौट आया था लेकिन जगदम्बा वहीं रह गया था. बाद में मालूम हुआ था, जुए में पूरी जेब साफ़ करा लेने के बाद उसने अपनी कमीज और पाजामा भी उतार दिया था. आख़िर में बनियान और कच्छे में जब घर लौटा, उसकी बीवी दीवार से सर पटक रही थी. लेकिन औरत अपनी हद से आगे बढ़े तो उसे और लोग सहते होंगे, जगदम्बा सह नहीं पाता. सहे भी क्यों? जिस मरद के सीने में बाल होते हैं, जोरू का गुलाम नहीं होता कभी वह. लिहाज़ा अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कुछ हुआ तो यह सहा नहीं जाता जगदम्बा से. जवाब में उसने वही किया, जो अब तक करता रहा है. यानी बीवी के बालों को मुट्ठी में कसकर एक हाथ से पकड़ा और दूसरे हाथ से चांटे जमा दिए. आख़िर में पेट पर लात जमायी. वह दर्द से कराह उठी थी.

लेकिन इस घटना से जानकी का रिश्ता ही क्या है? रिश्ता न होगा तो न सही लेकिन जगदम्बा का कोई और चारा भी तो नहीं है. जानकी दिल को इस कदर बेकाबू कर देती कि फिर खुद को संभाल पाना मुश्किल हो जाता. जब माचिस फैक्ट्री की नौकरी लग गई, जगदम्बा को जैसे ऊपर पहुंचने की सीढ़ी मिल गई थी.

बिट्टा पंडित रामनामी ओढ़े यजमानी में जा रहे थे. जगदम्बा ने झुककर पांव छू लिए थे—इस ग़रीब को भी कभी-कभी आशीर्वाद देते रहा करो, पंडिज्जी.

बिट्टानिवास ने अपनी आदत के मुताबिक कहा था—सुखी रहो, बेटे.

जगदम्बा मुस्कराया था—आपकी किरपा हो तो बस सुख ही सुख है. फिर वह संभलकर खड़ा हो गया था—जरा एक बात कैनी थी पंडिज्जी.

—कहो.

—मैं ठहरा अपढ़ मूरख, घरवाली भी वैसी ही है. लेकिन एक तमन्ना है दिल में कि बच्चों को खूब पढ़ने को—लिखने को मिले. सो, मैं सोच रिया था, जानकी तो दिन-भर वैसे ही खाली रहती है, सो बच्चों को ही कुछ बता दिया करे. तुम फिकर नाय करो, मैं ऐसे नहीं कै रिया, महीने में पांच-सात रुपये खुशी से दे दिया करूंगा.

—लेकिन उसे तो घर के पूरे काम संभालने होते हैं. उसकी अम्मा बीमार रहती है. सब कुछ उसी के सर पर है. तुम चाहोगे तो किसी और का इंतजाम कर दूंगा. बिहारीनिवास फिर आगे निकल गए थे.

जगदम्बा के जी में आया था, पंडित के मुंह पर तमाचा मारकर कह दे—टोली मुहल्ले में घूमकर नाचने की फुर्सत तो तुम्हारी लौंडिया को मिल जाती है, तब नहीं रैती पंडिताईन बीमार ? उसने सोचा था लेकिन कुछ भी कहा नहीं था जवाब में. सिवाय इसके कि बगल की गली में थूक दिया था. आखिर में दोनों हथेलियां जांघों के करीब ले आया था और अश्लील मुद्रा में टांगों को फैलाकर एक ज़बरदस्त गाली ज़बान से उंड़ेल दी थी. लेकिन तब तक बिहारीनिवास मास्टर बहुत आगे निकल गए थे. भगीरथ ने देखा था यह सब. उसने अपने 'होटल' में से आवाज़ मार दी थी—आज के फिलम के गाने सुन लो, बड़े भाई. फड़कते हुए गाने आ रहे हैं, तबियत खुश हो जाएगी तुमारी.

इतवार होने की वजह से इस वक्त भी कई लोग थे 'होटल' में. रामधनी अखबार में छपे फिलम के इश्तहार देख रहा था. बाक़ी लोग टेबल पर ताल देकर सर नचा रहे थे, फिलम के गाने सुन रहे थे.

जगदम्बा क़दम पटक कर आ घुसा—चाय पिला, पेशलवाली. फिर वह कोने वाली कुर्सी पर बैठकर बीड़ी सुलगाने लगा था.

रामधनी ने जेब से ताश का बण्डल निकाला—मिज़ाज में हो तो शुरू करूं.

जगदम्बा खीझ-सा उठा था—मिज़ाज में तो वो नाय होगा, नामर्दी है जिसमें. यहां जेब की फिकर अपन को कभी नाय हुई. फिर उसने चाय की चुस्की ली और ज़ुबान से एक मामूली सी गाली उंड़ेल दी—पंडित को नानी न याद करा दूं तो अपने बाप का नहीं, कुत्ते का पूत हूं. मुंह पर फिर मेरे सुअर मुताना. थोड़े दिन और ठहर जाओ पंडित की जोरू के कपड़े उतरवाऊंगा इसी 'होटल' के सामने. न कर पाया तो कै लेना कि मैं नामर्द बाप की औलाद हूं. आखिर में उसने अपनी आदत के मुताबिक टेबल पर मुट्ठी को पटक दिया था.

रामधनी को मज़ा-सा आ रहा था. उसने सिलसिला आगे बढ़ाया —वैसे पंडित की लौंडिया, माल खासा है. क्यों बे ? वह भगीरथ की तरफ़ मुखातिब हुआ.

भगीरथ ठठाकर हंस पड़ा— तुम बात कैते हो मार्केवाली. अपन को तो 'होटल' पर बैठके चाय बिस्कुट का सौदा करने से ही फुर्सत नाय मिलती.

—तू पट्ठा जे सब करते-करते ही मरकर भूत हो जाएगा, समझा ? रामधनी ने बीड़ी के धुएँ को छल्लों के साथ निकाल लिया था.

—इस जनम में तो कोई पुन्न किया नाय, सो भूत परेत ही बनना पड़ेगा. वहां भी तुम साथ देना. आखिर में भगीरथ ने एक ठहाका लगा दिया था.

काफी देर बाद बाबूलाल ने मुंह खोला—वैसे सुनते हैं, दिल्ली-बम्बई में अच्छे-अच्छे घरों में रंडीबाजी चलती है.

—तूने साला, दिल्ली-बम्बई देखी है कभी ? जगदम्बा को गुस्सा आ रहा था—बात तो ऐसे कर रिया जैसे होंआ तेरा बाप रैता हो.

—लेकिन सुनने में तो कुछ आता ही है. अखबार में भी छपता है कई बार.

बाबूलाल ने कोशिश की कि उसकी बातों में दलील भी हो.

—फिर अब समझ ले मुझसे, तेरी खोपड़ी में अखबार की बात कभी नाय घुसेगी. आगे से चुप ही रैना ऐसी बातन पे. जगदम्बा ने फिर इस सिलसिले की व्याख्या की थी—भई, बम्बई-दिल्ली की बात ही और है. लेकिन इससे बरेली वालों को लेना-देना क्या? वहां तो लोग आसमान छूने वाले मकानों में रैते हैं. लेकिन उस से हमारा क्या बनता? अपन को तो खपरैल के नीचे ही गुज़ारा करना है.

आदत के मुताबिक भगीरथ हंस पड़ा था. फिर उसने सिलसिले को जोड़ना चाहा—वैसे जानकी भी है अपने तरीके की एक लाजवाब लौंडिया. साली को देखो तो जिसम की नसें अपने आप ही गरम हो जाती हैं.

—आजकल मूलचन्द का जिसम गरमा रही है मास्टर की लौंडिया. बड़ी लछमी बनकर फिरती थी न, तो सुन लो, अब क्या हो रिया. यह भी जान लो, इन सबके पीछे पंडित का हाथ है. रुपइया की माया है, रुपइया की. स्साला चुटिया रखता है, जनेऊ लटकाए है. एक दिन यही जगदम्बा पंडित को चौराहे पर लाकर चुटिया काट देगा, जनेऊ तोड़ देगा. बच्चू को पता चलेगा फिर किसका नाम है जगदम्बा परशाद

रेडियो में समाचार सुनाया जा रहा था. लोग बोर हो गए थे. भगीरथ ने तब तक के लिए स्विच आफ कर दिया, जब तक दुबारा फिल्मी गाने आने लगे.

इस बीच वक़्त का एक खासा हिस्सा निकल गया. जगदम्बा ने एक और बीड़ी सुलगाई और कुर्सी के ऊपर रखी हुई टांगें नीचे उतारकर चप्पलें फंसाने लगा. फिर जम्हाई-सी लेकर 'होटल' से उतरकर नीचे सड़क पर आ गया. बाक़ी लोग भी सड़क पर आ गए थे. ऊपर सिर्फ़ भगीरथ ही रह गया था. उसने ठहाका मारा—अगली बार आओगे तो चाय के साथ आज का अखबार भी देख लेना. कोई कै रिया था, एक मसालेदार बात छपी है. अपन को तो पढ़ना नाय आता लेकिन पढ़के बता जरूर देना.

लोग भगीरथ की बात का जवाब दिए बिना ही अपने-अपने घर की तरफ़ बढ़ने लगे थे.

●●

शाम के वक़्त भीड़ ज्यादा होती है तो खुद मूलचन्द भट्ठी पर रहता है. वैसे काम करने को हैं तीन-चार आदमी लेकिन मालिक गायब रहे तो काम तरीक़े से नहीं होता. एक तरफ़ खिड़की से बोतलें बिकती हैं, दूसरी तरफ़ तखत पर बैठकर एक नौकर तली हुई मछली और पकौड़ा बेचता है. तखत के सामने बेंच है, मेज़ है. इतमीनान से बैठो, खाओ-पीयो, खाने-पीने के साथ जुआ भी चल सकता है लेकिन ज्यादा हुल्लड़बाज़ी की तो उसकी मज़ा के लिए किसी और को इंतज़ार नहीं करना पड़ेगा. मूलचन्द सामने आया नहीं कि कान पकड़कर बाहर निकाल देगा.

आज तक किसी की हिम्मत नहीं हुई जो मूलचन्द के मुह पर बात कर ले. बात छोड़ो, आंखों से आंखें मिलाने तक की हिम्मत नहीं होगी. शरीर में जितनी ताक़त है उसकी, उसे किसी ने आज़मा कर तो नहीं देखा लेकिन सोच लेने में, दिक़्क़त नहीं होती कि ज्यादा न सही, छोटे-मोटे एक हाथी की ताक़त तो उसमें होगी ही. आबनूसी रंग का शरीर रेशम की मूंगा लुंगी और लखनवी कुर्ते में मूलचन्द अपनी तरह से अकेला है. गले में सोने की चेन, दाहिनी कलाई में चांदी का कड़ा और नाक के नीचे बड़ी-बड़ी मूछें उसे एक खास चरित्र में ला खड़ा करती हैं. आंखें हर वक़्त इस क़दर सुर्ख रहतीं कि कोई एक बार चेहरे की तरफ़ ग़लती से देख लेता तो जिस अहसास से भर जाता, उसमें सिर्फ़ दहशत ही होती. दहशत और डर.

मूलचन्द का इतिहास किसी को नहीं मालूम. शरीर का भूगोल देखने के बाद,

इतिहास जानने का हौसला किसी मे नहीं होता. पेशावरी घोड़े को ताँगे में जोड़कर पूरी रफ्तार से वह निकल जाता तो गर्द के गुबार उड़ने लगते. सड़क तो सड़क, गली-कूचा भी हो चाहे, रफ्तार में कमी नहीं आती. मूलचन्द मख़मली गद्दी पर इत्मीनान से बैठता और घोड़े की पीठ पर चाबुक मारता.

खन्नो मुहल्ले में हाशिम मियाँ का मकान था. लोग अब भी हवेली कहते हैं उसे. गाने-बजाने का ख़ानदानी शौक था मियां का. लेकिन बीवी गुज़र गई तो एकदम से खामोश हो गए. सात औलादों में सिर्फ़ एक बेटी ज़िन्दा रह गई थी—फ़ातिमा. वह भी शादी के बाद रावलपिण्डी चली गई. अम्मी के गुज़रने की ख़बर मिली तो यहां आकर वह हाशिम मियां को भी अपने साथ ले चलने का इन्तज़ाम करने लगी. इस उमर में बाप-दादे की आख़री यादगार छोड़ने के लिए मन नहीं माना था. लेकिन सवाल यह था कि रहा जाए तो किसके आसरे पर ? मकान बेच दिया था फिर मियां ने. ख़रीद लिया मूलचन्द ने.

कहते हैं, पहले मूलचन्द रामपुर में था. फिर मकान ख़रीदा बरेली में तो यहीं का हो गया. लेकिन मुहल्ले वालों को परेशानी इस बात पर होने लगी कि इस हवेलीनुमा मकान में रहते कौन हैं ? कभी-कभी रात गहराने के बाद लगता, सधे कदमों से कोई तांगे से उतर रही है. चूड़ियां खनकती हैं. लेकिन यह सब किस वक़्त होता, ज़यादातर लोगों को कुछ पता ही नहीं चलता. वैसे चोकन्ना होकर सुनने वालों को पता हो गया था कि अन्दर से हंसी की आवाज़ आने का भी एक ख़ास वक़्त होता है.

इससे ज़्यादा मूलचन्द के बारे में किसी को कुछ नहीं मालूम. जो लोग मलूकपुर की भट्टी तक जाते हैं, सामने पड़ जाने पर 'राम-राम' भर कह देते हैं. इसका जवाब मिलता है लेकिन फालतू बातें करने की फ़ुर्सत मूलचन्द के पास नहीं है.

कल की बात है.

गोबिन्द आया था पीने. जेब से पैसे निकाल कर उसने गिने फिर खिड़की से बढ़ कर बोतल ले ली. बोतल लेकर मछली-पकौड़े के तख्त के नज़दीक की बेंच पर बैठ गया. दो मिनट फिर तली हुई मछलियां देखीं और पाव भर के लिए आर्डर दे दिया. वैसे असूल यह है, पहले पैसा, फिर माल. लेकिन गोबिन्द गाहकों में बुरा नहीं है. यानी यक़ीन है, यहां से निकलने से पहले पैसे देने के लिए कोई हुज्जत नहीं खड़ी करेगा. लेकिन हुआ इसका उल्टा. उसने कच्ची गटक ली, मछली खाई और पाजामा उतारकर देने लगा—मछली की क़ीमत है यह. फिर कमीज़ की ऊपर-नीचे की तीनों जेबें दिखा दीं. एक खोटा सिक्का भी नहीं था.

मूलचन्द कोने में खड़ा-खड़ा यह सब देख रहा था. अब वह नज़दीक आया और गोबिन्द के बालों को मुट्ठी मे लेकर पाँचेक चाटे जमा दिए गाल पर. फिर उसकी कमीज़ उतारी, कच्छा निकाल लिया और जब पूरा-का-पूरा नंगा हो गया, लात मार कर सड़क पर ले आया.

सामने ही पुलिस चौकी है लेकिन वहां के लोग भी मज़ा ही लेते रहे. इसमें दो बातें हैं. एक तो ऐसे तमाशे रोज़ देखने को नहीं मिलते, दूसरे—मूलचन्द से बैरी थोड़ी महंगी ही बैठेगी.

मूलचन्द ने आवाज़ मारकर पीपल वाले नाई को बुलाया और गोबिन्द के बाल मुड़वा दिए. फिर भट्टी में से थोड़ी कालिख मंगवा कर चेहरे पर भी पुतवा दिया.

इस बीच में तमाशा देखने वालों की खासी भीड़ इकट्ठी हो गई थी. लोग रस लेकर, सारी चीज़ों का मुआयना यों करने लगे थे जैसे दुनिया के सारे मज़े गोबिन्द को नंगा देखने में ही हैं. आख़िर में मूलचन्द ने चार-छह लातें जमायीं और नसीहत दे

दी—आइन्दा कभी कच्ची पीने की, मछली खाने की तबियत हो तो मूतकर पी जाना. जा, अब मेरी आंखों के सामने से फौरन दफ़ा हो जा.

गोबिन्द ने खामोश होकर सुना और आगे बढ़ने लगा, घर की तरफ. पीछे का जुलूस लम्बा हो गया था. जैसे ब्रह्माण्ड का सबसे बड़ा अजूबा गोबिन्द के गुप्तांगों में ही समाया है.

●●

भगीरथ के होटल में सारी बातों का जिक्र होता है. इस घटना का भी हुआ था. जिक्र होने की वजह गोबिन्द नहीं, मूलचन्द का नाम है, और अब तो यह नाम इतना रसीला बन गया कि जबान से उतारे नहीं उतरता.

भगीरथ बोला—रमैन में भगवान की कथा है न, बिन्द्राबन वाले किशन भगवान की, तो मूलचन्द भी उससे कम नाय, हां.

रामधनी अखबार देख रहा था. लेकिन था मजाक के मूड में. बोला—अच्छा ! तो तुझे रमैन भी आती है ?

—अब चाहे तुम हंसी उड़ाओ चाहे जो मर्जी करो, मैं पक्का हिन्दू हूं. रमैन में किशन भगवान की लीला है, सो मालूम है.

बाबूलाल हंस पड़ा था—अबे सूअर, महाभारत कैना आगे से. चाय-बिस्कुट का सौदा करते-करते तेरी खोपड़ी की अकल सूखकर गोबर बन गई, समझा ?

भगीरथ मुस्कुराया—अपन का काम तो बस इसी अकल से चल जाएगा. चाहे रमैन कै लो, चाहे महाभारत, बात एक ही है.

—एक तो होना ही है. बाबूलाल बोला—एक नही होगा तो तेरी खोपड़ी और गधे के दिमाग में फ़र्क़ नही हो जाएगा ?

इतनी जल्दी हार भगीरथ मान नहीं सकता. उसने बात आगे बढ़ा दी—मैं बात जे कै रिया था कि किशन भगवान एक तरफ तो इत्ती बड़ी लड़ाई लड़ते हैं, दूसरी तरफ बंसी बजाकर छोकरियों के साथ रास रचाते हैं. जे ही बात मूलचन्द के लिए भी सोलह आने सही है. एक तरफ तो पूरा लट्ठमार है. मजाल है किसी की आंखों से आंख मिलाकर बात कर ले. गोबिन्द के बच्चे को भरी सड़क पर कर दिया न नंगा ! लेकिन कोई माई का लाल ऐसा निकल कर नाय आया जिसके सीने में बाल भी हो. सब तो दुबक कर तमाशा देख रहे हैं. जान बड़ी प्यारी चीज़ है भाई, इत्ता हर कोई जानता है. इसी जान के लिए तो लोग लड़ने-झगड़ते और इसी जान की खातिर खामोश होकर जुल्म सहते हैं. खैर जाने दो, इससे हमें क्या ! हम तो किशन भगवान की बात कर रहे थे. हां, तो मूलचन्द लठई तो करता है लेकिन है दिलदार. फंसा लिया न पण्डत की लौंडिया को….

जगदम्बा आ गया था. भगीरथ की ज़बान की अधूरी बात भी उसने छीन ली थी—मूलचन्द ने पण्डित की लौंडिया फांसी है ? या पण्डित की लौंडिया ने मूलचन्द को. अरे भई, जे तो साफ़ समझने की बात है, रुपईया का धरम सबसे ऊपर होता है. पण्डित की लौंडिया हो, चाहे मनीस्टर की, एम्मेल्ले की, दरोगा की, सब रुपईया देखकर झुकते हैं. इससे चाहे जात बिगड़े, चाहे बने, कोई फिकर नाय करता. हम अपढ़-मूरख हो सकते हैं लेकिन कलजुग को कम तो नाय पैचानते.

भगीरथ ने सामने चाय रख दी थी, जगदम्बा के सामने 'पेशल' वाला गिलास बढ़ा दिया था. थोड़ी देर वह चुप-चाप खड़ा रहा फिर मौका पाकर बोल पड़ा—हमारी बात तो किसी ने सुनी ही नाय.

—बोल अब तेरी ही बात सुनेंगे. रामधनी ने बीड़ी सुलगाई और इत्मीनान से

एक कश खींच लिया.

—कहा न हम ने, मूलचन्द को गाली बको, चाहे उससे डरते रहो लेकिन है यह किशन भगवान की तरह ही दिलदार. बात खत्म कर भगीरथ ने जोरों से ताली बजाई और ठठाकर हंस पड़ा.

रामधनी ने उसकी कलाई पकड़ ली—तू दिल को समझता क्या है, बोल कभी उमड़ा है तेरा दिल ? कभी धड़का है सीना ?

—गुस्ताखी माफ़ करना बड़े भाई, किताब जरूर अपने को पढ़ना नाय आए, लेकिन दिल का धन्धा ह्यां भी होए है. भगीरथ ने बात खत्म की और ठहाका मारने लगा. ठहाका इतने जोरों का लगा कि रेडियो से आ रहे फिल्मी गाने भी दब गए थे. लेकिन ऐसा होना कोई नई बात नहीं है इस होटल के लिए. लिहाजा किसी को अगर थोड़ी-बहुत दिक्क़त हुई होगी, उसने नज़र-अन्दाज़ कर दिया होगा.

●●

आखिर में हुआ वही, जिसके लिए 'होटल' की यह मजलिस जमती है. यानी मूलचन्द ने जानकी का हाथ थाम ही लिया. बड़े-बूढ़े ज़रूर यह कहते पाए जाते हैं कि जन्म, मृत्यु और विवाह—तीनों ही ऊपर वाले का खेल हैं, लेकिन अब ज़माना इस क़दर पलटा खा गया कि ये नई उमर के लोग जिन्हें सफ़ेद बाल और दाढ़ी वाले लोग लौंडे-लपाड़े कहते हैं, इन बातों पर यक़ीन ही नहीं करते. कहते हैं—है सब रुपल्लीदास की माया. रुपल्लीदास जेब में हो तो पहाड़ पर भी नैया चल सकती है. जगदम्बा ने नैया और विद्दानिवास की बात इकट्ठे सोचली—थूह ! पंडत के बच्चे को मज़ा एक बार तो चखाना ही पड़ेगा. तब मालूम पड़ेगा, आटे-दाल का भाव क्या है. अरे भई, चकले की दलाली करनी है तो करो, लेकिन फिर यह पंडताई का ढोंग नहीं चलेगा. इस बिहारीपुर मुहल्ले में हम नहीं चलने देंगे.

कोई कहता है, बिद्दानिवास मास्टर ने रो-रोकर आंखें सुजा ली हैं. इधर कुछेक दिन से वह दिखाई नहीं पड़े थे. लिहाज़ा कल्पना करने में 'होटल' आबाद करने वालों को कोई दिक्क़त-विक्क़त नहीं हुई थी.

एक दिन बिरजू चला गया था बिद्दानिवास के दरवाज़े तक. लगा था, 'सीता भवन' की ईंटें अब जीर्ण हो गईं. बिद्दानिवास की मां का नाम है सीता. उनकी मृत्यु के साल भर बाद जानकी पैदा हुई थी. बिद्दानिवास को यक़ीन-सा आ गया था कि मां साल भर बाद आ गई है. फिर बड़े प्यार से उन्होंने बेटी का नाम रखा था—'जानकी'.

बिरजू पहुंचा तो अंधेरा हो रहा था. पंडताइन दमे की बीमारी बरसों से झेल रही हैं—लेकिन अब तो चारपाई ही पकड़ ली. बिद्दानिवास बगल की चारपाई पर बैठकर सूनी आंखों से बाहर की तरफ़ देख रहे थे. बिरजू ने नज़दीक जाकर पांव छू लिए थे. बिद्दानिवास ने उसके हाथ पकड़े और बगल में बैठा लिया. यह पहला मौका है, जब पांव छूने के बाद कोई बिद्दानिवास के साथ एक ही आसन पर बैठा था.

बिरजू ने काफी सोचा लेकिन कहने लायक कुछ याद ही नहीं आया. जितना कुछ पहले सोचकर आया था, एकदम से गड्डमड्ड-सा होने लगा.

देर तक चुप्पी गहराती हुई हो गई तो बिद्दानिवास ने मुंह खोला—तुम लोग सोचते होगे, तिवारी कुल को जानकी मिट्टी में मिला गई. मेरे पिता राधानिवास कितने बड़े पंडित थे, तुम लोगों ने सुना ही है. काशी-नरेश तक इज्जत करते थे उनकी. उनका बेटा मैं, पुण्य क्या करता, नहीं मालूम, लेकिन पाप जानकर कभी नहीं करता···लेकिन जानकी इस कुल के चेहरे पर कालिख पोतकर खुद तो मरी ही,

दूसरों को भी मार गई. बिद्दानिवास अपाहिज निगाहों से अपनी बीमार पत्नी के चेहरे में कुछ ढूंढ़ से रहे थे.

बिरजू को खास कुछ समझ में नहीं आया. लेकिन वह चुपचाप सुनता रहा. बीच-बीच में 'हां-हूं' भी करता रहा.

—लेकिन मेरे मन में इसलिए कोई दुःख नहीं है कि जानकी ने एक ऐसे आदमी को हाथ दे दिया जिसका कुल-गोत्र कुछ भी नहीं मालूम. कुल-गोत्र तो हमने बनाया. यह कोई जन्मसिद्ध अधिकार है, ऐसा मैंने कभी नहीं सोचा. लेकिन जानकी कामना के ज्वार में इतनी अंधी हो गई कि न तो विवाह हुआ, न कोई मांगलिक कार्य. फिर जब कल को आंखों की यह कामना मिट जाएगी, तब वे सह पाएंगे एक-दूसरे को ? तब मिलेगी कोई और शरण उसे ? विवाह से जो सामाजिक मर्यादा मिलती है, उसे कौन देगा उसे ? फिर ऐसी नारी की क्या गति हो सकती है, तुम समझ सकते हो. वही आदिम व्यापार, वही पशु का जीवन. बिद्दानिवास की आवाज़ आखिर में भारी हो गई थी. भारी और असहाय.

बिरजू उठ खड़ा हुआ. पहली बार महसूस हुआ, वह कहीं आकर हार रहा है. फिर चुपचाप बाहर आ गया था. बाहर, भगीरथ के 'होटल' में ज़ोरों से रेडियो बज रहा था. भगीरथ ने आवाज़ भी मार दी थी—कभी-कभी तो आकर भगीरथ की चाय पी लिया करो, बड़े भाई. लेकिन वह जवाब दिए बिना सामने की गली की तरफ मुड़ गया था. गली में अंधेरा था. उसे लगा, काफी देर बाद अब वह खुद को अंधेरे में खो सकने की हालत में है.

●●

दो

भंगी बस्ती से होकर एक रास्ता मालगोदाम की तरफ जाता है. शुरू में जहां डलाव पड़ता है, उसके गिर्द कुछेक दूकानें हैं. हलवाई की, दर्जी की और बिसाती की. दूकानों के आस-पास कुछेक घर भी हैं. डलाव, दूकानों और घरों का सह-अस्तित्व चूंकि शुरू से ही है, अब इनके बाशिन्दों को एक-दूसरे की वजह से कोई दिक्कत नहीं होती. कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि डलाव पूरा-का-पूरा भर जाता और दिनों तक यूं ही पड़ा रहता. गंदगी जो फैलनी होती है, वह तो और फैलती ही है लेकिन वे लोग, जो यहां रहते तो न हों, लेकिन गुज़रना यहीं से पड़ता है, उन्हें बदबू से खासी परेशानी उठानी पड़ती है. लेकिन इस बिहारीपुर का चरित्र अलग है, मिजाज बेमिसाल है. यहां के लोगों को डलाव की वजह से बदबू की परेशानी कभी हुई ही नहीं.

डलाव से कुछ आगे हटने पर, यानी मालगोदाम की तरफ बढ़ने पर एक चबूतरा-सा मिलता है. उस पर बच्चों के लिए एक पुराना-सा झूला भी लटका है. झूला एक है लेकिन उस पर सवार होने वाले उम्मीदवार आसमान के तारों की तरह अनगिनत. चबूतरे के ठीक सामने एक संक्षिप्त-सा फाटक भी बना है, कुछ-कुछ सिंहद्वार जैसा. वहां किसी अनगढ़ चितेरे की तूलिका से लिखा हुआ है—'नेताजि सुभास बालबाटीका'.

पाठक, अनगढ़ चितेरे की इस अक्षमता को आपकी क्षमा की ज़रूरत है. लेकिन यह तो आप को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि इस भारत भूमि में अब भी लोग नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नाम स्मृति तर्पण करते हैं. खैर, यह दूसरी बात है. लेकिन बच्चों के कल्याण के लिए नेताजी सुभाष के नाम बना यह स्मारक एक दूसरी वजह से भी बहुत महत्त्वपूर्ण है. लोग अगर अपने बच्चों को नेताजी के आदर्श और मंत्रों से उद्बोधित करना चाहते हैं, आपको खुशी ही होगी. खुशी इसलिए भी ज्यादा होगी कि यह मुहल्ला वह है, जहां खाने के लिए सिर्फ़ रोटियां ही मिल पातीं हैं, जहाँ खपरैल के मकानों में धूप और पानी का अनियंत्रित प्रवेश रहता है.

यहां नेताजी-प्रेम की आग जिसके मन में सबसे पहले फैली थी, वह है—लुक्का पहलवान. देखने में अब पहलवान जैसा तो नहीं लगता लेकिन सुनने में आता है, जवानी में इस पूरे रुहेलखंड में अपनी पहलवानी के लिए मशहूर रहा है. इतना मशहूर कि कई बार अंग्रेज साहब-बहादुर के हाथों से इनाम भी जीते. रुहेलखंड में तब कमिश्नर थे रॉबर्ट साहब. इस 'रॉबर्ट' के आगे-पीछे भी कुछ और रहा होगा, लेकिन इसका पता किसी को नहीं है. वह रॉबर्ट साहब अपने ज़माने में दो बातों के लिए मशहूर थे—खूंखारपन और दरियादिली. जिसके ऊपर उनकी आंखें सुर्ख़ हुई, वह ज़िन्दा जलाया जाता और अगर किसी पर दिल आ गया तो उसे बादशाह बनाकर ही छोड़ते. लुक्का पहलवान बादशाह तो खैर नहीं बन पाया था लेकिन साहब-बहादुर की तरफ़ से पुलिस में भर्ती होने की दावत थी.

जवाब में लुक्का ने हाथ जोड़ लिये थे—हुज़ूर, आपके पांवों की धूल बनकर रहूंगा, लेकिन इस तरह आज़ाद ही रहने दीजिए मुझे. यह गुलाम आपकी मेहरबानी कभी नहीं भूलेगा, सरकार.

रॉबर्ट-साहब ने उंगली से हीरे की अंगूठी उतार कर उसे दे दी थी फिर. बोले थे—कभी अगर ज़रूरत पड़े, बंगले पर हाज़िर हो जाना.

यह है लुक्का पहलवान के जवानी के दिनों की संक्षिप्त कहानी. इस दर्म्यान उसके गिर्द शागिर्दों का एक खास हुजूम रहता था. दूर-दूर से लोग आते थे, लड़ने का नेवता लेकर. संक्षेप में : पूरा रुहेलखंड जान गया था कि यहां है कोई एक शेर-छाप पहलवान. उन दिनों के शागिर्दों में से कुछ आज भी साथ हैं. आज भी अनीस मियां या मक्खन पहलवान के नाम पर सीना चीर कर खून से क़सम खा सकते हैं. अब इस बढ़ी हुई उम्र में लुक्का मुस्कराता है—शागिर्द हों तो इनके जैसे. यह भी नसीब से ही मिलता है, हरेक को कहां मिलता है यह सब ?

अब लोग 'पहलवान' कहकर संबोधन ज़रूर जता जाते हैं लेकिन पुराने दिनों जैसी बात नहीं रही. लुक्का के आबनूसी चेहरे पर अब झुर्रियां चढ़ गईं. बाईं आंख, जो कुछ छोटी है, अब बन्द सी लगती. सर के बाल पके तो खैर नहीं लेकिन झर अलबत्ता गए हैं. हो जाएं यह सब तबदीलियां, इसकी फिकर लुक्का कम से कम नहीं करता. उसी ने चंदे जुटाये, अपने पास की रही सही पूंजी लगा दी, फिर बिहारीपुर के इस इलाके में नेताजी की याद लोगों को दिलाते रहने की खातिर यह स्मारक बना दिया.

पाठक, इस कथा में लुक्का जैसा चरित्र आप के मन में कुतूहल पैदा कर सकता है. अगर वाक़ई करे, आप समझ लीजिए, मन में भावावेग का ज्वार आ गया, करुणा की सृष्टि हो गई.

लेकिन किसी भी हालत में, चूंकि मैं लेखक हूं, इस चरित्र के बारे में अपना निर्णय नहीं दे सकता. मैं कर सिर्फ़ इतना सकता हूं कि सारे तथ्यों को अपनी जान-

कारी के मुताबिक आपके सामने रख दूंगा, विश्लेषण कर दूंगा. लेकिन अंतिम निर्णय लेने का हक़ और जिम्मेदारी सिर्फ़ आप पर ही है.

●●

गेरुआ वस्त्र में बाबा भोलानंद गिरी एक लम्बा अरसा पहले बिहारीपुर में देखे गए थे. सांवले कद का एक लंबा-सा व्यक्ति, जिसके सर पर जटाएं हैं, चेहरे पर दाढ़ी-मूंछें हैं, एकबारगी बिहारीपुर में घूमता हुआ मिल गया था. इस तरह का कोई आदमी शायद कहीं भी आकर्षण का केन्द्र नहीं होता. आकर्षण का केन्द्र न होने का कारण लोगों का अधर्मी होना नहीं है बल्कि भिक्षावृत्ति से जो अपना धंधा चलाते हैं, उनके सामने पहुंचने से कतराना है.

लेकिन एकदम से एक सनसनाती ख़बर फैल गई. लुक्का ने कानों-कान लोगों को बताया—यह 'नेता सुभास चंद बोस' हैं. पुलिस और गोरमिंट की वजह से नए भेस में हैं, बाबा भोलानंद गिरी के नाम से.

लुक्का ने फिर सारी बातें मुहल्ले के लोगों को अच्छी तरह समझा दी थीं—देखना भाई लोगो, बहुत बड़ी जिम्मेदारी है. गोरमिंट को जे सब पता नाय लगना चाहिए, नाय तो इत्ते बड़े आदमी को फांसी की सज़ा दी जाएगी.

लुक्का की बातों पर किसने कितना एतबार किया, नहीं कहा जा सकता. लेकिन लोगों ने उसकी बातें सुनीं और आपस में फुसफुसाने लगे.

ये फुसफुसाहट पहलवान के कानों तक पहुंची तो वह लाड से पीठ पर हथेली रखकर लोगों को समझाता रहा—तुम्हीं लोगों पर तो मेरा भरोसा है. आखिर काम तो गली-मुहल्ले के लोग ही आते हैं. भई, हम लड़ झगड़ कर दुश्मनी अगर कभी करते हैं, तो प्यार भी पालते हैं दिल में, हां. लेकिन बाबा भोलानंद गिरी की बात बाहर अगर पहुंची तो जासूस लग जांगे पीछे.

जासूस के नाम से लोग कुछ सकपकाए थे.

पहलवान ने अपनी नसीहत जारी रखी थी—इतने बड़े नेता की ख़िदमत करोगे तो पुन्न मिलेगा. किताबों में छपा है, चाहे किसी से पढ़वा लो. पूरे हिंदोस्तान के शेर थे नेता सुभाचंद बोस. अंग्रेज-फिरंगी की नाकों में दम कर रखा था इसने अपनी बहादुरी से, हां.

भगीरथ के 'होटल' के नज़दीक एक चौगान है. चौराहे से पश्चिम की तरफ जाने से कुछ ही दूरी पर पीले रंग की दीवारों का पीपलघर आता है. पीपलघर इसलिए कि इसके सामने एक सुवृहद् पीपल खड़ा है. कब यह उगा और कब से यहां खड़ा है, इसकी ख़बर किसी के पास नहीं है. न हो, इससे क्या? लोग इन पीली दीवारों को पीपलघर के नाम से पुकारते हैं. इस कथा में सिर्फ़ यही प्रासंगिक अंश है.

बाहर से यह घर जरूर मालूम पड़ता लेकिन असल में यह घर है ही नहीं. पीली दीवारों से घिरा हुआ एक अहाता है. अहाते के कोने में एक कोठरी है और कोठरी के नीचे एक तहख़ाना-सा है. पीपलघर का भूगोल सिर्फ़ इतना ही. भूगोल जितना संक्षिप्त है, इसका इतिहास भी उतना ही. कोई खंडसारी थे शहागंज में—लाला गनेसीलाल, यह उनकी इच्छा का एक फल है. अखाड़ेबाजी तो गनेसीलाल ने कभी नहीं की लेकिन पहलवानों की दिल से इज्ज़त करते थे. कहते यही थे— शरीर ठीक न हो तो जीने का मतलब ही क्या है? लुक्का पहलवान ने कभी लाला से गुज़ारिश की थी. लाला को भी अपना कीर्तिस्तंभ जीवनकाल में ही देखने की तमन्ना हुई थी. नतीजे में यह पीपलघर बन गया था.

दरवाज़े से घुसते ही दीवार पर सीमेंट से बनी हुई हनूमान जी की मूर्ति

मिलेगी. कभी यहां का उसूल रहा है कि पहले पवनपुत्र के सामने मत्था टेको फिर कच्छा कसके अखाड़े में उतरो.

लेकिन यह सब पुरानी बातें हैं. लाला गनेसीलाल मरखप कर पंच तत्वों में विलीन हो गए. शहामतगंज में उनके पोतों के हवाले खंडसार की वह आढ़त तो खैर अभी भी है लेकिन बरेली वालों को मालूम ही नहीं कि कभी इस नाम का एक मशहूर आदमी यहां रहता था. और लुक्का पहलवान भी अब इस क़दर बदल गया है कि यक़ीन ही नहीं होता, यह शख्स कभी अखाड़ों में बाज़ी मारता रहा है, लाल-पीले फिरंगियों से इनाम लेता रहा है. अखाड़ेबाज़ी तो खैर अलग बात है, किसी ने पहलवान को अखाड़े के आस-पास या पहलवानी में दिलचस्पी लेते हुए देखा भी नहीं होगा. लेकिन नाम वही पुराना वाला ही रह गया. दुश्मन हो या दोस्त—पुकारते पहलवान कह कर ही.

इतनी तब्दीलियों के साथ एक और तब्दीली यहां हो गई. पीपलघर अब अखाड़ा नहीं रहा. अब ज़माना बदल गया, लोग अखाड़ेबाजी में दिलचस्पी ले ही कहां पाते हैं ? नई उमर के लड़के नीले-पीले कपड़े पहने घूमते हैं और यहां आकर सेहत बनाते हैं. बाहर एक माडन बोर्ड भी टांग दिया गया—'तरुण भारत व्यायाम-शाला'. व्यायामशाला है तो एक कमेटी भी होनी चाहिए. ढाल पर नौरंगीलाल वकील रहते हैं, वह इसके अध्यक्ष बनाए गए.

नौरंगीलाल वकील चाहे जैसा भी हो, व्यायाम वग़ैरह में जो दिलचस्पी लेता है, वह आदमी बिना खोट का है. उसकी बैठक में कानून की किताबों के बीच कुछ कप और मेडल भी धूल की पर्तों के नीचे अस्तित्वरक्षा में आतुर दिखाई पड़ जाएंगे. ये उसके गुज़रे दिनों की कहानी कहते हैं. कोई इनके बारे में कुछ पूछता है तो नौरंगी पहले अंदर की तरफ़ चाय के लिए आवाज़ फेंकता है फिर पूरे विस्तार से कहानी सुनाता है. कहानी कहते-कहते वह इस तरह आवेग में आ जाता है कि वक्त का ध्यान ही नहीं रहता. याद ही नहीं रहता कि कचहरी जाकर अपनी हाज़िरी भी लगानी है.

व्यायामशाला अब जिनके हाथों है, वे न तो अखाड़ेबाजी को कुछ समझते हैं, न लुक्का पहलवान को ही इज़्ज़त देने को तैयार है. न दो इज़्ज़त, इसकी फ़िक्र लुक्का नहीं करता. लेकिन यह मत भूलना कि इस पीपलघर की बुनियाद पहलवान के ही हाथों बनी है. इस नाते जब तक वह ज़िन्दा रहेगा, कुछ हक़ का मालिक आखिर तक बना ही रहेगा.

हक़ की बात आगे बढ़ी और झगड़े में तब्दील हो गई. पहलवान ने चाहा कि बाबा भोलानंद गिरी पीपलघर के तहखाने में रहें. इससे फायदा यह होगा कि किसी को ख़बर भी नहीं लग पाएगी और अपना फ़र्ज़ भी निभ जाएगा.

नौरंगीलाल वकील ने तो खैर कोई जवाब नहीं दिया लेकिन दूसरे लोग खामोश नहीं रहे. रेलवे के कारखाने में खलासी है डोरीलाल. वह आगे आया और चुनौती-सी दी—हां आकर जिसम बनाओ, अच्छी बातें करो, हम कुछ नाय कैते, लेकिन समझ लो, इसे चंडूखाना नाय बनाने देंगे. गांजा-भांग के दम मारने हैं तो रेलवे लाइन के उस पार जाओ, फिर चाहे गांजा पियो चाहे नंगा ही नाच लो, हमें कुछ नाय कैना.

पहलवान को गुस्सा आ गया था—नंगा नचा तू अपनी भैन को, लुगाई को. हम तेरे बाप की कमाई तो खाते नाय जो तेरा कहा सुनेंगे. कान खोलकै सुनले, बाबा को बरेली अगर ठैराना है जे लुक्का पेलहवान हीयई ठैराएगा. बात को जोरदार बनाने को उसने फिर अपने सीने पर मुक्का लगा लिया.

डोरीलाल का साथ देने के लिए रामधनी था, उसके पीछे गोबिन्द भी था.

लेकिन किसी को फिर बाद में हिम्मत नहीं हुई थी. डोरीलाल भी समझ गया था, गुस्सा अगर पहलवान को वाक़ई चढ़ गया, किसी का भी सर और धड़ अलग कर देना उसके लिए मामूली बात होगी.

भगीरथ बीच में आ गया था तब तक. उसने सुलह करा दी थी—बुरा न मानो पेलहवान. बाबा हींयई क्या, चाहो तो इस ग़रीब के घर पर ही ठैरा लो. लेकिन आपस में जे झगड़ा फसाद अच्छा नाय'''.

●●

'बाबा भोलानंद गिरी' नाम के लबादे वाला शख़्स आखिर में तहखाने में ही आसीन हुआ था. जो संक्षिप्त-सी मुठभेड़ इस वजह से हो गई थी, उसे दोनों ही तरफ के लोग भूल तो खैर नहीं पाए थे लेकिन एक तरह से नज़र-अंदाज़ कर दिया था. व्यायामशाला वाले आते, व्यायाम करते, ज़रूरत पड़ी तो आपस में फुसफुसाते भी. फिर तहखाने के गिर्द बैठे लोगों को कनखियों से देखकर अय्यूबखां चौराहे की तरफ़ या कम्पनी बाग़ में शाम की हवा खाने चले जाते.

लुक्का के पुराने शागिर्दों में से अनीसमियां ने एक बार पीछे से कह दिया था—मजनूं बनकर चले हैं लौंडिया फांसने'''

इस बात को लेकर वैसे आमने-सामने गर्मागर्मी तो खैर कभी नहीं हुई लेकिन तनाव काफ़ी आ गया था. आखिर में बात पहलवान तक पहुंची तो उसने मियां को दो चांटे रसीद कर दिए थे—आइन्दा दूसरों पर कीचड़ मत उछालना'''

व्यायामशाला वालों के अहम् की संतुष्टि हो गई थी इससे. जो कड़वाहट पिछले दिनों आ गई थी, वह मिटी तो खैर नहीं लेकिन दोनों ही तरफ के लोग एक-दूसरे को सहने के आदी हो गए थे.

कभी-कभी नौरंगी वकील बाबा के सामने भी पहुंच जाता, शायद भक्ति मार्ग से मोक्ष प्राप्ति की इच्छा होने लगी है. खैर, उसके पहुंचते ही भक्तों में कुछ खलबली-सी मच जाती. कोई मामूली बात थोड़े ही है, वकील साहब खुद आए हैं. दूसरी तरफ के लोगों का साथ देने के बावजूद उनकी इज़्ज़त की जाती. लुक्का या उसके शागिर्दों में से कोई उठकर बिल्कुल बाबा के सामने एक जगह बना देता.

नौरंगी वकील वहां से निकलता तो व्यायामशाला वाले कानाफूसी करना शुरू करते. लेकिन आज तक कभी ऐसा नहीं हुआ, जबकि उन्होंने व्यायाम के तरीकों के अलावा यहां बैठकर कुछ और बताया हो.

डोरीलाल कभी-कभी कुछ एकदम से उगलने को होता तो उसे पीछे से कोई-न-कोई रोक लेता—जो कुछ चलरिया, चलने दे. तू काहे को परेशान होता ? बच्चू, खा-पी, मौज कर'''

डोरीलाल को, रामधनी को, गोबिन्द को दिक़्क़त तो खैर जितनी होनी थी, होती ही रही लेकिन शक-सा हो गया था. नेता सुभासचन्द बोस को टिकना होता तो इस दुनिया में एक लुक्का पेहलवान ही रह गया था ? खैर चलो, मुक़द्दर समझकर जे बात अगर कोई मान भी ले तो भी यक़ीन करने लायक़ बात पूरी कहां बनती ?

पिछले हफ़्ते गोबिन्द ने देखा था कि रात को बारह-चौदह आदमियों का एक जत्था अंधेरे में आया और सुबह होने से पहले ही निकल गया. इससे पहले भी इस तरह की घटनाएं इतनी बार हो चुकी हैं कि व्यायामशाला वालों का शक पक्का होता जा रहा है.

भगीरथ ने एक बार पहलवान से कहा था—बाबा की खिजमत की जरूरत पड़े तो हमें भी कै देना, पेहलवान. हम भी सेवा करके कुछ पुन्न कमा लेंगे. अपन का

तो नसीब ही खोटा है. जात से हूं कहार का बेटा लेकिन करनी पड़ रई है चाय-बिस्कुट की सौदागरी.

लुक्का ने हंसकर जवाब दिया था—चाय-बिस्कुट खिलाकर भी तो पुन्न ही कमा रहे हो. एक ही में डटे रहो, फायदे में रहोगे. धंधा अगर बदल लिया, कौन जाने कल को क्या हो ? घाटा भी तो लग सकता है.

भगीरथ चुप हो गया था फिर. समझ गया था, लुक्का पहलवान से टेढ़ी बातों में जीतने के लिए चारेक जनम और लेने पड़ेंगे. लुक्का भी जल्दी में फिर सामने की तरफ निकल गया था.

पहलवान निकल गया तो जगदम्बा सामने आ गया था, भगीरथ के एकदम सामने—चाय-बिस्कुट बेचते-बेचते तेरी खोपड़ी की अक़ल भी बह गई, समझा ?

भगीरथ सकपका रहा था.

—ज़रूरत क्या थी पैहलवान को छेड़ने की ? जगदम्बा बीड़ी का लम्बा कश ले रहा था.

—मैं तो मज़ाक कर रिया था.

जगदम्बा ने दहाड़ा—अबे-ए, मज़ाक के बच्चे, कुछ ऐसी-वैसी बोल गया तू तो तेरे बाप का नाम किसी और से पहले मैं ही भुला दूंगा. समझा ?

भगीरथ दांत निकालकर हंसने लगा था लेकिन उसे इस तरह डांटा क्यों जा रहा है, क़तई समझ नहीं पा रहा था.

जगदम्बा ने बीड़ी का धुआं छल्लों में निकालकर सामने की नाली में थूक दिया था—गधे की औलाद, तेरी मेज-कुर्सी पर बैठके जो बातें होती हैं, उसकी एक भी अगर बाहर निकली तो समझले, खोपड़ी पर इतनी जूती लगाऊंगा कि तेरी औलाद भी गंजी ही पैदा होगी.

भगीरथ ज़ोरों से हंसने लगा था—तुम वैसे बात कैते हो मजेदार ही. मजा आ गया, उस्ताद.

डोरीलाल आ गया था तब तक. जगदम्बा ने भगीरथ के लिए आवाज फेंक दी थी—दो 'पेसल' चाय और बिस्कुट रखदे.

बात डोरीलाल ने शुरू की—बाबा जी महाराज को देखो तो मानना पड़ेगा. आंखें इत्ती लाल रैती हरवक़्त, जैसे भसम करके रख देगा सब कुछ.

—गांजे में दम मारो तो ऐसा तुमारा भी हो जाएगा. अब देख लेना, थोड़े दिनों में जे पीपलघर चंडूखाना बनकर रै जाएगा. जगदम्बा ने मेज पर मुक्का मारा और सारी बातें इकट्ठे कह दीं. लगभग एक ही सांस में.

—इस बिहारीपुर मुहल्ले में इसी एक चीज की कसर रै गई थी. अब समझो, सो भी पूरी हुई.

—फिर भैन-महतारी की इज्जत भी सबके सामने उतारी जाएगी, समझ ले. जब मत कैना कि किसी ने हमें बताया ही नाय था.

—देखो भई, हम तो एक चीज जानते हैं, बाबा चाहे नेता सुभासचंद बोस हो, चाहे गांधी बाबा, मामला आसान नाय है. और अब तो इत्ता टेढ़ा हो गया कि तुम-हम संभाल भी नाय सकते. हे ईश्वर ! काश ! गांधी बाबा की मौत की खबर इन लोगों तक भी पहुंचती.

—जे बात सही है. चाय आ गई थी. जगदम्बा ने बिस्कुट को चाय में डुबोया और पूरी आश्वस्ति के साथ मुंह में रख लिया—लेकिन नेता सुभासचंद बोस को अगर गोरमिंट फांसी लगवा दे, तो वो बरेली के इस बिहारीपुर मुहल्ले में आकर पालथी

मारकर बैठते ? अरे भई, तुम भी तो सयाने हो. जरा दिमाग़ पे जोर डालो. अकल को काम में लाओ. सबकुछ पानी की तरह समझ में आ जाएगा.

●●

. 'बाबा भोलानंद गिरी' आँखें बंद किए ध्यान की मुद्रा में बैठे रहते और उनके गिर्द हाथ जोड़कर बैठने वाले इस बात की प्रतीक्षा में रहते कि वे आंखें खोलें और किसी को सेवा के लिए कुछ कहें. बाबा को लेकर इतना फ़साद जरूर उठ खड़ा हुआ लेकिन कोई जानी दुश्मन भी कह नहीं पाएगा कि उन्होंने कभी अपने शिष्यों में भेद-भाव किया हो. कोई अगर शिष्य न भी हो, तो भी कोई फ़र्क नहीं पड़ता. यहां आने की मनाही किसी के लिए भी नहीं है. यहाँ तक कि कोई अगर मुसलमान हो या ईसाई हो या किसी और 'मलेच्छ' जात का हो, तो भी यहां दरवाज़ा हमेशा खुला ही मिलेगा.

बाबा के सामने लुक्का पहलवान पहुंचता है तो शागिर्दों में लगभग वैसी ही प्रतिक्रिया होती है, जैसी नौरंगी वकील के आने पर होती. बिल्कुल सामने बैठा हुआ कोई पीछे की तरफ खिसक लेता और पहलवान वहाँ जाकर हाथ जोड़े आसीन हो जाता.

जादू का करिश्मा-जैसा ही यह है कि लुक्का के पहुंचते ही बाबा की आँखें खुल जातीं. लुक्का उनके और भी नज़दीक पहुंचता और पांव दबाना शुरू करता. बातें तो ख़ैर कभी-कभार ही होतीं लेकिन लोगों को महसूस यही होता रहता कि इस खामोशी में भी बाबा की 'बानी' गूंज रही है आख़िर सिद्ध महात्मा हैं. यह तो होगा ही !

एक-आध बार लुक्का के नज़दीक के लोगों में से मक्खन, झब्बू वगैरह-वग़ैरह ने भी बाबा के पांव दबाने की कोशिश की थी लेकिन अनीस ने रोक दिया था--- बाबा के ह्यां आने की मनाही जरूर नाय है लेकिन उनको छू कोई नाय सकता.

कभी-कभी इतना जरूर हो जाता है कि कुछ देर तक कश खींचते रहने के बाद बाबा अपनी चिलम किसी को थमा देते. जिसको यह मिलती, वह बहुत नसीब वाला समझा जाता.

कुछ लोग ऐसे भी आए, जिन्होंने बाबा के बारे में सुना था. यहां तक कि रामपुरबाग से एक बार एक अंग्रेज जैसी लड़की खुद गाड़ी चलाकर आई थी. वह गाड़ी से नीचे उतरी तो उसी को देखने वालों का एक तांता लग गया था. किसी ने कहा—बिल्कुल बिलायती मेम है लेकिन मक्खन ने कहा—बिलायती तो नाय है, लेकिन है किसी मालदार आदमी की लौंडिया. फिर उसने अपनी ही कही बातों को रसयुक्त कर दिया था —अब तो जमाना ऐसा आया कि जे पता ही नाय चलता कि किसी की जोरू है या लौंडिया. सब एक जैसी लगती हैं.

ख़ैर, वह लड़की गाड़ी से उतरी और एकदम से किसी से बिना पूछे तहखाने में हाज़िर हो गई.

लोगों में खुसर-फुसर फैल गई थी. व्यायामशाला में शरीर-चर्चा करने लोग भी इसी तरफ़ आ गए थे.

शंकर ने कहा—जासूस हो सकती है, क्यों ? उसने डोरीलाल से पूछा था.

डोरीलाल ने जवाब नहीं दिया. वैसे उसे लग गया था कि अब बहुत जल्द कुछ होनेवाला है. तब पता चलेगा, लुक्का के बच्चे को कि आटे-दाल का भाव क्या है ? उसके जी में आया कि चिल्लाकर कहे—सालो, जिस थाली में खाते हो, हगते भी उसी में हो. मुहल्ले वालों को इसी तरह मूली-गाजर के भाव पूछोगे तो बस जेई मिलेगा.

आख़िर में वह बहुत खुश हो गया था कि अब बहुत बढ़िया कोई तमाशा होने वाला है.

जगदम्बा भगीरथ के होटल में बैठकर फिल्मी गाना आंखें बंद किए सुन रहा था. उसे ख़बर हो गई थी और वह लगभग दौड़ता हुआ-सा यहां आ पहुंचा था. उसने डोरीलाल के कानों में मुंह लगाकर कुछ कहा फिर विगलित होकर दाहिनी हथेली पर बाईं हथेली पीट ली.

डोरीलाल ख़ामोश ही रहा. ख़ामोश और निर्विकार. अब जब कुछ होने का वक़्त आ ही गया तो ख़ामख़्वाह यूं ही कुछ कहने से फ़ायदा ही क्या ?

जगदम्बा को चुपचाप रहकर तमाशा देखना खल रहा था. उसने अपनी बात आगे बढ़ाई—वैसे बरेली में भी औरत-जासूस है, पता ही नाय था. हम तो अब तलक जे ही सोचते रहे, कलकत्ता-बम्बई में ही जे सब होता है. उसे खुशी इस बात पर होने लगी थी कि बरेली की इज्ज़त अब पहले के मुक़ाबले काफ़ी बढ़ गई. थोड़े दिनों में यह शहर कलकत्ता-बम्बई जैसा भी बन सकता है. फिर तो समझो मज़ा आ गया.

●●

लड़की अंदर घुसी और आंखों पर लगा हुआ धूप का चश्मा उतार लिया. अंदर बाबा के सामने जो लोग बैठे थे, वे एकदम से सकपकाने लगे थे फिर. तक़दीर से उस वक़्त पहलवान भी वहीं था. नहीं तो किसी में इतनी हिम्मत भी नहीं रही थी कि बैठ जाने के लिए कहे. वैसे मक्खन के मन में यह बात आई तो थी लेकिन उसने इसलिए कुछ नहीं कहा कि फिर वह फर्राटे से अंग्रेजी में कुछ बोल गई तो यहां हाल एकदम से खस्ता हो जाएगा.

आख़िर में लुक्का ने नज़दीक आकर कह दिया था—बैठ जाओ, मेमसाब. बाबा के सामने खड़े रहने की मनाही है.

नीचे जो दरी बिछी थी, उसके ऊपर धूल की एक ख़ासी पर्त जमी हुई थी. दरी की बजाय अगर पांवों के नीचे सिर्फ़ फ़र्श ही होता, तो भी गर्द इससे ज्यादा होती, ऐसा नहीं लगता. उसने नीचे की तरफ़ देखा फिर जहां खड़ी थी वहीं बैठ गई.

दरवाज़े के पास इस बीच ख़ासी भीड़ जम गई थी. भीड़ में छोटी उम्र के बच्चे वैसे ज्यादा ही थे लेकिन बड़ी उम्र के लोग भी कम नहीं थे. उनकी आंखों में जो उत्सुकता है, उसे लुक्का पहलवान समझ सकता है. आख़िर में वह नज़दीक गया और कड़ाके की एक गाली ज़बान से उंडेल दी. लोग फिर खिसकने लगे थे.

बाबा ध्यान की मुद्रा में आंखें बंद किए बैठे थे. मेम-जैसी लगने वाली लड़की ने पर्स खोलकर जापानी पंखा निकाला और चेहरे के गिर्द झलने लगी. उसके चेहरे पर पसीने का जमाव-सा था.

मक्खन ने फुसफुसाकर अनीस के कानों में कुछ कहा. अनीस को शायद समझ में ही नहीं आया था. वह चुप था लगभग. लेकिन लुक्का ने भौंहें सिकोड़ीं और हुक्म-सा दे दिया कि इस तरह बोलने की जरूरत क़तई नहीं है.

लड़की एकटक बाबा का चेहरा देख रही थी. फिर एकदम से पूछ लिया था—तुमसे कुछ पूछना चाहती बाबा···

जवाब दिया था पहलवान ने—बाबा मौन रखते हैं. किसी से बात नाय करते. लेकिन आपके दिल में अगर सवाल है तो बाबा को पता है वो. बाबा ने जरूरत समझी तो रात के बखत सपना आएगा आपको. उसमें सवाल का जवाब मिल जाएगा.

वह चुप थी. प्रतिक्रिया यह हुई कि चेहरे पर नाराजगी का एक भाव उभर आया था.

लुक्का ने अपनी बात आगे बढ़ाई—वैसे मेमसाब एक बात है, अगर आपको गपना आया, डर मत जाइएगा. डर गई तो जवाब फिर मिलने से रह जाएगा. बाबा में भक्ति रखिए, आपको जरूर कुछ-न कुछ लाभ होगा. बड़े पहुंचे हुए महात्मा हैं ये.

उसने जवाब नहीं दिया और एकदम से उठ खड़ी हुई. लुक्का पीछे-पीछे बाहर आ गया, गाड़ी तक. आखिर में उसने गाड़ी स्टार्ट की तो पहलवान ने हाथ जोड़ लिए थे—बड़ी मैरबानी की मेमसाब, आपने इन गरीबों के मुहल्ले में आकर.

इसका कोई जवाब उसने नहीं दिया. गाड़ी धुआं छोड़कर सामने की तरफ़ निकल गई थी.

●●

नौरंगी वकील तकिया कालेशाह के सामने से गुजर रहा था. पहलवान ने रोक लिया—जै राम जी की, वकील साब.

नौरंगी ने ब्रेक लगाई और सायकिल से उतर पड़ा. थोड़ा मुस्करा भी लिया—और अपने हाल सुनाओ, पेहलवान. काफी दिनो में मिले हो.

—थोड़ा काम-धंधा में जुटा रैना पड़ता. सो बखत एकदम नाय मिलता. वैसे आपको हम लोग याद तो कर्ते ही रैते है.

बात नौरंगी की जबान पर आ गई थी. सोचा था कि पूछ ही डाले—कौन-सा काम-धंधा तुम कर रहे हो, थोड़ा हम भी तो जानें, पहलवान. लेकिन जानबूझकर कुछ नहीं पूछा. पूछने पर वह भरे चौराहे में नंगा किए बिना दम तो लेता नहीं. फर्राटे से फिर लुक्का ही पूछ लेता—तुमारी नई लुगाई, सुनते हैं, किसी की रांड है, वकील साब? कुछ तो अपनी उम्र का ख्याल किया करो. तुम्हारी लौंडिया से बीवी बड़ी तो खैर नाय ही, कुछ छोटी भी हो सकती है.

खैर, नौरंगी ने आवाज़ को मुलायम कर लिया था. फिर कुर्ते की जेब में पड़ी हुई चांदी की डिबिया निकाली और एक पान निकालकर मुंह में ठूंस लिया. पान चबाया, पीक फेंकी फिर बोला—अरे भई, कामधंधा कौन नाय करता? हम भी तो कुछ-न-कुछ करते ही रैते है. लेकिन एक मुहल्ले में रहने के नाते कभी-कभी भेंट होनी ही चाहिए···शब्दों में गद-गद भाव-सा था.

—जे तो आपकी मैरबानी है सरकार, जो हम गरीबों पर भी ऐसे सोचते हैं. लुक्का ने हाथ जोड़ लिए थे—वैसे हुजूर, गुस्ताखी माफ़ हो तो एक बात कहूं. आप ठैरे बड़े आदमी, कोई बात हुई तो हम मूरख लोग आपके सिवा और कहीं जा ही कहां सकते?···

नौरंगी ने लुक्का की पीठ पर हाथ रख दिया—बोल भई, बोल. जो जी में आए बोल. तेरी बात का बुरा मैं मानने वाला नाय, हां. बात कह ली तो कलेजा कांपने लगा था. भरी सड़क पर पहलवान ने कुछ ऐसी-वैसी कह दी या पूछ ली तो समझो, नंगा होने में देर नहीं लगेगी.

—जे तुम्हारा चेला है न, संकर, थोड़ा समझा देना उसे. क्या फ़ायदा कि पीछे से हमें कोई गंजेड़ी कैता रहे. देखो वकील साब, गांजा में अगर दम भी मारते हैं तो कमाई अपनी ही होती है, पूरे बरेली सहर में कोई है ऐसा माई का लाल जो कै सकता लुक्का पेहलवान या उसके शागिर्दों में से किसी ने औरों की लुगाई या भैन-महतारी की तरफ़ आंख भी उठाई हो. लेकिन कोई अगर उठाता भी हो, हम कुछ नाय कैते. हमें क्या लेना-देना इससे? संकर को थोड़ा बता देना, वकील साब. चाहे सेहत बना लो, चाहे दूसरों की जोरू पर आंख रगड़ो, हमारे ऊपर थूका तो हम साबुत नाय छोड़ने वाले. पिछले साल भंगी बस्ती में मेहतर की लौंडिया को देखकर छाती पकड़कर

'आह' बोल गया था तो हो नाय गई थी मुरम्मत ? जे तो गनीमत रही कि अनीस मियां भी उधर से गुज़र रिया था. उसने छुड़ाया न होता तो जूते की माला पिन्हा के पूरा बरेली महर घुमाय देते वो लोग.

नौरंगी ने पान की पीक फेंकी और पहलवान की पीठ थपथपा दी—अरे भई, तुम लोग ठहरे मयाने आदमी. लौंडे-लपाड़े आजकल के ममझो यूं ही ज़रा मिज़ाजी होते हैं. इनकी बात का बुरा न माना करो. वैसे कभी हम भी ममझाय देंगे.

—वकील साब, आप चाहे हमारी खोपड़ी पर दस जूते मार लो, हम कुछ नाय कैते. ममझ लेंगे, बड़े आदमी हैं सो गलती देखकर डांट-फटकार दिया. लेकिन चूहे की औलाद पीछे से कुछ कैती है तो समझो, हमारे बदन में आग लग जाती. फिर चाहे हमें फांसी पे लटकालो, चाहे जेल में बंद कर दो, आगे उसने अगर बदमाशी की तो हम भी कुछ करके ही दम लेंगे.

—तू अब भूल जा भाई, हम देख लेंगे इसे. अब सुना अपना हाल. हम भी तो कुछ अपनी बातें कहें-सुनें.

—सब मेरबानी है, सरकार. लुक्का गुस्मे में उबल रहा था—हम तो नंगा करके नचा मकते हैं इन सेहत बनाने वाले लौंडों को. हम जानते हैं, मढ़ीनाथ के जग्गू धोबी की लौंडिया को फांस लाए थे तुमारे चेले लोग. फिर इमी तहखाने में, जहां अब बाबाजी हैं, तीन-तीन दिन-रात एक-एक ने खूब रंग जमाया. लेकिन लौंडिया भी पूरी लम्बारी थी. आखिर में यहां से गई तो किमी की कलाई की घड़ी गायब, किसी की सोने की अंगठी. ऊपर से धोबी को दस-दसके तीन पत्ते देकर चुप कराना पड़ा था.

नौरंगी को ताज्जुब हो रहा था—जे सब सच है पहलवान ?

लुक्का हंसा—अभी तो इत्ता ही सुना तुमने. सच तो आगे ऐसा है कि सुनोगे तो सर पीट लोगे कि कित्ते भोले बनते हैं तुमारे चेले लोग. तुम हो किनके बीच····?

—जे सब जमाने का तमाशा है पहलवान, तमाशा. अरे भई, कभी जवानी अपन लोगों के पास भी थी···

लुक्का ने नौरंगी वकील की बात छीन ली थी—अब तमाशा कै लो, चाहे नौटंकी, बैठकर रोने के अलावा कर ही क्या सकते, लेकिन बस जे समझ लो कि अपन लोगों का ज़माना भी ऐमा था कि उसमें जीने का दिल होता था. अब तो सब साले हिजड़े बन गए. ऐसों की सूरत देखने से भी पाप लगता है.

नौरंगी वकील फिर धीरे-धीरे बढ़ने लगा था. सायकिल साथ जरूर थी लेकिन उम पर बैठकर पैडिल मारने की तबियत ही नहीं हुई.

पहलवान ने बीड़ी सुलगाई और अपने को काफी हल्का महसूस किया. इसके बावजूद लगता यही रहा कि अगर इन लौंडे-लपाड़ों के साथ एक बार दो-दो हाथ हो जाए, तो कुछ राहत तो मिले.

●●

व्यायामशाला में जहां लाल लंगोट वाले हनुमान की मूर्ति है, जब से अखाड़ा टूटा, उस तरफ़ नज़र उठाकर देखने वाला भी कोई नहीं रहा. कभी-कभी पहलवान के शागिर्दों में से कोई आकर मत्था टेक जाता था लेकिन अब वैसा कुछ नहीं होता. जब अखाड़ा नहीं रहा, अखाड़ेबाजी नहीं रही तो फिर वह रस्म ही क्यों ? वैसे भी वे लोग इस तरफ इसलिए भी नहीं आना चाहते कि इधर आते ही लौंडे-लपाड़ों में खुसुर-फुसुर शुरू हो जाती.

कभी-कभी शंकर का यार जगन्नाथ कह देता—हनुमान जी की किरपा ही

अब बदल गई. पहले उन्हें अखाड़ेबाजी का शौक था. लंगोट बांधते थे. अब जमाना बदल गया सो वो भी बदल गए. अब वो भी सनीगावालों की तरह रंगदार बन गए. किरपा भी अब इसलिए बदल गई उनकी. अब तो किरपा उन्हीं को मिलती है जो सीने पर लोहे के पहिए उठाता, सीना चौड़ा करने की खातिर कमानी खींचता···ये बातें इस तरह कही जातीं कि आवाज़ तहखाने तक साफ़ पहुंच जाए. जगन्नाथ की बात खत्म होती तो एक जोरदार ठहाका पूरे पीपलघर में गूंज जाता.

शंकर दोनों हाथों से गदा घुमा रहा था. जगदम्बा उसके नज़दीक आया और ठुड्डी पकड़ ली—प्यारे, मैं लौंडिया होता तो हाथ धोकर पड़ जाता तेरे पीछे. फिर उसने शंकर की बांह की गोलाइयों को उंगलियों से छूकर देखा—पूरा फ़ौजी कर्नेल लग रिया है तू.

शंकर सिर्फ़ मुस्कराया था.

यहां का उसूल यही है कि जितनी देर अंदर रहो, मुंह बंद रखो. फिर बाहर चलकर चाहे जो मर्जी सो कर लो. लेकिन जगदम्बा है कि उसे बातें करने से ही फुर्सत नहीं मिलती. दो बार अगर दंड-बैठक लगाया है, दस मिनट तक फिर लतीफ़ा-बाज़ी करता फिरेगा.

शंकर को कभी-कभी बुरा तो लगता है लेकिन कुछ कहना भी मुमकिन नहीं होता. लतीफ़ाबाज़ी जरूर करता है जगदम्बा. लेकिन फिर उसकी कीमत भी भगीरथ के 'होटल' में अदा कर देता है. चाय तो पिला ही देता. कभी-कभी बिस्किट भी मिल जाता है. और वैसे भी आदमी थोड़ा बक-झक जरूर करता रहता है, लेकिन है दिलेर ही.

जगदम्बा फिर कोने की तरफ़ चला गया था. चबूतरे के ऊपर खासी गर्द थी. लेकिन उसकी परवाह यहां आने वालों को कभी नहीं हुई. वह बैठ गया और इत्मी-नान से बीड़ी सुलगाने लगा. कभी-कभी मन करता है कि बाक़ायदा एक उसूल बना कर दंड-बैठक लगा लो तो बुरा भी क्या है. थोड़ा-बहुत तय भी वह कर लेता लेकिन बाद में फ़ैसले बदलने पड़ते. अब रखा भी क्या है सेहत में? तीन लौंडियां और दो लौंडे निकाल लेने के बाद अब सेहत बनाए तो किसके लिए? लौंडियों और लौंडों की अम्मा के लिए? धस्मसस्साली की? याद भी क्या आया? इससे ज़्यादा मालदार तो रोज सुबह पखाना साफ़ करने वाली कोई भी मेहतरानी होगी. हे लंगोटधारी हनुमान जी, इससे तो अच्छा यही था कि मैं भी तुम्हारा चेला बनकर एकदम बिरम-चारी बन जाता···

तहखाने से मक्खन बाहर निकला था. सामने के हिस्से पर पीपल के पत्ते फैले हुए हैं. धूल की पर्त भी काफ़ी मोटी हो गई है. मक्खन ने झाड़ू उठाई और बुहारने लगा. थोड़ी धूल उड़ने लगी थी. जगदम्बा ने फिर वहीं से आवाज़ फेंक दी थी—अरे ऐ पैहलवान मास्टर, थोड़ा प्यार से बुहारो. कम-से-कम हमारी आंखों में धूल नाय झोंकना, वैसे ही डालडा खा-खा के आंखों की रोशनी घटती जा रही है···

मक्खन ने आंख उठाकर एकबार देखा फिर उसी तरह बुहारने लगा. लगता नहीं कि किसी ने अभी थोड़ी देर पहले उससे कुछ कहा भी है. जगदम्बा फिर चबूतरे से उतरा और उसके सामने जा खड़ा हुआ—ऐ भाई, कुछ हमारी भी तो सुनो. या फिर बुहारना ही है तो हमारे आगे-पीछे यह काम कर लिया करो. तुम्हारे मन माफ़िक भी होगा और अपन को भी शिकायत नाय रहेगी.

मक्खन तनकर खड़ा हो गया था—बखेड़ा क्यों खड़ा करते हो? हमें पता है, तुम-जैसे लोगों के हाड़-मांस में कित्ती ताकत है. ह्यां आते किसलिए हो? बीड़ी का

दम मारने और फिलम के गाने सुनाने ? ह्यां हमें जरूरत नाय है, मन हो तो अपनी लुगाई के सामने बैठकर गाने गाओ, कमर मटकाओ, जो मरजी मो करो•••

जगदम्बा जोश में आ गया था—बड़े भगत बने फिरते हो, साधु-महात्मा को ठैराते हो अपने संग ! फिर मालगोदाम से चीनी की बोरी उड़ाने बखत भगताई कहां गई थी तुम्हारी ? जेल भी काट आए, मुहल्ले को बदनाम किया—हमने फिर भी कहा नाय कुछ. लेकिन ताने किस बात के देते हो ? चाहे फिलम के गाने गाएं, चाहे नौटंकी में जाकर नाचें, अपनी कमाई से करते हैं. किमी और पे तो हाथ नाय फेरते.

—देख, जगदम्बा के बच्चे, अब तक जबान नाय खोली थी मैंने. लेकिन फिर तुझे फसाद ही करनी हो तो आजा. देख लूं, तेरे भी सीने में कित्ते बाल हैं.

—ताव किसे मारता है ? ऐसे ताव भोतेरे देखे हैं मैंने. कोई छुटल्ला सा लौंडा-लपाड़ा मिले तो डरा-धमका लियो लेकिन ह्यां इस सीने में बस जे समझ ले कि किमी बात पे डर नाय होता. और सुनले एक बात, भगताई कर चाहे चोरी-चमारी, इज्जतदार आदमी के साथ बात तो करना सीखा नाय, तो समझ ले, जिन्दगी खटाई में पड़ जागी.

—तेरा बाप भी रिया है कभी इज्जतदार आदमी ? चमार टोली में रेढ़ी लगाकर मूली-गाजर बेचता था. पुरानी बाते कुछ तो याद करके देख, कलेजा ठंडा हो जाएगा फिर•••

व्यायामशाला वाले घेर कर इकट्ठे हो गए थे. तहखाने में से भी कुछ लोग निकल आए थे. लुक्का वहां नहीं था. लेकिन कुछ ही देर में उसे खबर हो गई थी, वह आ गया था.

पहलवान आया तो डोरीलाल लपका—देखो पहलवान, रोज-रोज की नौटंकी से तुमारा भी जी भर गया होगा. आज फिर रमैन हो ही जाए•••

—रमैन हो जाए ? लुक्का लापरवाही से हंसा—फिर तो रावन भी बनना पड़ेगा किमी को. पूछ लो अपने साथियों से. वैसे इधर पूछने की जरूरत नाय पड़ेगी. अकेला जे लुक्का पहलवान ही तुम सबके लिए काफ़ी रहेगा.

मक्खन फिर एकदम से जगदम्बा के नज़दीक आ गया था. उसने उसका गिरेबान पकड़ा और झटका लगाकर कमीज़ फाड़ दी—ले तेरी इज़्ज़त अभी किए देता है जे मक्खन पहलवान. फिर उसने ताक़त से उसके पेट के निचले हिस्से में लात जमा दी थी.

जगदम्बा पीठ के बल गिर पड़ा.

मक्खन नज़दीक आया और ठुड्डी पकड़ ली—इत्ती इज्ज़त काफी है या फिर कर दूं थोड़ी और ?

शंकर अब बीच में आ गया था. उसने पूरी ताकत से मक्खन के दाहिने गाल पर एक चांटा रसीद किया और घुटने से जांघ पर धक्का-सा मारा—ले अब बाप का नाम याद कर.

डोरीलाल दौड़कर निकल गया था. पांचेक मिनट बाद जब लौटा, उसके हाथ में बल्लम था. उसने लुक्का को ललकारा— अकेले काफी हो न ? आओ फिर देख लूं पहलवान, कित्ता वजन है तुमारा ?

पीछे-पीछे डोरीलाल की बीबी सर धुनती आ गई थी. इसके अलावा उसके तीन से पंद्रह बरस तक की उम्र के आठेक बच्चों की पूरी रेलगाड़ी एकदम से चली आ रही थी. बच्चे कुछ भी समझे बिना सुबकने लगे थे. वे सब डर गए थे. शंकर की अम्मा बाल्टी में लेकर दाल धो रही थी. डोरीलाल को बल्लम समेत आते देखा तो

वह खुद भी हाथ में बाल्टी लिए आ गई. आते वक़्त हवा में बिखर कर कच्चे-पक्के बाल इस क़दर उलझ गए थे कि चेहरा डरावना-सा हो गया था. उसने अपनी छाती पकड़ ली और लुक्का को चुनौती दी—बड़े पैलवानी करते थे ना ? भगत बनते हैं बड़े—एक एक को मैं फांसी पे लटकाय के दम लूंगी, वकील साब से कहके.

डोरीलाल गुस्से से आग हो रहा था—आजा साले, अम्मा का दूध पिया है तो आ जा. हम भी देखते हैं, तेरे सीने में कित्ते बाल हैं···? फिर वह जंघों के बीच हथेली डालकर अश्लील मुद्रा में खड़ा हो गया था.

गेंदनलाल यहां नहीं था, उसकी गैर मौजूदगी की भी याद किसी को आई ही नहीं. फिर घटना तेज़ी से इस क़दर बदल गई कि कोने वाले फाटक पर खड़ी भीड़ को चीर कर उसके अन्दर आते ही एक खलबली-सी मच गई. उसके हाथ में दो बल्लम थे. एक उसने अनीस मियां की तरफ़ फेंका और अपनी जगह से गरजा—आ-जा मरद का पूत···

शंकर की अम्मा ने बाल्टी को झटका-सा मारा तो दाल का एक हिस्सा बिखर पड़ा. कोई दूसरा वक़्त होता तो वह एक-एक दाना बीन कर उठा लेती. उसने गेंदनलाल का नाम लेकर जमीन पर थूका और गाली उड़ेलने लगी—नामर्द का पूत होगा तू, तेरा बाप. ह्यां तो सब आदमी की, मरद की औलाद हैं. अपनी भैन-महतारी को भेज के देख तो ले.

अनीस मियां उबल-सा रहा था. उसने चाहा कि कोने की तरफ़ पहुंचकर एक-आध को बल्लम से आर-पार कर दे. ससुरों को मालूम तो हो लड़ाई हो किससे रही है ? लेकिन लुक्का ने उसकी बाह इतनी ताक़त से पकड़ रखी थी एकदम से छुड़ा लेना भी आसान नहीं था. आसान अगर होता भी तो भी आगे बढ़ना इसलिए मुमकिन नहीं होता कि उस्ताद की उस्तादी का सवाल है. चाहे कुछ हो जाए, अपने उस्ताद को अपने ही हाथों बे-इज्ज़त करने की गुस्ताखी कम-से-कम अनीस मियां नहीं कर सकता.

गेंदनलाल की घरवाली एकदम से अंदर आ गई थी. वह अपने आदमी के नज़-दीक जा खड़ी हुई और पूरी आवाज़ में चिंघाड़ने-सी लगी—है कोई आदमी की औलाद ह्यां ? सब हैं जोरू की कमाई खाने वाले. हमें भी पता है सब, एक-एक की पोल खोल के रख दूंगी, हां. तब देख लेना, लड़ाई भी किससे मोल ली···

लुक्का ने दहाड़ा--चुप भी रैती है तू ?

गेंदनलाल की घरवाली एकदम से ठंडी पड़ गई थी. मारे किए-कराए पर कोई पानी फेर देगा, यह उम्मीद तो मिनट भर पहले भी नहीं थी.

लुक्का बीच में जा खड़ा हुआ—चाहे लड़ाई करलो, चाहे बलवा. पैले इस लुक्का पेहलवान के सीने में बल्लम घुसेड़ दो. फिर करना कुछ.

शंकर हंसा—-अब कांगरेसी खद्दर पिन्ह लो, टोपी रखलो, पूरे नेता लगोगे. गांधी बाबा के चेला लगोगे.

पहलवान शंकर के नज़दीक गया—ले भाई, इसी बात पर तू भी जूता मार ले इस खोपड़ी पे. कुछ नाय कैना है मुझे. लेकिन तुझे तो तसल्ली मिले कुछ. वह खींच कर शंकर का हाथ अपनी खोपड़ी तक ले गया था.

शंकर की अम्मा आई और लुक्का को झटका-सा मारा—छोड़ म्हारे पूत का हाथ···उसने फिर शंकर को धक्का देकर अलग कर लिया था

लोगों को जो उम्मीद थी, अंततः वह नहीं हुआ.

पहलवान ने हाथ जोड़े—पुलिस-थानेदार के चौखटे पर फिर मत्था धुनते फिरोगे. हम भी, तुम भी. अरे भाई, जो हो गया, सो हो गया. कहां नाय होता

झगड़ा ? अब बस करो जे सब. अब चाहे हमें नेता कैलो, चाहे भगत, चाहे दस गाली और दे लो, हम तो हाथ जोड़ जे ही कैते रैंगे, अब चलो, अपने अपने घर. चलो, सारी गलती म्हारी सही, मैं माफी मांग लेता अपने लोगन की तरफ से.

शंकर की अम्मा डोरीलाल और अपने बेटे को लेकर निकल गई थी. जाते-जाते भी गेंदनलाल की घरवाली की तरफ दो बातें फेंक ही गई—हमें भी मालूम है, रात को तो नाचती फिरती और दिन में बन जाती सत्ती मईया. तू क्या खोलेगी किसी की पोल, हमीं नंगा कर देंगे तुझे इससे पैले. फिर उसने एक सस्ती-सी अदा में कमर को नचा लिया था.

वह कुछ कहने को हुई लेकिन लुक्का की आंखें देखते ही खामोश रह गई थी. औरतें, बच्चे और दोनों तरफ के लोगों के अलावा कुछ तमाशबीन भी थे. वे फिर अपने-अपने घरों को चलने लगे थे. जगदम्बा के साथ गिरोह बनाकर कुछ लोग भगीरथ के 'होटल' में आकर बैठ गए थे. दूसरी तरफ के लोग तहखाने में चले गए थे. 'बाबा भोलानंद गिरी' के पास.

●●

वृन्दावन कुम्हार के तीन पीढ़ी के खपरैल के छज्जे के साथ सफेद-रंग का एक पक्का मकान है. जगतनारायण का सफेद रंग का पूरा दोमंजिला मकान. वैसे मकान के अंदर चाहे जो रंग हो, बाहर की दीवारें देखकर अब ब-मुश्किल धारणा बन पाती है कि कभी इन पर सफेदी भी की गई थी. दीवारों पर मकान बनते वक्त पलस्तर चढ़ा था, यह सच है लेकिन यह अब लगभग एक ऐतिहासिक कहानी बन गई. अभी भी कहीं-कहीं पलस्तर के निशान ज़रूर मिल जाते हैं लेकिन उन्हें ढूंढ़ना पड़ता है. थोड़ा और स्पष्ट कहा जाए तो ढूंढ़ लेने की जिम्मेदारी इतनी भारी पड़ जाती है कि आसानी से कोई यह ज़हमत मोल लेने को तैयार ही नहीं होता. खैर, दीवार के इस भूगोल के अलावा एक और दिलचस्प तथ्य है. दीवारें चुनाव के नारों से, फिल्मी पोस्टरों से और अलग-अलग किस्म के विज्ञापनों से इस क़दर लिखी और लदी हैं कि ये बड़े-बड़े साइन-बोर्डों के काम कर रही हैं.

दीवारों पर जो विज्ञापन लिखे हुए हैं, वे खासे दिलचस्प हैं. यानी दस रुपए में घर बैठे अंग्रेजी बोलने की कला हो या मोटर ड्राइविंग स्कूल का पता हो या फिर गुप्तरोगों के इलाज के लिए हकीम बंशीधर शर्मा का ठिकाना हो—सब कुछ इकट्ठे हैं. इकट्ठे हों या अलग-अलग, यहां के लोगों के लिए बात एक ही है. संक्षेप में वजह सिर्फ इतनी कि इस मुहल्ले के लोगों को पढ़ने की ज़रूरत कभी नहीं पड़ती. वे सिर्फ दर्शक हैं. दीवारों पर चाहे लिखा कुछ भी रहे वे सिर्फ खुश होते हैं.

यह हुई संक्षेप में दीवारों की कथा.

लेकिन दीवारों के अंदर की बात इतनी संक्षिप्त नहीं है.

●●

जगत नारायण के पिता थे विश्वेश्वर प्रसाद. यह मकान उन्होंने बनवाया था. कचहरी में पेशकार थे विश्वेश्वर प्रसाद. चन्दौसी से मैट्रिक किया और पता चला रिश्ते-

दारों ने चाल से उनके नाम की सारी जमीन हथिया ली है. बाप की मृत्यु तब हो गई थी, जब विश्वेश्वर .की उम्र नौ एक साल की थी. निकट संबंधियों में अब सिर्फ मां थी. इसके अलावा आठ बहनें भी थीं, जिनमें से एक की तीन साल की उम्र में और दो की शादी के बाद मृत्यु हो गई थी. बाकी पांच बहनें ससुराल में सुख-शांति भोग रही थीं.

विश्वेश्वर प्रसाद मां-बाप की अंतिम संतान थे. कहते हैं, लड़का पाने के लिए मां को असंख्य व्रत-उपवास रखने पड़े थे, पीर-महात्मा के चरणामृत परमभक्ति से गले के नीचे उतारने पड़े थे दोनों बांहें तावीज़ और यन्त्रों से इस क़दर लद गई थीं कि व्रत-उपवास से शरीर का भार भले ही कम होता रहा हो लेकिन वज़न लेने पर कमी नज़र आने की कोई गुंजाइश ही नहीं थी.

विश्वेश्वर प्रसाद ने मैट्रिक किया और झोले में एक धोती, कुर्ता और गुड़-रोटी लेकर बरेली चले आए. सोचा था, पढ़-लिखकर गांव की खेती-बाड़ी भी देखेंगे और मास्टरी भी करेंगे. बरेली चलने के लिए गाड़ी पर सवार हुए तो आंखें भर आई थीं, दिल में हूक-सी उठी थी. पहली बार महसूस हुआ था, कितनी अपनी होती है, अपनी मिट्टी की महक. उस वक़्त खेत में झूमती-सी गेहूं की बालियां और मां का चेहरा ही याद आया था. इसके अलावा मन में डर भी था. पहली बार घर छोड़ने के बाद पर-देस में जहां के लिए निकले थे, उस जगह के बारे में न तो कोई पता था, न जानकारी. झोले में गुड़-रोटी के नीचे किन्हीं रामवचन तिवारी के नाम गणित के मास्टर उपाध्याय जी का एक खत था. उपाध्याय जी स्वभाव से वैसे भी ममतालु ही हैं लेकिन विश्वेश्वर के प्रति कुछ ज्यादा ही स्नेही थे. ज़मीन-जायदाद के बारे में रिश्तेदारों की चाल की बात सुनी तो वह दुःखी तो हुए थे लेकिन दुख-निवारण का रास्ता भी बता दिया था. रिश्ते में ममेरे साले लगते हैं रामवचन लेकिन रिश्ते से ज्यादा एक दूसरे का आदर करते हैं. रामवचन के साथ भी लगभग ऐसी ही एक घटना घटी थी. वह तो सिर्फ मिडिल पास ही थे. एक दिन पढ़ने की इच्छा को ताक में रखकर घर छोड़ना पड़ा था. कई जगह नौकरियां कीं, मुसीबत सही, तब जाकर कहीं पार लगा. कचहरी में मुंशी हो गए थे. इसलिए दूसरों का दुख-दर्द भी समझते थे.

विश्वेश्वर प्रसाद आए तो रामवचन ने अंग्रेज साहब से कहकर कचहरी में बाबू की नौकरी दिला दी थी. फिर वह पेशकार हो गए थे. पेशकार हो ज़रूर गए थे लेकिन कोई कह नहीं पाएगा कि कभी भी उनका पांव फिसला हो. आज ज़माना ज़रूर बदल गया, लेकिन तब लोग पेशकार की भी इज़्ज़त करते थे.

नौकरी पाकर विश्वेश्वर प्रसाद मां को चन्दौसी से ले आए और हमेशा के लिए बरेली के हो गए. यह मकान भी उन्होंने बनवाया था. तब आबादी भी इतनी नहीं थी. मालगोदाम को जो सड़क जाती है, वह थी तब भी लेकिन इस आकृति में नहीं. पूरी सड़क कच्ची थी. बरसात में पानी इतना भर जाता कि घुटनों तक मुहल्ले-भर का गंदा पानी इकट्ठा होता. पानी के निकलने का रास्ता सिर्फ एक ही था—सूरज की रोशनी. फिर होता यह कि पानी सूखने के बाद दिनों तक कीचड़ फैला रहता. मुहल्ले के बच्चे कीचड़ में मछली-पानी का खेल खेलते, कीचड़ में लोट-पोट लेते. फिर वक़्त पर कीचड़ भी सूख जाता और उनपर से जब कोई,बैलगाड़ी गुजर जाती, पहिये घूमते रहने के आर्तनाद के साथ धूल के बगूले छोटे-मोटे आकारों में उमड़ते रहते.

तब शाम होते ही घरों में कुप्पियां जलतीं, लालटेनों की बत्तियां रोशन होतीं और बाहर की यह सड़क ? समझने में दिक़्क़त नहीं होनी चाहिए, पूरा अंधेरा छाया रहता तब. सियार घूमते रहते. सियारों की हुआ हुआ की आवाज़ से बच्चे डर कर

बिस्तर की तहों में सर छुपा लेते.

और यह जो सिटी स्टेशन है, यह तब भी था. लेकिन दिन में दो गाड़ियां गुज़रती थीं सिर्फ. काटगोदाम से कासगंज तक थर्टीन अप और कासगंज से काठगोदाम तक फोर्टीन डाउन. इसके अलावा दो-एक मालगाड़ियां भी गुज़रती थीं, लेकिन ज़्यादातर वे बिना रुके चली जातीं.

स्टेशन मास्टर फिरंगी था. चेहरा था एकदम लाल, पूरा विलायती. अंग्रेज़ी में फर्राटे से क्या बोलता, किसी को समझ में ही नहीं आता. लोग देखते, शाम होते ही अपनी मेम और कुत्ते के साथ साहब हवा खा रहा है. कोई पढ़ा-लिखा मिलता तो दो मिनट ठहर कर मसखरी भी कर लेता. लेकिन यह सब अंग्रेजी में ही होता. ऐरे-गैरे को क्या लेना-देना इससे ?

साहब अंग्रेजी में ही हरवक़्त बोलता रहा है, ऐसा नहीं था. कभी गाली-गलौच करनी होती तो हिन्दी-उर्दू जो कुछ भी ज़बान पर आता, उंड़ेल जाता. तब चेहरा इस क़दर तमतमाया हुआ होता कि सामने खड़े आदमी को लगने लगता, अंग्रेज अब पटाखा बनके फट ही जाएगा.

गालियां सुनकर लोग इस क़दर आदी हो गए थे कि अब किसी को कुछ भी फर्क ही नहीं पड़ता. सिटी स्टेशन का स्टेशन मास्टर तो वक़्त-वक़्त पर बदलता रहा है लेकिन गालियां नहीं बदलीं. लोग फिर समझ गए थे, कुछ चीजें होती ही ऐसी हैं जो गरीब के नसीब की तरह बदल नहीं सकतीं.

लेकिन विश्वेश्वर प्रसाद की इज़्ज़त फिरंगी स्टेशन-मास्टर भी करता रहा है. दो-एक बार अपनी गोरी-चिट्टी मेम को लेकर वह यहां आया तो तमाशा देखने वालों का तांता सा लग गया. खिड़की से मुहल्ले के बच्चे झांककर देखते कि मेम खाती कैसे है, पीती क्या है ! फिर पूरे मुहल्ले में दिनों तक इस बात की चर्चा होती रहती. औरतें तो हंसते-हंसते लोट-पोट हो जातीं—हाय दईया ! मेम भी कचर-कचर पूड़ी-हलवा चबाती है···

बिहारीपुर का यह मकान विश्वेश्वर ने अपनी कमाई से बनवाया था. लोगों से कहते रहे हैं—मां का आशीर्वाद है यह. विश्वेश्वर की मां भी शायद सत्तर साल की उम्र तक इसलिए ज़िन्दा रहीं कि उन्हें बेटे की कमाई से बना यह मकान अपनी आंखों से देखना था. जमीन-जायदाद के चले जाने से अन्दर जितना रंज हुआ था, उतना ही सुख वह इस मकान को देखकर पाना चाहती थी. जिस दिन गृह-प्रवेश हुआ, मारे खुशी के वह रोती रहीं. तबियत बहुत अच्छी नहीं थी, इसके बावजूद खुद घूम-घूम कर सारे इंतज़ाम पर निगरानी रखती रहीं. इसके ठीक एक हफ्ते बाद उन्होंने आंखें मूंद ली थीं. विश्वेश्वरप्रसाद ने मां के नाम को खुदा कर फिर सामने लगा दिया था. मकान का नाम हुआ था—'कौशल्या भवन'.

'कौशल्या भवन' जिस पत्थर पर लिखा है, अब वह एक अतीत हो गया. उस पर मकड़ी के जाले हैं, होली पर फेंका गया कीचड़ है और ब्रह्माण्ड में सृष्ट सारे रंग हैं. विश्वेश्वर की मृत्यु के बाद किसी ने न तो पत्थर की उस पट्टी पर ध्यान दिया, न ज़रूरत ही महसूस की. 'कौशल्या भवन' फिर पेशकार का घर बन गया था.

इस घर में ही जगत नारायण का जन्म हुआ था. विश्वेश्वर प्रसाद की एक-मात्र संतान. जगत नारायण ने हाईस्कूल पास किया, फिर इंटर किया, आखिर में मालगोदाम में बाबू हो गए. अंग्रेज स्टेशन मास्टर विश्वेश्वर प्रसाद को मानता रहा है सो उसकी स्वीकृति ने जगत नारायण को रेल कम्पनी में नौकरी दिला दी.

जगत नारायण के तीन बेटे और छह बेटियां हैं. बड़ा बेटा शाहजहांपुर की

चीनी मिल में टाइम कीपर है. बीवी-बच्चों के साथ रहता भी वहीं है. उसके बाद तीन बेटियां हैं—शारदा, लक्ष्मी और तारा. तारा विधवा है, बाकी दो बेटियां पति के साथ ससुराल में रहती हैं. पति की मृत्यु के बाद कुछ दिनों तक तो तारा ससुराल में रही है लेकिन आखिर में फिर हमेशा के लिए यहां चली आई. तारा के बाद नलिनाक्ष है. वह हाई स्कूल का इम्तहान देते-देते एक साधु के संसर्ग में आकर घर छोड़ कर चला गया था. दिन रात खोज-बीन के बाद फिर ऋषिकेश में जटाधारी साधुओं के साथ लगभग उसी वेशभूषा में पाया गया था. जगत नारायण ने साधुओं से मिन्नतें कीं और नलिनाक्ष को घर ले आए. यह घटना तब की है जब उसको उम्र सोलह की थी, अब छत्तीस का है. लेकिन इन बीस सालों में घरों में रहकर पूजा-पाठ के अलावा अगर उसने कुछ और किया तो वह जगत नारायण के मन में चिंता की सृष्टि. जगत नारायण को चिंता तो हुई है लेकिन इस चिंता का समाधान नहीं नजर आया. जहां पढ़े-लिखे सड़कों पर जूते चटखारते फिरते हैं, वहां एक अर्द्धशिक्षित को कोई क्या नौकरी देगा ? और नौकरी अगर दे भी तो नलिनाक्ष पूजापाठ का यह क्रम छोड़कर नौकरी कर ही लेगा, इतना भरोसा अब नहीं रहा. नतीजे में फिर होगा यही कि वह घर से निकलकर हरिद्वार या काशी की तरफ़ चला जाएगा.

नलिनाक्ष के बाद कस्तूरी है, उसके बाद दुर्गा. शादी के बाद चारेक साल तक कस्तूरी को बच्चा नहीं हुआ. उसके पति ने फिर दूसरी शादी कर ली थी. अब वह तारा की तरह यहीं रह रही है. दुर्गा सारी बहनों में सबसे ज़्यादा सुखी है. सुखी और सम्पन्न. बहेड़ी के जिस घर की बहू है दुर्गा, उनके पास जमीनें हैं, कपड़े और लोहे के सामान की दुकानें हैं, हवेलीनुमा घर है और वह सबकुछ है जिससे आदमी सम्पन्न समझा जाता है. दुर्गा उस घर की बड़ी बहू है.

दुर्गा के बाद विनायक है. उसके बाद राधा उर्फ़ रद्दो.

विनायक ने बरेली कालेज से बी. ए. किया, नौकरी की कोशिश में कुछ भटका, अब सातेक मील दूर कलक्टरबकगंज के एक एल्यूमीनियम कारखाने में बाबू बन गया. शुरू में शौक था डाक्टरी पढ़ने का. वह मुमकिन नहीं हुआ तो होम्योपैथी की किताबें जुटा लाया था. हाल में बजरिया के पास पन्द्रह रुपए किराया पर एक छोटा-सा कमरा भी ले रखा है. उसमें टूटे हुए शीशों की एक अलमारी है, अलमारी के अंदर होम्योपैथी की दवाइयों की छोटी-छोटी शीशियां और इस शास्त्र से सम्बन्धित चंद हिन्दी और अंग्रेज़ी की क़िताबें हैं.

अल्मारी के बाहर एक मेज और पांचेक कुर्सियां हैं. सबकी-सब इस हालत में कि अनायास ही इनके ऐतिहासिक होने का भ्रम होने लगता. वैसे बरेली कभी भी ऐतिहासिक महत्व की जगह नहीं रही है, फिर भी इसका एक स्थानीय इतिहास तो खैर है ही. रुहेलखण्ड की राजधानी थी, बरेली. पीढ़ियों तक रुहेलों ने यहां राज्य किया. अब इन कुर्सी और मेज़ों को देखने के बाद अगर कोई रुहेलों का वक़्त याद करे तो सुनने वालों को मज़ाक लग सकता है, लेकिन यक़ीन मानिए यह झूठ नहीं है.

इस कमरे के बाहर छोटा-सा एक बोर्ड भी लगा है—'बरेली होम्यो-क्लीनिक' विनायक को सुबह-शाम फ़ुर्सत मिलती तो वह यहां बैठकर दवाइयां बांटता, लोगों के सुख-दुःख की बातें सुनता.

जगत नारायण की अंतिम संतान है राधा. उम्र बीत जाने के बाद की संतान है यह, लेकिन जगत नारायण ने प्यार में कोई कमी नहीं की. कभी-कभी उसकी अम्मां खीझ भी उठती लेकिन कोई कह नहीं पाएगा कि ढली उम्र में बेटी होने पर कभी भी

उन्हें मलाल हुआ हो. बेटी का रंग गोरा था, इसलिए जगत नारायण ने नाम रखा राधा. राधा फिर प्यार के उफ़ान में 'रद्दो' में तब्दील हो गई. जगत नारायण कहते—'रद्दो' को ऐसे ब्याहूंगा कि देखने वालों को राधा-कृष्ण की जोड़ी याद आ जाएगी.

जगत नारायण की संततियों के बारे में संक्षेप में एक ख़ाका मैंने खींचा. लेकिन इस घर के बाशिन्दे दूसरे परिवारों के कुछ और लोग भी हैं. जगत नारायण की विधवा बहन कुन्ती, बहन की दो लड़कियां और एक बेटा. उनके एक मामा का घर देहात में है, जहां पढ़ने-लिखने की उतनी सुविधा नहीं है. लिहाज़ा रद्दो की उम्र के उनके दोनों बेटे यहां रह कर ही स्कूल जाते हैं, रिश्ते की एक अनाथ और बुढ़िया मौसी भी यहीं रहती है. इस मौसी यानी द्रौपदी की मौजूदगी का अहसास जगत-नारायण के अलावा अक्सर किसी को नहीं ही होता.

यह दुनिया दीवार के उस पार की दुनिया से एकदम अलग है. यहां लोग हंसते हैं, रोते हैं लेकिन उसका अन्दाज़ अलग होता. मौसी को रोना होता तो वह सिर्फ़ सुबक लेतीं. जबकि मामा के दोनों बेटों को कुछ कहना होता तो उनका मिज़ाज सातवें आस-मान तक पहुंच जाता. कारण ? नहीं, कारण की जरूरत नहीं पड़ती इसके लिए. यह तो उनकी आदत है. फ़ज़ीहत तब हो जाती, जबकि इनकी इस आदत से किसी और की मुठभेड़ हो जाती.

●●

रात के करीब नौ का वक्त था.

विनायक ने दवाखाने से लौटकर देहरी में पांव रखा ही था कि दुबारा बहुत ज्यादा थकान महसूस करने लगा. घर के अन्दर रामायण हो रही थी. बुआ की आवाज़ इतनी चढ़ी हुई थी कि उसकी चपेट में आकर बाकी लोगों की बातों का एक मिला-जुला-सा एहसास जरूर होने लगा था लेकिन किसका क्या अर्थ है, कुछ पता ही नहीं चला. वैसे इस घर में ऐसे कार्यक्रम नए नहीं हैं. अक्सर इस क़दर होते रहते हैं कि अब न तो विनायक को और न किसी और को ही कोई खास परेशानी महसूस होती. सिर्फ़ थकान बढ़ जाती है थोड़ी.

बुआ यानी कुन्ती ने एक हाथ से अपनी बेटी रानी को कस रखा था और दूसरा हाथ लगातार हवा में उछाल रही थी—जिस थाली में खाते हो उसी में छेद करते हो ? तुम लोगों को इस घर से निकाल नाय दिय, तो मैं अपने बाप की बेटी नाय.

जगत नारायण बहन को समझाने की कोशिश में ऊपर, कोने की तरफ़ वाली कोठरी से आकर छज्जे तक आ गए थे— चुप्प रैलो बैन, चुप्प रैलो, जग-हंसाई हो रई है इससे, कुछ तो समझा करो.

कुन्ती ने दहाड़ा—मुझे काहे को समझाते हो. समझाना हो तो समझाओ अपने मामा के लाड़लों को. वह नीचे, आंगन में खड़ी होकर चीख़ रही थी. आंगन में एक तरफ़ तो हाथ से चलाने वाला नल है, दूसरी तरफ़ कौशल्याभवन का बाहर की तरफ खुलने वाला दरवाज़ा. दरवाज़े के गिर्द नुमाइश देखने वालों की खासी भीड़ इकट्ठी हो गई थी. विनायक दरवाज़े के पास ही खड़ा रहा. जी में आता था, एकदम ऊपर चला जाए, छत पर. फिर बहुत ज्यादा घुटन और थकान महसूस करने लगा था.

कुन्ती की आवाज़ अपेक्षाकृत तल्ख हुई—कऊन सा पहाड़ टूट पड़ा अगर रानी ने तेरा तेल सर पर लगा लिया था, कंघी बालों पर चला ली थी······

विनायक की मां अब तक लगभग खामोश थी. अब वह रसोई से निकली और

धीरे-से फुसफुसायी—वे भी तो बच्चे ही हैं, तुम माफ़ ही कर दो छोटा समझ के.

—अब तक कैती रही मैं कुछ ? एक लाख एक बार देखा, तब जाकर जबान खोली मैंने. जे सब तमासा देख-देख के तो मेरा जिसम ही आग से जलता रिया. चलो फिर भी मैं कुछ नाय बोली. सोचती रई, छोटे ही तो हैं. लेकिन छोटों की बात सुनो तो बदन जुड़ा जाता. ओय-होय ! कुन्ती एक सांस में इतनी सारी बातें बोल गई थी. अब दम लेने के लिए रुकी तो हांफ़ने-सी लगी.

तारा रसोई में आटा गूंथ रहा थी. गूंथ चुकी तो बाहर निकली और चौखट पर ही खड़ी हो गई. काफी देर हो गई तो उसने कह ही दिया—अब तो बस करो बुआ. आधी रात बीत गई लेकिन तुमारी कथा नाय पूरी हुई. अब भी कुछ कसर रह गई हो तो जाकर फोड़ दो उन दोनों की खोपड़ी.

कुन्ती ने सर पीट लिया—हायरी दईया ! मेरा तो करम ही फूट गया, नाय तो ह्यां क्यों आती ? अब हाथ भर की तारा भी मुझे सुना रई है खरी-खोटी. ये बातें फिर विलाप में बदल गई थीं—अब तो मैं डूब मरूंगी रामगंगा में जाकर.

अब तक वह खड़ी थी, फिर वहीं ज़मीन पर पाल्थी मारे बठ गई. विलाप की आवाज़ धीरे-धीरे कुछ और ऊंचाई पर उठी और वक्तव्य में बदलती गई.

जगतनारायण पशोपेश में पड़ गए थे. महसूस किया, एकदम-से कमज़ोर पड़ गए हैं वह. विनायक गलियारे में था. दरवाज़े के पास अंधेरे में. छज्जे पर से यह जगह दिखाई नहीं पड़ती. वर्ना शायद जगतनारायण वहीं से सहायता की उम्मीद में अपने बेटे की तरफ़ असहाय-से देखते रहते.

जिन लोगों को लेकर इस घटना की शुरुआत हुई, वे आग के तेज़ी पकड़ते ही वहां से खिसक गए थे. वसे शुरू में सतीश ने हार नहीं मानी थी. कुन्ती से ज़्यादा चढ़ी हुई आवाज़ में अपने हक़ का खातिर वह चिल्लाता रहा. बाद में मुकुंद जोकि उम्र में उससे छोटा है, खिसकाकर उसे बाहर ले गया था.

कुन्ती ने कुछ देर की खामोशी के बाद नए सिरे से बिलखना शुरू किया था—मुझे कोई लाके ज़हर ही दे दो तो अंखियां बंद कर लूं. अपन को सांस लेकर करना भी क्या है···

विनायक की मां ननद के और भी नज़दीक आ गई थी—अब चलके रोटी तो खालो. बच्चे हैं सो काम-अकाम उनसे नाय होंगे तो बड़े-बूढ़े करेंगे जे सब ?

—बच्चे हैं ? कुन्ती की आवाज़ थोड़ी देर के लिए स्वाभाविक-सी हो आई थी—बोल तो सुनो बच्चों के. तुम भी मारे खुशी के नाचती रहोगी, भाभी. बड़का कैता—जे तेल-कंघी मुफ़त में तो नाय आते ? हमारे बाप इसलिए नाय भेजते कि नदी-नाले में बहाते फिरें···

—चलो अब उठो, सुबह वे आनके माफ़ी मांग लेंगे तुमसे. ममेरे सही, आख़िर हैं तो वे तुम्हारे ही भाई.

—जभी तो कुछ नाय कैती मैं. मेरी कोख से जनमते तो मैं अपने हाथ से ज़हर देकर मार डालती अब तक.

रानी अब खिसक कर सीढ़ी के पास आ गई थी. उसने अपने फ्रॉक की तरफ़ देखा और महसूस करने लगी, इन सारी घटनाओं से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण उसकी अपनी समस्या है. अब तक उसे फ्रॉक छोड़कर साड़ी पकड़ लेनी चाहिए थी. लेकिन गुज़ारा करना पड़ रहा, दो फ्रॉकों पर. दो में से एक का रंग अब इतना बिखर गया कि पहनने की तबीयत ही नहीं होती. बदरंग होने के बावजूद कपड़े की मजबूती इतनी है कि अभी भविष्य में इनके फटने के बारे में कोई उम्मीद नहीं की जा सकती. कभी

बाहर निकलना होता तो वह या तो अम्मा की धोती पहन लेती या रद्दो या तारा से कोई साड़ी मांग लेती. साड़ी वे दे ज़रूर दे देतीं लेकिन देने के बाद इस तरह मुंह बनातीं कि उसे पहनने की इच्छा ही मर जाती. लेकिन पहननी तो आखिर पड़ती ही है. पिछले हफ़्ते रद्दो की साड़ी पहनी तो दरवाज़े के पल्ले में फंसकर उसके दो-चार सूत निकल गए थे. साड़ी वापस लेते वक़्त रद्दो ने चेहरा इतना कसैला बना लिया था कि एकदम से जी में आया था कि वह कह पड़े—बदले में ज़रूरत अगर हो तो निकाल ले मेरे जिसम से पाव-डेढ़ पाव खून, लेकिन इस तरह मुंह तो मत बना···

तारा अंदर घुसी और रोटियां बेलने लगी. मोहिनी भी आ गई थी तब तक. उसने बेटी को झिड़कियां दीं—जवानी में ही जिसका भाग उजड़ जाए, उसकी जबान तो कम-से-कम ठीक से चलनी चाहिए. तुझे क्या पड़ी थी बुआ को सुनाने की ?

तारा शुरू में खामोश रही फिर सिसकियां भरने लगी.

रानी आखिर में ज़ीने से होकर छज्जे पर आई, फिर छत पर चली गई. नीचे सिर्फ़ कुंती रह गई थी. और गलियारे में दरवाज़े के पास जहां अंधेरा है, विनायक खड़ा था. बिल्कुल पहले की तरह मुद्रा में.

कुंती के नज़दीक आकर वह खड़ा हुआ.

बिलखना दुबारा बंद कर उसने विनायक की तरफ़ देखा—कऊन ? छोटा लल्ला ?

वह चुप रहा. वैसे जी में आया था कि कह दे—जग-हंसाई करते-करते अब भी दिल नहीं भरा तुम्हारा, बुआ ? लेकिन ज़ाहिर है, इतना कह देने का अंजाम यह होगा कि रात-भर इस पेशकार के घर में कोहराम मचता रहेगा. रामायण से लेकर महाभारत तक से सारी लीलाएं होती रहेंगी.

उसने लगभग घूर कर बुआ को देखा और संबोधन का जवाब दिए बिना ज़ीने से ऊपर चढ़ने लगा. कुंती उसी तरह बिलखती रही. रसोई से दो-एक बार मोहिनी ने उसे बुलाया ज़रूर लेकिन न तो वह उठी, न बिलखना ही बंद किया.

विनायक ऊपर आया और थकान-सी महसूस करने लगा.

जगतनारायण छज्जे के किनारे से हटकर चारपाई पर आ गए थे. बान इतने ढीले हो चुके हैं कि लगता है, कोई थैला-सा लटक रहा है. सिर्फ़ ये अगर ढीले ही होते तो कसे जा सकते थे. लेकिन कई जगह से इस क़दर फट गए हैं कि अब मसले का हल सिर्फ़ इन्हें बदल डालना है.

वह हुक्का पी रहे थे. लम्बी नली वाला. यह उस ज़माने का है, जब 'कौशल्या भवन' बना था. विश्वेश्वर प्रसाद अदालती काम से मुरादाबाद गए थे वहीं से इसे खरीद लाए थे.

वह हुक्के का कश खींचते तो चिलम की आग की लाली कुछ फैल-सी जाती. इस आग में इनका चेहरा और भी करुण लगता. करुण और असहाय. विनायक ने पिता के लिए हमदर्दी महसूस की. लेकिन फिर निर्विकार-सा हो गया. महसूस करने के बावजूद वह इस हालत में नहीं है कि एकदम से इस 'कौशल्या भवन' के लिए कुछ कर सके.

कोने वाले कमरे में नलिनाक्ष दुर्बोध्य शब्दों में पूजा के मंत्र उच्चारण कर रहा था. यह आवाज़ पिछले बीस सालों से लगातार इस क़दर सुनी जा रही है कि इस घर के बाशिन्दों में से कोई अर्थ-अनर्थ के लिए परेशान नहीं होता. लेकिन अप्रत्याशित रूप में विनायक को कुछ ताज्जुब हुआ था, लेकिन यहां किसी बात का कोई फ़र्क़ ही नहीं पड़ता.

उसने छज्जे पर खड़े-खड़े क़मीज़ उतारी, बनियान निकाल ली और उसे तार

पर फैला दिया. पसीने की वजह से दोनों इतने गीले हो चुके थे कि छूने में भी चिप-चिपाहट-सी महसूस होती.

उसे लगा, जगतनारायण कुछ कहने के लिए अपने को तैयार कर रहे हैं. वह क्या कहेंगे, लगभग मालूम ही है. अपनी बात शुरू कर उसे एकदम से अधूरी छोड़ देंगे और इस बात का एहसास करा देंगे कि अब यह घर भी मुहल्ले के सौ घरों में से एक होकर रह गया है. जहां वह बैठे हैं उस तरफ़ पीछे की दीवार का पलस्तर चारेक साल से उतरा हुआ है. हुक्के का कश खींचते हैं तो उसकी आग की लाली दीवारपर पड़ती है. दीवार का नंगापन और भी साफ़ हो जाता है उस वक़्त.

आख़िर में जगतनारायण खांसने लगे थे. कभी-कभी हो यह जाता कि खांसते-खांसते दम घुटने का-सा एहसास होने लगता. लेकिन दम यूं ही घुट नहीं जाएगा, यह हर कोई जानता है, खुद जगतनारायण भी. विनायक मर्ज़ की पूरी तरह से छान-बीन करने के बाद कई बार दवा भी दे चुका लेकिन अब दवा वग़ैरह ख़ास असर नहीं करती. थोड़ा-सा आराम ज़रूर मिलता दवा लेने के बाद लेकिन लम्बा असर उसका नहीं ही होता. खांसने का दौर शुरू होता तो फिर लगातार खांसते रहते वह. लेकिन इस बार ज्यादा खांसी नहीं आई. मिनट-आधा मिनट खांसते रहने के बाद उन्होंने गले को खंखार कर साफ़ किया फिर पहले की तरह शांत हो गए.

नीचे से कुंती के बिलखने की आवाज़ अब भी आ रही थी. रसोई में भी तारा और रज्जो के बीच हो रही बातचीत की आवाज़ ऊपर तक आ रही थी. वे दोनों किस बात पर इस तरह चढ़ी आवाज़ में वितंडा करती रहीं, यह तो पता नहीं चला लेकिन विनायक को इतनी भी ज़रूरत नहीं महसूस हुई कि दोनों के लिए ऊपर से ही एक आवाज़ फेंक दे. आख़िर में वह जगतनारायण की बगल से निकल कर छत पर चला गया था. वहां अंधेरे में बैठकर रानी सुबक रही थी.

●●

मालगोदाम में हेड खलासी है काशी. शुरू में नीम की चढ़ाई में बैठकर बाप-दादा के पेशे में जूते वग़ैरहसिलता था. लेकिन नसीब बदला तो फिर बदल कर ही रह गया. रेलवे में सरकारी नौकरी मिली, वर्दी मिली. इज्जत के लिए और चाहिए भी क्या? लेकिन काशी का दुख यही है कि लोग अब भी पीठ पीछे काशी चमार ही कहते हैं. अरे भई, अब चमार कैलो चाहे मेहतर-भंगी, सरकारी वर्दी पाने के लिए कुछ औक़ात बनानी पड़ती है. ख़ैर, यह तो काशी चमार की अपनी कहानी है. यहां चूंकि उसका ज़िक्र आ गया था, इतना संक्षेप में बताना पड़ा.

बात दरअस्ल यों है कि सुबह-सुबह काशी ने आकर 'पेशकार के घर' का दरवाज़ा खटखटाया. जगतनारायण जब माल बाबू थे, काशी गाहे-बगाहे यहां आता रहा है. लेकिन यह सब अब काफ़ी पुरानी बातें हैं. जगतनारायण को रिटायर हुए भी कई साल हो गए. कभी-कभी काशी रास्ते में मिल जाता है तो नमस्ते उसी तरह पूरे अदब के साथ ही करता है. फिर ज़िद-सी भी करता—कबी-कबी तो अपनी पुरानी जघा आ जाया करो. फिर वह नाटक के पात्र की तरह होंठों को उलट लेता—तुमारा जमाना ही और रिया. अब जो मालबाबू हैं, उनसे तो बस भगवान ही बचाए. 'भगवान' शब्द पर ज़ोर देकर वह अपने दोनों हाथों को ऊपर आसमान की तरफ़ उठा देता. जैसे और आगे पूछने पर वह अपने आराध्य के घर और गली का नम्बर भी बता देगा.

काशी की आवाज़ आई लेकिन जगतनारायण ने अख़बार पढ़ना जारी रखा. यह इसलिए कि सुबह-सुबह चमार-भंगी का चेहरा देखने से तो अच्छा दिन-भर भूखा रहना है. लेकिन फिर दरवाज़े तक चलना ही पड़ा था. नीचे से तारा आकर कह गई

कि किसी खास ज़रूरत से काशी आया है.

जगतनारायण नीचे आए तो हतप्रभ रह गए. शुरू में यक़ीन नहीं आया था लेकिन बाद में लगने लगा था, कोई धीरे-धीरे सारे नाखूनों के नीचे सुई-सी चुभो रहा है. वह काशी के चेहरे की तरफ़ देखते रहे और महसूस किया—सर के दोनों तरफ़ की नसें एकदम से उभर कर फड़क-सी रही हैं.

—हुज़ूर, आप मेरे मालिक रहे हैं. आज भी जे काशी हेड आपको उत्ता ही मानता है, जित्ता तब मानता था. इसीलिए कलेजे में दुख होता है. यह काशी था.

जगतनारायण को लगा, उनकी हालत इतनी दयनीय हो गई कि अब काशी चमार भी आकर दया कर रहा है.

काशी ने जेब में से तम्बाकू निकाल कर उसे हथेली में मला, चूना मिलाया और होंठों के नीचे दबा लिया—आप ठैरे पढ़े-लिखे आदमी. दस-बीस आदमी के बीच इज़्ज़त पाते हैं लेकिन जे लौंडे-लपाड़े जे बात समझते थोड़े ही हैं. वैसे हुज़ूर माफ़ करना, दोनों भाइयों को हमने कई बार लाईन पार तास के संग बाज़ी मारते भी देखा है, बीड़ी पीते देखा है, लेकिन सोचा, क्या ज़रूरत किसी के मामले में पड़ने की.

जगतनारायण की टांगें कांपने लगी थीं. सर की नसों में खून का बहाव शायद एकदम से तेज़ हो गया था. एकदम से उन्होंने किवाड़ का पल्ला पकड़ लिया था. नहीं तो शायद गिर ही पड़ते. फिर फटी-फटी आंखों से काशी की तरफ़ देखने लगे थे—जे सब सही है काशी ?

काशी ने जीभ निकालकर दांतों से काटी और दोनों हाथों से अपने कान पकड़ लिए—आप ठैरे ऊंचे जात के, देवता समान. हम हुज़ूर आपको झूठ बोलेंगे तो नरक में भी जघा नाय मिलेगी. काशी ने अपने को रोका और नज़दीक आकर बीच के फ़ासले को कुछ और कम कर लिया—जे तो खैरियत रही कि तम्माखू की बोरी पार करते हुए हमने देखा था. वाचेनवार्ड का सिपइया देखता तो एकदम बन्दूक दाग देता. बदनामी जिन्नी तुम्हारी भी होती सो तो होती ही, ऊपर से जानें जातीं, पुलिस-दरोगा से निबटना पड़ता. फिर काशी जैसे किसी निष्कर्ष पर पहुंच गया था—जे सब कच्ची उमर की चढ़ान है. आप ठैरे लोये की तरहा मजबूत आदमी. अब भी सम्भाल लोगे तो सम्भल ही जाएगा.

जगतनारायण ने महसूस किया, काशी के सामने वह एकदम बौने हो गए हैं. गले की आवाज़ भारी होकर बन्द-सी हो रही थी. उन्होंने खंखार कर गला साफ़ किया और किवाड़ पर रखा हुआ अपना हाथ उठा लिया. बोले—बड़े दिनों में आए हो काशी, चाय पी के जाइयो.

काशी फिर एकबारगी व्यस्त हो गया था—चाय-पानी किसी और दिन आनकै पी लैंगे. इधर का काम इत्ता बड़ा है कि सारे काम अपने हाथों से निबटाने पड़ते हैं. नए कुली-खलासी आते हैं तो बैठे-बैठे या तो मौज मारते हैं या फिर लाल-पीला झण्डा उठाकर इन्किला जिन्ताबात बोलते हैं. अच्छा हुज़ूर, जै राम जी की. वह फिर तेज़ी से निकल गया था.

जगतनारायाण खड़े-खड़े काशी का जाना देखते रहे. तब तक देखते रहे जब तक मुसलमान की सायकिल-मरम्मत की दुकान के सामने का नुक्कड़ आ नहीं गया और काशी मालगोदाम की तरफ मुड़ नहीं गया. काशी को इतनी तन्मयता से क्यों देखते रहे, यह खुद उन्हें भी नहीं मालूम. लेकिन इतना तो ज़ाहिर हो ही गया कि एक अदना-सा आदमी जो जूते सिलता रहा, गांजे में दम लगाकर दस लोगों के बीच नंगा नाचता रहा, यहां आकर बड़े क़ायदे से इस 'कौशल्या भवन' को बेइज़्ज़त कर गया.

असली बात क्या है, कहना मुश्किल है. लेकिन सुनने में तो यही आता है कि काशी चमार का भूड़वाले पीपल के नीचे यार-दोस्तों के साथ गांजे में दम मारकर यारी करना अब भी जारी है. पीपल के पीछे बदरुद्दीन पीर की मज़ार और कब्रिस्तान है. मज़ार के साथ एक छोटा-सा डेरा भी अधबना पड़ा है. उसमें न तो दरवाज़े लगे हैं न खिड़कियों की जगह ही कुछ है. अंधेरे में काशी चमार यारों के साथ वहां पहुंचता, सबके कपड़े एक-एक करके उतारे जाते, फिर सब कुछ होता, जिसे इनकी बीवियां कभी मंज़ूर नहीं कर सकतीं. दो-एक बार पुलिस वाले आकर इनकी पीठ पर डण्डे भी जमा गए थे. जहां लेन-देन का मामला हो, वहां सब चलता ही है. पुलिस वाले भी जानते हैं, काशी चमार को भी यह मालूम है.

यह बात जगतनारायण के भी कानों तक पहुंची थी. तब वे हैड मालबाबू थे. ख़ैर, उन्होंने बात सुनी और दूसरे कान से निकाल भी दी. फ़र्क इतना ज़रूर पड़ गया था कि काशी को दूर ठहरा कर ही अब बात करते. लेकिन इस बारे में उन्होंने न तो किसी से ज़िक्र किया था न अपनी दिलचस्पी ही ज़ाहिर की थी.

बात काफ़ी पुरानी है लेकिन जगतनारायण को अब भी याद है. लेकिन वक़्त इतना पलट गया कि वही काशी चमार जगत नारायण के सामने आकर मेहरबानी के अन्दाज़ में सिर्फ़ बोलता गया. ऐसे में महसूस यही होने लगता कि रिटायरमेंट के बाद ज़्यादा दिनों तक ज़िन्दा रहने में तक़लीफें ही तक़लीफें हैं.

आख़िर में वह दरवाज़े पर से हटे और ऊपर आ गए. मन में एकदम ये आग-सी भर गई थी. सोचा था, सतीश और मुकुन्द को नीचे उतार लाएं और किसी लकड़ी के डण्डे से पूरी तरह कुटाई करें. जिन लोगों की ख़ातिर घर-भर में सब को बेइज़्ज़त होना पड़ता है, उनके लिए यही बदा होता है. लेकिन जिस तेज़ी से उनका गुस्सा चढ़ा था उसी रफ़्तार से वह ठण्डे भी पड़ गए. जिसकी नियत ही बुरी हो, उसका तो बस भगवान ही मालिक. ईश्वर पर विश्वास या अविश्वास की कोई ठोस बुनियाद न होने के बावजूद जगतनारायण को इस वक़्त उसके अस्तित्व पर भरोसा करना ही ज़्यादा सुरक्षात्मक लगा.

मन चाहे गवारा न भी करे तो भी कभी-कभी अपने को रोक कर ठण्डा कर लेना पड़ता है. जगतनारायण को भी ऐसा करना पड़ा था. इतना वह ज़रूर पाते कि सतीश और मुकुन्द को पकड़ कर दो चांटे जड़ देते लेकिन उसका अंजाम यही होता कि घर में लंकाकाण्ड देर तक चलता, मुहल्ले के लोग दरवाज़े के सामने इकट्ठे होते, तमाशा देखने का मज़ा लेते. यह सब इतनी बार हो चुका है कि अब नए सिरे से एक और नौटंकी शुरू करने की तबियत जगतनारायण को कम-से-कम नहीं होती.

यह मन में ज़रूर आया था कि मामा को लिख दें—अब बेटों को अपने पास बुला लो या किसी बोर्डिंग में दाखिल करा दो. मेरी उमर अब जवानी की नहीं रही. अपने से बच्चों की पूरी देखभाल होती नहीं.

यह मन में आया ज़रूर था लेकिन मन की बात पोस्टकार्ड पर लिखने के लिए ख़ासी ताक़त की ज़रूरत पड़ती है. इतनी ताक़त जगतनारायण में अब बाकी नहीं रही. लिखने से ज़्यादा हौसला चाहिए लिखी हुई बात का अंजाम झेलने के लिए. ज़ाहिर है, चिट्ठी पाते ही मामा के साथ मामी आ धमकेंगी और लगेंगी सुनाने पूरी रामायण. यानी मामा ने भानजे के लिए क्या-क्या नहीं किया ! ज़रूरत के वक़्त गू-मूत तक तो माफ़ किया है. और अब वही भानजा शहर में रैकर चार पैसे वाला हो गया तो पीछे का सबकुछ बिसर गया. हाय दईया ! ज़माना देखा, ज़माना ! फिर मामी बिलखना शुरू करतीं और देर तक यह जारी रहता.

जगतनारायण को पसीना आ गया था. तार पर अंगोछा फैला हुआ था. उन्होंने उसे उठाया और बदन पर घसीट लिया.

अखबार भी थोड़ा-सा ही पढ़ने को मिला था. अब दस बजे तक थोड़ी फुर्सत तो है लेकिन दुबारा उसके पन्ने खोलने का दिल ही नहीं हुआ. दम के बाद फिर वही हिसाब-किताब, नल चलाकर बाल्टी भरो. चार-छह लोटे पानी बदन पर डालो, रोटी का कौर चबाओ और पान का डिब्बा कपड़े के झोले में डालकर बड़े-बाज़ार की तरफ़ चल पड़ो. 'बरेली क्लॉथ मर्चेण्ट्स' में बैठकर फिर दिन-भर जोड़ो-घटाओ, हिसाब-किताब लिखो. इस महंगाई के ज़माने में डेढ़ सौ रुपए महीने की यह नौकरी वैसे औरों के लिए कुछ भले ही न हो लेकिन जगतनारायण के लिए एक बहुत क़ीमती जुगाड़ है. पेंशन के गिने हुए दो सौ तेरह रुपए के साथ डेढ़ सौ जुड़ते हैं तो घर के रोटी-पानी के खर्चे को कुछ सहारा मिलता है. वैसे बाप के साथ कंधा मिलाकर खड़ा होने को विनायक भी है. लेकिन वह बेचारा अकेला करे भी क्या ? दिन-भर खून-पसीना एक करता है. रात को डाक्टरी करता है तो जाकर किसी तरह गाड़ी खिंच पाती है. वैसे बेटे ने कभी शिकवा-शिकायत का मौक़ा ज़रूर नहीं दिया लेकिन कहीं न कहीं छोटी-सी एक बात तो खैर है ही, जो चुभती है. चुभती इसलिए कि बेटा है लेकिन कभी भी घर के काम नहीं आता. अरे भई, दूसरों के लिए लीडरी करते हो, भोंपा लगाकर जलसों में बोलते हो, लेकिन जिसके लिए इता सारा तमाशा रचते हो, वे आएंगे भी कभी तुम्हारे काम ? आखिर तुम्हारा भी एक घर है, जिम्मेदार आदमी हो, कुछ घर की सोचो ! फिर शादी-ब्याह भी कभी-न-कभी तो होगा ही. लेकिन लुगाई को फिर मारा-मारा फिरना होगा. खैर चलो हमें क्या ? उमर अब हो ही गई. थोड़े दिनों में आंखें भी बन्द कर लेंगे. अभी से समझ-बूझ के चलोगे तो सुख-चैन पाओगे, वर्ना फिर भुगत लेना अपना करम···.जगतनारायण को ये सारी बातें इतनी परेशान करतीं कि सोचते-सोचते दिमाग की नसों में बिजली-सी कौंधने लगती.

●●

पूरे घर में अंधेरा था.

विनायक वापस आया तो वक़्त दस के करीब था. हालांकि आज दरवाज़े के पास भीड़ नहीं दिखी, न अंदर से ही पुराने सुरों में रोने-गाने की आवाज़ आ रही थी. वह ठिठका. क़दम साधकर अंदर घुसा और संक्षेप में किसी सद्यःसमाप्त घटना के बारे में धारणा बनाने की कोशिश करने लगा.

तब तक जगतनारायण के खंखारने की आवाज़ सुनाई पड़ गई थी. वह हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे. हुक्के की नली में से उन्होंने मुंह हटाया और अंधेरे के बावजूद कुछ समझ लेने की कोशिश की. फिर प्रश्न-वाचक लहजे में आवाज़ फेंक दी थी—छोटे लल्ला हो···?

विनायक ने जवाब नहीं दिया. जल्दी से ज़ीना पकड़कर छज्जे पर आ गया था.

—देख लो भई देख लो, जिस घर को मेरे बाप ने सिर्फ़ अपनी कमाई से बनवाया था, लोग जिसे उस ज़माने में हवेली कैते थे, आज बिजली वाले आकर उस घर का तार काट गए. काटेगा नाय तो क्या मेरी मूरत के सामने आरती उतारता रहेगा ? पैसा नाय जमा हुआ तो आज बिजली कटी, कल को मकान की भी नीलामी होगी. खूब 'इज्ज़त' होगी फिर दस जनों में···.जगतनारायण आखिर में एकदम ही खांसने लगे थे.

विनायक ने कोने वाले कमरे की तरफ़ देखा. रद्दो चटखी हुई चिमनी की एक पुरानी लालटेन जलाकर चटाई के ऊपर बैठी थी. सामने की किताब खुली हुई ज़रूर

है लेकिन जाहिर है कि उसका मन बाहर हो रही बातों में है. उसके ठीक पीछे की खिड़की जो गली की तरफ़ खुलती है, इस वक़्त बंद है. उसके पलड़ों पर कभी इससे पहले ध्यान देने की फ़ुर्सत नहीं हुई थी. इस बार इस तरफ़ नज़र गई तो पता चला, फ़िल्मी पत्रिकाओं से कटकर कुछ तस्वीरें यहां चिपकी हुई हैं.

लालटेन की चिमनी पर कालिख पहले से तो थी ही. इस बीच देर से जलते रहने की वजह से वह और भी मोटी हो गई. रोशनी इस कारण काफ़ी हल्की और पीली हो गई थी. विनायक से रद्दो की आंखें मिलीं तो उसने चेहरा मोड़ लिया था. घुटनो के ऊपर ठुड्डी टिका दी थी फिर.

वह पुराने प्रसंग पर लौट आया था—पैसे वगैरह अभी तो हैं नहीं. अगले महीने तक ही इंतज़ाम हो पाएगा कुछ. वैसे बीस तारीख़ आज हो ही गई, दसेक दिनों की बात और है.

जगतनारायण ने हुक्के से मुंह हटाया—वैसे मुहल्ले वाले अब जान ही गए हैं कि पेशकार के घर की बिजली काट दी गई. सुबह निकलोगे तो दस जनों के सवाल का जवाब भी देना पड़ेगा. तुम पढ़े-लिखे हो, सयाने हो, लीडरी करते हो. जो मुनासिब हो करना. वैसे मेरी तरफ़ से सिरफ़ इता याद रखना कि जिस पेशकार के तुम पोते हो उसे लोग देवता मानते थे. पूऽऽऽरा बरेली शहर उनकी इज्ज़त करता था.

तारा ने नीचे से आवाज़ दे दी थी—अंगीठी बुझी जा रही है, जल्दी से आकर रोटी खा लो.

उसने जल्दी से अपने कपड़े उतारे, तार पर फैलाए और धोती को कमर में खोंसकर नीचे नल की तरफ़ चला गया.

जगतनारायण ने रद्दो की तरफ़ देखा, फिर उसकी तरफ़ मुड़े—तुम्हारी अम्मा कै रई थी, रद्दो के हाथ अब जल्दी से पीले होने चाहिएं. मेरी तो उमर हो चुकी. अब जो कुछ करना-कराना है तुम्हीं लोग करोगे.

विनायक रुक गया था. जगतनारायण ने 'तुम' को 'तुम लोग' बना दिया था और अब हुक्के का कश खींचकर दुबारा निश्चिंत-से लग रहे थे. थोड़ी दिक़्क़त तो खैर हुई थी लेकिन उसने परवाह ही नहीं की. इस अंधेरे के साथ बिजली कंपनी की वसूली की बात तो खैर दिमाग में बैठती है लेकिन रद्दो की शादी समझ में नहीं आई थी.

वह नीचे आया और अंगोछे से पसीना पोंछने लगा. मोहिनी अंधेरे में ही नल के नीचे बर्तन वगैरह मांज रही थी. जी में आया था, पूछ ही ले—रद्दो की शादी बाऊजी के मार्फ़त ही मुझसे कैनी थी ? लेकिन नतीजे में बाऊजी के चीख़ने-चिल्लाने की बात पर एक धारणा बनते ही वह एकदम से रुक गया था.

अंधेरे के बावजूद लगा, अम्मा की साड़ी बहुत गन्दी हो चुकी है. और एक-आध जगह से फट भी गई है. लेकिन इस औरत ने आज तक अपनी तकलीफ के लिए कभी मुंह नहीं खोला. उसे लगा, अम्मा इस रास्ते में उसे सज़ा दे रही है.

रसोई में कुप्पी जल रही थी. उसकी रोशनी में तारा भी मां की तरह लगी. याद आया, उससे बात किए अरसा गुज़र गया. कभी फ़ुर्सत ही नहीं मिलती कि दो लमहे रुककर दुःख की बात ही कर लें.

बर्तन समेटकर मां चली गई तो वह नल से पानी लेकर चेहरे पर छींटे मारने लगा. सारा शरीर एकदम से कीचड़ में सना और घिनौना-सा लग रहा था.

●●

इसरार को गया और लक्खन ने कन्धों और टांगों की तरफ़ से पकड़कर रिक्शे से उतारा. नौ बज गए थे. विनायक दरवाज़ा बन्द कर रहा था. लक्खन ने वहीं से आवाज़ चढ़ा दी—ज़रा दो मिंट और ठैर लो, डागडर. फिर वे लगभग घसीटते हुए इसरार को अंदर लाए और फर्श पर लिटा दिया.

विनायक एकदम से संजीदा हो गया था. इसरार की नब्ज़ देखी और तुरंत उठकर काली चमड़ी के बैग में से दवा की एक शीशी निकाल ली.

—अपने करम पर अब मर रिया समुरा. गया स्वगत-सा बोल गया. लेकिन यह वक्तव्य किस प्रसंग में है उसका न तो पता चला न विनायक ने ही कोई दिलचस्पी ज़ाहिर की.

दरवाज़े के साथ ही दीवार से सटकर रखी लम्बी बेंच वाली कुर्सी पर विनायक का कपड़े का झोला पड़ा था. उसने उसे हटाया और कुर्सी खाली कर दी—उठाकर इस पर लिटाओ इसे. गया ने गर्दन की तरफ़ से और लक्खन ने घुटनों की तरफ़ से इसरार को पकड़ा था. विनायक ने कमर की तरफ़ से उसके झूलते हुए जिस्म को सहारा दिया था. फिर उसने स्टेथेस्कोप निकालकर उसके सीने और पीठ से लगाया और सांस का उतार-चढ़ाव परखने लगा—चोट गहरी है काफी.

—देखो डागडर, हम ठैरे मजदूर गंवार, कोई किताब जरूर नाय पढ़ी हमने, लेकिन इत्ती-सी बात तो समझ में आती है कि जित्ता कम्मल हो, पांव भी उत्ता ही पसारो. फिर एकदम से रुककर लक्खन 'डागडर' का चेहरा परखने लगा था. परखने की ज़रूरत इस वजह से हुई थी कि उसे लगा था—उसकी बातें या तो अधूरी ही रह गई या 'डागडर' समझ ही नहीं पाया. कुछ रुककर फिर कहा था—क्यों डागडर, ठीक नाय कैता मैं ?

विनायक इसरार के चेहरे पर झुका हुआ था. कई जगह से ऊपर की आबनूसी खाल हट गई थी और नीचे का लाल मांस निकल आया था. दो-तीन जगहों से खून के क़तरे जमकर ठोस और काले हो चुके थे. लक्खन ने एकदम से कुछ पूछ लिया तो वह थोड़ा चौंक पड़ा था—अं ?

लक्खन ने पूछ ज़रूर लिया था लेकिन जवाब की ज़रूरत उसे नहीं थी. दुबारा अपने सिलसिले पर लौट आया था वह—अरे मियां, रिक्शा के पैंडिल मारते हो, सो वही करते रहो. लखपति बनने का ख्वाब किसकी ख़ातिर देखते हो ?

विनायक ने डेटॉल और रुई निकाली और ज़ख्म को धीरे-धीरे साफ़ कर लिया. दो-चार बार इसरार के रिक्शे पर सवार होकर इधर-उधर जाने की ज़रूरत भी पड़ी, कभी-कभी पेट-दर्द या खांसी की दवा भी वह लेता रहा है, लेकिन इससे आगे उसके बारे में जानने की न तो ज़रूरत हुई न मौक़ा ही हुआ.

—थोड़ी तिमारदारी की ज़रूरत घर पर भी पड़ेगी. घर पर कौन-कौन हैं इसके ? विनायक गया की तरफ़ देख रहा था.

—घर पर ? लक्खन ने ताली पीट ली. जैसे यह कोई ऐसा मसला हो, जिस पर जबरदस्त हंसी आ जाती है, फिर गया की तरफ़ देखते ही वह संजीदा हो गया था—जे ही तो रोना है डागडर. न जोरू-मेहरारू है, न कोई बच्चा. उसकी बीवी मज़ार में है कोई पांचेक साल से. सालों की गिनती उसने दोनों हथेलियों की उंगलियों से काफी इत्मीनान के साथ कर ली और आश्वस्त हो गया कि गणित के बारे में

उसका भान बहुत बुरा नहीं है. इस आश्वस्ति के बाद फिर उसी सिलसिले पर लौट आया—हां तो मैं कै रिया था, पांच साल से सौदागरान मुहल्ले में बिल्कुल अकेला रैता है इसरार मियां. अरे भई, रिक्शा चलाओ, खाओ-पिओ, मौज करो, सनीमा देखो. बस जिंदगी में और है क्या साला ? फिर उसने एकदम से जीभ निकाल ली थी. हुजूर, चाहे गुस्सा हो चाहे प्यार, हर बात में गाली-गलौच की ऐसी आदत पड़ गई कि अब आप जैसे पढ़े-लिखे के सामने भी जुबान बेलगाम हो ही जाती. माफ़ करना सरकार, मैं कै रिया था, अपने रिक्शे में इसरार मियां, बड़े-बड़े मनिस्टर-एम्मेल्लों को भी ढोता रिया, शराबी-जुआरी को पहुंचाता रिया और रंडी जनखों को भी चढ़ाता-उतारता रिया. चोरी में जो कच्ची बनती है जे सब भी कई बार ढोने पड़ते हैं. अरे मियां, तुमें क्या, चाहे कोई सोना लदवाए चाहे गोबर. तुम्हें अपन नाभा से मतलब है कि किसी और बात से ? तो फिर काली कच्ची ढोते-ढोते एक वार मियां को लालच आ ही गया. नतीजन अपने चार यार-दोस्तों को मिलाया और लगा घर पर कच्ची बनाने. लेकिन डागडर, वो इलाका है भईयन बदमास का, हां ! कहां भइयन बदमास और कहां इसरार मियां ! भइयन को अगर गुस्सा आ गयो तो धड़ और सर अलग करके फेंक देता और देखने वाले तमासा देखके घर को लूट लेते. किसी को इत्ती हिम्मत नाय पड़ती पुलिस की औलाद के सामने जाकर बयान दे आए. सो, भईयन बदमास की मैरबानी है जे सब.

विनायक ने पट्टी बांध दी थी. इस बीच लगभग ख़ामोश ही रहा. फिर साबुन से हाथ धोये और अलमारी से दवा की शीशियां निकालने लगा—तुम लोग सबकुछ सस्ते ही पाना चाहते हो ? उसकी आवाज़ गूंज-सी रही थी.

लखन गया का चेहरा देखने लगा. बात उसे बिल्कुल समझ में नहीं आई थी और वह इस इंतज़ार में रहा कि गया कुछ बोले तो उसका साथ दे.

—हम ठैरे गरीब मूरख. गया अपने हाथों को मल रहा था परम विनय के साथ.

—काली कच्ची बनाकर तुम लोग भी बेचते हो ? विनायक ने चेहरा ऊपर उठाए बगैर पूछा. वह दवा की पुड़िया बना रहा था.

गया ने कान पकड़ लिया—जे काम अपन से नाय होता. भूखों मर जाएं लेकिन जे सब अपन से ना होने का. हम भईयन के ह्यां जायकै पी जरूर आते लेकिन बस, इससे आगे नाय. आप चाहे कोई कसम दिलवा लो, हां.

—फिर तो बड़े ईमानदार निकले तुम दोनों, क्यों ? देर तक की संजीदगी के बाद विनायक मुस्कराया.

गया और लखन थोड़ा विगलित हुए. इस तरह का कोई भाव मन में आ जाता तो ज़बान काम नहीं करती. वे भी लगभग ख़ामोश ही रहे. मुंह से अधूरी-सी एक संक्षिप्त आवाज़ भर निकली थी. इसका मतलब शायद यही होता है कि आप पहले आदमी हैं, जिन्होंने हमारा ईमान पहचाना.

विनायक मुस्कुरा रहा था. फिर एकदम से गंभीर हो गया—चोरी की कच्ची डकारते वक़्त ईमान कहां चला जाता फिर ? फिर है ही क्या फ़र्क़ तुम्हारे और इसरार या भईयन के बीच ?

उसने फिर दवा के पुलिंदों को लखन के हाथ थमा दिया और उनको हिदायतें दे दी थीं.

गया ने कमर में से खोंसा हुआ दो रुपये का एक तुड़ा-मुड़ा पत्ता निकाला और डागडर की मेज़ पर रख दिया. चेहरे पर अतिविनय का भाव उमड़ आया था.

गोया कहना यही चाह रहा—जे आपकी फीस नाय है, ग़रीब-मजूर की तरफ़ से भेंट है थोड़ी-सी.

विनायक दवा की शीशियां अल्मारी में वापस रख कर मुड़ा था—ये पैसे इसके दूध के लिए रख लो. कल शाम को आकर फिर हाल बता जाना.

गया ने हाथ जोड़े—हुजूर, दूध-मलाई हम ग़रीबों को कहां नसीब होती···

विनायक ने उसे बीच में ही एकदम से रोक दिया था—चोरी की कच्ची का नसीब तो खुला है न ?

गया झेंप गया था. झेंपा और एकदम से खामोश होकर हाथ मलता रहा.

लखन ने बात संभालने की कोशिश की थी—सो तो हम पिला ही देंगे. आप अपनी फीस रख लें. फिर कुछ ठहर कर बोला—हम ग़रीब ज़रूर हैं लेकिन दिल के ग़रीब नाय हैं. आखिर में वह धीरे-धीरे मुस्कुरा रहा था. यह कृतज्ञता की मुस्कान थी या अपने गौरव की, इसका पता नहीं चला.

—पैसे उठा लो अभी. यह ठीक हो जाएगा तो खुद ही आकर दवा की क़ीमत चुका जाएगा. विनायक ने एक हाथ में काली चमड़ी का दवाइयों वाला बैग और दूसरे में कपड़े का थैला उठा लिया था. यह यहां से निकलकर दरवाज़े में ताला लगाने की तैयारी थी.

गया ने नोट को वापस कमर में खोंस लिया और विनायक की तरफ़ दुगने विनय से देखा. आंखों की भाषा का एक अलग अर्थ होता है. फ़िलहाल गया उसी अर्थ की तलाश में है.

फिर उसने बगल से गुजरते हुए रिक्शे को रोका और इसरार के कराहते जिस्म को लखन के साथ उठाकर घुटनों पर टिका लिया. रिक्शा चलने लगा तो सोचा कि 'डागडर' के सामने एक बार और विनय उजागर कर लिया जाए. लेकिन दवाखाने में ताला बन्द करते हुए उसके संजीदा चेहरे पर आंख पड़ते ही फिर हिम्मत नहीं रह गई थी.

●●

मुरारी डाक्टर और परसोंराम बैद का दवाखाना भी इसी बिहारीपुर ढाल पर है. इस ढाल का एक संक्षिप्त-सा भौगोलिक मानचित्र है. कुछ इसके बारे में भी बता देता हूं. कुतुबख़ाने से एक सड़क निकल कर रेलवे पटरी पार करती है. फिर चीनी मिल की बगल से होकर बदायूं, कासगंज की तरफ़ चली जाती है. इसी सड़क पर कुतुबखाने से आगे बढ़ते ही कुछ पनवाड़े हैं, कुछेक चूना, कोयले के व्यापारी हैं. कुछ आगे जाने पर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का भी पीले रंग का दफ़्तर मिल जायेगा. लेकिन उससे पहले ही दाईं तरफ़ से एक तंग-सी सड़क मलूकपुर की तरफ़ निकल जाती है. कहने को इसे लोग सड़क ही कहते हैं लेकिन वैज्ञानिक व्याख्या की जाए तो यह गली से आगे नहीं ठहरती. दोनों तरफ़ दूकानें ही दूकानें हैं, हलवाई, दर्जी से लेकर किताब, परचून सबकुछ यहां मिल जाता है. सुबह के वक़्त सब्ज़ी का बाज़ार भी लगता है, जिसमें ऐसी सब्जियां भी मिल जाती हैं जो कुतुबखाने की सब्ज़ी मण्डी तक में नहीं मिलतीं. ताज़ा सब्ज़ी तो ख़ैर हर जगह मिल जाती है लेकिन बासी और सूखी हुई या कीड़ों के घोंसलों वाली सब्जियां इस बरेली शहर में कहीं-कहीं ही मिलती हैं. ऐसी सब्जियों के लिए बिहारीपुर ढाल का यह बाज़ार विख्यात है. ज़ाहिर है, यहां जिस तरह की सामग्री बड़े या छोटे पैमाने में उपलब्ध है, उससे ऐसी सब्ज़ी या सागभाजी का एक अविच्छेद्य संबंध है. ख़ैर, मैं यहां के दवाखानों के बारे में कह रहा था. सबसे पहले परशुराम वैद्य का दवाखाना पड़ता है, बचऊ हलवाई के साथ वाला खपरैल. यहां

के लोगों की ज़बान की चपेट में आकर परशुराम वैद्य परसोंराम बैद बनकर रह गया. लेकिन यह इतनी आम बात है कि इसके लिए वैद्य के मन में न तो कोई ग्लानि है, न शिकायत. पिछले चालीस सालों से यह दवाखाना इसी जगह और इसी तरह चलता आ रहा है. अन्दर जो असबाब वग़ैरा हैं, उन्हें देखकर धारणा यही बनती कि जिस दिन दवाख़ाने का श्रीगणेश हुआ था, उस दिन से लेकर आज तक ये यथावत् है.

परशुराम की अब उम्र हो गई, बाल लगभग सफ़ेद हैं. नब्ज़ देखते वक़्त अपनी ही कलाई कांप जाती है. लेकिन इससे क्या ? जिस आदमी ने इतने दिनों यहां के लोगों की सेवा की हो, उसका हक़ कानूनी लफ़्ज़ों में चाहे जैसा भी हो, एक हक़ दूसरी तरफ़ से भी बनता है. बिलायती दवाएं नहीं बनी थीं, तब से यह परशुराम वैद्य पूरे मुहल्ले की सेवा गाहे-बगाहे करते आ रहे हैं. दवा अगर बेची भी है तो वह अधन्नी-इकन्नी की ख़ूराक से ज्यादा कभी नहीं रही, लेकिन अब तो ज़माना पलटा खा गया. नीम हक़ीम छोकरा दिनभर फैक्ट्री में इनकलाब बोलता है और शाम को आकर बड़ा भगत बनता, डॉक्टरी करता है. आख़िर ये बाल सफ़ेद हुए हैं तो उनके पीछे आख़िर तजुर्बे ही है. लेकिन वक़्त नौटंकी की तरह इतना बदल रहा है कि अब गुस्सा तो आता है लेकिन हंसी भी आती है. मर्ज़ चाहे समझ में आए या न आए, दो जुमला अंग्रेज़ी बोल लो तो ठगने में कोई दिक्कत नहीं रहती. लूटो भाई, लूटे जाओ, गली-मुहल्ले के गरीबों से छीनकर अपना झोला भर लो. लेकिन सुनो, बेईमानी की कमाई जिस रास्ते आती है, निकल भी उसी रास्ते जाती है. हमारा क्या ? उमर हो ही गई, दो-चार साल में 'राम नाम सत्य है' हो जाएगा. लेकिन अपना करम भुगतने के लिए तुम्हीं रह जाओगे यहां······

परशुराम मरीज़ों का इन्तज़ार करते-करते ऊंघने लगते तो जिस्म की सारी नसें इकट्ठे जल-सी उठतीं. पुराने मरीज़ों में से कोई उम्रदराज़ हुआ तो आ गया, वर्ना बैठे-बैठे आते-जाते लोगों के चेहरे देखो, उन्हें दुआ-सलाम करते रहो. यह ग़लत या सही जो भी हो, तबीयत यही होती है कि एकदम से छोकरे के सामने पहुंच कर उसकी अल्मारियों में आग लगा दें. यह 'छोकरा' विशेषण की हैसियत से नहीं, संज्ञा के तौर पर इस्तेमाल में आया है. परशुराम की बेबसी है कि इससे ज्यादा हैसियत विनायक को देने के लिए वह ख़ुद को तैयार नहीं कर पाते.

मुरारी डॉक्टर का, नम्बर परशुराम के बाद आता है. उम्र में छोटा है तो रिश्ते को उसी तरह मंज़ूर भी कर लिया है. ज्यादातर लोग वैद्य के पास ही जाते रहे हैं लेकिन कुछ लोगों का यक़ीन होम्योपैथी में भी है. मुरारी डाक्टर उनके लिए देवता था. देवता इसलिए भी था कि अगर कभी दवा के लिए जेब में नामा न हुआ, गेहूं, चावल पहुंचाने से भी काम चल जाता था.

पचासेक की उम्र तक क्वांरा ही फिरा मुरारी डाक्टर. वैसे कहने वाले बहुत-कुछ कहते रहे हैं. उनमें से कितना सच था, कितना झूठ, उसका विश्लेषण यहां किसी ज़रूरत का नहीं है. ये बातें मुरारी के कानों तक पहुंचती रही हैं या पहुंचाई जाती रही हैं. ख़ैर पचासेक की उम्र में मुरारी डाक्टर को अपना क्वांरापन लेकर मारे-मारे फिरना इतना खलने लगा कि फिर लगभग एकदम से शादी कर ली. दुल्हिन बनी नन्दे बढ़ई की बेटी मैना. मुरारी डाक्टर की क़ानूनी शादी यह पहली थी लेकिन मैना की दूसरी. मैना नौ साल की थी, तब तीस मील दूर आंवला में चौधरियों के यहां शादी हुई थी लेकिन गौना होने से पहले ही उसका पति घर से लापता हो गया. कोई कहता है, साधु बनकर बदरीनाथ में फिर रहा है, कोई कहता ज़मीन के दुश्मनों ने क़तल कर दिया. वैसे कुछ लोग यह भी कहते हैं कि लखनऊ या कानपुर में कहीं बीड़ी फैक्ट्री

में काम कर रहा है और दूसरी शादी कर बीवी-बच्चों के साथ रह रहा है.

असली बात चाहे जो भी हो, मैना का गौना नहीं हो पाया. नन्द बढ़ई ने काफ़ी कोशिश भी की थी लेकिन कहीं और शादी की बात शुरू होते ही सारा मामला कम ज़ोर बांस की तरह टूटता रहा है. मैना की उम्र भी इस बीच धीरे-धीरे इतनी हो गई कि फिर नन्द बढ़ई ने उम्मीद लगानी ही छोड़ दी. नौ साल की उम्र में शादी हुई थी और अब तीस साल की औरत बन गई मैना. अब जब उम्र तीस साल हो ही गई, उम्र का तकाज़ा कौन उतार फेंकेगा ? मैना का भी तन कसमसाता है, कभी-कभी आदमी को देखकर सब कुछ तोड़ डालने को जी चाहता है. ऐसे में अगर शिव-पूजन बरैठा के साथ वह अंधेरे में कुछ करती है तो किसका क्या बिगड़ता है ? लेकिन कहने वाले चटखारे लेकर बातें अगर करें, उनकी ज़बान पर ताला भी तो नही डाला जा सकता.

फिर मैना एक बार बीमार पड़ी. औरतों को होने वाला कोई रोग हुआ था. शुरू में रोग कम था लेकिन ध्यान न देने की वजह से बाद में फैला और खतरनाक हो गया. नन्द बढ़ई अपनी बेटी को लेकर तब मुरारी डाक्टर के पास गया था. तब से मैना का रिश्ता बरैठा से टूटा हुआ है. आखिर में एक दिन खबर सुनने में आई कि मुरारी ने सात फेरे लगाकर मैना को अपना लिया है. जात से मुरारी कायस्थ है, नंद है बढ़ई. सुनने में आता है कि इस वजह से नंद पाप के डर से शुरू में थोड़ा हिच-किचाता भी रहा लेकिन आखिर में मान लेने के अलावा कोई चारा भी नहीं रह गया था. नंद अगर 'ना' भी कह देता, मैना बेपरवाह होकर मुरारी से ब्याह कर ही लेती.

मसूढ़े की तरफ़ के दो दांत और ऊपर के जबड़े के तीन दांत मुरारी के गायब थे. शादी से पहले उसने कुतबखाने के दांत के डाक्टर के पास जाकर क़ीमती क़िस्म के दांत बंधवा लिए. आंखों पर जो ऐनक चढ़ता था, उसके ऊपर और नीचे के शीशे अलग-अलग थे. उसने एक शीशों वाला ऐनक खरीद लिया था. कनपटियों के तरफ़ के बाल कुछ सफ़ेद हो चले थे लेकिन उन्हें खास विलायती खिज़ाब से काला कर लिया था.

शदी हुई तो मैना को वह सब खरीद कर दिया, जिसे वह सिर्फ़ सपनों में देखा करती थी. लेकिन दिक़्क़त इस बात की होने लगी कि शादी के बाद खर्चे तो बढ़े चार गुने लेकिन आमदनी आधी भी नहीं रही. मुरारी को कभी लगता है कि विनायक को बुलाकर समझा-बुझा दे. अरे भई, फैक्ट्री में बाबूगिरी करते हो, सो ही करते रहो. हमारे पेट पर क्यों लात जमाते हो ? लेकिन हया-शर्म तजकर यह कहने से ही क्या फ़र्क पड़ेगा ? उसे तो वही करना है, जो कर रहा है. आखिर में परसोंराम बैद की तरह उसकी भी आंखें अपने आप ही सुर्ख हो उठतीं और दिमाग गुस्से में आकर खौलने-सा लगता.

वक्त खाली होता तो मुरारी परसोंराम के यहां जाकर बैठ जाता या फिर फ़ुर्सत मिलने पर परसोंराम ही छड़ी उठाकर मुरारी के दवाखाने तक चले आते. फिर देर तक सलाह-मशविरा चलता रहता. आखिर में कभी मुरारी हंस पड़ता, कभी बैद्य के ठहाके गूंजने लगते.

●●

खबर दी थी लुक्का पहलवान ने.

विनायक ने एकदम चारपाई छोड़ी और सुबह के उस मिटते हुए अंधेरे में लग-भग दौड़कर जब ढाल में अपने दवाखाने के सामने पहुंचा, सांस फूल आई थी. पहल-वान ने उसे कंधों की तरफ़ से पकड़कर सहारा दिया था.

अंदर की तरफ़ देखा तो विनायक को पहली बार महसूस हुआ, वह काफ़ी थक गया है. कुर्सी, मेजें गायब थी. किताबों के पन्ने चिंदियों में फाड़कर बिखेर दिए गए थे और दोनों अलमारियां शीशे और पलड़ों से अलग होने के बाद एक दयनीय आकृति में औंधी पड़ी थीं. अगल बगल में दवा की शीशियां जो सारी की सारी छिटक गई थीं, लगता है, किसी वजनदार चीज़ से कूट दी गई थीं. बाहर जहां 'बरेली होम्यो क्लीनिक' का बोर्ड टंगा था, अब एकदम खाली था. संक्षेप में—अब यह दवाखाना नहीं एक निर्मम खंडहर लग रहा था.

विनायक ने दीवार पकड़ ली थी. उस जगह कल तक हैनीमैन की तस्वीर लटकी थी. वैसे तस्वीर इस वक्त भी इसी कमरे में है लेकिन किसी और ही नियति में. फ्रेम का शीशा टुकड़ों में बिखरा हुआ है और अंदर की तस्वीर कई जगहों से रौंदी हुई.

—तुम सिरफ़ नाम बताय दो हमें. बाक़ी हम अपने आप निबट लेंगे. पैहल-वानी का धंधा अब जरूर नाय कर्ता लेकिन इस जिसम में ताकत की कमी नाय है, हां. अब भी चार-छह को फूंक मार के मिण्टों में गिरा सकता यह पैहलवान. लुक्का ने अपनी छाती ठोंक ली थी फिर.

विनायक खामोश था. खामोश और लगभग निस्पंद.

— तुम ठैरे पूरे बिहारीपुर मुहल्ले में एक इज्जतदार आदमी. बी. ए. पास हो, कालेज में पढ़ते रहे हो, फस्ट किलास की नौकरी में रमे हो, ऊपर से गरीब-दुखी के लिए डागडरी भी शुरू की. बैरी तुमसे भी कोई कर लेगा, जे बात हमने सोची भी नाय थी.

फिर अंधेरा लगभग छंट गया था. सब्जी बाजार लग रहा था. हलवाई वगैरह की दुकानों में भी अंगीठी जलने लगी थीं. घंटे-भर में जितनी भीड़ इकट्ठी हो गई थी, उसमें पचासेक आदमी थे.

पहलवान ने दहाड़ा—कोई नुमाईश लगी है ह्यां, जो सबकुछ छोड़कर डटे हो. फूटो···फूट लो ह्यां से.

कुछ लोग दहाड़ खाकर चले जरूर गए थे लेकिन अड़ोस-पड़ोस में से कुछेक नए लोग और आ गए थे.

लुक्का ने सलाह दी—पुलिस में रपट लिखाय दो, हां. बाकी हम देख लेंगे. बच्चू को पता भी तो चले, लुक्का पैहलवान अभी तलक जिंदा है, उसके हाथ-पांव भी सही-सलामत है, उनमें दमखम भी कम नाय है.

बचऊ हलवाई कुछ आगे की तरफ़ निकल आया था. लगभग विनायक के पास. कुछ देर तो वह खामोश रहा फिर धीरे से उसका कंधा थपथपाया—जे मत समजना, कोई झूमरीतलैया से आया था तुमारा खजाना लूटने. फिर अपनी आवाज़ को अपेक्षाकृत मद्धिम कर कहा था—तुम ठैरे एकदम भोले संकर. अरे भई, जहां रैते हो, घमते-फिरते हो, उसके बारे में भी कुछ जान लिया करो. हर कोई तुमारे जैसा जुधिशठीर नाय है, महाभारत वाला, हां. ये सारी हिदायतें बचऊ ने इकट्ठे दे ली थीं. फिर पूरी व्यस्तता के साथ चलता बना था—चूल्हा खाली जारिया. कोयला-पानी इत्ता महंगा है कि अपन की तो सांस उखड़ रही है···

मुरारी डॉक्टर पान चबाता हुआ आ धमका—अरे भई, सुबह-सुबह क्या महा-भारत मच गया !

विनायक ने उसकी तरफ़ देखा और सिलसिले को बदलना चाहा—इस वक़्त आपकी खातिर के लिए कुर्सी नहीं दे पाऊंगा, इसका मुझे अफ़सोस है.

—अरे भई, अपनों से यह तकल्लुफ़ कैसा ? तुम ठैरे मुहल्ले के लड़के, इत्ते से थे तब से तुमें जानता हूं. मुरारी डाक्टर ने फिर 'इत्ते से' को दोनों हथेलियों के

बीच अन्तर लाकर दिखा दिया था. दिखा दिया तो लगा, इस छोकरे ने अभी जो मज़ाक कर लिया, उसका जवाब नहीं दे सका.

बचऊ ने अपनी दूकान की पटरी पर से आवाज़ मार दी थी—अरे ओ भोले संकर, ज़रा समल के रैना, हां. फिर उसने अपनी बाईं आंख अदा से मार ली थी.

मुरारी डाक्टर ने यह देख लिया था. देख लिया था और सकपकाते-कपकपाते कहा था—वैसे तुम फिकर नाय करना, अपने पास कुछ कुर्सियां, मेज़ वगैरह फालतू हैं. हम भिजवाय देंगे.

—ज़रूरत नहीं होगी. अपनी डाक्टरी तो ज़मीन पर चटाई बिछाकर भी चल जाती है. विनायक फिर हंसा था.

—अरे भई, ज़रूरत पड़े तो फिर काम आने के लिए कोई बिलायत-अमरीका से तो उड़के आ नाय जाता. अड़ोस-पड़ोस के भाई-बन्धु ही काम आते हैं.

परशुराम वैद्य भी लाठी टेकते हुए आ पहुंचे—तुमारा भी बैरी हो सकता कोई-नाय जानता था. फिर चेहरे पर पूरी संजीदगी उतार कर बोले—इस ज़माने में तो अपने जिसम के खून तक का यक़ीन करना बेवक़ूफ़ी है.

विनायक मुस्कुराया—वैसे आप परेशान मत होइये वैद्य जी, हम आप पर भी यक़ीन ही करेंगे.

वैद्य ने ठहाका लगाया—अरे भई, तुम मज़ाक भी ऐसी कर लेते हो कि बस कोई जवाब नाय. सुननेवाला फिर सुनता ही रै जाता है. हो तो तुम अपने पोते के बराबर लेकिन भगवान ने दिमाग खामा दिया है. 'भगवान' शब्द के उच्चारण के साथ परसोंराम ने दोनों हाथों को लाठी समेत माथे पर टेक लिया था.

बचऊ दुबारा आ गया था.

वह आया और वैद्य और मुरारी के बीच खड़ा हो गया—वैसे एक बात है वैद्य जी. जो तमाशा आज ह्यां हो गया, वो कल को आपके ह्यां भी हो सकता है, क्यों ?

सवाल हालांकि परसोंराम को किया गया था लेकिन मुरारी डाक्टर अचकचाता-सा रहा, फिर वह एकाएक सतर्क हो गया था—अरे भई बचऊ, तू जाकर लड्डू-पेड़े का सौदा कर, दुनिया की सारी बातें तेरी खोपड़ी में घुस तो नाय सकतीं !

—लेकिन जे बात बचऊ हलवाई के भेजे में बैठती है डागडर.

वैद्य ने ज़मीन पर लाठी ठोंकी—दस जनों में नौटंकी करनी हो तो कर लो. लेकिन करना तो जे चाहिए कि उपाय सोचो, जिससे आगे जे सब कभी न हो.

—जे बात मैं भी कै रिया था वैद्य जी. उपाय तो सीधा-सा है, हां. जिनने जे कुरुक्षेत्र करवाया, उनके वहां पहुंचो और रमैन करो, हां···.

विनायक ने बचऊ को रोका—रामायण-कुरुक्षेत्र रहने दो. ऐसा करो, कुछेक चाय भिजवा दो.

बचऊ निकल गया तो मुरारी डाक्टर और परसोंराम को राहत मिली थी. वैद्य ने जेब में से चांदी का पानदान निकालकर एक पत्ता ठूंस लिया था, मुरारी की तरफ़ बढ़ा दिया था.

●●

बचऊ ने विनायक की पीठ ठोंकी—अब आई बात कुछ समझ में ? देखो भई, हम तो एक बात जानते हैं, ऊपर जो गिरह-नछत्र हैं, उनमें सभी चन्दा और सूरज नाय हैं, राहू-केतु भी होते हैं, हां.

लुक्का को अब समझ में आ गया था. उसने सीने पर ज़ोरों से मुक्का मारा—

तो जे बात है ? देखो डागडर, 'हां' कैदो तो राहू-केतु को बोटी-बोटी में बांट दूं.

बचऊ ने ताली बजाकर ठहाका मारा—अरे भई पैहलवान, ज़रा धीरे बोलो. नाय तो लेने के देने पड़ जांगे, हां.

विनायक का चेहरा एकदम से सुर्ख हो गया था—आई से, गेट आउट.

बचऊ और रामलुक्का खामोश हो गए थे.

गुस्से से विनायक की सांस तेज़ हो गई थी, आंखों के गिर्द की शिकनें फड़कने लगी थीं. फिर वह नीचे झुका और दवा की टुकड़ों में बंटी शीशियां बटोरने लगा.

थोड़ी देर की ख़ामोशी के बाद बचऊ को दुबारा कुछ साहस आ गया था—एक बात कैता हूं, बुरा न मानना. इस सर के बाल अगर सफ़ेद हुए हैं तो भेजे में पचास साल का तजुर्बा है. आजकल के लौंडे-लपाड़े अंग्रेजी में गिटपिट कर लिया तो बन गए बड़े तीसमार खां. जो ज़माना हमने देखा, वो तुम सपने में भी नाय पाओगे. जब ज़माना ही बदल गया तो तुम बन्दूक दगवा दो. चाहे गोरमिन्ट हो, चाहे परमों-राम बैद्य या मुरारी डागडर—देखना, शाम-सुबह सब सलाम बजाते फिरेंगे, हां.

पहलवान ने नज़दीक आकर गत्ते के एक टुकड़े को दो हिस्सों में फाड़ लिया था. विनायक को फिर किताबों के बिखरे हुए पन्नों की तरफ़ कर रिया था—तुम डागडरी की किताब-कापी संभालो, बुहारी हम लगाते है. फिर वह बचऊ की तरफ़ मुखातिब हुआ—और तुम जाकर लड्डू-पेड़े बेचो. पंडित की तरहा कथा सुनाने लगे तो समझो झूठे ही अंगीठी में कोयला राख बनता रैगा.

बचऊ ने लुक्का को आड़े हाथों लिया—कोयला अगर राख बन रिया, बनने दे पैहलवान, उस बात की फ़िकर नाय करता, हां. लेकिन मैं तो राहू-केतु की बैद-गिरी और डागडरी के बारे में सोच रिया था.

विनायक ऊब रहा था, भौंहें सिकोड़ ली थीं.

—फिर? लाउडस्पीकर मंगाते हैं. बोले जाओ. रुक काहे को गए ? लुक्का ने विनायक के चेहरे पर नजर डाली थी. फिर बचऊ की तरफ़ मुखातिब हुआ था.

बचऊ झेंप-सा गया—कऊन सी रमैन सुनारिया था मैं ? चलो, तुम नाय चाहते तो बचऊ हलवाई गूंगा बन गया. दरवाज़े के पास पड़ा हुआ साइन बोर्ड तुड़-मुड़ गया था. उसने उसे उठाया और माथा पीट लिया—हाय रे दईया ! लंका में हनुमान जी ने भी इत्ता कुरुक्षेत्र नाय किया होगा.

ढाल का सब्ज़ी बाजार लग गया था. रोज की तरह चहल-पहल शुरू हो गई थी. कुछेक मरीज़ आते रहे, तमाशबीनों की भीड़ बढ़ती-घटती रही. भीड़ कुछ ज्यादा हो जाती तो लुक्का दरवाज़े पर मुक्का मार कर दहाड़-सा उठता. नतीजे में कुछेक लोग बिदक जाते लेकिन जमे रहने वाले लोग हंसकर पहलवान की यह दहाड़ सह जाते.

विनायक ने घर से काली चमड़ी का दवाइयों वाला बक्सा मंगा लिया था. जब तक कोई और इंतजाम नहीं हो जाता है, यही धन्वंतरी की कृपा है. आए मरीज़ों को उसने इसी में से काम चलने लायक दवाई दी, किताबों के फटे-बिखरे पन्नों को संभाला और पिछले दिनों इसी 'बरेली होम्यो क्लीनिक' के बारे में बनाई गई योज-नाएं सोचीं.

बचऊ चला गया था. यह खरीदारी का वक्त है. वैसे जाते वक़्त बोल गया था—कोई काम पड़े तो फ़ौरन बुलाय लेना.

मुरारी डाक्टर अपने दवाखाने के सामने के चबूतरे पर बैठकर आते-जाते लोगों से बातें छेड़ रहा था और कनखियों से विनायक के दवाखाने की तरफ़ देख रहा था. मरीज़ वगैरह नहीं होते तो आदतन मुरारी यही करता है. इससे वक़्त तो

खैर कट ही जाता है, बहुत कुछ सोचने के भी मौके मिल जाते हैं.

विनायक दवाखाने से बाहर निकल आया था. चबूतरे पर खड़ा हुआ कुहनियों से चेहरे का पसीना पोंछने लगा था. चेहरे पर पसीना तो खैर था ही, शिकनों का भी उभार था. इस उभार की वजह से उसे कुछ तकलीफ़-सी हो रही थी. उसने वहीं से लुक्का को आवाज़ दी—अब छोड़ो भी इसे पहलवान, कब तक डटे रहोगे ?

—बस हुआ जाता है अभी. रामलुक्का ने गर्दन उठाए बिना अन्दर से ही जवाब दिया था.

—हमें तो दफ़्तर भी जाना है. इसे बन्द कर दो, बाक़ी शाम को देख लेंगे.

लुक्का दरवाज़े तक आया—तुम दफ़्तर जाओ. कमरा थोड़ा और ठीक-ठाक करके घर पर चाबी पहुंचा देंगे, कोई फिकर नाय करो इस पहलवान के रैने, हां.

विनायक बुत-सा खड़ा रहा.

शुरू में ख्याल आया था कि छुट्टी ले ले. इरादा बदल दिया था. फिर परसों यूनियन की मीटिंग में बोलना है, सुनना है. उसके बारे में यानी मीटिंग की बुनियाद के बारे में आज कल में दस बीस लोगों से बात करनी है…

बैद ने अपनी जगह से आवाज़ फेंक दी थी—अरे भई, अपनों से तकल्लुफ़ किस बात का ? दो कुर्सियां यहां से मंगवालो, दो-चार मुरारी से ले लो. फिर कोई इन्तज़ाम हो जाए तो वापस कर देना.

विनायक ने सिर्फ़ गर्दन हिलाई थी. जवाब में कुछ कहने की बजाय इतना ही मुमकिन हुआ था.

बचऊ दूध की कड़ाही में करछी घुमा रहा था. जवाब उसने इस तरह अपने अन्दाज़ में दिया—तुम्हारी कुर्सियों के पाए ढीले हो गए, बैद जी. चूलें टूट जांगी. उस दवाखाने में ज़रा मोटे-ताज़े लोग आते हैं. किसी की कमर तुड़वाने पर क्यों तुले हो ? चलने दो, जैसा चल रिया…फिर एक मुक्त-सा ठहाका मारा था उसने.

●●

विनायक ने काली चमड़ी का दवाइयों वाला बैग उठाया और सब्ज़ी-बाज़ार की तरफ से निकल गया. सामने खत्रियान मुहल्ला है. बघेली के बनिए—व्यापारी ज़्यादातर इसी इलाके में रहते हैं. पैसे वाले लोग हैं वे. लिहाज़ा इज़्ज़त औरों के मुका-बिले कुछ ज़्यादा है. इज़्ज़त इसलिए भी ज़्यादा है कि दूकानदारी के बाद घर आकर वे लल्लू मल्लू से बात नहीं करते. किसीने अगर नमस्कार भी किया तो भी इन्हें जवाब देने की ज़रूरत महसूस नहीं होती. सिर्फ़ सर हिला देते हैं थोड़ा. लेकिन विनायक सामने आता है तो वे ज़िद करते हैं कि घर चले, चाय वग़ैरह पिए. चाय तो खैर कभी नहीं पी उसने लेकिन फुर्सत का वक़्त होता तो दो मिनट बैठकर बात ज़रूर कर लेता.

बड़े बाज़ार में मदारी दरवाज़े के पास पुरुषोत्तमदास की कपड़े की दूकान है. दूकान की बदौलत पुरुषोत्तमदास रईसों में गिने जाते. लिहाज़ा बात करने का अन्दाज़ भी पिछले पांच-सात सालों से, जबकि धंधा चौगुनी रफ़्तार से चल रहा है, पूरा बदल गया. सुनने में आता है, पुरुषोत्तमदास चुंगी के अगले चुनाव में निर्दलीय उम्मीदवार की हैसियत से लड़ने का इरादा रखते हैं.

विनायक सब्ज़ी बाज़ार से होकर आगे निकला तो पुरुषोत्तमदास बरामदे में बैठकर चेले-चपाटों के साथ हुक्का गुड़गुड़ाते हुए मिल गए. बृहस्पत के दिन बाज़ार बन्द रहता है. वर्ना पुरुषोत्तमदास अब तक दूकान पहुंच कर डोरों में बंधे हुए हनुमानजी के लंगोटे के रंग के खातों में उलझ गए होते. वैसे ये सब काम मुन्शी ही संभालते हैं.

लेकिन जब तक खुद एक बार न देख लें, तसल्ली नहीं होती. साठ बरस के मुन्शी से भूलचूक हो सकती है लेकिन लाला की आंखें चश्मा चढ़ाने के बाद वहीं जाकर टिकेंगी जहां का जोड़-घटा ग़लत हो.

पुरुषोत्तमदास ने आवाज़ फेंकी—अरे भई डाक्टर, आंखें मूंदे कहां चले जा रहे हो इत्ती तेज़ी से ? अभी तक तो कुआंरे ही ठैरे···फिर मुक्तहास्य की एक ज़बरदस्त आवाज़ गूंज उठी.

विनायक ठहरा.

—इधर से जब भी गुजरा करो, अपने मरीज़ का हाल-चाल तो पूछ लिया करो. वैसे होने को बरेली शहर में हक़ीम-बैद एक छोड़ दस हैं लेकिन हम तो भरोसा सिरफ़ तुमीं पे रखते हैं.

—यह आपकी इनायत है. विनायक मुस्कुराया.

—इनायत-उनायत कुछ नहीं जी. तुम भी कैसी बात करते हो ? फिर लाला को शायद एकदम से कुछ याद आ गया था—अरे हां, सुना है तुम्हारी दूकान को तहस-नहस कर दिया किसी ने···

—दूकान को नहीं, दवाखाने को. विनायक संजीदा हो गया था—मैं मरीज़ों का इलाज करता हूं, मर्ज़ का सौदा नहीं करता.

—लो, तुम तो बाल की खाल निकालने पे तुले हो. नए ज़माने के लौंड़ों से जेई तो शिकायत है अपनी. किताबें पढ़-पढ़ कर असली चीज़ को भूलकर इधर-उधर की बातों में भटक जाते हैं. अरे बरखुरदार, कुछ रास्ता सोचो, लोगों से सलाह-मशविरा करो, तब जाकर बनता है काम. हां, ज़रा मुझे दवा तो देते जाना, कल रात से पेट में दाईं तरफ़ धीमा-सा दर्द हो रिया है.

—पानी में काला नमक और नींबू डालकर पीजिए, ठीक हो जाएगा. दोपहर को रोटी मत लीजिए, चावल को उबाल कर भात बना लीजिए और फिर दही के साथ खाइए. विनायक का जवाब लगभग तैयार था.

—तुम्हारे तो पांवों के नीचे पहिए लगे हैं. जब देखो, भागे जा रहे हो. अरे भई, काम-धंधा छोटा-मोटा ही सही, कुछ तो हम भी करते हैं. तुम पे इत्ता भरोसा है तो देखो मरीज़ को अच्छी तरहा फिर दवा-पानी की हिदायतें दो, अपनी दिक्क़तों के बारे में कुछ कहो-सुनो.

विनायक धीरे से मुस्कराया—आप जब बीमार हैं ही नहीं, तो देखना भी क्या ?

—अरे भई, मानता हूं, बी. ए. पास हो, डाक्टरी-हकीमी चलती है तुम्हारी, लेकिन पुरुषोत्तम लाला को तो कपड़े ही बेच कर पेट भरने हैं. तुम्हारे उपदेश सुनेंगे तब तो हो गया टांय टांय फिस्स. क्या समझे ? आदतन लाला ने ज़ोरों का ठहाका मारा और एकदम से आवाज़ उतार दी—तुम्हारे दुकान में जे सब किसने कराया, इसका पता तुम्हें अब तलक नाय चला होगा लेकिन इस लाला ने घर बैठे सब मालूम कर लिया.

—लाला जी, ज्योतिष वग़ैरह में मेरी कोई दिलचस्पी या यक़ीन तो नहीं है लेकिन लगता है, इस विद्या में आप माहिर हैं.

—कर लो मज़ाक भई, ज़माना ही ऐसा है. मैं कै रिया था कि कैसे कुछ बन सकता है और तुम उतर गए मज़ाक पे.

—ज़रा जल्दी में नहीं होता तो आपके साथ बैठता, सुख-दुख की बातें सुनता. फिर शायद आपको यक़ीन आता कि यह विनायक सचमुच आपकी इज़्ज़त करता है.

लाला ने हुक्के की नली से एक और कश खींचा—तो फिर सुख-दुख की बातें सुनते, कैते नाय…!

—अलग से कहने लायक कुछ नहीं है अपने पास.जितना आप देखते हैं, उतनी ही ज़िन्दगी है विनायक के पास. इसमें कहीं-कहीं थोड़ीबहुत दिक़्क़तें तो हैं लेकिन दुख रचने की जगह ही नहीं है. बहरहाल जो कुछ है, आपके सामने ही है. इसे सुख समझिए तो सुख ही सुख है.

—तुम ऐसा करो, कालेज में जाकर प्रोफेसर बन जाओ. लौंडों पर खूब रोब जमेगा. अरे महाराज, गियानी बाद में बनते फिरना पैले अपने दोस्त-दुश्मन तो पैचान लो. गिद्ध होता है न, वह मनोतियां करता है कि कब ग्वाले की गाये मरे. लाला ने हुक्के का कश खींचा और इकट्ठे ढेर सारा धुआं उगल दिया—हां, तो मैं कै जे रिया था कि इससे पहले कि गिद्ध मनोतियां मनाए, उसकी आंखें निकाल लो. अब तुम पूछोगे कि गिद्ध कौन है ? तो भईया, माफ़ करना, इस बाज़ार में खड़े होकर लौड स्पीकर लगा कैर जलसा करते हुए हम कै नाय सकने कि गिद्ध कौन है. कभी आओ, फ़ुर्सत से दो मिनट बैठो, बातें करो तो हम खुद ही बताये देंगे कि गिद्ध कौन है और आंखें कैसे निकाली जाती हैं. आखिर हमने भी घाट-घाट का पानी चखा है. आदमी की सूरत देखते ही पता चल जाता कि किसके अन्दर क्या है, कौन कहां है. खैर, हम इस बखत तुझे सिरफ इता बताएंगे कि अपना दायां और बायां देख के चलना. उसी में शनि देवता बैठा है. आगे तुम्हारी मर्ज़ी. तुम पढ़े-लिखे हो, बी० ए० पास हो, समझदार हो……

—कभी ज़रूरत पड़ी तो आपके तजुर्बे का फ़ायदा उठाऊंगा. वैसे लाला जी, हर आदमी की हालत दूसरों से इतनी अलग होती है कि किसीका भी तजुर्बा दूसरों के काम नहीं आता.

लाला ने हुक्का गुड़गुड़ाया, धुआं उगला—आता है बरखुरदार, आता है. कोई चल पाया है आज तक अकेला इस दुनिया में ? अरे भई, लोग एक-दूसरे की मदद पर ही चलते हैं. दूसरों की क्या, मैं अपनी बात कैता हूं. लोग मुझे चुंगी के चुनाव में लड़ने की कै रहे हैं. वैसे अब्बल तो अभी तक कोई फ़ैसला नाय किया लेकिन लोगों ने दबाव अगर ज़यादा डाला फिर चुनाव तो आखिर लड़ना ही पड़ेगा. उसमें भी तुमारी मदद की ज़रूरत पड़ेगी, अब बोलो.

विनायक सतर्क हो गया—मेरी शुभ कामनाएं आपके साथ रहेंगी …

लाला ने एकदम से उसे टोक दिया—छोड़ो जे सब किताबी बातें. पैले जे तय कर लो कि तुम्हारे 'शनि ग्रह' की थोड़ी मरम्मत करवा दूं ? तुम पर ईंट फेंक गया तो तुम पत्थर फेंको. जैसा देवता, उसकी पूजा भी तो वैसी ही होती है. फिर लाला के गले के छेद से निकलकर एक भरापूरा ठहाका बाहर आ गया था.

विनायक नहीं हंसा. कलाई पर बंधी घड़ी देखी—बातों-बातों में ही काफ़ी समय गुज़र गया, लाला जी. दफ़्तर भी पहुंचना है. वह आगे की तरफ़ बढ़ने लगा था.

●●

तेईस जनवरी.

'नेता जी सुभाष बाल वाटिका' पर शामियाना लगा है. लाल-पीले कागज़ और आसपास के पेड़-पौधों की टहनियां इसे अलंकृत करने के उपकरण हैं. सुभाष चन्द्र बोस का जन्म कितने बरस पहले हुआ था या इस वक़्त वह हमारे बीच होते तो किस उम्र के होते इसकी खबर भले ही यहां के लोगों के पास न हो लेकिन इतनी जानकारी सबके पास है कि तेईस जनवरी को ही नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का जन्म हुआ था. सुबह से लाउडस्पीकर पर फिल्मी गानों से लेकर देशप्रेम के गीत पूरी आवाज़ में बजते रहते. तब महसूस होने लगता कि बहुत बड़ी कोई रंगीनी होने जा रही है.

हर साल पहलवान घर-घर जाकर चंदे उगाहता है, तेईस जनवरी की सुबह से लेकर शाम तक का 'परोगराम' बनाता है और नेताओं, 'बड़े आदमियों' से गुज़ारिश करता है कि वे ग़रीब जनता को भी कुछ वक़्त दें.

'नेता जी सुभाष बाल वाटिका' के साथ सट कर एक गली है. गली के बाद खाली ज़मीन का एक टुकड़ा है. वहां भी शामियाना लगा है. हर साल की तरह पूड़ियां तली जा रही हैं. शाम को तीन बजे से लेकर सात बजे तक मुहल्ले के और अड़ोसपड़ोस के सारे बच्चे मालगोदाम की तरफ जाने वाली सड़क के दोनों तरफ़ पत्तल और कुल्हड़ के साथ बैठते और राजभोग का आनन्द लेते. राजभोग के उपकरण में पूड़ी के साथ आलू का साग भी रहता. साग भी ऐसा कि पत्तल पर आते ही बह जाए और फिर कहीं आलू का एक-आध टुकड़ा दिखाई पड़े. लेकिन नमक मिर्च के साथ सूखी रोटियां गले के नीचे उतारने वालों के लिए यह सिर्फ़ राजभोग ही नहीं, 'भगवान' का प्रसाद भी है. भगवान कौन है और उसका प्रसाद क्या है, इस बारे में मगज़पच्ची ये लोग नहीं करते. सिर्फ़ मन में ख़याल पालते हैं कि सुबह से शाम तक जब 'लौडस्पीकर' बजता है, पूरे इलाके में चहलपहल रहती है, तब पण्डित से कथा सुनने जैसा 'पुन' इससे भी होता है.

'राजभोग' का यह इन्तज़ाम वैसे सिर्फ़ बच्चों के लिए ही रहता लेकिन बच्चों की अम्माएं भी आसपास रहतीं और धोती के पल्ले में पूड़ियां लेकर खिसक पड़तीं. या फिर कोई बच्चा होशियार हुआ तो वह खुद ही इतना ज़रूर कर लेता कि पत्तल में से चार-छह पूड़ियां उठाकर बनियान की तह के अन्दर डाल देता.

काम सबका बंटा हुआ है. हर आदमी काम के मुताबिक दौड़ता-भागता रहता. सिर्फ़ एक लुक्का है जो बीच में एक कुर्सी लगाकर बैठता और सारे कामों पर निगरानी रखता. बीच-बीच में बाबा के पास पीपलपार के तहखाने में पहुंचता और मशविरा कर आता. जब तक वहां से वापस आता तो उसकी आंखें सुर्ख़ होतीं. उस सुर्ख़ी में लाल डोरे झूलने लगते. गांजे की बू इस तरह महकती रहती कि छह फुट के फ़ासले पर खड़ा आदमी भी समझ लेता.

भगीरथ के 'होटल' में जो लोग जमघट लगाते हैं, उनमें से किसी ने कहा था— बाबा को हवा-रोशनी से बैर न हो तो हम भी तो देखें अपने नेता जी को. आखिर देस की जनता चाहेगी, गोरमिण्ट थोड़े ही फांसी पे लटकाय देगी इत्ते बड़े नेता को.

ये बातें किसकी ज़बान से निकली, पता नहीं चला. वैसे भी इस मामले पर ज़्यादा जानकारी लेने की ज़हमत में लुक्का नहीं पड़ना चाहता. भगीरथ के 'होटल'

पर अड्डा जमाने वाले सूरत में एकदूसरे से अलग हो सकते हैं लेकिन अन्दर से सभी एक हैं लुक्का ने उनकी बात का जवाब तो वैसे नहीं दिया था लेकिन दिल में आया यही था कि कह दे—बाबा को हवा-रोशनी से बैर तो नहीं है लेकिन उन्हें खुले में देखोगे तो बच्चू धोती खोलकर भागते फिरोगे

खैर, ये बातें काफ़ी पहले की हैं पहले की और इतनी घिसी हुई कि अब इनसे दिमाग को खास दिक्कत नहीं होती परेशानी इस बात की थी कि शाम के जलसे में बड़े-से-बड़े नेता आए और लुक्का पहलवान की इस बात का समर्थन करें कि नेता जी सुभाष चन्द्र बोस जिन्दा है.

अनीस सड़क पर पानी छिड़क रहा था. धूल न उड़े, इसीलिए था यह इन्तजाम वह नजदीक आया और पानी का कनस्तर नीचे उतार दिया—क्यों पैलहवान, जमग्यिा न खूब ···

लुक्का खामोश रहा.

—मातम किस बात पे मनाते हो पैलहवान जी ? कभी कभी तो थोड़ाबहुत मुस्कुरा लिया करो. अपन का दिल तो चिडिया जैसा मचलग्यिा या अल्लाह !

—जे काम करने अल्लाह मियां आएगा क्या ऊपर से ? वैसे नेतागिरी करनी हो तो कर लो भामनबाजी हमें तो सिर्फ जे देखना है कि बखत पे काम भी होता है या नाय.

अनीस थोड़ा सकपका तो गया था लेकिन फिर सम्भल भी गया—आज तो पैलहवान गर्दन भी उतार दें तो हम कुछ नाय कहेंगे जे गाने बज रहे हैं न लौडस्पीकर पर, सुनते-सुनते जी कर रिया, घर जाकर बीवी को थोड़ा···उसने आंख मार ली थी

कुछ और भी कैना हो तो अभी कैलो

अनीस ने कनस्तर उठाया और चलते वक्त मुस्कराया—कैने की बात होती है, जभी तो जुबान चलती है इस तरहा और तुम हो कि···फिर वह उसी तरह पानी छिड़कने में लग गया था

लुक्का ने भौंहें सिकोड़ी और 'बाल बाटिका' के ऊपर लगे शामियाने का मुआयना करने लगा चलो काम लायक तो बन ही गया शाम को यहां जलसा होगा बस्ती के माने हुए नेता लोग यहां आकर नेता जी सुभाष चन्द्र के बारे में अपने-अपने खयाल रखेंगे जनता नीचे, सड़क पर बैठ कर जलसा सुनती रहेगी लुक्का को ऐसी बातों में पहले रोमांच-सा आता था लगता था, इस इलाके के गरीबों की आवाज बुलन्द करने वालों में एक वही रह गया है बाकी लोग तो सिर्फ वोट के वक्त आते हैं अनीस ने एक आध बार कहा भी था—चुंगी का अलेक्सन होता है, अगली बार इस हलके से तुम भी लड़ना हम भी देखलेंगे, है कउन ऐसा अम्मा का पूत जो तुमें हरा दे शुरू-शुरू में लुक्का जोश में आता था लगता था, ख्याल बुरा नहीं है इसमें इज्जत तो खैर है ही, उसके अलावा एक खास तरह की सनसनी भी है लेकिन इस इज्जत और सनसनी के सपने देखने के बावजूद लुक्का पहलवान चुंगी के 'अलेक्सन' में कभी शरीक नहीं हुआ. क्यों नहीं हुआ, वह कहानी अलग है (यहां उसे बताने लगूं तो लेखक को लगता है, वह प्रसंगच्युत हो जाएगा लिहाजा आगे ही बताऊंगा वह सब.)

सामने से सिपाहीलाल आ रहा था. सीधा-सादा आदमी है. न तो राम के साथ है, न रहीम के साथ. थोड़ा-सा ऐब अगर है तो बस इतना कि कभी कभी कच्ची जरूरत से ज्यादा पी जाता है लोगों को तब सिपाहीलाल की नौटंकी देखने को मिलती

है वैसे आदमी खाता-कमाता है. नीले रंग की सरकारी वर्दी मिली है. रेलवे के लोको वर्कशाप में खुद खलासी है और बेटे से रिक्शा चलवा रहा है. दोनों की मिलीजुली रकम इतनी हो जाती है कि उधार वग़ैरह देने की बजाय लेने की ज़रूरत कभी नहीं पड़ती. सिपाहीलाल उधार किसी को दे या न दे, इससे लुक्का के सर में दर्द नहीं होता. उसे खुशी है तो महज़ इस बात पर कि वह भगीरथ के 'होटल' में जाकर न तो रेडियो के गानों के साथ मेज़ ठोंक कर तबला बजाता है, न गरमागरमी में ही शरीक होता है.

लुक्का ने आवाज़ दी—कहो मास्टर, कौनसी मनीस्टरी करते हो जो ईद के चांद बने फिरते हो ?

सिपाहीलाल हंसा—अपन को तो रोटीपानी के जुगाड़ में ही सुबहशाम जुटे रैना पड़ता है. मनीस्टरी कलट्टरी अब अगले ही जनम के लिए रैने दो.

—मैं तो मज़ाक कर रिया था. मैं कै जे रिया था, कभी-कभी तो मिल-मिला लिया करो, आपस में कैने-सुनने से भी दिल को राहत मिलती है.

सिपाहीलाल हथेली पर खैनी मल रहा था. मल लिया, चूना लगाया और एक हिस्सा लुक्का की तरफ बढ़ा दिया—कैने में भी शरम आती है पैलहवान, बात जे है कि प्यारे की बहू और अम्मां दोनों होली तक जनने वाली हैं. सिपाहीलाल ने अपनी आवाज़ नीचे उतार ली थी.

लुक्का ने मज़ाक किया—घबराते काहे को हो ? पोते के साथ तुम्हारा बच्चा भी खेलेगा. प्यारे को एक और भाई मिलेगा, बेटा मिलने के साथ. जे बुरा तो नाय है.

—तुम्हें तो ठठानाभर है. इधर अपना हाल तो ऐसा कि लोगन को चेहरा दिखाते शरम आती है.

लुक्का ने सिपाहीलाल की बांह पकड़ी और बगल में रखे स्टूल पर बैठा लिया —देखो मास्टर, किसी के बाप का करज नाय खाया तुमने. शरम-हया की बात रैने दो. फिर उसने एकदम से लहजा बदल लिया था—जलसे में हाज़िर रैना, हां !

—पैलहवान, हाज़िर रैने की बात छोड़ो. कोई काम हो तो बताओ. एक ही काम नाय आता अपन को—लौडस्पीकर पर बोलना. वरना कहोगे तो झाड़ू भी लगाय देंगे. पूड़ी-साग बंटवाय देंगे. वैसे एक बात है, बुरा न मानो तो कहूं. आश्वस्ति के लिए उसने लुक्का के चेहरे की ओर देखा.

पहलवान ने सिर हिलाया—कै दो, कै दो. तकल्लुफ़ किसी और के सामने कर लेना, लुक्का पैलहवान के सामने नाय.

सिपाहीलाल ने पिच्च से खैनी की पीक फेंकी—मैं कै जे रिया था—खाने-पीने का मामला है. अनीस मियां को छूने नाय देना, हां. आखिर हिन्दू हिन्दू ही हैं. और मुसलमान मुसलमान ही हैं.

—मैं समझ रिया था, जाने क्या कैने जा रहे हो. देखो, एक बात है मास्टर, जे तुम्हारा पेशकार के घर वाला डागडर है न, मुसलमान क्या, भंगी के ह्यां जाकर भी खाग पी आता है. फिर कैलोगे उसे चमरिया ?

—देखो पैलहवान, जो आदमी पढ़ा-लिखा होता, बड़ा आदमी होता, उसकी बात ही अलग होती. हम ठैरे छोटे लोग, फ़िज़ूल के झंझट में पड़ने से फ़ायदा भी क्या ? वैसे एक बात है, कटुओं से हिन्दुओं का निभना बिलकुल नाय हो सकता.

लुक्का थोड़ा संजीदा हुआ—देखो मास्टर, जे मत बोलो. जिन्नगी क्या होती है, मुझसे पूछो. हमने देखी है जिन्नगी. ऐसे-ऐसे हिन्दू देखे हैं, जिन पे मूतना भी पसंद नाय करोगे.

मसला कुछ कड़वा-सा हो गया था. सिपाहीलाल ने बात बदल दी—खैर,

जाने दो. जे सब बातन में क्या रक्खा है ? अपन लायक़ कोई काम हो तो बताओ.

—काम तो भौतेरे हैं. इत्ता बड़ा जलसा हो रिया, काम की क्या कमी ? लुक्का ने वक्तव्य को एक मोड़-सा दिया—वैसे बताओ, भगीरथ के ह्यां कोई नई बात तो नाय सुनी ? कोई कै रिया था, बाबा अगर नेताजी सुभासचंद बोस है, तो आने दो उन्हें मैदान में, जनता देखेगी.

—हां कोई कै तो रिया था.

—अरे मास्टर, कैने से क्या होता है ? कुछ तो भेजे में अकल रखा करो. गोरमिंट फिर पकड नाय लेगी, बाबाको. वैसे पता तो जे चला, अब बावा के पीछे जासूस भी लगे हैं, हां. जासूस शब्द के उच्चारण के साथ लुक्का ने आवाज़ को नीचे कर लिया था. लहजा फिर अपने आप ही रहस्यमय हो गया था.

सिपाहीलाल की आंखें गोल-गोल हो गई थीं—जासूस भी लगा है ? सच कैने हो ?

—लो पूरी रमैन सुना दी और तुम्हें अब तलक राम के बाप का नाम ही पता नाय चला...

—फिर क्या करोगे ?

—करना क्या है ? है कौन माई का लाल ह्यां, जो लुक्का पैलहवान के रैते कुछ हो जाएगा ? लुक्का ने पूरी ताकत से सीने पर मुक्का मारा, चेहरे को थोड़ा रूखा कर लिया.

—मैं ठैरा बालबच्चेदार आदमी. जासूस के नाम से तो कलेजा कंपता है अपन का.

—कहा न, जब तलक लुक्का पैलहवान है, घबराना नाय. डरना हो तो वो मरकर भसम हो जाए फिर चाहे जित्ता डरते रहो...

सिपाहीलाल खामोश रहा. सिर्फ बीच में खैनी की पीक एक बार और बगल में फेंकी थी.

—वैसे एक काम तो तुम कर ही सकते हो. लुक्का ने उसकी पीठ पर चपत-सी लगाई.

सिपाहीलाल की आंखों में प्रश्न था.

—कोई खास बात नाय. लुक्का ने हथेलियां घुमाईं और मुंह को कान के पास ले आया—इधर-उधर से जो सुनाई पड़ जाए, आकर बता दिया करना.

सिपाहीलाल डर रहा था—लेकिन पैलहवान, अपन का बखत तो बस समझो, रोटी-पानी के फिकर में ही निकल जाता. किसी और काम के लिए 'टेम' मिले तो करें भी...

लुक्का ने उसकी पीठ पर थपकी दी—ऐसी कोई बात नाय है, बस यूं समझो, जगदम्बा कभी नुक्कड़ पर मिल गया और एक-आध बात हमारे ऊपर भी कै गया, वो बता दिया करना, हां लेकिन आज तुम जे करना कि जब शाम को जलसा हो न, लोगों को 'लैन' से बिठा देना. देखो मास्टर, मुहल्ले की इज्ज़त का सवाल है. बाहर से चार लोग आंगे, उनके सामने 'डिरामा' न हो जाए. तुम ठैरे इज्ज़तदार आदमी, लोग तुम्हें मानते हैं, सो तुम पे रई जे जिम्मेवारी. ठीक ?

शुरू में सिपाहीलाल के मन में डर था, अब लड्डू फूट रहे थे. इसके बावजूद वह बाहर से लगभग निर्विकार-सा बना रहा. समझ गया था, आदमी जब नेता बनने लगता, एकएक क़दम सोच-समझकर रखना पड़ता. बोलो तो समझकर, चुपो तो सोचकर. और यह रहा जनता का मामला. जनता को फिर उसने अंग्रेजी में 'पब्लिक'

सोच लिया था.

--मुहल्ले का मामला है. दस जने साथ देंगे, जभी काम बनेगा. देखो मास्टर, लोग अगर हमें गाली बकें, मां, भैन की गालियां सुनाएं, हम फिकर नाय करने. दुनिया जे तो करती ही रैती है. मुहल्ले के लिए जे लुक्का पहलवान अपनी जान भी लुटा सकता है, हां. शुरू में लुक्का की आवाज़ में करुणा थी. अब करुणा तल्खी में बदल गई थी.

सिपाहीलाल इत्मीनान से संजीदगी के साथ सर हिलाता रहा. आदमी जब दस लोगों के बीच नेता बनता है, ऐसी ही संजीदगी चेहरे पर बरतनी पड़ती है.. रास्ता है तो बहुत मुश्किल का लेकिन एक बार पार लग गया तो फिर शामिल हो गया मुहल्ले के मातबरों में.

सिपाहीलाल ने फिर प्रसंग बदल दिया था—और सुनाओ कोई नई खबर. तुम्हारे अनीस मियां के क्या हाल हैं ?

—मज़े में है.

—मज़े में तो होगा ही. वैसे सुना है, अपनी हरम में एक और लुगाई ले आया. किले के पास कोई बुनकर था खलीक मियां, वह गुज़र गया तो उसकी बेवा पर 'मेरबानी' कर दी अनीस मियां ने. उठा लाया उसे अपनी हरम में.

—देखो मास्टर, हाथ की पाँचों उंगलियां 'बरोब्बर' तो नाय होती न ? लुक्का ने फिर ऊपर की तरफ़ इशारा किया—ऊपर जो नीली छतरीवाला है न, वो भी भौत सारे काम उल्टे-सीधे करता है और हम-तुम तो इंसान हैं. जो कुछ होता है, होने दो. इमसे तुमें-हमें क्या ?

सिपाहीलाल उठ खड़ा हुआ था फिर—खैर, हमें क्या लेनादेना इससे. कोई दस लुगाई रखे, चाहे रंडुआ बनके फिरे. इससे हमें क्या ? सिरफ़ मैं के जे रिया था, गली-मुहल्ले की बदलामी तो कुछ-न-कुछ होती ही है.

—अरे मास्टर, बदलामी तो किस्सुन कन्हैया की भी हुई थी, गांधी-नेहरू की नहीं हुई ? बोलो···

—चलते हैं फिर. सिपाहीलाल ने खैनी की पीक फेंकी और चलने लगा.

—मगर टेम पर हाजिर होना न भूलना, हां ! जे काम किसी लल्लू-पल्लू के बस का नाय, तुम्हीं कर सकते हो सिरफ़.

चलते-चलते सिपाहीलाल ने सर हिला दिया था. उसके सर के हिलाने में भी संजीदगी थी, बड़प्पन था. उसे महसूस यही होने लगा था, जिम्मेदारी निभाकर ही आदमी दस लोगों के बीच एक बन सकता है, ऊंचा उठ सकता है···

●●

जहां पूड़ियों के तलने का इंतज़ाम था, वहां की जिम्मेदारी मक्खन पर थी. उसने शामियाने के चार कोनों के बांसों पर गुब्बारे बांध दिए, रंगीन कागज़ चिपकाए और सुभाषचंद्र की आज़ाद हिंद फ़ौज के जनरल के वेशवाली तस्वीर लटका दी. एक कुर्सी और आम की लकड़ी का एक बेंच उसके साम्राज्य के उपकरण थे.

कोने की तरफ़ कुर्सी पर बैठकर मक्खन साम्राज्य का अधिपति सा-था. अधिपति को अपना आधिपत्य भी जाहिर करना पड़ता है. लोगों को किसी-न-किसी बहाने बताना पड़ता है —मक्खन पैलहवान में अब भी दम बाकी है. अम्मां के पूतो, इसके कलेजे में मोम नहीं, फौलाद की मजबूती भरी पड़ी है. बच्चू, जे फौलाद एक बार अगर गर्मा गया तो समझ लो सबकुछ गलाकर छोड़ देगा. वैसे जे मक्खन पैहलवान 'सरीफ' भी है. तुम जहां उसके लिए जिसम का एक बूंद पसीना बह ओगे होंआ वो खून का

दरिया बहा देगा. वैसे होने को पूरा शेर है लेकिन तुमने उसे अगर थोड़ा भी पुचकारा; तो फिर ज़िंदगी भर के लिए गुलाम बन गया.

मक्खन ने आवाज़ मारी— अरे ओ, छेदी के बच्चे, इस तरहा आटा गूंथता रिया तो पूड़ियां फिर चार-छह रोज बाद ही तली जांगी.

चेहरे से भावशून्य छेदी पर इसका क्या असर पड़ा, इसका तो पता नहीं चला. इतना ज़रूर स्पष्ट हो गया कि ग्वाला छेदीलाल थोड़ा सकपका गया. जात से अहीर है वह क्योंकि जात पर निर्णय लेने का अधिकार किसी के पास नहीं होता. लेकिन अहीर होने के बावजूद गाय-भैंस की रखवाली के अलावा अगर उसने कुछ किया तो दूध बेचता रहा है, मट्ठा पीता रहा है, मक्खन खाता रहा है. वैसे चेहरे के इस नक्शे को देखकर किसी को यक़ीन नहीं आ सकता है कि उसके गले के नीचे कभी मक्खन भी उतरकर उदर तक गया हो. छेदीलाल के चेहरे के बारे में विशद व्याख्या कर पाठक, आपके धैर्य की परीक्षा नहीं लूंगा. लेकिन संक्षेप में कुछ इसलिए बताऊंगा कि इससे आपको इस चरित्र के बारे में मन में एक रेखाचित्र बनाने में कुछ मदद मिलेगी.

बरेली सिटी स्टेशन के उस पार जाने के लिए आपको छोटी लाइन की रेलवे की पटरियां पार करनी पड़ेंगी. फिर बड़ी लाइन की पटरियों वाले पुल के नीचे से गुज़र कर जब आप आगे जाएंगे, आपको बरेली शहर की सीमा का मुहल्ला मिलेगा— मढ़ीनाथ. रास्ते के दोनों ओर कुछ पक्के अधपके मकान मिल जाएंगे. उसके आगे गेहूं-चने के खेत. खेत के साथ-साथ कुछ पेड़ हैं. पेड़ के नीचे रहने के लिए सांड वगैरह हैं और ऊपर के बाशिंदे हैं बंदर-लंगूर. मढ़ीनाथ के मंदिर में शिवरात्रि का मेला लगता तो इनकी पूरी खातिर की जाती.

पूर्वप्रसंग.

मैं छेदीलाल अहीर की बात कह रहा था. मढ़ीनाथ मंदिर से भी आगे बढ़ने पर अहीरों का गांव आता है—जगतबेला. छेदीलाल इस गांव का बाशिंदा है. चेहरे के वर्णन में यह कहना पड़ेगा, रात के अंधेरे में खड़ा रहे तो आपकी आंखों की रोशनी चाहे कितनी भी तेज क्यों न हो, कुछ भी दिखाई नहीं देगा. बंगाल में कभी अकाल पड़ा था. इस वजह से हर बंगाली भूखा बंगाली के नाम से बदनाम हो गया. छेदीलाल अहीर को देखने से उस अकाल की ही याद आती है. गढ़ों में धंसी हुई आंखें देखकर आपको खाईखंदक की याद अगर न भी आए, पिचके हुए गाल देखकर ढाल के सब्जी बाजार का बीसेक दिन का बासी बैंगन जरूर याद आएगा.

अहीरों में दंगल एक लोकप्रिय मनोरंजन है लेकिन दंगल में शरीक होना तो दूर छेदी अहीर को किसी ने सीने पर मुक्का मारकर कुछ कहते भी नहीं सुना. उसकी अपनी बीवी थी, सुनने में आता है अब किसी और की जोरू है वह. छेदी अहीर के भावशून्य मन को बीवी की कमी कितनी खली थी यह किसी को जरूर नहीं मालूम लेकिन कहने वाले कहते हैं—खोट तो छेदी में है. औरत को बांधने के लिए पूरा ढाई मनी मर्द होना पड़ता है. छेदी मर्द नहीं है.

एक-आध बार किसी ने इसे जनखों-मिरासियों के साथ भी देख लिया था. तब से यह खबर और भी पक्की हो गई.

छेदीलाल का बाप था सयाना आदमी. समझ गया था, बेटे की बदनामी अपने आप मिट नहीं जाएगी. अहीर के लिए बदनामी सर पर ढोकर कायर की तरह जिंदा रहने से अच्छा यही है कि रामगंगा में जाकर डूब मरे. बेटे की बदनामी का काला रंग मिटाने के लिए बूढ़ी हड्डियों का अहीर चलकर लुक्का पहलवान के पास आया था. तब लुक्का ने पहलवानी तो जरूर छोड़ दी थी लेकिन धाक फिर भी कायम रह

गई थी. दंगल के अखाड़ों में लोग लाल लंगोटधारी हनुमान के बाद अगर किसी का ज़िक्र करते हैं तो सिर्फ़ लुक्का का. ऐसे किसी आदमी के साथ रह लेगा तो पहलवानी का नशा भी कुछ-न-कुछ चढ़ ही जाएगा. और जो आदमी दंगल में शरीक होता है उसे भले ही दूसरे ढेर सारे कलंक ढोने पड़ें लेकिन 'नामर्द' होने का इल्ज़ाम कोई नहीं लगाता. तब से यह छेदीलाल लुक्का का शागिर्द है. शागिर्द ज़रूर है लेकिन किसी ने कभी उसे अखाड़ेबाजी करते नहीं देखा. इतना ज़रूर होता रहा है कि पहलवानों के जिस्म को तेल लगाता रहा है, दाबकर ताजा बनाता रहा है. बूढ़ा बाप जब तक ज़िन्दा था, इसी पर आस लगाए था कि कभी-न-कभी उसका बेटा जौहर जरूर दिखलाएगा. फिर वह मरखप गया लेकिन छेदीलाल ने लुक्का का साथ नहीं छोड़ा. इस कदर भावशून्य आदमी के मन में दंगल के प्रति कभी दिलचस्पी हो भी नहीं सकती थी. लेकिन लुक्का के साथ वह पूरी ईमानदारी के साथ था, यह झूठ नहीं, एक तथ्य है. और यह भी एक तथ्य है कि जब तक बाप जिन्दा था, लुक्का की शागिर्दी उसकी मजबूरी थी, अब आदत बन गई है.

छेदीलाल के बारे में इससे ज्यादा बयान करूं तो आप ऊबने लगेंगे. अस्तु इस प्रसंग की इति.

अब पुरानी बात पर वापस आता हूं.

छेदीलाल पीतल के एक बड़े तसले में आटा गूंथ रहा था. चूंकि भावशून्य रहना उसकी आदत है, उसके काम करने की गति से घोंघे या कछुए की याद आना स्वाभाविक है.

मक्खन ने तड़ी मारी —अरे ओ 'गोरनर' साब, आटे को बीवी की तरहा यूं पुचकारते रहोगे तो फिर हो गया काम. अमां, अपनी मर्दानगी जोरू-लुगाई से न सही, आटे के तसले से ही दिखा दे.

छेदी ने अपना चेहरा उठाया और काम की गति और चरित्र में अपेक्षाकृत तेज़ी ले आया.

मक्खन ने कुर्ते की जेब से शेर ब्रांड बीड़ी और माचिस निकाल ली थी. उसने बीड़ी सुलगाई और बाएं पैर पर दाहिना उठाकर इत्मीनान से कश खींचता रहा. उसे नशा-सा चढ़ने लगा था कि इस मुहल्ले के जिम्मेदार लोगों में से एक वह भी हो गया. आख़िर में वह चलती हुई फ़िल्म का एक गाना गुनगुनाने लगा था. बेसुरी आवाज़ के बावजूद गाने के बोल उसे अच्छे लगे. वैसे साथ ही खम्भे पर भारतमाता वाला गाना लाउड स्पीकर पर इतनी तेज़ी से बज रहा था कि उसके बाद गुंजाईश रह नहीं गई थी कि कोई मन ही मन झूमकर एक और गाना गुनगुनाए. लेकिन जब नशा चढ़ता है, आस-पास का होश ही किसको रहता है ?

●●

वैसे पूड़ी-साग के महोत्सव का घोषित वक्त तो तीन बजे का था लेकिन सामने की सड़क के दोनों तरफ़ क़तारों में बैठे बच्चे डेढ़ेक बजे से ही इंतज़ार में थे. बैठने की जगह को लेकर उनमें आपस में मुठभेड़ हो जाती तो अनीस मियां या मक्खन वीरदर्प से सेनानायक की भूमिका में वहां पहुंचकर मामले की बागडोर अपने हाथों ले लेते. अंजाम में किसी को चपत खानी पड़ती, किसी को कान पकड़कर सबके सामने दस-पन्द्रह बार उठक-बैठक लगानी पड़ती. लेकिन पूड़ी-साग के इस महाप्रसाद के सामने यह सज़ा इतनी छोटी-सी है कि इन्हें इस शारीरिक यातना का ख्याल ही न आता.

लुक्का तहमद बांधे, गेरुआ रंग की चादर ओढ़े दोनों तरफ़ बेसब्री से बैठे बच्चों के बीच से घूमकर नारे लगा रहा था—नेता सुभाषचन्द्र बोस, जिंदा है. फिर

बच्चे आसमान फाड़कर चिल्लाते हैं—जिंदा है या जिन्ना है या इससे मिलता-जुलता कुछ और.

लुक्का पूरी आवाज़ में कहता—बाबा भोलानन्द गिरी, ज़िंदाबाद.

फिर एक जोशीला समूह स्वर गूंजता—जिन्नाबाद.

यह 'जिन्नाबाद' जिस स्वर में गूंजता, उसमें इतने तरह की सुरीली-बेसुरी, सूखी-गीली आवाज़ें होतीं कि एक और ही तरह का गर्जन गूंजता रहता. पाठक, कलम की भाषा में इतनी ताकत कहां कि उसकी व्याख्या की जाए. व्याख्या के तौर पर तो खैर नहीं, संदर्भ के तौर पर मैं इतना भर कह सकता हूं कि जब वह गर्जन गूंजने लगता, उसकी ओट में लाउडस्पीकर पर बोल रहे भारतमाता के गीत या फिल्मी गाने एकदम विलीन हो जाते.

लुक्का फिर अपने सीने पर जोरों का मुक्का लगाता. कहता—बच्चो, बोलो, नेता सुभाषचन्द्र बोस की—

—जय. पूर्वनियोजित समूह-स्वर.

यह कार्यक्रम तब तक जारी रहता, जब तक कि तीन नहीं बज जाते, आलू के साग के पतीले चूल्हे से उतर नहीं जाते, पूड़ियों का तलना शुरू नहीं हो जाता.

बच्चों की मांएं गली के मुहाने पर खड़ी रहतीं और अपने-अपने बच्चों को उत्साहित करती जातीं कि खाने में कोई कसर न छोड़ें. इतना खाएं कि दिनों तक पूड़ी और आलू के साग का स्वाद ज़बान पर चिपका रहे.

बच्चे पीछे खड़ी मांओं की हिदायतें सुनते और कोशिश करते कि बैठने के लिए ज़्यादा-से-ज़्यादा जगह मिले. फैलकर बैठने के पीछे उनके मन में यह धारणा रहती कि तब ज़्यादा खाया जा सकता है. इस धारणा के निर्माण में उनके मस्तिष्क उतने सहायक नहीं होते, जितनी उनकी अम्माओं की हिदायतें.

कई बार ऐसा भी होता रहा है कि सड़क के दोनों किनारे चूंकि कच्ची-पक्की नालियां हैं, उनकी मदद खाना खाते हुए ली जाती. अक्सर यह होता रहा है कि छोटी उम्र के बच्चे अपनी पत्तल से थोड़ा पीछे हटकर नाली में मल त्यागते फिर दुबारा आकर पूड़ियां निगलने में शरीक हो जाते. नाली के उपयोग की प्रक्रिया इतनी सामान्य-सी है कि इससे किसी को कोई दिक्कत नहीं होती.

लुक्का ने लाउडस्पीकर पर घोषणा की—बच्चो, जल्दी ही पूड़ियां निकलने वाली हैं. खूब खाना तुम सब नेता सुभाषचन्द्र बोस के नाम पे.

यह बात सुनते ही खुशी की अभिव्यक्ति में शोरगुल की एक लहर फैल गई. लेकिन लहर कुछ ज़्यादा इस तरह हो गई कि जगह फैलाने के लिए फिर कुछ धमाचौकड़ी भी होने लगी.

लुक्का लाउडस्पीकर पर गरजा—ऐसा होता रिया तो सारी की सारी पूड़ियां डलाव में फेंक दी जांगी सूअरों के लिए.

थोड़ा असर इसका जरूर शुरू में हुआ था. लोग शांत हो गए थे. लेकिन थोड़ा-सा वक़्त बीतते ही वे पहले की तरह होने लगे.

मक्खन फिर अपनी जगह से हिला. बिना लाउडस्पीकर के ही चिल्लाया—सूअर के पिल्लो, ज़्यादा खुराफ़ात होता रिया तो डण्डा मारकर खाल उधेड़ लूंगा, हां. फिर वह नज़दीक आया और चार-छह को पकड़कर, आव देखा न ताव, ताबड़-तोड़ चांटे रसीद करने लगा, दो-तीन को एकदूसरे का कान पकड़वाकर उठक-बैठक कराने लगा.

बच्चे बाहर से फिर शान्त तो हो गए थे लेकिन मन ही मन इतने उतावले थे

कि आलू की तरी वाली सब्जी और पूड़ी की बू तक नाक में उमड़ने लगी. या बू ही इतनी जालिम है कि मन पर काबू रखना आसान बात नहीं है. खैर, जैसे-तैसे तीन बज ही गए. पूड़ियां एक सिरे से बंटनी शुरू हुई तो दूसरे सिरे के लोग अधीर होने लगे. उनका वश चलता तो दौड़कर इस सिरे में हाजिर हो जाते लेकिन इसमें चांटे खाने का डर तो है ही, निकाल तक दिए जाने की उम्मीद है.

शुरू में पूड़ियां बंटी. चार-छह लोगों के पास बेंत की टोकरियां और उनमें भरी पूड़ियां थी. आलू की तरीदार सब्जी बाल्टी में भरकर कड़छी के साथ देने को तीनेक लोग पीछे थे. लेकिन इतनी देर की प्रतीक्षा के बाद इतना धैर्य ही किसके मन में रह गया था कि पूड़ियां पत्तल तक आ जाने का इंतजार किया जाए. लिहाज़ा हुआ यह कि पूड़ियां आईं और तुरन्त ही पत्तल से उठकर उदर में चली गई. फिर आलू की सब्जी आई तो बच्चे उसे बिना पूड़ी के ही डकार गए. पूड़ी और सब्जी का यह क्रम देर तक ऐसे ही चलता रहा. यह सिलसिला तब तक जारी रहा जब तक कि उन्हें इस बात का अहसास नहीं हो गया कि उदर और गुब्बारे के बीच इस हालत में कोई खास फर्क नहीं होता. जाहिर है गुब्बारे की नियति तक जाकर मोक्ष-प्राप्ति की अभिलाषा किसी में नही होती. लेकिन पत्तल छोड़कर उंगलियां चाटते हुए जब वे उठते हैं, घर तक चल कर जाने की सामर्थ्य बाकी नहीं रह जाती.

●●

शाम के जलसे में जो लोग आए, वे बरेली के सम्मानित लोग हैं. उनमें एम. एल. ए. जयनारायण उर्फ जैनरैन है. जमीन-जायदाद के दलाल और फ़ुर्सत के वक्त टोपी लगाकर राजनीति करने वाले ऋषिनाथ जी है, स्थानीय साप्ताहिक 'युग प्रताप' के संपादक ब्रजपाल सक्सेना है, विनायक है, रेलवे के दफ्तर के बड़े बाबू घोषदादा है. घोषदादा को हिन्दी में बोलना या भाषण देना कुछ भी जरूर नहीं आता लेकिन लुक्का पहलवान के आग्रह पर उन्होंने आना इसलिए मंजूर कर लिया कि बिहारीपुर में रहकर उससे बैरी पानी मे रहकर मगर से दुश्मनी के बराबर है. लुक्का ने घोषदादा के पास जाकर इसलिए विनती की कि वह बंगाली हैं. नेताजी के जन्मदिन पर कोई बंगाली भी जलसे मे कुछ बोले तो कुछ और ही रंग जमता है. वक्ताओं की सूची मे लुक्का का नाम तो है ही मक्खन ने भी गुजारिश की कि उसे भी 'लौडस्पीकर' पर 'दो मिंट' बोलने का मौका दिया जाए.

इस गुजारिश पर लुक्का थोड़ा सोचता रहा, ना-नू करता रहा लेकिन फिर मक्खन की व्यग्रता देखकर 'हां' कर ही दी. बोला—ले तू भी बोलके देखले, लौडस्पीकर पे. लेकिन पैले तय कर लेना कि कैना क्या है. नाय तो तमासा हो जाएगा खासा.

मक्खन हंसा—फिकर नाय करना, पैहलवान. बोलना एक बार शुरू किया तो देखना फुलझरी लग जाएगी जुबान पे, हां.

सबसे पहले ऋषिनाथ जी आए. उम्र में साठ-बासठ के होंगे लेकिन शरीर में चुस्ती की कमी नहीं है. वे आए तो लुक्का ने गेंदे की माला पहनायी, हाथ जोड़कर नमस्कार किया.

वे मुस्कुराए—अरे भई, तुम लोग ठैरे अपने आदमी. माला-वाला तो परायों के लिए होती है.

—जे तो आपकी मेरबानी है जो इन गरीबों को भी अपना आदमी समझते हैं. वर्ना हम तो आपके पांवों की धूल-भर है.

—देखो पैलहवान, ऐसी बातें ना कैना. नाय तो दोस्ती का तरीका ही बदल जाएगा. ऋषिनाथ ने फिर चेहरे को संजीदा कर लिया—तुम तो जानते हो अपने पास

इतने काम-काज होते है कि छोड़कर आने में बस रुकावटें ही रुकावटें हैं. लेकिन तुमने भई, कहा तो 'ना' नाय कर सका. फिर बनावटी गंभीरता के साथ कृतार्थ करने के अन्दाज में हंस पड़े.

——अपन का भाग ही ऐसा है कि कोई 'ना' नाय करै गा. 'एम्मेले' सांब को कहा, तुरन्त मान गए. बाकी लोगों में अखबार के एडीटर से लेकर एक-से-एक समझदार आदमी हैं. लुक्का ने बाईं हथेली पर मुक्का मारा.

ऋषिनाथ चेहरे पर निस्पृहता उतार लाए—तुम चाहे जिसे बुलाओ अपनी मर्जी से लेकिन हैं सबके सब 'गौरमिंट' के दलाल. कभी मौका मिला तो 'गौरमिंट' में घुस गए वर्ना घुसने के लिए उसकी तरफ़ या उसके खिलाफ़ बोलकर रास्ता बनाते रहे. खैर हमें क्या इससे पैलहवान. इस बरेली शहर में तुमने हमें भी आखिर देखा ही है. कभी जनता की बात छोड़ कर अपनी नहीं सोची. लेकिन मिला क्या इससे ? ऋषिनाथ न तो मनीस्टर बन रहा है न भौत सारी जमीन-जायदाद का मालिक ही बन बैठा•••

जैनरैन की जीप आ गई थी. लिहाजा ऋषिनाथ को अपनी बात अधूरी छोड़ कर रामलाल के साथ जीप तक चले जाना पड़ा था.

रामलाल ने जैनरैन को गेंदे की पहले जैसी माला पहनायी और अगवानी की---दो मिन्ट आराम कर लीजिए फिर जलसा शुरू होगा.

—अरे भई, आराम-वाराम की फ़ुर्सत ही कहां है ? देश आज़ाद नहीं था तो आज़ाद कराने के लिए खून-पसीना एक किया, दिन-रात बराबर किया. अब आज़ादी तो मिली लेकिन बन्धु, इस आज़ादी को बरकरार रखना खेल तो नहीं है ? जब जनता ने हमें एम० एल० ए० चुना है तो आराम और ऐश के लिए तो नहीं. हम तो समझो तुम्हारे खिदमतगार हैं. वक्तव्य यहीं तक था. वक्तव्य में अन्त में एक ज़ोरदार और गूंजता हुआ कई अर्थों वाला ठहाका.

वे 'नेता जि सुभास बाल बाटीका' पर टंगे शामियाने के नीचे बिछे गद्दे की तरफ़ बढ़ रहे थे. गद्दे के ऊपर किराए की धुली हुई सफ़ेद चादर और तकिया है. दो-तीन गुलदस्ते भी गेंदे और गुलमुहर के साथ सामने रखे हैं.

लुक्का ने करबद्ध प्रार्थना की—अगली बार किसी मनीस्टर को ह्यां बुला दो तो जे मुहल्ला धन्न हो जाए. यह गुज़ारिश जैनरैन के लिए थी.

——अरे भई मिनिस्टर क्या, तुम चाहो तो दिल्ली से किसी को बुलवा दूं. होने को सबकुछ हो सकता लेकिन बात यह है कि कोई बाहर का आदमी आया तो जिस अपनेपन के साथ हम-तुम यहां बैठकर बोल रहे हैं, वो नहीं हो पाएगा. दस तरह की तकल्लुफें हैं, इनायतें हैं सो बरतनी ही पड़ती हैं. वैसे यह अगले साल की बात है, वक़्त पर देख लेंगे.

लुक्का कृतज्ञ हो गया.

ऋषिनाथ को देर तक खामोश रहकर लगा, नगण्य-से हो रहे हैं. अब मुंह खोला—ग़रीबों का मुहल्ला है लेकिन नेता जी के नाम पर देखिए इनका दिल किस तरह प्यार से उमड़ता है. यह वक्तव्य जैनरैन के लिए था.

वह गद्दे पर आकर बैठ गये थे और पीछे तकिया लगा लिया था.

ऋषिनाथ के वक्तव्य के बाद थोड़ा-सा व्यवधान आ गया था. जैनरैन ने उसे जोड़-सा दिया—गांधी जी भी यही कहा करते थे. ग़रीबों की बस्ती में ही सच्चा हिन्दुस्तान बसता है.

गांधी जी के नाम पर ऋषिनाथ खामोश हो गए. फिर उबासियां भरीं, जम्हाई ली.

जैनरैन ने घड़ी देखी और लुक्का को आवाज़ दी—अरे भई, तुम्हारे जलसे में हम दो ही हैं या और भी किसी को बुलाया है ?

लुक्का के जवाब देने से पहले ही ब्रजपाल सक्सेना अपनी सायकल से उतरते दिखाई पड़ गये थे. घोषदादा भी पान चबाते हुए आ रहे थे.

घोषदादा के मुकाबले ब्रजपाल सक्सेना ज्यादा महत्वपूर्ण हैं. महत्त्व इसलिए कि वह एक साप्ताहिक पत्र के मालिक, सम्पादक, प्रकाशक और मुद्रक हैं. पत्र तो साप्ताहिक ही कहलाता है लेकिन 'युग प्रताप' की नियति यह है कि महीने में दो बार से ज़्यादा कभी भी न निकलपाना उसकी मजबूरी है. खैर, होगी मजबूरी लेकिन जैनरैन को तो सिर्फ़ इतना मालूम है कि सक्सेना बरेली का एक तेज़ पत्रकार है. अब यह तो पाठक, आपको समझ ही लेना चाहिए कि राजनीति की इस व्यस्तता, उछल-कूद और दांव-पेंच में इतनी फुर्सत किसी को मिल नहीं पाती कि 'युग-प्रताप' कब-कब निकलता हो, इसकी जानकारी रखे.

जैनरैन सक्सेना की तरफ़ मुखातिब हुए और घोषदादा चुपचाप आकर एक कोने में बैठ गए. वे इतने अकेले हो गए थे कि किसी को उनकी उपस्थिति का अहसास नहीं हुआ. रेलवे के दफ़्तर में कलम घिसते हुए घोषदादा भी अवहेलना सहने के इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि अब ऐसी स्थितियों में उन्हें किसी बात की परेशानी नहीं होती.

मुख्य वक्ताओं में विनायक अभी गैर हाज़िर था.

जैनरैन ने चुटकी ली—तो फिर पहलवान, तुम्हारे पटाखा मार्का नेता का भाषण सुनने के लिए क्या जनता को उनके घर तक चलकर जाना पड़ेगा ? मैं तो सोचता था, नई उम्र के आदमी हैं. जलसा उन्हीं से शुरू होगा···

पेशकार का घर आधे मिनट का फ़ासला है. लुक्का खुद ही चला गया. लौट कर आया तो अकेला था.

जैनरैन के बाद ऋषिनाथ अब कोई शगूफ़ा छोड़ने ही वाले थे कि विनायक दीख गया था. हाथ में हमेशा की तरह चमड़े की दवाइयों वाला बैग और चेहरे की शिकनों पर देरतक थकते रहने के निशान.

ऋषिनाथ को जो कुछ कहना था, वह तो नहीं कह पाए लेकिन खामोश रहना रुचिकर नहीं लगा. आखिर में बोल पड़े—अरे भई जमीन से लेकर आसमान तक हर जगह डाक्टरी करते फिरते हो, कुछ तो अपनी सेहत का भी ख्याल रखा करो. इधर देखो, लोग तुम्हारे इंतजार में बैठे उबासियां लेने के अलावा कुछ और कर भी नहीं पा रहे हैं.

विनायक थोड़ा लज्जित-सा हुआ—एक मजदूर के ऊपर पूरा सिलिंडर गिर पड़ा था. उसे हॉस्पीटल में दाखिल कराकर आ रहा हूं. थोड़ी देर हो गई इसलिए.

जैनरैन ने सिलसिला बदल दिया—और सुनाओ, डाक्टरी कैसी जम रही तुम्हारी ? फिर दांतों का प्रदर्शन और एक स्पष्ट-सी मुस्कुराहट.

—जमने-पिघलने की फ़िक्र नहीं है. इसलिए यह सब करता भी नहीं मैं. दो-चार ग़रीब खून चूसने वालों के चंगुल में न फंसकर मेरे इलाज से ठीक हो जाएं तो एक छोटा-सा फ़र्ज अदा करने का अहसास हो जाएगा. थोड़ा अच्छा भी लगेगा इससे. इतना ही स्वार्थ है अपना. विनायक गद्दे पर बैठकर रूमाल से चेहरे पर उग आई पसीनेकी बूंदें साफ़ कर रहा था.

—तुम ठहरे नई उमर के आदमी. तुम्हारा नज़रिया हमारे जैसा थोड़े ही है. हम तो वैसे भी डूबते सूरज हैं और तुम लोग हो चढ़ते सूरज. चढ़ते सूरज की कदर ज्यादा होती है, हर कोई उसे नमस्कार करता है.

जैनरैन इस उम्मीद में थे कि विनायक इस सौजन्यता और विषय के बाद सिर्फ़ गल ही नहीं जाएगा, बहने भी लगेगा. लेकिन संजीदा दीखा तो जैनरैन के अहम् को ठेस पहुंची थी. इज़्ज़त घटने का-सा थोड़ा बोध भी हुआ था. फिर एकदम से याद आया था नेता के चरित्र में ऐसी संवेदनाएं कतई माने नहीं रखतीं. आख़िर में अपने होंठों के बीच एक मुस्कुराहट ठूंस दी थी. तब तक लुक्का जलसे के आरम्भ की घोषणा कर चुका था.

●●

पाठक, जलसे में किस वक्ता ने क्या कहा, यह सब सुनने के लिए आपके मन में कोई उत्सुकता नहीं है, इतना मैं समझता हूं. लिहाज़ा वे सब बातें सुनाकर आपकी सहनशीलता आंकने की कोशिश मैं नहीं करूंगा. इसके बावजूद दो वक्ताओं के वक्तव्य संक्षेप में इसलिए प्रस्तुत करूंगा कि इसके अलावा यह कहानी असम्पूर्ण ही रह जाएगी. ये वक्ता हैं लुक्का पहलवान और विनायक.

ज़ाहिर है, दोनों वक्ताओं के वक्तव्य में न तो कोई आपसी सम्बन्ध है, न सामंजस्य. लेकिन नेताजी सुभाष की जन्म-जयन्ती में ये लेखक की दृष्टि में महत्त्वपूर्ण हैं, अस्तु···

लुक्का के भाव और भाषा के बारे में आपने अब तक कुछ ज़रूर अनुमान लगा लिया होगा. इससे आपका परिमार्जित व्यवहार, संभव है, असंस्कृत होने की संज्ञा दे लेकिन उस विवाद में न पड़कर मैं इतना भर कहूंगा कि इस मुहल्ले के बाशिन्दों की यह आदत है.

लुक्का बोलने के लिए उठ खड़ा हुआ और माईक का स्टैंड पकड़ कर बोला, हलो, हलो···

यह भी उसकी आदत है. पूर्ववर्ती वक्ताओं के बोलने के बाद एम्प्लीफ़ायर में कोई ऐसी खराबी नहीं आ गई थी, जिसके लिए उसे यह कहना पड़ता. लेकिन श्रोताओं को इससे कोई असुविधा नहीं होती. उनकी भी आदत ऐसी बन गई कि 'हलो-हलो' कहने की बजाय 'मा नरैन' की कथा या चुनाव के नारे लगाये जाएं तो भी वे ऐसी ही मुद्रा में बैठे रहते.

खैर, लुक्का ने कहना शुरू किया—नेता सुभास चंद बोस जिंदा हैं नाय तो मेरी मूंछें उखाड़ डालो, मेरे मुंह पर कुता मुता दो. हिन्दुस्तान की जालिम गोरमिंट नेता जी को इसलिए 'पब्लिक' के सामने आने से रोक रई है कि उसे मालूम है, जनता नेता जी के साथ है. लेकिन बखत पे जे लुक्का पहलवान साबित करके दिखा देगा कि नेता सुभाष चन्द बोस जिन्दा है. मैं फिर डंके की चोट पे कैता हूं, जे नाय कर पाया तो मेरे मुंह पे कुता मुता देना. ज्जै हिन्द ! भारत माता की ज्जै !

लुक्का ने अपना भाषण समाप्त किया और जैनरैन के पास जाकर बैठ गया. श्रोताओं में तालियों की गड़गड़ाहट थी और जैनरैन लुक्का की पीठ पर मृदु चपत मार रहे थे—वाह भई, हम तो दंग रह गए. बरेली से लेकर दिल्ली-लखनऊ तक इतनी जगह कहना-सुनना पड़ा मुझे लेकिन ऐसी जिन्दादिली कहीं नहीं देखी. तुम्हारे जैसे चार-छह लोग मिल जाएं तो बरेली का नक्सा पलट सकता है. एम० एल० ए० को शायद एकदम से अगले चुनाव की याद आ गई थी.

लुक्का विनयपूर्वक मुस्कुराया—जे दम अपन में कहां ? हम ठैरे अनपढ़ गरीब लोग. लेकिन फिर तुरन्त बाद ही उसने अपनी छाती ठोंक ली—लेकिन जे दिल गरीब नाय है लुक्का पैहलवान का. दाल-रोटी चाहे मिले या न मिले, दिल में किसी चीज की कमी नाय है. आप मैरबानी रखिए, हम ज़रूरत पे सीने का खून भी

बहा देंगे.

जैनरैन हंसने लगे थे फिर. वही चिर-परिचित हंसी जिसका या तो कोई मतलब ही नहीं होता या फिर इकट्ठे इतने सारे मतलब होते हैं कि समझना आसान नहीं होता.

लुक्का का प्रसंग बस इतना ही. वैसे इससे सम्बद्ध कुछ घटनाएं और भी हैं जिनका आप अन्दाज़ लगा सकते हैं. इस बारे में मैं कुछ ज़्यादा इसलिए नहीं कहना चाहता कि आपको न उबाने के लिए मैं प्रतिबद्ध हूं.

अब विनायक का भाषण-प्रसंग.

भाषण सुनाने की बजाय आपको उसका सारांश बताऊंगा. मैं जानता हूं, पूरे भाषण में न तो आपकी दिलचस्पी है, न कोई आग्रह ही. अस्तु···

विनायक उठा और कहने लगा कि इस आयोजन में आकर भी अपने को खुश महसूस न कर पाना एक दुर्भाग्य की बात है. खास करके आयोजकों ने मन को और भी ज्यादा खिन्न इसलिए कर दिया कि इनमें से तीनेक लोग कल से इसलिए पुलिस की हिरासत में हैं कि वे चरस का अवैध व्यापार करते हुए रंगे हाथों पकड़े गए और···

जैनरैन ने बीच में टोका—अरे भई, किसी की टांग-खिचाई क्यों करते हो ? नेताजी पर बोलने आए हो सो कुछ बोल लो.

विनायक ने उसे घूरकर देखा और गंभीर होगया. दसेक सेकैंड रुकने के बाद फिर से बोलना शुरू किया—दरअस्ल ज़िन्दगी और विचारों में इतना फर्क़ तभी मुमकिन है जबकि आदर्श की सारी बातें सिर्फ़ दिखावा हों.

दर्शकों में से किसी ने चिल्लाया—नंगई पर क्यों आमादा होते हो ? हम भी फिर खोल देंगे तुम्हारी पोल···

—मुझे अफ़सोस है कि मेरे पास खोलने लायक कोई पोल नहीं है. विनायक ने अपनी बात आगे बढ़ाने की कोशिश की—मुझे यह भी पता चला है, जो लोग चरस का अवैध व्यापार करते हुए पकड़े नहीं गए, संत-महात्मा नहीं हैं. बहेड़ी में डकैती के सिलसिले में···

किसी ने भीड़ में से ईंट का एक अद्धा फेंका तो विनायक सर पकड़ कर बैठ गया. सफेद चद्दर का एक हिस्सा बिल्कुल सुर्ख़ हो गया था. गुलदस्ता लुढ़क कर गिरा और थोड़ा आगे की तरफ़ खिसक गया. श्रोताओं का एक हिस्सा आगे बढ़कर माईक के पास आ गया था. लोग आपस में इस कदर गड्ड-मड्ड हो रहे थे कि ढेर सारे लोगों को मसने के बारे में कुछ भी पता नहीं चला. इधर-उधर से कुछेक भद्दे किस्म की गालियां दी और सुनी जा रही थीं. विनायक गिर पड़ा तो उस धक्कामुक्की में कुछ लोगों ने चपतें और घूसे जमा दिए थे.

जैनरैन मामला अप्रिय देखकर अपनी जीप पर बैठ गए थे. ऋषिनाथ ने भी नुक्कड़ तक चल कर रिक्शा लिया और आगे की तरफ निकल गए. बाकी लोग भी थोड़ी देर तो घटना का मुआयना करते रहे, बाद में यहां से निकल कर खिसक गए.

नेताजि सुभाष बाल-वाटिका अब मुहल्ले वालों से इस कदर भर गयी कि किसी को ख़याल ही नहीं रहा, यह नेताजी की जन्म-जयंती का पर्व है. शोर-शराबे के बीच सिर्फ़ इतना पता चल रहा था कि चप्पल और बांस के टुकड़ों से खून से लथपथ एक आदमी को घायल किया जा रहा है. ज़ाहिर है विनायक कराहता रहा होगा. लेकिन इस रक्तस्रावी शोरगुल में उसके गले से निकली आवाज़ का स्पष्ट होना नामुमकिन था.

आखिर में ख़ून इतना फैल गया था कि उसकी धार उस सफ़ेद चद्दर के एक लम्बे हिस्से तक फैल गई थी. ताज़ा ख़ून के ऊपर लोगों के पांवों के निशान उभर आए थे. किसी को उस तरफ़ देखने की फ़ुर्सत नहीं थी वर्ना वह भी सर थाम कर वहीं बैठ जाता.

लाउडस्पीकर वाला अपना सामान समेट कर किराए के पैसे का मोह त्याग कर चला गया था.

नुक्कड़ पर जहां भगीरथ की दूकान है, वहां चाय और रेडियो के फ़िल्मी गाने के साथ महफ़िल जमाने वाले लोग इकट्ठे हो गए थे. वे सलाह कर रहे थे कि अब करना क्या चाहिए.

जलसा सुनने के लिए जो लोग आए थे उनमें से कुछेक लोग मामले की गड़बड़ी देखकर खिसक गए थे. रुके हुए लोगों में से कुछ या तो तमाशबीन थे या आयोजक. वैसे सर्दी की रात होने के बावजूद कुछ बच्चे भी अपेक्षाकृत ऊंची जगहों पर खड़े होकर अन्दर हो रहे 'तमाशे' को भांपने की कोशिश कर रहे थे.

आख़िरमें दामोदर लुहार की बेटी नैना भीड़ को चीर कर अन्दर जा घुसी थी. वह हांफ़ रही थी लेकिन बोलना जारी रखा—'सरम' करो नामर्दो, जो एक आदमी पर इत्ते सारे लोग टूट पड़े हो.

नैना की उपस्थिति ही लोगों के सहमने के लिए काफ़ी होती है. उस पर आंखों को तरेर कर अगर उसने कुछ कहना भी शुरू किया तो नतीजे में किसी की शामत आ सकती है. नैना की आंखों में की सुर्खी का मतलब लोग अच्छी तरह जानते हैं.

नैना ने आंचल से अपने चेहरे का पसीना पोंछा और विनायक पर झुक गई. फिर दहाड़ा—इसका क़सूर क्या है, मुझे मालूम है. मैं न आती तो इसे मार-मारकर भरता बना डालते···अब ठैरो बखत पै मैं खोलूंगी तुम लोगों की पोल. देख लूंगी किस मर्द के सीने में कितने बाल हैं, हां

लुक्का या मक्खन या अनीस का वहीं पता नहीं था

गली के मुहानों पर खड़ी औरतें इस दृश्य को बहुत दिलचस्पी के साथ देख रही थीं. नैना की आंखों की अदाओं में कभी यह डाक्टर ज़रूर फंसा रहा होगा, यह एक सामान्य निष्कर्ष था.

चक्र में खड़ी भीड़ नीचे उतर गई थी और उनमें खुसुर-पुसुर हो रही थी. इस खुसुरपुसुर का विषय क्या हो सकता है यह समझने के लिए किसी खास दिमागी ताक़त की ज़रूरत नहीं पड़ेगी. दर अस्ल सारा का सारा मामला इतना रसीला हो गया कि लोगों को इस बात पर ताज्जुब हो रहा था कि ऐसा भी होता है !

विनायक के साथ ही उसका दवाईयों वाला काली चमड़ी का बैग लगभग उसी हालत में पड़ा था. अन्दर रखी शीशियां बिखर गई थीं और बच्चे उन्हें लेकर सीटी बजाने लगे थे. वैसे ज़्यादातर शीशियां पांवों की चपेट में आकर चूरा बन गई थीं. कुछ ख़ून लोगों के पांवों का भी था लेकिन यह पता करना मुश्किल है कि किसका कौन-सा है. या इसमें विनायक के जिस्म से निकले ख़ून की मात्रा कितनी है.

पीछे से किसी ने नैना पर फ़ब्ती कसी—ले एक और खसम बन गया तेरा. उसने गर्दन को पीछे की तरफ़ मोड़ा लेकिन कहने वाले के बारे में कुछ भी अन्दाज़ा नहीं लगा पाई. फिर मुंह बिचकाकर वहीं बग़ल में ख़ून के दाग़ों के ऊपर थूक दिया.

आखिर में उसने अपने कंधे को विनायक की बांहों तक लाकर सहारा दिया. सर में भयंकर तक़लीफ़ के बावजूद वह अन्ततः उठ खड़ा हुआ था. उठा तो महसूस

होने लगा. सर की नसें फट-सी जाएंगी. कुछ देर तक तो वह बुत-सा खड़ा रहा फिर टांगों को घसीटने की कोशिश की.

लोग एक गहरी दिलचस्पी के साथ घटना का मुआयना कर रहे थे. नैना अपने करम के लिए लोगों की ज़बान पर तो थी ही अब उसके साथ विनायक उर्फ़ 'बिन्नू डागडर' का नाम भी जुड़ गया. ज़ाहिर है, बिहारीपुर के इस इलाके के लोगों को अब दिनों तक कुछ कहते-सुनते रहने की ख़ूराक मिल गयी थी.

चमारटोली में बन्ने मियां की गोश्त की दूकान के साथ ज़ंग खाए टीन की छप्पर के नीचे बैठकर सुबह से शाम तक जो लोहा और भट्टी का धंधा करता रहता, उस दामोदर लुहार को इस बरेली शहर में जानने वाले कुछ ही लोग होंगे. लेकिन उसकी बेटी नैना का नाम ढेर-सारे लोगों की ज़बान पर फिरता है. शुरू में कभीकभी कादिर मियां टोक भी देता था—बीवी-बेटी की इज्ज़त-आबरू का कुछ तो ख़्याल करो, भाईजान.

जवाब में दामोदर लुहार कान में खोंसी हुई बीड़ी सुलगाकर ढेर-सारा धुआं उगल देता. फिर फिक्क से हंस-सा पड़ता. हंसते रहने के बाद खांसी आ जाती और वह सीने पर हाथ फेरता हुआ निरुपाय-सा बन्ने मियां की तरफ़ देखने लगता. बन्ने मियां अब वह सिलसिला शुरू ही नहीं करता. कभी हाथ अगर खाली हुआ तो गेहूं-चावल की बात करली. दिल्ली-बम्बई के बारे में जहां कभी जाने का मौक़ा ही नहीं मिला, कुछ कह-सुन लिया, बस, इससे आगे बात बढ़ाने की न तो ज़रूरत महसूस होती है, न वक़्त ही मिलता है.

लम्बाई के हिसाब से पांच फुट का होना कोई ख़ास लम्बा तो नहीं माना जाता लेकिन दामोदर लुहार का पांचफुटी शरीर है ही ऐसा कि सीकिया-सा लगता. घुटनों तक उठी हुई मैली धोती और इससे मेल खाता हुआ कुर्ता. इन वस्त्रों से जिस शरीर का आच्छादन होता है उसमें सिर्फ़ सूखी हड्डियां हैं, गोश्त नहीं. जिस्म का रंग तारकोल से मेल खाता हुआ. कोटरों में धंसी आंखों पर गोलफ्रेम का एक चश्मा भी चढ़ा है लेकिन उसका हाल यह कि कान तक उसके दबाव को पहुंचाने के लिए सुतली का सहारा लेना पड़ता.

दामोदर ने सुख क्या होता है, नहीं जाना होगा लेकिन दुःखी वह है, ऐसा कोई नहीं सोचता. तेरह संतानों में से बारह मरखप गए. नौवीं संतान है नैना. इस नैना को लेकर इस बिहारीपुर के इलाके में कितनी ही कहानियां बनती-बिगड़ती रही हैं लेकिन दामोदर लुहार ने इसकी परवाह ही नहीं की. वैसे परवाह करके भी कुछ करने की ताक़त दामोदर लुहार रखता है, ऐसा और तो और खुद वह भी नहीं सोचता. बात स्पष्ट है. नैना ने अगर चामुंडा का रूप धर लिया तो किसकी मजाल जो सामने टिक जाए ! अपनी औकात से वाक़िफ़ है दामोदर. लिहाज़ा बात बढ़ाकर झूठ-मूठ की फ़ज़ीहत नहीं पैदा करता.

दामोदर की बीवी खाट पर पड़ी-पड़ी आगे-पीछे कुछ कहती ज़रूर रहती

लेकिन नैना के सामने कहने की हिम्मत आज तक नहीं हुई. वैसे भी सगी मां वह नहीं है. जो सगी मां थी, दामोदर की तेरहवीं संतान के जन्म के साथ ही रक्तस्राव से ख़त्म हो गई. नैना की परवरिश के लिए दामोदर फिर सीता को यहां ले आया था. शुरू में दो-चार साल तो वह ठीक रही लेकिन फिर बीमार रहने लगी तो नजला-जुकाम से लेकर दमे की तकलीफ़ तक हर बीमारी उसमें घर करने लगी. तब से वह बीमार ही चल रही है. बीच-बीच में परिवर्तन के तौर पर दस दिन अगर हाल कुछ अच्छा रहा तो बीस दिन चारपाई से उठा ही नहीं जाएगा. ऐसे में नैना अपने आप ही सयानी हुई और अब उसके नाम के साथ तरह-तरह के किस्से भी जुड़ने लगे.

●●

यहां लोगों के बारे में वंश-परंपरा की बातें करना कतई अर्थपूर्ण नहीं है. मैं सिर्फ़ नैना की कहानी सुनाऊंगा. नैना की ज़िन्दगी की एक छोटी-सी कहानी है. दामोदर लुहार की बेटी नैना से नैनामेम बनी थी. बनी थी या बिगड़ी थी, यह अगले समय के इतिहासकारों के शोध का विषय हो सकता है लेकिन उसमें इस लेखक की रुचि नहीं है. और पाठक की हैसियत से आप इस व्यर्थ की मग़ज़पच्ची में पड़ना नहीं चाहेंगे, इतना मैं समझता हूं.

नैना की ज़िन्दगी की एक शुरूआत तब आती है जब बदायूं से उसकी बारात आई थी. शादी हो गई. लोगों ने सोचा, बिना लगाम फिरने वाली नैना घर की चहारदीवारी के भीतर बहू-बीवी-मां बनकर नई ज़िन्दगी शुरू करेगी. जिनके यहाँ शादी हुई थी उन तक पहुंचने की ताक़त दामोदर बढ़ई में सात जनम में भी नहीं आती, इतना खुद वह भी समझता था. दामाद पूरा छह फुट का जवान है. बदायूं शहर में कबाड़ा की एक ख़ासी दुकान थी. जितनी आमदनी होती है, पूरी की पूरी अपनी. दामोदर लुहार जानता है, इस आमदनी में उसके जैसे दस आदमी आराम से पल सकते हैं. लेकिन नसीब खुलता है तो बस ऐसा ही होता है. अपने काम-धन्धे के सिलसिले में एकबार बरेली आया तो बिहारीपुर की गलियों में मटकती हुई नैना को गिरधारी ने देख लिया. अगले हफ्ते रिश्ते के एक मामा को लेकर फिर आ गया दामोदर बढ़ई के दरवाज़े पर. दामोदर भौंचक्का ! जिस दामोदर को दुनिया थूकने लायक भी नहीं समझती, उसका नसीब अगर इस तरह खुल जाए तो यक़ीन किसे आएगा.

गिरधारी ने पहले ही दिन साफ बातें कर लीं. परिवार में सिर्फ़ एक विधवा बहन है, बस. वह भी पिछले दो सालों से बनारस में रह रही है. बाकी सगे-सम्बन्धियों में से मां-बाप ज़िन्दा नहीं हैं, बाक़ी लोग अपने-अपने हिसाब से अलग रहते हैं. छोटा-सा परिवार है, दुल्हिन बनकर जो भी जाएगी, राज करेगी.

नैना सचमुच राज करने को गई थी. उसका गदराया-सा जिस्म, बड़ी-बड़ी फैली हुई आंखें और आंखों के आमंत्रण इतने चुम्बकीय थे कि गिरधारी अपना सबकुछ हारे हुए जुआरी की तरह लुटा बैठा. यह सब कुछ-कुछ अनाधुनिक या मध्ययुगीन लग सकता है लेकिन यक़ीन मानिए, सबका सब बिल्कुल सच है. इसी बीसवीं सदी में भी अगर अठारहवीं सदी वाला प्रेम-प्रसंग आपको सुनाई पड़े तो आपको ताज्जुब हो सकता है लेकिन यह सब लिखना मेरी विवशता है. अपने लेखक-धर्म के निर्वाह में मैंने सिर्फ़ इतना किया कि कैमरे की बजाय कलम उठायी और तस्वीरें खींचता चला गया।

गिरधारी का काम-धन्धा यों चलने को चलता ही रहा लेकिन बारीकी से देखा जाए तो उसमें काफ़ी ढीलापन आ गया था. इसमें उसका दोष भी क्या ? शादी के बाद अगर बीवी के जिस्म की खुशबू हमेशा नाक पर उमड़ती रहे तो यह कोई

गुनाह तो नहीं है ! गिरधारी दूकान पर भी जा बैठता तो महसूस होता, नैना बगल में सटकर खड़ी है. लिहाजा नतीजे में होता यह कि दूकान की चाबी नौकरों के हवाले करता और घर की तरफ़ मुड़ लेता. हमेशा मन यही करता कि और कुछ नहीं, बस नैना आंखों के सामने बनी रहे. नैना से उसने यह कहा तो वह फक्क-से हंस पड़ी—तुम तो एकदम फिलम वाली बात कैते हो.

गिरधारी मुस्कुराया—फिलम वाली ? अरे जे तो जिन्नगी की बात है. हमारी-तेरी जिन्नगी की. अब इस पे चाहे फिलम वाले फिलम दिखाएं, चाहे नौटंकी. तू बस इत्ता समझ ले कि बात है इस गिरधारी कबाड़ी के दिल की.

गिरधारी फिर नैना को साथ लेकर 'फिलम' देखता. परदे पर कोई प्रेम-दृश्य होता तो देखते-देखते नैना की कमर में हाथ डाल देता. नैना झटके से उसका हाथ छुड़ाती और सकुचाने-सी लगती. गिरधारी फिर उसके कान तक मुंह लाकर कुछ कह देता. नैना का चेहरा सुर्ख़ हो उठता.

घर लौटकर गिरधारी इस तरह पेश आता गोया एक लम्बे अरसे बाद आज़ादी मिली हो. नैना को बांहों में भरकर उसकी पलकें चूमता रहता. नैना पूरे अस्तित्व के साथ गिरधारी में सिमट जाती. आख़िर में लगभग बेहोशी की हालत से जब वे मुक्त होते, पता चलता रात बहुत गहरी हो गई है.

कहानी अगर कभी सच हुई, उसके सारे पात्र एक-दूसरे के बीच एक नया सिल-सिला शुरू करते हैं. ग़म या ख़ुशी बांटते हैं. वह एक ऐसी तब्दीली होती, जो हर किसी के लिए एक नया मतलब रखती. लेकिन एक सचाई जब कहानी में तब्दील हो जाए, तब कहानी बन चुकने के बाद उसका हर पात्र अपने आप में बीते दिनों की याद में अजनबी-सा हो जाता है. जाहिर है, किसी ऐसी हालत में तकलीफ़ को झेलने में ही कई और तकलीफ़ें पदा हो जाती हैं.

इस प्रसंग की शुरूआत मुझे इस लिए करनी पड़ी कि गिरधारी और नैना का रिश्ता जो दिन में उगे हुए सूरज की तरह सच था, एक झटका खाकर कहानी में बदल गया. अब सिर्फ़ अतीत की यह कहानी ही बची है. गिरधारी गिरधारी नहीं रहा, नैना नैना नहीं रही.

●●

शादी के बाद चार साल गुज़र गए तो पड़ोस की ललाइन ने कानाफूसी शुरू की. सुनने में आता है, खुद ललाइन ने शादी के बीस बरस बाद एक मरी हुई लड़की जनी थी. वही पहली और आख़री संतान रही है. लेकिन ललाइन का घमंड इस बात पर है कि वह कोखजली नहीं है. अब मरना-जीना तो ऊपर वाले के हाथ का खेल है, जो देता है, वह ले भी जाता है. हम नीचे वाले देखने और रोने-गाने के सिवा कर भी क्या सकते हैं ? ललाइन ने नैना को सलाह दी थी—किसी दाई वग़ैरह से दिखवा लो. वो औरत क्या; जिसकी कोख ही न खुली हो !

बगल में ललाइन की ननद बैठी थी. बचपन से ही वह विधवा है और मुहल्ले-भर में कई रंगीनियों के साथ जानी जाती है. वह पान चबा रही थी. फिर पिच्च-से ढेर-सारा पीक बगल में उगल दिया—खोट तो मरद में भी हो सकता है. मैं तो कैती हूं, अपने मरद को भी किसी डाक्टर-बैद से दिखवा लो, हां. उसने अपनी बातें ख़त्म कीं और धोती के पल्लू में बंधा हुआ तम्बाकू का एक हिस्सा निकालकर मुंह में डाल लिया.

नैना ने गिरधारी से यह सब कहा तो उसने उसके गालों को चूम लिया था—रैने भी दो बच्चा-वच्चा. तेरे लिए तो जे गिरधारी अपनी जिन्दगी भी छोड़ सकता है. तू सिर्फ़ इत्ता कर कि मेरी ख़ातिर मरते दम तक जवान बनी रह. गिरधारी

फिर नैना की साड़ी क. आंचल उंगलियों में लपेटने लगा था. आखिर में आंख मार कर मुस्कराया तो नैना अपने को छुड़ाकर निकलना चाह रही थी. गिरधारी ने फिर उसकी ठुड्डी पकड़ ली थी. पकड़कर वहीं अपनी गोद पर लिटा लिया था—तू पैदा ही हुई है मेरे लिए, अब भागती कहां है?

यह एक घटना नहीं, घटनाओं की क़तार है. या यों कहना चाहिए कि इस सूत्रपात के बाद इस तरह की घटनाएं गिरधारी और नैना के बीच अक्सर घटती रही हैं. नैना गोद भरने की बात पर जितनी ताकत लगाती गिरधारी उसे उतनी हल्की और सतही कर देता. आखिर में हालांकि उसने ज़बान से उंडेला नहीं था लेकिन उसे इस बात का यक़ीन हो गया था कि हो न हो गिरधारी में ही कोई खोट है. कई बार उसे इस बात का भी एहसास होता रहा है कि उसका आदमी आम मर्दों की तरह सलूक नहीं करता. कभी-कभी उसकी हरकतें इस कदर बरदाश्त से बाहर हो जातीं कि दिनों तक नैना यही महसूस करती कि इस जगह उसकी बजाय कोई भी दूसरी हो सकती थी. और कभी-कभी तो यह लगने लगता कि ऐसी हालत में बीवी की बजाय गिरधारी के लिए किसी और औरत का होना ही लाज़मी हो गया. इन हालतों में नैना अक्सर एकदम ठण्डी पड़ती रही है. उसे महसूस सिर्फ़ इतना होता रहा है कि वह एक औरत है, एक जिस्म है. उसने चाहा कि उसके इस बदलाव को गिरधारी महसूस करे, महसूस कर अपने को तोड़ता रहे. लेकिन चाहने से ही सबकुछ हो नहीं जाता, इतना वह समझती है.

···एक दिन शाम तो इन चरित्रों में कुछ हो गया. क्या हुआ और कैसे हुआ उसमें एक सहजता की बुनियाद तो है लेकिन नाटकीयता के भी पर्याप्त उपकरण इनमें मिल जाएंगे···

मंगल को बाज़ार बन्द रहता है. अमूमन होता यह कि गिरधारी इस दिन तकाज़े में निकल कर पैसा वसूल करता. इसके अलावा भी दस तरह के काम होते हैं, जिन्हें करने के लिए यही एक दिन बचता सिर्फ़. इस मंगल को सुबह वह निकल तो गया लेकिन घण्टे-डेढ़ घण्टे बाद जब लौटा, एक हाथ में मिठाई का दोना था, दूसरे में साग-भाजी और गोश्त का झोला था.

अन्दर आकर उसने क़मीज़ उतारी और नैना को पकड़ कर आंगन में पड़ी चारपाई पर लिटा दिया. नैना हाथ-पाव मारती रही. ना-नू करती रही. लेकिन गिरधारी अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ किसी और की बात सुनने का आदी नहीं था. आखिर में उसने नैना के गालों को दुलारा और होठों से एक उड़ता हुआ चुम्बन फेंक दिया—आज का दिन तू पांव पर पांव उठाकर आराम कर. आज खाना बना कर मैं खिलाता हूं तुझे. फिर तू भी कैती फिरेगी, पूड़ियां भी वरा खाई, जिनका जवाब नाय. ले चल अब बैठ जा.

नैना को अजीब-सा लगा था लेकिन आखिर में वह चुप रह गई थी.

फिर दो-ढाई घण्टे बाद गिरधारी ने आवाज़ फेंकी—अब आके देख ले, जे गिरधारी कबाड़ी फस्स किलास दिल्ली-बम्बई वाला खाना भी बना लेता है.

नैना रसोई में आई तो परोसने के लिए साड़ी का पल्लू कमर में खोंस ही रही थी कि गिरधारी ने उसे हाथ पकड़ कर बिठा दिया—आज के दिन सब काम तेरा यह कबाड़ी करेगा. तू सिरफ़ खाना खाती जा.

अरसे से नैना ख़ामोश थी, अब भी चुप रही. फिर वह पीढ़े पर बैठ गई थी. गिरधारी ने थाली सजाकर रखी तो पूड़ी का कौर तोड़ने के लिए उंगलियां आगे बढ़ाते वक़्त उसे अजीब क़िस्म का एहसास होने लगा था. ऐसा एहसास कि जिसमें न तो ग़म

होता है, न खुशी. या फिर पता ही नहीं चलता कि कोई ग़म और खुशी के बीच किस जगह लटक रहा है.•••

गिरधारी ने उसका कंधा पकड़ा और झंझोड़-सा दिया—पूड़ी के कौर मुंह के अन्दर भी तो कर.

खाना अच्छा था, अपनी सही स्थिति का पता न निकालने के बावजूद नैना ने यह महसूस किया. चार-छह पूड़ियां खाकर उसने खीर खाई, दोने में से निकाली हुई मिठाइयां लीं और अपने आप में भर-सी गई. कभी-कभी अपने आप में इस तरह भर जाना भी बहुत ज़्यादा महंगा पड़ता है, यह अच्छी तरह महसूस हुआ. आख़िर में पल्लू से हाथ पोंछने के बाद उसने चाहा कि गिरधारी को खाना वह परोसे. लेकिन गिरधारी ने उसका हाथ पकड़ा और दुबारा आंगन में पड़ी चारपाई पर लाकर बिठा दिया—आज तो जे कबाड़ी ही सब काम करेगा. अपनी बात के अन्त में वह ठहाका मारने लगा था. हालांकि ऐसी कोई ज़रूरत इस वक़्त रह नहीं गई थी.

गिरधारी फिर रसोई में घुसा, थाली में अपने लिए खाना परोसा और पूरे इत्मीनान से खाने लगा. कितनी पूड़ियां आख़िर तक वह निगल पाया, इसका पता न होने के बावजूद खुद उसे ही महसूस होने लगा था कि इससे तीनेक लोगों के पेट भर सकते थे. आख़िर में उसने गर्दन को पीछे की तरफ मोड़कर नैना को आवाज़ दी—लोग कैते हैं न, हलवाई अपनी मिठाई सदा नहीं खा पाता. लेकिन देख ह्यां बात ही पलट गई. इत्ता सारा खा गया कि अब पेट फूल कर ढोल बन गया. गिरधारी ने एक लम्बी डकार ली.

फिर वह रसोई से निकला, हाथ-मुंह धोये, मुंह के अन्दर पान का पत्ता रखा और एक बीड़ी सुलगा ली—अब ऐसे सोवेंगे कि शाम तक पता नाय चलेगा, दिन है या रात.

नैना ख़ामोश थी. सिर्फ़ पान चबाती रही, ऊपर आसमान की तरफ़ देखती रही. गिरधारी ने फिर बीड़ी का आख़िरी कश खींचा और नैना के गालों के उभार को असहमति के बावजूद छेड़कर ऊपर वाली कोठरी में चला गया. वहां चारपाई बिछी है, सुराही में पानी रखा है.

●●

ललाइन की ननद धनिया अपने आप में कई रंगीन कहानियां हो सकती है लेकिन उसका भी अपना दुख-सुख है. उसे अफ़सोस अपने विधवा होने पर क़तई नहीं है लेकिन यह तो मलाल की ही बात है कि दुनिया बड़ी ज़ालिम है. किसी का दुख-सुख नहीं सोचती. हर कोई दूसरों में आंख गड़ाए बैठा है कि कहीं थोड़ा भी सूराख अगर मिल गया तो चटखारे ले-लेकर बनाते रहो कहानियां.

कभी-कभी धनिया उदास-सी हो जाती. उसकी आंखों में उदासी उतरती तो लोगों को यानी जो उसके नज़दीक के हैं उन्हें महसूस होता कि अब कुछ होने वाला है. क्या होने वाला है ? इसे कोई नहीं जानता. सिर्फ़ इतना ही पता रहता कि इस उदासी के बाद धनिया एकबारगी शेरनी बन जाएगी. शेरनी अगर एक बार वह बन गयी तो तब तक चुप नहीं बैठेगी, जब तक कि जिस्म के खून की एक-एक बूंद एकदम ठण्डी न पड़ जाए.

शादी से पहले दो-चार बार गिरधारी का भी इससे पाला पड़ चुका है. लिहाजा वे पुरानी बातें याद आती हैं तो मन में कंपकंपी-सी छा जाती है. नैना पर वैसे पूरा यक़ीन तो है फिर भी गिरधारी को लगता है, ये बातें नैना को मालूम न होने में ही भलाई है.

एक-आध बार निहायत अन्तरंग क्षणों में नैना ने किसी सिलसिले में धनिया का ज़िक्र किया था. यह प्रसंग सिर्फ़ रससृष्टि का ही एक उपकरण था लेकिन गिरधारी का मन कांप उठा था.

सुनने में आता है, धनिया को जादू-टोना वग़ैरह भी कुछ आता है. किसी ऐसी चीज़ पर गिरधारी का यक़ीन तो वैसे नहीं है लेकिन इस बात से कौन इनकार करेगा कि उसकी वजह से कई औरतें अब एक और ज़िन्दगी में हैं. घर की बहू-बेटियां पराए मर्दों के साथ यारी अगर करें तो लोगों को धनिया पर गुस्सा आना स्वाभाविक ही है. लेकिन बस गुस्से से आगे कुछ और नहीं होता. किसी में इतनी हिम्मत रह नहीं गई जो धनिया को छेड़ सके.

हर साल दो-चार इस तरह की घटनाएं घटित होतीं और उसके साथ कई-कई रंगीन क़िस्से गढ़े जाते. हर क़िस्से में नायक ज़रूर अलग होते लेकिन नायिका एक ही होती—धनिया.

अपने बारे में सुने हुए क़िस्सों पर कभी-कभी धनिया हंसती है—जित्ते कैने वाले है न, एक-एक नामर्द है. दिन में देखो तो पाजामा-कुर्त्ते में खूब फोकटी बाबू बनकर फिरेंगे. रात को सब-के-सब जनखई करते है. अरे भई. अपन में दम हो तो सम्भालो लुगाई को. वर्ना लुगाई का क्या 'दोस' ? ऊपर वाले ने नीचे वालों को अगर कुछ दिया है तो उसमें हमारा कोई कसूर तो नाय है !

ललाइन अपनी ननद को बांहों में धक्का मारती है—तू तो बस्स अपना ही रोती है. ऐसे-ऐसे मरद हैं इस दुनिया में कि तेरे जैसी औरतें उनमें दस भी आ जाएं तो कोई फ़र्क नाय पड़ने का, हां.

कहारिन झमेरी थोड़ी दूरी पर बैठकर खैनी मल रही थी. ललाइन की बातें सुनीं तो हथेली पर दबाव डालता अंगूठा रुक गया था—बात तुम टके वाली कैती हो ललाइन. जो जनखा होता है न, लुगाई को क्या पकड़ कै रखेगा ? हम तो जे समझते हैं सिरफ़—मरद आख़िर मरद ही होता है. लुगाई को मरद के ऊपर अगर लाओ तो समझो दुनिया में अन्हेर है, हां. बात कह चुकने के बाद उसने खैनी को मुंह के अन्दर डाला और दोनों हथेलियां झाड़ने लगी.

धनिया को गुस्सा आ गया था. गुस्सा आ गया था और उसने अपनी आंखें कहारिन की तरफ़ फेरकर सुर्ख़ कर ली थीं. कहारिन की छाती धड़की थी वह डरी और उठ खड़ी हुई.

यह तो कहारिन थी. आज तक मुहल्ले के अच्छे-अच्छे की इतनी हिम्मत नहीं हुई कि धनिया की मर्ज़ी के खिलाफ़ कोई बात ज़बान से उंडेले. अपने चरित्र को धनिया शायद पूरी तरह समझती है. यानी इतनी इजाज़त तो वह दे सकती है कि औरतें उससे डरकर मन की सारी बातें सुना दें लेकिन यह मुमकिन नहीं है कि लोग बराबरी जताकर उससे प्यार करें और गू-गोबर-सने मन को उघाड़ कर रख दें. लेकिन कई बातें ऐसी भी हो जाती हैं, जिनकी कतई उम्मीद नहीं रहती. एक ऐसी ही घटना धनिया और नैना के बीच हुई.

उम्र में दोनों के बीच काफ़ी फ़र्क़ है; धनिया विधवा है, नैना सुहागिन. इसके अलावा थोड़ी बारीकी से अगर देखा जाए तो असंख्य फ़र्क़ और नज़र आ जाएंगे लेकिन इसके बावजूद कई बातें अनहोनी तो आख़िर होती ही हैं. धनिया को नैना मन-मुताबिक लगी, नैना को धनिया अच्छी लगी. अब यह अच्छा लगना किस कारण के आधार पर है, यह मनोविश्लेषकों के लिए शोध का विषय हो सकता है लेकिन मेरा ख़्याल है, उसमें पाठकों की रुचि नहीं ही होगी.

प्यार-मुहब्बत की भी अपनी सीमाएं होती हैं, इतना धनिया समझती है. उसे यह भी मालूम है कि गिरधारी का रुख उसके बारे में क्या है और वह अपनी बीवी को किस सीमा तक छूट दे सकता है. सच कहा जाए तो गिरधारी के साथ कभी अतीत में उसका जो रिश्ता जुड़ा था, उसका दाग अब भी उसके मन में है. भावुक यानी वह नहीं है, यह एक प्रमाणित तथ्य हो सकता है लेकिन कभी-कभी तो सरहद की दीवारें भी टूट ही जाती हैं. धनिया को लगता है, मन की ये दीवारें टूट कर बराबर होती जा रही हैं. इसमें कुछ-न-कुछ भावुकता तो है ही लेकिन यथार्थ की तरह वह ग़लत नहीं है.

धनिया फिर भी अपने को सम्भालती है. बीते हुए की याद आती है तो उसे दबाकर कलेजे को मज़बूत करती है. कोई चाहे उसे कितना भी ग़लत समझे वह गिरधारी और नैना के दाम्पत्य सुख के लिए मन-ही-मन प्रार्थना करती है.

धनिया को प्यार आता है तो नैना की ठुड्डी पकड़कर पुचकार-सी देती—पूरे मुहल्ले में तू ही एक है सुहागिन.

नैना खुशी से फूली न समाती. खुशी मन में उफनती है तो शायद अनजाने में ही मन से कई बातें इस तरह बहकर निकल जाती, जिनका पता खुद कहने वाले को भी नहीं होता. नैना की खुशी के साथ यह भी विगलित होने का एक कार्यक्रम है. यानी फिर वह कुछ भी बिना सोचे सबकुछ उंडेल देती. गिरधारी की हर अच्छाई और खामी कह चुकने के बाद उसे महसूस होता, सीने पे से एक बोझ उतर गया है. ज़ाहिर है ऐसे में मन आकाश की तरह फैलकर उन्मुक्त-सा होने लगता. किसी 'अपने' को मन का सबकुछ कह पाने का जो सुख होता है उसमें नैना अब खुद को तलाशती है. लगता है, समूचा संसार सिमट कर उसके अन्दर आ घुसा.

धनिया फिर आंख मारती है—लेकिन थोड़ी होशियारी से मामला सम्भालते रैना, हां ! थोड़ा हंस कर कहती—तू है बड़ी भोली-सी. खैर, मैं जो हूं तेरे संग. कोई फिकर नाय करना.

नैना आखिर में सिकुड़ने-सी लगती. देर तक सोचती रहती. फिर एकदम से यह बोल पड़ती—सुहागन की गोद खाली रहे तो कैने वाले दस बातें कैते ही फिरेंगे. लेकिन ह्यां फिकर है किसको ?

धनियां ने चेहरे को संजीदा कर लिया था. संजीदा और खामोश.

—अब तुम्हीं बोलो, मैं डागडर के पास जाने को कैती हूं तो कोई गुनाह तो नाय करती ? लेकिन ह्यां चाहे कलेजा फाड़ लो, चाहे पत्थर के सामने बैठ कर चीखे जाओ, बात बरोब्बर है. नैना की आवाज़ में दयनीयता थी.

—कहा न, तू भोली है बड़ी. धनिया ने ढाढस बंधाया—तू जो चाहेगी तो दस पूत की अम्मां बन जाएगी, हां.

नैना लजा गई थी. आंखें झुका ली थीं.

●●

ऐसा कोई ज़रिया वैसे था तो नहीं कि गिरधारी को इन बातों के बारे में, इस सिलसिले के बारे में जानकारी हो जाए लेकिन कुछ अन्दाज़ा उसे हो ही गया था. इस अन्दाज़ की बुनियाद क्या है, नैना नहीं जानती. उसे सिर्फ़ इतना महसूस होने लगा कि गिरधारी की आंखों में अब शक भर गया. अब वह उसे बाहों में भरता है तो सिर्फ़ इसलिए कि जिस्म से निकलती खुशबू से कुछ और अन्दाज़ा लगा सके.

कभी-कभी नैना को लगता, एकदम से गिरधारी कुछ पूछ लेगा. महसूस होता, देर तक कुछ पूछने की तैयारी करते रहने के बाद एकाएक वह अपना फैसला बदल

रहा है. मन में आता कि उसके सवालों का जवाब सवाल सुने बिना भी दिया जा सकता है. दिया जा सकता है लेकिन दे वह नहीं पाएगी, इतना साफ़ है. कई बातें होती ही इतनी स्पष्ट हैं कि उनके लिए न तो सवाल सुनने की ज़रूरत रहती है, न जवाब देने की.

अब कुछेक और व्यतिक्रम भी होने लगे हैं.

दुपहर को गिरधारी दूकान से एकदम घर वापस आता, आकर खूंखार आंखों से घर के एक-एक कोने का मुआयना-सा करता फिर दसेक मिनट में जिस गति से आया था, उसी गति से निकल भी जाता. इस व्यतिक्रम का कारण क्या है, नैना समझती है. समझने के बावजूद उसे सिर्फ़ आगे के वक़्त का इन्तज़ार रहता. लेकिन आगे के वक़्त में उसे क्या मिलेगा, इस पर न तो उसने कभी सोचा, न यह पता ही है.

पिछले दिनों गिरधारी एक दिन खाना खाते हुए एकदम से थाली छोड़कर उठ खड़ा हुआ था. बाहर आंगन में नल तक जाकर कुल्ला किया और वहीं से एक हिदायत फेंक दी थी—धनिया से कह देना, आगे से यहां न आया करे. यहां मन दुखता है तो बरेली चली जा लेकिन धनिया से बोलने की दरकार आगे से न रखना.

नैना समझती है, यह सब एकदम से नहीं हुआ था. यह बिना भूमिका की कोई गढ़ी हुई कहानी भी नहीं है. रसोई में बैठी-बैठी वह बर्फ़-सी ठंडी पड़ गई थी. लग रहा था, जैसे अब कोई अस्तित्व ही नहीं रहा इस शरीर का, इस मन का. देर तक बुत-सी बनी रहने के बाद जब वह संभली, रात गहरी हो गई थी. सन्नाटा था. सिर्फ़ कुत्ते भूंक रहे थे. रोटी निगलने की तबीयत पहले से ही कोई खास नहीं थी अब उसका सवाल भी नहीं रह गया था. उसने गिरधारी का बचा हुआ जूठा थाली में से उठाकर खिड़की से पीछे की गली में फेंका तो कई-एक कुत्ते लपक कर आ गए. अंधेरे में बहुत स्पष्ट दिखाई तो नहीं पड़ा था लेकिन ज़ाहिर हो गया था, खासी मुठभेड़ हो गई है. वह देर तक इन कुत्तों के बारे में सोचती रह गई थी. आज की इस घटना का रिश्ता कुत्तों से कितना है, इस पर उसने खास सोचा तो नहीं था लेकिन लगा यह एक गहरी तकलीफ़ का सिलसिला है. इस सिलसिले की शुरूआत का पता तो खैर कठिन है ही, अन्त का पता भी सहज नहीं है. बल्कि थोड़ी बारीकी से सोचने पर शायद महसूस यही होगा कि ऐसी शुरूआतों के बारे में अलग-अलग बातें सोची ज़रूर जा सकती हैं. लेकिन मुमकिन नहीं होगा कि कोई इनके बारे में सच्चा हल निकाल सके. वैसे यह शुरूआत के बारे में ही बना निष्कर्ष है लेकिन अन्त के बारे में भी सोचती है तो महज़ यही निष्कर्ष निकलता है.

ऐसे निष्कर्ष के बावजूद गिरधारी उस दिन एकदम से बदल गया था. अपने हाथ से खाना बनाकर नैना को खिलाया था. नैना को ताज्जुब हुआ था और आखिर तक वह कुछ भी समझ नहीं पाई थी.

खाना खिलाकर गिरधारी सोने के लिए पसर गया तो नैना खाली आंखों से दीवारों को घूरने लगी थी. यह कोई पहला अनुभव नहीं है लेकिन लगा, इस घर की दीवारों की भी एक अलग भाषा है. उस भाषा में अपने को तोड़ने की तकलीफ़ों के अलावा अब तक जिस सुख का बोध होता रहा है, वह एक मरीचिका से ज्यादा अहमियत नहीं रखता.

●●

धनिया आ गई थी.

ऐसा आमतौर पर कभी नहीं होता कि गिरधारी की मौजूदगी में वह इस तरफ़ आए. यह एक व्यतिक्रम ज़रूर था लेकिन उसकी ज़िम्मेदारी सिर्फ़ इतनी भर है कि उसे लगा था, इस वक़्त घर में नैना अकेली होगी. क़ायदे के मुताबिक होना भी

यही चाहिए था. लेकिन अगर किसी दिन सारे नियम तोड़ दिए जाएं, तो भी तोड़ने वालों पर कोई इल्ज़ाम नहीं लग सकता. इतना हक़ तो उनके पास है ही.

धनिया आई तो नैना का सीना धड़का था. उसने ऊपर के कमरे की तरफ़ देखा, जहां गिरधारी सो रहा था. फिर आंगन में पड़ी चारपाई को बाहर वाले दरवाज़े के साथ गलियारे में ले गई.

धनिया इशारा समझ गई थी. वह वापस मुड़ भी रही थी लेकिन नैना ने उसका हाथ पकड़ लिया था—दो बातें तो कै-सुन लो.

. और दिनों की तरह धनिया ने आवाज़ नहीं चढ़ाई. सिर्फ़ हौले से मुस्काई थी ज़रा. फिर चारपाई पर अधलेटी-सी पसर गई थी.

नैना ने उसका गदराया-सा जिस्म देखा तो अपने अन्दर फुरफुरी-सी महसूस करने लगी.

धनिया ने आंख मार दी- –तू भी बड़ी वो है. मुझे ऐसे घूर रही है जैसे तू मेरा मरद है.

नैना लजायी—धत्त.

—अरे छोड़ भी जे धत्त और सत्त. दो बीस ऊपर चार साल उमर हुई तो भेजे में कुछ अकल भी तो है.

·—वैसे एक बात कैती हूं. नैना रुक गई थी. आवाज़ मे संकोच तो था ही, जड़ता भी थी.

धनिया ने उसका हाथ पकड़ा और झटका मारा—तू कुछ भी कै ले, अपन को अच्छा ही लगेगा.

—वैसे इस उमर में भी सोलह-सोलह बरस की चार-चार लौंडियां भी तुम्हारे सामने हल्की पड़ेंगी.

धनिया ने ठहाका मार दिया था. फिर एकदम से याद आ गया था—घर में गिरधारी है. एकबारगी उसने अपनी आवाज़ मद्धिम कर ली थी—तू बात कैती है मज़े वाली. वह एकदम से संजीदा हो गई थी—लेकिन इस कलेजे में जो दुख है, दर्द है, उसे कऊन जानता है ? कोई नाय पूछता वो सब. धनिया ने एक लम्बी सांस छोड़ी और हाथ को छाती के ऊपर ले आयी.

—जे तो जिन्दगी है. दुख-दरद ह्यां कम नाय है ? नैना अपनी दोनों हथेलियां मल रही थी.

—जिन्दगी तू ने देखी ही क्या है ? तू तो भोली-सी बछिया है. जिन्दगी है तो उसे देखा है इस धनिया ने. आदमी था लेकिन शादी के दो ही साल में खप गया. अरे भई, जब फेफड़े की बीमारी थी ही तुमे तो ब्याह क्यों किया था किसी का करम फूंकने ? दो साल बाद रांड बनके आय गई भाई-भावज के पास. पर समझ गई कि क्या होती क्या नाय होती जिन्नगी. खैर, तू फिकर करती किसलिए ? तेरा तो खसम किशन कन्हैया है. धनिया का लहजा रस-मिश्रित था. उसने धीरे-से नैना की बांह में चिकोटी काटी थी.

नैना शरमायी थी.

धनिया ने उसे ठुड्डी से चूम लिया था.

●●

गिरधारी की नींद कब खुल गई थी, इसका पता नैना को बिल्कुल नहीं चला था. पता तब चला जब गिरधारी सामने खड़े होकर बीड़ी का धुआं उगल रहा था, आंखें सुर्ख थीं, चेहरे पर शिकनें उभर आई थीं.

धनिया स्याह-सी पड़ रही थी. फिर वह बिना भूमिका के उठी और दरवाज़े का सांकल खोल कर गली में उतर गई.

नैना एकदम ठण्डी पड़ गई थी.ठंडी और बिखरती-सी. सांस बहुत तेज़ी से चलने लगी थी, सीना भी धड़क रहा था.

गिरधारी का चेहरा, ज़ाहिर है, पत्थर-सा बन गया होगा लेकिन नैना में इतनी हिम्मत बची ही नहीं कि उस तरफ़ नज़र करले. उसे लगा, गिरधारी एकदम से टूट-सा पड़ेगा.

गिरधारी ने नैना को देखा और देखता रहा. बीच-बीच में बीड़ी का कश खींचता रहा, धुआं उगलता रहा. मुंह के अन्दर चिपचिपा-सा थूक एकदम से भर गया तो उसे तकलीफ़-सी होने लगी थी. बगल में नाली थी. वहां थूका तो थूक नाली में गिरने के बजाय पांवों के नज़दीक गिर गया था. कोई और वक़्त होता तो ज़ाहिर है, उसे परेशानी होती. इस वक़्त उसने सिर्फ़ इतना किया कि आंखें दुबारा नैना के चेहरे की तरफ़ कर ली.

काफ़ी देर हो गई थी. कम-से-कम आधा घन्टा गुज़र गया था. इस बीच नैना ने अगर कुछ किया तो सिर्फ़ सांस ली थी. एकदम से कुछ भी घट जाने की प्रतीक्षा में वह थी लेकिन जब काफ़ी देर बीत जाने के बावजूद सिर्फ़ इतनाभर महसूस हो पाया था कि आस-पास की हवा एकबारगी भारी हो गई है. इस तरह का एहसास इससे पहले भी कभी-कभी होता रहा है. जब भी ऐसा होता रहा है, जिस्म के अन्दर की नसें एकदम से चटखती-सी लगती रही है.

आखिर में गिरधारी एकाएक अन्दर की तरफ़ मुड़ गया था. अन्दर जाकर उसने झट् से कमीज़ पहनी, पांवों में चप्पलें डाली और बाहर निकल गया. निकलने से पहले नैना के सामने से गुज़रा तो भौहें सिकुड़ी हुई थीं. असलियत चाहे जो भी हो उस वक़्त ज़ाहिर यही होता रहा नैना का अस्तित्व अब इतना हल्का हो गया कि उसे कुछ भी नहीं महसूस होता.

गिरधारी निकल गया तो नैना दीवार पकड़ कर उठ खड़ी हुई. शरीर में से सारी ताकत एकदम से कैसे निकल गई, इस पर उसने न कुछ सोचा, न ताज्जुब ही हुआ. सिर्फ़ महसूस होने लगा कि दिमाग की नसें बहुत भारी हो गई हैं.

छाती पत्थर से दबी हुई लग रही थी. उसने छाती पर हथेली फेरी और शरीर को बेहद सख़्त महसूस करने लगी. कोई दूसरा वक़्त होता तो वह शायद रो पड़ती लेकिन अब इस परिवर्तन पर आश्चर्य होने लगा कि आंखों की कोरें रेगिस्तान की तरह इस क़दर सूख कैसे गई कि आंसू निकलना क़तई नामुमकिन हो गया ! आंसू नहीं निकलते और तीखी-सी जलन महसूस होती है···

नैना दीवार पकड़ कर उठ खड़ी हुई और माथे को दीवार पर टिका दिया. लोग दीवार पर सर फोड़ते है, फोड़ते होंगे लेकिन ऐसी कोई मजबूरी न तो उसे महसूस हुई और न किसी कीमत की ही लगी. मजबूरी इस हालत में चाहे जो भी हो, यह एक पिघलता-सा एहसास है कि अपने आप अकेलेपन में वह गल कर खुद को ख़त्म कर रही है. लेकिन इसके बावजूद उसे समझने में दिक़्क़त नहीं होती कि आदमी की इस तकलीफ़ को कोई नहीं समझता. देखने वाले देखते ही है लेकिन उन्हें बिल्कुल पता नहीं चलता कि सामने का कोई किस तरह अपने को ख़त्म कर रहा है. और न यह कोई ऐसी चीज़ है जो कलेजा ही फाड़कर समझायी जा सके. उंगलियों के अन्दर जैसे ख़ून नहीं था, फिर भी आंखों की कोरों के पास उंगलियां फेरीं. फिर वहीं फ़र्श पर बैठकर घुटनों के बीच सर छुपाए एकदम से बिखर पड़ी थी. कब तक इस तरह

बिफरत रही इसका पता उसे नहीं चला था. आखिर में जब सर ऊपर उठाया तो पाया, सांझ उतर आई है. उतरती उस सांझ के उस अंधेरे में वह अपने को इतनी अपरिचित लगी कि महसूस हुआ, गिरधारी की तरह कोई अजनबी मर्द वहीं, कोने में खड़ा-खड़ा खूंखार आंखों से उसे घूरता जा रहा है. उन आंखों में एक खतरनाक किस्म की आग है सिर्फ. और वही आग उसके अस्ति-पंजर में घुसकर धीरे-धीरे उसे तबाह करती ज. रही है.

●●

उस दिन की सांझ दिन का अंत नहीं बल्कि एक नए सिलसिले की शुरूआत थी. यह चाहे शुरूआत हो या अन्त, नैना को यही महसूस होता रहा, उसकी नसों के अन्दर खून नहीं, ज़हरीला सांप रेंग रहा है.

गिरधारी लौटा तो रात के डेढ़ बज रहे थे. मुंह से शराब की बू निकल रही थी. आंखें भट्ठी की तरह सुर्ख हो गई थीं. सुर्ख और खूंखार. कोई और वक़्त होता तो नैना शायद डर जाती. डरकर हड़बड़ाने लगती. लेकिन इस बार ऐसा कुछ भी नहीं महसूस हुआ. उसने गिरधारीलाल को पूरी गहराई से देखा और अपने को एकदम खाली महसूस करने लगी. यह खालीपन उसे अन्दर से वीरान कर रहा है, इतनी समझ तो उसे है लेकिन यह भी मालूम है, उससे छुटकारे का कोई रास्ता अब बचा नहीं रहा.

गिरधारी पान चबा रहा था. ज़ाहिर है, पीने के अलावा ज़रूरत के मुताबिक कुछ खा भी लिया होगा. फिर भी नैना रसोई में गई और रोटी की थाली, लोटा-भर पानी और घी का कटोरा लाकर चारपाई के सामने स्टूल पर रख दिया.

गिरधारी ने यह सब देखा. फिर नैना का चेहरा घूमता रहा. आखिर में चारपाई पर लेटे-लेटे पांव को ऊपर की तरफ़ उठाया और पूरी ताक़त से स्टूल पर दे मारा. उससे जितनी आवाज़ हुई, इस आधी रात में वह नैना को एक बेतहाशा डर के समन्दर में डुबोती-सी रही. लग रहा था, अब गिरधारी उठेगा और सब्जी छीलने की छुरी लाकर उसकी गर्दन पर रेतता रहेगा, अट्टहास करता रहेगा.

थाली छिटक कर नैना के पांव पर आ गिरी थी. उंगलियों के ऊपर के हिस्से पर खून इस तरह धार की तरह निकलने लगा कि पता ही नहीं चला, ज़ख्म की असली जगह कहां है, उसकी गहराई कितनी है. नैना ने पांव की तरफ़ देखा. खून निकला और बहकर जब फ़र्श पर आ गया, उसका सर चकराने-सा लगा. वह फिर दीवार पकड़कर बैठ गई थी.

गिरधारी ने पान की पीक चारपाई की बगल में फेंकी और ज़बान से एक अजीब क़िस्म की आवाज़ निकालकर चद्दर तान ली.

नैना ने चाहा कि उसकी आंखों की कोरों से कुछ आंसू निकलें, चाहने से तो मौत भी नहीं मिलती ! फिर वह एकदम से बगल के कमरे में आ गई थी. यहां जो चारपाई पड़ी है उसका बान इतना ढीला हो चुका कि सोने से कमर ज़मीन पर आ टिकती है. लेकिन लगा, इससे बढ़कर सहारा इस वक्त कहीं से भी मिल नहीं सकता. उसने पल्लू की तरफ से साड़ी का एक हिस्सा फाड़ा और ज़ख्म पर पट्टी बांध ली. पट्टी के बावजूद खून रिसता रहा. पूरी पट्टी फिर लाल हो गई थी. उसने वहां का लाल रंग देखा लेकिन बिल्कुल ज़रूरी नहीं महसूस हो रहा था कि इस वक्त उसे नए सिरे से बांधा जाए. आखिर में उसने सिर्फ़ इतना किया कि साड़ी को थोड़ा ढीला किया और उस झूलती हुई खाट पर पसर गई.

●●

उस दिन के बाद एक महीना बीत गया. लेकिन गिरधारी और नैना के बीच न तो कोई बातचीत हुई न दोनों में से किसी ने उसकी ज़रूरत ही महसूस की. इस बीच सुबह की चाय से लेकर रात का खाना नैना बनाती और गिरधारी के सामने नियमित रखती ज़रूर रही लेकिन गिरधारी ने उसे छूकर भी नहीं देखा. दूकान जाने से पहले रसोई के दरवाजे पर दो-चार रुपए छोड़ देता कि नैना ज़रूरत की चीजें मंगा ले. और रात को जब गिरधारी लौटता उसकी आंखों में लाल डोरे झूल रहे होते, मुंह से कच्ची की बदबू निकलकर समूचे घर में फैल रही होती. और ज़बान से जो लफ़्ज़ निकलते वे बाजारू औरतों के लिए बहुत दिलचस्प हो सकते हैं लेकिन कोई भी घरवाली उन्हें सुनना पसंद नहीं करेगी.

नैना फिर समझ गई थी, उस निषिद्ध इलाके से गिरधारी का रिश्ता क्या हो सकता है. समझ गई थी और महसूस करने लगी थी कि जिस्म की नसों में गर्म हवा बह रही है. फिर जब पूरा महीना बीत गया, दामोदर लुहार एकदम से ऐसे ही बेटी-दामाद को देखने अचानक आ गया था. उसदिन नैना दामोदर का पाँव पकड़ बहुत रोई थी. गिरधारी उस वक़्त घर पर नहीं था, होता तो शायद रोने का इतना हौसला वह हर्गिज़ नहीं कर पाती.

दामोदर ठूंठ-सा हो रहा था. फिर रात को गिरधारी लौटा तो उससे नैना को कुछ दिनों के लिए बरेली ले जाने के लिए इजाज़त मांगी.

गिरधारी रात को जिस वक़्त लौटा, उस वक़्त और उस हालत में जवाब देने की स्थिति नहीं रहती. वह देर तक फटी-फटी आंखों से दामोदर को देखता रहा फिर ठठाकर हंस पड़ा. इस हंसी का मतलब क्या है उस पर विचार करने की हिम्मत तब दामोदर में रह नहीं गई थी.

देर तक जब गिरधारी की हंसी नहीं रुकी तो वह हारा हुआ-सा आंगन में आ गया था. वहां लकड़ी के तख़्त पर बैठकर कुछ देर तक सोचता रहा. फिर धीरे-धीरे सीने के बल पर लेटकर पसर गया.

सुबह आठ बजे जब दामोदर नैना को साथ लेकर निकल रहा था, गिरधारी दूकान की हिसाब वाली लाल कॉपी पर हफ़्ते के लेन-देन का हिसाब लिख रहा था. चलते वक़्त दामोदर ने एक बार और इजाज़त मांगी थी लेकिन गिरधारी ने जवाब नहीं दिया था. दामोदर फिर बगल में गठरी दबाए कुछ देर तक खड़ा रहा और आख़िर में कमजोर कदमों से बाहर की तरफ़ बढ़ आया.

लुहार ने महसूस किया, पसलियों के नीचे एक जलन-सी उभर रही है. हालांकि मालूम नहीं है लेकिन लग यही रहा कि आख़िर में यह जलन पूरे जिस्म में फैल जाएगी. उसने खाली निगाहों से नैना की तरफ़ देखा. देखा लेकिन अन्दर से इतनी ताक़त नहीं मिली कि कोई बात भी की जाए. आख़िर में एकदम से उसने अपनी रफ़्तार तेज कर दी थी और स्टेशन की तरफ़ बढ़ने लगा था.

दूर से आते हुए किसी इंजन की सीटी की आवाज़ सुनाई पड़ गई थी. दामोदर यह बिना देखे कि नैना उससे कितनी पीछे है, और भी तेज़ कदमों से आगे की तरफ़ बढ़ रहा था.

●●

नाटक में अगर जीवंतता होती है, जीवन में भी नाटक मिलता है. इस कथा की नैना का जीवन फिर कैसे-कैसे बदलता गया वह एक लम्बा इतिहास तो ख़ैर है ही वह नाटक की कहानी भी है. शायद जीवन सचमुच कारुणेय बन जाता है जबकि वह नाटक-जैसा लगने लगता. नैना आज तक किसी नाटक की नायिका तो नहीं

बन पाई लेकिन स्थिति की कारुणेयता का जहर पीकर भी सांस लेने की कोशिश करती रही. यह उसके जीवन-प्रसंग के अन्त की कहानी नहीं बल्कि एक बदलाव की कथा है.

यह बदलाव तब और भी साफ़ हुआ जब बरेली आने के छह महीने बाद भी गिरधारी न तो खुद आया न किसी जरिए से बीवी की खबर पाने की कोशिश की. वैसे सुनने में आया था, इधर वह बरेली आता भी रहा है. कुछ लोगों ने उसे पान चबाते हुए, महीन कुर्ता पहने अपने कामधन्धे के सिलसिले के अलावा इधर-उधर भी फिरते देखा है. ये बातें दामोदर के पास पहुंचती रही हैं, नैना के कानों तक आती रही हैं. नैना ने फिर खुद डाकखाना जाकर एक पोस्टकार्ड खरीदा और मुंशी को दस पैसे देकर गिरधारीलाल को लिखवाया कि अगले हफ़्ते वह बदायूं पहुंच रही है. चिट्ठी लिखवाते वक़्त उसे इस बात का मलाल होता रहा कि वह पढ़ी-लिखी नहीं है. खत वग़ैरह पढ़ जरूर किसी तरह लेती है लेकिन लिखने की आदत ही नहीं है.

खत का जवाब तीसरे ही दिन आ गया.

दामोदर के घर में पिछले पांच सालों में डाकिए को किसी ने चिट्ठी डालते नहीं देखा. डाकिए ने आवाज़ लगाई तो वह लगभग छलांग मारकर सामने आई थी. लोगों ने उसे डाकिए के हाथ से खत लेते देखा तो मारे खुशी के उसकी छाती चौड़ी हो गई थी. उसे साफ महसूस हो रहा था, मुहल्ले के लोग उसे जरूरत से ज्यादा दिलचस्पी से घूर रहे हैं. अभी देर तक वे आपस में सलाह-मशविरा करते रहेंगे फिर इस खत के बारे में पूछने आएंगे.

चिट्ठी लेकर वह अन्दर आ गई थी.

फिर खत को उसने उलट-पलट कर देखा और एक-एक अक्षर पर ठोकर खाते हुए पढ़ना शुरू किया. पढ़ लिया तो लग रहा था, धीरे-धीरे कोई उसकी सांस की नली में आग से तपी हुई लाल फ़ौलाद की सलाख डाल रहा है. गिरधारी ने लिखा था, उसकी तरफ़ से यह आखिरी खत है. यह आखिरी खत इसलिए कि नैना के चरित्र पर भरोसा करने लायक कोई बुनियाद उसे नहीं मिली. आख़िर में उसने लिखा था कि अगले कुछ ही दिनों में धनिया उसकी घरवाली बनकर आने वाली है.

नैना ने खत को पढ़ा फिर सीने में वही पुराना दर्द महसूस करने लगी. अपने शरीर का एक-एक अंग फिर अकड़ता हुआ लग रहा था. आख़िर में उसने दीवार पकड़ी और एकदम से रो पड़ी. उसके रोने की आवाज़ उस दिन देर तक आस-पास गूंजती रही थी.

●●

फिर साल बीत गए. नैना ने घर की दीवारों के बाहर निकल कर देखा, सब-कुछ बदल गया है. लेकिन उसका दुःख ? बस वही एक चीज़ है जिसमें अभी तक कोई बदलाव नहीं आया.

इस दुःख के साथ फिर एक और चरित्र जुड़ गया था—माईकल फिरंगी. पेशे से रेलवे में गार्ड है यह माईकल फिरंगी. अन्दर से एक पूरा दिलदार आदमी. अंग्रेज़ बाप और मद्रासी मां की सन्तान. विलायत के बारे में उसे सुनी हुई बातों से ज्यादा कुछ और नहीं मालूम लेकिन कोई हिंदुस्तानी सामने आता तो वह अफ़सोस इस बात पर जाहिर करता कि रिटायर होने के बाद उसे अपने मुल्क में वापस जाना ही पड़ेगा. हिन्दुस्तान अब ऐसा बन गया कि शरीफ़ आदमी यहां रह ही नहीं सकता.

माईकल फिरंगी का मां-बाप का दिया नाम है कुछ और ही—माईकल लूथर.

सुविधा के लिए बिहारीपुर मुहल्ले के लोगों ने इसे माईकल फिरंगी कर लिया था। लेकिन वह सामने आता तो फिरंगी की बजाय 'साहब' शब्द का उच्चारण होता.

सुनने में आता है, फिरंगी की कभी शादी हुई थी. लेकिन शादी के तीन साल बाद बीवी को ताबूत में रखकर दफ़नाना पड़ा था. उसके बाद फिर उसकी सेवा समय-समय पर उपपत्नियां करती रही हैं. लेकिन जिसने जब भी ख़िदमत की, फिरंगी ने उससे कभी भी नमकहरामी नहीं की.

व्यायामशाला की बाईं तरफ़ जो गली जाती है, उसमें थोड़ी दूर चलने पर नीले रंग का एक छोटा-सा खण्डहरनुमा मकान है. उसकी ऊपरी मंज़िल का बाशिन्दा है—माईकल फिरंगी. लोगों ने नैना को फिरंगी के यहां रातें गुज़ारते देखा है, क़हक़हे बिखेरते सुना है. शुरू में लोगों ने दामोदर से कुछ कहा-सुनी भी की लेकिन नैना के लगभग चामुंडा के वेश में सामने आते ही उनके वक्तव्य भी ख़त्म होते रहे हैं. अब किसी में इतनी हिम्मत ही नहीं होती कि इस बात को लेकर ज़्यादा खींचातानी करें.

सिर्फ एक तब्दीली यह आई थी कि फिरंगी के साथ नैना का नाम भी बदल कर नैनामेम हो गया था. नाम के साथ ही उसकी पोशाक में भी एक छोटा-सा परिवर्तन आ गया था. फिरंगी गाड़ी लेकर बाहर जाता तो वह साड़ी पहनती, पान चबाती. लेकिन उसके लौटते ही छींटदार पेटीकोट, ब्लाउज़ और ऊंची एड़ी की जूतियां पहनती. इसके अलावा कपड़ों पर खुशबू छिड़कती, होंठ और पांवों को एक ही लाली से रंग लेती. खुद उसे भी महसूस होने लगता, वह नैनामेम हो गई है.

नैना को फिरंगी ने क्या दिया, यह वह खुद भी नहीं बता पाएगी लेकिन इतना साफ़ है कि गिरधारी ने मांगने के बावजूद उसे जो नहीं दिया था, यहां उसे, वह अपने आप ही मिल गया. पहले कुछ अरसे तक गिरधारी के लिए मन में एक दया-सी उभरती थी. अब लगता है, गिरधारी अगर कभी सामने आया, उस पर मेहरबानी कर पाएगी वह ?

नैना के साथ फिरंगी का नाम जितना जुड़ा उतना तो जुड़ा ही, इसके अलावा वक़्त-वक़्त पर कई और नाम भी जुड़ते रहे है. इसकी बुनियाद कितनी सच है, कितनी झूठ, यहां कहना मुश्किल ही नहीं, असम्भव भी होगा.

ख़ैर, नैनामेम का दुःख-दर्द कोई जाने चाहे न जाने, उसका नाम लोगों की ज़बान पर पूरे बरेली शहर में फिरता रहा है. उन रसिक मिज़ाजों पर भी उसे रहम आता है. उसे लगता है, उनमें और गिरधारी में कोई बुनियादी फ़र्क़ है ही नहीं.

●●

बिहारीपुर, कमगरान, मलूकपुर के लोगों ने फैसला किया कि तीन मुहल्लों की एक सम्मिलित कल्याण समिति बने. आजू-बाजू में चमारटोली पड़ती है, भंगी मुहल्ला पड़ता है. सूचना के तौर पर—चमारटोली और भंगी मुहल्ला के नाम से जो इलाके जाने जाते हैं उनके असली नाम कुछ और ही हैं. वे क्या हैं इसका पता या तो चुंगी के दफ़्तर में होगा या डाकखाने वालों के खाते में. बहरहाल शुरू से ही वे इन्हीं

नामों से जाने जा रहे हैं.

कल्याण समिति बनाने की अगवानी विनायक ने की. उसने यह प्रस्ताव भी रखा, चमारटोली और भंगी मुहल्ले को भी इस समिति में शामिल किया जाए. मुरारी डाक्टर ने इसका विरोध किया—भंगी-चमारों के संग बैठके नेतागिरी कर लो, सो अलग बात है. लेकिन जे बात भी तय रही, तेल और पानी चाहे कित्ती कोशिश कर लो, मिल नाय सकते. हमने किसी का ठेका तो नाय ले रक्खा जो दुनिया-भरके पचड़े हमें ही निबटाने हैं. हर आदमी अपनी भलाई खूब समझता है. वे चाहेंगे तो खुद ही अपनी समिति बनाय लेंगे•••.यह खासा मौक़ा था कि मुरारी डाक्टर विनायक को समझा दे—बच्चू, डाक्टरी, बैदगिरी कर लो जित्ती मर्जी लेकिन जे है दुनियादारी. नेतागिरी का इत्ता शौक़ चढ़ा हो तो मोती पार्क में जाकर लाउडस्पीकर लगा लो, खूब नाच-कूद लो.

विनायक बोला—आप लोग मुझे ढोंगी समझ सकते हैं, नकली आदर्शों का समझ सकते हैं लेकिन•••

अनीस मियां एकदम से बीच में बोल पड़ा था—अमां, छोड़ो जे सब भगत आदमी-जैसी बातें. हम भी आदमी खूब पैचानते हैं•••

अनीस के कहने का असर यह हुआ कि नौरंगी ने उसका कान पकड़ा और पूरी ताक़त से चांटा रसीद कर दिया—पैले सीख के आ, किस आदमी से कैसा सलूक करना पड़ता है.

अनीस मियां चांटा खाकर ठंडा पड़ रहा था.

नौरंगी वकील फिर विनायक की तरफ़ मुखातिब हुआ—बिन्नू भाई, करो अपनी लेकिन सुनो दसकी. तब फिर कोई काम बने.

विनायक हंसा—करने वाला अकेला मैं कौन होता हूं ? मैं दस लोगों के सामने अपनी बात रख सकता हूं. लेकिन होगा वही जिसे दस लोग चाहेंगे.

भगीरथ बोलने को उठा—सुना है, कलट्टरी हो चाहे बाबूगिरी, सब में गोरमिंट ने अछूतों को बराबर का दर्जा दिया है. हम भी तो हैं उसी गोरमिंट के. सो ह्यां भी वही कानून चलाओ. अछूतों को भी मेम्बर बनाओ. अपने वक्तव्य के आखिर में उसने सीने पर मुक्का मार लिया था. फिर विनायक की तरफ़ प्रशंसा की उम्मीद में ताकने लगा था.

डोरीलाल दहाड़ा—अबे ओ, गोरमिंट के बच्चे, जे सब अपनी लुगाई को जायके सुनाना. तेरे भेजे में जित्ती अकल है, उससे चाय-बिस्कुट बेच ले, लुगाई से हंस-रो ले, इत्ता तो हो सकता लेकिन बस्स. क्या समझा ? कहते वक्त डोरीलाल ने मुंह को इस कदर बिचकाया था, हथेलियां इस तरह नचाई थीं कि भगीरथ चुप रह गया था, सर खुजलाने लगा था फिर.

—देखो बई, वखत बर्बाद करने से फायदा भी क्या ? मामला है साफ़. अब उसे टेढ़ा करोगे तो कर लो. लेकिन जे समझ लो कि इससे कुछ भी फायदा नाय होने का, हां. मुरारी डाक्टर ने पिच्च से पान की पीक उगल दी थी.

—हां तो कर लो बई फैसला. डोरीलाल बोला. उसका लहजा कुछ इस तरह उभरा, गोया एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी उसके कन्धों पर है.

—वैसे बई, सोच लो. नौरंगी वकील ने उपस्थित भीड़ को सम्बोधित किया, बिन्नू भाई की बात भी अपनी जघा गलत नाय है.

भगीरथ फिर से बोल पड़ा था—कोई कम थोड़े ही हैं. बी. ए. पास हैं. अंग्रेजी में लपड़-सपड़ बोल लेते हैं, कुछ सोचकर ही जे सब कहा होगा. क्यों बई ? वह गैंदन

लाल की तरफ़ देख रहा था.

गेंदनलाल को दिक्कत होने लगी थी. वह कतई तय नहीं कर पा रहा था कि उसे कौन सा जवाब देना चाहिए.

भगीरथ को खुशी हुई थी कि इस बार वह पूरी बात कह सका है. पूरी बात कह दी लेकिन कोई उस पर डपट नहीं पड़ा.

मुरारी डाक्टर ने पान चबाते हुए मुंह में ज़र्दे की पत्तियां डालीं और हथेली उलट ली. वाह बई, वाह ! तुम भी कमाल करते हो नौरंगी वकील. अरे बई, कानून मत ढूंढ़ो हर चीज़ में. जे कचैरी का मामला नाय है, हां. कोई गांधी-नेहरू बनने का इरादा हो तो बात दूसरी है. लेकिन जे समझ लो कि आपस का मामला इत्ता आसान नहीं होता जो नेतागिरी से सुलझ जाए. देखो बई, हम सिरफ़ एक बात समझते हैं. मुरारी डाक्टर ने नौरंगी के कन्धे पर हथेली रख दी थी, दाहिने हाथ की तर्जनी सामने कर ली थी— सुबह उठके जो तुम्हारा गूं ढोता है, उस के साथ बैठके कौन-सा मशविरा करोगे ?

विनायक ने देर तक की खामोशी के बाद मुंह खोला—हम लोग फालतू बातें कर रहे हैं. .

उसकी बातें आधी ही थीं कि मुरारी डाक्टर ने टोक दिया—लो, सुनलो ! हम फालतू बात कर रहे हैं. हमारे बाल सफ़ेद हुए तो इसके पीछे उमर भी है. लेकिन अब इस उमर में आकर अब लौंडे-लपाड़ों से बोलने के लिए तरीका भी सीखना पड़ेगा.

मुरारी डाक्टर उम्मीद ज़रूर कर रहा था कि उसकी नाटकीय अदाकारी के साथ कही हुई बातों का असर सामने बैठे लोगों पर पड़ ही जाएगा लेकिन बात पूरी हो गई तो लगा, लोग खास ध्यान नहीं दे रहे हैं.

डोरीलाल ने बिचौली की— छोड़ो, इन बातन में रक्खा ही क्या है ? आपस में लड़ते रहोगे तो न तो समिति बनेगी, न कोई और काम ही होगा.

—खामख्वाह इधर-उधर की बातों से क्या बनता है ? विनायक अपनी बात पूरी कर रहा था—हमें फैसला यह करना है कि समिति में अपने अड़ोस-पड़ोस के लोगों को कैसे शामिल किया जा सकता है ? उसके लिए कोई रास्ता निकालना है, न कि इधर-उधर की बेसिर-पैर की बातों में ही उलझकर घर चलने के लिए उठना है.

—देखो बई, ताने ही दे लो. लेकिन इस मुरारी डाक्टर को भी बिहारीपुर के लोग पैचानते है, हां. हमने किसी का अगर कुछ किया तो सिरफ भला ही. जिग्र भी निचोड़कर डागडरी करते है. कोई फैसन नाय करते नेता बनने का.

डोरीलाल और नौरंगी वकील फिर हाथ उठाकर करबद्ध मुद्रा में खड़े हो गए. इतना शोरगुल हो रहा था कि इनकी इच्छा क्या थी, पता नहीं चला. सिर्फ़ यह देखा गया कि वे दोनों लोगों को शांत करने की कोशिश में कभी हाथ जोड़ रहे हैं, कभी दोनों हाथों को ऊपर-नीचे करते हुए कुछ कह से रहे है.

कुछ देर तक इसी तरह हल्ला-गुल्ला होता रहा. ज्यादातर लोगों को सिर्फ़ इतना पता हो पाया था कि मामला एकदम से बिगड़ गया है और दो डाक्टर आपस में लड़ाई की मुद्रा में खड़े हैं. नौरंगी वकील ने हालत को काबू में लाने के लिए जलसे के खात्मे का इजहार किया था—भाइयो, खून खौला लेने से ही हर काम नहीं बन जाते. खैर चलो, अब छुट्टी करो. किसी और दिन बैठ जांगे ठण्डे दिमाग से, जभी कुछ हो पाएगा. फिर वह विनायक के नजदीक आकर लगभग उसकी बांह

खींचते हुए भीड़ से बाहर निकल आए थे.

मौजूद लोगों से अपील ज़रूर की गई थी कि इस छोटी-सी बात को लेकर वे ज़्यादा पचड़ा न खड़ा करें लेकिन अपील कोई हुक्म तो नहीं होता. लोग छोटी-छोटी टुकड़ियों में बंट गए थे. कुछ फुसफुसा रहे थे लेकिन ज़्यादातर थे खमोश तमाशबीन. फुसफुसाने वाले कभी-कभी जोरों का ठहाका लगा देते तो पूरा माहौल एकदम से दूसरे मोड़ पर चला जाता. यानी ऐसे में फिर किसी अजनबी के लिए पता करना बिल्कुल नामुमकिन हो जाता कि असल में मसला क्या है ?

(पाठक, अगर आप में मुनासिब धैर्य हो तो आइए. देखने को मिलेगा कि कुछ लोग रेडियो सीलोन से आते बिनाका गीतमाला के साथ अपनी बेसुरी आवाज़ को मिला रहे हैं. एक-आध लोग आपको ऐसे भी दिखाई पड़ जाएंगे, जो फिल्मी गानों के साथ ताल देने के लिए किसी दूसरे की पीठ तबले की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं. कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्हें कश्मीर की वादियों में गाना गाते हुए हीरो की ऐक्टिंग पूरी याद थी. वे संक्षिप्त तौर पर कूल्हे मटका रहे थे, कमर और कंधे नचा रहे थे.)

भगीरथ का 'होटल' फिर जम गया था. डोरीलाल अन्दर आया. बीच की एक कुर्सी पर पांव उठाकर बैठा और इत्मीनान से अंडर गार्मेण्ट में भाले के साथ खड़ी विज्ञापन की मॉडेल की तस्वीर अखबार में देखने लगा. यह खास तौर पर बना सिंथेटिक ऊन का विज्ञापन था. विज्ञापन चाहे ऊन का हो, चाहे ब्लेड का, भगीरथ के 'होटल' में अड्डा जमाने वालों के लिए हर चीज़ दिलचस्प है. डोरीलाल ने तस्वीर देखी तो उसकी आंखों की पुतलियां चमकने लगी थीं. फिर सीने पर हथेली रखकर एक ठंडी-सी आह छोड़ी थी उसने—हाय ! अगले जनम में जे डोरीलाल आदमी बनकर पैदा हुआ तो बस्स बम्बई-दिल्ली में ही पैदा होगा. जे साली बरेली में तब, मूतने भी नांय आवेंगे, देख लेना.

जगदम्बा ने मेज पर मुक्का मार लिया—जें न बात हुई मार्के वाली. लेकिन गुरु बम्बई जाकर चाहे फिलम में घुसो, चाहे आलीशान इमारत में, जगदम्बा को भूल नाय जाना. अपन को मौका दोगे तो होंआ भी गुलामी करने के लिए हाज़िर पाओगे.

डोरीलाल हंस पड़ा था—जगदम्बे का बच्चा, मेरी तरफ से चाय-बिस्कुट उड़ा ले जित्ती मरज़ी लेकिन अब मक्खनबाजी बन्द कर.

भगीरथ फिर डोरीलाल के सामने 'पेशल' वाली मलाईदार चार चाय डबल चीनी डालकर रख गया था. लेकिन जगदम्बा ने हाथ जोड़ लिया था—चाय-वाय तो चलती ही रहेगी. इसमें रक्खा भी क्या ? लेकिन इस जून बस्स गाना सुन लेने दो.

डोरीलाल ने आगे ज़िद नहीं की. वह चाय की मलाई का ज़ायका लेता रहा, बीच-बीच में विज्ञापन की मॉडेल की तस्वीर की खुली टांगें चूमता रहा.

भगीरथ फिर पुराना सिलसिला खींचकर ले आया था—चाहे कुछ कैलो, मुरारी डागडर है पक्का घाघ.

भगीरथ ने भट्ठी की आंच को बराबर करते हुए कहा था. उसे उम्मीद थी, उसका वक्तव्य खत्म होगा और लोग उस पर टूट पड़ेंगे, फिर वह उसका मज़ा लेता रहेगा. यानी भगीरथ को मुंहपर चाहे जितना मर्जी मूरख-गंवार कहलो लेकिन उसमें इत्ता दम भी है कि दिमाग लड़ाकर कुछ ऐसा कह डालता जिसे बड़े-बड़े पढ़े-लिखे भी सोच नहीं पाते.

— क्यों बई, इस बात से नाय इनकार कर पाओगे, हां. सठिया के चाहे

बियाह लो, चाहें तलाक दो अपन जोरू को···हमें क्या करना ? लेकिन बिन्नू डाक्टर का मुक़ाबला अच्छे-अच्छे बी० ए० पास नाय कर सकते. कोई अंग्रेज फिरंगी का राज तो अब रिया नाय जो चुन-चुन के पंडित-बामन को तखत पर बिठाओगे. अब बोट का ज़माना आ गया, हां.

शंकर ऊब रहा था—ऊंई, बोट होगा, तेरा बाप. अब चुप हो जा, गाना सुन लैने दे.

भगीरथ चुप हो गया था. चुप होने से पहले थोड़ी देर ज़रूर बड़बड़ाता रहा लेकिन किसी ने उस पर ग़ौर नहीं किया. ऐसे में भगीरथ का सीना दुखता है लेकिन दुखने से ही किस का क्या बिगड़ जाता ? बिनाका का 'पोरोगराम' ही इत्ता रंगीन आता है कि उसमें अच्छे-अच्छे लोग डूब जाते हैं और यह तो बिहारीपुर है, भगीरथ का 'होटल' है···

●●

मुरारी डाक्टर दवाखाने के साथ के चबूतरे पर बैठता और आते-जाते परिचितों को रोक कर सुख-दुख पूछ लेता. आखिर में विनायक की ग़लाज़त पर बहस शुरू करता.

अरसे बाद लुक्का पहलवान दिखाई पड़ा था. उस दिन की नेता जी सुभाष की जयन्ती, विनायक का खून से लथपथ जिस्म और नैना की रसीली नौटंकी के बाद सुनने में आता है, पुलिस के खाते में पहलवान का नाम दर्ज हो गया था. लेकिन हर कोई अब जान गया, पुलिस का खाता भी किस खेत की मूली होता है ? लुक्का पहलवान, चाहे नाम दर्ज कराओ, चाहे काट दो, चलेगा सीना तान कर ही.

···लेकिन इस बार शायद मामला कुछ टेढ़ा था. कम-से-कम इस इलाके के लोगों को ऐसा ही महसूस हुआ था. पूरे आठ महीने लुक्का की परछाईं तक किसी ने न देखी. एक बार तो यह अफ़वाह भी उड़ी थी कि आंवला तहसील में डकैती करते हुए लुक्का पहलवान पकड़ा गया और लोगों ने उसका सीना भाले से आर-पार कर दिया. यह क़िस्सा किसने शुरू किया, कहना मुश्किल होगा. काफ़ी दिनों तक लोगों की फुसफुसाहट में खबर फैलती रही, बढ़ती रही. आखिर में मामला ठंडा पड़ गया था. उसकी वजह यह है कि लुक्का की ग़ैरमौजूदगी का सिलसिला इतना पुराना है कि लोग अब इससे अभ्यस्त हो गए हैं. कभी-कभी ऐसा भी होता रहा है कि पूरे साल-भर तक वह गायब रहता और इस बीच जब कोई अफवाह फैलकर ज़ोर पकड़ती, एकदम से सबके बीच धूमकेतु की तरह आ टपकता.

इस बार आखिर में यह अफ़वाह उड़ी कि पहलवान बदायूं के जेल में बन्द है. किसी ने शायद मज़ाक-मज़ाक में यह भी कह दिया था—अब पेले जाओ डंड, कर लो पहलवानी. लेकिन बात कह चुकने के बाद रामधनी को महसूस हुआ था कि अगर पहलवान को यह बात मालूम पड़ गई तो गर्दन मरोड़ने में भी देर नहीं लगेगी. वह थोड़ा डरने ही लगा था फिर. आखिर में कोशिश की थी कि बातों का लहजा ही एकदम बदल जाए.

नैना मेम की ज़बान से फिर किसी ने सुना था, लुक्का की जोरू का यह पांचवा महीना चढ़ा है. लुक्का की जोरू और किवदन्ती की नायिका के बीच हक़ीक़त में कोई फ़र्क़ ज़ाहिर है होगा लेकिन इस इलाके के लोगों का ख्याल ऐसा नहीं है. सुनने में आता है, पहलवान की यह चौथी औरत है. इससे पहले की तीन औरतें कैसे और कहां गुम हो गईं, कोई नहीं बता पाएगा. उन औरतों को वह ब्याह कर लाया था या पिछवाड़े के किसी रास्ते से, किसी को नहीं मालूम. कब कोई औरत बदली

जाएगी इस बारे में अन्दाज़ा तो खैर लोग लगाते रहे हैं लेकिन वह कभी भी सही नहीं निकला. नई औरत आ चुकने के बाद लुक्का हफ़्ते-डेढ़ हफ़्ते के लिए घरघुसरा बना रहता और तब लोगों में कानाफूसी होने लगती.

अपनी पचास बरस की उम्र में पहलवान कासगंज से परमेसरी को उठा लाया था. अठारह एक साल की अहीर की छोरी लुक्का की पटरानी बन कर घुसी तो इस बार खुसुरपुसुर कुछ ज्यादा ही फैल गई थी.

इस मुहल्ले में खुसुरपुसुर करने वाले सभी हैं लेकिन सीना ठोंक कर बात करने का हौसला सिर्फ़ एक ही के पास है—नैना मेम के पास. चाहे लुक्का की हो, चाहे दरोगाइन की, हरेक की करतूत खुले आम बखानने की हिम्मत नैना के पास इतनी है कि बड़े-बड़े भी मात खा जाते.

इस बार जब पता चला, परमेसरी का पांचवा महीना चढ़ा है, लोगों ने दो तरह के क़िस्से गढ़ लिए थे. यानी परमेसरी है इतना चढ़ा हुआ माल कि उसके लिए सब यार बराबर हैं. कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि सामने का शख़्स लुक्का है या मिरासियों के साथ कव्वाली गाने वाला कोई आंख मारने वाला मर्द···

वैसे कुछ लोगों का ख़याल यह भी है कि लुक्का न तो मरा है, न जेल में बन्द. बस जैसा कि होता रहा है, ज़रूरत के वक़्त अपने को ख़ुद ही गायब करता रहा है. इस बार भी ऐसा ही कोई जादू दिखा रहा होगा. फिर एक दिन सुबह 'नेता जी सुभास बाल बाटीका' में चीखता सुना जाएगा—नेता सुभास चन्द बोस जिंदा है, वर्ना मेरी मूंछें उखाड़ मुंह पर कुत्ता मुता दो.

डोरीलाल ने एक बार सोचा था कि कभी जगतारा मिडवाइफ से किसी बहाने मिले तो नजला-ज़ुकाम की दवा भी लेले, साथ ही असली माजरा भी पता करले. जगतारा मिडवाइफ इस इलाके की 'डागडरनी' समझी जाती और लोग अक्सर कई बातों पर सिर्फ़ उसी से मशविरा करना पसन्द करते. खासतौर पर औरतों की कोई निजी बीमारी रहती तो लोग सिर्फ़ जगतारा मिडवाइफ के पास ही जाते हैं.

डोरीलाल ने जगतारा से मिलने की सोची लेकिन बस उससे आगे नहीं. उसका मिज़ाज ही कुछ ऐसा है कि मिलने से पहले हर कोई दस बार सोचता है. और अगर मिज़ाज इत्तफ़ाक़ से सातवें आसमान पर चढ़ा मिला तो लेने के देने पड़ जाएंगे.

दूसरा सूत्र है नैना मेम. लेकिन डोरीलाल इतना बेवकूफ़ नहीं कि फनियर सांप से खेले. आख़िर में उसने यह इरादा छोड़ दिया था. मन में कचोट ज़रूर महसूस होती रही कि है अपनी ही मुहल्ले की बात लेकिन साथके गलीवालों तक को कुछ मालूम नहीं. आख़िर में उसने सांत्वना के शब्द ढूंढ लिए थे—हमें क्या, सब पर मगजपच्ची का ठेका तो नाय ले रक्खा···

●●

आठेक महीने गायब रहने के बाद लुक्का एकदम से दिखाई पड़ गया तो सारी खुसुरपुसुर अपने आप ही बन्द हो गयी थी. भगीरथ के 'होटल' में 'दिल्ली-बम्मई' की बातें बेधड़क चलती हैं लेकिन पहलवान के किस्सों का सारा सिलसिला एकदम से यूं ख़त्म हो गया, गोया इस अड्डे का हर कोई उस बारे में अनजान हो. खैर···

मुरारी डाक्टर की आदत यह है कि मरीज़ नहीं होता तो दवाखाने के सामने के चबूतरे पर बैठता और गुज़रते लोगों को मिनट-दो मिनट रोककर गले तक आई अपनी बातें उगल देता. उसमें ज़िन्दगी और ज़माने के बारे में अपनी राय होती तो विनायक की डाक्टरी और नेतागिरी के लिए कलेजे की जलन भी.

मुरारी ने पहलवान को रोका और आज़ाद हिन्द फ़ौज के सिपाही के लहजे में

कह दिया—जयहिन्द.

लुक्का ने ᐟलूट-सा मार दिया था—जयहिन्द. फिर वह आगे बढ़ ही रहा था कि डाक्टर ने उसका कन्धा पकड़ लिया—और बई, इत्ती जल्दी तो मत भागो ! इत्ते दिनों में मिले हो. दो मिनट बैठो, दिल का कुछ कै-सुन ही लेंगे.

लुक्का मुस्कराया—डागडर साब, कोई काम हो तो कै दो. दुःख-सुख कैने-सुनने से क्या फरक पड़ जाता ?

मुरारी फिर खूब जोर से ठहाका मारने लगा था—तुम पैंहलवान, बातें कैते हो एकदम लम्मरी. अरे बई, काम अगर हुआ तो कैने के लिए किसी परदेमी के पास तो नाय जांगे. हां, तुम मिनहा कर दो तो बात दूसरी है.

—बस अब कै दो. जे गरीब होगा तो कुछ सेवा कर ही देगा. लुक्का का लहजा कुछ ऐसा था कि जैसे फिर वह एकदम से कह पड़ेगा—बच्चू, हमने भी इस बिहारीपुर-कसगरान की ज़मीन की एक-एक इंच की मिट्टी छानी है. इत्ती नौटंकी किसकी खातिर करते हो ? हम तो तुम्हें सूंघ के कै देंगे कि मंशा क्या है तुम्हारी.

मुरारी ने गले को खंखारा और अपने को सही तरीके से पेश करने की कोशिश में चेहरे को सहज-सा कर लिया. लुक्का के कन्धे पर एक चपत मारकर मुस्कुराया था फिर—देखो बई, तुम ठैरे पुराने आदमी. गली-मुहल्ले में कुछ होता है, लोग तुम्हीं को कहंगे, हमीं को कहंगे. आखिर मुहल्ले की भी तो अपनी कोई इज्ज़त होती है•••

मुरारी डाक्टर ने पहलवान के चेहरे की तरफ़ देखा तो पाया, उसमें कोई भाव नहीं है. वह खैनी ••मककर होंठ के नीचे डाल रहा था. डाल लिया तो बगल में बहती नाली पर थूक उगल दिया.

—अब तुमसे भी क्या छिपाना ! मुरारी डाक्टर ने लुक्का के कन्धे पर एक और झटका मारा—जे देखो, हींयई खड़े होकर देख लो, सामने डागडरी की एक और दूकान भी खुली हुई है लेकिन अंदर बैठके डागडरी नाय होती. सीधे-सादे लोगों को फुसलाते हैं, लीडरी झाड़ते हैं. देखो बई, हम मिनहा करेंगे काहे को ? चाहे तुम एम्मेले बनो, चाहे मिनिस्टर, अपनी मर्ज़ी है तुम्हारी. लेकिन उसके लिए टिकस लो, चुनाव लड़ो. मुहल्ले में डोम-चमारों के साथ पंडत को, ठाकुर को इकट्ठे बिठा कर नेतागिरी नाय कर सकते.

पहलवान दुबारा थूककर जम्हाई लेने लगा था.

मुरारी डाक्टर की कुछ समझ में नहीं आ रहा था. आखिर में वह अपनी अदावाली मुस्कान के साथ फिर ठठाने लगा था—तुम तो पैलहवान एकदम सन्त-महात्मा बन गए. कर लेना संतई लेकिन पैले तो दुनिया के दुख-सुख का कुछ ठिकाना लगे. तुम ठैरे सही माने में कामगर आदमी. अगर तुमी हाथ पे हाथ धरके बैठे रहोगे तो चलेगा जे सब काम ? बदनामी अगर मुहल्ले में हुई तो लोग तुमी को कहंगे, हमीं को कहंगे और वैसे भी कोई ढोंगई करे, गलत काम करे तो उसके होश ठिकाने भी हमें-तुमें ही लाने हैं, हां. समझ लो जे.

आखिर में पहलवान ने उबासियां ली, बदन तोड़ा और दाहिने हाथ को इस तरह ऊपर उठाया कि उसका मतलब नमस्ते या सलूट में से कुछ भी हो सकता है. फिर वह आगे की तरफ़ सरकने लगा था.

लुक्का काफी दूर निकल गया तो मुरारी डाक्टर ने ज़बान से एक भद्दी गाली उंडेली और बगल में थूक दिया.

●●

नौरंगी वकील ने इस बार पूरी कोशिश की कि सभा हो तो उसमें कोई गड़-

बड़ी न हो. मामला टेढ़ा था, सो वह लोगों से मिला, मिन्नतें कीं कि सब मसले को सही-सही समझने की कोशिश करें. वकील के साथ डोरीलाल भी लोगों के दरवाज़े-दरवाज़े भागता फिरा. आख़िर में जलसे के लिए इतवार की शाम का वक्त तय हुआ.

कुएं के पास चबूतरा है. उस पर कुछ कुर्सियां डाल दी गईं. कुर्सी पर नौरंगी वकील, परशुराम वैद्य, मुरारी डाक्टर बैठे. तीनेक कुर्सी फिर भी ख़ाली रह गई थीं. सो डोरीलाल खड़ा-खड़ा कुछ सोचता रहा फिर संजीदा मुद्रा में धीरे से जाकर कोने वाली कुर्सी पर बैठ गया. कुर्सी पर दस लोगों के सामने बैठ गया तो उसे महसूस होने लगा कि इस डोरीलाल की भी कोई कीमत है. फिर वह समझ गया था, कीमत कोई देता-दीवाता नहीं है. उसे अपने आप बनाना पड़ता है.

विनायक बिल्कुल आख़िरी वक्त पर आ पहुंचा था. उसके आते ही डोरीलाल ने आवाज़ मार दी थी—बिन्नू बाबू, तुम्हारी सीट जे है. दाहिने हाथ की तर्जनी से इशारा कर दिया था उसने.

विनायक मुस्कुराया—अपन को बस जमीन पे ही बैठने दो. मज़ा इसी में आता है.

भीड़ के बीच से किसी ने चुगली काटी—अब नाम बदल के गान्ही बाबा रख लेव.

विनायक ने सुना लेकिन अनसुना कर गया.

नौरंगी वकील फिर खड़ा हो गया था अपनी जगह पर—कुछ जनता की भी सुना करो. हमारे साथ बैठोगे तो जात चली नहीं जाएगी. वकील फिर हंसने लगा था.

विनायक के जी में आया था कि कह दे—जात-बिरादरी मानने वाले और भी तो लोग हैं. उन्हीं से कहो. लेकिन आख़िर में वह सिर्फ़ ख़ामोश ही बना रहा.

फिर जगदम्बा और भगीरथ आकर उसे लगभग घसीटते हुए चबूतरे के पास ले आए—अब बैठो ह्यां आराम से. भगीरथ ने विनायक का कन्धा पकड़ा और झटका मारकर बैठा दिया.

डोरीलाल फिर कोने वाली कुर्सी छोड़कर विनायक की बगल में आ गया था—तुम ठैरे पढ़े-लिखे बी. ए. पास. ह्यां नाय बैठोगे तो क्या मूरख गंवार के संग बैठोगे ? फिर उसने कड़ाके की एक मुस्कुराहट बिखेर दी थी, अपनी गर्दन को नचा-सा लिया था.

—कई लोग नाय आए अभी तलक. पैहलवान भी शाम तलक दिखाई पड़ा. अब काम के बख्त हवा हो गया. शंकर ने गैरहाज़िर लोगों की याद दिलाई.

परसोराम बैद ने हथेली उठाई और छोटा-सा एक भाषण दे डाला—कभी किसी सभा में हर आदमी नहीं आया. रामायण का काल देख लो तो यह मिलेगा और अब कांग्रेसी हिन्दुस्तान देख लो, यही मिलेगा. हमें तो खुशी इस बात पे है कि यहां के नौजवान दूसरे मुहल्लों के छोरों की तरह ढीले-ढाले नहीं हैं. वे कुछ-न-कुछ करके ही दिखाते हैं…

लोगों को बात इतनी पसंद आई कि चार-छह लोगों ने मारे खुशी के तालियां बजा ली थीं. लेकिन बाक़ी लोगों में उसकी प्रतिक्रिया नहीं हुई तो फिर एक ख़ामी हंसी की लहर दौड़ गई थी.

नौरंगी वकील फिर खड़ा हुआ और पिछले जलसे की कार्रवाई न दुहराने की मांग की—हम लोगों को तय करना है कि समिति किस रास्ते से जल्द बन सकती है.

रामधनी ने हथेलियों को मोड़कर कुप्पी बनाई और चिल्ला पड़ा—अध्यस्य

तुमीं बनना, हां.

नौरंगी वकील ने इस बात पर ग़ौर नहीं किया. उसने विनायक की तरफ़ देखा और अनुरोध किया कि वह अपनी बात जनता के सामने रखे.

भगीरथ ने आवाज़ लगाई—कै दो बिन्नू बाबू, कोई फिकर नाय करना, हां. जित्ता जी में आए कै दो. जैसे उसकी इस आश्वस्ति के बगैर कोई बोल नहीं सकता.

विनायक उठ खड़ा हुआ —आप सभी लोग समझदार हैं. दस लोगों की भलाई किसमें है, समझ सकते हैं. हमारे अड़ोस-पड़ोस में जो लोग हैं, इत्तफाक है कि वे जात के हिसाब से नीचे समझे जाते हैं. लेकिन अगर किसी को ऊंचा या नीचा ही समझना है तो दो लाख साल पहले के ज़माने में लौट चलिए तब कोई पंडित या चमार नहीं था. मैं समझता हूं, हम सबकी मुसीबतें एक हैं, लिहाज़ा 'मुहल्ला कल्याण समिति' बने तो उसमें सब लोग एकसाथ बैठकर ही कुछ तय करेंगे. आप लोग मेरी बात को अगर सूखी नेतागिरी समझ रहे हैं, तो वह मेरी बदनसीबी है.

विनायक बैठ गया तो भगीरथ उठ खड़ा हुआ—भाइयो, मैंने उस दिन भी कहा था, अब ज़माना नया है, गोरमिंट नई है, सो हम नए सलीके से ही कुछ तय करेंगे. मेरे बाप कुम्हार थे लेकिन देखो, मैं 'होटल' चला रिया. आप लोगों का आसीर्वाद है खूब, 'होटल' से चार पैसे मिल जाते और लोगों की सेवा भी हो जाती है. तो मैं कै जे रिया था, अब तो जे जात-पात का हिसाब छोड़ ही दो, हां•••

भगीरथ को अपना वक्तव्य अधूरा छोड़कर ही बैठ जाना पड़ा. नौरंगी वकील ने इशारा कर दिया थ••

फिर परसोराम बैद खड़े हुए—वैसे होगा वही, जिसे जनता चाहेगी. मैं अपनी तरफ़ से कुछ भी कहे बिना जनता के सामने केवल कुछ मूल्यवान बातें रखूंगा. चाहे कोई भी शास्त्र उठाकर देखिए, उसमें लिखा है कि किसको क्या करना चाहिए. ब्राह्मण हो तो पूजा-पाठ, वैश्य हो तो व्यापार, क्षत्रिय हो तो देश-रक्षा और शूद्र हो तो इस तीन उच्च श्रेणी की सेवा करते जाओ. अब तक यही होता आया है. यानी हर किसी को उसकी योग्यता के अनुसार सम्मान मिलता रहा है. यह तो विधि का ही विधान है कि कौन कहां जन्म लेगा. तो फिर क्यों न उसी पर आश्रय लिया जाए? मेरे कहने का अर्थ बिल्कुल स्पष्ट है. कोई वादविवाद उपस्थित हो तो उस पर निर्णय लेने का अधिकारी हर कोई नहीं होता. उसके लिए चाहिए विद्या, ज्ञान. ये सब वंश-परम्पराओं से ही मिल सकते हैं•••.परसोराम कोई गहरी बात कहते हैं तो संस्कृत का सहारा लेते हैं. सामने बैठे लोगों को आधी से भी ज्यादा बातें समझ में नहीं आई थीं.

—तुम तो अपनी ही हांक रहे हो बैद जी. पीछे से किसी ने मंतव्य छोड़ा.

डोरीलाल दहाड़ उठा था—अबे ओय ! चुप भी रैगा या नहीं. नाय तो कर दूंगा एकदम ठंडा, हां.

परसोराम बैद कुछ अचकचाकर बैठ गए थे.

—मैं कुछ कै सकता हूं ? जगदम्बा ने अपनी जगह पर खड़े होकर नौरंगी से पूछा.

जवाब दिया मुरारी डाक्टर ने—ज़रूर कै सकते हो.

जगदम्बा ने कहना शुरू किया—देखो जी, हमने सब देख लिया. अब जे समझ लो कि पूरा मुहल्ला वकील साब के संग है. चाहे तो वोट डलवा के देख लो कि लोगन की मन्शा क्या है.

मुरारी डाक्टर फिर बोलने के लिए उठा—होगा वही जिसे आप सब चाहते

हैं. हम सब चाहते हैं. लेकिन फिर कल को इस किए पर पछताते रहो तो मुझे कुछ नाय कैना, हां.

लुक्का का शागिर्द मक्खन फिर ऊबने लगा था. आखिर में वह उठा और चलने लगा.

डोरीलाल ने आयोजक की जिम्मेदारी की मुद्रा में उसे पुकारा—अरे ओ मास्टर, इत्ती जल्दी कहां सरक गए ?

मक्खन ने कोई जवाब नहीं दिया. सिर्फ़ उसके चेहरे से इतना ज़ाहिर हो गया था कि यहां की बातें या तो उसे कुछ भी पल्ले नहीं पड़ रही है या दोनों में से किसी भी तरफ की वकालत उसे मंजूर नहीं है. डोरीलाल ने अपना अनुरोध दोहरा भी दिया था. लेकिन मक्खन इस तरह आगे बढ़ता गया जैसे उसने कुछ सुना ही नहीं.

वह कुछ दूर आगे निकल गया तो डोरीलाल ने ज़बान से एक गाली हमेशा की तरह उंडेल दी. फिर नौरंगी वकील की तरफ़ देखा तो महसूस होने लगा, ख़ासी बेवकूफी हो गई. इस बेवकूफ़ी को ढकने के लिए उसे फौरन कुछ कर लेना ज़रूरी लगा था. वह बोलने के लिए उठा था फिर—मैं सिरफ़ इत्ता कै सकता हूं, हम लोग ठैरे सीधे-सादे गिरस्ती आदमी. दांव-पेंच न मारते हैं, न चाहते हैं. हम तो जे ही कहेंगे कि मुरारी डागडर भी अपनी जगा सही है और बिन्नू बाबू भी. दोनों की अपनी-अपनी जघा है, चाहे जैसे मरजी देख लो, दोनों बिल्कुल सही हैं···

जगदम्बा ने बीच में ही बात काट दी—वाह गुरु, फर्राटे से कैते रहियो. फरश किलास बोल रहे हो···

डोरीलाल थोड़ी देर के लिए खामोश ज़रूर हो गया था लेकिन फिर सकपका कर बैठ नहीं गया. जगदम्बा पर उसे गुस्सा तो आया लेकिन गाली नहीं उंडेली थी. बल्कि ज़बान यूं संभाल ली थी कि जैसे अब एकदम से कह ही देगा—जे डोरीलाल की दुनिया ने कदर नाय की तो न सही. लेकिन सही बखत आता तो बरेली भर का नेता बन कै दिखाय देता.

उसने फिर अपनी आंखें दूसरी तरफ़ कर ली थीं—हां तो मैं कै जे रिया था कि इस हिन्दोस्तान का 'नक्सा' देखो तो पता चलता है, चारों तरफ़ लूट मची हुई है. वैसे भंगी-चमार को सर चढ़ाओगे तो अपनी ही टांगों पे कुल्हाड़ी मारने के बराबर होगा. फिर भी आजकल समाजवाद का ज़ोर है तो चलो, हम भी कुछ मंजूर करते हैं. सो इस कमेटी में दो-चार पढ़े-लिखे अगर अछूत हों भी तो भी कोई फरक नाय पड़ता. आखिर में शायद उसे अपनी भूमिका के बारे में कुछ याद आ गया—लेकिन देखो बई, अपने आप समझ-बूझ लेव सब. बाद में नाय कैना कि डोरीलाल ने कहा सो अब हम भुगत रहे हैं. जे जिम्मेवारी पूरी जनता की होगी, हां···आखिर में डोरीलाल सकपका-सा रहा था. उसे शायद लग रहा था, अब इससे आगे कहने के लिए उसके पास कुछ ख़ास बचा भी नहीं है. वह एकदम से अपनी कुर्सी पर बैठ गया था. जेब से रूमाल निकालकर चेहरे पर उग आई पसीने की बूंदें साफ़ कर रहा था.

डोरीलाल को अच्छा इस बात पर लगा कि अब वह कम से-कम इस लायक तो खैर हो ही गया कि दस जनों के सामने खड़ा हो सकता है, बोल सकता है. इसके लिए सीना चाहिए, पूरा मर्दों वाला. अपने को मर्द महसूस करने की खुमारी उस पर इतनी देर तक छायी रही कि वह भूल ही गया, यहां लोगों का खासा जमाव है और देर से जलसा हो रहा है.

परसोराम बैद और मुरारी डाक्टर ने फुसफुसाकर कुछ मशविरा किया और चलने के लिए उठ खड़े हुए.

नौरंगी वकील ने टोका—पैले बात तो कुछ तै होने दो, बंद जी.

परसोराम सिर्फ़ मुस्कराए थे. जवाब दिया था मुरारी ने—अरे भई, कर लो फ़ैसला. हमारा रैना-नारैना किसी को रोक थोड़े ही रिया ? हमारी राय भी वही जो जंता की है. फिर वे आगे की तरफ़ बढ़ गए थे ।

नौरंगी वकील ने जनता को सम्बोधित किया—जे मामला वोट डाल के तै करने का नाय है. इकट्ठे गली-मुहल्ले में रैने वाले हैं हम, सो वो करेंगे जिसे हर कोई चाहेगा. फिर वही सिपाहीलाल की तरफ़ मुखातिब हुआ था—क्यों बई, बात जमी कुछ ?

सिपाहीलाल कुछ और सोच रहा था. मुंह के अन्दर खैनी थी. सवाल सुनकर वह न तो हड़बड़ाया न सिकुड़ा. चुपचाप बैठा था, उसी तरह जमा रहा.

—समझे कुछ ? डोरीलाल ने ज़ोर से पूछा.

सिपाहीलाल का मुंह खुला का खुला ही रह गया था. फिर कुछ देर बाद सरल सत्य-सा बोल दिया था – मो को का पतो ?

जगदम्बा झिड़क पड़ा—तो ह्यां बैठ के फिलम देख रिया तू ?

—जे सब अपन की समझ में नाय आवै. सिपाहीलाल ने गर्दन हिला ली थी. हथेलियां घुमा ली थी.

—तो जा फिर. चद्दर ओढ़ के सोय लेव. डोरीलाल जोकर की अदा में इस तरह बोला कि एक खासी हंसी की लहर दौड़ गई.

नौरंगी वकील ने फिर मामला अपने हाथ में ले लिया था—खैर छोड़ो जी, जे बातें. हां तो जंता क्या कैती जे भी तो पता चले···

डोरीलाल पूरे जोश के साथ फिर खड़ा हुआ—हा तो जे समझ लो कि बिन्नू बाबू के संग रैना है···

विनायक ने अपनी दाहिनी हथेली ऊपर उठाई—मेरे संग रहने-न रहने का कोई सवाल यहां नही है. सवाल है उसूल का.

—अब चाहे जो कैलो बिन्नू बाबू. हम अंग्रेजी पास तो हैं नहीं. हम तो बस इत्ता समझते है कि अब खतम करो बाम्हन-चमार की जे नौटंकी, जहां तुम पसीना बहाओगे, होंआ, इस जगदम्बा को खून बहाते पाओगे. जे बात झूठ निकले तो अपन को कुत्ता कै लेना. जगदम्बा ने फिर सामने की तरफ हवा में मुट्ठी उछाल दी थी.

—फिर जे तय रिया कि कमेटी में अछूत भी होंगे, कहार भी, बामन भी. ठीक ? डोरीलाल ने सामने बैठे लोगों से पूछा.

ज्यादातर लोग सिपाहीलाल की मुद्रा में थे. यानी कोई फ़र्क़ नही पड़ता. चाहे कुछ भी तय कर लो. जलसे के नाम से इस इलाके की एकरस जिन्दगी में एक मज़े की उम्मीद जगती है. सो लोग इसलिए आ जाते कि थोड़ीदेर लाउडस्पीकर पर 'नामी-गिरामी' लोग बोलते रहेंगे. और उनके बोलने से पहले और बाद में छमकते हुए गाने सुनने को मिलेंगे. ऐसा आयोजन यहां कभी-कभार ही होता है. लेकिन अगर कभी हुआ तो पूरा मुहल्ला तो खैर जरूर ही, आस-पास के काफी लोग भी मजा लेने के लिए इकट्ठा होते हैं. लेकिन इस बार का 'जलसा' इतना उल्टा हुआ कि लोग महज़ निराश ही नहीं हुए, ऊबने भी लगे थे. 'नामी गिरामी' लोगों को अगर न बुलाया तो न सही लेकिन 'लौडस्पीकर' तो आ सकता था. क्या फ़रक़ पड़ता अगर कुछ देर मुहल्ले के लोग गाना ही सुन लेते···

डोरीलाल ने जो सवाल पूछा था, उसका जवाब दिया शंकर ने—अपन को तुम्हारे साथ ही समझना.

बाक़ी लोग उसी तरह ख़ामोश बैठे थे. सिर्फ़ जगदम्बा और भगीरथ ने नएँ सिर से अपनी सहमति जता दी थी.

डोरीलाल फिर विनायक की तरफ़ मुख़ातिब हुआ—तो फिर प्रधान बिन्नू बाबू तुम बन लो या बकील साब बन जाएं. आख़िर में वह जगदम्बा की तरफ़ देखने लगा था—क्यों बई, रही न बात सही ?

विनायक ने विरोध किया—इस मीटिंग में कमेटी नहीं बन रही है. कमेटी तब बनेगी जब चमार टोली के लोग आएंगे, भंगी मुहल्ले के आदमी भी यहां जलसे में शरीक होंगे. जो भी कमेटी बनेगी, उनके सामने बनेगी···

डोरीलाल को अपनी ग़लती महसूस हुई थी—वैसे जे बात है बिल्कुल मार्के वाली. फिर वह नौरंगी वकील की तरफ़ मुड़ा था—तुम्हारे साथ रहै लेंगे तो कानून भी ख़ूब जान जांगे. अपन की वैसे तबीयत जे थी कि ख़ूब पढ़ेंगे जित्ता मन चाहे. लेकिन चाहने से ही क्या होता ? मुकद्दर भी कोई चीज़ है, जे तुम भी मानोगे. डोरीलाल फिर असली मसले पर आगया था—तो फिर फटाफट कर लो तै कोई दिन. लोगों को बुला कै लाने का जो काम है वो हम पे छोड़ दो बेफिकरी से. साथ में जगदम्बा को ले लेंगे, संकर को बुला लेंगे, फिर समझो काम हुआ रक्खा है.

नौरंगी वकील ने विनायक से मशविरा किया और अगले जलसे के दिन की घोषणा कर दी—आज रहा इतवार. अगले इतवार इसी टैम फिर जलसा होगा. उसमें कमैटी बनेगी. इस बीच सबको बखत भी मिल जाएगा कि तुम तै कर लो कि कित्ते लोगन की कमैटी होगी, कऊन-कऊन उसमें मेम्बर होगा, कऊन प्रधान होगा···जे सब. अच्छा जे जलसा हीयई ख़तम होता है. जै हिन्द.

लोग अटेनशन की मुद्रा में खड़े हो गए थे. यह इसलिए था कि "जै हिन्द" सुनने के बाद लोगों को उम्मीद होने लगती कि अब "जन गण मन" होने वाला है, अब कुछ आदत ही ऐसी बन गई कि जलसा हो, चाहे 'फ़िलम' ख़त्म होते ही लगता, तिरंगे झन्डे के साथ अब वह गाना शुरू होने ही वाला है···फिर भीड़ छंटने लगी थी. ज़्यादातर लोग ऊबे हुए ज़रूर थे लेकिन कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्होंने कोरस में एक फड़कता हुआ फिल्मी गाना शुरू कर दिया था. गाना शुरू होने से पहले उनमें से एक ने विविध भारती के एनाउंसर की भूमिका में 'आपकी पसन्द' कार्यक्रम की घोषणा की, अनुरोध करने वालों के नामों की लम्बी पंक्ति बनाई. फिर विधिवत गाना शुरू हुआ. गाना सुनने की दिलचस्पी सिर्फ़ थोड़े से ही लोग इसलिए ले पाए थे कि बिल्कुल अभी घर जाने की ज़रूरत उन्हें महसूस नहीं हुई थी. गोबिन्द का गाना इस क़दर बेसुरा था कि बाक़ी लोगों को यहां रुकना भी एक फसाद-सा लगा था.

नौरंगी वकील और विनायक कुएं के चबूतरे से नीचे आकर बात कर रहे थे.

नौरंगी वकील इस ज़िन्दगी में कभी वकील नहीं बन पाए, इसका मलाल उन्हें इतना है कि जो कोई भी उनके हिसाब से समझदार मिलता, उसे सुनाकर अपना दिल हल्का करते. ज़िन्दगी शुरू हुई थी फौजदारी के एक वकील के मुंशी की हैसियत से. उनकी इतनी मेहरबानी थी नौरंगी पर कि बाईस बरस के अनाथ नौरंगी को कचहरी में सरकारी नौकरी मिल गई थी. इस वक़्त वह आते-आते पेशकार तक पहुंच गया है.

अदालत में नौकरी लगते ही नौरंगी ने यह बात फैला दी थी कि छोटे सरकारी वकील का ओहदा उसे मिल गया है. यानी इसका मतलब यह हुआ कि कभी भगवान ने चाहा तो 'जज बालिस्टर' तक पहुंचा जा सकता है. सब है नीली छतरी वाले की माया. ख़ैर, लोगों ने फिर नौरंगी को इज्ज़त देना शुरू कर दिया था. नाम

के साथ 'वकील' विशेषण का इस्तेमाल तब से शुरू हो गया था.

चलो वकील अगर न ही बना, न सही. लेकिन मुहल्ले वाले जो इज्ज़त देते हैं, वो बड़े-बड़े फौजदारी वकीलों को भी नसीब नहीं होती. लोग वकील साब कहते हैं, नौरंगी का सीना चौड़ा हो जाता. महसूस होता, नीली छतरी वाले से मांगो तो कुछ-न-कुछ मिल ज़रूर जाता है. खाली हाथ लौटना नहीं पड़ता.

●●

जलसे का वक़्त था पांच बजे लेकिन काफी लोग चार ही बजे इकट्ठे हो गए थे. विनायक और नौरंगी वकील पांच बजने से सातेक मिनट पहले पहुंचे थे. डोरीलाल ज़रूरत से ज़्यादा व्यस्तता के साथ इधर से उधर और उधर से इधर कूद-फांद रहा था. उसकी व्यस्तता का कारण क्या हो सकता है, इसे लेकर न तो किसी ने मगजपच्ची की, न उत्सुकता ही ज़ाहिर की. विनायक और नौरंगी वकील पहुंचे तो शंकर को लेकर वह सामने आया और सविनय प्रार्थना की कि वे सामने कुर्सी पर जाकर बैठे. विनायक कुछ आनाकानी कर रहा था. लेकिन फिर नौरंगी का साथ देना ही पड़ा.

इस बार सामने एक मेज़ भी थी. आकार और चरित्र से लग रहा था, इसकी स्थायी शरण भगीरथ का 'होटल' है लेकिन ऐसे बड़े जलसे में इस तरह की मेज़ हास्यास्पद ही लगती है, इसका अहसास डोरीलाल को तो है ही, शंकर और जगदम्बा को भी है. लिहाज़ा जगदम्बा अपनी शादी के दहेज़ में मिला नीले और काले रंगों का वह मेज़पोश संदूक से निकाल कर ले ही आया था. यह एक खास चीज़ है जिसका इस्तेमाल खास मौक़ों पर ही होता है. लिहाज़ा काम हो जाने के बाद उसे तहा कर संदूक के अन्दर रख दिया जाता. अगली बार निकालने के बाद यह ज़रूर पता चलता कि इसमें सलवटें आई हैं लेकिन उसकी फ़िक्र न तो जगदम्बा को सताती न उस खास मेहमान को ही, जिसके सम्मान में मेज़पोश को सन्दूक से बाहर निकाला गया था.

डोरीलाल ने पाउडर के एक गोल रंगीन डिब्बे में कुछ फूलपत्तियां रख दीं. डिब्बा गुलदस्ते का काम दे रहा था.

सवा पांच हो गए थे. लेकिन न परमोराम बैद का पता था न मुरारी डाक्टर का. डोरीलाल ने फिर रामधनी को दौड़ा दिया था. वह लौटकर आया था तो वक़्त पन्द्रह मिनट आगे और बढ़ गया था. लेकिन न तो परमो राम के बारे में कोई इत्तिला थी, न मुरारी की ही खबर थी.

आख़िर में नौरंगी वकील ने घड़ी देखी और जलसे की कारंवाई शुरू की—हम लोग एक कमेटी बनाने जा रहे हैं. नाम होगा, मुहल्ला सुधार कमेटी. उसमें बिहारीपुर, कसगरान, मलूकपुर, चमारटोली, भंगी मुहल्ला के लोग मेम्बर रहेंगे. और जो कमेटी बनेगी उसमें प्रधान, उपप्रधान, मन्त्री, सहायक मन्त्री, कोषाध्यक्ष और दस चुने हुए मेम्बर काम करेंगे. नौरंगी वकील को एकबारगी कुछ याद आ गया था—वैसे मेरा ख्याल है, प्रधान के ऊपर एक संरक्षक भी होना चाहिए. उसके लिए हम लोग बरेली के किसी बड़े आदमी से गुज़ारिश कर सकते हैं. मसलन कोई एम्पी या वकील या कुछ और, जैसा आप सब तय करें.

शंकर ने पीछे से समर्थन दिया—ज़रा एक पौवेदार को फिट करना संरच्छक में. काम भी आता रैगा और अपन का नाम भी हो जाएगा.

डोरीलाल इस बीच आकर नौरंगी वकील की बगल की कुर्सी पर बैठ गया था. आज यहां बैठने से पहले उसे कुछ भी दिक्क़त नहीं हो रही थी. बल्कि वह अपनी व्यस्तता की अदा में आया और फटाक-से बैठकर चेहरे को रूमाल से पोंछने लगा. अदा लगभग ऐसी थी कि बैठना उसे पहले ही चाहिए था लेकिन काम की ज़िम्मेदारी

इस क़दर थी कि मुमकिन नहीं हुआ था.

चेहरे पर रूमाल फेरते हुए ही डोरीलाल उठ खड़ा हुआ था—वैसे भाइयो, मुझसे कहोगे तो अपन को सिरफ जे ही कैना है कि कमैटी का प्रधान या तो वकील साब को बनाओ या बिन्नू बाबू को. पढ़े-लिखे का काम है, सो किसी और को बनाओगे तो ठगे जा ओगे. लगभग एक ही मांस में डोरीलाल ने अपनी अर्ज़ी पेश कर दी थी.

उसे उम्मीद थी कि नौरंगी वकील और विनायक अब पशोपेश में पड़ जाएंगे कि कौन क्या बने? आख़िर में कुछ दूसरा ही घटित हुआ था.

विनायक ने प्रस्ताव रखा—प्रधान के पद के लिए मैं बालकराम का नाम आपके सामने रखता हूं.

जलसे में लोग दंग रह गए थे. मान लिया कि बालकराम अब गूं की टोकरी सर पर नहीं रखता लेकिन उसका बाप भी यही ज़िन्दगी-भर करता रहा है. हां इत्ता जरूर है कि वह इण्टर पास है, अंग्रेजी पढ़ा है. शुरू में लोग खामोश थे. फिर आपस में खुसुरफुसर शुरू हो गई थी. यानी उम्मीद लगाओ ताड़ की और गिरो एक से गूं-मूत के डलाव पर.

डोरीलाल, नौरंगी वकील, शंकर सब एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे थे. डोरीलाल ने इस बीच नौरंगी के कान में कुछ कहा भी लेकिन या तो वह उसे टालना चाहता था या निर्विकार ही रहना सुविधाजनक लग रहा था. बहरहाल उसने अपनी प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त की और ख़ामोश ही बना रहा.

चमारटोली और भंगी मुहल्ले से आए लोग थोड़ा फ़ासला बरत कर बैठे थे. बालकराम के नाम का विनायक ने प्रस्ताव किया तो उन्हें शुरू में तो खैर कुछ भी समझ में नहीं आया था, आख़िर में लगने लगा था, यह मज़ाक है.

खुद बालकराम को भी यह यक़ीन नहीं आया था. वैसे अक्सर देर तक विनायक से बातें होती हैं. मुहल्ले और देश के लिए इकट्ठे बहुत-सारी बातों पर बहसें होती है लेकिन ऐसा कभी नही लगा कि बालकराम बाल्मीकि को लेकर इतना बड़ा जलसा किया जाएगा.

—आप लोगों को आपत्ति हो तो कह दें. विनायक ने सामने बैठे लोगों से पूछा था.

जो खुसर-पुसर हो रही थी, थम गयी. बल्कि एक तरह से सन्नाटा-सा छा गया था.

विनायक फिर नौरंगी वकील की तरफ़ मुड़ा—फिर नाम लिख लीजिए आप.

नौरंगी ने ठंडे मन से मेज़ के ऊपर रखे काग़ज़ पर सबसे ऊपर लिखा 'मुहल्ला सुधार कमेटी'. काफ़ी बड़े-बड़े अक्षरों मे इसे लिख लेने के बाद नीचे बालकराम बाल्मीकि का नाम लिखा और उसके आगे लिख दिया प्रधान.

विनायक ने जनता की तरफ़ देखा—उपप्रधान के लिए आपलोग कोई नाम बोलिए.

चमार टोली का सूरजपाल एकदम से खड़ा हो गया था—आप ही बनना वो. हमारा वोट पूरा है.

पीछे से किसीने संक्षेप में मंतव्य कर दिया—अब तेरा वोट लेकर क्या चाटेंगे हम?

इस मंतव्य पर दोनों तरफ़ के लोगों ने पीछे मुड़कर देखा लेकिन असली आदमी का पता नहीं चल पाया.

विनायक ने अपनी अस्वीकृति जता दी थी—काम मैं, कमेटी जितना चाहेगी,

कर लूंगा लेकिन कुर्सी देकर मुझे मत बांधो. वैसे उप प्रधान दो लोग बन सकते हैं—डोरीलाल और परसोराम-बैद. आप लोग सोच लीजिए या अपनी तरफ़ से कोई नाम प्रस्तावित कीजिए.

डोरीलाल अपने को बहुत ज्यादा सम्मानित महसूस करने लगा था. भगीरथ ने अन्दाजा लगा लिया, आज जलसा खत्म होते ही कई लोगों को मलाईतर डबल चीनी वाली 'पेशल' चाय और बिस्कुट मिलेंगे.

शंकर ने समर्थन किया—जे बिल्कुल ठीक रिया.

नौरंगी बहुत ज्यादा उदास हो रहा था. बल्कि अगर यह सब मालूम होता तो वह इस ज़हमत में आता ही नहीं. ख़ैर अब आ गया तो करो खानापूरी. आधे मन से फिर डोरीलाल और परसोराम बैद के नाम लिख लिए गए.

नौरंगी वकील ने लिखना बस खत्म ही किया था कि विनायक फिर से उठा—मंत्री पद के लिए कानून वगैरह से वाकिफ़ होना बहुत जरूरी है. (नौरंगी की जान में जान आई थी. चलो प्रधान न सही, मंत्री की कुर्सी भी बुरी नहीं है. वैसे भी हिन्दुस्तान में तो प्रधान से ज्यादा हस्ती मंत्री ही रखता है). इस पद के लिए मैं बाबू नौरंगीलाल वकील का नाम आप सबके सामने प्रस्तावित करता हू.

रामधनी ने ताली बजा दी थी. फिर पूरी सभा ही ताली बजाती रही. आखिर में बीच में से किसीने कह दिया था—भारत माता की ज्जै.

कागज़ पर नौरंगी ने फिर अपना नाम बहुत बड़े-बड़े अक्षरों में साफ़-साफ़ लिख लिया था. मंत्री शब्द को तीनेक बार लिखकर काफ़ी मोटा कर लिया था.

अब उपमन्त्री के लिए दो नाम, और कोषाध्यक्ष के लिए एक नाम चुने जाने के बाद कार्यकारिणी के दस नाम और तय करने थे.

डोरीलाल सीना तान कर उठ खड़ा हुआ और फटाक से मुसहरों में से नगीना के नाम का प्रस्ताव कर दिया. अब उसे पूरी उम्मीद हो गई थी कि बिन्नू डागडर उसकी पीठ ठोंक कर दाद देगा. लेकिन उसने तय कर लिया कि देने दो दाद. अपने को बहुत ढीला नहीं दिखाना है. पूरा मुहल्ला फिर जान जाएगा, है कोई मरद का पूत डोरीलाल.

लेकिन फिर ऐसा कुछ भी नहीं हुआ था. सभा की कार्रवाई आगे बढ़ी थी; नगीना के नाम के साथ शंकर का नाम उपमंत्री पद के लिए लिख लिया गया.

—अब कोषाध्यक्ष पद के लिए कोई नाम बोलिए. विनायक ने जनता को सम्बोधित किया.

—ह्यां अंग्रेज़ी में कैते फिरेंगे तो काम चलने से रिया. गोबिन्द ने पहली बार जबान खोली थी.

विनायक हंसा—चलो, खजांची समझ लो.

—जे न हुई बात ! अछूतों के बीच से यह आवाज़ उभरी.

—देखो भई, थोड़ा हिसाबी-किताबी आदमी बने तो गाड़ी पटरी से नाय उतरेगी. चाहे तो बिरजू को चुन लो. किराने की दुकान है, सो आने-पाई का हिसाब ऐसा रखेगा कि फिर फजीहत नाय पैदा होगी. किसी ने ऐतराज़ नहीं किया. नौरंगी वकील ने बिरजू का नाम लिख लिया.

दस लोगों की जो कार्यकारिणी बनी उसमें मुरारी डाक्टर है, लुक्का पहलवान है, चमारटोली से ननकू है, मघई है और भंगी मुहल्ले से सेवाराम है, गजाधर है. इनके नामों के अलावा कुछेक नाम और सुझाए गए, जिन पर किसी ने ऐतराज़ नहीं किया. फिर शुरू में नौरंगी वकील और बाद में सारे लोगों ने ज़िद की तो विनायक भी

कार्यकारिणी में शामिल होने को राजी हो गया.

कमेटी में कई नाम ऐसे हैं जो जलसे में आये ही नहीं थे. उनमें परसोराम बेद हैं, मुरारी डाक्टर है, लुक्का पहलवान है. सो यह तय किया गया है कि इन लोगों से मिलकर मनवा लिया जाएगा. यह जिम्मेदारी नौरंगी वकील और डोरीलाल ने अपने ऊपर ले ली.

विनायक ने प्रधान और दूसरे चुने गए लोगों को बधाई दी.

नौरंगी वकील को अपनी आदत के मुताबिक आखिर में कुछ याद आ गया था —वो संरक्षक का पद तो खाली ही रह गया···.

—संरक्षक का चुनाव नहीं हो ा. कमेटी कोई नाम तय करके सिफ़ारिश करेगी. वैसे इसका जिम्मा प्रधान और मंत्री पर ज्यादा रहता है.

बालकराम खद्दर के कालर वाले सफ़ेद कुर्ते और पाजामे में था. कंधे से लटकता हुआ नीले रंग का छीट का झोला था, पांवों में कोल्हापुरी चप्पलें थीं. विनायक ने उसके कंधे पर हथेली रखी —लोगों ने बहुत बड़ी जिम्मेदारी सौंपी है तुम पर.

बालकराम सिर्फ़ मुस्कुराया था. ऐसी शुभकामना का जवाब शायद सिर्फ़ यही होता है.

फिर डोरीलाल ने प्रस्ताव में रखा कि अब आखिर में 'जन गण मन' होना चाहिए. लोग अटेनशन की मुद्रा में खड़े हो गए. बावन सेकेण्ड की जगह कोई डेढ़ेक मिनट में सुर और ताल वग़ैरह की परवाह किए बिना लोगों ने राष्ट्रीयगान का 'कोरस' गाया. इस गीत के साथ सब के मन में एक नशा चढ़ गया. गोया या तो आज छब्बीस जनवरी का दिन है या पन्द्रह अगस्त वाला त्योहार. फिर जलसा खत्म होने के बाद जैसा कि यहां हमेशा से होता आ रहा है, लोग अलग-अलग टुकड़ियों में बंट गए थे. बातों के जो सिलसिले बन और खत्म हो रहे थे, उनमें आपस में कोई तालमेल नहीं था.···

●●

मुरारी डाक्टर तुनक गया था—बड़े महात्मा गांधी बनते है जो जात-अजात सबको एक ही थाली में बिठायके खिलावेंगे. लेकिन मुहल्ले में जे फोकट की नेतागिरी हम चलने नाय देंगे.

नौरंगी वकील और डोरीलाल अचकचा रहे थे.

—खैर छोड़ो, हम जे भी मानने हैं कि कमैटी बनाओ तो सबको भरो. मगर भंगी को सबसे ऊपर बिठाओगे तो हम क्या जूते बनने को खड़े हैं? मुरारी ने ताना दिया—तुम भी नौरंगी वकील, नौटंकी दिखाते हो. अरे बई, कैते क्यों नाय कि हम नाय मानते जे कमैटी. जे कमैटी क्या, एक बहुत बड़ी चाल है. देख लेना आगे और कैसे-कैसे 'तमासे' होते है.

नौरंगी ने महसूस किया कि वह हार रहा है. फिर भी आधे मन से आखिरी दांव मार ही दिया—खैर चलो, अगले साल देख लेंगे.

मुरारी ने नौरंगी की गर्दन के करीब हथेली रख दी—लो SSS जे वकील बने फिरते हो? एक साल का बखत गुजरने में बारह महीने लगते हैं. फिर मुरारी ने दोनों हथेलियों की दस अंगुलियां दिखा दी थीं—समझे कुछ?

नौरंगी वकील फिर खामोश हो गया था. लगा था, खामख्वाह की फ़जीहत मोल ली है. जिनके लिए जलसा किया अब वे ही हुक्का-पानी तक बन्द करवाके दम लेंगे.

डोरीलाल एकदम चुप रहा. सिर्फ बीच में चार-छह बार 'हां हूं' जरूर कर दिया था. वैसे शुरू में गुमान यह जरूर था कि कमेटी का उपप्रधान है लेकिन मुरारी डाक्टर की दहाड़ के सामने एकदम ठंडा पड़ गया था.

मुरारी डाक्टर ने फिर परसोराम को और लुक्का पहलवान को बुला लिया था. सारी बातें गले की आवाज़ के उतार-चढ़ाव के साथ उगल दीं तो लगा, थोड़ी तसल्ली हुई है.

परसोराम और मुरारी एक ही सुर और लय में थे. लेकिन लुक्का को देखकर लगा, ज़बरदस्ती बुलवा लिया, सो आ तो गया लेकिन उसे कोई दिलचस्पी ही नहीं है, चाहे दो बित्ते का बिल्लू डागडर हो या परसोराम—किसी के भी साथ होने की तबीयत नहीं होती. उसने दो-चार बार जम्हाई ली और उंगलियां चटखाने लगा.

परसोराम बैद ने नया सुझाव दिया—हम दूसरी कमेटी बनाएंगे. पूरी देसी कमेटी होगी, राष्ट्रीय होगी. और सुन लो, जे फैसला कर लो कि इस मुलक में कम्युनिस्ट गद्दारों को कोई जघा नाय है. जरा नौटंकी तो देखो-ह्यां डाक्टरी की दुकान खोलकै भोले-भाले लोगन को गुमराह करेगा, कमैटी बनायकै पीछे से कम्युनिस्टी करेगा और कारखाने के फाटक पर लाल झंडा लगायके हड़ताल करवाएगा. वैद्य ने फिर अपनी आवाज़ भोंडी कर ली थी—बड़े आए है समाजवाद लाने वाले ! ऐसे ही लोगन से समाजवाद आया तो बाकी क्या घास छीलने फिरेंगे ?

बाकी वक्तव्य को मुरारी ने पूरा किया—रूस-चीन की दलाली करनी हो तो बेशक करलो. लेकिन फिर फूटो कलकत्ता, ह्यां जे सब करोगे तो सर की खोपड़ी टुकड़ों में ही बंटेगी. मुरारी ने सूचना दी कि कलकत्ते वाले कम्यूनिस्ट बनके खूब खूनखराबा कर रहे.

आखिर में परसो राम ने घोषणा की कि अगले इतवार उसी भगीरथ के 'होटल' के सामने दूसरा जलसा होगा, दूसरी कमेटी बनेगी. उसमें राष्ट्रीय विचारधारा के नवयुवक होंगे, प्रौढ़ उम्र के लोग होंगे और रूस-चीन के दलालों की निन्दा की जाएगी.

मुरारी डाक्टर ने फिर डोरीलाल का कंधा पकड़ कर झटका मार दिया था—बना लिया न तुझे उल्लू. तेरे कंधे पर बन्दूक रख के खूब इत्मीनान से दागेगा अब तेरा अग्रेजी पास नेता. अरे बी. ए. क्या पास हो गया दुनिया को दुनिया नहीं मानता, आदमी को आदमी की इज्जत नहीं देता. हम तो मूतते हैं ऐसे बी० ए० पासों के मुंह पर.

नौरंगी चुप था ही. अब संजीदा भी हो गया था. ऐसे में सिर्फ अपने ऊपर ही गुस्सा आता हैं. यानी ऐसी बेवकूफी कर लेने के बाद जी में यही आता कि सर से लेकर पांव तक का अपना ही जिस्म नोचे.

डोरीलाल अंदर से एकदम ठंडा पड़ गया था. इस कदर डर महसूस हो रहा था कि उसे यह सब बिलकुल बेकार लगा. स्साली राजनीति भी क्या होती कि सोचो कुछ, होता कुछ.

लुक्का कुछ देर खामोश रहकर बातें सुनता रहा. आखिर में एकदम से उठ गया था. बल्कि एक तरह से जता गया था कि इन बातों में पड़ने की फुर्सत उसके पास नहीं है.

काफी देर हो गई थी. नौरंगी वकील की बगल में दबे हुए कमेटी के पर्चे उसी तरह पड़े थे. उन पर दस्तखत होने से पहले ही ऐसा बवंडर उठेगा, किसने सोचा था ?

खैर, उसे महसूस होने लगा, वह बर्बाद होते-होते बच गया है.

नौरंगी और डोरीलाल फिर वापस चलने को मुड़े थे, पीछे से मुरारी डाक्टर और परसोराम बैद के मशविरे कानों में आ रहे थे.

अगले इतवार की शाम को एक और जलसा होगा. जलसे में एक और कमेटी चुनी जाएगी.

●●

इस बार के जलसे में बहुत बड़ा शामियाना लगाया गया. एक गेट भी सामने की तरफ़ लग गया था.***छोटे-छोटे बल्बों से स्वागतम लिखा हुआ था उस पर. तीन बजे से लाउडस्पीकर बज रहा था. नतीजे में बच्चों का मेला-सा लग गया. कुएं वाले चबूतरे को किराये की सफ़ेद चादर से ढक दिया गया था. उस पर आराम-कुर्सियां रखी गईं थीं. सामने की मेज़ काफ़ी बड़ी थी. उस पर किराए का एक गुलदस्ता रखा था, कागज़ वग़ैरह रखे थे. चबूतरे के सामने सड़क पर शामियाने वालों से किराए पर ली गई दरियां बिछी थीं.

हालांकि वक़्त पांच बजे का था. लेकिन लोग काफ़ी पहले से ही इकट्ठा हो रहे थे. लाउडस्पीकर ज़ोरों से बजा तो लोगों के मन में भी लहरें उठने लगीं. हां तो इसे कहते हैं जलसा. मुरारी डाक्टर भी तीनेक बजे से हाज़िर था. हर काम पर निगरानी रख रहा था लेकिन एक बार भी ऐसा नहीं हुआ कि जब किसी को डांटा हो. कोई नापसंद की बात भी होती तो भी वह पीठ पर हाथ फेरते हुए बेटा या भाई कहता और काम करा लेता.

पांच बजे तो मुरारी डाक्टर की आंखें चमकने लगी थीं. इतने लोग आए कि पूरा रामगंगा का मेला लग रहा था. फिर गर्व से मीना फूल उठा था. इसे कहते हैं, जनता से मुहब्बत. न तो यहां लड्डू बांटना है न रण्डी का नाच करवाना है लेकिन जनता के मन की उमंग तो देखो. इसे कहते हैं मुरारी डाक्टर की लीडरी. लीडर बनना आसान होता तो हर कोई गांधी-नेहरू न बना फिरता ?

(पाठक, इस जलसे में लगभग वे सारे लोग थे जो पिछले जलसे में भी थे. हां, अछूतों को नहीं बुलाया गया था, न वे लाउडस्पीकर की आवाज़ सुनने के बावजूद आ ही सके थे. शुरू में डोरीलाल और नौरंगी वकील देर तक कशमकश में रहे लेकिन आखिर में चले आए थे. दरअसल यह इलाका ही ऐसा है कि लाउडस्पीकर बजते ही लोगों के मन में इतनी तरंगें उठतीं कि वे अपने आप बनाई गई दीवारें तोड़ देते.)

फिर लाउडस्पीकर का गाना रुका तो माइक पर बोलने के लिए मुरारी डाक्टर खड़ा हुआ. पीछे की कुर्सियों पर परसोराम बैद थे, डोरीलाल था, नौरंगी वकील था.

मुरारी ने 'हलो हलो' कहकर कुछ वक़्त लिया और इस बीच कहना शुरू करने के लिए खुद को तैयार करने लगा, गले को खंखारकर फिर दिल की कंपकंपी पर काबू पाने की कोशिश की थी. बगल में पानी का गिलास रखा था. पूरा गिलास डकार गया तो लगा अब बोला जा सकता है. फिर पूरी आवाज़ में भाषण शुरू कर दिया था—हम चाहते जे कि हमारे इलाके की बात हमीं तै करेंगे. न इसके लिए किसी भंगी का

पांव छूना है, न चमार का. हमारे अपने लोग क्या कम हैं, जो दूसरों के दरवज्जे पे भीख मांगने जाते हो ? और दूसरी बात जे (मुरारी ने दाएं हाथ की दो अंगुलियां दिखा दी थीं) कि हम राष्ट्रीय कमेटी बनाना चाहते हैं. इसमें जो कम्यूनिस्टी करते हों, रूस और चीन की दलाली करते हों, उन्हें पांव तक धरने नाय देंगे.

लोगों ने जोर से ताली बजा दी थी. ताली की आवाज़ रुकी तो मुरारी ने आवाज़ को और भी चढ़ा लिया था. हाथों को पूरी ताक़त के साथ इधर से उधर घुमाते रहा था—भाइयो, तुम ठैरे सीधे-सादे गिरस्ती आदमी. न ऊधौ का लेना न माधौ का देना. तुम सबको धोखे में रखा गया. जे एक बहुत बड़ी चाल है (दोनों हाथों को फैला कर दिखाता है), भोली-भाली जनता पर बहुत बड़ी गद्दारी है. वाह भई, वाह ! खाओ हिन्दुस्तान का, सपने देखो रूस के, चीन के. हमने अंग्रेजों के खिलाफ़ लड़कर कुर्बानी देकर आज़ादी हासिल की, उसे पानी के भाव बिकने नाय देंगे. उस बख़्त किसी ने मुरारी डाक्टर से नहीं कहा—तुम फिरंगी की चिलम भरते थे. काठगोदाम में अंग्रेज़ ठेकेदार कम्पनी को देशी ठर्रा और जवान औरत देते थे. काफी पैसा था लेकिन फिर एक बार सट्टे में यूं मार खा गए कि बरेली आकर होम्यपैथी की डागडरी शुरू कर दी. गोविन्द ने एक-आध बार खरी-खोटी सुनाई थी लेकिन इस वक़्त वह मौजूद नहीं था.

भगीरथ ने आव देखा न ताव. वह खड़ा हुआ और एकदम बोलना शुरू किया—बिन्नू बाब भी मुहल्ले के लिए खटते हैं, ख़ून-पसीना बहाते हैं. जे बात क्यों नाय केते ?

मुरारी डाक्टर ठठाकर हंस पड़ा था—तू रिया पूरा गोबर-गनेस ही. मैंने नाय कही. जे चाल है चाल. एम्मेले बनना है. लखनऊ जाकर मनीस्टरी करनी है, सो कमेटी बनाई जा रई है.

परसोराम बैद ने फिर छड़ी उठाकर, भौंहो को ऊपर चढ़ाकर इशारा कर दिया था कि वह बैठ जाए. भगीरथ बैठ गया था.

—हम कमैटी बनाकर राजनीति की घुट्टी नाय पिचाते. वैसे सुधार भी करते हूंगे लेकिन गाना-बजाना भी होगा. पूड़ी-कचौड़ी न बटवा दें तो थूक देना इस कमैटी पे. मुरारी ने अपना भाषण जारी रखा—कमैटी जे होनी चाहिए जो दु.ख-सुख में काम आवे. कऊन-सा एक टकिया नेता से भासन सुनना है, ख़ैर चलो, हम कमैटी बनाते हैं जिसमें सिरफ़ बिहारीपुर, कसगरान, मलूकपुर के लोग रहंगे. जै हिंद.

'जै हिन्द' के साथ एक बार और तालियां बज उठी.

डोरीलाल शायद अनिर्णय की दुविधा में था वह लोगों की नज़र बचाकर उठा और एकदम से खिसक गया. नौरंगी वकील उसी तरह बैठा रहा था. बैठा था, लेकिन अभी तक किसी नतीजे पर पहुंचना मुमकिन नहीं हुआ था.

फिर कमैटी बनी थी.

प्रधान—परसोराम बैद, उप प्रधान—नौरंगीलाल वकील, मंत्री—डाक्टर मुरारीलाल, उपमन्त्री—डोरी लाल.

मुरारी डाक्टर ने डोरीलाल का नाम जनता के समर्थन के लिए पुकारा तो एहसास हुआ, कुर्सी एकदम खाली पड़ी है. एक भद्दी गाली याद आई थी लेकिन फिर अपने को संभाल लिया था—ख़ैर चलो, उपमन्त्री शंकर भी बन सकता है. और खजांची रामधनी बन गया. बीस लोगों की एक बहुत बड़ी कार्यकारिणी भी बनी.

कार्यकारिणी में सदस्य-संख्या बीस इसलिए रखी गयी होगी कि दूसरी कमेटी

वालों ने दस रखी थी. बड़ी संख्या से अपनी ताक़त की गहराई का एहसास तो खैर होता ही है, दस लोगों को सुनाते वक़्त भी कलेजा भर जाता है.

मुरारी डाक्टर ने जलसे की समाप्ति के बाद सब को अपनी तरफ़ से चाय का एक-एक कुल्लड़ पिलाया था, कई लोगों ने दो-दो कुल्लड़ भी चाय की पी लेकिन किसी ने मना नहीं किया. लाउडस्पीकर पर ज़ोरों से फड़कता-सा गाना बजने लगा था. इस आवाज़ के बीच किसी और की आवाज़ सुनना न तो मुमकिन था न सुना ही जा सका था. लेकिन इसके बावजूद मुरारी डाक्टर एक-एक के पास पहुंचकर पीठ पर हाथ धर रहा था, चुटकुले की अंदाज़ में कुछ कह-सुन रहा था. आंखें तब मारे खुशी के इस कदर चमकने लगी थीं कि उस वक़्त कोई दस-बीस रुपये भी मांग लेता तो शायद इन्कार नहीं करता. वैसे मुरारी अपनी कंजूसी के लिए मशहूर है. आज तक कोई कह नहीं पाएगा, दवा मुफ़्त में मिली हो या चवन्नी की दवा के लिए बीस का सिक्का मंजूर किया हो. कोई पिनपिनाता तो पहले एक चमकती-सी मुस्कराहट फैलाते फिर कह पड़ते—देखो बाबा, पेट पे लात मरवाने को तो डाक्टरी नाय करता. वैसे भी जो लछमी का उसूल है, अपने हिस्से का नाय छोड़ना, हां.

जलसा खत्म तो हो गया था लेकिन पूरे इलाके में एक रंगीन खुमारी छा गई थी. कई दिन तक लोगों के दिमाग में मस्ती छायी रही कि मुफ्त में चाय बंटी थी और 'लौडस्पीकर' पे गाने सुनने को मिले थे···

●●

विनायक के पास बालकराम भागा-भागा पहुंचा था. इससे पहले भगीरथ आ कर पूरी रामायण, जितना वह समझ सका था, बखान गया था. वैसे बालकराम ने थोड़ा अंदाज़ा ज़रूर लगा लिया था लेकिन आखिर तक इतना हो जाएगा, इसकी उम्मीद नहीं थी.

आखिर में कमेटी की मीटिंग बुलाई गई. उस दिन के चुने गए सभी लोगों के पास प्रधान का दफ्तरी खत पहुंचा. लिस्ट में नौरंगी वकील का नाम तो था ही, परमो-राम और मुरारी डाक्टर के नाम भी थे.

मीटिंग का वक़्त था तीन बजे. चार बजे तक जब कार्यकारिणी के दस लोगों में से पांच और, दोनों उपप्रधान, मंत्री नहीं पहुंचे, बालकराम का हौसला जवाब दे रहा था. बिरजू कुछ देर से सही लेकिन आ गया था. वह आया और नाटकीय अदा में हाथ जोड़ लिए—माफ़ करना, भाई लोग, दुकानदारी का चक्कर ही साला ऐसा है कि 'टेम' की जरा गारंटी नई रैती.

बालकराम बोला—आ तो गए तुम. बाकियों का तो कोई पता ही नाय है अब तक.

विनायक ने घड़ी देखी. पूरे चार हो रहे थे. फिर सामने की तरफ मुखातिब हुआ वह—खैर चलो, काम करने वाले दो-चार ही होते हैं. हम तो फिर भी ज्यादा हैं.

बिरजू हंसा—वैसे तो जे समझ लो कि अकेला बिरजू ही सौ के बराबर है. कहोगे तो एक-एक के अंदर डण्डा पेल नाय देंगे ?

बालकराम हंस पड़ा था. बाकी लोग भी ठहाका मार रहे थे. विनायक खामोश था.

बिरजू फिर अपनी स्थिति समझ गया था—खजांची का काम दिया सो एक-एक से चन्दा वसूल करके धर देंगे. तब देखना. फिर उसने विनायक की तरफ गर्दन मोड़ी थी—वैसे मास्टर, जे कम्युनिस्टी तो इस खोपड़ी में घुसने से रई. खैर हमें

क्या चाहे कानरेसी बनो चाहे कम्युनिस्ट. काम की बात कहोगे तो सबसे पैले बिरजू को ही पाओगे.

बिरजू ने कम्यूनिस्ट कहा तो सामने बैठे लोगों को दिक़्क़तहोने लगी थी. किसी-किसी को लग रहा था कि अनजाने में ख़तरा मोल लिया. अब न तो उगला जाय न निगला ही जाय.

विनायक शुरू में खामोश रहा. फिर बातें साफ़ तौर पर बताने लगा—यह कोई बिल्ला नहीं है कि जनता के साथ काम करने के लिए टोपी लगानी ही है. या लाल झण्डा उठाना ही है. स्वामी विवेकानन्द का नाम सुना है ना, वह ज़िन्दा होते तो लोग उन्हें भी कम्यूनिस्ट कहते. गद्दार कहते. अगर मैं सचमुच जनता का हूं तो क्या फ़र्क पड़ता है कि मुझे कोई क्या कह रहा है ? वैसे यह समझ लो, आदमी की तकलीफ़ के लिए अपने को क़ुर्बान करोगे तो कल को मेरी तरह तुम भी या तो कम्यूनिस्ट कहे जाओगे या रूसी-चीनी जासूस. यह समझ लो कि जब तक अन्दर की आग से तप कर हर तरह से मजबूर न हो जाओ, जनता के साथ कंधा मिलाकर उनके दुःख-दर्द को अपना नहीं सकते. और इस रास्ते से चलोगे तो मुमकिन है, ज़िन्दगी-भर बासी रोटी खाकर गुज़ारा करना पड़े. हो सकता है, जिनके लिए तुम अपने को हर पल क़ुर्बान करो, वे ही ग़लत समझकर तुम्हारे खिलाफ़ चले जाएं. तुम लोगों की एक एक की ज़िन्दगी भी खतरे में पड़ सकती है कभी. वैसे चार पैसे बनाकर बड़े आदमी या बड़े आदमी के मुसाहिब होने के भी रस्ते हैं. तुम लोगों की बात मैं नहीं जानता लेकिन मेरे लिए ये एक-दूसरे के विकल्प नहीं हैं.···

विनायक बोलता रहा तो चेहरा एकदम सुर्ख हो गया था. लग रहा था सीने के अन्दर भट्ठी-सी जल रही है. चारों तरफ़ बिल्कुल सन्नाटा तैर गया था.

बालकराम ने सन्नाटा तोड़ा—हमारी कमैटी में लोग इमसे ज्यादा शायद होंगे भी नाय.

बिरजू ने इस बार अपनी ताक़त की बात नहीं दुहराई. बल्कि बहुत ज़्यादा खामोश होकर बातचीत समझने की कोशिश में था.

—मुझे ताज्जुब नहीं होगा कि अगर आगे चलकर दो-एक लोग और भी पत्ता काट लेते हैं. यह विनायक था.

बालकराम इस बार कुछ नहीं बोला.

चमार टोली के मघई ने एक प्रस्ताव रखा—'लौड स्पीकर' मंगा के और भी बड़ा जलसा करो. खूब बड़ा शामियाना लगाना. लोग हमारी कमैटी में आ जांगे.

विनायक हंस पड़ा—यह शामियाने की नुमाइश है या जनता की सेवा ? कमेटी बनी क्यों आख़िर ? इसीलिए न कि इस इलाके के सुधार का प्रबन्ध करें, चुंगी वालों से मिलें, सरकार से बातचीत करें, खुद भी मेहनत-मज़दूरी करें.···

मघई ने जवाब नहीं दिया. मन-ही-मन कुढ़ने लगा था कि बात पल्ले पड़े तो कुछ पता भी चले.

विनायक ने फिर समझने की कोशिश की—भोंपा लगाकर कीर्तन चाहे कर लो लेकिन जनता को समझाने के लिए उनका अपना होकर उन्हीं के बीच रहो, समझाओ···तो जाकर कहीं कुछ होता है.

भंगी बस्ती का गजाधर अपनी आंखों को ऊपर चढ़ा रहा था—जे बात सई है सोलहे आने.

—खैर, हम लोग एक तैयार योजना के साथ ही आगे बढ़ सकते हैं. बालकराम ने सुझाया—गली-गली में जाकर सबसे मिलो. उन्हें समझाओ कि स्कूल चुंगी का सही,

मुफ़्त का तो है. उसी में बच्चों को भेजो. फिर हम कभी-कभी उनके लिए कहानी वग़ैरह भी सुनाने के प्रोग्राम रख सकते हैं. बचपन से ही ख़तरों के बारे में उन्हें पता चलता रहे तो आगे चलकर नतीजा अच्छा भी निकल सकता है.

यह काम थोड़ा भारी पड़ता है. लिहाज़ा तय यह हुआ कि बालकराम ख़ुद इस काम का अगुआ होकर चलेगा. वैसे विनायक को जब भी फ़ुर्सत मिलेगी, वह भी इस में शामिल होता रहेगा.

—वैसे जो तालीम इस मुल्क में दी जाती है, उसमें हमारी दिलचस्पी क़तई नहीं है. विनायक ने साफ़ समझाया—तुम लोग यह मत सोच लेना कि यह तालीम पाकर जनता कोई तीरंदाज़ बन जाएगी. लेकिन वे अक्षर तो पहचानेंगे. इस वक़्त तो उनके लिए चाहे हिब्रू हो, चाहे पाली, या हिन्दी, अंग्रेज़ी सब बराबर हैं. कोई अक्षर पहचान जाए तो उसे दिमाग़ी तौर पर कुछ समझाया तो जा सकता है. जहां अब तक या तो दिमाग़ को काम ही में नहीं लाया गया या ग़लत इस्तेमाल किया गया, वहां हम सब की मेहनत का नतीजा बहुत आसानी से नहीं मिलेगा. न मिलने पर उम्मीद बांधने वाले या तो टूट जाते हैं या काम करना छोड़ मैदान से भाग खड़े होते हैं. लेकिन अगर कोई पहले से ही उम्मीदों के पुल बांधना न शुरू करे, उसे इतनी तकलीफ़ भी नहीं होती.

बालकराम को एक तरीका सूझ गया था—हम लोग एक अख़बार निकालें तो कैसा रहेगा ?

विनायक मुस्कुराया—अख़बार निकालोगे ? मुहल्ला सुधार कमेटी अख़बार छापेगी, रद्दी के भाव बेचने के लिए ? जहां लोगों को अक्षर तक का पता नहीं है, वहां अख़बार क्या करेगा ? वैसे भी उसके जो ख़र्चे वग़ैरह बनेंगे, वह सब देखोगे तो पहले ही सर थाम लोगे.

सेवाराम और ननकू ठुड्डी को घुटनों पर टिकाए बैठे थे. गजाधर और मघई की मुद्रा भी लगभग यही थी. सिर्फ़ बिरजू इत्मीनान से बैठा था. बीड़ी पीने की तलब देर से हो रही थी लेकिन विनायक के सामने बीड़ी पीने में संकोच होता है. वह पूरी तरह कोशिश में था कि हो रही बातचीत की डोर पकड़ में आ जाए.

●●

अगले दिन 'कौशल्या भवन' की दीवारों पर तारकोली रंग से लिखे विज्ञापन देखे गए—देश के गद्दारों को पहचान लो ! उसके आगे लिखा था—रूस-चीन की दलाली के लिए नक्सलबाड़ी जाओ !

यह विज्ञापन बालकराम के भी घर की दीवारों पर लिखा हुआ था. फ़र्क़ सिर्फ़ इतना था कि विज्ञापन को काग़ज़ पर लिखकर दीवार पर चिपका दिया गया था. लिखने में थोड़ा वक़्त लगता ही है. और भंगी मुहल्ले में जाकर उतना वक़्त देने से पकड़े जाने का ख़तरा भी कम नहीं रहता.

विनायक ने सुबह घर से निकलकर टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखे हुए अनपढ़ हाथों के ये कमाल पढ़े और काली चमड़ी का बैग संभाल कर दवाख़ाने की तरफ़ बढ़ गया.

सामने भगीरथ मिल गया था. वह मुस्कुराया—कुछ अपन से भी कहो बिन्नू बाबू. मुहल्ले के नाम पर जित्ता हो सकेगा, कर दूंगा. उसमें कोई फ़िकर नाय करो. वैसे मुरारी डागडर से थोड़ा होसियार रैना. उसने इस लहजे में कहा गोया, जैसे कोई भेद खोल रहा हो. विनायक ने थोड़ी देर बाद सिर्फ़ 'हुं' कहा.

—अपने को स्साली रात को नींद ही नाय आवे. इस ओर घरवाली पिनपिनाए,

उस ओर सात महीने की लौंडिया हगे-मूते और रोय के गीत गावे. एक दवा थमाना फश्श किलास वाली कि खाओ और बिस्तर पे जाकर गोता मारो. भगीरथ ने अपनी बात को ज्यादा से ज्यादा प्रभावकारी बनाने की कोशिश में हथेलियां खूब नचाली थीं. शायद ज़रूरत से भी ज़्यादा.

—फिकर करना छोड़ दो, नींद आ जाएगी. विनायक ने कलाई पर घड़ी देखी फिर चलने की मुद्रा में हुआ.

—जेही तो मुमकिल है, विन्नू बाबू. भगीरथ ने अपना सर थामा था—मुकद्दर में रिया सो मूरख बनके 'होटल' चला रिया हूं, लेकिन फिकर तो पूरी जनता का दिल में रैता ही है. इस पूरे बिहारीपुर मुहल्ले में एक-एक से पूछ लेव, कोई कै नाय पाएगा जो भगीरथ ने किसी की नमकहरामी की है.

विनायक ऊब रहा था. नमकहरामी और फ़िक्र के बीच के रिश्ते पर उसने सोचा, लेकिन आखिर तक कुछ भी तय करना मुमकिन नहीं हुआ. आखिर में चलने लगा था.

भगीरथ ने दांत फैलाकर नीची आवाज़ में ठहाका मारा, बाईं हथेली पर दाएं हाथ से मुक्का मारा और लगभग उसका रास्ता रोककर खड़ा हो गया.

—टके की बात तो सुनते जाओ. वह अपनी आवाज़ नीचे उतार लाया था. ज़ाहिर है, आदत के खिलाफ़ ऐसा करने में उसे अपनी काफ़ी शक्ति बर्बाद करनी पड़ी थी. उसने अपने आस-पास जरूरत से ज़्यादा शंकित निगाहों से देखा और लगभग सटकर खड़ा हो गया —अपने 'होटल' में एक तुमीं नाय आते. नाय तो चाहे रंडी का दलाल हो चाहे मंदिर का पंडत—सब आते हैं ह्यां. मुरारी डागडर ने जो जाल फैलाया, जानोगे तो उबल पड़ोगे. 'होटल' में बैठके चाय 'टोस' के संग परोगराम बनता है. वो समझते हैं भगीरथ ठैरा लपाड़ूमल, गोबरगनेस. लेकिन ह्यां दिमाग इत्ता काम करता है कि एक-एक चीज़ में कान लगा देता है. कभी आऊंगा सारी बातें कैने. भगीरथ ने अपनी बातें खत्म कीं और उम्मीद करने लगा, विनायक अभी पीठ पर प्यार की चपत भी देगा. बातें कहते वक्त उसने अपनी भौंहें चढ़ा ली थीं, आंखों को गोल कर लिया था.

आखिर में विनायक शाबाशी दिए बिना एकदम से चलने लगा तो उसका मन थोड़ा कड़वा हो गया था. मन की कड़वाहट उसने काफ़ी कोशिश के बाद छिपा ली थी और दुकान की तरफ चलने लगा था. चलते-चलते कहा था—कभी आऊंगा फुर्सत मे दवा-पानी लेने.

सामने मुरारी डाक्टर भी मिल गया था. दोनों का गंतव्य एक ही था—दवाखाना. कोई दूसरा वक़्त होता तो मुरारी कन्नी काटकर या तो निकल जाता या रास्ता ही बदल देता. लेकिन कोई एकदम से सामने पड़ जाए तो थोड़ी दिक्क़त हो ही जाती है. खैर, मुरारी ने पान की पीक फेंकी और मुस्कुराया—कहो बई, सब कुशल मंगल ? यह मुरारी का तकिया-कलाम है. घाट जाता मुर्दा भी मिलेगा तो भी उसकी ज़बान पर कुछ और आता ही नहीं.

विनायक मृदु हंसा—बस चल रहा है.

—देखो बई, बुरा मत मानना. उमर में तुमसे बड़ा हूं, सो कैने का हक़ तो है ही, क्यों ? मुरारी विनायक का कंधा पकड़कर एकदम से विगलित हो रहा था. फिर खट से रुका और लगभग छलांग मार कर उसके सामने आ गया—आजकल के नौजवान चाहे डाक्टरी करें चाहे इंजीनियरी, अपनी सेहत पे गौर नाय करते. मियां, अभी तो दुल्हा भी नहीं बने तुम. टेम से पैले ही बूढ़े हुए तो तुम्हारी दुल्हन कोसती

रँगी, हां. फिर एक ठहाका, देर तक जबरदस्ती खींच कर लाता हुआ.

विनायक ने जवाब नहीं दिया. यह बात पहले भी इतनी बार बताई जा चुकी कि अब उस पर जवाब देना भी फ़िज़ूल का ही लगता है.

—जरा डटके, खाया-पिया करो तो सेहत बनेगी. मुरारी ने फिर चलते हुए अपनी नसीहत दुहरा दी थी—कभी आओ अपने ह्यां तो खाने-पीने का कुछ परोगराम बने. पैले से कै देना, जो चाहोगे सब हाज़िर मिलेगा. मुरारीलाल ने अपने बाप से अगर कुछ लिया तो जे बड़ा-सा दिल ही लिया. वह अपने सीने पर हथेली रखकर दिल की विशालता के बारे में धारणा बनाने में शायद मदद कर रहा था.

विनायक ने जम्हाई ली, वैसे इस आमंत्रण पर जबरदस्त हंसी लगभग होठों तक आई थी. पूरे मुहल्ले में कोई कह नहीं पाएगा, मुरारी डाक्टर ने किसी को एक पत्ता पान का या इलायची का एक दाना भी खिलाया हो.

मुरारी ने विनायक की जम्हाई देखी और संभल गया. एकदम से खामोश हो गया था फिर. इतना खामोश कि जैसे सारी बातें यहीं आकर एकदम से ख़त्म हो गई हों.

●●

दवाखाने के बरामदे में मरीज़ इंतज़ार में थे. बालकराम भी सायकल पर बैठा बरामदे में पांव टिकाए इंतजार कर रहा था. चेहरे के गिर्द उभरी स्याह लकीरों से ज़ाहिर हुआ, दिमाग में तूफ़ान-सा है. विनायक को देखते ही वह सायकल से उतरा. उसे स्टैंड पर खड़ी करदी.

भीड़ ज़्यादा थी. विनायक ने दवाखाने का दरवाज़ा खोला, अंदर बैठा और इशारा कर दिया कि वह थोड़ी देर इंतज़ार कर ले.

नैना एकदम से अन्दर आ गई थी. मरीज़ों के आगे बढ़ने का एक उसूल यहां बना हुआ है. एक के बाद एक. लेकिन ये सारे कानून नैनामेम के लिए कोई कीमत नहीं रखते. उसे करना वही है जो जी में आता है. फिर चाहे कोई कुछ भी कहले.

एक दम से वह सामने आ गयी थी. लगभग छलांग मार कर. विनायक विरक्त हुआ था लेकिन उसकी परवाह नैनामेम नहीं करती.

—लो डागडर, कोई बढ़िया-सी दवा दै दो. उसने नाटक की विरहिणी की तरह ठंडी सांस ली और सीना थाम लिया—दिल में दरद है डागडर, लो देख लो.

विनायक चुप हो गया था. चेहरे से ज़ाहिर हो गया था, ये हरकतें उसे पसंद नहीं हैं.

—लो मेरे राजा, तुम तो नाराज़ हो गए. किसी के सामने जे बात कहूं तो वो व्होंइ कलेजा थाम ले. फिर उसने 'चव्व' की आवाज़ करली थी. इंतज़ार में बैठे मरीज़ों को बड़ा मज़ा आया था इससे. वे सब लगभग इकट्ठे हंस पड़े थे

नैना फिर एकदम से गम्भीर हो गई थी—मैं तो मजाक कर रई थी. अपन को दिल की दवा तुमसे नाय लेनी. तुम्हारे लिए तो आस लगाई बैठी होगी कोई पर-कटी परी. वो आजाए तो पैचानोगे भी नाय इस नैना को.

पीछे बैठे मरीजों में से किसी ने बड़े कायदे से 'हाय !' कहा था. बाकी लोग हंस पड़े थे लेकिन नैना ने भौंहों को सिकोड़ लिया था. फिर चेहरे को इतना बदल लिया था, गोया कहने वाले के मुंह पर अभी थूक देगी.

नैना ने फिर सामने की मेज पर जोरों से मुक्का मार लिया था—ह्यां बैठ के डागडरी करो लेकिन मुहल्ले का पता है न ? नौरंगी वकील को मलूकपुर थाने वाले पकड़कर ले गए हैं. कै ते हैं, उसकी कोठरी में पांच किलो चरस के मिले हैं. पूरा मुहल्ला

इकट्ठा हो गया तमाशा देखने, मैंने सोची तुमें भी कैती जाऊं.

फिर उसने आंख मार ली थी और एकदम से बाहर निकल गई. उसके आने और जाने की गति में इतना सामंजस्य था कि किसी में भी कोई भूमिका नहीं थी, पूर्व-आयोजन नहीं था.

बालकराम अन्दर आकर सुन रहा था. नैना मेम निकल गई तो वह भी बरामदे तक आ गया था. देखा, मुरारी डाक्टर और परसोराम सड़क पर खड़े-खड़े फुसफुसा रहे हैं.

बालकराम ने कनखियों से उधर देखा और अनुमान लगाने की कोशिश करने लगा. लेकिन बीच का फ़ासला इतना ज्यादा था कि अनुमान तो लगाया जा सकता था लेकिन उसके सही होने के बारे में निश्चित नहीं हुआ जा सकता था.

थोड़ी ही देर में बिरजू भी उधर से गुज़रने लगा. बालकराम को दवाखाने के बरामदे पर देखा तो हथेली उठा ली—तो अब बच्चू को पता चलेगा आटे-दाल का भाव. हम तो हगते हैं ऐसे-ऐसे पढ़े-लिखों पे. बिरजू ने अपनी आवाज़ इतनी चढ़ा ली कि मुरारी डाक्टर और परसोराम को सुनाई पड़ जाए.

—अब ससुराल में बैठ के तोड़ो सरकारी रोटी. होंआ से निकलके आवोगे तो हम भारी जलसा करेंगे. लौडस्पीकर पे गाना होगा, रंडी नाचेगी, तुमें जूते की माला पिन्हाएंगे. क्यों मास्टर ? बिरजू ने बालकराम से पूछा तो वह मुस्कुरा पड़ा.

मुरारी डाक्टर ने गुस्से में आकर ढेर-सारी पीक उगल दी थी. परसोंराम को लेकर दवाखाने के अन्दर चला गया था फिर.

मुरारी और परसोराम अन्दर चले गए तो बिरजू ने हांक लगाई—जाओ अब अपनी औलाद की करनी पर बैठके रोओ. फिर कुछ रुक कर बोला—हम भी रोवेंगे तुम्हारे साथ, ढोलक बजायके रोवेंगे···

बिरजू शायद कुछ और भी कहता लेकिन उधर से बचऊ हलवाई भी लगभग उसी लहजे पर उतर आया था—वाह गुरु, गजब भयो रामा, गजब भयो रे.···वह ठहाका लगा रहा था.

नौरंगी वकील के पकड़े जाने की बात बिजली की रफ़्तार से पूरे इलाके में फैल गई थी. बिहारीपुर ढाल में रोज़ सुबह जो एक छोटी-मोटी सब्जी मंडी लगती है, आज भी लगी. वही खरीदार, वही सौदागर. वही आलू, टमाटर, भिन्डी, परवल, कद्दू, बैंगन वगैरह. गर्मी के मौसम में पहाड़ी टमाटर के साथ उसके गुणों की व्याख्या. रोज़ की तरह एक नियमित चीख-पुकार. यह चीख-पुकार इतनी नियमित हो गई कि इसके बिना यह बाज़ार, बाज़ार ही नहीं लगेगा. इसके साथ ही नौरंगी वकील पर हथकड़ी लगने की बात इस तरह बाहर फैली कि हरज़बान को कहने के लिए एक खासा मसला मिल गया.

बिहारीपुर की खासियत ही यह है. यहां बात चाहे कोई भी हो, फैलते देर नहीं लगती. बात फैली तो उसके साथ उपकथाएं भी अपने आप बढ़ने लगीं. किसीने कहा, नौरंगी वकील नेपाल से माल मंगवाता था. यह बात शुरू किसके मुंह से हुई थी, इसका पता लगना मुमकिन नहीं होगा. इस बात के साथ एक बात यह भी फैली कि दस मील दूर भोजीपुरे के गांव में नौरंगी वकील की कोई रखैल है. सारा इंतज़ाम वह करती है. लोगों ने फिर यह क़िस्सा भी जोड़ लिया कि औरत है बिल्कुल मार्के वाली. पूरी कश्मीरी लगती है. कोई जरूरी नहीं कि इन बातों को सुनने के बाद ऐतबार भी किया जाए. सुनानेवाले को यह अच्छी तरह मालूम है कि थोड़ी देर पहले उसने जो बातें बताई, उन पर एतबार करना तो दूर रहा, किसी ने ठीक-ठीक से सुनी भी नहीं.

दरअस्ल हर कोई अपनी-अपनी सुनाकर बाज़ी मारने के लिए इतना बेताब है कि दूसरों की बातों पर मगजपच्ची करने की फुर्सत ही नहीं रहती.

बिरजू और बचऊ दो छोरों पर खड़े होकर भद्दे क़िस्म की जुगाली कर रहे थे. एक सस्ते तरीके से.

विनायक फिर बाहर आ गया था. बिरजू ने एकदम से फिर उंगलियों में फंसी बीड़ी फेंकी थी— ह्यां तो ख़ूब सरकस हो रिया मलूकपुर थाने में. एक ठहाका.

विनायक ने कुछ नहीं पूछा.

बिरजू संभल गया था. एकबारगी होंठ उलट लिए थे—खैर, छोड़ो हमें क्या ? अपन को तो दुकानदारी से ही फुर्सत नाय मिलती. कोई चाहे भाड़ में जाए, चाहे सरगलोक पहुंचे, अपन का कोई मतलब नाय. उसने दाहिने हाथ को फैलाकर अपनी बातों की पुष्टि की और दुकान की तरफ़ बढ़ गया.

बचऊ हलवाई कुछ कहने को तो हुआ था लेकिन आखिर में बस कर लिया था. विनायक का तेवर देखा तो एकदम से सहम गया. फिर वह लोहे के कड़ाहे पर खौलते हुए दूध में लकड़ी की कड़छी घुमाने लगा था.

●●

नौरंगी की गिरफ़्तारी को लेकर मुरारीलाल इतना बुझ-सा गया कि उसकी 'राष्ट्रवादी' कमेटी की तरफ़ से कोई जलसा ही नहीं हुआ. लोग उम्मीद कर रहे थे कि इसबार इस मुहल्ले में रामलीला भी होगी. दशहरे के रोज़ खूब बड़ा-सा चमचमाता जुलूस भी निकलेगा. लौडस्पीकर में गाने सुनने को मिलेंगे.

फिर एक सनसनी-सी खबर फैल गई थी. फर्राशीटोले में कोई कोयले का ठेकेदार है. उसका नाम वग़ैरह कुछ तो होगा ही लेकिन उसमें किसी की दिलचस्पी हो तो याद भी रहे. इस खबर का आधार वह नहीं, उसकी बीवी है. उम्र में कोई नवेली तो नहीं लेकिन जिस्म इतना गठा हुआ कि सही उम्र का पता ही नहीं चलता. इसका राज़ शायद यह है कि वह पचास के क़रीब होने के बावजूद बच्चा नहीं जम पाई. खैर राज़ कुछ और भी हो सकता है लेकिन इस मुहल्ले के लोग इसी पर यक़ीन करते हैं.

सुनने में आता है, परसोराम ने उससे प्रणय-याचना की थी. प्रणय इतना तपा रहा होगा कि उनकी हथेली औरत के जिस्म के उस हिस्से तक पहुंच गई थी, जहां तक पहुंचने की इजाज़त उनके पास नहीं थी. परसोराम को फिर हतप्रभ रह जाना पड़ा था. वह औरत क्या थी, उसे दरोगा बनना चाहिए था. उसने पांव से चप्पल निकाली और वैद्य के चेहरे पर दे मारी. उस वक़्त कोई दूसरा मरीज़ नहीं था वर्ना शायद एक और खतरा पैदा हो जाता. फिर चारेक दिन परसोराम बैद को लोगों ने दवाख़ाने में नहीं देखा था. बाहर दरवाज़े पर नोटिस लग गई कि तबीयत खराब होने की वजह से अभी कुछेक दिन मरीज़ नहीं देख पाएंगे. चारेक दिन बाद नज़र तो वह आ गए लेकिन चेहरे पर खून जम जाने के काले धब्बे रह गए थे. वैसे भी बुढ़ापे का जिस्म उन्नीस से बीस भी अगर हो गया, संभलने में तो वक़्त लगता ही है.

इस ख़बर का प्रसारण बचऊ की ज़बान से हुआ था. परसोराम ने बचऊ हलवाई का क्या बिगाड़ा यह तो किसी को नहीं मालूम लेकिन इस बात की पुष्टि किसी ने नहीं मांगी. यहां तक कि मुरारी डाक्टर ने भी नहीं. चाहे बात किसी भी मसले पर हो, बचऊ अगर कहीं से भी शुरू करता, उसके साथ परसोराम बैद का यह किस्सा किसी-न-किसी बहाने ज़रूर जोड़ देता .

एक बार मुरारी डाक्टर ने बचऊ को बुला लिया, पान का पत्ता आगे रखा।

और पीठ पर हाथ धर दिया—कुछ जनता-जनार्दन की भी तो सेवा कर, प्यारे. हां, वैसे तू जो कर रिया जे भी पुन्न का ही काम है. किसन कन्हैया भी जे ही करते थे. एक मुक्त हास्य.

बचऊ उठ रहा था—चलो कुछ तो पुन्न हुआ.

मुरारी फिर असली मसले पर आ गया था—तू ठैरा सीधा-सादा भला आदमी. इन पचड़ों में कुछ नाय रखा प्यारे, समझ ले. बैद जी के सफ़ेद बालों का कुछ तो ख़याल कर.

बचऊ फिर हंसी के भार से फटने-सा लगा था—जे न हुई बात इत्ती देर में. और कुछ तो नाय कैना?

बचऊ ने अन्तिम वाक्य को इस तरह से कहा था कि मुरारी डाक्टर ठण्डा पड़ गया था.

बचऊ ने फिर दाएं हाथ से बाईं हथेली पर ताली-सी मार ली थी—बैद जी की फिकर नाय करो. किस-किसकी फिकर करते फिरोगे? पर बचऊ हलवाई अपनी मरी हुई अम्मा की कसम खाकर कैता कि तुम्हारी पोल नाय खोलेगा.

मुरारी ने आगे कुछ और कहने की हिम्मत नहीं की थी. मन एकदम से बुझ गया था कि यह दुकान अगर सड़क के ऊपर न होती तो हलवाई के पांव पकड़कर उससे पक्का वादा करवा ही लेता.

बचऊ हलवाई ने ख़ैर अपनी क़सम नहीं तोड़ी थी. क़सम तो नहीं तोड़ी थी लेकिन, यह सारा क़िस्सा इस तरह फैला दिया था कि इसी पर मुहल्ले-भर में ढेर-सारी कहानियां गढ़ ली गईं. इस विज्ञापन का एक-एक टुकड़ा मुरारी के कानों तक तो आया लेकिन फिर बचऊ को बुलाकर कुछ और समझाने का हौसला नहीं रह गया था.

भगीरथ के होटल में ख़बर पहुंची तो डोरीलाल को अरसे बाद कहने का कुछ मौक़ा-सा मिल गया. उसने अपनी जांघों पर हथेली रख कर एक भद्दी-सी मुद्रा बनाई और फर्राटे से एक अश्लील शब्द उंडेल गया.

भगीरथ ने भी अपना वक्तव्य रख ही दिया—स्वांग नौटंकी में रंडी क्या नचानी, भड़वे का नाच देख लो. फिर सात सुरों की आवाज़ में वह हंस पड़ा था—जे रिया मुहल्ला सुधार कमेटी का पैला नाच.

शंकर का नाम कार्यकर्त्ताओं में है. लिहाज़ा वह दुःखी तो ज़रूर रहा लेकिन उसे ज़ाहिर करने का ख़तरा नहीं मोल लिया.

●●

पाठक, ऐसे क़िस्से इस इलाके में नए नहीं हैं. अगर आप कभी मौक़ा निकाल कर कथालेखक की इस ज़मीन तक पहुंच सकें, तो आप पाएंगे कि यहां की ज़िन्दगी में सिर्फ़ सफ़र है, स्टेशन नहीं. वे थकते नहीं हैं. कभी-कभी ज़िन्दगी की एकरसता में अगर ऊब महसूस होने लगी तो आप उन्हें दोषी नहीं ठहरा सकते. ऐसी ऊब की मुक्ति का साधन? ऐसे क़िस्से ही उन्हें सिर्फ़ एक बदलाव का ज़ायका दे सकते हैं.

…और ये क़िस्से कुछ ही दिनों में नए किस्सों की चपेट में आकर एकदम पुराने पड़ जाते. कभी-कभी तो उन्हें याद ही नहीं रहता कि बीता हुआ कल कैसे गुज़रा. ख़ैर…

थोड़ा वक़्त गुज़र गया तो मुरारी डाक्टर ने गली-कूचों में एक-एक के घर जाकर लोगों से मिलना शुरू किया. इसके साथ ही देखा गया, कुछ निश्चित जगहों पर गद्दारों को पहचानने के लिए आह्वान टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखे हुए हैं. इस इलाके की

मजबूरी है कि विज्ञापन के अक्षर पढ़े नहीं जाते. जहां के लोगों के लिए हिन्दी और हिब्रू के बीच कोई फ़र्क ही नहीं है, वहां विज्ञापन पढ़ने के लिए होते हैं कभी ? लेकिन कभी अगर उधर से मुरारी डाक्टर गुज़रता तो ठहरता, विज्ञापन पढ़ता और फिर एक बत्तीसी वाला ठहाका मारकर लोगों को सुनाता.

सुनने के बाद किसी-किसी के रोंगटे इस तरह खड़े हो जाते कि वे लगभग तय कर डालते कि ऐसे गद्दारों को कभी माफ़ नहीं किया जा सकता. मुरारी डाक्टर का यह एक लगभग ज़रूरी सिलसिला बन गया था. फिर परसोराम भी, अनियमित तरीक़े से ही सही, इसमें शामिल हो गए थे. दोनों के बयानों में सिर्फ़ फ़र्क इतना भर रहता कि परसोराम की आवाज़ चढ़ने के बाद कांपती-सी रहती. और वह बात करते वक़्त आवाज़ के क्रम को कई हिस्सों में बांट देते.

लोगों को फिर यह सब सुनने की आदत पड़ गई थी. जिन लोगों में जोश आता रहा है, उनकी संख्या इतनी कम थी कि अपनी तादाद देखकर बाद में वे भी ठण्डे पड़ जाते.

राष्ट्रवादी कमेटी का कोई काम तो ख़ैर शुरू नहीं हुआ था लेकिन मुरारी अक्सर यह कहता हुआ सुना जाता रहा है, अब बहुत जल्द बस कुछ होने ही वाला है. इस 'कुछ' का मतलब लोगों ने यह लगाया था कि इस बार नौटंकी से आगे कोई चीज़ यानी 'डिरामा' जैसा ही कुछ होगा. अभी तक 'डिरामा' या तो बरेली कॉलेज के 'लौंडे-लौंडियों' के सालाना जलसे में होता रहा है या रामपुर बाग़ के अफ़सरों के 'कलब' में. लोगों में सचमुच एक खुशी की लहर दौड़ गई कि अब यह बिहारीपुर भी रामपुर बाग़ के मुक़ाबले में खड़ा होगा.

●●

रात के नौ बजे थे, विनायक ने आखिरी मरीज़ को दवा दी और दवाखाने के पलड़े बन्द कर दिए. शाम को मरीज़ ज़्यादा रहते हैं और अक्सर ही शाम को यहां आकर बैठना नामुमकिन हो जाता. दफ़्तर का काम तो ख़ैर जितना है, है ही, यूनियन के काम के लिए अक्सर रुक जाना पड़ता है. फिर दवाखाने तक आने के बाद कई बार यह पता चलता कि कई मरीज़ देर तक इंतजार करके आखिर में लौट गए हैं. शाम के वक़्त थकान भी ज़्यादा रहती है लेकिन यहां आने की मजबूरी ही ऐसी है कि कहीं ज़रा भी रास्ता मिला तो आना ही पड़ता है. कई दफ़ा तो इतना भी हो जाता कि चाय तक पीने की फुर्सत नहीं मिलती. लेकिन थकान के बाद आखिर में वह घर पहुंचने को होता तो दिमाग में दुनिया-भर की चिंताएं जैसे छलांग मारकर इकट्ठी आ जातीं. इसके बावजूद मन इस बात पर एकदम ताज़ा, बल्कि उससे भी आगे ढीला लगता कि महसूस होने लगता, इलाके के बदनसीबों के लिए कुछ तो हो रहा है. आखिर में 'बदनसीब' लफ़्ज़ पर उसे अपने आप ही ऐतराज़ होने लगता. यह उनकी बदनसीबी नहीं, मजबूरी है. या और भी साफ़ तरीक़े से आर्थिक कमज़ोरी कह सकते हैं. अब वह संभला. बिहारीपुर की गलियां कई बार भुला देती हैं कि वह वाक़ई विनायक है.

दवाखाने को बंद कर वह सड़क पर उतरा ही था कि सामने बालकराम और गजाधर मिल गए.

बालकराम ने नमस्ते की और कहा—बहुत थक गए होंगे आप.

विनायक चौंका था—अं ?

—आप कुछ सोच रहे थे. गजाधर बोला.

—मन में आता है, इस इलाके को एकदम तोड़ डालूं और फिर बहुत प्यार से गढ़ता रहूं. विनायक शायद दुबारा भूल गया था कि वह विनायक है.

गंजाधर इतना भर समझ गया था कि ये बातें उसके पल्ले नहीं पड़ेंगी. वह कुछ नहीं बोला.

बालकराम हाथ में सायकल थामे साथ-साथ चल रहा था. उसने विनायक के चेहरे की तरफ देखा और उभरी हुई पेशियां समझने की कोशिश की. फिर एकबारगी कह पड़ा – मुझे कभी-कभी अपने ऊपर ही शक होने लगता है. महसूस होता है, मैं हर क़दम पर समझौता कर रहा हूं. बुरी तरह हारकर हांफ रहा हूं.

—मैं चाहता हूं कि यह तकलीफ़ तुम्हें और भी ज्यादा हो जाए. तभी तपोगे. तोड़कर कुछ सही गढ़ने के लिए खुद को तैयार करोगे. विनायक बोला.

—एक-आध बार सोचा, चुनाव लड़लूं और काम करूं. तभी शायद कुछ बेहतर कर सकता हूं.

विनायक ने उसका कंधा पकड़कर झटका दिया था—काम फिर ज़रूर कर सकते हो. लेकिन तब तुम्हारी मजबूरी इतनी हो जाएगी कि आखिर में जनता का साथ शायद ही दे पाओ. फिर वह मुस्कराया था—वैसे यह बिल्कुल ज़रूरी नहीं है कि हर आदमी जनता के लिए ही अपने जिस्म का खून जलाए. चाहो तो सेहत बनाकर पहलवानी भी कर सकते हो. आखिरी जुमले के साथ वह इतनी जोर से हंसा कि रात के उस माहौल में वह आवाज़ देर तक गूंजती रही थी.

बालकराम को महसूस हुआ, उसने ग़लत सिलसिला शुरू किया है. फिर खामोश हो गया था.

विनायक ने समझाया—जब लोगों को मालूम ही न हो कि 'वोट' क्या है, तब राजनीति की कोई जरूरत तो नहीं रह जाती. यहां मंत्री को लोग या तो पैग़म्बर समझते हैं या कोई सम्राट. पहले अगर कर सको तो सिर्फ़ इतना समझा दो लोगों को कि असली हालत पता हो जाए. फिर देखोगे कि हर आदमी चाहे भिखारी हो या किसान या कुली, एक बम है. बम की तरह वह अपने को खत्म तो कर देगा लेकिन हक़ छीनकर रहेगा. मांगने से जितनी भीख मिलती है, उससे पेट भरना भी मुश्किल होता. मन समझने लगता है कि हक़ अपने आप आकर कोई तुम्हें दे जाएगा.

बंगाली टोले के पास नीम के पेड़ के पास से कोई निकल कर सामने आ गया था. आते ही उसने गजाधर की टांगों में लंगड़ी लगा दी. वह गिर पड़ा था. फिर विनायक के मुड़ते ही किसी ने बालकराम की सायकिल को नाली में धक्का देकर फेंका और एक तमाचा-सा मार दिया.

—साले रंडीबाजी करले चाहे ठर्रा डकार लेकिन सड़क पे चलना है तो क़ायदे से चलना आगे. गजाधर के सीने पर बैठा आदमी बोल रहा था.

दोनों के चेहरे पर कपड़े इस तरह बंधे थे कि सूरत पहचान में नहीं आ रही थी.

गजाधर किसी ज़माने में दंगल लड़ता रहा है. वह संभला और ऐसा दांव मारा कि ऊपर वाला आदमी नाली पर औंधा गिर पड़ा.

बालकराम को थामने वाले ने अब उसके पेट पर पूरी ताक़त से लात जमा दी थी. वह बेहोश तो खैर नहीं हुआ था लेकिन एकदम से इतना अपंग हो गया था कि पेट थाम कर वहीं बैठ गया था.

आखिरी आदमी था विनायक. उसकी नाक पर उसने घूसा जमा दिया—ले बेटा अब करले अपनी डागडरी. फिर उसने एक चलती हुई गाली उंडेल दी—अब घर जायके खूब मरवाते रईयो.

तब तक गजाधर किनारे से हटकर विनायक के पास आ गया था. अंधेरे के

बावजूद पता चल गया था कि विनायक की नाक से खून बह रहा है.

गजाधर ने उस आदमी की टांग पकड़ी और उछाल कर उल्टा कर दिया. लेकिन ताक़त उसमें भी थी. वह गिर तो पड़ा था लेकिन दुबारा खड़े होने में सिर्फ़ कुछेक सेकंड ही लगे थे. लेकिन गजाधर ने अपना किनारा निकाला और कूद कर पूरी शक्ति से उसके पेट और सीने में लात मार दी. वह शख्स अपने साथी से कुछ ही फासले पर नाली में गिर पड़ा था.

विनायक की आंखों के सामने अंधेरा-सा छा गया था. यह सब दिखाई पड़ने के बावजूद कुछ समझ में आ ही नहीं रहा था. बालकराम दर्द से कराह रहा था.

सिर्फ़ गजाधर था, जो गिर तो पड़ा था लेकिन अपने दंगल के दिनों की वजह से फौरन संभल भी गया था.

नाले के साथ मास्टर लक्ष्मी शंकर की लकड़ी की टाल पड़ती है. गजाधर संभला और टाल से एक तना-जैसा कुछ उठा ही रहा था कि वे दोनों दौड़कर गली में घुस गए. गजाधर ने अँदाज़े में अपना अस्त्र फेंक दिया था. लेकिन वह बस 'धस्स' की आवाज़ के साथ गिरा और दो टुकड़ों में बंट गया. वह सोचता रहा कि जाय और दौड़के पकड़कर उन्हें जकड़ ले. लेकिन विनायक और बालकराम की कराहें इस कदर उभरीं कि वह रुक गया था.

आवाज़ सुनकर मास्टर लक्ष्मीशंकर निकल आए थे. शुरू में वह चुंगी के स्कूल में मास्टर थे. फिर मास्टरी के साथ-साथ टाल भी चलाते थे. लेकिन ज़माना इतना पलटा खा गया कि देख सकता है कोई माई का लाल किसी और की तरक्की? चुंगी से फिर निकाले जाने की नौबत तो आ गई थी लेकिन लक्ष्मीशंकर हैं पुख्ता आदमी. दे-दिवाकर मामले को दफ़ा कर दिया. तब से वह टाल के ही व्यापारी ज़रूर रह गए हैं लेकिन मुहल्ले वाले कहते है मास्टर ही.

लक्ष्मीशंकर निकल कर आए, बरामदे की रोशनी जलाई और अवाक् से रह गए. इससे पहले कि वह कुछ पूछते गजाधर ने संक्षेप में सारा हाल बता दिया.

लक्ष्मीशंकर शुरू में तो थोड़ी 'च्च्च्च' करते रहे फिर बालकराम और विनायक को सहारा देकर बरामदे में पड़ी चारपाई पर बैठा दिया. आखिर में अन्दर गए और लोटा भरकर पानी ले-आए.

●●

रात के चार का वक़्त था. एकदम से नींद खुली तो विनायक ने पाया नज़दीक कहीं ज़बरदस्त शोर हो रहा है. खिड़की की तरफ़ नज़र गई तो देखा, आसमान का रंग बहुत ज्यादा सुर्ख़ है. सुर्ख़ और पिघलता हुआ.

फिर वह लगभग कूदकर चारपाई से बाहर निकल आया था. कंधे पर कुर्ता रखा और बाहर निकलने के लिए दरवाजा खोला ही था कि बदबू से नाक दबा लेनी पड़ी. आसमान का रंग इस क़दर सुर्ख़ हो चुका था कि वही रोशनी मुआयने के लिए काफ़ी थी. दरवाज़े के साथ मल का ढेर फेंका हुआ था. सीढ़ियां एकदम गन्दी हो गई थीं.

आखिर में उसने वहीं से छलांग मार दी और सड़क पर आगया. ढलान के बाद भंगी बस्ती आती है. सिर्फ वहीं का आसमान ही इस तरह गल रहा था. छह-सात मकान इस तरह से जल रहे थे कि आसमान का रंग ही बदल गया था. मकानों में चार घासफूस के थे, दो खपरैल के और एक पुराने टीन और लकड़ी का बनाया हुआ.

उनके बाशिन्दों का असबाब सड़क के ऊपर रखा जा रहा था, पुरुष या तो आग पर पानी छिड़क रहे थे या सामान बाहर लाने में मदद कर रहे थे. औरतें सिर्फ माथा पकड़ कर रो रही थी.

फिर दमकल वाले आ तो ख़ैर गए थे लेकिन तब तक जलने के लिए खास कुछ और बाक़ी भी नहीं रह गया था.

सुबह हो गई थी.

●●

नहीं, लुक्का पहलवान नहीं, मुरारी डाक्टर भी नही, नौरंगी वकील खुद नुक्कड़ पर खड़ा हो गया. पूरी आवाज़ में ख़बर बांटने लगा—लो, अब और उतारो आरती. बड़े देवता बने फिरते थे ना, अब देखलो, भेस बदल के कऊन क्या कर रिया. बाप ने नाम रक्खा जगत नरैन. नौरंगी वकील फिर सस्ते तरीके से हंसने लगा था. हंसने से पहले 'जगत नरैन' शब्द का उच्चारण चबा-चबाकर फैला लिया था.

हवालात में तीन महीने काटकर नौरंगी बाहर आया तो यह पहला मौक़ा था जब वह लोगों के बीच आया हो. इस बीच कचहरी की नौकरी में भी कई नुक्ते निकल आए थे. नौरंगी को फिर बेहतर यही लगा था कि नौकरी पर लात जमा दी जाए. आखिर में उसने वही किया और बांएं हाथ के तुर्रे से सारे नुक़्ते दफ़ा कर दिए. फिर आखिर में उसने ज़मीन-मकान वगैरह की दलाली शुरू कर दी थी. वैसे सुनने में यही आता है, यह सिर्फ उसका सामने का धंधा है. पीछे का असली धंधा तो कुछ और ही है, जो भोजीपुर वाली औरत की मदद से चलता है.

नौरंगी को हथकड़ी लगने से लेकर हवालात में तीन महीने काटने तक मुहल्ले में खासे क़िस्से बनते रहे हैं. इस नुक्कड़ के कुएं के चबूतरे पर डोरीलाल ने, शंकर ने, रामधनी ने उसके नाम कितनी बार मजमे लगाए. लोगों का जो मनोरंजन इससे होता है, वह शुरू से ही बेमिसाल है. कई बार ऐसा भी हो जाता कि शंकर और रामधनी एक-दूसरे की कमर में हाथ डालकर देर तक फिल्मी अदा वाले नाच पेश करते रहते. तबले वग़ैरह भले ही पूरे मुहल्ले में ग़ैर मौजूद हों लेकिन तबलची यहां काफ़ी हैं. कोई भगीरथ के 'होटल' से डालडे का एक खाली डिब्बा उठा लाता और इत्मीनान से ताल देते हुए गाना शुरू करता.

नौरंगी वकील को वे सब पहले इज्ज़त देते रहे हैं. वैसे भी इज्ज़त का वह हक़दार भी है. फर्राटे से अखबार हो चाहे किताब, पढ़ सकता है. कचहरी में इज्ज़त की नौकरी करता है. फिर ऊपर से मुहल्ले का माना हुआ आदमी है. इस तरह के माने हुए आदमी गिनती के लोग ही होते हैं. यह 'माने हुए' बनने या बनाए जाने के पीछे कोई खास तरीका या कानून तो नहीं है. लेकिन इस पूरे मुहल्ले में इज्ज़त पाने वाले सिर्फ़ गिनती के चार-छह लोग हैं उन्हें 'माने हुए' लोग इसलिए समझते हैं कि वे 'माने हुए' हैं.

नौरंगी वकील को इज्ज़त देने के बाद इस घटना से लोग अब नफ़रत कितनी करने लगे थे, यह कहना तो मुश्किल होगा लेकिन यह एक हक़ीक़त है कि नुक्कड़ पर या भगीरथ के 'होटल' में चाय की प्याली के साथ कोई किस्सा सुनाना शुरू करता तो

लोगों को मजा बेहद आता

लेकिन इस बार बात ही उल्टे हिसाब से शुरू हुई. नौरंगी वकील ने डोरीलाल की भूमिका जैसे छीन ली थी. खासी भीड़ इकट्ठी हो गई थी. वे सब हालांकि जेल की अन्दरूनी जिन्दगी पर जानने के लिए उत्सुक थे लेकिन यह भी कोई कम मज़ेदार सिलसिला नहीं है कि जगतनरैन अब फंटूस बन कर नौ-दो ग्यारह हो गया. वे लोग सब धर्मभीरू हैं. यानी बात-बेबात भगवान को स्वर्ग से खींचकर अपनी परेशानियों के बीच ले ही आते हैं लेकिन ताज्जुब है कि इस बार किसी ने जगतनारायण के इस किस्से को तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं में से किसी से भी नहीं जोड़ा.

रामधनी भगीरथ को तड़ी मार रहा था — अब फिर किसी दिन जे सुन्ना, तेरा बिनूबाबू आलमगिरीगंज के कोठे पे धुत्त पड़ा है.

भगीरथ ने जवाब नहीं दिया था. इस मजमे में वह शामिल तो नहीं था लेकिन भट्ठी पर कोयला चढ़ाते हुए भी सारी बातों में कान लगाए रहा.

नौरंगी ने खूब जोर की ताली बजाई — ले बच्चू, गीदड़ की भी मौत आती ही है. फिर सहर की तरफ़ दौड़ता है करम जला. हां तो सुनलो···नौरंगी ने खंखार कर गले को साफ कर लिया था — तुम लोगों के बिन्नू बाबू का बाप बड़े बाज़ार की एक चोली-पेटीकोट की दुकान में खाता लिखता था. अब पता चला होंआ से पूरे तीन हज़ार के नोट निगलकै नौ-दो ग्यारह हो गया. अरे बई, पैसे की जरूत किसे नाय रैती. लेकिन लोगों का ईमान भी आखिर कुछ होता है या नहीं ? उसने फिर रामधनी की पीठ पर चपत मार दी थी—तू कोई हैदराबाद का निज़ाम नाय है, गवरमैन्ट नाय है तू ठीक ?

रामधनी ने स्वीकृति में गर्दन हिलायी थी.

—पर तू किसी की मेहनत की कमाई पर कैंची तो नाय चलाता ? मैं जे बात खूब जानता हूं, तू भूखा तो रैलगा लेकिन अपने हाथों को गंदा नाय होने देगा.

रामधनी के जी में आया था कि ताली बजाले. ताली तो खैर उसनें आखिर में नहीं बजायी थी लेकिन सीना फिर फूल उठा था. दिल का कोई सच्चा निकलता तो लोग आखिर पहचान लेते ही हैं. यहां देर है अंधेर नहीं. इज्ज़त पाने के लिए कोई काबिल है तो देर-सबेर उसे मिल ही जाती है.

इस बीच नौरंगी वकील कई और शगूफ़े छोड़ता रहा. रामधनी अपने बारे में इस तरह डूबने लगा था कि उसे कुछ पता ही नहीं रहा.

नौरंगी फिर एकदम से चलने लगा था. शायद कुछ एकबारगी याद आ गया था. चलने की अदा ही कुछ ऐसी थी कि मजमे में शरीक होने वाले लोग इससे पहले कि कुछ फैसला कर पाते, वह आगे की तरफ़ निकल गया था.

डोरीलाल ने अपना सीना पकड़ लिया था—हायरे दईया ! फिर बोला था—भाइयो, चलो जे बिहारीपुर छोड़ के कहीं और चलते हैं. ह्यां तो अपन का गुज़ारा होने से रिया. उसने कड़ाक से नीचे थूक दिया था.

लोगों ने फिर 'माने हुए पेशकार के घर' की तरफ़ देखा था. घर वैसा ही खड़ा है. वही दीवारें. दीवारों पर वही फिल्मी पोस्टर. नामर्दी के इलाज का इश्तहार, कीचड़-गोबर के दाग़. सामने का दरवाज़ा हमेशा ही बन्द रहता है, इस वक़्त भी है.

अब लोगों में उम्मीद बढ़ने लगी कि थाने से सिपाही लेकर दरोगा आएगा, भारी बूटों की लात मारकर दरवाज़ा तोड़ देगा, अन्दर पड़े सारे सामान तोड़ता-फोड़ता रहेगा. फिर एकदम कोई सिपाही किसी हण्डिया में से तीन हज़ार के बड़े-बड़े पत्ते निकाल लेगा. जगतनारायण नौ-दो ग्यारह हुआ तो क्या ? चार डण्डे जोरू पर

पड़ेंगे तो मिमिया के बतादेगी कि शाहजहांपुर में छिपा हुआ है या बदायूं में.

काफ़ी देर हो गई थी.

फिर लोग ऊबने लगे थे. न तो कोई दरोगा आया था न तोड़-फोड़ का कोई सिलसिला ही शुरू हो पाया था. एक सम्भावित मजे का इस तरह खत्म हो जाना लोगों को ठण्डा तो कर रहा था लेकिन उसका विकल्प भी कुछ और नहीं था. रेडियो सीलोन से 'बिनाका गीतमाला' की आवाज़ आ रही थी. भगीरथ ने रेडियो को पूरे वॉल्यूम पर कर दिया था. आखिर में लोग या तो 'होटल' की तरफ़ आ गए थे या रोटी खाने घर चले गए थे.

●●

पाठक, नौरंगी वकील के बारे में आपकी धारणा क्या है, कथालेखक नहीं बता पाएगा. मैं अपने अधिकार से बाहर का सिलसिला समझूंगा अगर ~~आप~~ मुझसे नौरंगी के चरित्र पर राय देने के लिए कहेंगे. वह सदाचारी है या दुराचारी—इस पर निर्णय देने के लिए न्यायशास्त्र है, कथालेखक नहीं. मेरे लिए इस चरित्र का महत्त्व इससे ज्यादा और हो भी क्या सकता है कि इस रचना में वह एक पात्र बनकर उतरा. दोस्त-दुश्मन की हैसियत से नहीं, जहां तक हो सके एक निरपेक्ष दर्शक की हैसियत से मैंने नौरंगी को देखा है. सिर्फ़ नौरंगी को ही क्यों, हर किसी को उसी नज़र से देखता रहा हूं. यह बताना इसलिए जरूरी लगा कि आपको गलतफ़हमी हो सकती है. अक्सर कथालेखक को जिस असुविधा का सामना करना पड़ता है उससे मैं बचना चाहता हूं. यानी मैं इसे अपनी जिम्मेदारी मानता भी नहीं कि नौरंगी वकील हो या किसी चरित्र पर एक लेखकीय राय थोपूं.

खैर, नौरंगी वकील के बारे में अगर आपके मन में सहानुभूति नहीं भी है, न सही. लेकिन विनायक के पिता जगतनारायण के बारे में जो इत्तिला दी, वह झूठी नहीं है. रिटायर होने के बाद जगतनारायण 'बरेली क्लॉथ मर्चेन्ट' में खाता लिखने के काम पर लगे थे. काम खाता लिखने का था, लेकिन अक्सर रुपए-पैसे के लेन-देन में भी हाथ बंटाना पड़ जाता. दुकान का मालिक है पठानों जैसा दिखने वाला सरदार हरबन्स सिंह. शायद ही कभी कोई वक़्त ऐसा आया होगा जब हरबन्स ने नौकरों से मुलायम लहजे में बात की हो. उसकी आवाज़ ही कुछ ऐसी थी कि कांसे की थाली गिरने का बोध हो जाता. (पाठक, फटे बांस का उदाहरण मैंने जानबूझकर नहीं दिया. ऐसी मिसालों से आप ऊब चुके हैं. यह जानकारी मेरे पास है. वैसे किसी बात की पुष्टि के लिए मिसाल वग़ैरह पेश करने की आदत तो मेरी नहीं है लेकिन कुछ चरित्र होते ही ऐसे हैं कि अपने आप ही मिसालें आ जाती हैं. खैर···) लेकिन जगतनारायण को पूरी इज्ज़त दी थी हरबन्स ने. बंटवारे के बाद वह रावलपिंडी से हिन्दुस्तान आया और दिल्ली में चारेक महीने गुज़ारने के बाद बरेली में अपने रिश्ते के मामा के पास चला आया था. शुरू में बारह आने, रुपये और सवा रुपए गज़ के भाव के कपड़े कंधों पर डाले वह मुहल्ले-मुहल्ले फिरता रहा है. हाथ में लोहे का गज़ होता और ज़बान पर वही सात सुरों वाली आवाज़. नसीब वग़ैरह क्या होता है ? हरबन्स ने न कभी यह सोचा, न ज़रूरत ही महसूस की. सुबह से लेकर शाम तक कपड़ों की सौदागरी करो, फिर घर लौटकर रोटी खाओ, बीवी से इश्क-मुहब्बत करो, सो जाओ. इसके अलावा किसी और मसले पर ज़िन्दगी को लाने के लिए जितनी फुर्सत की ज़रूरत पड़ती है, वह उसे न तो तब मिली थी, न अब हासिल है.

फिर साल-डेढ़ साल बाद हरबन्स ने बड़े बाज़ार में कटपीस की एक दुकान खोल ली थी. तराज़ू पर तौलकर कपड़े बेचे, अन्दाज़ से भी कपड़ों का सौदा किया

लेकिन तब कौन सोच पाया था कि नसीब एकदम से पल्टा खाने वाला है. यह धन्धा तीनेक साल का पुराना ज़रूर हो गया था लेकिन इतनी गुंजाइश नहीं थी कि कमाए हुए मुनाफे के बूते पर कटपीस की दुकान को लम्बी-चौड़ी चमचमाती दुकानों की क़तार में ले आए. इत्तफ़ाक़ शायद यही होता है. वर्ना लुधियाने की एक विख्यात गरम कपड़े और कम्बल की मिल की एजेन्सी पांच हज़ार रुपए के बूते पर नहीं मिल जाती. कम्पनी की तरफ़ से जो आदमी आया था वह न तो हरबन्स सिंह का ताऊ था न मामा का लड़का. लेकिन बात बननी शुरू हुई तो बनती ही गई. उसे यक़ीन आ गया था कि हरबन्स सिंह मेहनती तो खैर है ही, ईमानदार भी है. यानी ऐसे किसी आदमी के पास एजेन्सी हो तो पूरे बरेली ज़िले में काफी रुतबा जम सकता है.

यह 'बरेली क्लॉथ मर्चेन्टस्' की शुरूआत की कहानी है. हरबन्स की भी एक दूसरी शुरूआत इसी कहानी से होती है.

पसीना और खून मिल कर एक-एक पाई कैसे बनती है, इसे वह इतना समझता है कि फिर फ़ुर्सत ही नहीं मिलती कि लोगों से मसखरी करे. बल्कि कोई अगर उन्नीस से बीस हुआ तो हरबन्स की ज़बान 'सूअर दा पुत्तर' से ही शुरू होती है. गाली सुनते-सुनते लोग इस क़दर अभ्यस्त हो गए हैं कि अब अन्दर से उतना फर्क़ महसूस भी नहीं होता. शुरू में अड़ियल क़िस्म के एक-आध लोग ऐसे थे जो गाली बरदाश्त नहीं कर पाए थे. उन्हें फिर यहां से छुट्टी ही कर लेनी पड़ी थी. यह उनकी तो खैर मजबूरी थी ही, हरबन्स की भी थी.

लेकिन एक भी मौक़ा ऐसा नहीं आया, जब जगतनारायण पर वह झल्लाया हो. न तो झल्लाया न मसखरी ही की. जगतनारायण का ठीक ग्यारह बजे काम पर आ जुटना और बिना रुके लगातार काम करते जाना इस आश्वस्ति के पीछ कारण हो सकते हैं लेकिन हरबन्स को लगता यही रहा कि यह आदमी आम दर्जे का है ही नहीं.

चाय वग़ैरह पीने की आदत जगतनारायण में कभी नहीं रही. काम करते-करते जब बहुत ज़्यादा थकान महसूस होने लगती, वह लाल कपड़े में लिपटे चांदी के डिब्बे को खोल कर पान का एक पत्ता मुंह में डाल लेते. फिर पीक उगलने के बहाने उठते तो बदन को तोड़-मरोड़ कर साधने से लगते. मुश्किल से उसमें दो-ढाई मिनट लगते. फिर वही खाता. आंखों पर गोल फ्रेम का ऐनक लगाकर काम में जुटे हुए जगतनारायण.

हरबन्स शायद आदमी को अन्दर तक घुसकर पहचान सकता है. इस ज़माने में ऐसा आदमी मिलता ही कहां, जिस पर भरोसा किया जा सके ! रुपए-पैसे का मामला है. कहीं इधर से उधर हुआ तो लेने के देने पड़ सकते हैं. खून और पसीना मिलाकर जिसने पैसे इकट्ठे किए हों, वह कम-से-कम यह तो बरदाश्त नहीं ही कर सकता.

रुपए-पैसे वाला काम हरबन्स को अपने ही जिम्मे रखना पड़ा था. आखिर में उसने एक बार कलेजे को मजबूत किया और जगतनारायण को बैंक भेज दिया. चेक से रुपए लेने थे. रकम चारेक हज़ार की थी. और जब तक जगतनारायण वापस आ नहीं गया था, हरबन्स बेचैनी में कभी तो सड़क के ऊपर जाकर खड़ा होता रहा, कभी अन्दर आकर गुरुनानक की तस्वीर का, भीख मांगने की मुद्रा में, मुआयना करता रहा. बीच में एक बार यह अहसास भी तेज़ हो गया था कि इतना बड़ा जोखम उठाकर उसने अच्छा नहीं किया. बल्कि उससे भी आगे खासी बेवकूफ़ी हो गयी.

जगतनारायण लौट आया तो उसकी जान में जान आई थी. ज़िन्दगी में पहली बार महसूस कर पाया था कि दुनिया में शरीफ़ आदमी भी होते हैं. फिर कम-से-कम एक आदमी पर यक़ीन करने लगा था हरबन्स.

फिर तो ऐसे भी मौक़े आए जब दुकान की पूरी तिजोरी की चाबी जगतनारायण के जनेऊ में बंधी रही है. लेकिन हरबन्स को फिर कभी फ़िक्र नहीं हुई.

इस बार मामला था तीन हज़ार रुपए बैंक से लाने का. जो आदमी लाखों रुपयों के बीच भी न लड़खड़ाया हो वह तीन हज़ार रुपए लेकर पत्ता काट लेगा, ऐसा अगर हरबन्स ने नहीं सोचा तो उस पर इल्ज़ाम नहीं लगाया जा सकता. जगतनारायण नहीं लौटे तो हरबन्स के दिमाग में सौ तरह की दूसरी बातें तो आई थीं लेकिन ग़बन का अन्देशा, ज़ाहिर है, सपने में भी नहीं था.

आखिर में हरबन्स सिंह अगले दिन 'पेशकार के घर' तक ख़ुद आया और विनायक के साथ देर तक गुमसुम बैठे रहा. हरबन्स ने दिलासा ज़रूर दे दिया था कि बात पुलिस तक नहीं जाएगी लेकिन विनायक की मां आंगन में बैठकर सिसकियां भर रही थी. आवाज़ हालांकि दबी हुई थी लेकिन घर में इतना सन्नाटा छाया था कि हरबन्स या तो अन्दाज़ लगा पा रहा था या अन्दाज़ लगाने की कोशिश कर रहा था.

जगतनारायण का पता ? इसे जानने के लिए 'स्कॉटलैंडयार्ड' के जासूसों की ही ज़रूरत पड़ेगी. न तो रुपए घर पर हैं, न जगतनारायण. विनायक को दफ़्तर में ज़रूरी काम था लेकिन आखिर में फिर छुट्टी ले ली थी. यह पहला मौक़ा है कि कुछ ऐसा घटित हो गया जिसके घटने की कोई उम्मीद नहीं थी. ज़िंदगी में ज़्यादातर चीज़ें वैसे उम्मीद के मुताबिक नहीं घटतीं, लेकिन उस पर इतनी परेशानी शायद ही किसी को होती होगी.

विनायक ने हरबन्स का चेहरा देखा. शुरू में उसे लगा, एक सूदखोर पठान अभी उसके गले में, अन्जाम की परवाह किए बिना, छुरी चला देगा. लेकिन बाद में महसूस होने लगा, वही शख़्स छुरा मारने की बजाय उस पर रहम कर रहा है.

अन्दर आंगन में मां के साथ रद्दो भी सुबकियां भर रही थी. जिस 'किक्कू' ने उसे इतना प्यार दिया, वह कभी एक दिन सब को भरे चौराहे पर नंगा कर कहीं खिसक जाएगा, ऐसा मन में आया भी था कभी ? लाड-प्यार में जगतनारायण का नाम अपनी बेटी की ज़बान पर इतना बदला कि फिर 'किक्कू' होकर ही रह गया था.

रद्दो को महसूस हो रहा था, उसका दिल एकदम रेगिस्तान-सा बन गया है. इस कदर खाली भी कोई हो सकता है और होकर ज़िन्दा भी रह सकता है, आखिर में इतना उसे मंज़ूर कर लेना पड़ा. अम्मा रो रही थीं लेकिन उसे लगा यही कि उसकी अपनी कसक इन्जन के पहिए की तरह सबकुछ बेरहमी से रौंद रही है.

अंदर बैठक में रुक-रुककर हरबन्स सिंह और विनायक के बीच कुछ-कुछ बातें हो रही थीं. लेकिन आंगन तक आने के लिए वह आवाज़ नाकाफ़ी थी.

जगतनारायण के नाम के साथ कभी इस तरह का कोई कलंक जुड़ जाएगा, ऐसा किसी ने सोचा तो ख़ैर नहीं था लेकिन मान-अपमान से आगे बढ़कर अब फ़िक्र होने लगा, उसके जीवित रहने पर. आज तक की तारीख़ तक जगतनारायण के दोस्त से दुश्मन बनने वाले लोग तो असंख्य होंगे लेकिन ऐसा शायद ही कोई होगा जिसने उसके चरित्र की सात्विकता पर शक किया हो. सारा का सारा मामला इतना रहस्यमय लगा, कुछ भी यक़ीन करना मुश्किल हो गया. न तो कुछ यक़ीन किया जा सका, न यह मसला रहस्यमयता से ही मुक्त हो पाया.

हरबन्स सिंह ने आखिर में अपने साफ़े को कसा. उठ खड़ा हुआ और चलने लगा. ज़ाहिर हो गया, रुपयों की तकलीफ़ उसे इतना सता रही है कि व्यवहार की मामूली सौजन्यता भी अब खत्म हो गयी. उसका एकदम से चले जाना विनायक को सालता हुआ लगा था. फिर इस मशहूर 'कौशल्या भवन' में सन्नाटा छा गया. हर

कोई अपनी-अपनी जगह बुत बना रहा. इस सन्नाटे के बीच अगर किसी की सुबकियां भी होतीं, माहौल शायद इतना खतरनाक न लगता. उस माहौल में हर प्राणी जैसे अपनी-अपनी भूमिका के इंतज़ार में था.

●●

पूरा हफ़्ता बीत गया लेकिन जगतनारायण का कुछ भी पता नहीं चला. वैसे मुहल्ले में यह ख़बर उड़ी—वह रात के सन्नाटे में घर आते हैं और सुबह होने से पहले ही कहीं और जाकर छिप जाते हैं. जो अफ़वाहें उड़ीं, उनका कोई एक क्रम नहीं था. बल्कि यों कहना चाहिए कि उनका कोई क्रम ही नहीं था. जगतनारायण के नाम के साथ फिर जाम और औरत के गोश्त का सिलसिला भी जुड़ा. बात दरअसल यों है कि ऐसे एक चरित्र की कल्पना से दिमाग को जो सनसनी महसूस होती है, वह बेश-कीमती है.

'कौशल्या भवन' तक ये अफ़वाहें कभी पूरी-की-पूरी, कभी कटकर पहुंचती रही हैं. वे सब कलेजा थामकर सबकुछ सुनते रहे हैं. पूरे घर में एक फैलता हुआ अन्धेरा छा गया था. एक ऐसा अन्धेरा जिसमें आदमी की उपस्थिति का पता तो चलता है लेकिन उसका चेहरा पहचान में नहीं आता.

डाक का वक्त होता तो पूरे घर का हर कोई सांस रोककर इंतज़ार करता. लेकिन डाकिया सीधे निकल जाता तो माहौल में फिर वैसा ही सन्नाटा तैरने लगता. फिर वे सब अगले दिन के इंतज़ार में वक्त को हिस्सों में बांटते रहते.

●●

पहले से ही तारा को दिल का मर्ज़ था. इसका इलाज वगैरह जितना होना चाहिए उतना पैसे की तंगी की वजह से ज़रूर नहीं हो पाया था लेकिन जगतनारायण का ध्यान पूरा इस बात पर रहता कि इस अभागिन पर कम-से-कम कोई जुल्म न हो. विधवा होने के बाद तारा जैसे जड़ भी हो गई थी. कभी कोई बात उन्नीस से अगर बीस भी हो जाती वह कई दिनों तक बिस्तर पर ही पड़ी रहती. घर के काम में हाथ बंटाने के बाद का वक्त वह छज्जे पर बैठकर काटती या अन्दर के बरामदे पर चुप-चाप बुत-सी बैठी रहती. घंटों बीत जाते लेकिन इतना भी जाहिर नहीं होता, वह सांस भी ले रही है या नहीं.

जगतनारायण की इस अप्रत्याशित घटना से तारा नहीं रोयी थी. रोयी नहीं थी या एक लम्बी सांस भी नहीं भरी थी. आखिर में उसने चारपाई पकड़ ली थी. विनायक ने दवा दी तो उसने शुरू में नहीं खाई. आखिर में रहो उसे ज़बरदस्ती खिला ज़रूर देती लेकिन उसका कुछ भी असर नहीं हुआ. दो-एक बार विनायक सामने भी आया कि समझाकर कुछ कह-सुन लेगा. लेकिन तारा का खाली चेहरा देखने के बाद सारी की सारी हिम्मत जवाब दे जाती.

जगतनारायण पिछले दिनों कई बार कहते रहे हैं—कहीं से कुछ रुपए आएं तो तारा के इलाज के इंतज़ाम में वह पैसा लगाया जाएगा. जगतनारायण की फ़िक्र इस बात पर बहुत-ज्यादा थी कि उसे अभी पहाड़-सी ज़िन्दगी काटनी है. कई बार ऐसा होता रहा है कि तारा के सामने वह एकदम से उदास हो जाते. ऐसा ज़रूर नहीं था कि जगतनारायण अपनी परेशानी का इज़हार करते रहे हों लेकिन तारा के लिए उन्हें कितनी तकलीफ़ थी, इतना नलिनाक्ष भी जानता है.

···लेकिन हर तरफ़ से उदासीन रहने वाला नलिनाक्ष भी इतना यक़ीन नहीं कर पाया था कि जगतनारायण के मन में कोई ग़ैर-मुनासिब इच्छा जनम ले रही है. खासतौर पर जो आदमी हमेशा कुल, परम्परा और वंश मर्यादा की बात करता रहा

है, उस पर परिवार के लोगों से लेकर बाहर डोम-चमारों तक हरेक को समझाता रहा है, वह नीचे से अपनी ही जड़ काट सकता है, ऐसा कोई नहीं सोचता था.

तारा का जड़ होना, किस तकलीफ़ का पर्याय है, इतना समझने के लिए किसी भाषा की ज़रूरत नहीं पड़ती. विनायक यह समझता तो है लेकिन आखिर तक फ़ैसला नहीं कर पाता कि उसे समझाने के लिए कौन-सा माध्यम ज्यादा मुनासिब हो सकता है. कई बार उसे महसूस होता रहा है कि रात को एकदम से नींद खुलने के बाद तारा छत पर चली गई है. ऐसे में अगर वह छत से कूदकर खुदकशी कर ले, कम-से-कम विनायक को ताज्जुब नहीं होगा.

आखिर में विनायक दवा देने के बहाने उसके साथ बैठ गया था—बातें समझने की नहीं हैं, समझाने की हैं. वह समझ नहीं पा रहा था कि क्या कहा जा सकता है···

तारा शायद सुन रही थी. या वह कुछ भी सुन नहीं रही थी. दोनों हालतों में एक बहुत बड़ा फ़र्क तो है लेकिन उसके चेहरे से इस बात की व्याख्या नामुमकिन थी. आखिर तक वह कुछ भी नहीं बोली थी. जैसी कि उसकी आदत है, पल्लू को उठाकर आंखों के नीचे के हिस्से तक ढांप लिया था. आंखों की दृष्टि में जो शून्यता थी, वह बहुत पुरानी है. वैधव्य के साथ ही यह भी शुरू हुई थी. लेकिन इस बार की शून्यता में कुछ अपरिभाष्य-सा था.

विनायक उठ खड़ा हुआ था. उठते वक्त यही महसूस हुआ था, शब्द कितना कमज़ोर माध्यम हैं···

●●

इक्कीस दिन इसी तरह गुज़ारने के बाद एक दिन रात को तारा की सांस चढ़ी तो सुबह होने से पहले ही उसका समूचा जिस्म ठण्डा पड़ गया. विनायक ने शुरू में अपने बैग से दवा दी थी फिर कुतुबखाने से एल्योपैथ डाक्टर ले आया था. लेकिन वह समझ गया था, तारा अब इन घेरों में रहने वाली नहीं है.

तारा की लाश देखकर वह बर्फ़ की तरह तो हो रहा था लेकिन आंखें बिलकुल सूखी रहीं. तारा की नियति उसे मालूम ही थी, यह कहने के लिए जिन तथ्यों की ज़रूरत है वे विनायक के पास नहीं हैं. लेकिन उसकी नियति के अनुमान में कुछ सोचने के लिए बहुत ज्यादा तथ्य या कल्पना की जरूरत नहीं पड़ी थी.

नलिनाक्ष की उदासीनता शायद पहली बार टूटी थी. वह विलाप में सर फोड़ सकता है, ऐसा अब तक किसी कल्पना में ज़रूर नहीं था लेकिन लोगों ने देखा यही.

नलिनाक्ष अपने इष्ट के सामने एक लम्बे अरसे तक क्या बुदबुदाता रहा है, इस बारे में किसी ने न तो मगजपच्ची की न समझने की कोशिश ही. लेकिन कोशिश न करने के बावजूद 'कौशल्या भवन' का हर कोई इतना समझ गया था कि उसके पास अपने आस-पास को महसूस करने की ताकत अब रह ही नही गई. पूरे घर में उसका अस्तित्व इस से ज्यादा कभी नहीं बन पाया था कि वह एक जीवित प्राणी है. लेकिन उसके उस 'जीवित प्राण' में सुख-दुःख की भी फसल उगती है, ऐसा और तो और उसे ज़न्म देने वाली मां ने भी नहीं सोचा.

तारा की मौत से ज्यादा प्रभावकारी अगर कुछ था तो वह था नलिनाक्ष का विलाप और विनायक का जड़ होना. अगर इस वक्त कहीं से एकबारगी जगतनारायण आ जाते तो अपने दोनों बेटों को इन चरम स्थितियों में देखकर वह शायद हक्के-बक्के रह जाते.

विनायक ने मां की तरफ़ देखा तो डर-सा गया. तारा के शव के साथ उनका सादृश्य इतना ज्यादा था कि उसके अन्दर का खून एकदम से ठण्डा पड़ने लगा था. कुन्ती बुआ और उनकी दोनों लड़कियां तारा की चारपाई पकड़े सुबकियां भर रही थीं.

समूचा घर खचाखच भरा था.

उस भीड़ में बिद्दानिवास पंडित से लेकर मुरारी डाक्टर तक हर कोई था.. मुरारी डाक्टर ने विनायक को कंधा छूकर तसल्ली दी थी. एक कोने में हरबन्स भी खामोश खड़ा था.

विनायक ने भावुकता को अपनी ज़िन्दगी में कभी प्रश्रय तो खैर नहीं दिया लेकिन उस वक्त उसे लगा यही कि तारा इतनी भीड़ नहीं सह सकती.

●●

तारा की विदाई के साथ 'कौशल्या भवन' एक सर्द खामोशी से भर गया, जगतनारायण के गायब होने से लेकर तारा की मृत्यु तक की असंख्य घटनाओं के बीच न तो कोई एक सिलसिला था, न तालमेल. लेकिन तारा नहीं जिएगी, इतना विनायक को महसूस होने लगा था. उसने अपने आपको बहुत बड़ी निष्ठुरता से मार डाला था. इस तरह की ज़िन्दगी न जी पाना उसकी मजबूरी थी, दोनों में सच क्या है यह अगर मालूम भी हो गया तो भी बुनियादी तकलीफ़ बदल नहीं जाएगी. विनायक को लगा, तारा बहुत जल्द मर जाने के लिए ही पैदा हुई थी. इन सारी बातों में कितनी भावुकता है और कितना यथार्थ यह सवाल फ़िलहाल बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है. इस हक़ीक़त से ज्यादा महत्त्वपूर्ण कुछ और हो भी क्या सकता है कि जन्म-मृत्यु के इस व्यवधान के बीच तारा ने मरकर साबित किया कि इस पूरे घर में उसका भी एक अस्तित्व था. इस अस्तित्व के लिए जगतनारायण के मन में हमदर्दी थी. लेकिन हमदर्दी की ज़रूरत न तो तारा को थी, न यह पाकर इसके विरोध में ही वह कुछ उजागर कर पाई थी. 'कौशल्या भवन' के बाकी लोगों में चाहे विनायक हो चाहे नलिनाक्ष तारा सिर्फ़ एक नाम थी. वजह चाहे कुछ भी हो सिर्फ़ एक नाम बनकर जीने के लिए अपने को जितना उदासीन बनाना पड़ता है, उतना वह खुद को बना नहीं पाई थी. विनायक की एक-एक पल की व्यस्तता और नलिनाक्ष की उतनी ही तीव्र निर्लिप्तता के बीच उसे अपने होने की कीमत कभी नहीं मिली, यह अब एक सालता-सा तथ्य हो गया. विनायक ने अपने को और भी ज्यादा मजबूर महसूस किया कि इस तथ्य को समझने के बावजूद उसे कभी भी इतनी सामर्थ्य नहीं मिली कि कुछ कर सके.

कभी अगर बिद्दानिवास पंडित रास्ते में विनायक को मिल जाते तो ईश्वर की तो खैर नहीं, गीता के कर्मयोग की चर्चा ज़रूर शुरू करते. उन बातों में से ज्यादातर शब्द न तो उसे तेजी से पकड़ने वाले लगते न कन्नी काटकर खुद को निकाल ले जाने लायक ही. बातें कोई करता तो बस वे एक आवाज़ बनकर कानों में गूंजने-से लगते.

बिद्दानिवास आखिर में स्वीकार करते—ले-देकर हम तो हुए साधारण प्राणी ही. साधारण प्राणी के इस समाज में कर्मयोग प्रेरणा तो दे सकता है लेकिन कभी भी फलीभूत नहीं हो सकता. बिद्दानिवास अपनी बात समाप्त कर विनायक के चेहरे की तरफ़ देखने लगते. इस चेहरे की भाषा इतनी गड्डमड्ड लगती कि न तो कुछ साफ़ ज़ाहिर होता न उस बारे में कुछ अन्दाज़ा ही लगाना नामुमकिन होता.

बिद्दानिवास निराश तो खैर नहीं होते लेकिन थोड़ी देर के लिए कातर ज़रूर हो जाते. सारा कुछ समझ चुकने के बावजूद यह समझ में नहीं आता कि घट रही घटनाएं विनायक के साथ रिश्ता क्या रखती हैं ?

●●

तारा की मौत के बाद न तो मुरारी डाक्टर ने, न नौरंगी वकील ने ही कोई जलसा बुलाया. भगीरथ के 'होटल' का जमाव पहले जैसा ज़रूर रहा लेकिन कम-से-कम उसमें 'कौशल्या भवन' को लेकर अफ़साने नहीं गढ़े गए.

विनायक ने हफ़्ते-भर की छुट्टी ली थी, लेकिन तीसरे दिन से ही दफ़्तर में हाज़िर होना पड़ा. कारखाने में मालिकों की तरफ से या मज़दूरों की तरफ़ से या दोनों ही तरफ से कुछ ऐसी हालत आ गई थी कि ऐसे में कम-से-कम कोई काम नहीं हो सकता. कभी हालत ऐसी हो जाती कि असली तथ्य का पता करना आसान नहीं रह जाता. लेकिन वह इतना ज़रूरी होता है कि उसके बिना एक भी क़दम बढ़ाना मुमकिन नहीं होता.

ख़ैर, वह फिर दफ़्तर चला गया था,

आख़िर में लगने यही लगा था, बिद्दानिवास पंडित निर्लिप्त भाव से कितना बड़ा सच बोल गए. इससे बढ़कर सच्चाई और हो भी क्या सकती है कि हर घटना से बड़ी कोई दूसरी घटना होती है जो अगर अभी तक घटी नहीं है, किसी भी वक़्त घट सकती है. और उसके कारण इतने बड़े होते हैं कि पीछे का सबकुछ अपने आप ही ढक जाता है, छोटा हो जाता है.

'बरेली होम्यो क्लिनिक' भी सिर्फ़ तीन ही दिन बन्द रहा था. तीन दिन गज़रते ही उसके दरवाज़ों के पलड़े खुल गए थे.

मुरारी डाक्टर और परसोराम कभी आते और मरीज़ों की भीड़ के सामने एक-दम से बोल पड़ते—कुछ अपना भी ख्याल किया करो भाई, तुम नेकर पँनते थे तबसे तुम्हें जानता हूं. सो तुम्हारे लिए कलेजा जलता है. चाहो तो यकीन नाय करना मगर है जे सच्चाई ही.

विनायक सिर्फ़ मुस्करा पड़ता. दवा बांधने से लेकर मरीज़ देखने तक का हर काम जिसे अपने आप निबटाना पड़ता है, उसके लिए मुस्कराहट के अलावा बात उगलने की फ़ुर्सत हो सकती है कभी ? न हो तो बाबा इस झंझट में फंसते ही क्यों हो ? परसोराम के मन के अंदर यही एक सवाल सांप की तरह फन उठाता है. फन उठाता और फुफकारता लेकिन करीने से वह एक मुस्कराहट बिखेरकर मुरारी के साथ बाहर निकल जाते.

रद्दो एकदम से दौड़ी-दौड़ी आई थी.

विनायक दवा का बैग उठाकर उसके साथ भागा. बुआ अचेत पड़ी थी. चेहरे का रंग लगभग सफ़ेद हो रहा था. पूरा घर घबराया हुआ था. ख़ास करके उनकी दोनों लड़कियां.

सिर्फ़ एक ही वहां नहीं था—नलिनाक्ष. बाकी लोगों को देखकर लगा, अब वे किसी भी वक़्त सर पीटना शुरू कर सकते हैं.

विनायक ने दवा निकालकर बुआ के मुंह के अन्दर डाल दी थी. रद्दो रसोई से देगची में पानी गर्म कर ले आई थी. दुर्गा उसे बोतल में भरकर बुआ के पांवों को तपाने की कोशिश कर रही थी. वैसे सामने वाले सिपाहीलाल के यहां रेलवे-हास्पिटल से चुराई हुइ एक रबड़ की बोतल भी थी, लेकिन विनायक की वजह से दुर्गा को मांगना मुनासिब नहीं लगा था.

आधे घंटे बाद तक होश तो ख़ैर उन्हें नहीं आया था लेकिन विनायक आश्वस्त हो पाया था. शरीर का ताप संतुलन में लौट रहा था और आंखों की पुतलियां उतनी सफ़ेद-सी नहीं लग रही थीं.

समूचे घर में इस क़दर उत्कंठा छा गई थी कि देर तक लोगों को यह याद ही

नहीं रहा कि इसी घर से कुछेक दिन पहले एक जरूरी आदमी गायब हो गया.

●●

घर में गुज़ारने के लिए विनायक का वक़्त ? सोने के लिए जितना वक़्त देना पड़ता है उसके अलावा शायद ही कभी कोई वक्त वह दे पाया हो. इसके बावजूद घर में क़दम रखते ही महसूस होने लगता, पूरे माहौल में तनाव छाया है. यह तनाव कुहासे-जैसा लगता. याने सामने का सबकुछ दिखाई तो पड़ता है लेकिन उन्हें ठीक-ठीक पहचान लेना नामुमकिन-सा लगता. आस-पास कहीं कुन्ती बुआ नहीं भी दिखाई देती, फिर भी उसे महसूस यही होता है, किसी भी कोने से एकदम से वह सामने आकर प्रकट हो सकती है. चीख-चिल्लाकर मिज़ाज को सातवें आसमान पर चढ़ा सकती है.

कुन्ती आखिर में एक आदत में बदल गई थी. इस आदत को सहने के लिए जितनी ताक़त की जरूरत है वह किसी में शायद ही रही हो लेकिन मजबूरी के सामने हर कोई आखिर में झुका ही था. सिवाय बालेश्वर के. बालेश्वर या तो मां से बात नहीं करता या फिर मां को ही नानी याद करा देता. इन दो स्थितियों के अलावा बालेश्वर किसी तीसरी स्थिति में कभी नहीं देखा गया.

सिग्रेट पीने की आदत बालेश्वर की शुरू में थी. अब चरस की ज़रूरत पड़ती है. बालों की लम्बाई कंधों तक आ पहुंची. कपड़ों की चितकबरी आकृति, चेहरे पर एक खीझ, आंखों के ऊपर चांदी के तार का रंगीन चश्मा—इन उपकरणों से वह जैसा लगता है, वह स्पष्ट है. कभी-कभी जब वह बहुत ज्यादा ऊब जाता, हिन्दुस्तान छोड़कर योरोप या अमेरिका जाने की योजना किसी-न-किसी को सुना ही डालता.

हाईस्कूल के इम्तहान में वह तीन बार बैठा था. तीसरी बार नक़ल करते वक्त पकड़ लिया गया. जिस इनविजिलेटर ने पकड़ा, उसकी खोपड़ी में हाकी की मार सहने की ताकत शायद औरों के मुक़ाबले काफ़ी ज्यादा थी. लिहाज़ा तीन महीने हॉस्पिटल में बिताकर वह घर लौट सका था.

बालेश्वर की पढ़ाई का वहीं अन्त था. कुन्ती ने ज़िद की थी कि वह मध्य प्रदेश बोर्ड से प्राईवेट इम्तहान दे, पास हो ताकि इस कुल में कम-से-कम मैट्रिक ही सही, एक आदमी कुछ तो पढ़ा-लिखा हो. लेकिन उसने होंठ बिचका लिए थे. याने इस फ़ालतू पढ़ाई से सिर्फ़ क्लर्क बना जा सकता है. बालेश्वर नाम का जो प्राणी है, वह क्लर्क बनने के लिए पैदा नहीं हुआ था.

---ओ गॉड ! बालेश्वर आख़िर में अपना सर पीट लेता.

कुन्ती बेटे की बातें कितना समझ पाती, कहना कठिन ही होगा. लेकिन उसे इस बात पर गर्व महसूस होता है कि उनका बेटा फर्राटे से अंग्रेजी में बोल सकता है. इस पूरे मुहल्ले में एक भी आदमी नहीं मिलेगा जो अंग्रेजी में तड़ाके की बोली ज़बान से झाड़ सकता हो.

कई बार बालेश्वर रात-रात भर घर से गायब रहता और जब धूमकेतु की तरह एकदिन वापस आता, आंखों में सुर्ख़ डोरे झूलने लगने. बदन से इस क़दर बदबू निकलती कि कुन्ती नाक पर साड़ी का पल्लू रख लेती.

जगतनारायण ने बालेश्वर को कई बार समझाने की भी कोशिश की थी. उस वक्त वह अपनी मुद्रा इस क़दर दयनीय बना लेता गोया अपने किए पर सचमुच उसे दिल में पछतावा हो. फिर जगतनारायण वहीं हटते और कुन्ती सामने आती तो वह अपने बुनियादी चरित्र पर लौट आता. चेहरे की पेशियों को सिकोड़कर इतना ख़तर-नाक बना लेता कि कुन्ती का यक़ीन डगमगाने लगता कि यह उसी की कोख से जन्मा

बेटा है, उस वक्त वह सचमुच डर जाती. गुस्सा तो ख़ैर नहीं आता लेकिन दिल इतना भारी महसूस होता कि सांस लेना तक दूभर हो जाता.

इस घर में बालेश्वर की अगर किसी से पटती है तो वह सिर्फ़ नलिनाक्ष है. कभी-कभी पूरा माहौल एकदम से बदल जाता जब सुनने में आता, बालेश्वर पूरी आवाज़ में कोई 'बिलायती गाना' गा रहा है और नलिनाक्ष उसी कमरे में पिन-पिना कर दुर्बोध्य लहजे में पूजा का मंत्र उच्चारित कर रहा है. इन दोनों के बीच तालमेल कहां है, कोई शायद नहीं बता पाएगा लेकिन यह हक़ीक़त है. बन्द कमरे के बीच वे दोनों एक ही आसन में हैं या अलग-अलग जगह, यह मालूम होना मुमकिन नहीं है. लेकिन यह कार्यक्रम जब देर तक चलता रहता तो आख़िर में यह यक़ीन करने के अलावा कोई दूसरा चारा भी नहीं रहता कि नलिनाक्ष और बालेश्वर एक-दूसरे को समझते हैं.

नलिनाक्ष को अंग्रेज़ी ख़ास नहीं आती. बल्कि यों कहना चाहिए बिल्कुल ही नहीं आती हालांकि स्कूल के दिनों में अंग्रेज़ी पढ़ना लाज़िमी था. और बालेश्वर को अगर कोई ज़बान पसंद है तो सिर्फ़ अंग्रेज़ी. यह दूसरी बात है कि उसकी अंग्रेज़ी का न तो कोई व्याकरण होता न कोई पद्धति. लेकिन आख़िर में उसकी आदत यही बन गई थी कि कोई अगर हिन्दी में कुछ कहता तो पहले तो वह नाक-भौंह सिकोड़ता फिर हिन्दी में जुमलों का उच्चारण इस तरह करता गोया उसकी हिन्दी सीखने की कोशिश में कहीं भी कोई खोट नहीं है. आख़िर में सुनने वाले को यह अहसास हो ही जाता कि हिन्दी बोलकर बालेश्वर ने सचमुच ख़ासी मेहरबानी की है.

कुन्ती की बालेश्वर से भले ही कभी न पटी हो लेकिन अन्दर से उसे इस बात पर नाज़ रहा है कि उसका बेटा औरों से एकदम अलग है. जब भी कुन्ती कुछ समझाने की कोशिश करती वह 'बिलायती बोली' में इस तरह दहाड़ने लगता कि कुन्ती के सारे हौसले पस्त···

पिछले हफ़्ते वह दो रातों के लिए गायब रहा तो मालगोदाम का वही काशी चमार कुन्ती को चुपके-से एक गुप्त ख़बर दे गया था. काशी चमार की अपनी आदत भले ही कुछ हो लेकिन उसमें ख़ासियत यह है कि अगर वह गुनाह करता है तो दस जनों के सामने कबूल भी कर लेता है. और इससे भी आगे उसकी यह ख़ासियत वाक़ई क़ाबिले तारीफ़ है कि उसकी बातों पर यक़ीन न करने की कोई वजह नहीं होती.

काशी जो ख़बर लेकर आया था, वह थी तो सिर्फ़ कुन्ती के ही लिए लेकिन सुना था बाक़ी लोगों ने भी.

···बालेश्वर क्या नहीं है. इसकी जानकारी सही-सही भले ही किसी के पास न हो लेकिन वह क्या है इस बारे में जानने-समझने के लिए किसी कल्पना की ज़रूरत किसी को नहीं पड़ती. लेकिन चरम तक पहुंचने के बाद वह पचास बरस की एक बदनाम औरत को कुछेक दोस्तों के साथ अपना कैशोर्य देगा, यह सोचा था किसी ने ? जिस औरत का ज़िक्र काशी ने किया था, उसे 'कौशल्या भवन' के दूसरे लोगों ने कभी देखा ज़रूर नहीं था लेकिन वह मशहूर थी. सुनने में यही आता है, उससे एक-से-एक माने हुए बदमाश भी डरते हैं.

कुन्ती पथरा गई थी.

पूरे घर में एक सन्नाटा-सा छा गया था. नलिनाक्ष को इस बात की जानकारी किसी ने शायद नहीं दी थी. लेकिन दी भी जाती तो शायद उसमें कोई फ़र्क नहीं आता. वह आंखें फाड़ सामने की तरफ देखता रहता सिर्फ़.

●●

ख़ैर. पाठक, बालेश्वर इस कहानी में कितना सहभागी है, मेरे लिए यह

महत्वपूर्ण नहीं है. मेरे लिए तो यह सिर्फ़ एक सत्य है कि बालेश्वर का होना पूरी कथा में एक उपस्थिति है. दरअस्ल मैंने बात शुरू की थी कुन्ती और बालेश्वर के रिश्ते से.

वह रिश्ता किस रंग में या किस भूमिका में था, इसकी व्याख्या की जिम्मेदारी आप पर सौंप रहा हूं.

बात दरअस्ल यूं थी कि कुन्ती बेहोश हुई थी और बालेश्वर किसी 'बिलायती गाने' की धुन की सीटी बजाते हुए आ घुसा था. उसके चेहरे का रंग इस वक़्त बहुत ज़्यादा स्याह लग रहा था. स्याह और भारी. आंखों की कोरों का रंग बदला हुआ था. पुतलियों में शायद ख़ून इकट्ठा हो गया था.

अन्दर आया तो आधे मिनट के लिए उसने सीटी बजाना बन्द किया, मां के अचेत शरीर को देखा. तब चेहरे की शिकनें ज़रूर उभर आयी थीं.

उसकी टांगें भी शायद कांप रही थीं. आख़िर में उसके चेहरे की पेशियां इस-क़दर बदल गईं कि लगा, वह निर्लिप्त है. फिर से उसने सीटी बजाना शुरू कर दिया था. सीटी बजाते हुए वह निकला और नलिनाक्ष के कमरे में घुसकर एकदम से ज़मीन पर बैठ गया. नलिनाक्ष की कोठरी में घुसने से पहले हर कोई अपने पैरों से चप्पल या जूते उतार लेता है. लेकिन यह नियम बालेश्वर के लिए कभी नहीं लागू हुआ. लागू नहीं हुआ और नलिनाक्ष ने कभी भी बुरा नहीं माना, ऐतराज़ नहीं किया.

बालेश्वर कमरे से निकल गया तो माहौल एकदम भारी-सा लगा. आखिर तक किसी को साफ़-साफ़ यह समझ में नहीं आया कि कुन्ती की बेहोशी के पीछे असली वजह क्या है ?

जगतनारायण से कुन्ती का लगाव अन्दर से कितना था और कितना नहीं था, किसी को नहीं मालूम. अपने भाई के लिए कभी-कभी वह बहुत भावुक ज़रूर होती रही है लेकिन ऐसे भी वक़्त रहे हैं जब वह उसी आदमी को हर तरह से बेइज़्ज़त भी करती रही है.

जगतनारायण पर इसका असर शायद कुछ पड़ा हो या फिर नहीं ही पड़ा हो. लेकिन बाहर से वह निर्विकार ही लगते थे.

ऐसे में जगतनारायण का एकदम गुम हो जाना और बालेश्वर के बारे में एक नई अंधेरी ख़बर, दो ऐसे सिलसिले हैं जो कुन्ती को बेचैन तो करते रहे हैं लेकिन किसकी भूमिका ज़्यादा थी, यह शायद वह ख़ुद भी नहीं बता पाएगी.

तारा मरने से पहले कभी-कभी अपनी ख़ामोशी तोड़ती और लगातार बोलती रहती. आख़िर के दिनों में उसका साथी था बालेश्वर. बालेश्वर के मन में तारा के लिए कितनी ममता थी यह न तो वही जान पाया न तारा ही कुछ समझ पायी. लेकिन आख़िर में तारा को यह लगने लगा था, उसकी जो तकलीफ़ें हैं, बालेश्वर तक पहुंचकर ही समाप्त होती हैं, बल्कि एक तरह से यही लगने लगा था, बालेश्वर ही उसके सफ़र का आख़िरी पड़ाव है.

यह सब वैसे बिना किसी भूमिका के ही हुआ था. अब तक तारा और बालेश्वर की बुनियाद के बीच इतना फ़र्क़ रहा है, किसी तीसरे को कभी यह नहीं महसूस हुआ कि इसे पाटा भी जा सकता है. पाटने की ज़रूरत भी शायद ही किसी ने कभी महसूस की हो. एकआध मौके के अलावा तारा और बालेश्वर के बीच कभी बातचीत हुई है क्या ?

लेकिन अपने आख़िर के दिनों में तारा तो ख़ैर बदली ही थी, बालेश्वर भी तारा के लिए एक नया बालेश्वर हो गया था. जगतनारायण की ग़ैरमौजूदगी इन दोनों के बीच किस ताप से अंकुरित हो रही है, इसका पता लगाना मुमकिन नहीं था.

दुनिया में दरअस्ल होती ही कुछ चीज़ें ऐसी हैं कि उनकी गहराई का पता नहीं चलता. बालेश्वर की मां ने इस पता न लगने को भगवान की मर्ज़ी की तरह ही कुछ मान लिया था.

कुन्ती की कुछ आशा बंधने लगी थी. लगा था, बालेश्वर अब शायद अच्छा हो जाएगा. लेकिन फिर खुद तारा ही चली गई. तारा की मौत से बालेश्वर अन्दर से किस जलन को झेल रहा था, उसे कुन्ती भी नहीं जानती. लेकिन वह एक बार भी नहीं रोया. घर में सब सर फोड़ रहे थे. लेकिन वह विनायक की ही तरह निस्पंद था. आख़िर में तारा को जला कर लौटा तो उसका जिस्म भट्ठी की तरह तपा हुआ था.

●●

कुन्ती का होश लौट आया था.

विनायक ने दवा के बैग में से गोलियां निकाली और उसके मुंह के अन्दर डाल दी.

कुन्ती की आंखों की कोरों से खारा पानी निकलने लगा था फिर. वैसे उसके होंठ नहीं थरके थे, विलाप की छोटी-सी आवाज भी गले से नहीं निकली थी. वह खुली हुई खिड़की के रास्ते बाहर की तरफ़ देखती रही आख़िर में.

विनायक ने चाहा कि कुछ पूछे लेकिन नहीं पूछा. गला इतना भारी लग रहा था कि ऐसे में कुछ पूछना भी आसान नहीं रह जाता. विनायक को लगा, बुआ सामने के ज़र्द आसमान में कुछ खोज-सी रही है. उस तलाश में जगतनारायण का गुम होना ही तारा की मौत है बालेश्वर का अंधेरी खोह में घुसना है. ये तीनों सिलसिले इस तरह गड्डमड्ड हो गए होंगे कि तमाम कोशिशों के बावजूद अलग नहीं किए जा सकते.

कुन्ती ने आख़िर में विनायक की आंखों की तरफ देखा. जिसका बाप अचानक एक दिन बिना किसी इत्तिला के गायब हो गया, वह अब भी इस कोशिश में है कि इस 'कौशल्या भवन' की दीवारें न टूटें. उसने चाहा कि विनायक को पकड़े और झकझोर दे—तूने अभी तक किसी से शिकायत क्यों नहीं की ?

विनायक शायद समझ गया था, कुन्ती बुआ क्या सोच रही हैं. आख़िर में वह कमरे से बाहर आ गया था.

काफी रात हो गई थी. इस बार अंधेरा काफ़ी ठोस लगा.

बालेश्वर ज़मीन पर औंधा होकर सो रहा था. उसकी क़मीज़ और पतलून इस क़दर गन्दी थी कि उबकाई-सी आ रही थी. लेकिन नलिनाक्ष बगल में बैठकर निर्विकार-सा पूजा का कोई दुरूह मन्त्र बोल रहा था. वह आवाज़ 'कौशल्याभवन' की दीवारों में टकराकर चारों तरफ छाए अंधेरे में घुलती रही. उसका साक्षी विनायक के अलावा कोई और नहीं था.

●●

मैनासेन जल गई थी.

विनायक कारखाने से बस लौटा ही था. वह अन्दर, आंगन में चारपाई पर

अधलेटा-सा चाय पी रहा था, अखबार के पन्ने पलट रहा था. भगीरथ एकदम से तूफान की तरह सामने आ गया था—फ़ौरन चलो बिन्नू बाबू, नाय तो नैनामेम गई. आखिर में उसका सांस फूल रही थी.

विनायक ने चाय का प्याला नीचे रखा, अखबार को आंखों के सामने से हटा लिया. फिर भगीरथ ने एकदम से क्या कहा, समझने की कोशिश की.

भगीरथ उसी तरह बड़बड़ाता रहा—मैं कोई फारसी बोल रिया हूं ? दामोदर लुहार की लौंडिया नैनामेम जल गई. अब दवा का बक्सा उठाओ और दौड़ो होंआ.

विनायक ने थोड़ी ही देर पहले अपनी कमीज उतारी थी. वह सामने की दीवार पर झूल रही थी. फिर वह उठ खड़ा हुआ, उसे कंधे पर रखा और लगभग भागकर अन्दर से दवा वाला बैग उठा लाया. सड़क पर आ गया तब भी, कमीज कंधे पर ही थी. फिर भगीरथ ने बैग संभाला और उसने कमीज पहन ली.

—शुकर करो जो मैं होंआ से निकल रिया था. एकदम से 'इशटोब' के फटने की आवाज़ आई फिर नैनामेम की चीख भी सुनी. मैं तो फिर जे समझो छलांग मारके ऊपर की कोठरी में पऊंचा, हां. भगीरथ बहुत जल्दी-जल्दी सांस ले रहा था.

विनायक चुप था. सिर्फ कदमों की रफतार पहले से कुछ और बढ़ गई थी. भगीरथ पीछे पड़ गया था फिर.

—वैसे है कोई माजरा ही. भगीरथ अपनी आवाज बहुत नीचे उतार लाया और लगभग फुसफुसाने-सा लगा—'इशटोब' ऐसे थोड़े ही फटता है. लगता है फिरंगी ने कुछ उन्नीस से उनतालीस कर दिया होगा. क्यों ?

विनायक शुरू में कुछ नहीं बोला था.

भगीरथ ने उसे कुहनी से धक्का-सा मारा तो वह चौंका—आं ?

भगीरथ को अचम्भा हो रहा था. उसने होंठ उलट लिए थे—तुम तो बिन्नू बाबू एकदम शायर हो. एक फिलम देखी थी, उसमें भी एक शायर रिया. बिल्कुल तुम्हारे जइसा. दुनिया से न कुछ लेना, न कुछ देना. लेकिन देखो, ऐसे जिन्नगी नाय चलने की.

भगीरथ की नसीहत से इसबार विनायक हंसा.

—हां चाहे मसखरी कर लो चाहे हंस लो. पर देख लेना. भगीरथ की बात निकलेगी सच्ची ही, हां. क्या समझे ? भगीरथ को उम्मीद थी, विनायक उसकी नसीहत पाकर कम-से कम कुछ समझदार तो हो ही गया होगा.

विनायक कुछ नहीं बोला.

भगीरथ निराश-सा हो रहा था. आखिर में उसने नए सिरे से सिलसिले को पकड़ने की कोशिश की—मैं कै जे रिया था, वो फिरंगी है न, जित्ता सीधा दिखता उत्ता सीधा नाय है, हां.

विनायक ने संक्षिप्त-सा उत्तर दे दिया—अच्छा. जवाब इतना हल्का था कि न ऊधव का लेना, न माधव का देना.

भगीरथ ने भौंहें सिकोड़ कर विनायक की तरफ़ देखा लेकिन आखिर में खुद को संभाल लिया—वैसे नैना मेम को कुछ हो गया तो सूअर की औलाद फिरंगी इस मुहल्ले से गर्दन कटाकर ही जाएगा.

विनायक के चेहरे पर पसीने की बूंदें उग आई थीं.

—वैसे नैना भी बिन्नूबाबू, नैना ही है. कित्ते दिलदार बैठे हैं. लेकिन उसे देसी खसम पसंद कहां आता ? कोई यकीन नाय करेगा, दामोदर लुहार जईसो आदमी की लौंडिया बिलायती के संग रास लीला कर रई है. आखिर में भगीरथ ठी ! ठी !

करने लगा था.

विनायक ने कुछ कहा तो नहीं था लेकिन एकबारगी संजीदा हो गया था. भगीरथ ने शुरू में उसके चेहरे की तरफ नहीं देखा. लेकिन देख लिया तो महसूस होने लगा था कि कसूर हो गया. आखिर में वह भी बिलकुल खामोश हो गया था.

●●

पड़ोस के रऊफ मियां और उसकी बीवी नैना को चारपाई पर लिटाकर कुहनी, गर्दन और टांगों के जले हुए हिस्सों में तेल लगा रहे थे. नैना कराह तो नहीं रही थी लेकिन ज़ाहिर था अन्दर की तकलीफ़ से उसके जिस्म की नसें टूट-सी रही हैं. नीचे की मकान मालकिन पन्नाबाई शायद घर पर नहीं थी. वर्ना रऊफ़ मियां को इस तरह परेशान नहीं होना पड़ता.

फिरंगी का दो कमरों का मकान ऊपरी मंजिल पर है और ठीक उसके नीचे व्यायामशाला के सामने रऊफ़ मियां रहता है. स्टोव के फटने की आवाज़ आई तब मियां बरामदे में बैठकर पान चबा रहा था. फिर उसने बीवी को आवाज़ फेंकी और ऊपर आ गया. उसके पहुंचने के बाद भगीरथ भी आ गया था.

विनायक पहुंचा तो मियां राहत-सी महसूस करने लगा—आओ डागडर, अब हमें कोई फ़िकर नाय रिया.

भगीरथ ने फिर नैना को आवाज़ दी—जे देख ले, बिन्नूबाबू आए हैं. मैं ले आया डागडर को···

रऊफ़ ने इशारा किया कि वह खामोश हो जाए.

मजबूरी में भगीरथ खामोश तो हो गया था लेकिन दिल मसोस कर रह गया था. काश ! नैना को सही-सही मालूम हो पाता, उसके लिए भगीरथ भागा-भागा गया और 'डागडर' ले आया ! खैर चलो, अब न सही फिर कभी मौका मिलेगा...

नैना ने आंखें खोलीं. उस दृष्टि में सिर्फ करुणा थी. करुणा और याचना.

विनायक ने जेब से निकालकर दो रुपए का एक नोट रऊफ के हाथ थमाया—भाग कर जाओ और एक बर्नोल ले आओ.

भूल जाने के डर से मियां 'बर्नोल' की रट लगाने लगा. वह चलने लगा तो विनायक ने बैग से कागज़ निकाला और दवा का नाम लिख दिया.

रऊफ की बीवी नैनाकी टांगों पर तेल लगाती तो वह होंठों को दांत से काटने लगती.

विनायक ने देखा, गर्दन के हिस्से का जलना कहीं ज्यादा है. रऊफ की बीवी उस हिस्से में तेल इसलिए नहीं लगा पाई थी कि नैना ने हाथ तक लगाने नहीं दिया था.

चेहरे पर भी थोड़ी-सी आंच आई थी लेकिन वह उतनी खतरनाक नहीं थी. ठुड्डी और दाहिने गाल पर दो काले-से निशान थे.

विनायक ने नैना की तरफ़ देखा—बर्नोल आ जाए फिर अस्पताल चलेंगे. हफ़्ते-भर में ठीक हो जाओगी.

नैना ने हाथ जोड़ लिए—इत्ते में कोई मरता नाय है. मैं हीयईं रऊंगी. तुम दवा देते रैना.

भगीरथ ने समझाने की कोशिश की—ह्यां रहोगी तो बखत लम्बा लगेगा ठीक होने में. होंआ चलो तो फश्श किलास तिमारदारी भी हो जायगी.···

भगीरथ को अपनी बात बीच में ही रोक लेनी पड़ी थी. नैना ने उसकी

तरफ इस तरह जलती आंखों से देखा कि उसे अपनी बात एकबारगी खत्म कर लेनी पड़ी थी.

नैना ने आंखें बन्द कर ली थीं. आवाज़ अटक रही थी, फिर भी बोली—तुमसे कभी भी अब तलक दवा नाय मांगी थी नैना ने, अब खुद आ गए दवा देने. बात कह ली तो उसके होंठों पर हल्की-सी मुस्कुराहट थी. लड़ाई जीतने के बाद की सी.

भगीरथ बीच में बोल पड़ा—दामोदर को खबर करूं ?

नैना ने गर्दन हिला दी थी —रैने दे अभी.

मियां की बीवी घबरा रही थी. आखिर में उसने पूछ ही लिया था— कै दो तो फिरंगी को खबर करें. बोल चुकने के बाद महसूस हुआ था, 'फिरंगी' कहकर उसने अशिष्टता बरत ली है. आखिर में उसने बात घुमा दी थी—तू यूं ही पड़ी रैगी तो साहब आकर कहगे किसी ने खबर भी नाय करी !

नैना हंसी. म्लान हंसी थी वह—कोई कुछ नाय कैगा. फिर वह विनायक की तरफ़ मुखातिब हुई—ह्यां मुहल्ले के लिए जिन्नगी कुर्बान करने के लिए ही तुम पैदा हुए हो डागडर.

विनायक ने बैग से एक दवा निकालकर कागज़ के टुकड़े पर उंडेली और नैना के मुंह के अन्दर डाल दी. उसकी बात सुनी तो थी लेकिन भगीरथ को लगा था गोया कुछ सुनाई ही न पड़ा हो.

—नाय सुनते न हमारी बात ? नैना के कंठ में अभिमान था.

—अं ? विनायक चौंका था. चौंककर संभला था—अभी बात ज़्यादा मत करो. तकलीफ़ ही होगी.

—तकलीफ़ ? नैना ने इतनी ज़ोर से ठहाका मारा कि भगीरथ अवाक् रह गया. रऊफ़ मियां की बीवी डर गई थी.

फिर वह एकदम खामोश हो गई थी. खामोश हो गई तो विनायक की बांह पकड़ कर झटका-सा दिया—नैना की तकलीफ़ किस बात की ? तकलीफ़ तो सिरफ़ परान में होती है. नैना का परान कब का खतम होय गया.

विनायक ने देखा, नैना की आंखों में सुर्खियां हैं. उन सुर्खियों में झूलते डोरे इस क़दर डरावने लगे कि वह खुद को बहुत सहज नहीं महसूस कर पा रहा था.

नैना ने एक और ठहाका लगाया—'इशटोव' फटने से कित्ते तो मर जाते लेकिन जे तमासा देखो, नैना नाय मरी. नैना को मरना ही नाय है अब.

विनायक ने उत्तर नहीं दिया. वैसे यह शायद उत्तर देने लायक कोई सिलसिला था भी नहीं.

—जे नैना है न, लोग रंडी कैते इसे पीठ पीछे. नैना की आवाज़ में एकदम से करुणा उतर आई थी— कैने दो. वैसे मैं चाहूं तो एक-एक की नानी याद करा दूं. लेकिन अब सिरफ़ इनके लिए दिल में रहम ही पैदा होती है. पैले मैं भगवान को खूब मानती थी. फिर समझ गई, सब बेकार है. फिर भी मैं दुआ तो कर सकती हूं तुम्हारे लिए. मेरा बस चले तो एक-एक से तुमारा पांव छुआ दूं•••

—अब तो खामोश हो जाओ. विनायक बोला.

—बोलूं भी तो कुछ नाय फ़रक पड़ने का. तुम बेफिकर रहो.

—तुम्हारा जिसम जला है, इसमें तकलीफ़ और भी बढ़ेगी.

—कहा न, नैना में अब परान नाय रिया. तकलीफ़ तो परान में होती है. इस जिसम को चाहे जलाकर राख भी कर लो तो कोय फरक नाय पड़ने का.

भगीरथ देर तक खामोश था. आखिर में बोल ही पड़ा—अब तो मान जा

किसी को.

नैना ने जवाब में उसकी तरफ़ देखा था. उसने आंखें फेर ली थीं. कह ज़रूर दिया था लेकिन आखिर में इतनी हिम्मत रह नहीं गई थी कि उसकी नज़र का सामना भी किया जा सके.

रऊफ़ मियां लौट आया था.

वह लगभग तूफ़ान की रफ़्तार से इकट्ठे तीन-तीन सीढ़ियां पार करता हुआ आया और हांपने लगा.

विनायक फिर उठ गया. उठकर रऊफ़ की बीवी को समझा दिया—बर्नोल को उंगलियों में लेकर पूरे जिस्म पर हल्के हाथों से लगा दो. उसके साथ फिर रउफ़ और भगीरथ भी आ गए थे.

विनायक ने कलाई पर बंधी घड़ी देखी. वक़्त का एक संक्षिप्त-सा हिसाब लगा लिया. फिर मियां को हिदायत दी—तुम यहीं ठहरो. मैं अस्पताल से एम्बुलेंस लेकर आ रहा हूं.

भगीरथ सोच रहा था कि उसे क्या करना चाहिए. यह दुकानदारी का वक्त है. दिन-भर में जितनी कमाई होती है उसमें रुपये में बारह आने इसी वक़्त बनते हैं. वह अपनी कमाई के बारे में सोच रहा था और अंदर से कसमसाहट-सी महसूस कर रहा था.

विनायक शायद यह समझ गया था. उसने कह दिया था कि भगीरथ चलाजाए.

भगीरथ को लगभग मुक्ति मिली थी. एहसास कुछ ऐसा ही हो रहा था. वैसे उसने पूरी चालाकी बरती थी. चालाकी बरती थी और चेहरे को बहुत संजीदा बना लिया था.

●●

विनायक एम्बुलेंस लेकर लौटा तो देखा, दामोदर लुहार हतप्रभ-सा नैना की खाट के सामने खड़ा है. वह लगातार हथेलियाँ मलता जा रहा था. माईकल फिरंगी भी अभी-अभी कासगंज से गाड़ी लेकर वापस आया था. उसके चेहरे पर थकान की लकीरें थीं. अब भी वह अपने यूनीफार्म में था और फैसला नहीं कर पा रहा था कि क्या करना चाहिए. नैना की आंखें बंद थीं.

विनायक अन्दर आया तो दामोदर लुहार में शायद कुछ हौसला लौटा था. कम-से-कम अब बोल सकने की हालत में था. उसने एकदम से बड़बड़ा कर जो कुछ कहा था, उसका शाब्दिक अर्थ कुछ भी नहीं होता. सिर्फ इतना ही ज़ाहिर हो पाया था कि वह कुछ भी नहीं समझ पा रहा है.

विनायकने दामोदर को सुना तो था लेकिन जवाब नहीं दिया.

नैना ने आंखें खोली थीं. एम्बुलेंस की आवाज़ सूनी तो खासी विरक्ति हुई थी. इससे पहले कि विनायक कुछ कहे, खुद उसी ने कह दिया था—अपन को नाय जाना इस्पिताल. हिंयई रैने दो मुझे.

माईकल की निगाहें विनायक के चेहरे पर थीं. उन निगाहों में भीख-सी थी.

विनायक ने नैना की बातों का विरोध तो नहीं किया था लेकिन गंभीर ज़रूर हो गया था.

रऊफ मियां ने फिर हल्के से फटकारा था—एक तो तुम्हारी खातिर कोई भाग कर इस्पिताल जा रिया, मोटर गाड़ी लेकर आ रिया और तुम हो कि नखरे से बाज नाय आतीं.

नैना के जी में आया था कि रउफ की सफेद दाढ़ी के नीचे छिपे गाल पर एक

तमाचा जड़ दे—जे नखरा है ? आखिर में वह चुपचाप उठ खड़ी हुई थी. रऊफ की बीवी और दामोदर ने सहारा दिया था. नैना फिर सीढ़ियां उतर कर एम्बुलेंस में बैठ गई थी.

ऊपर से नीचे तक आने में जाहिर है खासी तकलीफ हुई थी. लेकिन न तो उसने कराहा था न एक भी बार चेहरे को बिगाड़ा था. आखिर में आंखें इतनी भारी लगने लगी थीं कि रऊफ मियां डरने लगा था. दामोदर या माईकल यह तब्दीली कितनी समझ सके थे, कहना मुश्किल ही होगा. उनकी मुद्राओं से सिर्फ इतना जाहिर हो रहा था कि वे बुरी तरह घबरा भी रहे हैं.

●●

लुक्का पहलवान ने एकदिन सबको सुनाकर कहा—बखत आए तभी पता चलता, कऊन कित्ते पानी में है. देख लेना, नैना मेम फिरंगी को एकदिन दगा देगी. खसम तो कोई और है…

डोरीलाल ने इसमें मसाला लगाया था—छोड़ो पैलहवान, तुमें टिराई तो नाय मारनी है ?

लुक्का पहलवान को यह याद ही नहीं था कि बुनियादी तौर पर भगीरथ के होटल में अड्डा जमाने वालों से उसकी कभी पटी ही नहीं. पटी तो खैर नहीं ही बल्कि कई दफ़ा बात इस क़दर आगे बढ़ी कि बस कत्ल ही बाक़ी रह गया था.

डोरीलाल को यह बैरी आखिर में बहुत ज़रूरी नहीं लगी थी. यानी महसूस यही हुआ था कि इसे भुलाया भी जाए तो कोई हर्ज नहीं.

पाठक, इस बात से क्या आपको ताज्जुब हुआ ? दरअसल यह मुहल्ला ही ऐसा है कि यहां यह एक सामान्य-सी प्रक्रिया है. आप अटकलें तो लगा सकते हैं लेकिन पाएंगे कि आखिर में आपका सारा अनुमान ग़लत निकला. कार्य और कारण के बीच कोई सीधा सम्पर्क तो होता है लेकिन कई बार नहीं भी होता. इस बिहारीपुर को देखकर आपको इतना मंजूर करना ही पड़ेगा. यहां लुक्का पहलवान हो चाहे डोरीलाल, हर कोई सिर्फ़ एक बात समझता है—जिन्नगी है इत्ती बड़ी कि ह्यां कोई कुछ भी कैले या कर ले, वो बात छोटी ही रैती है.

खैर मैं व्याख्या में न जाकर पिछले प्रसंग पर लौट आता हूं.

अनीस मियां और मक्खन पहलवान मटरगश्ती करते हुए आ गए थे. फिर कुएं की दीवार के ऊपर एक खासा मजमा लग गया. डोरीलाल अब तक भगीरथ के होटल में बैठकर बीड़ी का धुआं निगल रहा था. आखिर में उससे रहा नहीं गया और बाहर आकर वह कुएं के नज़दीक खड़ा हो गया था.

मक्खन ने अपनी छाती ठोंकी—इस मक्खन पे मरने वाली एक छोड़ हज़ार आती रई हैं. लेकिन ह्यां तो जे समझो, औरत हो चाहे पत्थर—दोनों बरोब्बर हैं.

उसकी बात पर किसी ने ताली तो खैर नहीं बजाई लेकिन डोरीलाल के जी में यही आया था कि कह दे—ह्यां सीसा तो नाय है, कुएं का पानी ज़रूर है. उसमें अपना चेहरा देख ले.

मक्खन पर अगर कोई निबन्ध लिखने को दिया जाए तो पाठक, आपको शुरूआत में यही लिखना पड़ेगा कि हफ़्ते में दो बार छंटे हुए बाल और मटर जैसी आंखों में उसके चेहरे के रंग का आबनूसी होना एकदम सटीक बैठता है. डोरीलाल न तो पढ़ा-लिखा है न निबंध नाम की किसी चीज़ से वाक़िफ़ है. वर्ना कम-से-कम एक बार इस सिलसिले में वह कोशिश ज़रूर फरमाके देखता.

लुक्का अपनी बात पर लौट आया था—क्या नाय किया इस पैलहवान ने

तुम्हारे डागडर की खातिर ? इत्ता अगर किसी कुत्ते पे करता तो वखत पे जान तक की बाजी लगा देता. खैर छोड़ो. हम नाय मांगते किसी से कुछ. कउन-सा खजाना लेकर ह्यां से जाना है ?

अनीस ने अपनी सहमति जताई—जे बात बिल्कुल सही कैते हो पैलहवान. उसने अपनी सहमति ज़रूर जता दी लेकिन वह फालतू-सी हो गई. लुक्का को इस वक्त किसी की न तो सहमति की ज़रूरत थी, न असहमति की परवाह.

—लेकिन मैं तो जे कै रिया हूं, रात को औरतबाजी के बाद दिन में जो मुहल्ले के सामने बड़ा भगत बनकर फिरता रैता, उसकी पोल तो कभी खुलनी ही थी.

भगीरथ को सबकुछ अटपटा-सा लग रहा था. शुरू में देर तक तो वह खामोश था लेकिन बाद में बात उछाल ही दी—कैलो जिसे जित्ता जीं में आए पर जे समझ लो, पूरे बिहारीपुर में कोई उसका मुक़ाबला नाय कर सकता.

लुक्का ने चुटकी ली—वो तेरा बाप तो नाय है ! दिल इत्ता काहे को दुखा रिया…

अनीस ने लुक्का की बात खत्म होने से पहले ही अपनी सुना दी—जे लो, अब मुक़ाबले पे उतर आए. अखाड़े में दंगल तो नाय लड़नी है ? फिर वह अपनी जांघें खुजलाकर अश्लील ढंग से हंसने लगा था.

गेंदनलाल होटल में बैठकर चाय पीने के बाद रेडियो में बज रहा फिल्मी गाना सुन रहा था. कार्यक्रम फरमाईश करने वाले श्रोताओं के लिए था. इत्तफ़ाक से एक फरमाईश करने वाला बरेली का भी था. बरेली का नाम रेडियो में बोला गया तो उसे एकदम से खुशी हुई थी. यक़ीन आ गया था, बरेली भी अब दिल्ली-बम्बई की बराबरी करने ही वाली है. इस नशे में गेंदनलाल इतना खो गया था कि याद ही नहीं रहा, रेडियो में एक कड़ाके का गाना आ रहा है. जब होश लौटा, गाना खत्म हो चुका था. वह फिर झुंझलाया और बीड़ी सुलगाकर दुकान से उतर आया था.

गेंदनलाल आया तो मक्खन ने सिलसिले को और भी चटपटा बनाने की कोशिश की—मैं तो सोच रिया था, नैनामेम के संग तू भी जल गया.

गेंदन ने उसकी बात का तो जवाब नहीं दिया लेकिन नैना की आंखों की तारीफ़ ज़रूर कर डाली.

अनीस ने उसका साथ दिया—वैसे है लौंडिया मार्के की. कहां दामोदर लुहार और कहां उसकी बेटी नैनामेम !

लुक्का ने दहाड़ा—ओय ! नैना का खसम बनना है तो लंगोटी तक उतरवा के निकाल दूंगा इस मुहल्ले से. ह्यां रैना है तो सरीफ़ बनके रह, हां.

बाक़ी लोग खामोश हो गए थे.

सिर्फ़ डोरीलाल मुस्कुराया था—बिहारीपुर का नाम भी अब मशहूर हो गया पूरी बरेली में. एक थी बिद्दा पंडित की लौंडिया, फिर आई नैनामेम.

—देखो, हम नैना-वैना से कुछ नाय कैते. हमें तो जे नाय गवारा कि तुमारा लीडरी झाड़ने वाला डागडर मुंह में तो राम कैता फिरेगा और बगल में छुरा भी नहीं, पिस्तौल दागेगा. बड़े भोले बने फिरते थे कि मुहल्ले के लिए जान भी कुरबान कर देंगे. अब नैना पर हो रई वो कुर्बानी. लुक्का बिना रुके बोल गया था.

अनीस ने अपना ठहाका दुहरा दिया.

—जे किस्सा आज का थोड़े ही है ? लुक्का ने अपनी मुद्रा से यह अहसास जताना चाहा कि वह एक गूढ़ रहस्य का उद्घाटन कर रहा है—हम तो पता नाय कब से जानते थे. लेकिन तमासा देख के भी चुप ही रहे कि चलो बाद में सुधर

जाएगा.

गेंदनलाल ने बीड़ी का धुआं उगल दिया था—नैनामेम वैसे देखो तो पूरी लम्मरी है. रोटी तोड़ रई है फिरंगी की और खसम बनाती किसी और को.

अनीस को गेंदनलाल की बात काफ़ी जायकेदार लगी. जायकेदार लेकिन अधूरी. इस अधूरेपन को उसने पूरा कर दिया था—देख लेना एक दिन बिहारीपुर का हर घर चकला बनके रैगा, हां. आलमगिरीगंज तो क्या कलकत्ता-बम्बई तक बिहारीपुर का नाम फैलेगा. अनीस ने फिर अपना चेहरा अखबार के कार्टून की तरह कर लिया था. उसे उम्मीद थी, इस वक्तव्य पर लोगों में एक सनसनी फैल जाएगी. फिर देर तक इस बात पर चर्चा चलती रहेगी. अनीस ने इंतजार किया लेकिन आखिर में जब ऐसा कुछ भी नहीं हुआ, वह ऊबने लगा था.

इत्तफ़ाक़ है कि फिरंगी उधर से गुज़र रहा था. गेंदनलाल ने उसकी तरफ़ देखा और स्वगत-सा बोल गया—पूरा लपाड़ूमल ठैरा.

अनीस ने फिर जवाब दिया था—तू क्या समझेगा जे मामला ? पैले अपनी जोरू को टिकाना सीख, फिर कैना किसी आऊर पे.

गेंदनलाल झेंप गया था.

यह क़िस्सा सबको मालूम हो गया था कि गेंदनलाल अपनी बीवी के सामने दुम दबाए बैठा रहता. शादी के बाद अठारह बरस गुज़र गए थे. लेकिन आखिर तक जब कोई बच्चा नहीं हुआ तो गेंदनलाल उदास रहने लगा था. एक-आध बार उसने यहां तक सोच लिया था कि दूसरी शादी की जाए तो कोई हर्ज नहीं.

यह बात उसकी बीवी को मालूम हो गई थी. मालूम हुई तो इस क़दर चामुंडा बन गई थी कि गेंदनलाल के हौसले ठंडे पड़ गए थे. आखिर में उसकी बीवी ने फैलायी थी या किसी और ने अफ़वाह उड़ा दी थी, इस पर स्पष्ट तौर पर कुछ कहा तो नहीं जा सकता लेकिन लोगों को मालूम यही हुआ था कि गेंदनलाल खुद ही कमजोरी का शिकार है. कमजोर मर्द बच्चा तो क्या पैदा करेगा कोई औरत उससे निभाले जाए यही बहुत है.

एकाध बार किसी ने इतना भी देखा था कि गेंदनलाल बीवी के पांव दबा रहा है. यह खबर उसके घर की चहारदीवारी से बाहर निकली तो कुछेक दिनों तक बात को लोग मसालेदार अचार की तरह चाटते रहे.

डोरीलाल ने औरत-मर्द के रिश्ते को लेकर एक गन्दा-सा मज़ाक किया था. गेंदनलाल ने जवाब नहीं दिया था.

शुरू में जैसाकि हर मर्द का होता है, गेंदनलाल को अपनी बीवी बहुत प्यारी लगी थी. लगता था, इस औरत को ब्याह न पाता तो ज़िन्दगी फिर बेकार ही निकल जाती. रात-रात भर तब वह बीवी के साथ झपकी तक लिए बिना काट देता. तब इतनी बेताबी रहती कि उस वक़्त तो कुछ पता नहीं चलता लेकिन सुबह होती तो थकान-सी महसूस होती. आंखों के गिर्द काली झाइयां उभर आतीं.

फिर सारा-कुछ एकदम से बदल गया था. सबकुछ एक-सा नहीं रहता, बदलता ही है, इतना गेंदनलाल भी समझता है, लेकिन एकदम से वह ऊबने लगेगा, ऐसी उम्मीद नहीं थी.

जो औरत देर तक नाज़ुक लगती रही वही एकदम से पत्थर भी लग सकती है, यह उसे मन्जूर करना पड़ा. उसकी बीवी फिर इतनी सख्त हो गई थी कि घर से निकलने और लौटने तक का वक़्त बांध दिया था. शुरू में उसने इसका विरोध तो किया था लेकिन बीवी फिर डायन-सी लगने लगी थी. डायन कैसी होती, उसने कभी देखी

ज़रूर नहीं है लेकिन लगा, इससे ज़्यादा खतरनाक तो खैर नहीं ही होती होगी.

सारा मामला ऐसा था कि गेंदनलाल सिर्फ़ महता ही गया. एक-आध बार यार-दोस्तों से राय मांगी तो ख़बर और भी ज़्यादा नमक-मिर्च के साथ इस क़दर फैलने लगी कि उसे झेंप-सी महसूस होती रहती.

आख़िर में उसने औरत तो क्या, छह साल की लड़की तक से बात न करने का उसूल बना लिया था. जब भी उसने बिना किसी ख़ास मतलब के बैठे-ठाले ही कुछ कहा, लोगों ने या तो उस बात पर मसखरी की या किसी ने कोई चालू गाली उंडेल दी.

नैना मेम हो या फिरंगी, उसके मन में इस बारे में अगर कोई हलचल हुई भी तो उतना सिर्फ़ उसी को मालूम है. वह सतर्क हो गया था कि लोगों के बीच ख़ामख़्वाह चटनी बनने से तो बेहतर यह है, चुपचाप बीड़ी का कश खींचे जाओ. चाहो तो पान-तम्बाकू खा लो, मुंह में खैनी डालो, बस.

इस बार फिरंगी पर कुछ बोल गया तो एकदम से लग गया था, खासी बेवकूफी हो गई है. आख़िर में अंजाम वही हुआ, जिसकी उम्मीद थी.

नैनामेम का सिलसिला फिर इतना लम्बा हो गया था कि उसमें नयापन जैसा कुछ किसी को भी महसूस नहीं हो रहा था. कुलमिलाकर मसला फिर बहुत ऊबाऊ क़िस्म का हो गया था.

भगीरथ ने इस बहस में ज़्यादा हिस्सा तो नहीं लिया था लेकिन बातें पूरी सुनता रहा. हिस्सा लेना वैसे भी इसलिए मुमकिन नहीं होता कि दुकानदारी के चक्कर में तो ऐशो-आराम ताक पर उठाकर रखने पड़ते हैं. उसने रेडियो की आवाज़ काफ़ी ऊंची कर दी थी आवाज़ कुएं के गिर्द तक पहुंचने के लिए काफ़ी थी. वे सब फिर गाना सुनने लगे थे.

●●

विनायक के दवाख़ाने के दरवाज़े पर किसी ने खड़िया से लिख दिया था—यह गद्दार की कोठरी है ! सावधान ! ! इसके साथ निर्वस्त्र औरत की एक तस्वीर थी.

बचऊ हलवाई पढ़ा-लिखा तो वैसे नहीं है लेकिन हिसाब वगैरह कापी पर लिख ही लेता है रुक-रुक कर हिंदी में कुछ लिखा हो तो पढ़ भी लेता है. दिक़्क़त तब होती है जब संयुक्त अक्षर होते हैं.

सुबह विनायक दवाख़ाने का दरवाजा खोल रहा था तो उसने खड़िया में लिखे ये शब्द पढ़े. बचऊ दूकान छोड़कर एकदम से सामने आ गया था—इसे मिटा डालो बिन्नू बाबू. बस समझ लो, कउन रिया है लिखने वाला मेरी बात मानो तो एक बात कहूं ! बचऊ की आवाज़ में एकबारगी कुछ कह डालने की ललक तो थी लेकिन हिम्मत नहीं हो पा रही थी.

—क्या है ? विनायक अन्दर आ गया था.

तब तक दो-चार मरीज़ भी आ गए थे.

बचऊ ने उन सब के चेहरे पर देखा और तय नहीं कर पाया कि बात इसी वक्त कह देना कहां तक ठीक रहेगा. वह देर तक पशोपेश में रहा और आख़िर में अपना मुंह विनायक के कान के पास ले आया—कै दो तो उसके भी दरवाज़े पे जे ही सब लिखवा दूं•••

विनायक ने जवाब नहीं दिया था. दराज़ में से झाड़न निकालकर मेज़ पर जमी गर्द साफ़ कर रहा था.

—तुम हमें बेवकूफ़ समझो चाहे मूरख, मगर जे बचऊ हलवाई पूरे बरेली

सहर की मिंटों में समझ सकता है, हां.

—और? विनायक खामोशी के बाद बोला था. वह बोला तो बचऊ समझ गया, उसने खामख्वाह ही बात कह दी है.

—खैर चलो, हमें क्या. हम तो कुछ भी भुगत लेंगे. लेकिन तुम ठैरे सरीफ़ आदमी सो तुम पे कोई कुछ कैता तो बचऊ का कलेजा दुखता है.

विनायक मरीज़ देखने लगा था.

बचऊ सकपका-सा गया था. वह सोच रहा था, इस सकपकाहट को छिपाने के लिए सिरदर्द का बहाना करे और दवा मांग ले. कुछ देर तक तो वह विनायक की बगल में खड़ा रहा लेकिन आखिर में कुछ भी तय नहीं कर पाया और बाहर निकल आया.

बिरजू आ गया था.

विनायक की नज़र उस पर पड़ी थी लेकिन वह बोला नहीं था. यह एक तरह से उसूल-सा बना लिया था कि मरीज़ देखते वक़्त किसी और मसले पर बात नहीं करनी.

बिरजू ने दरवाज़े के पलड़ों को तीसरी या चौथी बार गौर से देखा और पाजामे की जेब से रूमालनुमा कुछ निकालकर खड़िया के अक्षर मिटा दिए. अक्षरों के साथ औरत के जिस्म-जैसा जो नक्शा बना था उस पर भी रूमाल फेर दिया. नक्शे के नीचे एक नाम भी लिखा था—नैना. बिरजू ने उसे सिर्फ पढ़ लिया. चाहता तो इस ममले पर कुछ पूछ सकता था लेकिन नहीं पूछा.

आखिर में बचऊ ने आवाज देदी थी. उसकी भट्ठी के सामने जाकर बिरजू देर तक खुसरफुसर करता रहा. दोनों ने महसूस किया कि उनकी तकलीफ़ें एक हैं. यानी विनायक टोली-मुहल्ले पर जान देता है और लोग ऐसे आदमी को ज़लील करते हैं.

—खैर, चल, ला पाव-भर ज़लेबी. बिरजू ने जलेबी मांग ली और तय करने लगा कि लुक्का की पहलवानी हो चाहे मुरारी की डाक्टरी—किसी-न-किसी तरीक़े से खत्म की ही जा सकती है.

पाव-भर जलेबी खाने में उसे मिनट-डेढ़ मिनट से ज्यादा नहीं लगा होगा. फिर उसने आधा सेर गर्म दूध उसी रफ़्तार से पीया, जिस्म की पिंडलियों को महसूस किया और सलाम बजा दी --अच्छा मास्टर, सोच लैने दो. फिर ऐसा रास्ता निकालूंगा कि तू देखता रैगा, हां.

बचऊ ने होंठ उलटे थे—कहीं वो जान गए तो जे समझ लेना, सारा गुड़ गोबर हो जाएगा.

बिरजू ने उसकी पीठ पर चपत जमा दी थी—तू देखता रईयो. बिरजू दुकान पे बैठ के डंडी ही नाय मारता सिरफ़. उसकी कहे पे मरने वाले भी सौ-दो सौ न सही, चार-छह तो मिलई जांगे. फिर वह अपनी दूकान की तरफ़ निकल गया.

बचऊ ने देखा था, बिरजू के साथ परसोराम की कुछ बातचीत हो रही है. परसोराम इधर से गुज़रने लगे तो वह दूध के कड़ाहे पर कड़छी इत्मीनान से चलाता रहा था. जैसे उसकी दिलचस्पी अगर किसी बात में है तो सिर्फ़ अपनी दूकान में. उसे यक़ीन था, परसोराम गुजरते हुए उसकी दूकान के सामने रुकेंगे और पान चबाते हुए कोई नया शगूफ़ा पेश कर ही देंगे. फिर विनायक पर हमदर्दी जताकर बता देंगे कि इस दुनिया में शरीफ़ों के लिए कोई जगह रही ही नहीं.

लेकिन बचऊ ने कनखियों से देखा, परसोराम तेज़ी से बिना रुके निकल गए.

वह निकल गए और विनायक के दवाखाने के सामने जाकर रुके. हाथ में छड़ी थी. छड़ी से बरामदे के फ़र्श को ठोंका और आवाज़ दे दी—अरे भई डागडर, जे सब सुनके तो मैं परेशान हो रिया हूं···

विनायक फौरन बाहर आ गया था. उसने फिर हाथ जोड़ लिए थे—परेशान मत होइये वैद्य जी, कोई खास बात यह नहीं है.···

—अभी अपनी दूकान खोलने जारिया था कि रस्ते पे बिरजू मिल गया. क़िस्सा मालूम हुआ फिर उससे. आखिर में परमोराम खांसने लगे थे. यह उनकी आदत-सी है कि एक बार खांसना शुरू करते तो यह सिलसिला देर तक चलता रहता. फिर वह एकदम से कह देते—जे ठैरा उमर का बोझ.

इस बार परमोराम ने अपनी आदत नहीं दोहराई थी. यानी आखिरी जुमला नहीं कहा था. खांस चुके तो बोले—बई, इस पे तो कुछ करना ही चाहिए. तुम नाय करो तो मैं करूंगा कुछ-न-कुछ. आखिर में वह दरवाज़े के उस मिटे हुए हिस्से को देख रहे थे जहां थोड़ी देर पहले भी वे शब्द लिखे हुए थे, नंगी औरत की तस्वीर बनी थी. उस जगह नज़र टिकाने से पहले उन्होंने कुर्ते के नीचे के हिस्से से चश्मे का शीशा साफ़ कर लिया था.

यह सब देख लिया तो परमोराम के माथे पर बल पड़ गए. नाक एकदम से सिकुड़ गई थी. ज़हरीली कोई चीज़ सूंघ लेने से भी यही प्रतिक्रिया होती है. आखिर में वह ढेर-सारा थूक उगल गए थे—समझा, तमाशा हो रिया फिर कोई. सोच मैं जे रिया था, लिखा होगा किसी लौंडे-लपाड़े ने.···

—कोई परवाह मत कीजिए वैद्य जी, ऐसी बातों से किसी को फ़र्क़ पड़ा है कभी ? विनायक को अपनी ही बातें सूखे आदर्शों वाली ज़रूर लगीं लेकिन लगा, वैसे सिर्फ़ यही कहा जा सकता था.

—क्या कैते हो ? फरक नाय पड़ा ? वाह भई ! वाह ! तो फिर फरक किस बात पे पड़ता है ? खैर, हम लोगन से बात करैंगे. कोय-न-कोय रस्ता निकाल ही लैंगे. परसोराम फिर अपनी दूकान की तरफ चले गए थे. वैसे भी सुबह का यह वक्त क़ीमती होता है. मरीज़ वगैरह जो भी आते हैं, इसी वक़्त ज्यादा आते हैं.

●●

मक्खन पहलवान लुक्का के सच्चे शागिर्दों में शुरू से ही रहा है. लुक्का जानता है, औरत के नाम पर उसकी कोई कमज़ोरी नहीं. बल्कि कोई ऐसा-वैसा मौक़ा अगर हो तो वह अपना लंगोट और भी ज़्यादा सख्ती से कस लेता है. हनुमान की मूरत की मन-ही-मन कल्पना करने लगता है. ऐसे किसी आदमी को अगर गंदी बीमारी लग जाए तो फिर मन आखिर में कड़वा हो ही जाता है.

शुरू में यह राज़ किसी ने नहीं जाना था. लेकिन आखिर में तकलीफ़ इतनी बढ़ गई थी कि पेशाब अगर कभी एक-आध बूंद बनकर निकला भी तो लगता. आग जल गई पूरे बदन में. तब जाकर लुक्का को यह पता हुआ था. बल्कि एक तरह से मजबूरी में ही उसने पहलवान को अपना किस्सा सुनाया था कि कब-कब उसने एक अधेड़ नेपालिन से रिश्ता जोड़ा है. रिश्ता दरअसल जुड़ा था अफीम का सौदा लेकर. उस औरत के पास अफीम तो अफीम, ऐसे-ऐसे माल थे जो सिर्फ़ दिल्ली-कलकत्ते में ही मिलते हैं.

लुक्का को थोड़ा-सा शक ज़रूर हुआ था लेकिन फिर उसे यह अपना ही वहम लगने लगा था. अब वह नेपालिन यहां से कहां गई, बताने के लिए कोई नहीं मिलेगा सिर्फ़ मक्खन को मालूम है कि यहां से खिसकने से पहले वह उसे जो बीमारी दे गई,

उसकी तकलीफें बहुत हैं.

लुक्का को यह मालूम हुआ तो उसने पूरी ताकत से एक झापड़ रसीद कर दिया था. ज़बान से एक भी गाली ज़रूर नहीं उंडेली थी लेकिन चेहरे की पेशियों को खिमका कर लगभग पत्थर बना लिया था.

देर तक के लिए वे दोनों खामोश थे. दोनों की निगाहें अलग-अलग खिड़कियों की तरफ़ थीं. इतना सन्नाटा छा गया था कि एक-दूसरे की सांस लेने की आवाज़ भी सुनाई दे रही थी.

आधा घंटा बीत गया तो लुक्का उठ खड़ा हुआ था—चल अब फ़ौरन हकीम बंसीधर के ह्यां चलना है.•••

हकीम बंसीधर ऐसी बीमारियों का इलाज तो करते ही हैं इसके अलावा दीवारों पर इश्तहार भी लिखवाते हैं कि शादी के पहले या बाद किसी भी तरह की नामर्दी क्यों न हो, वह दस रुपये में ठीक कर सकते हैं. खोयी ताक़त लौटाने की भी फीस इतने ही रुपये है. दीवारों पर इश्तहार लिखवाने से लेकर पर्चे बंटवाने तक सब-कुछ बंसीधर ने किया लेकिन उनके दवाखाने में जो लोग आते हैं वे अक्षरों से कोई खास रिश्ता नहीं रखते. फिर भी बंसीधर पूरे बरेली शहर में मशहूर हैं. इस ख्याति की असली वजह शायद यही है कि जब उनका दवाखाना खुला था तब बरेली में ऐसे इलाज के लिए वह अकेले थे. बाद में कई और हकीम-वैद्य आए लेकिन नाम ज़्यादा चला बंसीधर का ही.

बंसीधर को दुःख इस बात पर होता कि अब लोगों को पुराने ढंग के इलाजों में यकीन कोई खास नहीं रहा. नजला-ज़ुकाम हो या पेट-दर्द, लोग दौड़ते हैं विलायती दवावाले अंग्रेजों की औलादों के पास ही. खूब लुटाओ पैसा ! अरे बई, ह्यां आओगे तो कम-से-कम पैसा कोई जेब काट के नाय लेगा.

फिर भी इस बदले हुए ज़माने में भी कुछेक 'गाहक' आ ही जाते हैं. कभी-कभी दूर-दराज़ के गांवों से भी लोग आते हैं. लेकिन अब पूरे धंधे में इतनी मंदी है कि बंसीधर दवाखाने के बाहर कुर्सी डालकर बैठे रहते और अखबार शुरू से लेकर आखिर तक सबकुछ चाट जाते. फिर भी मरीज़ तो मरीज़, सामने एक मक्खी भी नहीं टकती.

लुक्का फिर मक्खन को लेकर आ गया था. बंसीधर उसे अन्दर ले गया और पूरी हालत की छान-बीन की. इस बारे में जितनी जानकारी उसे चाहिए थी, ले ली. आखिर में उसने अपनी भौंहें सिकोड़ ली थीं —मामला है थोड़ा टेढ़ा. 'टेम' लगेगा कुछ.

—कित्ता ? मक्खन ने पूछा.

बंसीधर ने आंखों से चश्मा उतारा और उसे घूर कर देखने लगा. आखिर में बोला—बौत जल्दी है ? फिर तो जनम-भर भी लग सकता है. दोनों हथेलियों को फिर उसने फासले पर कर लिया था. यह फ़ासला शायद इसलिए किया गया कि प्रश्न-वाचक को वक्त का सही अंदाजा हो जाय.

लुक्का ने बात सम्भाल ली थी. मुस्कुराया था—बुरा न मानना, हकीम जी. हम ह्यां आए हैं तो समझो दिल में भरोसा लेके आए हैं.

बंसीधर ने जवाब नहीं दिया था. दवा की पुड़ियां बांधकर इस्तेमाल करने के तरीके सिर्फ़ बता दिए थे.

●●

पूरे तीन महीने गुज़र गए थे.

मक्खन को सूझ नहीं रहा था, सही इलाज के लिए क्या करना चाहिए मामला है ही इतना टेढ़ा कि इलाज के लिए जिस-तिस के पास पहुचा तो समझो, अगले दिन से कहने-सुनने के लिए लोगो को खासा मसाला मिल गया

आखिर मे उसने बसीधर की दुकान तक जाना बन्द कर दिया था लुक्का से किसी और से इलाज के बारे मे सलाह मशविरा किया लेकिन हफ्ते-भर तक कुछ भी फैसला नही कर पाया

शुरू मे लुक्का राजी नही था लेकिन बाद मे उसकी तकलीफ देखकर नीम-राजी हो गया था

फिर एक दिन विनायक रात को दवाखाने से लौटने लगा तो वे दोनो गली के नुक्कड पर एकदम से सामने आ गए लुक्का पहलवान खामोश था लेकिन मक्खन जितनी बाते हडबडी मे बोल पाया था, उसमे 'माफी' जैसा कोई लफ्ज जरूर नही था लेकिन भाव लगभग वैसा ही था

विनायक अब तक चुप था फिर मुस्कुराया— जो कुछ कहना है, बेफिक्री से कहो

नतीजे मे मक्खन खामोश हो गया था और लुक्का नजदीक आ गया था उसने सारी दास्तान बयान कर दी थी आखिर मे कहा था— जे इज्जत का सवाल है इत्ता खयाल रखना

विनायक उन दोनो के साथ वापस दवाखाने मे लौट आया था. शीशी भर कर दवा दी तो मक्खन ने पूछ ही लिया था—ठीक हो जागे, कैसे हो ?

लुक्का ने डपट दिया था—दवा खाई नाय कि जादमतर मे ठीक होय गया !

विनायक ने चेहरे का पसीना पोछ कर तसल्ली दी थी—वक्त पर दवा लेते रहोगे तो ठीक हो ही जाओगे लेकिन इस दर्म्यान औरत से दूर रहना

मक्खन ने जीभ काट ली थी—इत्ता तो हम भी समझते है

लुक्का दुबारा झाड रहा था—बडा ब्रिग्मचारी बनता है पट्ठा यही का अब ब्याह-सादी कर नाय तो कल को दुबारा कीचड मे ही धसगा

मक्खन देर तक सोचता रहा कि मुहल्ले मे फैली उल्टी-सीधी बातो पर अपना इजहार करे आखिर तक वह तय ही नही कर पाया था कि सिलसिला कहा से शुरू होना चाहिए इस बीच लुक्का विनायक से बाजार भाव से लेकर दिल्ली के लाल किले तक ढेर-सारी बाते करता रहा लेकिन इस बार उन बातो मे न तो नैना मेम थी न जगत नारायण का गायब होना या मुरारी डागडर की अगली योजनाओं के बारे मे कोई जानकारी ही

फिर विनायक उठ खडा हुआ था दरवाजा बन्द करने के बाद मक्खन की पीठ पर थपकी देकर एक बार और तसल्ली दे दी थी।

नैना अस्पताल से लौट आई थी

●●

इस बीच उसे लेकर जितनी दास्ताने बनी या बिगडी उन्हे वह कतई नजर-अन्दाज कर देती अगर विनायक का नाम उनमे न जुडा होता सारी बाते उसे कहा से मालूम हुईं, यह कहना तो मुश्किल होगा लेकिन उसकी जानकारी बिल्कुल सही थी वैसे शकर ने एक बार देखा था, भगीरथ नैनामेम से, नीचे खडा होकर, कुछ बोल रहा है.

नैना फिर वहा गई, जहा जाने मे हर कोई डरता है लुक्का घर नही था. लेकिन उसकी औरत मिली थी

नैना पहुंची और बिना किसी भूमिका के एकदम से बरस पड़ी— अब बोल; किस पंडत ने ब्याह किया था तेरा.

लुक्का की घर वाली परमेसरी डर गई थी. वैसे भी वह इस क़दर सीधी-सादी है कि रोटी-कपड़ा मिल जाए तो फिर न राम में पड़ती, न रहीम में.

लुक्का शायद कहीं पड़ोस में ही था. वह फौरन ही वापस आ गया था. चेहरे पर वही पुराना खूंखारपन उतर आया था.

नैना ने उसकी तरफ देखा लेकिन उसका कोई खास असर नहीं हुआ. बल्कि हुआ यह कि उसकी आवाज़ और भी ज्यादा चढ गई— मैं चाहूं तो तेरे जैसे भी को नंगा कर दूं. क्या समझा ?

ओय ! चुप भी रैती या कर दूं मरम्मत? लुक्का ने बड़ी अदा से कहा.

—आ, मरद रिया अगर तेरा बाप तो कर मुरम्मत.

लुक्का पर इसका असर हुआ था. वह डरा अगर नहीं भी था, सहम ज़रूर गया था.

—मैं तो एक-एकको पोल जानती हूं. एक-एक को नंगा करके रख दूंगी. तू समझता रिया नैनामेम है तेरी लुगाई जैसी, जभी जे सब कै रिया.···नैना फिर हांपने लगी थी.

दरवाज़े पर खासी भीड़ इकट्ठी हो गई थी. यह वैसे इस मुहल्ले का नियम-सा है. जन्म हो या मौत या उसके बीच का कुछ, लोग हर चीज़ में सिर्फ मजा ढूंढ़ते हैं.

परमेसरी रोने लगी थी.

लुक्का ने उसकी तरफ देखा और झिड़क पड़ा.

नैना फिरसे सिलसिले पर लौट आई थी— पैले जाके जगत नरैन के लौण्डे का गूं खा ले. फिर कटेगा तेरा पाप. नाय तो नरक का कीड़ा बनेगा तू, जे मेरा सराप है. बड़ा आया पैलहवानी झाड़ने वाला.

लुक्का को यह ज़रूरत से ज्यादा अपमानजनक लगा था. वह अपने को अब तक संभालता तो रहा लेकिन आखिर में धीरज शायद जवाब दे गया था—अब भी कैता हूं नैना, ठैर जा, नाय तो अगर पैलहवान को जानती है तो फिर समझ ले, तेरा नसीब क्या होगा···.

—जे बात कैना अपनी भैन से. वैसे तेरा बाप मरद तो रिया नाय जो भैन भी सगी होगी तेरी. आजा, नैना को छूके तो देख ले. तुझे हीयईं नंगा कर दूं, पूरे मुहल्ले के सामने.

लुक्का फिर एकबारगी ठंडे लहजे पर लौट आया था— तू चाहती क्या है मुझसे···

—तुझसे कऊन क्या चाहेगा ? 'टेसन' का दलिद्दर भी तुझसे कुछ नाय लेगा, हां. लेकिन फिर कभी डागडर पर उल्टी-सीधी झाड़ी तो समझ लेना तुझसे गूं चटवाके रहूंगी.

—पैले अपन को तो संभाल तू. कभी सोच के देखा कि तू क्या है ! लुक्का के लहजे में वही पुराना मज़ाक था.

—जो मैं हूं अपन के बूते पे हूं. तेरे बाप की कमाई तो नाय खाती.

एकदम से दामोदर लुहार को यह सब पता चल गया था. फिर वह बदहवास-सा दूकान छोड़कर आ गया था. हड़बड़ी में आया था सो कुर्ता भी पहन नहीं पाया था. बनियान में अलग-अलग आकारों के कई छेद थे.

एकदम से वह अन्दर आया और नैना को सभालते हुए लुक्का के सामने दयनीय मुद्रा मे खडा हो गया —बुरा नाय मानना पैलहवान ··

उसे अपनी बात अधूरी ही रखनी पडी थी लुक्का दहाड उठा था

—देख दोमोदर अपनी लौंडिया को सभाल पैले नाय तो इस बिहारीपुर मुहल्ले मे तू रैगा या फिर लुक्का पैलहवान रैगा

—तू कलट्टर है मुहल्ले का ? नैना ने लुक्का के सामने थूक दिया था—मै चाहू तो मिंटो मे तुझे बन्द करा दू

—फासी नाय लगवा सकती ?

—बखत पे वो भी करा सकती हू बडा सीधा बनता था न, अब बाल कहा गया तेरा नेता जी सुभास चन्नर बाबा ? बडा भगत बना फिरता रिया तू. मारी भगतई अब फुस्सsss

लुक्का दातो से दात पीस कर रह गया था कुछ भी कहना मुमकिन अब कहा था ? बाबा के सिलसिले को लेकर पहले भी कई दफा फसाद हो चुके है पूरे मुहल्ले पर पुलिस वालो को शक हो गया था कई तरह की कानाफूसी इस बीच चलती रही लोग अटकले भी लगाते रहे लुक्का के सामने कहने की हिम्मत जरूर किसी की नही रह गई थी लेकिन बात आखिर दबाने से कहा तक दबती है ? लागो ने फिर बाबा के लगोटे को लेकर मजाक गढ लिए थे किसी ने उडा दिया था कि रात के वक्त बाबा का लगोट एकदम गायब हो जाना यह इशारा इतना साफ था कि हर कोई इसके पीछे छीपा मतलब समझता और उसका जायका लेता

वैसे भी बाबा के यहा आने के बाद कई अजनबी लोगो का इधर आना इतना ज्यादा हो गया था कि तहखाने के बारे मे खबरे कुछ ज्यादा ही फैल गई थी सुनने मे आता है कि लुक्का ने पुलिस वालो को खुश रखने का पूरा इतजाम तो किया था लेकिन वह कामयाब नही हुआ नया एस पी नई उम्र का और तेज था यहा आते ही उसने सबकुछ इतना कसना शुरू कर दिया था कि फिर मलूकपुर थाने वाले लुक्का या बाबा की हिफाजत के लिए कुछ निश्चित नही कर पा रहे थे फिर एक दिन सुबह लोगो को मालूम हुआ था कि बाबा लोटा-कम्बल लेकर गायब हो गए है.

वह तहखाना अब भी मौजूद है लेकिन उसम अब लोग नही जाते क्यो नही जाते, यह शायद ही कोई बता पाए. वैसे व्यायामशाला वालो के मन मे यह ख्याल है कि खाली जगह कतई अच्छी नही है लुक्का या उसके साथ के लोग उधर से गुजरते भी है तो तहखाने मे अब झाकते तक नही बात होने को अब काफी पुरानी हो गई लेकिन सिलसिला ही कुछ ऐसा रहा कि लोगो के जेहन मे सबकुछ वैसे-का-वैसा ही है बिल्कुल ताजा और साफ

बिहारीपुर के लोग बाबा के भाग जाने के किस्से को लेकर दिनो तक मगज-पच्ची करते रहे, आखिर मे सारा मामला घिसघिसा कर बहुत बासी हो गया था. बासी और उबाऊ. लिहाजा अपने आप ही फिर इस पर चरचे बन्द हो गए थे

नैना ने सिलसिला शुरू किया तो लुक्का थोडा सहमा था

दामोदर ने पूरी कोशिश की थी कि बात यही खतम हो जाए वह डर रहा था लुक्का से बैरी का मतलब इतना होता है, कोई भी कीमत अदा करने के लिए तैयार रहना यह ताकत औरो मे होगी लेकिन दामोदर लुहार मे इतनी हिम्मत कभी नही रही

उसकी दिक्कत यह थी कि न तो वह पहलवान से आख मिला सकता था, न

नैना का ही सामना कर सकता था. नैना की एक बांह उसकी गिरफ़्त में भी थी और वह हर तरह से कोशिश करता रहा कि नैना उसकी मान जाए.

लुक्का दामोदर पर दहाड़ा—अब भी वखत है लुहार, लौंडिया को संभाल लेव. नाय तो फिर नाय कैना कुछ.

नैना इस बार हंसी. ठहाका मारा—तेरे जइसा नामर्द ही ऐसा कै सकता है. समझा कुछ ? जाकर लुगाई से हंस-खेल ले. नैना को छूने के लिए पैले मरद बनना फिर आना अगले जनम में.

परमेसरी लुक्का का पांव पकड़ रही थी. उसका पेट इतना उभरा हुआ था कि बहुत ज़्यादा बेडौल लग रही थी. उसकी आवाज़ गड्ड-मड्ड होती-सी थी. सिर्फ़ इतना-भर मालूम हो रहा था कि वह चाहती है, बात यहीं खत्म हो जाए.

नैना ने उसकी तरफ़ देखा. मन में फिर करुणा उभर आई थी. आखिर में चलने लगी थी. चलने से पहले मुंह के अन्दर से ढेर-सारी पान की पीक उगल दी थी. बोली—तेरी जोरू पे रहम करके तुझे छोड़ रई हूं. वर्ना फिर आज दिखा के ही जाती, क्या होती नैना मेम और क्या होता तेरे जैसा नामर्द.

लुक्का की आंखें सुर्ख थीं. शायद थोड़ी ही देर पहले कच्ची गटक आया था. अब वे आंखें और भी ज़्यादा जलती हुई लगीं. जलती हुई और खतरनाक.

दरवाजे से बाहर निकलकर नैना मुड़ी थी—बिन्नू डागडर पे फिर कुछ कैता फिरेगा तो समझ लेना···नैना ने जानबूझकर बात अधूरी छोड़ दी थी.

दामोदर ज़बरदस्ती उसे घसीटने लगा था.

इस बीच भीड़, जो लुक्का के दरवाज़े पर जमा हो गई थी, छंटी और उसका एक हिस्सा सड़क तक आ गया.

लुक्का ने फिर 'खड़ाक्' से दरवाजा भिड़ा लिया था. कुछ देर बाद पता चला था, उसके और बीवी के बीच हाथापाई हो रही है. शुरू में तो परमेसरी सिर्फ़ चीखती-चिल्लाती रही लेकिन आखिर में बिलखना शुरू कर दिया था.

वैसे यह सिलसिला बहुत पुराना है. ऐसे पुराने सिलसिले में किसी को कोई दिलचस्पी नहीं होनी चाहिए लेकिन अगल-बगल के लोगों को होती है. वे दरवाज़े के बीच की लकड़ियों में कोई दरार निकालकर उसमें आंख लगा ही देते हैं कि अन्दर के दृश्य का मजा लिया जा सके।

लुक्का और परमेसरी अन्दर थे. कमरे के अन्दर. ऐसे में कुछ दिखाई ज़रूर नहीं पड़ता लेकिन वे आंख लगाए रहते और पूरी कोशिश करते कि छोटी-सी भी एक झलक दिखाई पड़ गई तो फिर मज़े ही मज़े हैं. बगल में छप्परों के अलावा अगर कोई छत भी है, वहां लोग खड़े हो जाते. थोड़ी ही देर में हर बार जमाव ठोस हो जाता. मुहल्ले के रोज़मर्रा के ऊब में ऐसा कोई तमाशा कम मनोरंजक नहीं होता.

वैसे लुक्का का प्रसंग कतई औरों जैसा नहीं है. परमेसरी को गली-कूचे में निकलकर, कभी किसी ने औरों की तरह बात करते नहीं देखा. दिखाई भी वह कभी-कभार ही पड़ी है. मुहल्ले के ज़्यादातर लोगों को सिर्फ़ इतना-भर मालूम है कि पहलवान की एक औरत भी है. लेकिन वह औरत सचमुच कैसी है, लोग नहीं बता पाएंगे. औरतों में इस बारे में बहुत ज़्यादा उत्सुकता जगती रही है लेकिन आखिर तक सिलसिला उत्सुकता तक ही बना रहा. कभी-कभार परमेसरी के बारे में एक-आध उड़ती हुई खबर सुनाई भी पड़ी लेकिन अपने आप ही वह खत्म भी होती गई.

●●

डोरीलाल की सात संतानों में से कौन बड़ा है कौन छोटा, यह रहस्य जानने

के लिए जनमपत्री देखने के अलावा शायद कोई दूसरा रास्ता नहीं है. लगता यही है कि सब एक-से हैं. लेकिन एक से सब हो ही कैसे सकते थे ? एक-एक साल के फ़ासले से वे जन्मे हैं लिहाज़ा ऐसा लगना कतई अस्वाभाविक भी नहीं है.

डोरीलाल की इन सात संतानों में से पहली संतान बेटा है और बाद में छः बेटियां. बेटे का नाम उसने पंडित से कहकर फ़श्शकिलाम-सा रखा—हीरालाल यह हीरालाल अब पन्द्रह बरस का हो गया. डोरीलाल की सारी उम्मीदें इस बात पर केन्द्रित थीं कि हीरालाल 'बिन्नू डागडर' जैसा इज्ज़तदार बनेगा. खूब पढ़ेगा, लिखेगा और बड़ा आदमी बनेगा. फिर बेटे के लिए वह एक गुड़िया-सी खूबसूरत बहू ढूंढ़ लाएगा.

डोरीलाल को फिर एकदम से पता हुआ था—उसका बेटा ज़बरदस्त मुहब्बत में फंसा हुआ है. पन्द्रह साल का लड़का स्कूल से भागकर मलूकपुर आ जाता और वहां मछलीगली के पीछे बैठकर किसी दुलारी से इश्क करता. यह दुलारी कौन है, डोरीलाल ने अब तक नहीं जाना था फिर जानने की नौबत जब आई तब यह भी पता हुआ, आसमान किस तरह टूटकर सर पर गिरता है.

दुलारी के मामा ने आकर डोरी के पांव पकड़ लिए थे. पता चला था, बीस साल की दुलारी के पांव भारी हैं.

दुलारी पैदा हुई तो उसी दिन उसकी मां सौर में ही गुजर गई थी. उसका बाप जो है, इस वक्त वह कहां होगा, कोई नहीं जानता. सुनने में यही आया है कि उन्नाव में उसने पान-तम्बाकू की एक दुकान खोल ली है और वहीं ब्याह भी कर लिया.

दुलारी फिर मामा की बेटी हो गई थी. दुलारी के जन्म के वक्त तक मामा शादी के बाद तीस साल गुज़ार चुके थे लेकिन आखिर तक उनके घर में कोई बच्चा रोया या हंसा नहीं था. मामी ने भी पूरी मुहब्बत दी थी दुलारी को और जब एकदिन स्कूल में मास्टरनी ने उसे मारा था, वह वहां जाकर झगड़ आई थी. मास्टरनी से झगड़ आई थी और दुलारी को स्कूल भेजना बन्द कर दिया था.

दुलारी को मुक्ति मिल गई थी. स्कूल जाने की ज़हमत से छुट्टी मिली तो वह आज़ाद-सी हो गई थी.

मामा की उम्र काफ़ी हो गई थी लेकिन उसने खानदानी राज का पेशा जारी रखा था. पुराने ढंग के राजों को अब कोई खास पूछता तो नहीं है लेकिन दोनों जून रोटी का जुगाड़ इसी से होता है. कई बार वह सोचता रहा है कि दुलारी की मामी की आंखों का इलाज करा ही लेगा. लेकिन बस आजकल तंगी बहुत हो गई है. और दुलारी के हाथ पीले होने से पहले कुछ और करने की हिम्मत भी नहीं होती. डाक्टरों का क्या ? थमा देगा सौ-दो सौ का पर्चा ! उसने अपनी बीवी से दुलारी का यह किस्सा सुना तो कतई यक़ीन नहीं किया था. जब यकीन करना पड़ा था कि यह सचाई है, बिचारा एकदम से मुर्दा बन गया था. दुलारी कोने में खड़ी थी. उसने देखा, मामा एकदम ठंडे पड़ गए हैं. यानी ऐसे में कोई एकबारगी बिलखना भी शुरू कर सकता है.

बीस साल की सयानी लड़की को घर में बिठाकर रखने से जितने ताने मिलने चाहिएं थे, दुलारी के मामा के नसीब में उससे कम नहीं मिले थे. लेकिन हर बार वह हंसता और बात टाल देता. किसी को पकड़कर सफाई ज़रूर नहीं पेश करता लेकिन मन ही मन खुद को आश्वस्त ज़रूर कर लेता, पढ़े-लिखे बाबू दर्जे के लोग भी तो देर से ही शादी करते हैं. वैसे अब वह सोच ही रहा था कि दुलारी के हाथ सचमुच पीले कर दिए जाएं. लेकिन करमजली ने उसके सारे अरमानों को सिल-बट्टे में कूट कर रख दिया.

डोरीलाल ने यह सब सुना तो आदत के मुताबिक सुना. आखिर में कांपता रहा. फिर हीरा को आवाज़ दी, तो पता हुआ दुलारी के मामा को देखते ही वह नदारद हो गया.

काफ़ी रात बीत चुकने के बावजूद जब हीरा नहीं लौटा, डोरीलाल विनायक के घर पहुंचा था. कुंडी खटखटाते वक्त महसूस हो रहा था, अब कलाई में दम ही नहीं है. उसे फिर कुएं के गिर्द के मजमे याद आए जिनमें इस 'कौशल्या भवन' की इज्ज़त को डलाव में डालकर उसमें थूक दिया गया था.

कभी-कभी इस क़दर बेवकूफ़ी हो जाती कि अपने ही जिस्म का गोश्त नोच डालने का मन होता.

विनायक ने दरवाज़ा खोला था. एकदम से चारपाई पर से उठकर आया था इसलिए पाजामा और बनियान में गहरी सलवटें थीं, हथेलियों से वह आंखें मल रहा था.

डोरीलाल ने कुछ कहना जरूर चाहा था लेकिन उसकी आवाज़ अपने आपमें गड्ड-मड्ड हो रही थी. आखिर में उसने बोलना शुरू किया तो एक ही सांस में सारा बयान कर गया. विनायक ने उस मद्धिम रोशनी में देखा था, डोरीलाल का चेहरा एकदम स्याह पड़ गया है. फिर आंखों की कोरों से आंसू का सैलाब फूट पड़ा था.

विनायक बैठक को खोलकर डोरीलाल को अन्दर ले आया था. डोरी सर झुकाए बैठा रहा.

विनायक कुछ देर तक खामोश रहा फिर सुझाव दे दिया—दुलारी के मामा से कहना उसका पेट साफ़ करवा ले. जरूरत पड़ी तो किसी से मैं भी कह सकता हूं. वैसे कौनसा महीना है ?

—दूसरा. डोरीलाल बोला था. फिर उसकी आवाज़ देर तक कमरे में गूंजती रही है.

—तुम्हारा बेटा बालिग होता तो मैं शादी की ही सलाह देता. विनायक उंगलियां चटखा रहा था—लेकिन यह मामला बिल्कुल औरों जैसा भी तो नहीं है. वैसे कल फुर्सत मिली तो मैं कभी दुलारी के मामा को समझा भी दूंगा.

डोरी सर झुकाए बुत-सा जमीन पर बैठा रहा.

—मैं नसीहत नहीं दे रहा हूं. फिर भी इतना जरूर कहूंगा, बच्चे के बिगड़ने में तुम लोगों का भी कम या ज्यादा हाथ तो होता ही है. उससे प्यार-मुहब्बत करो लेकिन यह ख्याल भी तो होना चाहिए कि बेलगाम प्यार से कहीं दुश्मनी तो नहीं निभा रहे हो ? मरीज़ को अगर दवा भी जरूरत से ज्यादा दी, फायदे की बजाय नुकसान ही होगा.

डोरीलाल शायद अब कुछ ज्यादा ही भावाकुल हो गया था. उसने एकदम से विनायक के पांव छू लिए थे—माफ़ करना बिन्नू बाबू, तुमें बखत-बेबखत बात कुछ कैता रिया. अब कलेजा दुःख रिया अपने किए पे···

विनायक ने उसके हाथों को जबरदस्ती पकड़ लिया था—यह क्या करते हो ? आखिर में वह एकदम से रुक गया था.

उसने देखा कि डोरीलाल बच्चे की तरह फूट-फूटकर रो रहा है. उसके रोने की आवाज़ समूचे कमरे में इस तरह भर गई थी कि रात का वह सन्नाटा चिर कर रह गया था.

काफी देर हो गई थी.

स्टेशन के साथ के यार्ड में शंटिंग करते हुए इंजन की सीटी बजी, गाड़ियों की

खड़खड़ाहट हुई तो डोरीलाल चौंका था. आखिर में वह उठकर एकदम से चलने लगा था.

विनायक ने दरवाज़े पर खड़े होकर देखा था—एक आदमी बहुत तेज़ी से अन्धेरे में घुलकर खत्म हो रहा है···

●●

नौरंगी वकील और मुरारी डाक्टर ने मिलकर फैसला किया था कि बिहारीपुर मुहल्ले में एक मंदिर बनाना चाहिए. संगमर्मर न सही, ईंट-पत्थर जोड़कर एक मंदिर तो इस मुहल्ले में बन सकता है. तीज-त्योहार हो तो मुहल्ले के लोग दूसरे मुहल्लों में जाते हैं. रामनवमी पर झांकी निकलती है तो बिहारीपुर के लोग सिर्फ़ खड़े होकर तमाशा देखते हैं. कोई नहीं पूछता यहां के लोगों को.

मुरारी ने लुक्का को बुला भेजा था. पहलवान की जोरू ने दो मुर्दे बच्चे पैदा किए थे. तब से उसे बुखार रहने लगा है. इस वजह से लुक्का इन दिनों थोड़ा परेशान है. और बाहर कोई खास निकलना नहीं होता. लेकिन भगीरथ की दुकान पर कस-गरान के लक्खन बढ़ई ने कोई और ही कहानी बताई थी.

लक्खन बढ़ई पुराने जमाने का आदमी है. देसी घी की तरह. अभी खद्दर के कपड़े पहनता है, सर पर गांधी टोपी लगाता है. सन् बयालीस में एक बार जेल भी काट आया और उसकी कहानी कोई पूछे तो सुना देता है. बात-चीत में यूं कहा जाए तो थोड़ा दबंग किस्म का भी है लेकिन खामख्वाह किसी को रामायण सुनाने की आदत नहीं है.

लक्खन बढ़ई ने ही सूचना दी थी—आजकल कच्ची के काम में लुक्का बुरी तरह फंस गया है. आबकारी का कोई नया 'आपीसर' आया है, लखनऊ, कानपुर न-जाने कहां से.

भगीरथ ने कहा—पैहलवान की जोरू ने दो लौंडियां जनी थी. सुना है, वो भी बस समझो बच ही गई. पैहलवान ज़रा परेसान है.

लक्खन ठठाकर हंस पड़ा—परेसान है ? वाह बई, तैंने तो सनीमा वाला मज़ाक कर लिया.

भगीरथ बिना समझे ही-ही करता रहा.

—लुक्का की जोरू साल-भर भी ऐसे पड़ी रहो तो भी फरक नाय पड़ने का. समझा कुछ ! बड़ा आया है जोरू का मरद. बियाह करे औरत से, सीने में मरद का बाल हो तो.

खैर, लक्खन घंटा-डेढ़ घंटा भगीरथ के साथ बकता रहा. फिर एक 'पेशल' चाय पी, सर की टोपी को ठीक किया, देह को मोड़-माड़ के सुस्ती निकाली और चलता बना.

कोने की तरफ़, कुएं के पास लुक्का दिखाई पड़ा था. साथ में सायकल था. नौरंगी वकील भी था. वह शायद मालगोदाम की तरफ से आ रहे थे. लक्खन ने उन दोनों को कनखियों से देखा था लेकिन इससे आगे कुछ और नहीं. नौरंगी ने

आवाज़ फेंक दी—अरे मास्टर, दो मिन्ट ठैर के दो बात तो कर लेव.

लुक्का ने चुटकी ली—मलेटरी जर्नल बन गया जे लक्खन बढ़ई. टेम थोड़े ही है ठैरने की.

लक्खन मुस्कराया और तम्बाकू की पीक थूक दी—बोलो, कऊनसी सौ लम्मरी बात है तुम्हारे पास ?

नौरंगी गला फाड़ कर हंसा था—लम्मर सौ ही है क्या ? हम तो बई, सिरफ़ छोटी-मोटी बात ही कै सकते हैं. लम्मर-बम्मर हम क्या जानें ?...

—अब जे बोलो. लुक्का ने बढ़ई को रोक लिया था—हम जानते हैं, तुम अपने ज़माने में कानरेसी रहे हो. जेल भी होई आए. लेकिन अब गली-मुहल्ले की भी कुछ सोचोगे कि नाय ?

—अब बोलो काम क्या है ?

—काम क्या है ? नौरंगी वकील ने लक्खन की पीठ पर हथेली रख दी थी—अरे मास्टर, कभी घर आवो. चाय, पानी पियो, मिलो-बैठो. बात और क्या होती है.

लक्खन ने गर्दन हिलाई—हूं चाय-पानी हमें पिलावोगे तो मिलेगा क्या तुमें ? टोपी जरूर लगाते हैं हम लेकिन नेता वेता तो हैं नही. फिर उसने एकदम से अपनी आवाज़ नीचे कर ली थी—मन्दर-बन्दर बना रहे हो मुहल्ले में ? करो बई करो. मुहल्ले की भी तो कोई इज्जत होती है, नाम होता है, बिहारीपुर मोहल्ला औरों से पीछे किस बात पे रहे ? लक्खन का समूचा लहजा इतना मज़ाकिया था कि लुक्का की तबीयत हुई थी, झाड़ दे कोई मां-बहन की गाली. खैर, उसने कुछ नही किया था.

नौरंगी वकील ने सिलसिले को थोड़ा सहज करना चाहा—मंदर बने तो बई, पैले कमैटी बनैगी ? क्या समझे ? कमैटी वाले ऊपर से तो नाय टपकेंगे ? हमी-तुम हैं...

लुक्का अधीर हो रहा था—देखो बढ़ई, अपन को एक बात मालूम है सिरफ़. मुहल्ला रंडी और जनखों से ही भरता रिया तो बस समझ ले हो गया काम, हां. तुम्हारी बहिन-महितारी पर भी कभी कोई निगाह डाल लैगा. फिर कैते फिरना...

लक्खन बहुत संजीदा हो गया था—मंदर बनाय लेव फिर तो सब सन्त बन जावेंगे.

लुक्का इस बार भी अपना गुस्सा पी गया था. पीना पड़ा था. लक्खन बढ़ई यूं तो कभी किसी से मतलब नहीं रखता लेकिन अब पहलवान समझ गया था. आदमी उतना ही पेचीदा है, जितनी कि पेट के अन्दर अन्तड़िया होती हैं.

नौरंगी ने कहा—तुम तो मास्टर, मसखरी करते हो !

—मसखरी ? वाह वकील साब, तुम तो कमाल की बात करते हो ? आटा कम और भूसा ज्यादा खाकर कौन कर लेगा मसखरी ?

नौरंगी ने फिर लहजा बदल दिया था—खैर छोड़ो जे सब. अब जे बोलो, मन्दर के लिए काम-वाम कुछ करोगे कि नाय ? हां, सुन लेव, कमैटी की एक मेम्बरी तुम्हारी भी रई. वकील ने फिर बहुत गद-गद होकर अपनी दोनों हथेलियां लक्खन के कन्धों पर रख दी थीं.

लक्खन ने टोपी उतारी और सर खुजा लिया. फिर आहिस्ते से नौरंगी की हथेलियों को अपने कन्धे पर से उतार दिया—अब चलता हूं, वकील साब. मैं ठैरा मजदूर आदमी. लकड़ी पे रन्दा बखत पे नाय चलाया तो लंगोटी उतारनी पड़ जावेगी. तुम्हारी तरहा कोई वकील मजीस्टर तो नाय हूं. फिर लक्खन ने दोनों हथेलियों को जोड़ लिया था.

थोड़ा आगे निकल गया तो नौरंगी ने गले पर अटक रहा थूक उगल-सी दी— मन में आग-सी थी लेकिन 'हुंह' के अलावा कुछ और नहीं बोला.

लुक्का को इस दफ़ा यह स्वगत आलाप फालतू लगा था— तुम कचैरी में मुकदमे चाहे जित्ता लड़ लेव, आदमी नाय पिछानते. हम तो जे बात कहंगे, जे साली बरेली का कुछ होय-वोयगा नाय. उसकी आवाज में जितनी निराशा थी, वह तो थी ही, होंठ का उलटना भी थूकने से कम नहीं था.

लुक्का अपने सिलसिले पर आ गया था—कमैटी-वमैटी जो चाहे बनाय लेव और देर नाय करना.

—ह्यां तो, सही बात जे है, लुच्चई करो तो ठीक. वर्ना कोई काम नाय कर सकते.

लुक्का निरीह-सा हो गया था. वह खामोश था लेकिन वकील के कहने पर कोई ऐतराज़ नहीं किया था.

कुछ देर दोनों ही चुप रहे.

लुक्का ने फिर कमर से निकालकर थोड़ा-सा तम्बाकू मुंह में डाल लिया था. जीभ से उसे सरकाकर होंठ के नीचे रखा और हाथ झाड़ लिए - धूल-मिट्टी को जूते से रगड़ा तो ठीक है. लेकिन सर पे रक्खो तो वही वैरी बनेगी.

—साला बिहारीपुर अब बहुत बदल गया पैहलवान.

लुक्का ठठाकर हंस पड़ा—अच्छा तो जे होगा, तुम भी थोड़ा अपने को बदल लेव.

नौरंगी भावुक-सा हो रहा था. उसने लम्बी-सी एक सांस ली—अब क्या करेंगे समझ के ? लोगन का भरोसा कुछ है ? कुत्ता पाल लो लेकिन आदमी का यक़ीन नाय करना, हां.

—अब आए तुम ठिकाने पे. लुक्का के चेहरे पर एक गहरी आत्म-प्रसन्नता-सी थी.

●●

मंदिर कमेटी बनने की मीटिंग यूं तो अब तक हो ही जानी थी लेकिन बस, कुछ-न-कुछ अड़ंगा सामने आ ही जाता. परसोराम बैद की तबियत इधर एक अरसे से अच्छी नहीं चल रही. सर्दी-जुकाम का दौर चला शुरू में, फिर बुखार चढ़ गया. उम्र का बोझ हो या बुखार की तेजी, इस दफ़ा बैद को महीना-भर चारपाई पर लेटे रहना पड़ा. लुक्का को तो खैर लग ही रहा था, नौरंगी वकील को भी लगा था कि परसोराम के बिना मन्दिर कमेटी नहीं बन सकती. बन अगर सकती भी है, बननी नहीं चाहिए. अब परसोराम ठीक-ठाक हो गए हैं लेकिन मुरारी डाक्टर खासी गड़बड़ी में फंस रहा था.

बदायूं से चारेक महीने पहले मुरारी की साली गौरी विधवा होकर बरेली चली आई थी. दो लड़कियां हैं और सोना, रुपए कुल जोड़ें तो कोई छह-सात हज़ार का जोड़ है.

इधर हफ़्ते-भर से खबर फैली है कि गौरी खुद को चमारटोली के एक मुसलमान नासिरुद्दीन के हवाले कर चुकी है. नासिरुद्दीन ने इससे पहले दो शादियां की थीं. और दोनों ही बीवियां शादी के साल-भर के अन्दर गुज़र गईं. दूसरी बीवी जब गुज़री, आठ दिन का एक लड़का छोड़ गई थी. लेकिन वह भी कोई पांचेक महीने के अन्दर तपेदिक की बीमारी से गुज़र गया.

नासिरुद्दीन ने तबला-हारमोनियम वगैरह मरम्मत करने की एक छोटी-सी

दुकान खोल रखी थी. काम वगैरह तो कोई खास नहीं था लेकिन खाली बक्त वह गा-बजाकर आराम से गुजार देता था. यूं शुरू से ही वह नमाजी है. पिछले साल हज में जाने के लिए अपनी गुज़ारिश भी भेज चुका था लेकिन लॉटरी से उसका नाम नहीं निकला था. इसके बावजूद हिन्दुओं के खिलाफ़ उसके मन में कोई बात, अंदाज़न, नहीं ही थी. रही भी होगी तो उसने उसका इज़हार कभी नहीं किया था.

मुरारी से नासिरुद्दीन की थोड़ी-बहुत मुलाकात थी लेकिन बस, इससे ज्यादा कुछ नहीं.

भगीरथ ने, वैसे, कई बार इधर नासिरुद्दीन को मुरारी के घर आते-जाते देखा था. शुरू में चाहे बात कैसी भी रही हो, पता किसी को नहीं चला था. अब मामला ही कुछ ऐसा बन गया कि किस्सा सभी जानते हैं. ज़रिया तो बताना मुश्किल होगा लेकिन भगीरथ बोल यही रहा कि सबकुछ मुरारी की चाल है.

मुरारी के घर में इस हादसे को लेकर क्या-क्या हो चुका, इस पर अंदाज़ा भी नहीं लग सकता. उस घर में जैसे कोई सूराख वगैरह भी न हो. खैर, मुरारी ज़रूर परेशान नज़र आने लगा था कुछ दिनों से.

गौरी का पेट निकल आया था और उसने मुरारी के इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया था कि सफ़ाई कर दी जाए. नासिरुद्दीन ने शादी की बात की तो गौरी ने इंकार नहीं किया था. वैसे उसे इस बात पर भी कोई ऐतराज़ नहीं था कि औरत की सफ़ाई हो जाए और फिर कभी मौके से शादी का इंतज़ाम हो.

लेकिन मामले पर रोड़ा अटक गया.

नासिरुद्दीन गौरी को कबूल करने को तैयार हुआ, उसकी बेटियों को नहीं. और मुरारी भी अड़ गया कि इन लड़कियों को अपने पास नहीं रखेगा.

यह मामला इतना फैलता गया कि गुलाब नगर के आर्य समाज मन्दिर में एक खासा जलसा ही हो गया. फैसला यह लिया गया कि चाहे किसी भी कीमत पर यह शादी रुक जाए. एक छोटी-मोटी समिति भी बन गई. उसमें ज्यादातर लोग दूकानदार थे लेकिन स्कूलमास्टर या वकील-जैसे लोगों को भी समिति में रखा गया था.

मैंमियाटोले में कोई जगत अग्रवाल हैं. पहले पंसारी थे, अब कपड़े वग़ैरह का धन्धा करते हैं. एकबार निर्दलीय उम्मीदवार की हैसियत से चुंगी का चुनाव भी लड़ चुके हैं. शुरू में वह कांग्रेस में थे लेकिन फिर हिन्दू-मुसलमान के सवाल को लेकर झगड़े हो गए थे. तब से राजनीति में हिस्सा लेते हैं लेकिन किसी भी पार्टी में शरीक नहीं हुए. पिछले चुनाव में आर्य समाजियों ने और हिन्दुओं ने उन्हें काफी मदद दी थी.

जगत अग्रवाल समिति के अध्यक्ष बनाए गए. शुरू में यह ना नू करते रहे. बाद में मान गए थे. लेकिन यह जरूर कह दिया था—फिर जे उम्मीद नाय करना कि गलत काम हमसे कराय लेंवगे. हम तो करेंगे वही, जो एकदम खरा होगा.

सबसे पहले जगत अग्रवाल ने नासिरुद्दीन को अपने यहां बुला भेजा. नासिरुद्दीन तय नहीं कर पा रहा था कि करना क्या चाहिए. जो लोग बुलाने के लिए गए थे; वे नामी-गिरामी जल्लाद भले ही नहीं लेकिन गुंडई में काफ़ी मशहूर थे. यानी इतने मशहूर तो थे ही कि बरेली वाले उन्हें नाम से ही पहचान लें.

उनमें से एक है कोई बिल्लू. बाप के पास बिसाती की एक छोटी-सी दुकान है. उसे बाप ही चलाता है. बिल्लू के पास वक्त की इतनी कमी है कि दुकान-वुकान में बैठने की फुर्सत ही कहां मिलती ? हाईस्कूल का इम्तहान पास करने की कोशिश उसने भी कभी की थी. लेकिन मास्टर ने नकल करते हुए रंगे हाथों पकड़ लिया था. फिर मास्टर की बड़ी धुनाई हुई थी और बिल्लू ने स्कूल की दीवार पर थूककर कसम खाई

थी --ह्यां अब पेशाब भी नाय करने आऊंगा.

लेकिन यह वाक़या बहुत पुराना है. दस-बारह साल तो तब से गुजर ही गए होंगे. तब उसकी उम्र थी कोई इक्कीस साल. अब तीस-बत्तीस का पूरा गबरू है.

—बिल्लू ने नासिरुद्दीन से ठेठ ज़ुबान में बात की—देखो मियां, जे तुम्हारा कोई ननिहाल तो है नाय जो लौंडिया पसन्द आ गई तो ले उड़ोगे और बाकी लोग सिर्फ़ तमाशा देखते रहेंगे खड़े होकर.

नासिरुद्दीन चुप रहा.

बिल्लू के साथ वाले लड़के ने धीरे से कह दिया था—कटुए की दुम !···

नासिरुद्दीन अब तक बैठा था लेकिन फिर एकदम से उठ खड़ा हुआ था. आंखें एकदम से आग की भट्ठी-सी हो गई थीं.

बिल्लू को अपने दोस्त की यह बात कोई खास मुनासिब तो नहीं लगी थी. लेकिन दोस्त है तो साथ आखिर देना ही पड़ता है. उसने नासिरुद्दीन का कन्धा पकड़ लिया था—देखो मियां, खामख्वाह दिमाग गर्म करने की बात नाय है.

—फिर दो न दस-बीस गाली और. नासिरुद्दीन की आवाज़ बहुत सपाट-सी थी—मैं भी पठान का बेटा हूं.

बिल्लू के दोस्त का पारा इस बार बहुत चढ़ गया था—साले पठान तेरे परदादे भी कभी रहे हैं ? पैले तेरा बाप हिन्दुओं में चमार रहा होगा···

नासिरुद्दीन दूकान की तखती छोड़कर नीचे उतर आया था.

बिल्लू ने आगे बढ़कर उसे रोक लिया—देखो मियां, गलत काम करोगे तो बातें भी सुननी पड़ेंगी. हम हरेक की ज़ुबान पे ताला तो नाय डाल सकते.

इस बीच अड़ोस-पड़ोस से काफ़ी लोग इकट्ठे हो गए थे. एक तरह से सबको यही इन्तज़ार था कि कुछ तो अब होगा ही.

बिल्लू ने दहाड़ा था—मजमा लगा है जो इत्ते लोग खड़े हो गए ? चलो ह्यां से.

लोग वहां से खिसक गए थे. लेकिन वे भला इस रस से वंचित कैसे हो सकते थे ? लिहाज़ा वे अब कुछ फासले पर हो गए थे. हां, इतना जरूर हुआ था कि बिल्लू की दहाड़ या अपनी जल्दी की वजह से आधे लोग चले गए थे.

बिल्लू ने नासिरुद्दीन को समझा दिया—खैर छोड़ो इन बातों को. रक्खा ही क्या है इनमें ? अब ऐसा करो कि कल सुबह दस बजे सैंमियाटोले में पहुंच जाव. जगत अग्गरवाल की दुकान के सामने हम मिल जांगे.

बिल्लू फिर मुरारी के घर पहुंच गया था.

दोस्तों को उसने वापस भेज दिया था और मुरारी के घर तक अकेला चला गया था. घर तक जाने की ज़रूरत नहीं हुई थी. नुक्कड़ पर ही मुरारी मिल गया था. मुरारी को शायद कुछ अन्देशा था, लिहाज़ा वह एकदम से मुड़ने लगा था.

बिल्लू ने आगे बढ़कर एकदम से पकड़ लिया था—वाह मास्टर, खूब सयाने बन रहे हो.

मुरारी थोड़ा अचकचा रहा था—पैचाना नाय.

—पैचान लोगे, पूरा बरेली शहर बिल्लू को जब जान ही गया, तुम भी हमें जान लोगे.

मुरारी ने अपनी आवाज़ सहज करने की कोशिश की—बई, नाम तो तुम्हारा खूब सुना. मिल पैली ही बार रिया हूं.

—बिल्लू ने गर्दन हिलाई—अब तो मिलते ही रहोगे.

—मैं ठैरा कामकाजी आदमी. फुर्सत ही नाय मिलती. एक छोटी-सी दुकान है डाक्टरी की…

बिल्लू ने मुरारी को एकदम से रोक दिया था—बड़े चालाक हो मास्टर. हम भी आखिर समझते हैं कुछ कि आटे-दाल का भाव क्या है?

—आटे-दाल का भाव? मुरारी ने ठहाका लगाया—अमां बात करते हो मौके की. खैर, चलो, घर चलते हैं. चाय-पानी पियो. आराम से बातें करेंगे…

—चाय-पानी फिर पीते रहेंगे. अब हमारे पास 'टैम' कोई ज्यादा नाय है. फटाफट बात सुनो, फिर हम चलते हैं. बिल्लू ने मुरारी को लगभग खींचकर सड़क के किनारे कर लिया था.

मुरारी ने न तो 'हां' कही न 'ना' इतनी आजादी उसे दी नहीं गई, वह समझ गया था.

बिल्लू पान चबा रहा था. उसने पीक निकाली तो मुरारी के कपड़े खराब होते-होते बचे. खराब भी अगर हो गए होते, वह माफ़ी मांगता, ऐसा मुरारी नहीं सोचता. खैर, उसने बात शुरू की—देखो, मास्टर, हमारी बात है एकदम सीधी-सपाट. लेकिन तुम ठैरे टेढ़े आदमी. साली को कटुए के साथ भेजकर उसका पैसा हजम करना चाहते हो न? जभी तो लौंडियों को रखने को तैयार नाय हुए, तुम आदमी क्या हो, कुत्ता भी तुम्हारे मुंह पे पेशाब नाय करने का.

मुरारी बुरी तरह डर गया था.

—डर गए न? बिल्लू के लहजे में अतिरिक्त सहजता थी, जैसे कोई ये मामूली-सी बात हो.

—तुम यक़ीन थोड़े ही मानोगे?

—यक़ीन? बिल्लू हंस पड़ा—यक़ीन भी मानेंगे. और बोलो क्या-क्या मनवाना चाहते हो?

—तुम सोचते हो, मुरारी डाक्टर को इज्जत प्यारी नाय है?

—मास्टर, सोचता-वोचता तो मैं कुछ भी नहीं. तुम असल में बिल्लू को जानते नाय हो. जभी तो ऐसा कैते हो.

मुरारी को जवाब सूझ नहीं रहा था. इस वक्त अगर एकदम से बारिश आ जाती या कड़क सर्दी पड़ती तो शायद वह कहीं छुप सकता था. कम-से-कम कोशिश कर सकता था.

बिल्लू ने पान की पीक एक बार और उगल दी—कल शाम सैंमियाटोले पहुंच कै हमारा नाम ले लेना, लोग पते पे पहुंचा देंगे. 'टैम' का ख़याल रखना ज़रा, पांच से सवा पांच नाय हो जाय.

यह एक हुक्म था. कम से-कम मुरारी को तो यही लगा.

●●

बिहारीपुर के लोग कहां मन्दिर बनवाने की बात सोच रहे थे, कहां बीच में यह फसाद आ पड़ा. इस मामले को लेकर शुरू में खूब खुसर-पुसर हुई. अब हर कोई गला फाड़कर बात करता है. लुकाने-छिपाने की जरूरत अब नहीं महसूस होती.

खैर, सबसे ज्यादा परेशान हुआ नौरंगी वकील—बदनामी तो जित्ती होनी थी, हो गई लेकिन अब बलवा हो जाएगा.

शंकर ने कहा—होने दो बलवा. तुम्हारी नानी तो नाय मर रही है!

नौरंगी ने डपट दिया—चुप बे.

शंकर चुप हो गया.

भगीरथ भट्ठी पर खड़ा था. चाय बन रही थी. अब तक वह चुप था लेकिन फिर बोलना ही पड़ा—वकीलसाब, किस-किसको चुप कराय लेवगे ? आग जलेगी तो धुआं तो निकलेईगा·

—मेरा क्या, आग जले चाहे धुआं निकले ? मैं तो कै जे रिया था, अब कोई ऐसा रस्ता निकालो, जो मामला बढ़ने न पावे. मुहल्ले की इज्जत होती है तो हमारा-तुम्हारा भी तो नाम ऊंचा उठता है नाय तो गू-कीचड़ में मरते रहो.

—अब एक काम करो. भगीरथ ने सलाह दी—कटुए को हिन्दू बनाय लेव. जे काम तुमारी मन्दिर कमैटी कर लैगी.

—एक काम कर तू.

—जल्दी बोलो, 'टैम' नाय है.

—जल्दी ही नाय बौत जल्दी सर मुंडा ले और आगरे की गाड़ी पे बैठ जा. होंआ तेरा इलाज हो जाएगा.

विनायक बंगालीटोले की तरफ़ से आ रहा था.

नौरंगी ने आवाज़ मार दी थी—अरे बई, कहां चले जा रहे हो, भागमभाग में ? फौज में तो नाम नाय लिखाय लिया ?

विनायक रुक गया था—बोलो वकील साब, खबर सुनाओ अपनी.

—खबर ? वाह बई वाह ! मैं कोई रेडियो हूं ? लेकिन मेरे न बताने से भी क्या ? अब तो बिहारीपुर मुहल्ला ही खबर बन गया, हांऽऽऽ···

विनायक ने थोड़ा-सा वक्त लेना चाहा. नौरंगी की बातें कभी भी सीधी नहीं होतीं, इसलिए.

नौरंगी ने ही सीधा सवाल किया—देखो बई, चाहे हम लड़ें-झगड़ें, चाहे प्यार-मुहब्बत करें, जे है मुहल्ले का अपना मामला. मुरारी के ह्यां जो हो गया, तुम भी जानते ही होगे. अब बोलो, आगे किया क्या जाय ?

—मामला बहुत टेढ़ा है.

—कमाल करते हो. सीधा मामला होता तो हमी न निपटाय लेते ? तुम नौजवान हो लेकिन लौंडे-लपाड़ों-से उड़ने नहीं रैते. सो कुछ सोच कै बताव.

—सोचूंगा.

—सोचूंगा ? जैसे तुमने सोचा ही नाय ? नौरंगी ने बड़े प्यार से विनायक की पीठ पर धौल जमा दी.

भगीरथ ने भट्ठी पर से मसखरी कर ली—फोटू छपेगी अखबार में, कटुए और हिन्दू की रांड की सादी.

नौरंगी ने हाथ जोड़ा—ऐ भाई, चुप हो जा.

—अपन को क्या ? चुप मैं हो जाऊंगा लेकिन किसी और से ना कैना. दस बात सुनाय देगा.

नौरंगी ने ध्यान ही नहीं दिया कि भगीरथ ने क्या कहा. उसने विनायक की हथेली पकड़ ली थी—कोई रस्ता ज़रूर निकालो.

—मुरारी से भी बात करनी पड़ेगी.

—कर सकते हो लेकिन किसलिए ? उसे तो मैंमियाटोले से गुण्डा आकर सारी पट्टी पढ़ा गया. अब तुमी सोचो, जो होना था, सो हो गया. अब इसमें इस बिचारे का क्या कसूर ? जगत अग्रवाल हैं न साड़ी वाले, सब करतूत उनीं की है. कैने को अपने को खूब हिन्दू कैता है और पीछे से लुच्चे-लपाड़न के साथ गुंडई की पार्टी बनाता फिरता. बई, पैसे वाले हो. लेकिन इसका जे मतलब नाय कि गरीबों पे हमला

करते फिरो.

नौरंगी को एकदम से एक बात याद आ गई थी—हां बई, एक और बात है, मौक़ाई नाय मिला तुमसे बात करने का. ह्यां, इस मुहल्ले में हम एक मंदर बनाने की सोच रहे हैं. बात तो जे है, चाहे रामनोमी हो, चाहे सिवरात्रि, झांकी बिहारीपुर में ही निकलनी चाहिए. वैसे भी मन्दिर होगा तो शाम-सुबह पूजा-पाठ का एक पवित्र माहौल भी बना रैगा.

विनायक देर से सुने जा रहा था. चुपचाप.

इतनी लम्बी चुप्पी नौरंगी वकील को खल रही थी—तुम सोच रहे होगे, नौरंगी वकील अगर पकड़ लेता है तो छोड़ता ही नाय. खैर, मैं तो कै जे रिया था, मन्दर के लिए कमैटी बनैगी. तुमें रैना है कमैटी में, जे अभी समझ लो. मैं चाहता था, परधान तुमीं बनो लेकिन परसोराम बैद ठैरे बुजुर्ग आदमी. और ज़रा वो भी चाहते जे ही हैं कि परधान का चुनाव उनीं का हो.

बचऊ हलवाई पता नहीं भूत की तरह एकदम से कैसे दिखाई पड़ गया था. डलाव वाले रास्ते से निकलकर वह मालगोदाम की तरफ बढ़ रहा था.

नौरंगी ने उसे पकड़ लिया था—ठैरो बई, ठैरो. इती भी जल्दी क्या है ?

बचऊ को थोड़ा ताज्जुब ही हुआ था. खैर, उसने चेहरे पर अंगोछा फेरा और फटाक से बोल पड़ा—बोलो, कौन-सा बम फोड़ रहे हो ?

—अमां हलवाई, बातन में तो तुम बड़े-बड़े वकीलन को पछाड़ देव.

—कई वकील ऐसे भी तो होते हैं, जिनें हलवाई होना चाहिए था.

भगीरथ ने अपनी दूकान के अन्दर से गोला फेंक दिया था—अब सुन लेव वकील साब, हांऽऽ, जमाना अब वो नाय रिया जो पैले था. सोच-समझ कै बात करियो.

नौरंगी बुरी तरह अचकचा रहा था—कै लो बई, कै लो. मैं तो मन्दर बनवावन को कमैटी की बात कर रिया था. बिन्नूबाबू मंत्री बन सकते हैं, खजांची बन सकते हैं या जो मरजी बन सकते हैं.

बचऊ ने अपनी ही हथेली पर मुक्का मारा था—फिर गाली किसको देवगे ?

नौरंगी असहाय सा होने लगा था—ऐ भाई, तुझे जहां जाना था, चला जा. हम नाय रोकते तुझे.

—लो हीय गए चित ? अच्छा महाराज, हम तो चलते हैं. जैराम जी की.

विनायक भी चलने को हुआ.

नौरंगी ने कृतज्ञता जता दी थी—आज तुमारा 'टैम' बौत ले लिया. तुम सोचना जरा मुरारी वाले मामले पे.

विनायक ने गर्दन हिला दी थी. अमूमन इससे स्वीकृति दी जाती है. फिर उसने कलाई पर बंधी घड़ी देखी और सामने निकल गया.

नौरंगी ने फिर से याद दिला दिया था—बई, भूल नाय जाना. सोच-समझ कै कुछ करना तुमीं को पड़ेगा.

विनायक कुछ दूर निकल गया लेकिन नौरंगी फिर से याद दिलाता रहा. वह तब तक बोलता रहा, जब तक कि इस बात का यक़ीन नहीं हो गया कि अब उसकी आवाज सुनने वालों के कानों तक नहीं पहुंचेगी.

●●

परसोराम बैद के घर एक मीटिंग बुलाई गई. वैद्य ने इस बैठक में दरी बिछा दी और पान-तम्बाकू का प्लेट बीच में रख दिया. यह आम जलसा नहीं, एक गुप्त मीटिंग-सी थी. ऐसी हालत में क्या करना चाहिए, इस मामले पर मशविरे के लिए

नौरंगी वकील से चन्द लोगों ने रात को नौ के बाद इकट्ठा होने के लिए कहा था. कोई खास ज्यादा लोग नहीं, सिर्फ़ मुहल्ले के ही चार-छह आदमी बुलाए गए थे. बाहर का तो सिर्फ़ एक आदमी था—भईयन उर्फ़ भईयन बदमाश. मुहल्ले के लोगों में परसोराम, मुरारी, नौरंगी, लुक्का, डोरीलाल और विनायक थे.

भईयन कोई दसेक बजे पहुंचा. वह पहुंचा तो सभा में जैसे एक छोटी-मोटी खलबली-सी मच गई. बरेली का ही नहीं, पूरे रुहेलखण्ड का नामी पहलवान भईयन अब भईयन बदमाश के नाम से मशहूर हो गया. कत्ल और बलात्कार उसने कितने किए, खुद को भी याद नहीं होगा. जब खास अंग्रेजों का जमाना था, तब बड़े-बड़े दरोगों को वह फूंक मारकर खत्म करता रहा है. तब के दरोगे मर्द होते थे, मर्द. अब देखो तो सीने में बाल तक नहीं मिलेंगे. भईयन इन्हें इससे ज्यादा अहमियत देने को राजी नहीं है.

लेकिन अब जमाना ऐसा बदला कि जिन्दगी ही दुरुस्त हो गई. हुई होगी दुरुस्त लेकिन इससे भईयन का क्या ? आज भी जब सड़क पर तनी हुई छाती के साथ निकलता है, लोग सहम जाते हैं. इस बरेली शहर में अगर दंगे हुए और दंगे रुकवाए गए, भईयन के बगैर मुमकिन नहीं हुआ.

खैर, भईयन के घुसते ही, परसोराम ने अपनी बीच वाली जगह उसे दे दी—आओ, पहलवान आओ. हम बस तुम्हारी ही राह देख रहे थे. भईयन ने अपनी छड़ी रखी और पसरकर बैठ गया.

फिर आधा मिनट तक एक गहरे किस्म की चुप्पी छाई रही. आखिर में नौरंगी ने ही सिलसिला शुरू किया—देखो, पैलहवान, मामला तो सारा तुम जान ही गए. हम लोग ठैरे गिरस्ती लोग. लीडरों वाले दांव-पेंच तो जानते नाय हैं. जो हो गया, सो हो गया. अब तुमीं बोलो, आगे क्या किया जाय.

भईयन ने नौरंगी की बात शायद नहीं सुनी थी. या सुननी नहीं चाही थी. उसने विनायक की तरफ़ पान की तश्तरी बढ़ा दी— सुना है, मुहल्ले वालों ने आपको पीटा था. एक दफा जरा मुझे भी तो पता चले, कौन हैं जे मुहल्लेवाले ?

—पहलवान, यह सिलसिला छोड़ो, आज का मामला बहुत टेढ़ा है. बलवा हो सकता है, सो उस पर कुछ सोचो. विनायक ने बात खत्म करनी चाही.

भईयन ने लुक्का की तरफ़ देखा.

लुक्का कुनमुना-सा रहा था.

परसोराम ने फिर बीच-बचाव किया—मुहल्लेवालन पे मार लेना लात. हम कुछ नाय कहेंगे. लेकिन पैले इस मामले से तो निबट लो.

फिर मिनट-भर के लिए एक असह्य-सी चुप्पी तैर गई.

—एक ही रस्ता है—कटुए को हिन्दू बनाय लेव. डोरी ने देर तक सोचते रहने के बाद कहा.

—सारे कटुअन को ? नौरंगी ने पूछा.

डोरीलाल चुप रहा. अपनी बेवकूफ़ी समझ गया था.

—शहामतगंज के तमाम कटुए छुरे-चाकू पे धार लगा रहे हैं. परसोराम ने हुक्का गुड़गुड़ाते हुए सूचना दी.

—तुम बोलो बिन्नू भईया. भईयन ने कहा.

—क्या कहूं, कुछ समझ में नहीं आ रहा है. खैर, मैं जगत अग्गरवाल के पास पहुंच जाऊंगा. हाथ जोड़के कहूंगा कि हुज्जत न करें. अपने यहां फैक्ट्री में एक मिस्त्री है—अनवर. मिस्त्री कम ज्योतिषी ज्यादा है. सुना है, अग्गरवाल उसकी बहुत सुनते हैं.

उससे भी कहलाऊंगा.

—कहला लो लेकिन कुछ खास फरक नाय पड़ने का. अग्गरवाल की नस का पता है. बलवे के बूते पर अलेकसन लड़ेगा अगली दफा.

—पुलिसवालों से भी कहूंगा. और कोई रास्ता रह नहीं गया.

भईयन ने मुरारी की तरफ इशारा किया—सुनो, डागडर, तुमें दफ़ना दें तो मामला थोड़ा ठण्डा पड़ सकता है. साली को कट्टुए से तुमने जान-बूझके फंसाया है. है क्या रांड के पास ? बीघा-चार बीघा खेत और दस-बीस तोले सोने के अलावा. जे लै के तुम ऊपर नाय जावगे.

मुरारी कुछ नहीं बोला. उससे, वैसे, जवाब की उम्मीद भी किसी ने नहीं की थी. डोरीलाल को उस पर दया-सी आ रही थी. उसने अनुभव किया, गिद्धपने के बावजूद इस वक्त मुरारी डागडर बकरा-जैसा निरीह लग रहा है.

—मुझसे क्या चाहते हो ? भईयन ने नौरंगी से पूछा.

जवाब परसोराम ने दिया—पैलहवान तुम कन्नी काट कै निकल नाय सकते. तुम फैसला करो. हम लोग मंजूर कर लैंगे.

भईयन ने प्लेट में से पान का एक और बीड़ा उठाया और खड़े होकर मूंछें ऐंठ लीं. फिर हाथ की छड़ी से जांघों पर आहिस्ते से मार लिया—मुहल्ले में पैले तमीज से रहना सीखो. सही आदमी की इज्ज़त करो और जनखों-जैसा फिरना बन्द करो. काम पड़े तो बखत पे आना. भईयन के सीने की हड्डियां साली पत्थर की हैं. फिर दरवाज़े पर से उसने विनायक के लिए हाथ जोड़ लिए थे—कभी हमें भी तो याद कर लिया करो. बुरा ज़रूर हूं, लेकिन तुमारी इज्ज़त में कसर नाय रैगी. फिर वह सामने खड़े रिक्शे पर बैठ गया था.

भईयन चला गया तो माहौल एकदम सूना-सा लगा. यह बन्द कमरे की मीटिंग फिर अपने आप ही बर्खास्त हो गई थी. परसोराम ने अपने दरवाज़े फटाफट बन्द कर लिए थे.

●●

कुतुबखाने के चौगहे पर यूसुफ़ सुर्मा वाले की दूकान है. दूकान देखने में छोटी ज़रूर लगती है लेकिन कारोबार बहुत फैला हुआ है. यूसुफ़ अब बूढ़ा हो गया लेकिन सुर्मा खुद की देख-रेख में ही तैयार कराता है. जायदाद वग़ैरह मिलाकर लाख-डेढ़ लाख का मालिक है यूसुफ सुर्मा वाला. आज तक चाहे मज़हबी हो चाहे कौमी, किसी भी तरह के पचड़े में नही पड़ा. काम सिर्फ़ दो ही हैं. क़ायदे से अल्लाह की इनायत के लिए नमाज़ पढ़ना और पैसे बनाना. किसी को क्या मालूम था, यही यूसुफ़ मियां दिनदहाड़े कभी भरे बाजार में क़त्ल कर दिया जाएगा !

कत्ल हो गया तो फव्वारे की तरह एकदम सुर्ख खून देर तक निकलता रहा. फिर वही खून जमकर पत्थर-सा बन गया. जब तलक पुलिस आई, उसका रंग सुर्मे की तरह काला हो चुका था.

क़त्ल किसने किया, इस पर अलग-अलग लोग अलग बातें करते हैं. अड़ोस-

पड़ोस के दुकानदारों का कहना है कि कत्ल हो चुकने के बाद उन लोगों ने सिर्फ़ लाश देखी. इससे पहले का कुछ भी पता नहीं है. बहरहाल, खून होते ही, कुतुबखाना का गहमा-सा बाज़ार एकदम से सूना हो गया था.

क़त्ल की यह खबर पुलिस वालों को बाद में, शहर के बाक़ी हिस्सों में पहले पहुंची. मैमियाटोले और गुलाबनगर के आर्यसमाज के मन्दिर में हिन्दुओं ने मोर्चा बनाया. उधर आलमगिरीगंज से लेकर शहामतगंज के आढ़तों तक बरेली के तमाम मुसलमान इकट्ठे हो गए. आढ़ती ज्यादातर हिन्दू हैं. वे अपनी-अपनी दुकानों में ताला लगाकर इष्टनाम जपते हुए गली-कूचों से सुरक्षित जगहों तक पहुंचने का रास्ता ढूंढने लगे. रिक्शे वग़ैरह चूंकि बन्द हो चुके थे, पैदल चलने के अलावा कोई और चारा भी नहीं था. इत्तफ़ाक़-सा ही है कि आढ़तियों में दुबले-पतले चिराग लेकर ढूंढ़ने से भी नहीं मिलते. उनमें से कई लोगों के वज़न छोटे-मोटे हाथी से कम क्या होंगे, ऐसे में जल्दी-जल्दी किसी पनाह की तरफ़ भागना कितना मुश्किल होता है, काश, दंगई इतना समझ पाते.

आलमगिरीगंज के निषिद्ध इलाके में जो औरतें मुसलमान नहीं थीं, मुसीबत उनके लिए सबसे ज्यादा थी. वे न तो यहां रह सकती थीं न हिन्दुओं की बस्तियों मे ही घुस सकती थीं. लेकिन हज़ार मुसीबत में भी रोशनी का कोई-न-कोई हिस्सा दिख ही जाता है. मुसलमानों के नेता हैं अब्दुल रईस खां. बरेली में सबसे बड़े कोयले के व्यापारी हैं. एकबार विधानसभा के लिए और एकबार लोकसभा के लिए चुनाव लड़ चुके हैं और दोनों ही बार बस थोड़े से वोटों के लिए रह गए हैं. खैर, इस हार को अब्दुल रईस खां ने अपनी आखरी हार नहीं मन्ज़ूर कर ली. अगली बार वह फिर चुनाव लड़ेंगे.

अब्दुल रईस ने ऐलान किया कि हम बहादुरी से लड़ेंगे लेकिन चार चीज़ें नहीं छेड़ेंगे—बूढ़ा, बच्चा, औरत और सूअर. यह खबर आलमगिरीगंज के औरत-बाज़ार तक भी पहुंची थी. हिन्दू औरतें बिल्कुल निश्चिन्त तो खैर फिर भी नहीं हो सकती थीं. लेकिन डर शायद कुछ कम हो गया था. डर के कम होने के पीछे यह भी वजह रही होगी कि मुसलमान औरतों ने उन्हें हौसला दिलाया था.

मुसलमानों का जुलूस अल्लाह-हो-अकबर के साथ कुतबखाने की तरफ़ बढ़ने लगा था. उनका इरादा था, यूसुफ सुर्मावाले की लाश के साथ शहर-भर में घूमेंगे और बरेली वालों को बताएंगे कि खून के बदले में कभी गुलिस्तान की भीनी खुशबू नहीं मिलती. लेकिन पुलिस पहले ही वहां पहुंच गई थी और कार्रवाई होने लगी थी. पुलिस वालों ने पूरी तैयारी के साथ जुलूस को रोका और वापस चले जाने की गुज़ारिश की.

यह बातचीत चल ही रही थी कि बाईं तरफ़ वाली गली से बिहारीपुर का अनीस दौड़ता आया. चेहरे की रंगत से लग रहा था, वह बमुश्किल यहां तलक पहुंच सका है उसने इत्तला दी—नासिरुद्दीन को अगरवाल के बन्दों ने छुरा घोंप कर खत्म कर दिया. इसके बाद वे शायद अनीस की खबर लेते लेकिन लुक्का पहलवान ने अपने शागिर्द को छिपाकर मुहल्ले से बाहर निकाल दिया था. अनीस सुबकियां भर रहा था कि उसके बीवी-बच्चों को काफ़िरों ने अब तलक दफ़ना भी दिया होगा.

. इसके बाद अब्दुल रईस ने भीड़ से क्या कहा, पता नहीं चला. एकदम से बहुत ज्यादा शोरगुल होने लगा था. अब्दुल रईस अपनी दोनों हथेलियों को हवा में उछाल रहे थे और एक रिक्शे पर खड़े होकर इर्द-गिर्द के लोगों से कुछ कहने की कोशिश कर रहे थे

आखिर में पुलिस वालों ने लाश के चारों तरफ़ घेरा डाल दिया था. उन्हें डर था कि जुलूस वाले लाश छीन कर ले जाएंगे. खैर, ऐसा नहीं हुआ था और तमाम मुसलमान इधर-उधर की गलियों में घुस गए थे. लगभग हरेक के पास छुरे, चाकू, या कमसे-कम एक लाठी ज़रूर थी.

कुछ देर में आग की लपटें दिखाई पड़ रही थीं. जमनादास हलवाई की मशहूर और बरेली-भर में सबसे पुरानी दूकान ऊंची-ऊंची लपटों के बीच खो गई थी. अन्दर देसी घी के साथ सूअर की चर्बी और डालडा के टीन रखे थे. उन सब की मिली-जुली बू तेजी से इलाके में फैल रही थी. हलवाई की दुकान के साथ एक छोटी-सी दर्जी की दूकान है. है वह मुसलमान की ही लेकिन आग हिन्दू-मुसलमान नहीं पहचानती. दर्जी की दुकान भी देखते ही देखते राख में तब्दील हो गई. आग को तेज़ हवा मिल गई थी. लपटें फट्ट-फट्ट की आवाज़ के साथ बहुत तेजी से आगे बढ़ रही थीं. दमकल वाले आधे घण्टे बाद आ पहुंचे थे. लेकिन तब तक कुतुबखाने का यह बाज़ार बहुत-कुछ मरघट-जैसा दिखने लगा था.

●●

नासिरुद्दीन की लाश दूकान के सामने कत्ल होने के बाद से पड़ी है. दुकानों के नीचे के तख़्ते से लगता है, बहुत आसानी से उसने मरने को कबूल नहीं किया था. देर तक छीना-झपटी चलती रही होगी और आखिर में नासिरुद्दीन गिर पड़ा होगा. बस, इतना ही काफ़ी होता है.

लाश पर मक्खियां भिनभिना रही थीं. तादाद में वे इतनी ज़्यादा थीं कि लाश काली दीख रही थी. गर्दन का हिस्सा नाली पर पड़ा था, जिस नाली पर नासिरुद्दीन ने जाने-अनजाने पता नहीं कितनी बार थूका होगा. तब किसको क्या मालूम था कि आखिर में उसका नसीब उसे घसीट कर वहीं ले जाएगा !

लाश के इर्द-गिर्द एक गहरा-सा सन्नाटा था. इस रास्ते से होकर कभी कोई गुज़रा है, इतना यकीन करने में भी अब वक़्त लगेगा.

बिहारीपुर के इलाके में वैसे ज़्यादा मुसलमान नहीं हैं. सिर्फ तकिया वाले शाह के इर्द-गिर्द कुछ दूकानें हैं, जिनके मालिक मुसलमान हैं. इसके अलावा मुसल-मानों के पांचेक घर हैं और मजार के अन्दर पीर की एक छोटी सी कोठरी है, बस.

बरेली में पिछली सदी में एक रईस हुआ करते थे, काले शाह. बदस्तूर काबुल के पठान. लेकिन काबुल के पठानों के नाम के साथ जिस तरह डर की एक तस्वीर खिंच जाती है, काले शाह के साथ ऐसा कभी नहीं हुआ. बहुत दिलदार आदमी थे और हिन्दू-मुसलमान सभी इज्जत करते थे. सुना जाता है, काले शाह के पास आकर कोई खाली हाथ नहीं लौटा. थोड़ा-सा शौक शेरो-शायरी का भी था. सो, अगर कोई फनकार दरवाज़े पर आ गया, वह अपना झोला भरकर ही लौटता था. हिन्दुओं में जो अछूत थे, वक़्त-बेवक़्त इनाम मांगने तो खैर आते ही थे लेकिन कुछ ऐसे लोग भी थे जो दिन के उजाले की बजाय रात को छुपकर शाह की इनायत हासिल करने आते थे. उनमें कायस्थ, ब्राह्मण सभी होते थे.

अब काले शाह तो मौजूद नहीं हैं लेकिन उनकी याद को बनाए रखने के लिए उनके बेटों ने एक खूबसूरत मक़बरा बिहारीपुर मुहल्ले में बना दिया था. फिर वे सब-के-सब काबुल लौट गए थे. तब से हर साल शाह की बरसी कव्वाली और ग़ज़लों से रात-भर मनाई जाती. दूर-दूर से कव्वाल और गाने-बजाने वालों की टोली आती और रात-भर खूब रंग जमा रहता. हिन्दू-मुसलमान सभी इकट्ठे होकर जश्न में शरीक होते थे.

इस बिहारीपुर वालो ने शायद अब तलक सोचा भी न था कि काले शाह मुसलमान थे या हिन्दू. मजार के अन्दर से नूर्डे पीर की आवाज अजान के वक्त सुनाई ता पड जाती थी लेकिन किसी ने इस मामले मे कुछ सोचा ही नही था

नासिरुद्दीन का कत्ल हो गया तो मुसलमान दूकान वाले, सब शहामतगज की तरफ भाग गए थे फजल मिया की एक छोटी-सी सायकिल-वगैरह मरम्मत करने की दूकान है उसने दूकान बन्द की और पीर के पास पहुचा—अब अपनी काठरी मे से निकलो और जान बचाओ हिन्दू-मुसलमान का दगा हो गया है शहर मे

बूढा पीर इन सब हादसो से नावाकिफ था कुछ देर तक तो उसे कुछ समझ मे नही आया था फिर समझ मे थोडा-बहुत आया होगा लेकिन उसने ज्यादा यकीन करना जरूरी नही समझा था फजल मिया फिर अपनी बीवी और महीने की बच्ची के साथ बिहारीपुर छोडकर चला गया था इसके घटे-भर बाद मोटर सायकल पर फटफट आवाज करते हुए तीन मुस्टडे आए, उतरे और मजार मे घुसकर पीर के पेट मे छुरा भोक दिया.

बूढी उम्र का पीर अल्लाह के नाम पर थोडी देर तो कराहता रहा लेकिन बाद मे उसका जिस्म ठडा पत्थर-सा हो गया था आखे उघडी रह गई थी और नीचे की जमीन पर खून के कतरे जम गए थे बस इतना ही, और कोई फर्क नही पडा था

●●

डोरीलाल घबराया-सा विनायक के घर आया जितनी बाते उसे मालूम थी, उससे तीन गुनी बाते एक ही सास मे बोल गया, फिर डोरीलाल की सास फूलने लगी थी वह जमीन पर दीवार के सहारे बैठ गया था

विनायक ने कमीज पहन ली और डोरीलाल के साथ मुरारी के घर की तरफ़ चल पडा

रास्ते मे ज्यादातर घरो के दरवाजे बन्द ही नही, मजबूती के साथ चिटकनी भी चढाई हुई थी भगीरथ के होटल मे कोई नही था यह पहला मौका था, जब वहा इतनी वीरानगी थी भगीरथ एक के बाद एक दरवाजे के तख्तो को लगा रहा था जाहिर है, जोखम उठाकर दूकान मे बैठे रहने की हिम्मत वह जुटा नही पा रहा था वैसे भी दुश्मनो की क्या कमी ? मुहल्ले मे ही दस-बीस मिल जाएगे फिर लोग समझेगे हिन्दू-मुसलमान का बलवा और असल मे बात होगी कुछ और ही खैर, वह जल्दी-जल्दी तख्तो को लगाकर रेडियो बद करने लगा

नुक्कड पार करते ही मुरारी का घर है उसकी बैठक का दरवाजा कब खुला होता है, यह शायद सिर्फ उसे ही मालूम होगा आज भी दरवाजा बद था और सामने का बरामदा खाली था सिर्फ एक मरियल-सा कुत्ता बैठा हुआ था उस पर लोगो की धकापेल मे जिसे कभी मुहल्ले मे जगह नही मिली, आज उसे सल्तनत मिल गई थी कोई दूसरा वक्त होता तो मुहल्ले के चार लडके ताश के पत्ते लेकर बैठे मिल जाते

डोरीलाल ने नीचे से आवाज दी तो जवाब मे देर तक कोई और आवाज लौटकर नही आई फिर बरामदे पर जाकर उसने साकल खटखटा दी विनायक ने तय कर लिया था कि मुरारी को घर के तमाम लोगो के साथ स्टेशन की दूसरी तरफ मढीनाथ तक वह खुद ही छोड आएगा

डोरीलाल ने साकल खडकाई तो तीनेक मिनट बाद अन्दर से एक कापती-सी आवाज निकली लेकिन पता नही चला कि कहा क्या गया ?

—खोलो बिन्नू बाबू आए है डोरीलाल बोला

दरवाजे की लकड़ी मे जो सूराखे है, उनसे होकर शायद किसी ने देख लिया

था कि बात कितनी हद तक सही है. फिर दरवाज़ा खुला और मुरारी डाक्टर एकदम से निकल आए. चेहरा आबनूसी स्याह. चेहरे की पेशियां बुरी तरह फड़क रही थीं.

विनायक बरामदे पर आया और मुरारी के कंधे पर हथेली रख दी—सब खैरियत तो है ?

—गौरी ने कनेर का बीज खाकर खुदकशी कर ली है.

—ह्वाट ?

मैं झूठ नाय बोल रिया.

—तुमने हम लोगन को बुलाया तक नही ? डोरीलाल बड़ी मुश्किल से बोल सका था.

—इसमें ज्यादा 'टैम' नाय लगा, डोरी. घंटे-डेढ घंटे में मामला फिर पकड़ने लायक नाय रै जाता. दरवज्जा खोल कै अन्दर घुसा तो देखा, जिस्म एकदम बरफ बन चुका है.

फिर मुरारी अन्दर की तरफ मुडा. पीछे विनायक और डोरीलाल थे. डोरी ने पूर्ववत् दरवाजे की चिटकनी चढ़ा दी थी.

विनायक ने महसूस किया, घर की दीवार और आंगन में एक जबरदस्त घुटन-सी है. घर के बाकी लोग कहां है, पता नही चला. चार कमरों और एक मझले आकार के आंगन वाला घर एकदम भुतहा लग रहा था वे जीने से ऊपर की तरफ चढ़ने लगे तो लगा, कोने वाले कमरे में एक-आध लोग सिसकियां भर रहे हैं. सिसकियों की आवाज़ बेहद दबी हुई थी.

ऊपर के कमरे का दरवाजा साकल समेत खिड़की के पास रखा था. ज़ाहिर है, इसे तोड़ने में मुरारी को काफी मेहनत करनी पड़ी थी. कमरे के अन्दर बीचो-बीच सफ़ेद धोती में एक औरत की लाश पड़ी हुई थी. जुबान की तरफ़ से खून की एक पतली-सी धार-सी थी, बस. इसके अलावा और कोई तब्दीली नजर नहीं आई थी. लग रहा था, बड़े इत्मीनान से सो रही है. पेट का हिस्सा ज़रूरत के मुताबिक उभरा हुआ था. डोरीलाल ने सोचा ज़रूर था लेकिन पूछा नही कि कौन-सा महीना चल रहा है.

दसेक मिनट में वे सब कमरे से बाहर आ गए थे.

मुरारी के चेहरे पर बेइंतहा बेचारगी थी.

विनायक ने कहा—आप लोग मढ़ीनाथ की तरफ़ निकल जाइए. खुदकशी का मामला है, सो पुलिस को इत्तिला तो करनी ही पड़ेगी. पोस्टमार्टम रिपोर्ट के बाद लाश वापस मिलेगी तो जलाने का इंतजाम हो जाएगा पुलिस वालो से डरने की कोई बात नही है. मैं भी उन्हें बता ही दूंगा. खैर, अभी तो आप लोगों को मैं ही मढ़ीनाथ की तरफ़ छोड़ आता हूं.

वक्त इतना नाजुक था कि सोचने-विचारने की फुर्सत ही नही थी. न मुरारी में ताकत ही अब रह गई थी. खैर, मुरारी तुरन्त नीचे उतरकर कोने वाले कमरे में घुसा और पांचेक मिनट बाद निकल आया. इतनी देर में बीवी से शायद संक्षिप्त-सी सलाह कर ली थी. विनायक के साथ वे लोग फिर मढ़ीनाथ की तरफ़ चलने लगे थे. नंद बढ़ई के घर की तरफ़

पीछे डोरीलाल रह गया था. नीचे आकर उसने बाहर से दरवाज़े की साकल चढ़ाई और बरामदे पर कुत्ते के साथ पसर कर बैठ गया.

●●

बरेली में भूड़ का इलाका कुछ अजीब है. यहां मुसलमानों की बस्ती है, मज़ार,

दरगाह, कब्रिस्तान, मस्जिद वगैरह हैं और आर्यसमाजियों का बहुत बड़ा मंदिर भी है. इससे भी ज्यादा गहरी बात यह है कि इस इलाके का मालिक भईयन बदमाश है. यहां अगर कोई पत्ता भी हिलेगा तो भईयन की मर्जी से ही. ऐसी जगह अगर गौ की तरह सीधे संगीत सिखाने वाले मास्टर प्रभाकर जी का शाम से थोड़ी देर बाद अंधेरे में खून हो जाए तो किसे नही ताज्जुब होगा ? इस दफ़ा मामला जरूर बहुत संगीन था. हिन्दू-मुसलमानों के बीच इस बरेली शहर में अंग्रेजों के जमाने से लेकर अब तक कम दंगे नहीं हुए और जनता के साथ बहुतेरे पुलिस वाले भी कई बार मारे गए लेकिन इस भूड़ के इलाके में कभी कोई फ़र्क़ नहीं आया.

इस मर्तबा यह फर्क़ क्यों आया, कौन जाने ? वजह चाहे जो भी हो भईयन ने कोई हुज्जत नही खड़ी की. हां, इतना जरूर किया था कि अपने घर से निकला और मुहल्ले के बाज़ार से होकर चौक तक चला गया. चौक पर प्रभाकर जी की लाश पड़ी हुई थी.

प्रभाकर जी ने शादी नही की थी और ज्यादातर कमर लचकाकर ही चलते थे. गा-बजा लेते थे और बाज़ार में ही गाने का एक स्कूल चलाते थे. लोगबाग़ उनके बारे में अक्सर कहा करते थे कि उनमें शादी करने लायक बात ही नही है. मुंह-फटे क़िस्म के लोगो का कहना था, संगीत-मास्टर न बनते तो जनखा बखूबी बन सकते थे.

खैर, भईयन जब लाश के पास पहुंचा, रात के नौ बज रहे थे. पुलिस आ चुकी थी और दरोगा ने बदस्तूर सलाम मारा था. साथ के सिपाही अपने अफसर को सलाम मारते देख कर, 'अटेनशन' की मुद्रा में खड़े हो गए थे.

भईयन ने उस जगह को झुककर देखा, जहां छुरा लगा था. पुलिस वाले छुरे की तलाश मे बगल की नाली में से कीचड़ निकाल रहे थे. भईयन ने इशारे से मना कर दिया—लगता है, हनीफ नाई की करतूत है. लेकिन छुरा यहां नाय मिलेगा. और मैंने कहा जरूर, हनीफ़ को कम-से-कम तुम लोग पकड़ नाय सकते. इसके बाद भईयन ने लाश के पास थूक दिया था—तू भी क्या नचैया-गवैया बनके बखत गुज़ार रिया था. हनीफ़ के हाथ ही सही तुझे छुटकारा मिल गया.

भईयन ने फिर दरोगा को अपने करीब बुलाया - जो कुछ करना-वरना है करो और यहां से दफा हो जाओ. इसके आगे-पीछे कोई नहीं है लेकिन यह हिन्दू की लाश है. इतना याद रखकर इसे जला ज़रूर देना, चील-कौओं के हवाले नाय करना.

●●

कुतुबखाने के चौराहे से एक सड़क आलमगिरीगंज होकर शहामतगंज की तरफ़ जाती है और दूसरी सड़क मदारी दरवाज़ा, बमनपुरी होकर पुराने किले की तरफ़. इस सड़क के दोनों ओर मुहल्ले हैं, दूकानें हैं, गलियां हैं. दरअस्ल, इन्हें अगर अलग कर दिया जाए, फिर बरेली का तो कुछ भी नहीं बचता. सुबह के पांच बजे से लेकर रात के एक बजे तक आदमी, रिक्शा और ठेलों की ठेलपेल में यह इलाका समुद्र जैसा बड़ा दिखता. ऐसे मौके बहुत कम आए हैं, जब यहां भी वीरानी छाई हो. लेकिन इस दफा कर्फ्यू लगा तो वीरानी क्या, सन्नाटा छा गया. पुलिस वालों के दस्ते इस तरफ़ से उस तरफ कदम मारते रहे. सर पर लोहे का टोप और कंधे पर कुंदा लगा हुआ बन्दूक. लगा, इलाका नशे में इतना सो गया कि अब कौन जाने, आंखें कभी खुलेंगी भी या नहीं.

दिल्ली-लखनऊ के अखबारों में यह घटना छपी और बरेली वालों ने संतोष कर लिया, चलो अखबारों में एक बार और नाम आया.

कुतुबखाने का इलाका ज्यादा गरम है, सो यहा कर्फ्यू लगातार जारी रहा. दूसरे इलाकों मे कर्फ्यू लगातार तो खैर नही चला लेकिन कभी-कभी जरूर लगा दिया जाता. जिस वक्त कर्फ्यू नही भी लगा होता मुसलमानो की चहल-पहल कम नही होती.

कर्फ्यू के इस जबरदस्त वजन के बावजूद आलमगिरीगज की तीन हिन्दू रंडियो का कत्ल हो गया सुनने मे आया, कुछ मुसलमान मर्दो ने खुलेआम उनके साथ बदसलूकी की और आखिर मे छुरा घोप दिया अब्दुल रहीम खा, जो मुसलमानो के नेता है, इस हादसे से बहुत शर्मिन्दा हुए और स्थानीय उर्दू साप्ताहिक 'आवाज-ए-जमाना' मे बयान दिया कि हालत ठीक हो जाने के बाद मामले की छान-बीन की जाएगी.

रडियो के कत्ल की बात को लेकर मैमियाटोले मे मदिर के भीतर अग्गरवाल और नौ दूसरे जानेमाने लोगो ने एक बन्द दरवाजे की मीटिंग की मीटिंग पाच घटे तक चली और इस बीच शहर मे हो रहे हादसो के बारे मे तमाम खबरे यहा इकट्ठी होती रही. मीटिंग खत्म होने के बाद वे दस आदमी निकले तो नौजवानो ने उन्हे सुरक्षित जगहो तक छोड दिया था

इसके बाद उसी रात बिहारीपुर म भगी मुहल्ले के बाद मुसलमानो की जो आबादी है, वहा आग की लपटे आसमान छूने लगी इस मुहल्ले के रहने वाले ज्यादा-तर लोग खोचा लगाते है या मजदूरी वगैरह करते है आग लगी तो वे लपटे देखकर घर से निकले और फौरन ही अन्दर घुसना पडा इत्तफाक मे अभी पुलिस वाले यहा नही थे ओर बिल्लू और उसके यार-दोस्तो ने बन्दूक से हवाई फायर किया और दहाड मारी—फौरन घर के अन्दर घुस जाओ या फिर चलो 'पाकिस्तान' पहुंचाते है. इस 'पाकिस्तान' पहुंचाने का सिर्फ एक ही मतलब रह गया था उन सबने गोली खाकर मरने के मुकाबले जलकर खाक हो जाना शायद ज्यादा इज्जत का समझा था.

सिर्फ एक बुढिया अन्दर नही गई थी.

वह अन्दर आने की बजाय एक बन्दूक वाले के करीब चली आई थी. वह शायद अपने पोतो जैसे लडको से कुछ पूछना चाहती थी लेकिन इससे पहले कि कुछ पूछती, गोली उसका सीना चीर कर निकल गई थी बुढिया दसेक मिनट हलाल किए गए बकरे की तरह तडपती रही फिर एकदम खामोश हो गई थी

जो लोग डर के मारे अन्दर घुस गए थे, मौके की तलाश मे थे कि पिछवाडे के किसी रास्ते से भाग चले लेकिन रास्ता मिलना इतना आसान नही था लपटे दूर तक फैल रही थी और सामान वगैरह के गिरने की आवाजे एक अजीब-से ताल-मेल के साथ हो रही थी

आखिर मे दमकल वाले आ गए थे और पुलिस भी आ पहुंची थी लेकिन तब तक आदमी के जलने की बू पूरे इलाके म फैल गई थी इस तूफान मे पता नही चला कि बुढिया की लाश किस जगह गिरी थी और उस जिस्म मे से कितना खून निकला था•••

●●

बिहारीपुर मे कर्फ्यू नही था लेकिन मौसम दिसम्बर की रात की तरह ठडा था भगीरथ का 'होटल' बीच मे एक-आध बार खुला भी था लेकिन लोग अब विविध भारती के गाने सुनने कम ही निकलते फिर भगीरथ ने अपनी दूकान बद रखना ही मुनासिब समझा था वह नौरगी वकील, परसोराम वैद और लुक्का पह-लवान कोलेकर विनायक के घर पहुंचा था.

परसाराम कुर्सी पर बैठे, टांगे ऊपर उठाकर जमालीं और जयदुर्गा कहकर अपने दोनों हाथ किसी अदृश्य शक्ति के प्रति जोड़ लिए

विनायक ने पानी का गिलास बढ़ाया तो परसाराम ने जैसे उस पर गौर ही नहीं किया—कुछ सोचा-वोचा है, मास्टर ?

—अग्रवाल से अपनी फैक्ट्री के मिस्त्री के साथ मिला था लेकिन वह सीधी तरह बात नहीं करता

- कहता क्या है ?

—कुछ नहीं कहता है, खामख्वाह आप लोग मुझे बदनाम कर रहे हैं इस दंगा-बलवे से मेरा क्या रिश्ता ? मेरे हाथ में कुछ अगर होता तो चाहे मेरी जान चली जाती, मैं बलवा नाय होने देता

लुक्का बोला—घाघ है साला

—तो क्या तुम लपाड़ूमल समझ रहे थे ? नौरंगी के लहजे में तल्खी-सी थी

—मैंने अब्दुल रईस से भी मिलने की कोशिश की थी लेकिन लगता है, दो-चार दिनों में मिलना मुमकिन नहीं होगा। विनायक बोला

क्यों ? भगीरथ ने पूछा

नौरंगी डपट पड़े—आय भगीरथ का बच्चा, चुप भी रैता या नहीं…

विनायक ने सामने बैठे लोगों को समझाना चाहा—आप लोग शायद महसूस करें एक जिम्मेदारी हम लोगों की भी है.

सबकी आंखों में सवाल थे

—कोशिश करनी है कि एक भी मुसलमान शहर को छोड़कर न जाए और बगैर किसी डर के वे यहां रह सकें

परसाराम को बात कुछ जची नहीं लेकिन एकदम से कुछ कह देना शायद थोड़ा मुश्किल होता है लिहाजा वह शुरू में खखारने फिर कुनमुनाने लगे थे

कोई दूसरा वक्त होता तो नौरंगी वकील कह देते—वई, कटुओं के लिए तो पाकिस्तान भी है लेकिन हिंदुस्तान में हिन्दू ही मारा जाएगा लेकिन उसने विनायक के प्रस्ताव का समर्थन किया था—जे बात सालह आने सई है लेकिन मुसलमान तो सारे भाग गए…

—वकील साब जे कहो कि हमने भगा दिए। भगीरथ बोला था

नौरंगी वकील शायद अपनी बात और उसकी संभावना पर खुश होता लेकिन भगीरथ के बोलने के बाद चुप ही रहा

—पता करने में अभी भी शायद कुछेक लोग ऐसे मिल जाएंगे बाहर जिनके दरवाजों पर ताले लटके हैं लेकिन अन्दर बेचारे आहिस्ते-आहिस्ते सांस ले रहे होंगे उन्हें खुल कर सांस लेने की आजादी देनी होगी विनायक ने कहा

—चलो, साफ-साफ कै दो, कौन है ? नौरंगी ने पूछा

—नासिरुद्दीन की दुकान के पीछे पुराने बर्तनों का धंधा करने वाला कमालुद्दीन रहता है वह अभी तक वहीं है शायद जाने वाले के लिए कोई जगह है भी नहीं चमार टोली में बन्ने मियां के घर में उसकी बूढ़ी मां रह गई है बुढ़िया को बाप-दादों का पुश्तैनी घर छोड़ने के लिए उसका बेटा तैयार नहीं कर सका ढूंढने से ऐसे और भी लोग मिल जाएंगे

नौरंगी ने एकदम से दूसरा मसला शुरू किया—अब के देखना, कटुअन का हमला बिहारीपुर में ही होगा

विनायक चुप

नौरंगी ने माफ़ी मांग ली—मुसलमानन को कटुआ कैना जरा आदत पड़ गई वैसे तुम यक़ीन रखना, दिल में कोई बात नाय है.

—हां, दिल तो राम गंगा का पानी-सा साफ़ है. बोलने के बाद भगीरथ ने एकदम से जम्हाई ले ली थी.

नौरंगी ने जवाब नहीं दिया. सिर्फ़ भगीरथ को घूर लिया था थोड़ा.

●●

जगत अग्रवाल का एक बेटा है. नाम नरेश, रमेश या परेश जैसा कुछ है. दिमाग़ से काफ़ी हद तक अपंग. कई बार अपना ही घर भूल जाता और बाजार में देर तक फिरता रहता. लेकिन लोग चूंकि अग्रवालो की रईसी की वजह से और दूसरे कारणों से बरसों से जानते हैं, कोई-न-कोई उसे घर पहुंचा ही जाता. एक दिन शाम को उस लड़के का कतल हो गया. वह भी मैंमियाटोले के पार ही बमनपुरी की ईंटों वाली गली में.

ईंट का रंग तो खैर वैसे ही लाल है, खून के रंग से इस दफ़ा लबालब भी हो गया. छुरा आमतौर पर पेट में भोका जाता है. लेकिन उसकी गर्दन पर भोंक कर गले के हिस्से को लगभग अलग ही कर दिया गया था. खबर पांचेक मिनट के अन्दर अग्रवाल को मिल गई थी. और दसेक मिनट के भीतर आधा मैंमियाटोला वहां पहुंच गया था. इत्तफाक से तब थोड़ी देर के लिए कर्फ्यू हटा हुआ था.

अग्रवाल ने अपने बेटे की लाश देखी और बुत-सा बन गया.

सिर्फ़ बिल्लू की आंखें अंधेरे के बावजूद जलती हुई दिखाई पड़ रही थी. उसका चेहरा खून के दबाव की वजह से और भी ज्यादा सुर्ख हो गया था. उसने कमरमें खोंसा हुआ चाकू निकाला, किर्ट-किर्ट की आवाज़ से खोल भी लिया. फिर पुचकारते हुए उसे चूम लिया—कसम खा के कैता हूं, दस कटुओं से बदला लूंगा.

बिल्लू ने फिर अपनी मोटर-सायकल स्टार्ट की और हवा की तरह अदृश्य हो गया. उसके पीछे पांचेक और लड़के उसी कायदे से वहां से निकल गए. मोटर-सायकिलों की आवाज इकट्ठी इतनी हो गई थी कि बमनपुरी का वह इलाका सन्नाटे के बीच सहम-सा गया था.

पुलिस आ गई थी.

जो आदमी उनमें इन्सपेक्टर या दरोगानुमा था, उसे अग्रवाल ने अपने पास बुला लिया— तुम लोगों को जो कुछ लिखना-पढ़ना, फोटो वग़ैरह लेना है, जल्दी से निबटा लो और लाश अपने हवाले कर दो.

दरोगा ने शायद कुछ जवाब दिया था.

चार लोग अग्रवाल को कंधों और पीठ की तरफ़ से पकड़े हुए थे. वह लगातार कुछ बड़बड़ा कर कह रहे थे, या कहने की कोशिश कर रहे थे. आखिर में फिर उन्होंने एक चीख मारी और फूट-फूट कर रोने लगे. अब तक चेहरे में जो पत्थर का-सा भाव था, एकदम -से पिघलकर बहने लगा था. अग्रवाल ने फिर जोर लगाया और अपने को छुड़ाने की कोशिश की.

अन्धेरा काफ़ी गहरा हो गया था. आस-पास के मकानों में एक चुप्पी-सी छायी थी. ज्यादातर खिड़कियां और दरवाज़े बन्द थे. वैसे इतना पता चल रहा था कि दरवाज़ों की दरारों में से कुछ आंखें भीड़ के बीच पड़ी लाश को देखने की कोशिश कर रही हैं. लेकिन एक तो अंधेरा था, ऊपर से भीड़ न सही, कुछ लोग घेरे की शक्ल में जमा हो गए थे. लिहाजा कुछ भी देख सकना मुमकिन नहीं था.

●●

कुतुबखाने के चौराहे से एक सडक उत्तर की तरफ जाती है बहेडी, रुद्रपुर, हल्द्वानी होकर काठगोदाम तक इस रास्ते पर कुतुबखाने से लेकर तकरीबन पौन मील तक कबाडियो, तम्बाकू के व्यापारियो और खराद की मशीन वालो, इत्र वगैरह बेचने वालो की दूकाने है दूकानदार किसी जमाने मे सिर्फ मुसलमान ही थे अब, बटवारे के बाद मुसलमानो की तादाद कुछ कम हो गई और बहुतसारे हिन्दुओ ने अपना धन्धा जमा लिया हिन्दू, यानी पजाबी बनियो ने दूकाने पहले तो पटरी पर लगाई फिर आहिस्ते-आहिस्ते दुकाने भी बनाली इसके बावजूद आज भी इस इलाके के दूकानदारो मे मुसलमानो की ही तादाद साठ फीसदी है दस-बीस ईसाई भी मिल जाएगे लेकिन उनके धन्धे अभी तक इतने छोटे है कि गिनती मे ही नही आते

इस इलाकेके सबसे मशहूर दूकानदार है खुदा बख्श इत्रवाले वैसे असली खुदा बख्श गुजर कर कब अल्लाहमिया के प्यारे होगए, इसे अब शायद ही कोई जानता हो लेकिन दुकान का नाम वही है—'खुदाबख्श इत्रवाला' अब जो दूकान पर बैठने वाला झुर्रियो वाला चेहरा है, वह खुदाबख्श का पोता है लेकिन जाना अपने दादा के नाम से ही जाता है

इस खुदाबख्श का घर है, दूकान के ठीक ऊपर दूकान के साथ जा तग सीढिया है, उनसे होकर ऊपर जाने से बाई तरफ छह सात छोटे-बडे कमरो का एक घर है खुदाबख्श और बेटे-पोते मिलाकर बारह-चौदह लोगो के रहने की जगह. एक आलीशान मकान रामपुर बाग मे भी बनवाया है लेकिन खुदाबख्श को न तो वे नकली तहजीब वाले लोग पसन्द है, न जगह का इतना फैलाव ही लिहाजा अपने नौ बेटो मे से दो बेटो और पोतो के साथ वह कुतुबखाने के इस मकान मे ही रह गए थे

खुदाबख्श नमाजी आदमी है शाम का नमाज पढकर जीने से थोडा उतरा ही था कि चार-छह मुस्तडो ने पकड लिया खुदाबख्श का अचानक यह हादसा समझ मे नही आया था जब समझ मे आया तो चिल्लाने की कोशिश की लेकिन किसी ने गले के अन्दर कपडा ठूस दिया था फिर दम घुटने लगा तो आखे बाहर निकल-सी रही थी इतने मे किसी ने पेट पर एक भारी-भरकम लात जमायी और उसी वजन की एक गाली भी उडेल दी लेकिन खुदाबख्श तक गाली नही पहुंची थी जिस्म मे जान जरूर थी लेकिन बेहोश

आखिर मे खुदाबख्श की अन्तडिया पेट चीर कर निकाल ली गई थी. उन्हे सडक पर भी छोडा जा सकता था लेकिन निकालने वाले साथ वाली दुकान के दरवाजे पर लटका गए थे हबीब मिस्त्री की दुकान के दरवाजे पर

इतना सारा होने मे कुल पन्द्रह-एक मिनट लगे होगे इतना ज्यादा सन्नाटा था कि और तो और खुदाबख्श के घर वालो को भी इतने बडे हादसे की जानकारी आधा घण्टा बाद मिली तब तक बूढे सौदागर का जिस्म एकदम लाल होकर जमने लगा था सडक पर थोडी रोशनी जरूर थी लेकिन उससे शक्ल वगैरह ठीक से पहचानी नही जा रही थी न पहचानी जाए लेकिन इतना पता हो गया था कि बरेली का सबसे मशहूर इत्र का व्यापारी अब सिर्फ एक गोश्त का लोथडा बनकर रह गया है, जिस गोश्त की कोई कीमत नही होती, खरीदार नही होता

●●

अगले दिन तीसरे पहर गुलाबनगर की मस्जिद मे एक सूअर को हलाल किया गया इधर किसी जमाने मे मुसलमानो का जमाव था, सो एक मस्जिद भी बन गई थी. लेकिन अब मुसलमानो के चार-छह घर ही सिर्फ इधर रह गए थे. वे भी बलवा शुरू होते ही मुहल्ला छोड़कर चले गए थे

मस्जिद में खासा जलसा हुआ था. कोई पचासेक आदमी वहां मौजूद थे. लेकिन उन पचासों में अकेला बिल्लू ही चालीस के बराबर था. वह सामने खड़े लोगों से बोलने के लिए मस्जिद की सीढ़ी पर चढ़ गया. बोलने की कोशिश की तो उसे महसूस हो गया, लड़कीबाजी करना और छुरे-चाकू चलाना एक बात है और जनता को समझाना दूसरी बात. खैर, उसने नीचे खड़े पारस को बुलाया कि ऊपर मस्जिद के अन्दर जाए और सूअर का जिबह कर डाले. मुसलमान लोग मजहबी वजह से हलाल करते हैं, झटका नहीं. बिल्लू ने कहा कि सूअर को झटके से मारा जाए.

पारस जात से बाल्मीकी है लेकिन अब एक लकड़ी की टाल का मालिक है. चुनाव वग़ैरह का वक्त आता है तो किसी-न-किसी का हो लेता है और कुछेक वोट दिलवा ही देता है. खैर, वह सूअर को घसीटता हुआ अन्दर लाया और फरसे से उसकी गर्दन काट दी. लोग मारे खुशी के तालियां बजा रहे थे. सूअर शुरू में तो आदमी की ही तरह तड़पता रहा फिर कुछ ही देर में क़तई खामोश हो गया था.

पारस ने फिर उसके टुकड़े बनाए और हरेक टुकड़े के साथ एक नए मुसलमान का नाम जोड़ लिया. सामने खड़े लोगों को बहुत मज़ा आ रहा था. इधर चार-छह सालों में शायद ही इतना बेहतरीन नज़ारा किसी को हासिल हुआ हो.

आख़िर में सूअर के गोश्त के टुकड़े बिहारीपुर, खन्नो मुहल्ला, बमनपुरी और सिटी स्टेशन के पास की मस्जिदों में डलवा दिए गए.

●●

मलूकपुर की भट्ठी का ठेकेदार मूलचन्द अमूमन ऐसे मामलों में पड़ता ही नहीं. चाहे हिन्दू हो, चाहे मुसलमान किसी को भी वह अपने कुत्ते के बराबर भी दर्जा नहीं देता. और जबसे जानकी उसके साथ रहने लगी है, अपनी भट्ठी के अलावा बाकी मामलों से लगभग बेखबर ही रहने लगा है. शाम का वक़्त हुआ तो मलमल का चुन्नटदार कुर्ता पहना और जानकी को लेकर अपने तांगे पर बैठ गया, डेढ़-दो घण्टे बाद लौटा तो ठेके तक जाकर एक चक्कर लगा आया और खाना खाकर सो गया. या फिर मूड हुआ तो कभी रात के शो की फिल्म देखने चला गया. वैसे फिल्म वगैरा में कोई खास दिलचस्पी मूलचन्द की नही है. कहता है—जनखों का नाच है जे, हां. कहीं मुजरा वग़ैरह हो रिया हो तो वह सबसे पहले हाज़िर होगा जे मूलचन्द और सौ-दौ-सौ इनाम में ही बांटके आएगा.

बिहारीपुर, कसगरान, मलूकपुर में बाक़ी तमाम दूकानें बन्द थीं लेकिन मूलचन्द ने ठेका चालू रखा. डंके की चोट पर बोला – खाने के लिए तो कौड़ी भी नहीं है, सालो दंगा क्या करते हो ? पैले मूत के वो पी लेव तो जिसम में कुछ ताकत आवेगी. तब करना खून-खराबा.

ठेका चालू था.

मछली और पालक की पकौड़ियां एक कोने में तली जा रही थीं. बीस-पच्चीस लोग बोतलों के साथ मौज में थे. मूलचन्द एक कोने में कुर्सी डाले बैठा पान चबा रहा था. हाथ में बेंत की एक काली छड़ी थी. हमेशा ही यह रहती है. छड़ी का इस्तेमाल तो वैसे हमेशा नहीं होता लेकिन कभी अगर हो जाता तो आदमी जब तक लहूलुहान होकर बेहोश नहीं हो जाता, छड़ी नही रुकती.

बिल्लू एकदम से ठेके के अन्दर घुस आया था. साथ में चारेक यार और थे. वे बाहर खड़े थे.

अन्दर आकर उसने सिग्रेट सुलगाली और गर्दन और क़मीज के कॉलर के बीच रखा हुआ नीले रंग का रूमाल निकाल लिया. चेहरे पर फेर लिया था फिर.

मूलचन्द और बिल्लू की वाक़फ़ियत यूं पुरानी ही कही जाएगी. यहां-वहां मेल-मुलाक़ात गाहे-बगाहे हो ही जाती है. लेकिन कभी भी मिल-बैठकर यार-दोस्ती की बातें हुई हों, सो नहीं बिल्लू ने दो-चार बार कोशिश जरूर की थी लेकिन मूलचन्द को इतनी फुर्सत कहां, जो लौंडिया छाप गैरों से बात करे ?

खैर, बिल्लू अन्दर आया और टीन वाली एक जंग खाई कुर्सी खींच ली — लेकिन मास्टर, देना बिलायती ही, हां. ह्यां देसी-वेसी नाय चलने की.

मूलचन्द ने पान की पीक बगल में उगल दी थी—कैसे मेरबानी की ?

—अमा, मज़ाक काहे को करते हो ? तुम पे मेरबानी करने की हिमाकत तो नीली छतरीवाला नाय करता होगा.

— हूं.

—वैसे जे बात कहूंगा, उस्ताद. पूरी बरेली शहर में है एक मर्द का बच्चा— मूलचन्द ठेकेदार. कटुअन में इत्ती हिम्मत नाय जो ह्या आन कै कुछ कर लेवे.

मूलचन्द उबासियां ले रहा था.

—एक जरूरी काम से इधर आया था, सोचा अपने ठेकेदार से भी मिलता चलूं. दो मिंट बात भी कर लेंगे, हंसी-मजाक भी हो जायगी.

मूलचन्द ने घड़ी देखी —पांच मिंट होय गया

बिल्लू हंसने लगा—ठेकेदार, अगली दफ़ा तुम अंग्रेजन के ह्यां जरूर पैदा होगे इत्ता मैं कै देता हू, हां.

मूलचन्द ने दुबारा जम्हाई ले ली

—एक बात है, ठेकेदार.

— हां.

—वई, है जे हिन्दुअन का मामला, सो कैने आ गया. बरेली शहर में कित्ते हिन्दू कतल होय गए, तुम तो जानै ही हो. अब तुमी बोलो. फिर कटुअन के घर बर्फी-लड्डू तो नाय भिजवाएंगे. हम तो एक बात जानै हैं.

—जल्दी बोलो. 'टैम' नाय है.

बिल्लू थोड़ा सहम गया था. ऐसे लहजे सुनने की जरूरत कभी पड़ती नहीं है. लेकिन बोलने वाला मूलचन्द था, सो वह दांत निपोर कर रह गया. खैर, उसने बगैर फालतू बात किए अपनी आरज़ू पेश कर दी —तुमारे ठेके में एक दढ़ियल है, असगर मियां. तुम कैदो तो उसकी थोड़ी खबर ले ले

मूलचन्द उठा और पूरी ताकत से एक चांटा रसीद कर दिया— अब बोल, ले ली खबर ?

बिल्लू के साथी समझ नहीं पा रहे थे कि अन्दर घुसना चाहिए या बाहर रहने में ही ख़ैरियत है.

चांटा खाकर बिल्लू कुर्सी समेत गिर पड़ा था.

वह उठा और धूल झाड़ने लगा. चेहरे पर एक अजीब किस्म का अचकचाना-सा था. उसके पास अलीगढ़ी चाकू था, रिवाल्वर था लेकिन यह पहली दफ़ा है, ऐसे हादसे के बावजूद उसने इनका इस्तेमाल नहीं किया.

—और सुन ले. मूलचन्द नजदीक गया और बिल्लू की ठुड्डी पर उंगली रख दी — फ़िर कभी बिहारीपुर, मलूकपुर में नजर नाय आना.

बिल्लू एकदम से बाहर आया और मोटर-साइकिल स्टार्ट कर ली. फिर जिस रफ्तार से आया था. उसी मिज़ाज से चला भी गया.

मूलचन्द ने इससे आगे कोई ध्यान नहीं दिया था. उसने मुंह के अन्दर एक

बीड़ा पान रखा और बगल में पड़े ट्रांजिस्टर की आवाज़ थोड़ी और ऊंची कर दी.

●●

सिटी स्टेशन का यार्ड मास्टर है— एब्राहम जॉन. पहले ये मुसलमान थे. नाम था इब्राहिम वगैरा कुछ. लेकिन यह मामला आज का नहीं है. तब मुल्क आज़ाद नहीं हुआ था और अंग्रेजों का ज़माना था. ऐसे वक़्त अगर एक लंगड़े आदमी को रेलवे में इस शर्त पर नौकरी मिल जाती है कि मुसलमानियत छोड़कर अब ईसाई बनना पड़ेगा तो इसमें एतराज़ किसको हो सकता है ? तब इब्राहिम मियां एब्राहम जॉन बन गया था.

इसी स्टेशन पर स्टेशन मास्टर थे एक एंग्लोइण्डियन साहब. उनकी लड़की दिमाग से कुछ सुस्त-सी थी. एब्राहम जॉन ने उससे आगे-पीछे की फ़िक्र किए बिना, शादी कर ली थी तो उसका दर्जा थोड़ा ऊपर उठ गया.

इब्राहममियां को सिर्फ़ इलाहाबाद की अवधी ही आती थी. लेकिन शादी हो गई तो ससुर ने अंग्रेजी के दो-चार जुमले और गिनती सिखा दी थी. बस अब अब्राहम जॉन अपने को पढ़े-लिखों की जमात में सोचने लगा. जब नौकरी लगी थी, तब प्वाइंटर था. यानी यार्ड में शंटिंग के वक़्त लाइन सेटिंग का काम था. लेकिन देखते-ही-देखतेयार्ड मास्टर का ओहदा मिल गया था. अब्राहम को ईसा मसीह के बारे में क्या महसूस हुआ था, नही मालूम, लेकिन इतना ज़रूर लग गया था कि अल्लाह मियां की मेहरबानी बेमिसाल ही होती है ! तब एक दिन वह छुपकर कुतुबखाने की मस्जिद तक जाकर नमाज़ भी पढ़ आया था.

लेकिन ये सब इतनी पुरानी बातें है कि आसानी से खुद अब्राहम भी याद नही कर पाएगा. लेकिन जब अनहोनी होती है, तो किसी के साथ भी और कही भी हो सकती है. अब्राहम के आठ बच्चों में से सबसे छोटा वाला लड़का तब पैदा हुआ था जब उम्र के हिसाब से उसे लालबत्ती लगा देनी थी. ख़ैर, जो हुआ, सो हुआ. खुदा की मर्ज़ी थी कि पांच बरस के चार्ल्स का इसलिए कत्ल हो जाएगा कि उसका बाप कभी मुसलमान रहा है ?

अब्राहम को इतना सदमा पहुंचा था कि बारह-चौदह घंटे सिर्फ़ बेहोशी में ही कट गए तब मन हुआ था, इन मुल्क के लोगों पर थूक दे और पाकिस्तान-वगैरह कही चला जाए.

स्टेशन में काम करने वाले शंटर, फायरमैन, लाइटनमैन वगैरह ने बहुत अफ़सोस ज़ाहिर किया था.

अब्राहम ने कोई जवाब नही दिया था गला इतना भर-सा आया था कि लगने लगा था, एकदम से दहाड़ मारकर रो पड़ेगा

अब्राहम की मेम इस हादसे के बाद काफ़ी-कुछ पागल-सी हो गई थी. अक्सर वह घर से बाहर निकलती और लैम्पपोस्ट के पास, उस जगह जाकर अपने बेटे को ढूंढ़ती फिरती, जहां उसकी लाश पाई गई थी.

●●

कोतवाली के पास सोने-चादी की एक दूकान मशहूर है— बरेली ज्वेलर्स. रुहेलखण्ड के पुराने रईसों में श्यामलाल गुप्ता की अच्छी बिसात है. वह इसके मालिक हैं. दूकान के सामने दो-दो बन्दूकधारी गोरखे चाहे दिन हो, चाहे रात, हमेशा तैनात रहते. एक दिन अलसुबह कोई चारेक बजे वे गोरखे अपनी ही बन्दूकों से मारे गए और दूकान लूट ली गई. लूटने वाले फिर वहां गौ की टांग छोड़ गए थे.

श्यामलाल गुप्ता को बात मालूम हुई तो फ़ौरन ही उनका हार्ट फेल हो गया.

हादसे की जगह कोतवाली से इतनी क़रीब थी कि किसी को कम-से-कम 'बरेली ज्वेलर्स' के बारे में कोई फ़िक्र ही नहीं थी. गुप्ता ने कोतवाल से मिलकर ज़रा खास ध्यान रखने की बात भी सिर्फ़ दो दिन पहले कर ली थी. वैसे भी व्यापार के लिहाज़ से यह इलाका बरेली में इतना खास है कि पुलिस वालों की चौकसी यहां शायद ही कभी ढीली रही हो. लेकिन इसके बावजूद यह सब कैसे हो गया, इस पर पुलिसवाले भी चक्कर खा गए. खैर, इस हादसे के बाद सबसे पहले यह किया गया, उस इलाके के दरोगा ब्रजभूषण को नौकरी से सस्पेंड कर दिया गया. ब्रजभूषण को शेरो-शायरी का बेहद शौक था और वह मुशायरों में जाकर कई दफ़ा गज़ल वगैरह भी पढ़ आते थे. दरोगा की यार-दोस्ती महज़ हिन्दुओं तक ही सीमित नहीं है. उनके दोस्तों में रामपुर के नवाब के दामाद से लेकर बरेली म्यूनिसिपेलटी में अस्सी रुपल्ली पाने वाले कासिम बढ़ई तक न-जाने कितने मुसलमान हैं. हिन्दू दोस्तों की तकलीफ़ है तो यही कि ब्रज-भूषण अच्छा खासा दरोगा है लेकिन अपने को कटुओं के साथ यारी और शेरो-शायरी में बर्बाद कर रहा है सुनने में आता है. अपनी जवानी के दिनों में, कोतवाल की बेटी नाज़िमा से आंख लड़ गई थी. ब्रजभूषण तब मामूली सिपाही भर थे. कोतवाल था ज़रा सीधे किस्म का आदमी. वैसे हमेशा ही ऐसा नहीं रहे होंगे लेकिन बीवी गुज़र गई तो फिर ऐसा ही हो गए थे. मामला काफ़ी आगे बढ़ गया और कोतवाल को पता ही नहीं चला. बदायूं में सालो रहती थी. खबर उस तक पहुंची. वह भागी-भागी आई और नाज़िमा को अपने साथ अगले ही दिन ले गई. महीने भर के अन्दर फिर नाज़िमा की शादी हो गई थी.

खैर, असली बात यानी 'बरेली ज्वेलर्स' लूटे जाने की वजह चाहे जो भी हो ब्रजभूषण दरोगा को एस० पी० ने सस्पेंड कर दिया. मामला नाज़ुक था लिहाज़ा दरोगा ने भी चूं-फाड़ नहीं की थी. वैसे सुनने में आता है, स्वर्गवासी श्यामलाल गुप्ता के किसी दूर के रिश्ते के दामाद एस० पी० साहब थे.

●●

मुल्क जब आज़ाद नहीं हुआ था, ऐसा दंगा एक बार और बरेली में हुआ था. मुस्लिम लीग का तब एक छोटा-सा दफ्तर बरेली में था. कहीं रामपुर या मुरादाबाद में एक मुसलमान औरत के साथ किसी अधेड़ हिन्दू हवलदार ने इतनी बदसलूकी की थी कि औरत ने खुदकशी कर ली थी. मुसलमान यानी मुस्लिमलीगी इस हादसे से भड़क उठे थे और कुतुबखाने की लाइब्रेरी के सामने के पार्क में भारी जलसा बुलाया था. रुहेलखण्ड के तमाम ज़िलों से हज़ारों की तादाद में मुसलमान शामिल हुए थे. उन दिनों बरेली ज़िले के मजिस्ट्रेट थे जॉन एंथोनी. इतने खूंखार कि शेर भी डर जाए लेकिन आदमी कई दफा किसी से नहीं डरता. खैर, मजिस्ट्रेट साहब ने जी तोड़ कोशिश की कि जलसा न बुलाया जाए लेकिन जलसा बुला लिया गया.

जलसे की तैयारी की खबर एंथोनी को मिली तो वह नैनीताल में अपनी नई-नवेली दुल्हन के साथ सुहागरात मना रहे थे. उन्होंने वैसे टेलीफोन पर कई बार आगाह किया था कि बिल्कुल अभी जलसा किसी के भी कार्यालय में नहीं होगा. और मजिस्ट्रेट जब सुहागरात से वापस आए, बरेली जल रही थी. तब तक हिन्दू और मुसल-मानों की कोई तीन सौ लाशें गिर चुकी थीं.

लेकिन उस हादसे के बाद से छोटी-मोटी मुठभेड़ें ज़रूर होती रही हैं लेकिन इतना बड़ा दंगा इस इलाके में कभी नहीं हुआ था. आज़ादी के दिनों में बरेली, बदायूं, शाहजहांपुर, रामपुर से बहुत सारे लोग पाकिस्तान चले गये थे. लेकिन जो आखिर-कार नहीं गए थे, उनकी तादाद भी छोटी नहीं है.

मामला बहुत ही संगीन हो गया तो बरेली के मजिस्ट्रेट और पुलिस-कप्तान ने शहर के उन नागरिकों की एक मीटिंग बुलाई, जिनकी लोग इज्जत करते है. दसेक लोगों को बुलाया गया दसवां नाम विनायक का था. बाकी नौ लोगों मे से सात लोग आजादी की लड़ाई मे जेल काट चुके थे और बाकी लोगों मे एक वकील था, दूसरा लोहे का व्यापारी हिन्दू-मुस्लिम दोनो ही मजहब के आदमी थे मीटिंग मे तय किया गया—शुरू मे पूरे शहर मे हकीकत बताकर पोस्टर लगाए जाएंगे फिर दो दिन बाद कुतुबखाने मे शांति-पदयात्रा की जाएगी पदयात्रा के बाद शाम को मोतीपार्क मे जलसा बुलाया जाएगा

●●

अगली शाम पोस्टर लग गए.

पोस्टर लग जाने के चार घंटे बाद एक आदमी तेजी मे मोटर-साइकिल पर आकर 'कौशल्या भवन' के सामने उतरा दरवाजे की साकल खटखटाई तो विनायक ने दरवाजा खोला रात के डेढ़ बज रहे थे वह आदमी विनायक को पल-भर घूरता रहा और आखिर मे हाथ मे पकड़ा हुआ लिफाफा थमा दिया लिफाफे के साथ एक फिकरा भी फेंक गया—आग से खेलने की ताकत तुम्हारे पास अभी नही है घर बैठे दाल-रोटी खाओ और नौकरी करो फिर वह एकदम से अदृश्य हो गया था चेहरे पर पट्टी और आंखों मे रंगीन चश्मा था उसकी शकल के बारे मे कोई अन्दाजा लगाना मुमकिन नही था

विनायक ने लिफाफा खोला

एक खत था लाल स्याही का

...जिसे आप लाल स्याही समझ रहे है, वह खून है इन लफ्जों मे कई लोगों के खून मौजूद है झूठी नेतागिरी करके अपने को खतरे मे क्यों डालते है ? हिन्दू हिन्दू ही रहेगा और मुसलमान सिर्फ मुसलमान इनके बीच प्यार-मुहब्बत की बातें किताबों मे हो सकती है लेकिन हकीकत मे नहीं और इस बात को आप अभी तक समझ नही पाए है जो आग लगी है उसके शोलों को जलने दीजिए वर्ना आप खुद ही राख हो जाएंगे...

विनायक ने दरवाजा बन्द किया और बिस्तर पर चला गया मोहिनी ने पूछा तो उसने कोई जवाब नही दिया कुछ देर वह उस आदमी का डील-डौल याद करने की कोशिश मे लगा आखिर मे कुछ भी याद नही आ रहा था

●●

इस बीच लखनऊ से अखबारों मे इस दंगे की नई तस्वीरें और समाचार छपे वहां से कुछ बड़े सरकारी अफसर आए और इस बात की उम्मीद की जाती रही कि मंत्री वगैरह आएंगे एक-आध दिन बाद अफसर लौट गए मंत्री नही आया

अखबारों मे जो खबरें छपी थी, उनके मुताबिक तीन सौ आदमी मारे गए थे वैसे पुलिसवालों का कहना है कि मौत ग्यारह लोगों की हुई है यह खबर अखबार मे नही छपी कि मढ़ीनाथ के पास झोपड़े मे बसर करने वाले जग्गू बरैठा का झोपड़ा जला दिया गया वह बच गया लेकिन उसके तीन बच्चे और बीवी राख हो गए थे तब से बरैठा पागल है अपने घर की राख मे सुबह से लेकर शाम तक कुछ ढूंढता-सा रहता और बीच-बीच मे चीख पड़ता उस चीख की भाषा इतनी दुर्बोध्य होती कि पड़ोसवाले अवाक्-से रह जाते

अखबार मे यह नही छपा कि सिटी स्टेशन के पास सोए हुए चार भिखारी कत्ल कर दिए गए. यह कतई पता नही चला कि भिखारी हिन्दू थे या मुसलमान यह

खबर अखबार में छपे बगैर काफ़ी दूर तक फैल गई थी. पुलिसवाले भी आखिर तक यह पता नहीं कर सके थे कि ये लाशें थीं किन लोगों की.

●●

कोतवाली से दरोगा आया था.

उसने अपने सर से टोपी उतारी और विनायक को जगतनारायण की मौत की सूचना दी. पुलिस की छानबीन के मुताबिक़ जगतनारायण किन्हीं जटाधारी बाबा के चरणसेवक हो गए थे. सरदार हरबन्स सिंह के रुपए गबन होने के बाद से उनकी कोई सूचना नहीं थी. इस बात की पूरी जानकारी तो नहीं है लेकिन दो-चार लोगों का कहना है कि बरेली में भी जगतनारायण एक अवधूत के साथ देखे गए थे. खैर, जगतनारायण की लाश पुलिस को कासगंज के रेलयार्ड में मिली थी. गले पर छुरे के निशान थे. पुलिस ने बाबा को गिरफ्तार कर लिया था उनके झोले से चरस और गांजा बरामद हुए थे.

दरोगा चला गया था.

विनायक सुन्न-सा बैठा रहा. कुछ देर बाद याद आया, अब मां विधवा हो चुकी हैं···बार-बार एक-दो बरस की बच्ची की तरह मां का चेहरा याद आने लगा था.

●●

कुतुबखाना फिर आबाद हुआ.

गली-मुहल्लों में वही पुरानी चहलक़दमी. दूकानों में और सड़कों पर वही रंगीन या सफ़ेद रोशनी. रिक्शे और तांगों और पैदल चलने वालों के बीच वही पुरानी धक्का-मुक्की. सड़कों के जिन हिस्सों में लोगों का खून गिरा था, आज वहां रिक्शे के पहियों के दाग हैं. कोई यक़ीन नहीं करेगा कि इस बरेली शहर में ग्यारह दिन तक सिर्फ़ आग जलती रही है.

बिहारीपुर के 'कौशल्या भवन' की दीवारों के पलस्तर और भी गिरते हुए-से लगे. अब दिमाग में जोर लगाने पर जगतनारायण याद भी आ जाते हैं. लेकिन इस मुहल्ले में तक़रीबन साठ बरस वह रहे, इतना शायद ही किसी को याद हो. 'कौशल्या भवन' लिखा हुआ वह संगमरमर का पत्थर अब बेहद काला हो गया. उसके ऊपर अब मकड़ी का जाला इतना फैल गया कि लिखे हुए अक्षर कोई नया आदमी पढ़ नहीं सकेगा.

विनायक को कभी-कभी यह शहर बिल्कुल अजनबी लगता है. उसने बरसों बाद सामने खड़े होकर अपने घर की दीवारें देखीं. लगा, ईंटें अब खोखली हो गई हैं. खैर, उसने एकदम से अपने ऊपर काबू पा लिया. अन्दर आया और मां के खटोले के पास जाकर ज़मीन पर बैठ गया. मां के चेहरे की तरफ़ देखते हुए अब उसे एक खास डर का अहसास होता है. डर ज़रूर लगता है लेकिन इतना वह समझ गया कि यह औरत अब पत्थर बन गई है. वक्त पूरा होगा तो चली जाएगी लेकिन जाने से पहले ज़बान खोलकर कभी नहीं कहेगी कि दिल में एक बहुत बड़ा ज़ख्म है और इस ज़ख्म को बरदाश्त करने में बहुत तकलीफ़ होती है.

कुन्ती कहीं से एकबारगी सामने आ गई थी. उसने झिड़की दी—अब कब तक छड़ा-सा फिरता रेगा? सादी-ब्याह करके घर बसा, हां. इन शब्दो को कहने के साथ-साथ उसने अपने हाथ-पांव काफी नचा लिए थे

'घर बसाने' वाली बात पर दिल मे हूक-सी पैदा हो गई थी कैसे-कैसे घर टूटता है, काश, कुन्ती बुआ समझ पाती !

कभी-कभी तारा की बहुत याद आती है

उसने ज़िन्दगी मे कभी नही जाना कि सुख क्या होता है ! शादी होने के छह महीने बाद पति की मौत हो गई थी. इन छह महीनो के एक सौ अस्सी दिनो मे एक सौ पचहत्तर दिन वह सिर्फ पति और ससुर की मार खाती रही, उसकी सिर्फ एक तस्वीर है, पूरे घर में. कभी-कभी लगता है, जिसे सबकुछ मिलना चाहिए था, उसकी मौत भिखारी की तरह हुई 'कौशल्या भवन' के रहने वालो को कुछ फ़र्क पडा इससे ? वह तीन साल पहले भी मर जाती तो भी 'कौशल्या भवन' की दीवारो मे कोई फ़र्क नही पडता.

रानी एक पीतल की तश्तरी मे दो पूड़िया, आलू की सब्जी और चाय का कप लेकर आई और सामने रख दी विनायक को हमने की तबीयत हुई बोला—तेरे लिए दूल्हा तय हो रहा है, समझी ? रानी जवाब दिए बगैर भाग गई थी वह चली गई तो लगा, हंसना कितना मुश्किल है खैर, उसने बाहर नल पर आकर हाथ-मुह धो लिया शाम को काम से लौटने के बाद आजकल बहुत थकान-सी महसूस होती है लगता है, उम्र एकदम-से बहुत बढ गई है अपनी उम्र और थकान के बारे मे उसने आगे और कुछ नही सोचा. फिर अन्दर आकर दवा का बक्सा निकाला और मा को गोलिया दे दी आजकल उन्हे सास की तकलीफ होने लगी है

चाय ठडी हो रही थी. उसने चाय की चुस्की ली तो याद आया आज इसरार डिस्पेंसरी पहुंचने को है मरीजों के बैठने के लिए दो बेचो की जरूरत थी इसरार ने अपनी पहिचान के किसी बढई से बनवा दी जल्दी से उसने चाय खत्म की, मा के सिर पर हाथ फेरा और दवा का बक्सा उठाकर बाहर निकल आया

चौराहे पर बालेश्वर मिल गया था बाल गर्दन तक लम्बे थे जो कमीज पहन रखी थी, वह शायद किसी दोस्त की थी एक चटख रग की कमीज और नीले पैंट के बीच एक चौड़ी पेटी, पेटी के 'बकल' पर जेम्स बॉण्ड या ००७ जैसा कुछ लिखा हुआ था आंखों पर रगीन चश्मा था अंगुलियों के बीच सिग्रेट फसी थी

जगदम्बा से वह बहस मे उलझ रहा था बहस अगर वह नही भी कर रहा था, सिर्फ बात करने का तरीका भी इससे अलग नही होता विनायक सामने आ गया तो वह सकपकाया और सिग्रेट पीछे कर ली

जगदम्बा ने चुटकी ली —जे अब बिलायत जागे, कैसे ह, ह्या अब रक्खा ही क्या है ?

बालेश्वर को ताज्जुब हुआ कि गौ मार्का अक्ल वाले जगदम्बा को भी उसकी बात का यकीन क्यो नही आया ! इस वक्त अगर उसका ममेरा भाई सामने नही होता तो उसे लगा देता चार चाटे सुअर की औलाद, दुनिया क्या है, तुम क्या जानोगे !

बालेश्वर फिर एकदम से खिसक गया था. उसने अपनी सायकल उठाई और मालगोदाम की तरफ़ निकल गया. जगदम्बा भी फिर उठ गया था

भगीरथ भट्ठी मे कोयला डाल रहा था उसने विनायक को रोक लिया—दो मिंट बैठो जो एक नई बात कहू

—दवाखाने का वक़्त हो गया. फिर सुन लेगे

—नाय बिन्नू बाबू, सुनो, फिर जाना अपने दवाखाना भगीरथ भट्ठी पर से केतली उतार कर नीचे आ गया—मैं ठैरा छोटा आदमी, सो माफ़ करना लेकिन जे बात सोलह आने सच है उसने अपनी आवाज एकदम नीचे उतार ली थी.

—बोलो विनायक ने घड़ी की सुईयां देखी

—तुम्हारा भाई नाय दुसमन है जे छोकरा इम्तिहान में पास तो हुए नाय तीन-तीन बार अब ढूंढो कोई नौकरी-चाकरी नौकरी नाय मिलती तो मजूरी करो

—जल्दी बोलो

—एक ईसाई फायरमैन है, रेलवे कालोनी में नाम कुछ गिटपिट-सा है, याद नहीं आता फायरमैन तो कायला झोंक रिया है बीवी तलाक लेकर किसी और के संग मुरादाबाद रहती है एक लौण्डिया है उसकी उसके साथ जे लौण्डा खूब मस्ती कर रिया पिछले हफ्ते हमारे ह्या से दो पीतल के बर्तन उठ गए लेकिन तुमें कैने में सरम आई सो कुछ नाय बोला—अब कैना है, हम तो बिलायत जागे अब तुम समझाओ अपनी बुआ को कि ऐसा ही होता रिया तो एक दिन हथकड़ी लग जाएगी, हां

विनायक ने महसूस किया सामने कोई आईना नहीं है होता तो अपना स्याह चेहरा खुद वह भी शायद पहचान नहीं पाता

जगदम्बा उसकी अन्दरूनी हालत समझ गया था वह झेंपा और हथेलियां मलने लगा माफ करना बिन्नू बाबू तुम्हें अपना समझता हूं सो मन में जो आया उगल दिया

विनायक ने जवाब नहीं दिया था

वह अपने दवाखाने की तरफ चलने लगा था

●●

हसराज बेंचों का चबूतर पर रखकर बीड़ी पी रहा था बगल में परसोराम वैद खड़े थे उन्होंने पासा आगे चूलों को हर तरह से हिला-डुलाकर परख लिया बिल्कुल अभी गया रहा जा सकता है, तब नहीं कर पा रहे थे

विनायक पहुंच गया तो वैद्य ने बधाई दी— अब नए अगवाव की खुशी में मिठाई बांटो

हसराज ने दाढ़ी खुजाई और दरवाजा खोलकर बेंचों को अंदर करने लगा

विनायक ने वैद्य की बात का कोई जवाब नहीं दिया

थके लगते हो वैद्य को कहने लायक यही मिला था

—नहीं

—नहीं? ...हमने बाल यूं ही तो नाय सफेद कर लिए इन बालों ने भी बहुत मौसम देखे हैं तुम एक काम करो चार दिन की छुट्टी ले लो और कहीं आसपास किसी रिश्तेदार के पास जाकर आराम कर लो लौटोगे तो चंगे लगोगे

छुट्टी नहीं मिलेगी

—सो जे भी कोई बात हुई? आखिर गौरमिंट का भी तो कोई कानून है छुट्टी कैसे नाय मिलेगी?

अचानक विनायक चुस्त-सा हो गया उसने दवा का बक्सा बगल में मेज पर रखा और बात उगल दी अगर मैं नौकरी से निकाल दिया जाता हूं तो क्या होगा?

—अमा, तुम तो मसखरी करते हो लीडरी झाड़ते हो कौन निकाल देगा तुम्हें?

—किस-किस का नाम बताऊँ आपको? आपने बिहारीपुर के अलावा दुनिया

देखी ही नही

—वाह बई, वाह, कमाल की बात कैते हो. दुनिया जो हमने देखी है, तुम सोच भी नाय सक्ते, हां अंग्रेज थे तो ज़माना ही और था चाहे रंडी हो चाहे अफ़सर सब में दम होता था हा, खूब खाओ, खूब पिओ, मौज भी कर लो जित्ता जी मे आए लेकिन लीचडपना नाय करना और अब देखो, जमाना ऐसा पल्टा खा गया कि जिधर देखो, लीचड ही लीचड नजर आता.

—हां, वैद्यजी, वो जमाना तो हमने देखा ही नही

—जभी कैते है, जे आजकल के लौडे-लपाडे चाहे जित्ती मरजी नाच-फुदक लेव, जिन्दगी नाय जानते

इसरार ऊँघ रहा था इस बार फटाक से उसने जवाब दे डाला—चलो बैदजी, जिन्दगी हम दिखाएंगे तुम भी खूब याद करोगे

इसरार का इशारा इतना साफ था कि परसोराम की तबीयत हुई, उसे दो चाटे रसीद कर दे खैर, वह हम कर टाल गए थे अचानक उन्हे शायद वक्त का ख्याल आ गया था जल्दी से फिर अपनी दूकान की तरफ चलने लगे थे

●●

इसरार भी चला गया था

मरीज भी खास नही थे उन्हे विनायक ने दवा की पुडिया दी और होम्योपैथी का जर्नल पलटने लगा

नौरंगी वकील आ गया था

अन्दर दाखिल होने से पहले पान नीचे नाली पर थूक दिया था फिर गले को खंखारा और फौजी की तरह अन्दर आ गया

नौरंगी सामने की कुर्सी पर जमकर बैठ गया—तुमने तो मास्टर, किसी से कुछ बतलाया ही नाय !

विनायक ने जर्नल रख दिया

—आखिर हमने भी वकीलन की नौकरी की है कुछ मदद तो कर ही सकता हूं आख़िर किस्सा क्या है ?

—कोई किस्सा विस्सा नही है जितना आप जानते हैं, उतना ही मै आप से बोल सकता था वैसे कोई परेशानी नही है

—फिर परेशानी कैसे किसे है ? नौकरी सचमुच चली जावेगी, तब बोलोगे कुछ ?

—नौकरी जायेगी तो जमकर डाक्टरी करेगे अच्छा ही होगा, मुहल्ले से निकलने की जरूरत नही पडेगी

— तो फिर बोलो लड्डू बटवा दूं ?

—परेशान खामख्वाह हो रहे हो यूनियन मे जो काम करते है, उनके लिए यह मामूली बात है धूप-छाह समझ लो

—जे ही तो तुम नाय समझते लीडरी-वीडरी करो और खूब करो लेकिन दो बातन का ख्याल रखना सेहत और नौकरी

—ये ही तो ख्याल मे नही रहती वैसे कल से यानी चार्जशीट पाने के बाद खूब मजा आ रहा है.

—फिर ढोलक मंगवाए ? नाचो मजा आ रिया तो

—तुम समझे नही जिन्दगी सपाट निकल जाती है तो कुछ पता नही चलता कि ज़िन्दगी है किस चिडिया का नाम थोडी-बहुत खाई-खदक तो होनी ही चाहिए.

नौरंगी ने अपनी आवाज़ मुलायम कर ली—मास्टर, अगर सिरफ़ खाई ही खाई

रही, तो खतम होय जावगे. थोड़ी होशियारी से काम लो.

—यूनियन में काम करने वाला बेवकूफ़ होता है क्या ?

—बई, तुम्हारे पीछे भी चार जाने है. नौकरी से निकाले गए तो फिर उनकी भी हो गई छुट्टी.

अब विनायक हस पड़ा

नौरंगी वकील को यकीन नही आ रहा था. इस तरह ठठाकर कम-से-कम यह आदमी तो नही ही हस सकता था

कुछ मरीज़ आ गए थे

नौरंगी उठ खड़ा हुआ—चलता हू. लेकिन हमारी बात भूल नाय जाना आखिर मुसीबत में गली-कूचे वाले ही काम आते है.

●●

इसरार गया को लेकर आया था.

सौदागरान मुहल्ले मे कही बगैर लाइसेंस वाली कच्ची मिलती है. भाव कम है इस लालच मे उसने सिर्फ़ एक अद्धा गले के नीचे उतारा ही था कि उल्टी आने लगी. बेचारा तबसे बेहोश पड़ा है.

पीने-पिलाने के मामले मे गया की बीवी किसी से कम नही है. उसका मर्द जितना पियेगा, कम-से-कम उतना तो वह भी डकार ही जाएगी. इसके बावजूद न तो बकना शुरू करेगी, न अपने कपड़े ही फाड़ती रहेगी. वह यहा होती तो गया को सम्भाल लेती लेकिन आवला गई हुई थी. अपनी मा के पास.

गया अगर पीता नहीं है तो एकदम शरीफ़. लेकिन अगर थोडा-सा भी पी लेता तो यार-दोस्तो के सामने बीवी के साथ ऐसा सलूक करता कि कोई नही कहेगा कि कही से भी यह शख़्स मर्द है इत्तफ़ाक़ है कि उनका कोई बच्चा वगैरह भी नही है. लिहाजा कहने वाले वही पुरानी बात कहते ही है. यानी बच्चा पैदा करने के लिए पहले मर्द बनना पड़ता है.

लेकिन गया मर्द नही है, ऐसा कहना आसान नही है. गया का ससुर अपने ज़माने का मशहूर दगलबाज़ रहा है. पूरे बरेली जिले में उसे पछाड़ने वाला एक-आध ही रहा होगा. आवला तहसील मे तो खैर उसके बराबर कोई था ही नहीं. गया चार दिन के लिए तफ़रीह करने एक यार के साथ आंवला गया था. पहलवान ने उसे देखा तो एकबारगी पसंद कर लिया. गया की न मा थी, न बाप था. सो पूछना-पाछना किसी से था नही. यार ने सलाह दी और वह एकदम दुल्हिन के साथ ही बरेली लौटा. दुल्हिन भी खूब मोटी-तगड़ी थी. यानी गया-जैसे चार को आसानी से अकेले पछाड़ने वाली.

यों गया सीकिया कभी जरूर नही था लेकिन उसकी तंदुरुस्ती भी कभी ठीक नहीं रही. या बस ठीक-भर रही. ऐसा कोई आदमी किसी पहलवान को पसंद कैसे आ सकता है, लोगो की समझ मे नही आया वैसे कहने वाले तो यह भी कहते हैं कि पहलवान की बेटी को ही गया पसद आ गया था. बेटी को पसंद आया और बाप ने रस्म पूरी कर दी.

उसकी बीवी को उसकी सारी हरकते पसंद है सिर्फ़ एक बात के सिवाय. पीने के बाद जब वह अपने को औरत और बीवी को मर्द मानने लगता, तब बस उस औरत का पारा चढ़ जाता है ऐसे में गया महीना-पन्द्रह दिन में एक-आध बार पिट भी जाता है लेकिन नशा चढ़ जाए तो बाकी बाते काबू में कहां रहती हैं ? अपनी बीवी से पिटने के बावजूद रंज वगैरह मन में होता नही. आखिर बीवी ही तो है. पीटती है लेकिन मुहब्बत भी तो करती है !

एक दफ़ा भईयन बदमाश ने गया के बाल मुड़वा दिए थे. इससे पहले इसरार पिट चुका था. गया ने कच्ची पी और भईयन के साथ टकरा गया. फिर वही औरतों वाली हरकत. भईयन ने उसके नितम्बों पर कसकर लात जमाई और हज्जाम को बुलाकर बाल साफ़ करवा दिए.

जब तक ससुर ज़िन्दा था, गया ने शराब कभी नहीं छुई. आगले से वह सूखे मेवे भेजता रहता और बरेली आता तो बेटी-दामाद की सेहत के बारे में सलाह दे जाता. लेकिन पहलवान मरा और टमगार के साथ यारी हो गई. तब से शराब की यह लत पड़ गई है.

शुरू में इसरार को थोड़ा डर लगा था लेकिन गया की बीवी ने भी जब कच्ची चखली तब उसे अपनी दोस्ती-यारी के बारे में पक्का यकीन हो गया था. उसकी बीवी को क़ायदे के खिलाफ़ शुरू के दिन में ही चसका लग गया था. लेकिन और कोई बात इसके साथ नहीं थी. अपने आदमी के अलावा न उसने किसी और मर्द को कभी छुआ था, न अपने आदमी को ही कभी आलमगिरीगंज के कूचों में जाने दिया था.

वैसे इससे पहले सातेकबार वह विनायक के पांव छूकर कसम खा चुका था कि अब शराब पीना तो दूर, छुएगा भी नहीं. हर बार कोई शिद्दत होती और वह सबसे पहले आकर यही कसम खाता. ऐसी किसी क़सम के लिए उसे उकसाया किसने, वह बात विनायक ने कभी नहीं पूछी.

इसरार ने उसे दवाखाने की बेंच पर लिटा दिया था. विनायक दूसरे मरीजों को देख रहा था. उसने कोई दिलचस्पी नहीं ली और पहले की तरह सिर्फ़ मरीज देखता रहा.

इसरार ने आगे आकर हाथ जोड़ लिए. अब इस बेवकूफ़ को तुमी बचाय सकते हो. सक्षेप में उसने बता दिया कि ऐसी हालत कितनी देर में और कैसे-कैसे हुई.

इसरार को इस दफ़ा विनायक का चेहरा देखकर डर लगा. लगा, डाक्टर गुस्से में तमतमा गया है और फौरन ही कुछ कर बैठेगा. दो मिनट बाद भी वह इतनी हिम्मत नहीं जुटा पाया कि कुछ और कहे.

विनायक उठा. गया की नब्ज़ देखी और सीने पर स्टेथिस्कोप लगा लिया. फिर अलमारी में से एक दवा निकालकर जीभ पर डाल दी. पांच मिनट बाद पता चल गया कि बेंच पर लेटा हुआ आदमी मर नहीं गया था. इसरार की जान में जान आई थी.

विनायक ने उसे बुलाया और पुड़ियां बांधने लगा—आखिरी बार दवा दे रहा हूं. इसके बाद कभी यहां क़दम नहीं रखना.

—हम तो मरेंगे भी तो तुम्हारे कदम के नीचेई रहेंगे.

—दफ़ा हो जाओ यहां से.

—इस गया के बच्चे को ऐसी पट्टी पढ़ाऊंगा···

—तुम जाते भी हो यहां से या फिर···

--तुम माफ़ नाय करोगे तो इसे कयामत के बाद खुदा भी नाय बखशेगा, बिन्नू बाबू.

—मेरा वक़्त काहे को खराब करते हो ?

---चाहे मारो, चाहे पीटो. हम तो पांव पकड़ लेंगे. मारो-पीटो लेकिन दूर नाय करना.

—इसलिए कि नाली के कीड़े की तरह जिओ ?

—अब की ज़रा गया ठीक हो जाय तो इस बेवकूफ़ की ओलाद को सब

रामअशय देंगे

— फिर !

—फिर क्या ? जो कहोगे, वही सुनेगा

—तो फिर फ़ाउरन रिक्शा बुलाओ और उसे लेकर यहां से निकल जाओ. फाउउरन

—लेकिन पैले तुम जे कै दो कि माफ़ कर दिया.

विनायक एकबारगी खामोश हो गया था

इसरार के अन्दर बची-खुची जो हिम्मत थी, वह भी पस्त हो गई। वह जल्दी से निकला और रिक्शा रोककर गया को उठा लिया

गया तो अब कुछ होश आने लगा था मुह मे एक-आध अधूरी-सी आवाज भी निकली थी और सांस की रफ़्तार पहले के मुकाबले कुछ तेज हो गई थी.

इसरार गया को लेकर रिक्शे पर बैठ गया और गर्दन को मोडकर विनायक से सलाम बोला.

उधर से कोई जवाब नही आया था

●●

गगू गुरु की पान की दूकान आज खुली है. पिछले दिनो डेढ साल तक लगातार बन्द थी लोगो को सिर्फ इतना पता था, गुरु बदायू मे सरकारी चक्की पीस रहा है फिर छूटेगा छूटकर बाहर आएगा फिर अन्दर जाएगा, यह सिलसिला बर्षों से चल रहा है

गगू गुरु गोरखपुर के बासगाव तहसील से बरेली आया था तब उम्र रही ही कितनी होगी ? बहुत हुई तो बीस साल की ही होगी एक-आध साल कम भी हो सकती है जात से पनवाडी है लेकिन रुस्तम से लठैत था गुस्सा आया तो लाठी उठाई, फोड दी सामने वाले की खोपडी ऐसे काम उसके बाप-दादे भी करते रहे हैं. पुलिस दरोगा की कभी हिम्मत नही हुई कि उठाकर जेल मे बन्द कर दे तब अग्रेजो का जमाना था. दरोगा को हुक्का-पानी या थोडा इन्तजाम कर दो तो मामला पट जाता था कभी-कभी अग्रेज साहब बहादुर दौरे पर आते तो उनके गले मे फूलो का हार डाला जाता, खूब खातिर की जाती

लेकिन मुल्क आजाद हुआ नही कि सारा उसूल ही पलट गया. पुलिस वाले सिर्फ हुक्का-पानी से ही हाथ मे नही आते। देने वाले सोना-चादी भी देते है फिर भी कई दफ़ा काम नही बनता वे माल भी हजम कर जाते और जेल के फाटक तक छोड़ भी आते हैं

गगू गुरु कच्ची उम्र मे ही पूरा लठैत बन गया था फिर जवानी मे जोश किसे नहीं आता ? आखिर मे लाठी उठाई तो दरोगा की ही खोपडी से खूब खून निकल आया था पूरे बासगाव तहसील मे तहलका मच गया था इस बात को लेकर गंगू गुरु ने फिर बोरिया-बिस्तर बाधा और गोरखपुर की बस पकड ली गगू गुरु फिर गोरखपुर-लखनऊ से होकर बरेली आ गया यहां आया तो पान की दूकान खोल ली. पहलवानी का भी थोड़ा-बहुत शौक था सो लोग गगू गुरु कहने लगे

यह कहानी तब शुरू हुई थी जब उम्र बीस साल से ज्यादा नही थी. अब उम्र ऐसी है कि पचपन और पैसठ के दरमियान कुछ भी हो सकती है. पिछले पन्द्रह बरस से गगू गुरु को लोगो ने बिल्कुल एक-सा देखा है.

गगू की शादी हुई थी, जब वह दसेक बरस का रहा होगा उन्नीस तक आते-आते बीवी हैजे मे खप गई फिर यह बरेली. बरेली, का नया माहौल, नया अन्दाज.

दुबारा शादी ब्याह की फुर्सत ही ऐसे में किसको मिलती है ?

कभी-कभी बचऊ हलवाई पूछता है तो गंगू बोल देता – तुम ठैरे गिरस्ती आदमी. लड्डू का सवाद मालूम है, तो गुलाब जामुन कभी चखा ही नाय. ह्या सारा सवाद मालूम कर लिया, गुलाब जामुन, कलाकंद, बर्फ़ी– जो पूछो सब पता है.

बचऊ खाली होता तो कह देता– फिर सुनाओ कोई चटपटा किस्सा. हम भी तो जान लें, कित्ते पानी में हो तुम ?

गंगू फिर ठहाका मारता—ह्या तो बस पानी ही पानी है सुनेगे तो चक्कर आ जाएगा, हां.

बचऊ फिर अपनी आंख, कान, नाक सबकुछ खोलकर गंगू के तजुर्बे का एक-एक लफ़्ज़ निगलने की कोशिश करता.

गंगू पान में कत्था-चूना लगाकर बीड़ा लगाता और रोहतक जिले की जाटन के लहंगे-चोली से लेकर सबकुछ आहिस्ते-आहिस्ते बता देता।

गंगू को झांसा देना इतना आसान नहीं है.

लेकिन जाटन ने पनवाड़ी को ही पान खिलाकर चार घंटे के लिए सुला दिया था. नींद खुली तो देखा, दोनों जेबें फुटबाल के मैदान की तरह साफ़ हैं अपनी जेबें देखकर गंगू हंस पड़ा था –साली औरत की जात ही ऐसी होती है. जब तक नचाओ नाचती रहेगी. लेकिन जहां यक़ीन किया होई देर हो गए, ख़ैर, कुछ भी हो, जाटन ने जिन्दगी का मौज-मजा समंदर के ज्वार की तरहा बना दिया था

बचऊ ने एक बीड़ा पान मुंह में ठूंसा और दांतों में अलग से चूना लगाया— गुरु, तुम गुरु ही ठैरे.

—तो क्या तुम विन्द्रावन का ग्वाला समझ रहे थे

–बड़े मार्के की बात करते हो गुरु

—तुम क्या जानो, लड्डू और पेड़े में फ़रक क्या होता !

बचऊ ने पान की पीक उगल दी.

—कभी सैर-सपाटे को चलो तो सब बताय देगे गंगू ने आंख मारी और आहिस्ते से बोल गया.

—राम राम. बचऊ ने जीभ काट ली.

गंगू को गुस्सा आ गया था—तो फिर चलो, खिसको ह्या से. आज मंगल का दिन है, हनुमान मन्दिर जाकर लड्डू चढ़ाय आओ.

बचऊ ने बात आगे नहीं बढ़ाई थी. वैसे भी भट्ठी में कोयला खामख्वाह फुक रहा था. वह दुकान पर चला गया था.

सामने विनायक दीख गया था.

गंगू ने दूकान से आवाज मारी और नीचे उतर आया— बड़े दुबले हो गए हो डेढ़ साल में.

—कब आए छूटकर ?

—बस तीन दिन हुए. सोच ही रिया था कि तुम से मिल लूं. तुम ठैरे मुहल्ले के हज़ारों में एक.

—अब क्या इरादा है ?

—खूब पूछा तुमने. इस हिन्दोस्तान में किसी का कोई इरादा होता है ? जब जैसा मौक़ा लगे कर लो लेकिन अब उमर होय गई. चार दिन बाद पता नाय कब आंखें बन्द कर लेंगे. सो अब तो कुछ अच्छा ही करने का इरादा है इधर मुहल्ले में आया तो उल्टी आने लगी.

विनायक ने कलाई पर बंधी घडी देखी.

—जल्दी मे होंगे. मै तो कै जे रिया था, जिधर देखो, उधर ही हर कोई कुछ-न-कुछ उल्टा-सीधा कर रिया. हम सरकारी दाल-रोटी खाते रहे सो, पता ही नाय चला कि इस बरेली शहर मे इत्ता बड़ा बलवा होय गया.

— विनायक कुछ नही बोला.

गंगू गुरु ने अपनी आवाज कुछ और नीचे उतार ली—परसोराम और मुरारी डाक्टर मे अब नाय पटती क्या समझे ? बैद ठैरा बुजुर्ग आदमी मुहल्ले मे सदर बने तो परधान वही बनेगा मुरारी कैता है मुहल्ले को बनाओ हम से कोई पूछे तो तुम्हारा ही नाम लेंगे लेकिन एक और बात है. मुरारी खुलकर परसोराम के खिलाफ़ बोल नाय सकता क्या समझे ?

विनायक लगभग चलने को हुआ था कि गंगू ने कंधे पर हाथ रखकर फौरन रोक दिया—मुरारी अब हो गया नामर्द. चकले पर मर्दानगी उतारना इत्ता आसान तो नाय है. होआ तो फिसले फिर फिसल ही गए अपने ऊपर खुद की डाक्टरी क्या झाड़ेगा ? सो बैद से इलाज करा रिया

—तीन दिन के अंदर मुहल्ले की सारी रामायण मालूम करली तुमने ?

-ल्या आंख दो नाय देख है, पूरी दस गंगू गुरु को धोखा देना इत्ता आसान नाय है.

गंगू को यकीन था, विनायक उससे डेढ साल सजा काटने के पीछे का रहस्य जानना चाहेगा अलग अलग लोग अलग-अलग कहानियां सुनाते है. लिहाजा कौन-सी कहानी असली है, और कौन-सी नकली, पता करना मुश्किल है लेकिन विनायक ने कुछ नही पूछा और आगे निकल गया

गंगू का दिल थोड़ा बैठ गया था बात ही ऐसी है कि कहे बिना सीने से पत्थर नही उतरता इस वक्त फिलम के गाने भी कोई खास नही आते वर्ना उसी से पान के ऊपर कत्था-चूना लगाते हुए कुछ वक्त तो कट ही जाता कोई खरीदार आता है तो किसी के पास फुर्सत ही नही होती पैरो मे जैसे पहिये लगे हो.

गंगू गुरु का चस्का मिरासियो के साथ भी लग सकता है, कौन यकीन करेगा. चस्का लगा तो उनके साथ बदायू तक चला गया उनके साथ चार हिजड़े भी थे. गंगू को याद करने से हंसी आती है लेकिन रहम भी आता है कभी-कभी तड़पते हैं बिचारे कोई अगर गौर से देखे तो उनकी आखो मे रात के वक्त आसू की बूदे दिखाई पडेगी खैर, पूरी की पूरी टोली बाजे की पेटी के साथ पकडी गई गंगू को पता ही नही था कि यह सब आया कहा से ? सोचा था, चार दिन के लिए एक अलग किस्म की जिन्दगी देखने को मिल जाएगी. सो साथ हो लिया था ढोलक मे थाप देनी भी आ गई थी लेकिन अचानक ऐसा हो जाएगा ख्याल मे भी नही आया था.

पुलिस आई तो गंगू का खून दिमाग मे चढ गया था

लेकिन इस बार उसने बासगाव वाली गलती दुबारा नही की उसने दरोगा को छुआ तक नही और एक मिरासी को उसका हारमोनियम उठाकर दे मारा बेचारा वही बेहोश हो गया था. यही नही फिर उसके सीने पर सवार होकर दोनो हाथो से बाल नोचना शुरू ही किया था कि पुलिस के सिपाही दौड पड़े थे

डेढ साल की सजा हो गई थी

गंगू गुरु सोचता है. लेकिन इस बात का तालमेल किसी भी तरह बैठता ही नही. कहा पहलवानी और कहा मिरासियों-हिजड़ो की संगत ?

रेडियो पर खबरे आ रही थी.

गंगू ने नीचे पीक उगल दी और रेडियो बन्द कर दिया. फिर फिल्म का एक बहुत पुराना गाना गुनगुनाने लगा.

●●

भगीरथ के होटल में भीड़ लगी थी

बालेश्वर का सिर मुड़ा हुआ था. रेलवे फाटक के पास चुंगी का एक लड़कियों का स्कूल है वहां मजनू बना फिरता था दो दिन तो स्कूल के चौकीदार ने समझा दिया था लेकिन आज पकड़ा और कमीज़ उतरवा ली. आखिर में सर पर उस्तरा फिराकरछोड़ दिया

लोगों ने बालेश्वर को बीच में बैठा लिया था मशविरे चल रहे थे भगीरथ ने कहा—मुहल्ले की बदनामी है जे

शंकर ने झिड़क दिया - तुम क्या जानो, लौंडिया होती क्या है ? चाय-बिस्कुट बेचते रहो, आगे कुछ नाय कैना.

—तो फिर जा, तू भी जाकर नाचले लौंडियन के सामने

—ज़रा चुप हो जा, बई जगदम्बा को फालतू बातें अच्छी नहीं लग रही थी. वह चाय की चुस्कियां ले रहा था.

कोने में लुकका का शागिर्द मक्खन उठ खड़ा हुआ—भाइयो, जे कोई छोटी बात नाय है. हम बदला लेंगे.

डोरीलाल ने समझाया—इत्ता आसान काम जे नाय है बदला कैसे लैलोगे ? पुलिस आयके डंडा पेल देगी पीछे में.

भगीरथ ने चुटकी ली— वैद-हकीम के पास दौड़ते रहोगे फिर

गोविन्द ने मेज पर थपकी दी—सुनो भाइयो, जे कोई रामलीला नाय है. जो मन-माफ़िक नाच-कूद लोगे हम तो जे कैंगे मर्द अगर मौज-मजा नाय करेगा तो क्या हिजड़े करेंगे ? क्या फरक पड़ता अगर लौंडियन को देखके कोई कमर मटकायले, सीटी मार दे.

गंगू गुरु को यह खबर मिल गई थी.

वहां से यह इत्तिला विनायक को मिली. वह अपनी बैठक में 'युग-प्रदीप' के सम्पादक ब्रजपाल सक्सेना से बात कर रहा था एक छोटा अखबार भी कैसे प्रभावशाली हो सकता है, इस बारे में बातचीत चल रही थी कि विनायक को एकबारगी उठना पड़ा.

भगीरथ के होटल में आकर बैठने की फुर्सत उसे कभी नहीं हुई. लेकिन गुज़रते हुए कई बार रुक जाता और उठने-बैठने वालों के साथ पांच-सात मिनट बातें हो जातीं विनायक अन्दर आ घुसा तो खुसर-पुसर रुक गई थी. बालेश्वर आंखें नीची किए खड़ा हो गया. फिर वह वहां से निकल कर घर की तरफ़ चला गया.

विनायक की आवाज़ में तल्खी थी —दंगा हुआ था पूरा शहर कहां से कहां तक पहुंच गया था. तब किसी में रह गई थी हिम्मत.

—लेकिन जे बात जरा दूसरी है. डोरीलाल समझाना चाह रहा था

—दूसरी ? कैसी दूसरी ? आवारागर्दी करना और उसपर बकवास करना, दोनों ही सिर्फ कायर लोग कर सकते हैं.

—क्यां मुहल्ले की भी ता कोई इज्जत होती है

—कायरों की कोई इज्जत नहीं होती. तुम लोग यह नहीं सोचते कि इस शहर में जहां तुम पैदा हुए, पले, बड़े हुए, वहां बलवे में कितने लोग खत्म हो गए कितने घर जल गए···

— इसमें हमारा कोई कसूर तो नहीं है.

—है, सिर्फ तुम्हारा ही कसूर है जो कायर होते हैं, उन्हीं का कसूर ऐसे मामलों में सबसे बड़ा होता है, बलवा हुआ तो एक-एक आदमी घर में दुबका बैठा रहा. गले में आवाज थी तब ? विनायक को लगा, ये बातें लोग समझ नहीं रहे हैं.

सब चुप खड़े थे,

—बालेश्वर मेरा भाई है लेकिन गुनाहों की सजा उसे शायद कम ही मिली है अगर मैं उसे पकड़ता तो इतनी छोटी सजा देकर तो नहीं ही छोड़ता. मैं सिर्फ़ एक बात कहूंगा उन घरों की तरफ़ देखो, जहां अब सिर्फ राख है उन सड़कों और गलियों की तरफ देखो, जहां दस दिन पहले भी खून के दाग थे

विनायक ने अपनी बात पूरी की और वहां से निकल आया शाम का वक्त ढेर सारे कामों का होता है

वह निकलकर कुछ दूर बढ़ गया तो वे लोग ठहाका मारने लगे थे किसी ने भद्दा-सा शब्द जबान से उड़ेल दिया था और चार-छह लोगों ने इकट्ठे सीटी मार दी थी.

भगीरथ को इन लोगों की गंदी हरकत पर बेहद गुस्सा आया था वह गुस्सा पी गया था कुछ नहीं बोला था

●●

बंगाली टोले में एक बंगाली डाक्टर रहते हैं बैनर्जी बाबू डॉक्टरी करते हैं, पैसा कमाते हैं और शाम को शराब पीकर वायलीन बजाते हैं वहीं आते-जाते नहीं हैं रात गहरी होती है तो बैनर्जी बाबू की वायलीन की आवाज करुण होकर दिल की तहों में उतरने-सी लगती बंगाली टोला खत्म होते ही एक कब्रिस्तान है जमीन बहुत बड़ी तो नहीं है लेकिन जगह जगह सिर्फ सुबह होते ही मुसलमानों की भीड़ होने लगती है तो लगता है ईद वगैरह कुछ है आस-पड़ोस में सिर्फ मुसलमान ही रहते हैं सिर्फ शिया मुसलमान

बैनर्जी बाबू कभी कभी कब्रिस्तान पर जाकर वायलीन बजाने लगते हैं. एक पेड़ के नीचे बैठ जाते और आधी रात तक आंखें बन्द किए सिर्फ बजाते रहते किसको सुनाने के लिए बैनर्जी बाबू बजाते हैं यह बाजा ! यह सवाल किसीने उनसे नहीं किया.

कब्रिस्तान का बूढ़ा पीर कभी सोचता जरूर लेकिन पूछने की हिम्मत नहीं होती इधर रोशनी कोई खास नहीं है कभी अगर मोटरगाड़ी वगैरह से रोशनी का एक टुकड़ा इस कब्रिस्तान में आ पड़ता तो शायद गौर करने वाले का पता चल जाता— बैनर्जी बाबू की आंखों में आंसू हैं ये आंसू पीर ने कई बार देखे हैं कभी कुछ नहीं पूछा

आखिर में एक दिन बैनर्जी बाबू पीर के पास आए और वायलीन को रख दिया. दोनों ही चुप कम-से-कम आधा घन्टा बीता होगा फिर बैनर्जी बाबू ने अपने आप ही चुप्पी तोड़ी—मेरे बारे में न सही, इस साज के बारे में भी कोई कुछ नहीं पूछता !

पीर इस कब्रिस्तान में बरसों से है आज तक किसी ने ऐसी बात की ही नहीं. खैर, बात का मतलब वह फौरन समझ गया था. बोला खुदा की मर्जी नहीं होती, किसी का गम पूछने के लिए

फिर बैनर्जी बाबू ने बता दिया कि नवाब सिराजुद्दौला के मुल्क मुर्शिदाबाद में उनके बाप-दादा संस्कृत के मास्टर रहे हैं. बाप थे नरेन्द्रनाथ बैनर्जी. संस्कृत

व्याकरण और वेदांत के मशहूर पण्डित उनकी इच्छा थी, उनका छोटा लड़का दीपेन्द्र कुल का नाम रोशन करेगा, काशी जाकर सस्कृत पढकर लौटेगा और यहा पाठशाला खोलेगा लेकिन आदमी की उम्मीदे कब पूरी हुई हे ? दीपेंद्र मैट्रिक पास कर लेने के बाद काशी जाने की तैयारी कर ही रहा था कि हकीम अकबर अली की बेटी की तरफ़ निगाह पड गई औरत और खूबसूरती क्या होती है, दीपेंद्र ने पहली बार जाना यह बात नरेन्द्रनाथ को मालूम हुई तो उन्होने खडाऊ से अपने बेटे को पीटा था फिर चार दिन कोठरी मे बगैर खाने के बन्द रखा था उनका कहना था, इसी तरह शुद्धि की जाती है बिना उपवास के पाप नही कटता

यह कहानी हकीम साहब के यहा पहुंची और उनकी इकलौती किशोरी बेटी ने खुदकशी कर ली नरेंद्रनाथ को इस बात से बहुत राहत मिली थी कि उनका बेटा अब सुधर जाएगा.

दीपेंद्र फिर मुर्शिदाबाद से यो भागा कि दुबारा कभी पलट कर देखा ही नही मुर्शिदाबाद से कलकत्ता और कलकत्ते से पजाब मेल पकडकर बरेली. बरेली का नाम भी यहा आने से पहले कभी नही सुना था टिकट वगैरह खरीदा नही था टी० टी० ने पकडा तो किराया चुकाने के लिए पैसे थे ही नही चेहरा देखकर शायद दया आ गईथी इसलिए पुलिस के हवाले तो नही किया था लेकिन अगले स्टेशन पर उतार दिया था स्टेशन बरेली का था

दीपेंद्र उतरा तो सामने एक बगाली चादसी डाक्टर का साइनबोर्ड नजर आया। चादसी डाक्टर साप के जहर से दवा बनाकर इलाज करते ह इसके तरीके अपने परिवार वालो के अलावा दूसरो को नही बताए जाते यह ब्राह्मणो का नही, निचली जात का पेशा ह

बूढे डाक्टर को दीपेंद्र का मुरझाया हुआ चेहरा देखकर ममता आ गई थी उन्होने रस्म तोडकर उसे अपने यहा रख लिया था और इलाज के तमाम नुस्खे बता दिए थे

तब से बैनर्जी बाबू इस बरेली शहर मे ह

अब उम्र हो गई लेकिन शादी नही की हकीम की बेटी मुबारक की याद ने इतनी उम्र पार लगा दी आगे भी लगा ही देगी

पीर ने चुपचाप कहानी सुनी थी आखिर मे लगा था, इसके आगे कहने लायक रह ही क्या जाता है ?

रात गहरी हो गई थी

बैनर्जी बाबू कब्रिस्तान मे निकले तो विनायक और गजाधर दिखाई पडे थे वे लोग दरीबा पान मे मुहल्ले की मीटिंग के बाद लौट रहे थे बैनर्जी बाबू ने विनायक को रोक लिया—आपको नमस्कार कहता हू वायलीन को बगल मे दाबकर उन्होने दोनो हाथ जोड़ लिए थे

विनायक सकुचा रहा था—चलिए आपको घर छोड दू

—थैंक यू घर हर आदमी पहिचान ही लेता है

—आपकी तबीयत तो ठीक है ?

—यस आई एम परफेक्टली ऑल राइट इस बरेली मे इतना बडा बलवा हो गया और अब शादिया हो रही है बारात निकल रही हे. मेरा सवाल यह है कि आदमी को फ़र्क पडता हो, ऐसी चीज कौन सी है ?

विनायक ने अधेरे के बावजूद देखा, बैनर्जी बाबू के चेहरे पर शिकन उभर आई है.

—रिप्लाई टु माई कोश्चेन. ये अलग-अलग बस्तियां क्यों बनी है ? कहीं मुसलमान रहता है तो कहीं भंगी, कहीं ऊंची जात के लोग ? ह्वाट दिस सिस्टेम स्टैंडस् फॉर ! यू आर ए यंग मैन यू कैन अण्डरस्टैण्ड दिस इशू. कोई दूसरा होगा तो कहेगा, यह बूढा बंगाली किताबी आदर्श की बात करता है. लेकिन अपने आप से सवाल करने का वक्त अब आ गया. अगर आईडीयल नही है तो सिर्फ रोटी खाने के लिए जी रहे हो ?

बंगाली ने विनायक के कंधे पर हाथ रख दिया था बलवे के दिनों में हिन्दू और मुसलमानों के बीच आपने बहुत बड़ा काम किया इसीलिए आपको रोक कर आज नमस्कार कहा. बैनर्जी बाबू ने फिर वायलीन को हाथ मे लिया और गली में घुस गए

●●

गंगू गुरु, भगीरथ और बालकराम ने बिहारीपुर, कसगरान, चमारटोली, मलूकपुर, भंगी मुहल्ला जाकर हर घर के मर्दो मे गुजारिश की कि कल शाम के जलसे मे जरूर आएं । इस दफा शामियाना वगैरह नही लगा था. सिर्फ लाउड स्पीकर का इंतजाम था और उसमे फिल्म के गाने नही बज रहे थे. जलसा रात को आठ बजे कुएं के नजदीक बुलाया गया कुएं के चबूतरे के ऊपर चार कुर्सिया डाल दी गई और सामने भगीरथ ने अपने होटल की एक मेज रख दी

गंगू गुरू ने ठीक आठ बजे बात शुरू की. इस दफा बरेली मे जो कुछ हो गया. वो एक बहुत बड़ी शर्मिंदगी है आप सब इस बात को जानते हो लेकिन तमाशा तो जे है कि जानने के बावजूद इस बात को कोई समझना नाय चाहता. तो फिर हमने सोचा कि बिन्नू बाबू जो इस बलवे के टैम बहुत काम करते रहे है और किसी से डरे नही उनसे कुछ कैने के लिए कहे

बीच मे से कुछ लोग शोर मचाने लगे थे— अबे उतर वहा से बाजरिया पे जायके पान-तम्बाकू बेच

गगू झेप कर उतर आया था

विनायक ऊपर माईक के पास गया तो परसोराम जरा अचकचा रहे थे. उनका ख्याल था, जलसे मे पहुंचते ही आवभगत की जाएगी लेकिन ये लौंडे लपाड़े बुजुर्गों को इज्जत देना क्या जाने ? खैर, उन्होंने तय कर लिया था कि मौका मिलते ही खिसक जाएंगे लेकिन ऐसी जगह खड़े है कि खिसकना अब उतना आसान नही है एक तो है ही गर्मी का मौसम, ऊपर से लौडो की यह बदतमीजी

विनायक ने माईक का स्टैंड पकड़ा और समझाना शुरू किया कि यह कोई कायदे का भाषण नहीं है बरेली मे ग्यारह दिन तक जो आग जलती रही, उससे हमे बहुत कुछ सीखना है

पीछे अधेरे मे किसी ने कहा वाह बेटे ! खूब झाड रहे हो !

विनायक पाच सेकेंड के लिए रुका फिर बोलना शुरू किया—सीख मेरी बातों से नहीं, हालत से लेनी होगी'''आखिर मे उसने समझाने की कोशिश की, कैसे मजहबी और वोट मागने वाले कैसे-कैसे गरीब आदमी को लड़ाकर अपना रास्ता निकालते है चाहे हिन्दू हो, चाहे मुसलमान, चाहे भंगी. हम सब एक बात पर एक है कि हमलोग बहुत गरीब लोग है और आपस मे लड झगड कर पैसे वाले रईसो को और मजहबी वोट के भिखारियो को मजबूर करते रहे है सिर्फ अब बल्वा खत्म हो गया और इतने खून-खराबों के बाद भी हमारी हालत वही है, जो पहले थी.

इन बातो को आधे लोगो ने नहीं समझा बाकी लोगो मे से कुछ लोगो ने

आधा समझा.

आखिर में विनायक ने परसोराम से आग्रह किया कि वह भी आकर कुछ बोलें. बैद को इतनी देर में अब थोड़ी-सी तसल्ली हो पाई थी. परसोराम छड़ी हिलाते हुए ऊपर माईक के पास आए और बगल में पान की पीक उगल दी. फिर लगभग उन्हीं शब्दों को कहा, जो थोड़ी देर पहले विनायक बोल चुका था. जलसे में आए लोग अब काफ़ी ऊब चुके थे. वैद्य ने हालत समझ ली और बीच में मशीन की तरह अपना भाषण खत्मकर फौजी आदमी की तरह खड़े हो गए—अब जन गण मन होगा आप लोग मेरे साथ गाएंगे.

राष्ट्रगीत के बाद 'भारत माता की जै' का नारा आसमान में गूंजा और जलसा बर्खास्त हो गया.

●●

जलसे के बाद परसोराम और मुरारी डाक्टर 'कौशल्या भवन' तक आए. रात के ग्यारह बज चुके थे. इसके बावजूद वे बैठक में दाखिल हुए और मुहल्ले की नालीसे लेकर दिल्ली के कुतुब मीनार तक बातें करने लगे. वैद्य ने एकदम से नया सिलसिला शुरू कर दिया था—तुम बोलते बहुत बढ़िया हो. अच्छा है. कुल का नाम रोशन करोगे. यह उक्ति विनायक के लिए थी.

बैठक में जगतनारायण की एक तस्वीर लगी थी. मुरारी ने उस तरफ़ देखा और लम्बी सांस भर ली—इसी को कैते हैं परभु की माया. आदमी के मन का क्या भरोसा ? आज ह्यां है तो कल कहां रहेगा क्या मालूम.

परसोराम को कुछ याद आ गया था—लेकिन देखो, तुमने जे काम अच्छा नाय किया कि सराध हो गया और मुहल्ले वालों को खबर तक नाय करी आजकल के बी० ए० पास लड़के हो, सराध में बाल भले ही न मुड़ाओ लेकिन अपने लोगन को तो बुलाना ही चाहिए था.

यह बात ही ऐसी है कि कोई जवाब इस पर नहीं बनता. कमसे-कम परसोराम बैद और मुरारी डाक्टर को देने लायक तो नहीं ही. विनायक चुप रहा.

--हां, अपनी मा की तबीयत तो तुमने बताई ही नाय बैद को शायद यही पूछना मुनासिब लगा था.

—ठीक है.

—कैसी सती नारी है और भाग को देखो. खैर, और बुआ ?

--वह भी ठीक है.

—तुम तो कुछ कैते ही नाय. कभी किसी बात की जरूरत हो तो कमसे-कम परसोराम से तो बेधड़क कै सकते हो.

चुप्पी.

मुरारी उठने लगा.

परसोराम ने भी छड़ी उठाई और खड़े हो गए कभी-कभी मिले बैठे तो सुख-दुख ही कै-सुन लेंगे लेकिन तुम्हें तो फ़ुर्सत ही नाय मिलती ! बात खत्म करने के बाद परसोराम ने मुरारी की तरफ़ देखा था.

ज़रूरत नहीं थी फिर भी मुरारी ने जोरों का ठहाका मारा था—जे तो बात एकदम सही है.

—हां, जरा एक बात और थी. परसोराम ने ज़मीन पर छड़ी ठोकी और तन कर खड़े हो गए—इत्ता बड़ा बलवा होय गया और तुम्हारी वजह से बिहारीपुर वालों को कोई खास आंच नाय आई. लेकिन बई, ज़माना इत्ता सीधा नाय है. रात-बिरात

बाहर घूमना-फिरना अब बन्द कर देव

विनायक को मजाक सूझा था —चलो कोई तो है मेरे लिए फिक्र करने वाला अब तो मरने का भी गम नही होगा

मुरारी ने बैद को पुकारा— चलो बैद जी आज के जमाने के लौडे-लपाडो से बातन में जीत नाय सकते

परसोराम ने इस बात का खडन या प्रतिवाद नही किया था दोनो 'कौशल्या भवन' से निकल आए थे

●●

गगू गुरु की उम्र जरूर हो गई लेकिन बिहारीपुर वाले अब भी डरते है कोई भरोसा नही आदमी का आज पान-सिग्रेट बेच रहा है, कल ही किसी की खोपडी फोडकर अन्दर हो लेगा अन्दर और बाहर का फर्क औरो के लिए मायने रखता होगा लेकिन इसके बारे मे गगू बेफिक्र है

मुरारी को सुबह-सुबह गगू गुरु ने पकड लिया वकील साहब, अगले जनम मे तुम क्या बनोगे मालूम ? बहुत हुआ तो छछूदर बनोगे

मुरारी की कुछ भी समझ मे नही आ रहा था

—सुनो गगू बोला—अब क्या शेर बने फिरते हो ? साली का मालपानी हडप लिया और वह बेचारी भी जान से गई जो हारमोनियम वाला मर गया न, नासिरुद्दीन मियां, उसके पैरो री धूल भी तुम नाय हो

मुरारी चलने को हुआ था

—भागते कहा हो ? गगू दहाड उठा था

मुरारी मन ही मन तैतीस करोड देवी-देवताओ के नाम याद करने लगा. गगू के साथ बोला भी क्या जाए ? लेकिन जवाब न दिया तो भी मुसीबत

– अब बोलो, बलवे के बाद करोगे क्या ? डाक्टरी तो फुटल्ली-भर की नाय चलती सो खोचा लैके मूगफली ही बेचना शुरू कर दो

मुरारी ने हाथ जोड लिए ए भाई जरा जल्दी मे हू फिर फुर्सत मे बात करेगे

—तो तुम समझते हो गगू गुरु के पास फुर्सत ही फुर्सत है ? कल लौडस्पीकर पर म बोल रिया था तो अधेरे म खडे होकर चार जनो को उकसा दिया ! तुम समझते हो, गगू की सिरफ दो ही आखे हैं ? बलवे के 'टैम' मैं होता न, सबसे पैले तेरी गर्दन उडाता

मुरारी ने गिटपिट की—तुमे गलतफहमी हो गई है आखिर के लफ्ज गले की कपकपाहट की वजह से ठीक से पता नही चले

गगू ने मुरारी की गर्दन पकडी और धक्का-सा मार दिया पीछे नाली थी मुरारी गिर पडा था कपडे गीले और गदे हो गए थे उसने अपने कपडे देखे और एक मामूली-सी गाली उडेल दी इससे ज्यादा बोलने का होसला बाकी नही रह गया था

—अबे, गाली बकने के लिए दहाडना पडता है मिमियाकर गाली क्यो देता है ? गगू ने पूरी ताकत से एक झापड रसीद कर दिया उसकी उगलियो के दाग मुरारी के गाल पर आ गए थे

अडोस-पडोस मे लोगो का खासा मजमा लग गया था सब तमाशा देख रहे थे एक-दो लोगो ने बीच मे पडने की सोची होगी लेकिन आखिर मे हिम्मत नही जुटा पाए थे गगू गुरु का अगर एक भी थप्पड बदन पर पड गया सात दिन के लिए खाट पकड लेनी होगी

मुरारी फिर दौडता हुआ चला गया था लौटा तो साथ विनायक था मजमा

ज्यों-का-त्यों न सही, बहुत नहीं छंटा था. गंगू गुरु अश्लील मुद्रा में गाली बक रहा था और लोग मजा ले रहे थे.

विनायक को नुक्कड़ पर देखकर गंगू कुछ भकभकाया. फिर इर्द-गिर्द खड़े लोगों को हटा दिया —खिसको ह्यां से.

गंगू ने विनायक के पांव पकड़ लिए—तुम जो मरजी कै लो, गंगू गुरु कुछ नाय बोलेगा. लेकिन इस डाक्टर के बच्चे को छोड़ूंगा नाय.

मजमा फिर से इकट्ठा होगया था.

— खामोश विनायक ने झटका-सा दिया.

गंगू ने संक्षेप में रातवाली घटना बता दी. फिर खामोश हो गया.

घेरे में खड़े लोग नाटक के अगले दृश्य की प्रतीक्षा कर रहे थे.

मुरारी के चेहरे पर जो थोड़ा-सा आत्मविश्वास उभर आया था, वापस-सा जाने लगा.

विनायक अब मुरारी की तरफ़ मुड़ा—आपने भी गलत काम किया था. जलसा था, चार लोग इकट्ठे हुए थे किसी पढ़े-लिखे आदमी का ऐसा करना शोभा नही देता.

मुरारी कुछ कहने लगा था लेकिन विनायक ने रोक दिया था—कोई सफाई मत दीजिए. मुझे मालूम है, इस मुहल्ले का कौन कितने पानी में है.

मुरारी फिर कुछ नही बोला था. सिर्फ विनायक को लेकर वापस आने के लिए पछता रहा था.

— अब आप लोग सबके सामने एक-दूसरे से माफ़ी मांगेंगे विनायक ने पहले मुरारी की तरफ़ फिर गंगू की तरफ़ देखा.

दोनो अपनी-अपनी जगह पर खड़े रहे.

तब तक परसोराम कही से आ टपके थे—मांगो बई, माफ़ी मांगो, आखिर इन्सान हो, गलती करोगे ही. फिर माफी मांगने में क्या सरम ? परसोराम ने फिर दोनों के हाथ मिला दिए थे.

●●

जलसे के बाद के ये कुछ हादसे हैं.

वही लोग और वैसे ही बाज़ार. विनायक को कभी-कभी दिल में हूक-सी महसूस होती है. फिर यक़ीन आ जाता है, जैसे यह बलवा ही जगतनारायण को छीन कर ले गया. मां विधवा हो गई मां का चेहरा याद आते ही तारा याद आने लगती है दो-तीन दफ़ा वह रात को उस बंगाली डाक्टर के पास जाता रहा है. बूढ़ा डाक्टर देर तक आंखें बन्द किए वायलीन बजाता रहता. विनायक सुनते-सुनते लगभग सो जाता. फिर जब आंखे खुलतीं तो पता चलता, मुहल्ले में अब सिर्फ़ सन्नाटा रह गया है. सन्नाटे को चीर कर एक दो आवारा कुत्ते भूंक रहे होते हैं.

●●

दामोदर लुहार को बुलाकर परसोराम फटकारते रहे. दामोदर चुपचाप हाथ जोड़े

खड़ा था नैनामेम के पेट में बच्चा आ गया, यह खबर छेदी ने फैलाई थी छेदी की हालत यह है कि उसका शीकिया रूप देखकर औरतें भी तरस खाती मिमियाकर वह कुछ बोलने की कोशिश करता तो लोग सुनते ही नही या फिर डाट-डपट कर बैठा देते. लेकिन उसने नैनामेम के पेट की खबर सुनाई तो लोग सुनते रहे शायद पहली बार छेदी की बातो पर किसी ने ध्यान दिया था बिहारीपुर वालो को लगा था कि नैनामेम ने बिहारीपुर वालो की इज्जत मिट्टी मे मिला दी

डोरीलाल ने कार्य क्रम बनाया था कि फिरगी की हजामत बनाई जाए. लेकिन आखिर मे साथ देने को कोई तैयार ही नही हुआ था किसी मे इतनी हिम्मत नही रह गई थी

बात परमोराम तक पहुंची वह छडी हिलाते हुए, पान चबाते हुए भगीरथ के 'होटल' तक आ पहुंचे फिर छेदी को दामोदर के यहा भेज दिया छेदी ने जिन्दगी मे पहली बार पौरुष का अनुभव किया था वह दस मिनट के अन्दर वापस आ गया, साथ दामोदर भी था

सबसे पहले डोरीलाल ने दहाड़ा– अबे ओ, दामोदर के बच्चे, चल यहा जमीन पर थूक के चाट सबसे पैले

परमोराम ने दाहिना हाथ उठाकर सबसे शान्ति रखने के लिए कहा फिर डिब्बा खोल कर मुह मे एक बीडा पान रखा दो मिनट तक उसे चबाया और अपनी कुर्सी खीचकर सामने कर ली—हा तो दामोदर तेने मुहल्ले वालो की नाक ही कटा दी तेरी लौंडिया इत्ते दिनो मे रामलीला करती रही, हमने कुछ नाय कही लेकिन तू ही बोल हम कहा तक मुह । पे ताला लगाय के चुपचाप बैठे रहे ?

दामोदर चुप रहा

—तेरी लौंडिया का कोई एक खसम ता नाय है जो पता चले, जे है किसका पाप ! डोरीलाल अपनी हथेलिया भरपूर नचा रहा था

भगीरथ ने लगाम खीची—देखो बई, फिरगी का कुछ भी कैलो लेकिन किसी और को गाली नाय देना

—तेरा क्या बिगडता है ? तुझे तो पूछेगी भी नाय लुहार की लौंडिया

–फिर ? भगीरथ सामने आकर कडक रहा था

फिर डोरीलाल थोडा सहमा—तू ता खामख्वाह इज्जत कर रिया मैने तुझ से कुछ नाय कही ? फिर आखें क्यू लाल-पीली करता है ?

परमोराम ने बीच-बचाव किया—बई, तुम लोग आपस मे ही लडते फिरोगे तो फिर हो गई बात ! मामला हीयई टाय-टाय फिस्स हो जाएगा

डोरीलाल ने बात आगे नही बढाई थी

भगीरथ ने स्थिति स्पष्ट की— जित्ती मरजी आए लुहार को गाली दै लेव. लेकिन किसी और पे अगर उगली उठाई तो ह्या मे सिमरो मोती फाटक मे जलसा बुलाओ, जिसको जित्ती मरजी गाली दै लेव भगीरथ ने अपनी बात लग-भग एक ही सास मे पूरी की और भट्ठी के पास आ गया केतली मे पानी खोल रहा था, और तेजी से भाप निकलने लगी थी

—हा तो कुछ बोला, लुहार परमोराम दामोदर की तरफ मुखातिब हुए और पीक उगल दी

मुरारी डाक्टर अपनी सायकल पर सिटी स्टेशन की तरफ जा रहा था भीड देखी तो वही उतर गया—कोई जलसा कर रहे हो वैदजी ?

—चाहे जलसा समझो, चाहे नौटकी. दामोदर अब हम लोगन को इस मुहल्ले

में ठैरने नाय देगा. परसोराम ने फिर संक्षेप में सारी कहानी सुना दी. आखिर में डिबिया खोल कर मुंह में थोड़ा-सा तम्बाकू डाला और पान चबाने लगे.

मुरारी ने लैंपपोस्ट से अपनी सायकाल टिकाई और करीब आ गया— इसका तो बैद जी फौरन कोई हल निकालो.

परसोराम हंसे—बई, हम कोई कलट्टर थोड़े ही हैं. मुहल्ले वाले हैं, दो बातें कै-सुन सकते है. आगे तुम्हारी मर्जी.

—सबसे पैले हम तो जे ही कहेंगे, फिरंगी को ह्यां से निकाल ही दो. जहाज पे बिठायके एकदम बिलायत पहुंचाय दो. नैना भी राज करेगी.

मुरारी की बात पर सबको हंसने का मौक़ा मिल गया था.

डोरीलाल ने दामोदर को रास्ता बताया—खलास कराय ले अपनी लौंडिया का पेट. बैद जी का पांव पकड़ले, समझा ?

दामोदर बेवकूफ-सा डोरीलाल की तरफ देख रहा था.

परसोराम ने जीभ काटी—अरे राम ! राम ! जे काम हमसे नाय कराओ. हम ठैरे पूजा-पाठी ब्राह्मण. ऊपर वाला एकदम नरक मे भेज देगा.

भगीरथ ने चुटकी ली— लेकिन बैद जी, सारा मौज-मजा तो नरक में ही है. सरग में क्या रक्खा है ? वहां जाओगे तो पूजा-पाठ ही करने पडगे.

लोग दुबारा ठठाकर हंस पड़े थे.

परसोराम अचकचाने लगे थे.

मुरारी ने बीडी सुलगाई. ढेर-सारा धुआं उगल दिया– वैसे दामोदर, तेरी लौंडिया है मार्केवाली. देसी-वेसी मे मुंह नाय मारती. इससे पहले भी अलग-अलग जुबान से यही जुमला दामोदर कम-से-कम एक हजार मर्तबा सुन चुका है. चलो एक बार और सही.

जगदम्बा अब तक खामोश था. बोलने का मौका ही नही मिल पा रहा था इतनी देर बाद वह बोला—देसी में भी मुंह मारती है लुहार की लौंडिया लेकिन अंग्रेजी में गिटपिट बोलो तब, ऐमे तो वो देखेगी भी नाय.

मुरारी इशारा समझ गया था ह्यां तो बी ए पास मुहल्ले मे एक ही है तू ने भी जगदम्बा खूब कही

भगीरथ इस दफ़ा सामने आया और जगदम्बा के चेहरे पर एक वज़नी थप्पड़ रसीद कर दिया. जगदम्बा मार खाकर सहम गया था. लेकिन जल्द ही उठ खड़ा हुआ कि मक्खन ने रोक लिया था—वाह ! बई, वाह ! नौटंकी दामोदर की लौंडिया ने तो की ही, तुम भी पीछे नाय हो.

—जुबान खींच लूंगा, (एक भद्दी गाली). भगीरथ उबल रहा था.

जगदम्बा के चेहरे पर अपमान की छाप थी लेकिन ज्यादा बोलना मुनासिब नही लगा था. थोड़ी देर वह बड़बड़ाता जरूर रहा लेकिन जल्दी ही चुप भी हो गया.

परसोराम ने अपनी छड़ी जमीन पर ठोंकी—अरे बई दामोदर, कुछ तो बोल तू. तेरा इरादा क्या है ? हम लोगन की नाक ही कटवाता फिरेगा या फिर कुछ और भी करेगा ?

छेदी ने एक रास्ता सुझाया—दामोदर को भी मुहल्ले से निकालो.

—चुप बे. तेरे बाप का मुहल्ला है ? भगीरथ ने डपट दिया.

मुरारी एकदम से उठने लगा था. नैना आती हुई दिखाई पड़ गई थी. लेकिन मुरारी डाक्टर का इतना सौभाग्य नहीं था कि नैनामेम के यहां तक आने से पहले ही वह भाग सकता.

यहा की तमाम कार्रवाइयो के बारे मे खबर किसने करी यह तो पता नही चला लेकिन इतना जरूर जाहिर हो गया कि नैनामेम तक एक-एक बात पहुंच चुकी है.

परमोराम भी उठना चाह रहे थे

—ठैरो बैद जी, ठैरो, जल्दी किस बात की है ? नैना ने बैद की ठुड्डी पकड़ ली थी

कोई दूसरी औरत होती तो इसी वक्त सनसनी फैल जाती

दामोदर लुहार को खासा मौका मिल गया था वह यहा से खिसक गया. खिसक कर कहा और कैसे गया, पता नही चला

नैना ने साडी के पल्लू को कमर मे लपेटा और परमोराम को पूरी ताक़त से एक थप्पड मार दिया परमोराम सतुलन खोकर कुर्सी मे गिर पड़े थे

नैना मेम 'छम छम-छमिया' जरूर नही ह लेकिन इस कदर हिंस्र हो सकती है, यह किसी को पता नही था

किसी की हिम्मत नहीं हुई कि आगे जाकर बैद को सहारा दे

बैद उठा और मेज पर सर रख दिया

नैना ने उसका माथा पकडा —नैना क्या करती और क्या नाय करती जे 'सोच कर आगे से अपना दिमाग खराब नाय करना

मुरारी पीछे से खिसक गया था

फिर नैना ने जमीन पर थूक दिया और एक ऐसी गाली निकाली जो सिर्फ मर्द ही दे सकते ह—आगे स कोई माई का लाल अगर नैना का नाम जुबान पे लाता है न, जे ही थूक चटागी

भगीरथ बोला —अब बस भी कर !

— बस कर ? अबे तेरा बाप मर्द भी था या तेरी महतारी रोख भरने कही और गई थी ? तेरी दुकान पे इत्ती रस से रामलीला होती रई, तब नाय कहा, बस कर !

भगीरथ कुछ नही बोला था

उसको बात गलत नही लगी थी

—जनखा हू ह्या एक एक दाढी मूछे भर मे कोई मरद नाय बनता ! नैना ने दुबारा थूक दिया था— आगे स याद रखना नाम तो एक-एक का घर म आग लगाय दूगी, हा

वह फिर दूकान से उतर आई थी

वहा लोग इसके बाद भी दो मिनट तक बुतो की तरह खडे रहे फिर एक-एक करके निकलने लगे थे

डोरीलाल ने परमोराम को घर पहुंचाने के लिए एक रिक्शा बुला लिया

●●

बात यही खतम नही हो गई

माईकल फिरगी ड्यूटी के बाद लौट रहा था जगदम्बा ने आवाज़ फेकी—ओरे अग्रेज का बाप, बात तो सुन

फिरगी अनसुना कर निकल रहा था

जगदम्बा ने जाकर उसका हाथ पकड लिया—कहा भागते हो ? फ़ौज मे जाकर लडाई करनी हे क्या ?

—क्या बोलना मागता ?

—बोलना क्या हे ? बैठो, चाय पियो आरती उतारूगा तेरी

फिरगी चेहरे से एकदम निरीह और बेचारा लग रहा था

भगीरथ ने अपने 'होटल' पर से आवाज़ दी—खामख्वाह बात बढ़ रिया तू जगदम्बा. पिटेगा फिर इसकी मेम से.

जगदम्बा ने भगीरथ को एक कड़क-सा जवाब दिया. मां की गाली थी. उसमें गाली कम और अश्लीलता ज्यादा थी, सपाट किस्म की.

भगीरथ दूकान छोड़ कर नीचे आया और सामने का ईंटा उठाकर जगदम्बा पर दे मारा. अमूमन ऐसी गालियों पर गुस्सा नहीं आता लेकिन इस दफ़ा आया था.

निशाना चूक गया था,

फिरंगी हड़बड़ाकर भाग निकला वहां से.

जगदम्बा इससे पहले एक बार और अपमानित हो चुका था, इसकी याद दिल में एकदम ताज़ा थी. उसने पांव से चप्पल निकाली और भगीरथ के चेहरे पर मार दी. चप्पल आंख पर लग गई थी.

मामला चौराहे का था लिहाज़ा लोग जमा हो गए. जैसा कि यहां का रिवाज-सा है, लोग एक घेरे में खड़े होकर मज़ा ले रहे थे.

आंख पर चोट के बावजूद भगीरथ ने उसकी परवाह नहीं की. वह नज़दीक आया और जगदम्बा की कमीज़ फाड़ दी. फाड़ने में वैसे कोई दिक्कत नहीं हुई.लगभग फटी हुई थी ही.

—तेरे बाप का नाम भुलाय के दम लूंगा. भगीरथ हांफ रहा था.

—ले भुला ! जगदम्बा एक अश्लील भंगिमा में खड़ा हो गया.

—वहां कुछ है तेरे पास ? जनखा कहीं का···

जगदम्बा ने इस दफ़ा भगीरथ को पीछे से लात मारी वह गिर पड़ा लेकिन संभल गया था. अब वह अपना कोना ढूंढ रहा था

—लुहार की लौंडिया की दलाली करके पेट भरता है तू जगदम्बा ने अपनी जांघों पर हाथ फेरते हुए कहा

भगीरथ ने दुबारा ईंट फेंकी लेकिन निशाना इस बार भी चूक गया.

तमाशबीनों को बहुत मज़ा आ रहा था उन लोगों की आंखों में एक आदिम किस्म का उल्लास उतर आया था.

—तुझे मैं मुहल्ले से निकाल के दम लूंगा नाय तो गू साफ करवा लेना मुझ से. जगदम्बा गुस्से से कांप रहा था.

—जनखे से फिर मर्द बनाना पड़ेगा तुझे

लोगों को बहुत मज़ा आया, इस संवाद पर

जगदम्बा ने अपने पाजामे का नाड़ा खोला. और ललकारकर कहा— ले अब देख मर्द किसे कैते हैं. रात को अपनी लुगाई को भेज देना

एक ठहाका लग गया था. तमाशबीनों को अरसे बाद एक अलग किस्म का मज़ा आया था.

जगदम्बा ने अपनी अश्लील भंगिमा जारी रखी.

—अपनी भैन को दिखा जाकर भगीरथ बोला. अब वह काफ़ी फ़ासले पर था.

—तेरी भैन को दिखाऊंगा. जगदम्बा का जवाब लगभग तैयार ही था.

भगीरथ फिर लपककर सामने गया और उसे ज़मीन पर लिटा दिया.

जगदम्बा का धड़ नाली के ऊपर था. वहां की कीचड़ से चेहरा एकदम काला हो गया था. उसकी छाती पर भगीरथ सवार हो गया था—स्साले, पीछे से डण्डा घुसेड़ दूंगा.

भगीरथ के दोनो पंजे जगदम्बा की गर्दन पर थे लिहाजा बोलने की कोशिश मे वह एक अस्पष्ट-सी आवाज-भर निकाल पा रहा था उसकी आखे एकदम लाल हो गई थी

रामधनी तमाशा देख रहा था अब तक मामला काफ़ी सगीन हो गया तो उसने आगे बढकर भगीरथ को पकड लिया—अब बस करो जो हो गया सो हो गया चलो, अब छुट्टी करो

भगीरथ ने जगदम्बा को छोड जरूर दिया लेकिन वह दस मिनट तक उसी तरह कीचड मे पडा रहा बदन मे कई जगह खरोच आ गई थी बेहोशी तो खैर नही थी लेकिन जिस्म मे जैसे ताकत नही रह गई थी

रामधनी फिर सहारा देकर उसे घर तक छोड आया था

●●

नैनासिंह के इस किस्से को लेकर नौरगी वकील भी बहुत सोचता रहा लोग विनायक का नाम भी इसके साथ जोड रहे है, कहानिया बन रही है लिहाजा एक शाम वह ढाल पर उसके दवाखाने पहुंचा

भगीरथ के 'होटल' मे दस तरह की बाते होती है आखिर 'होटल' है, लोग आएगे ही और बाते भी होती रहेगी चाहे कोई कितनी कोशिश कर ले, ऐसे मामलो पर लोगो को अपनी बाते कहने से कोतवाल भी नही रोक सकता लिहाजा नैना के साथ अगर विनायक का नाम जुडता है तो इसमे ताज्जुब कुछ नही खैर, नौरगी ने परमाराम से सलाह ली और दवाखाने पहुच गया

मरीज ज्यादा थे

नौरगी ने सामने रखा अखबार उठा लिया और ऊबने लगा मन-ही-मन अखबार वालो को सौ गालिया दडाली अरे बई, जब छापने लायक खबर है ही नाय, तो क्या थैले बनाने के लिए अखबार छापते हो ? आखिर मे वह फिल्म के विज्ञापन देखने लगा था विज्ञापनो को देखने के बाद जम्हाई ली और ऊबने लगा. इस बीच अपनी कलाई पर बधी घडी वह चार बार देख चुका था

आखिरी मरीज निकलने को हुआ तो दो और आ गए

नौरगी का धैर्य जवाब दे रहा था—अमा, मरीज ही देखते रहोगे या अपना इलाज भी कराओगे ?

विनायक हसा—बोलो, क्या कहना है

—कहना तो है लेकिन ऐसे नही जल्दी मे निबट लो नौरगी एक बीडी सुलगाकर कश खीचने लगा था

पन्द्रह मिनट लगे थे विनायक को इस बीच नौरगी तीन बीडी फूक चुका था. नीचे, जमीन पर राख फैली हुई थी चूकि पाव से उसने बीडी के टुकडो को कुचला था, फर्श पर काले दाग भी थे

मरीज निकल गए तो नौरगी नजदीक आकर जम गया. उसने जूते उतारे और पावो को कुर्सी पर कर लिया—नैनासिंह का किस्सा सुना है

—हू

—और कुछ नाय सुना ?

—सुना है. विनायक का नाम सुना है

—नौरगी अचकचाया—फिर तुमसे क्या कैना ?

—क्यो कहो, कोई नई खबर हो तो…

—हमे तो गुस्सा आता है. बस चले तो जबान खीच लू लोगन की.

—और कुछ नाय कर सकते ?

—अमां, तुम सब बेमज़ा कर देते हो.

विनायक हंसा—क्यो ? दामोदर की बेटी और मै, इसमे मज़ा-ही-मज़ा है.

—तुम ठैरे एक इज्ज़तदार आदमी•••

—इज्ज़त दामोदर की भी है, और नैना की भी.

—सो तो है. लेकिन लोगोन को मौक़ा मिला नाय कि बस कीचड़ उछली.

—कुछ लोगों को इसमें मज़ा आता है.

—अब काम की बात करो. तुम कहो तो हम चार लोगन को बुलाते हैं. आख़िर इस मामले को तो रोकना ही चाहिए.

—मीटिंग करके, जलसा बुलाके इसका इलाज नही निकलेगा.

—दामोदर की लौंडिया खुद तो नरक में है ही, तुमें भी बदनाम कर रई है.

—बदनामी उसने कभी नही की होगी.

—आख़िर बदनामी हो तो उसी की वजह से रई है.

—यहां जो गिरस्तिन औरतें हैं न, नैना के पैरों की धूल भी नही हैं. किसी में होगी इतनी हिम्मत जो फिरंगी के बच्चे की मां बने और अपने झूठे ब्याह की कहानी न फैलाए ?

बात नौरंगी के गले के नीचे नही उतर रही थी.

—लोग मुझे कहते हैं, कुछ नही भी तो कहते हैं. रोशनी देख पाने के लिए सचमुच बहुत ताक़त वाली आंखें चाहिए. विनायक बोला.

—तुम जो बात कैते हो न, कोई नाय समझता.

—लेकिन कल सिर्फ़ यही बात लोग समझेंगे.

—कल की बात से तो फिर निबट लेंगे. आज का जे मामला तो सुलझाओ.

—कई चीज़ें होती ही ऐसी हैं, जिनका कोई जल्द हल नही निकलता. थोड़ा इंतजार करना पड़ता है. फिर वक़्त ही सबकुछ बता देता है.

—लेकिन वक़्त के आने तक जल जाअंगे. थोड़ी समझदारी की बात करो.

—समझेंगे कि निखरने के लिए जलने की जरूरत थी.

—जलके निखरोगे ? जे भी कोई बात हुई ?

—बात सिर्फ़ यही हुई.

—मैं भी आखिर तुमें ऐसे ही तो नाय कैने आया. तुम्हारा भला-बुरा सोचा होगा, दिल में तकलीफ़ हुई होगी, तब न आया.

—लेकिन तुमें बिना वजह परेशानी हो रही है. तुहार की बेटी का एक ऊंचा चरित्र है, लोगों से कहोगे तो मान लेंगे ?

—जे बात हम नाय मानते.

—फिर ठीक है. चाहे लोग विनायक का नाम लें चाहे किसी और का, थोड़ा-सा वक़्त देकर इंतज़ार कर लो. हो सकता है, वक्त ही बता दे, तुम्हारी समझ गलत है.

—फिर तो दुनियाभर के सारे लुच्चे-लफंगे तुम्हारे हिसाब से बड़े पाक हैं.

—बहस करना फिज़ूल है. मेरी बात तुम नहीं समझते.

—जे मैं भी कै रिया था. तुम्हारी बात मैं तो क्या, कोई नाय समझता.

—फिर तो दिक्क़त ही कुछ नहीं. घर जाकर रोटी खाओ और इतमीनान से सुबह तक चद्दर तानकर पड़े रहो.

नौरंगी थोड़ी देर तक चुप रहा. फिर दुबारा बात शुरू कर दी—जे फिरंगी

का बच्चा जित्ता सीधा दिखता है, उत्ता तो नाय है.

—मैं उसे नहीं जानता.

—कौन-सा वो मेरा भतीजा है ? लेकिन चालचलन से आदमी कुछ भांप तो सकता ही है.

विनायक ऊब रहा था

नौरंगी को सारा सिलसिला बहुत ही बेमज़े का लगा उसने पैरों को नीचे उतार कर जूते डाल लिए फिर घड़ी देखी. काफी वक्त हो गया था. ढाल का बाज़ार लगभग सूना हो गया था विनायक फिर बत्ती बुझाकर दरवाज़े का ताला बन्द करने लगा

●●

विनायक घर वापस आया तो दस बज चुके थे. उसने कपड़े बदले और नल पर जाकर मुह-हाथ धो लिए.

रानी ने पीढ़ा लगाया और सामने थाली रख दी.

मोहिनी शायद सो गई थी घर के सन्नाटे से ऐसा ही लगा था. विनायक पीढ़े पर बैठा तो वह उठ आई बेटे से बात करने का मौक़ा इससे अच्छा और नही मिलता.

अन्दर से कुन्ती बुआ ने अलसाये स्वर मे आवाज़ दी—लल्ला आ गया क्या ?

जवाब रानी ने दिया था—रोटी खाय रहे है.

—अच्छा. बड़ी रात हो गई कुन्ती के जम्हाई लेने की आवाज़ आई.

इतनी रात रोज ही होती है लेकिन कुन्ती बुआ के कहने की यह आदत पुरानी होकर भी पुरानी नही होती वैसे पूछ चुकने के बाद वह खर्राटे भरने लगी थी

—दवा ली थी तुमने, शाम वाली ? विनायक ने पूछा.

—अब दवा क्या कर लेगी ? चाहे जित्ती मरजी देदे, फरक नाय पड़ने का.

विनायक ने रोटी का गस्सा निगला और पानी पी लिया—बालेश्वर लौटा ?

—अभी बारह नाय बजे हैं.

—विनायक के गले मे कौर अटक-सा गया था.

—एक बात कैनी थी मोहिनी का चेहरा कुछ पीला-सा लग रहा था.

—बोलो

—लुहार की लौंडिया के संग तेरा नाम जोड़कर लोग रसैन गा रहे हैं. तेरा बाप जैसा भी था, किसी ने उंगली उठाने की हिम्मत नही की कभी.

—तुम्हे तकलीफ़ होती है, न ?

मोहिनी की आखो से आसू निकल पड़े थे.

रानी ने एक और फुलका थाली मे रख दिया था. विनायक की इच्छा नही थी लेकिन मा की वजह से एकदम से उठ जाना मुनासिब नहीं लगा था.

—तुम क्या कहती हो, अपने बेटे को ?

—मैं क्या कहूगी अब तू ब्याह कर ले. मुहजले लोगन की जबान का क्या भरोसा ? ब्याह कर ले तो मुझे कुछ तो चैन मिले.

—लोग तो मेरे ब्याह के बाद भी कह सकते है !

—वैसे भी उमर बीत रही है. ब्याह कोई बाल पकाकर तो नाय करता ?

—यह बात छोड़ो. एक बात सच बोलना. तुम मुझे क्या समझती हो ?

—समझती तो मैं लुहार की बेटी को भी बुरी नहीं.

—विनायक चौक गया था. एक अनपढ़ औरत इतनी गहरी बात बोल देगी, इतनी उम्मीद उसने कभी नही की थी.

—फिर लोग जो कहते है, सुनकर तकलीफ़ न पाना. तकलीफ़ के लिए और भी तो चीजे है, जो झूठी नहीं है.

—तेरे लिए मुझे हमेशा फिकर लगी रैती. रात-बिरात लौटता है. एक दिन कोई कुछ कर ही देगा.

विनायक उठा और नल तक जाकर कुल्ला कर लिया लगा, महीनो निकल जाते है, मा से बात ही नही होती. याद ही नही आता कि इस औरत के पास कहने-सुनने के लिए ढेर सारे दर्द हैं. और सत्य की तरह दर्द मे इतनी रोशनी होती है कि उसे झेलना आसान नही है.

मोहिनी ऊपर अपनी कोठरी मे चली गई थी रानी भी जाकर कुन्नी की बगल मे खाट पर पसर गई थी अब वहा नलके गिर्द कोई नही था अगर कुछ था तो थोडा-सा अधेरा, थोड़ी-सी रोशनी. समूचा मकान एकदम खाली लग रहा था

विनायक बुत की तरह खड़ा रहा ऐसे मकानो मे आदमी रह सकते है ? फिर वह बहुत मुश्किल से अपने कमरे तक आया और चारपाई पर लेट गया. आखे खुली थी अधेरा था. कुछ भी नही दिखाई पड़ रहा था

●●

नैना मिल गई थी. मास्टर लक्ष्मी शंकर की लकडी टाल पर लकड़ी लेने आई थी सड़क पर विनायक दिखा तो लगभग उछलकर बाहर आगई थी—कहो सेठ, ईद के चाद बन गए दिखाई नाय देते···

—तेरा फिरगी कैसा है ?

—ठीक ही होगा. मोको क्या पता ?

—फिर तो खुद उसे भी पता नही होगा

—जे नाय पूछा कि नैना कैसी है ?

—देख रहा हू.

—देख रहे हो हाड-मास लेकिन भगवान कसम, नैना सिरफ इत्ती ही नाय है

—है तो बहुत बडी इतना मै भी समझ गया

—लेकिन तुम दुबलाय गए विनायक को लगा, यह बात सिर्फ एक पूरी औरत ही कर सकती है.

—झूठ बोलती है तू वह चलने लगा था

—अभी ठैरो तुम्हारे पास टैम नाय है, इत्ता मै भी जानती हू.

—बोल क्या कहना है ?

—तुम तो दरोगा की तरह बोल रहे हो··· नैना फिर बहुत सजीदा हो गई थी—पता जब दुनिया को चल गया, तुमने भी सुना होगा कि नैनामेम फिरगी की औलाद की मा बनने वाली है.

चुप्पी.

—बोलो नाय सुना ? नैना की ज़बान से यह सवाल सुनने की बजाय अगर कोई सामने आकर गाली भी दे जाता, विनायक को शायद इतनी दिक्कत नही होती.

चुप्पी.

—चुप रह के कऊन सी बहादुरी दिखाते हो ? ऐसे तो कोई भी रै लेगा···

—तू कहना क्या चाहती है ?

—जो कैना था, कै दिया तुम समझे नाय. नैना क्या से क्या हो गई, तुम जानते हो. कऊन औरत नाय चाहेगी सुहागन बनना मै भी चाहती थी लेकिन छोड़ो जे सब. लेकिन मुहल्ले वालन पे तो थूकती है नैना ! सिरफ तुम से कैती हू, मैने पाप

नाय किया

विनायक सोच नहीं पा रहा था कि जवाब में क्या बोला जा सकता है ? या इस बात का सचमुच जवाब होता भी है या नहीं ?

—लेकिन मेरा दुख तो तुम हो, नैना ने पल्लू से आंखें पोंछी—मुहजले तुम्हे बदनाम करते है तुम चाहे कुछ भी कर लेव पाप नाय कर सकते

—फिरगी को मेरे पास भेज देना तेरी सेहत के लिए दवा दे दूगा

—छोडो भी नैना का क्या होना है ? कल अगर मर भी गई, कहीं कोई फरक नाय पडैगी भगीरथ का 'होटल' भी चलता रैगा, टेसन पे गाडी आती-जाती रैगी फिर नैना की सेहत रहा से वडी भारी चीज होय गई ?

विनायक को एकदम से कुछ याद आ गया था—एक बात तो बता, तू पापपुण्य को क्या समझती है ?

—जे नाय मालूम सिरफ़ दिल से पूछती हू जो दिल कैता हे वही मान लेती हू

—तेरा दिल झूठ बोले तो ?

—दिल तो बाबू किसी का भी झूठ नाय कैता जे मुई जबान ही झूठ कैती फिरती नैना फिर चुप हो गई थी

वह फिर मुडी और टाल के अन्दर घुम गई शायद याद आ गया था, लकडी लेकर उसे फौरन लौटना है, तभी चूल्हा जलेगा

●●

टाल के मालिक मास्टर लक्ष्मीशकर मोढे पर बैठे अखबार पर आख गडाए थे आखें अखबार की खबरो पर रही होगी लेकिन कान टाल के बाहर थे.

विनायक और नैनासिंम के बीच यह मामला इस बिहारीपुर के लिए है ही इतना रसीला कि कोई नही छोडना चाहगा

मास्टर लक्ष्मी शकर स्कूल मास्टर से आडे-टेढे रास्तों से होकर टाल के व्यापारी बने थे स्कूल में ये तब बरसो अफवाह बने रहे जो लोग मास्टर विरोधी दल के थे तरह-तरह की बाते लक्ष्मी शकर के बारे मे कहा करते जा कहते हैं, कहने दो लक्ष्मीशकर ने तो न विरोध किया न हेडमास्टर से शिकायत ही की स्कूल के दूसरे मास्टरों से न तो दोस्ती थी न दुश्मनी ही खाली वक्त होता तो लाइब्रेरी जाकर बैठ जाते नई-पुरानी किताबे उलट-पलट लेते चेहरे पर हमेशा एक शिकन-सी चढी रहती स्कूल के मैनजर से एक दूर का रिश्ता था लिहाजा हेडमास्टर ने भी कभी कुछ नही कहा

लेकिन लोग शायद बूढे मैनेजर के मरने की ताक में थे

बुड्ढे के मरने के नौवें दिन हेडमास्टर ने चार्जशीट थमा दिया था. जो इल्जाम था, वह शरीफ आदमी पर लगे तो वह हमेशा के लिए बर्बाद हो जाए चार-छह लडके भी गवाही के लिए तैयार हो गए एक दिन स्कूल मे स्ट्राईक हो गयी और लडको ने नारे लगाए—लौडेबाजी नही चलेगी स्कूल के दादा किस्म के चिकने चेहरे वाले लडको को भद्दे तरीके से छेडते और आखिर में लक्ष्मीशकर पर फब्तियां कसते

लक्ष्मीशकर मामले की सजीदगी समझ गए थे उन्होंने चार्जशीट ली और इन्क्वायरी वगैरह के झमेले मे न पड कर सीधे इस्तीफा दे दिया मास्टर की बीवी नही थी तीन लडके और दो लडकियां थी सबसे छोटी लडकी ने अफीम की गोलियां लेकर खुदकशी कर ली थी अफीम की आदत मास्टर की ही थी लेकिन डिबिया को हमेशा ही वह सभाल कर रखते थे खैर, जैसे भी हो डिबिया हाथ लग गई थी और बाप से कुछ भी जिकर किए बिना उसने रात को सोने से पहले इकट्ठे ढेर-सारी

गोलिया निगल ली थी

मास्टर की जिन्दगी की यही सिर्फ एक कहानी नही है. मुहल्ले वालों को इनमे से कुछ अगर मालूम है, ज्यादातर बातें वे जानते ही नही.

लेकिन अभी सिलसिला दूसरा चल रहा था

नैना ने टाल के अन्दर आकर लकड़िया उठाई और पैसे देने लगी तो लक्ष्मीशंकर उसके जिस्म का भूगोल देखने लगे.

नैना ने जवाब मे कुछ भी नही कहा था. सिर्फ मास्टर के ठीक सामने जमीन पर थूक डाल दिया.

मास्टर बिदके—तमीज नहीं है तुझे ?

—ना बाबा, सब धोय कर खाय गई

हुंह !

—सुन, अपनी मरी हुई लौंडिया पे तो कभी तरस खाया कर इत्ती उमर होय गई पर तूरिया कुत्ता ही.

— चुप जा.

—तुझपे तरस खाय के मै बोली नाय. नाय तो तेरी जो ऐनक बाली आखें है एकदम फोडकें रख देती.

उसी जगह नैना ने दुबारा थूका और पावों को पटककर बाहर निकल आई इस बार मास्टर ने कुछ नहीं कहा

●●

टाल के सामने नैना और विनायक के बीच बाते हुई, यह खबर छेदी ने वायरलेस से भी ज्यादा तेजी से मुहल्ले में फैला दी

कुए के पास मक्खन खड़ा था छेदी ने यह सूचना दी तो वह बहुत खुश हुआ था. चेहरे की पेशियों से खुशी झलक रही थी

वृन्दावन कुम्हार इन पचड़ो मे नही पडता. उसे इतनी फुर्सत भी नही मिलती कि मिट्टी के खिलौने और घड़े-सुराही वगैरह बनाने के बाद भगीरथ के 'होटल' जाकर चाय-बिस्कुट उड़ाए. घर मे आटे-दाल की ही इतनी तगी रहती कि इधर-उधर झाकने का वक्त नही मिलता, वैसे कहने को 'कौशल्या भवन' है पडोस का ही मकान लेकिन वृन्दावन को इतना भी नही मालूम होगा कि दीवार के उस पार कितने प्राणी बस रहे है.

छेदी फुदक-सा रहा था वृन्दावन रामगगा से गधे की पीठ पर मिट्टी लाद कर लौट रहा था. छेदी ने उसे आवाज दी—गधे के सग चलते-चलते तू भी अब गधा ही बन गया, बिन्द्राबन.

—कोई मदारी मिले तो तुझे बन्दरिया समझ कै लै जाय

—कैले, बई कैले होआ, तेरे पड़ोस मे तो रामलीला चल रई है. तुझे है पतो कुछ ?

वृन्दावन ने बीडी का धुआ उडेला—तभी नाच गिया तू.

छेदी अपनी कमर लचकाकर वाकई नाचने लगा था मक्खन हथेलिया बजाकर ताल देने की कोशिश कर रहा था.

तब तक वृन्दावन निकल गया था और शकर, जगदम्बा, रामधनी वगैरह आ गए थे. वक्त यो दुपहर का था लेकिन चूकि इतवार था, ज्यादातर लोगों की छुट्टी थी. भगीरथ के होटल मे रेडियो बज रहा था. लेकिन सर्दी थी लिहाजा कुएं के पास धूप में बैठना सबको ज्यादा मुनासिब लगा. गोबिन्द ने चाय का आर्डर दे दिया था और

भगीरथ केतली में पानी गरम कर रहा था. लोग समझ गए कि गोबिन्द ने दो-एक दिन मे कुछ कमाया जरूर है. उसकी तरफ से छेदी के लिए बिस्कुट का भी आर्डर था. कुलमिलाकर एक फिल्मी धुन की तर्ज पर बाक़ी लोग तालिया पीट रहे थे. छेदी कमर लचकाकर नाच रहा था.

गेदनलाल पान चबाता हुआ कही से आया ओर खड़ा हो गया—भड़वे हो, सबके सब. लुहार की लौंडिया को देखते ही सर पे पाव उठायकै भागोगे

छेदी सबसे ज्यादा चीख रहा था—ना ना. हम तो अनारकली को फूल का तोफ़ा देंगे.

गेदनलाल हसा.

हसने से उसका चेहरा बीभत्स लगता हे. चेहरे पर चेचक के दाग हैं. बल्कि दाग से भी कही ज्यादा, गड्ढे ह. उसके हसने से मुह से पीक के छींटे निकले और छेदी के कपड़ों पर लग गए.

छेदी रुक गया था —कर दिए न मेरे कपड़े खराब ?

—जे लाल दाग है. मुहब्बत की निशानी.

—किससे !

—जिसको भी तू चाहेगा···

—हाय ! छेदी ने कलेजा थाम लिया था.

—सब भूल जाओगे गुरु लुहार की लौंडिया पटाता हे, पटाना.

—लेकिन एकदम अनारकली है.

—कहो तो मिलाय देऊ

—तुम क्या मिलावोगे ? खुद न हाथ मारलोगे इससे पैले.

—तू क्या जानता, गेदनलाल किस मर्ज की दवा है ?

—बहुत हुआ तो तू अपनी जोरू की पनिश टीन पर गाता है बैद-हकीम से दवा-दारू का जुगाड लगा सकता हे, बस

—तेरा तो जे चिकना चेहरा हे न, बिहारीपुर के मर्द इसी पे मर जागे.

—भग बे ! (एक अश्लील गाली)

गाली खाने के बाद गेदनलाल को शायद ज्यादा मजा आया था वह मुह फाड़ कर हसता रहा

काफी वक़्त निकल गया था.

एक ही मसला लम्बा हो जाए तो थोडी-सी थकान तो आ ही जाती है. वे लोग थक गए थे लेकिन ऊबे नही थे

बालेश्वर कही तेजी से सायकिल पर जा रहा था उसे देखते ही जगदम्बा ने सीटी मार दी थी. लेकिन उसने उसकी परवाह नहीं की और निकल गया

—फिर भी जे साला अपने भाई-सा जादूगरी नाय करता सीधा-सच्चा है क्रिश्चियन के साथ लौंडाबाजी करता है. चेहरे पे मुलम्मा नाय चढाता. जगदम्बा ने गोबिन्द की चाय की चुस्की ली और बोला

—अभी तो भेद खुलेगा और रामधनी ने कहा

—कऊन-सा भेद खुलेगा, गुरु ? छेदी ने पूछा.

—कैता हूं, अभी कैता हू. रामधनी ने आराम से जेब मे से बीडी का बडल निकाला, एक बीड़ी सुलगाई, कश खीचा, धुआ उडेला और फिर चाय की चुस्की ली.

छेदी उसकी बात निगलने की मुद्रा मे सामने खड़ा हो गया था—अब फटा-फट झाड़ दो, गुरु.

—कैता हूं, बई कैता हूं. जल्दी किस बात की है ? रामधनी ने चाय की दूसरी चुस्की ली—हां तो बात जे है, देखना बालेश्वर तो बहाना है. क्रिश्चियन फंसी होगी तुम्हारे 'हीरो' से. क्या समझे ? लोग समझ गए कि 'हीरो' कहकर रामधनी ने क्या कहना चाहा.

—समझा नाय.

—इत्ती आसान बात थोड़े ही है कि छेदीलाल भी समझ लेगा. फिर रामधनी ने समझाना शुरू किया—उस दिन बालेश्वर का सर मुडा था तो उसका भइया आया था कि नाय ह्यां ?

—आया था.

—आन कै क्या किया ? तुम होते तो भाई को चार-छै झापड़ रसीद करते कि नाय ? मैं तो दो मिंट में आदमी पैचान लूं. ह्या खड़ा होय के लाटसाब झाड़ने लगे भाषन.

वे सब हतप्रभ अगर नहीं भी थे, कुछ अचम्भे मे जरूर पड़ गए थे. एकदम से तय नहीं कर पा रहे थे कि रामधनी की बातो पर यक़ीन किया जाय या नहीं.

रामधनी को उठने की जल्दी थी. वर्ना शायद बता देता कि क्रिश्चियन के साथ उसने लाटसाब को नावल्टी सिनेमा से निकलते हुए देखा है रामपुर बाग मे शाम को हवा खाते हुए देखा है और भी ऐसी अदाओं में देखा है, जिसमे कोई भी शरीफ़ आदमी देखा जाना पसन्द नहीं करेगा.

रामधनी उठा तो जमघट का आधा मजा ही खत्म हो गया. बाकी लोग भी प्रसंग समाप्त कर उठने लगे थे.

उनमे से तीन-चार लोग 'कौशल्या भवन' के सामने से होकर मालगोदाम की तरफ चले गए थे. 'कौशल्या-भवन' के सामने से गुजरते हुए ऊपर छज्जे पर रद्दो को देखने के बावजूद वे खामोश ही बने रहे. सिर्फ एक-दूसरे से आंख जरूर मार ली थी.

●●

मालगोदाम तक गोबिन्द, जगदम्बा और जगन्नाथ साथ थे फिर जगन्नाथ चौधरी तालाब की तरफ़ चला गया था. शायद उसकी सास बीमार थी या इससे मिलता-जुलता कोई बहाना उसने बताया था. जगदम्बा ने ऐतराज नहीं किया था. वह चलने लगा तो 'पिद्दी' ज़रूर कह दिया था.

फायरमैन की ड्यूटी शायद ऑफ हो गई थी.

उसके बदन का रंग इस कदर आबनूसी था कि चेहरे पर कितनी कालिख चढ़ी है, कहना मुश्किल होगा. चाल में वह इतना मरियल लगता है गोया कोई बांस का खिलौना हो.

आग की वजह से आंखें लाल थी.

गोबिन्द बोला—भट्ठी से चढ़ाकर आया होगा.

जगदम्बा ने इन्कार किया—बुढ़ऊ की आंखे लाल ही रैती हैं.

—एकदम खूसट हे. बीवी पता नाय कब की भाग गई लेकिन चकले पे कभी जाता ही नाय. दम ही नाय होगा साले मे.

गोबिन्द ने बीड़ी का धुआं उगला, गला कसैला-सा लग रहा था.

जगदम्बा ने फायरमैन को पुकारा—मैंने नमस्ते कही लेकिन तुमने जवाब तक नाय दिया.

जगदम्बा के इस झूठ की वजह से गोबिन्द को गुस्सा आया था. इसके बावजूद उसने कुछ नहीं कहा था.

फायरमैन मुस्कुराया— सुना नाय था. खैर चलो, अब नमस्ते कैता हूं. उसने दाया हाथ ऊपर उठा लिया था.

जगदम्बा ने देखा, फायरमैन के गले में सलीब लटक रहा है. पीतल का एक पुराना और मामूली-सा क्रास था. उसने उसे छुआ—एक दिन गिरजा जाएंगे तुम्हारे साथ. (फिर तेरी लौंडिया को उडा भागेंगे)

—सण्डे को चलो. अगले सण्डे को.

जगदम्बा समझ गया कि इतवार के लिए उसने सण्डे का इस्तेमाल किया है. इससे पहले वह वैद्यो से साण्डे के तेल के बारे में सुन चुका था. उसे हैरानी हुई कि लफ़्ज़ भी कैसे-कैसे होते हैं.

गोबिन्द ने दूसरा सिलसिला शुरू किया—फायरमैन, तुम बड़े कंजूस हो. कभी घर बुलाकर चाय तक नो पिलायी नाय. (अबे साले तेरी लौंडिया को लाटसाब ही क्यो पाएगा ? हमारे पास भी तो दिल है !)

वे तीनो चल रहे थे. चलते-चलते बात कर रहे थे.

फायरमैन ने एक लम्बी सास ली—मेरे घर में है ही कौन ?

—और कोई हो न हो, तुम तो होगे ? जगदम्बा बोला.

—हा, संक्षिप्त-सा उत्तर.

—तुम कभी हम लोगो के यहा भी आया करो. रामधनी बोला.

—एकदम टैम नाय मिलता.

गोबिन्द ने बीडी का कश खींचा. (साले भाड झोंकते हो. टैम कैसे मिलेगा ?)

—कभी तुम्हारा इंजन देखने आएंगे. जगदम्बा बोला.

—जरूर आओ. लेकिन लौटोगे तो चेहरे पर कालिख पुत जाएगी. बीवी पैचानेगी भी नाय. फायरमैन बेवकूफ की तरह हसने लगा था.

गोबिन्द ने इकट्ठे मन ही मन कई अश्लील गालियां दे डाली.

फायरमैन का घर करीब आ गया था. जगदम्बा खुश हुआ कि क्रिश्चियन से हो सकता है यारी आज ही शुरू हो जाए. साले लाटसाब का पत्ता कटेगा.

क्रिश्चियन सररारी हास्पिटल में आया का काम करती है. जगदम्बा ने मन में सोचा, साली अगर तू सुई भी लगा दे, मैं कुछ नाय कहूंगा. फिर उसे अचानक याद आया, बरसो में वह बीमार ही नहीं पडा. उसे थोडा-सा डर इस बात पर होने लगा कि ईसाई लडकियां अंग्रेजी खूब बोलती हैं और उसे यह जुबान कुछ भी समझ में नहीं आती. दाढ़ी बढ़ी हुई थी. हफ्ते में दो बार बनती है. कायदे से आज सुबह बना लेनी थी लेकिन वह टाल गया था. तब क्या मालूम था कि ऊपर वाला इतना मेहरबान होने वाला है ? इस बात पर थोडा गुस्सा भी आया. लेकिन अब तो कुछ भी हो नहीं सकता. फायरमैन से रहा नहीं जा सकता—जरा दो मिट ठैर जाओ, मैं एक हज्जाम ढूंढता हूं. खैर, उसने कुहनियों से चेहरे का पसीना साफ कर लिया था.

गोविन्द जगदम्बा का इरादा भाप गया था. उसे थोडी-सी ईर्ष्या भी हुई थी. फिर सोचा था, अगली बार सही. उसे सपना कर सुख मिला कि ईसाई लडकियों और रंडियो में कोई फर्क नहीं होता. लेकिन चुनने की बारी हो तो वह रंडी की बजाय क्रिश्चियन को ही चुनेगा.

वे तीनो नुक्कड तक पहुंच गए थे. फायरमैन ने कहा—इत्ती दूर आ गए तो चलो घर बैठे एक-एक कप चाय हो जाए.

गोबिन्द और जगदम्बा ने आपत्ति नहीं की. (अबे साले, तो क्या हमने तेरी सूरत पे फिदा होय के इत्ती देर तक लैफ-रैट मार ली ?)

दरवाजे पर ताला लगा था

फायरमैन ने जेब से ताली निकाली और खोलने लगा

गोबिन्द और जगदम्बा बुरी तरह पस्त हो गए थे साली क्रिश्चियन को मरने के लिए और कभी फुर्सत नही मिलती थी

जगदम्बा ने सोचा, अनारकली बनके क्रिश्चियन लाटसाब के साथ घूम रही होगी शायद कही से टोरीलाल भी देख लेगा

गोबिन्द बालेश्वर के बारे मे सोच रहा था कही बैठकर लौडा क्रिश्चियन के साथ मौज कर रहा होगा

फिर दोनो को लगा, ड्यूटी पर भी हो सकती है

जगदम्बा ने सिलसिला बदल दिया था—चाय वगैरा फिर पी लेंगे आज जरा जल्दी थी वह मुडकर सिटी स्टेशन की तरफ चलने लगा था

गोबिन्द भी उसके पीछे पीछे निकल आया था

कुछ दूर आकर दोनो खीझने लगे थे वक्त खामख्वाह बहुत बर्बाद हो गया था और बीडी के कश कडवे-से लगने लगे थे वे दोनो सिनेमा का एक पोस्टर देखते हुए आगे के वक्त के बारे मे सोच रहे थे

●●

लुक्का पहलवान कई दिनो तक दिखाई नही पडा था

आज कोई महीने-भर बाद अनीस के साथ दिखाई पडा इस बीच अनीस ने सायकिल, स्टोव वगैरह की मरम्मत की एक दूकान खोल ली थी स्टोव वगैरह इस मुहल्ले मे शायद ही किसी के पास हो इस लिहाज से उनकी मरम्मत का काम अडोस-पडोस मे खास कुछ नही आता बगल के मुहल्लो मे जिन्हे जरूरत पडती है, इर्द-गिर्द किसी-न किसी को ढूढ ही लेते है या फिर कुतुबखाना चले जाते है लेकिन सायकिल वगैरह पक्चर जोडने से लेकर, हवा भरने, पहियो की टूटी हुई तीलियो के बदलने के काम यहा मिल जाते है.

इस वक्त कोई 'ग्राहक' नही था

अनीस लुक्का के साथ गल्ली-कत्ते की बात कर ही रहा था कि मास्टर लक्ष्मीशंकर दीख गए, वह शायद पैसे वगैरह उगाहने कही जा रहे थे चाल से ऐसा ही कुछ लग रहा था मास्टर अपनी तरफ से बुलाकर बातचीत कम ही करते है स्कूल मे पढाते थे, तब भी ऐसा चलता था और अब लकडी बेचते है, तब भी तरीका वही पुराना है, लेकिन इस दफ़ा तरीका एकदम से बदल गया था मास्टर ने लुक्का को देखकर दूर से ही आवाज चढा दी—कहो पहलवान, मजे मे तो हो ?

लुक्का ने हाथ जोड लिए थे—बस गुजारा हो रिया है आपकी मेहरबानी से

—मेरी मेहरबानी से ? मास्टर हस पडे—मेरी मेहरबानी से तो आज तक किसी का भला नही हुआ

—आप सुनाओ, कैसे हो ?

—क्या सुनाना ? लकडी बेचता हू रोटी का जुगाड लगता है

लक्ष्मीशंकर ने पूछने की जरूरत नही महसूस की कि इतने दिनो पहलवान दिखा क्यो नही ? पूछने से कुछ-न-कुछ जवाब तो वह दे ही देगा लेकिन सिलसिला एकदम कडवा हो जाएगा

अनीस बोला—तुम जरा उस दिन वाला किस्सा सुनाओ

—कौन-सा ? किस दिन वाला

--अरे वोही दामोदर की लौंडिया और लाटसाब वाला

मास्टर ने मुंह बिचका लिया—अजी, छोड़ो भी. हम तो न लेने में हैं, न देने में. हमें क्या पड़ी जो नेता-वेता पर कह कर अपने को पिटवाऊं ?

—बड़े पढ़े-लिखे अंग्रेजी पास बनते हो. अब तुम्हीं बोलो, घर-गिरस्ती वालन के बीच रै के जे कोई सरीफ़ आदमी वाला काम हुआ ?

—यह तो वक़्त ही बता देगा कि कौन सरीफ़ है और कौन बदमाश.

—हम तो एक बात जांते है, सीना अगर मरद का है तो सामने आओ और जो मरज़ी कर लैव. छुप के तो आजकल की लौंडिया भी नाय करती ! यह लुक्का था.

मास्टर समझ गया कि पहलवान को सबकुछ पता है.

—यह बिहारीपुर मुहल्ला, अब समझो, शरीफ़ आदमी के लायक रह नहीं गया है, हम तो टाल वाले हैं, कही जा नही सकते दूकानदारी छोड़कर. लेकिन हम तो यही कहेंगे, अगर मुहल्ले को साफ़ नहीं रख सकते तो कम-से-कम अपने बीवी-बच्चों के लिए किसी दूसरे मुहल्ले में जाकर बसो.

—अब जमाना जे है कि सच्चा-झूठा बोल कै लीडरी कर लै, अंग्रेज़ी बोल लै, वो जीत गया. हम चाहे कित्ते सच्चे रहें, लेकिन घास डालने वाला कोई नाय मिलेगा. अनीस हथेलियों को खूब नचा रहा था, मुंह बिचका रहा था.

—अब ज़माना बदल गया. मास्टर लुक्का के क़रीब आ गए थे—लोगों को अब उसी तरह बेवकूफ नही बना सकते. क्या समझे ?

लुक्का की निगाहें प्रश्नवाचक थी ?

—धांधलीबाज़ी आखिर कब तक करते रहोगे ? हद होती है, सारी चीजों की. ज्यादा चालाकी करोग तो हाथ का फंदा अपने ही गले पर फंसेगा

—बात तो बोलो, अनीस बहुत उत्सुक था.

—तुम लोगों के लाटसाब की नौकरी गई लीडरी में अगर दम होता तो यह नौबत न आती. खामख्वाह मजदूरों को उकसाता फिरता था. अब कम्पनी ने मौक़ा देखा और थमा दिया लाल पर्चा. अब कर लो लीडरी !

अनीस की आंखों में एक जबरदस्त खुशी छलक आई थी लुक्का का भी चेहरा एकाएक खिल उठा था.

—अभी तो देखना है कि मामला कहां से कहां बढ़ता है ! अभी बोलना कुछ नही, देखते जाओ सिर्फ. मास्टर ने घड़ी देखी और रफ्तार पकड़ ली. उन्हें बातो ही बातों में वक़्त का एकदम ख्याल नही रह गया था.

अनीस ने एक फिल्मी गाना शुरू कर दिया था.

लुक्का दूकान की पटरी पर बैठकर बीड़ी सुलगा रहा था. बहुत दिनो बाद बहुत मज़ा आने लगा था.

●●

'कौशल्या भवन' अंधेरे में एकदम डूबा हुआ है.

बाहर सड़क पर चुंगी का एक बल्ब ज़रूर जलता है लेकिन उससे खास कुछ

फर्क नही पडता कौशल्या भवन की सामने वाली दीवार पर उस रोशनी का एक हिस्सा फैला था लेकिन इससे अदर का अधेरा और भी ज्यादा घना होता-सा लगता है

विनायक अदर आया तो सामने कुती थी आगन मे चारपाई बिछाकर लेटी हुई-सी थी रसोई मे रानी और रहो ढिबरी की रोशनी मे कुछ कर रही थी बर्तन खडकाने की आवाज बीच-बीच मे होने लगी थी.

विनायक आया तो कुती उठ बैठी—मुए बिजली वाले ने बत्ती काट दी है ह्या तो गोरमिंट का कोई कानून है नाय जो मरजी कर लेव 'कौशल्या भवन' मे वक्त पर बिल न अदा करने की वजह से इससे पहले भी एक बार बिजली काट दी गई थी तब जगतनारायण जिंदा थे

विनायक ने रानी से एक ग्लास पानी मागा गला सूख रहा था कुती की बात का जवाब नही दिया

—हमने कही, लल्ला को आ जान दो, फिर काटना बिजली पर ह्या कऊन सुने किसकी ? वो तो हम रहे थे हमरी बातन पे

ऊपर से मोहिनी ने आवाज दी लल्ला आय गयो ?

विनायक ऊपर चला गया

पानी पीकर गिलास रानी को वापस कर दिया था लेकिन इस अधेरे मे किसी का भी चेहरा देख पाने की हिम्मत नही हो रही थी

उसने घडी देखी सिर्फ नौ बजे थे

इतनी जल्दी शायद ही कभी घर लौटने का मौका मिला हो आज दवाखाने मे मरीज नही थे लेकिन मरीज अगर न भी हुआ तो उसने उठकर दरवाजे पर ताला इससे पहले कभी नही लगाया आज थोडी देर चुपचाप बैठकर अखबार पढता रहा फिर उठकर दरवाजे पर ताला डाल दिया मन उखड-सा रहा था फिर सीधे घर वापस आ गया

मोहिनी को आजकल छाती मे जलन होने लगी है बेटे से दवा ली थी लेकिन अभी तक फायदा नही पहुंचा इससे दिक्कत यह होती कि रोटी खाने के बाद देर तक खट्टी डकारे आती रहती

नलिनाक्ष कोई मत्र वगैरह पढ रहा था उसके सामने पद्रह-एक तस्वीरे थी हर तस्वीर सिन्दूर से इस कदर पात दी गई थी कि उनके असली रगो के बारे मे पता नही चलता था वह किस वक्त उठकर पूजापाठ शुरू करेगा, कोई नही जानता. कई बार ऐसा हो जाता कि वह सात सात दिन तक किसी से नही बोलता और बुत-सा बैठा रहता सामने रोटी की थाली आती तो हद से हद एक रोटी खा लेता

विनायक उसकी कोठरी के सामने खडा हो गया बगल मे ही मोहिनी की कोठरी है दोनो को दोनो के अस्तित्व मे कोई परेशानी नही होती

नलिनाक्ष की आखे बद थी

विनायक को लगा, इस पूरे घर मे वह एक ऐसा आदमी है जिसे कोई तकलीफ नही है या फिर कहना यो चाहिए कि तकलीफे तो खैर होगी ही लेकिन उसने शायद उनकी परवाह की ही नही

घर के इस अधेरे माहौल मे नलिनाक्ष धीरे-धीरे अस्पष्ट होता जा रहा है विनायक को याद आया कि उससे बात किए कई महीने गुजर गए होगे लेकिन आज भी ऐसा नही लगता कि कही कोई ऐसा पुल है, जहा पर खड़े होकर दो घडी बात की जा सके

रद्दो ने नीचे से आवाज़ दी कि खाना लग गया है. उसने सोचा, मना कर दे. वैसे भी भूख नहीं थी. मौसम बड़ा अजीब-सा हो रहा था. क़ायदे से इस वक़्त सर्दी होनी थी लेकिन कुछ कुछ उमस-सी थी.

मोहिनी को शायद कुछ तकलीफ़ हो रही थी. वह कराह तो नहीं रही थी लेकिन विनायक को लगा कि बहुत बेचैन है.

आखिर में वह अंगोछा लेकर नीचे चला गया था. नल पर. चेहरे पर पानी के छपके मारे और हाथ मुंह धो लिये.

बाकी लोगों का खाना दीया जलते ही हो जाता है. सिर्फ उसी की आदत देर से खाने की है. वैसे भी उस वक्त वह अमूमन घर होता नहीं है. कभी अगर हुआ भी, खाना देर से ही खाता है.

रद्दो पीढ़ा लगाकर बाहर आ गई थी कुंती के पास.

रानी ने खाना परोस दिया.

चुपचाप वह रोटी के गस्से निगलता रहा.

रानी को वैसे डर तो लग रहा था फिर भी वह बोली—मामीजी आज दिन में बहुत रोई हैं.

—क्यों ? उसे अपनी आवाज़ गूंजती हुई-सी लगी.

रानी चुप रही.

फिर काफ़ी देर गुज़र गई थी और उसने कुछ नहीं पूछा था.

रानी ने फिर अपने आप ही कहा था— इस घर के लिए तुम बहुत पिस रहे हो भैया.

विनायक चौंका, लगा, रानी आज इसी वक्त छलांग लगाकर बहुत बड़ी हो गई है. इतनी बड़ी कि अब उसका मुक़ाबला भी नहीं हो सकता.

—तूने खाना खा लिया ? यह कोई सवाल नहीं था लेकिन रानी से पूछने लायक उसे कुछ और सूझ नहीं रहा था.

—मुझ कोई काम नाय मिल सकता भैया ? रानी ने उसके सवाल का जवाब दिए बग़ैर दूसरा सवाल कर दिया था.

—काम ?

—हां कुछ भी कर लूगी.

विनायक हंसा—रोटी बनाती है. यह भी तो काम ही है.

—तुम मज़ाक मत करो. मैं पढ़ी-लिखी ज़रूर नाय हूं लेकिन सिलाई वग़ैरह का काम कर सकती हूं. या कुछ और जिसे अनपढ भी कर सकता है.

—तेरे हाथ पीले कर दूं, फिर वहां जाकर काम करना.

रानी चुप हो गई थी. अंदर से धक्का-सा लगा था लेकिन चुप रहना ही उसे मुनासिब लगा था.

ढिबरी जल रही थी. उसकी रोशनी में वह अपनी छाया देखती रही. काफ़ी देर हो गई थी. आखिर में रद्दो ने उसे आवाज दी तो वह चौंक उठी थी.

●●

ऊपर आकर विनायक ने शीशी में से दवा निकाली और मां के मुंह में डाल दी. तकलीफ़ के बावजूद मोहिनी उठ बैठी थी.

विनायक उसी खटोले पर पैताने की तरफ़ बैठ गया था.

मोहिनी ने उसके माथे पर हाथ फेरा तो उसे लगा था, अब नौकरी वग़ैरह के बारे में वह कुछ पूछेगी. लेकिन दोनों ही चुप थे.

चुप्पी खलने लगी तो विनायक बोला—दवा वग़ैरह तुम ठीक से नहीं लेतीं.

मोहिनी चुप ही रही.

—बाद में दिक्क़तें और भी बढ़ती जायेंगी.

—तेरे जिस्म में हड्डियां निकल आई हैं. काफ़ी देर बाद मोहिनी बोली थी.

—वो कोई कह रहा था, तुम खाना वग़ैरह ठीक से नहीं खाती ?

—थका होगा. जा, चलके सो जा. मोहिनी की आवाज़ में हुक्म-सा था. ऐसा अक्सर तो नहीं होता लेकिन जब वह सख्त पड़ जाती, कोई विकल्प नहीं होता.

●●

बिस्तर पर आकर विनायक देर तक बैठा रहा.

बत्ती होने से ऐसी हालत में कम-से-कम कोई किताब पढी जा सकती थी. अंधेरा कभी इतना खल सकता है, पहले सोचा नही था.

बाहर कुत्ते भूंक रहे थे.

डोरीलाल शायद मूलचन्द की भट्ठी में से शराब पीकर लौट रहा था. पीने के बाद दुनिया को गाली बकना उसकी आदत है. वह भी खुली आवाज मे, खूब चिल्ला-कर. आखिर में बीवी के साथ वह तू-तू मै-मैं करने लगा था दोनो की आवाज़े चढी हुई थीं.

विनायक उठा और बाहर आकर छज्जे पर खडा हो गया

यहां बाहर के लैम्पपोस्ट की थोड़ी-सी रोशनी आ रही थी कहने भर को रोशनी थी.

सामने सिपाहीलाल का मकान है.

वहां घुप्प अंधेरा है.

वे लोग इत्मीनान से सो रहे होंगे.

सिपाहीलाल के मकान के पीछे की तरफ फिरगी का घर है. उसका एक हिस्सा यहां से दिखाई पड़ता है. किसी एक कमरे में रोशनी थी. वह सोचने लगा कि इतनी रात गए वे लोग क्या कर रहे होगे ! या फिर हो सकता है कुछ भी न कर रहे हो और बत्ती बिना बुझाए सो गए हो कुछ लोग ऐसे भी होते है, जिन्हे न तो रोशनी से दिक़्क़त होती है, न अंधेरे से ही फर्क पडता है.

विनायक बल्ब की रोशनी में अपनी छाया देख रहा था फिर दफ्तर के बारे में सोचने लगा.

दो महीने से वह सस्पेंड है और कल से लाक आउट हो गया. छोटी-सी फैक्ट्री है. कुल चालीस-पचास लोग काम करते हैं. मुमकिन है, इन सब हादसो का लोगों को कभी पता भी न चले.

अखबार वालों को भी इनमें दिलचस्पी नहीं होती है. जब हम आज़ाद नहीं थे, हर कोई अंग्रेज के खिलाफ़ था. और आज आज़ादी के बाद अपने पास सिर्फ़ शहादत के झूठे किस्से रह गए हैं.

इधर-उधर से कुछ चंदे भी आए हैं लेकिन इतने सारे लोगों का सवाल है. कई लोगों को फैक्ट्री के मालिकों ने दूसरी जगह नौकरी दिला दी है.

यूनियन की तरफ़ से वह एक दिन के लिए लखनऊ भी हो आया लेकिन कोई कुछ नहीं सुनता. उस दरमियान लगा था, सब मिलकर साज़िश कर रहे हैं. चाहे चपरासी हो, चाहे सबसे ऊपर का आदमी, सबकी मिली-भगत है.

विनायक को लगा कि कहीं भी कोई यकीन नही है.

सिटी स्टेशन पर शायद कोई मालगाड़ी आकर रुकी थी. इंजन की आवाज

साफ़ यहां तक आ रही थी.

उसने आने वाले कल के बारे में सोचा.

सोचने लगा तो महसूस हुआ, कल सिर्फ़ एक अमूर्त चीज है जो कुछ भी हो सकता है. किसी भी सांचे में उसे ढाला जा सकता है.

अंदर से मोहिनी की बेचैनी की आवाज़ आने लगी थी.

कुन्ती को भी नींद नहीं आई थी. बहुत अरसे बाद कुन्ती बुआ उसे बहुत निरीह और सरल लगी.

बालेश्वर अभी तक नहीं लौटा था. कब तक लौटेगा कोई नहीं जानता. हो सकता है वह आज कतई न लौटे.

बहुत गहराता-सा सन्नाटा था.

कुन्ती ने अन्दर से पुकारा था—लल्ला, सोया नहीं ?

उसने दरवाजा बन्द किया. फिर चुपचाप बिस्तर पर लेट गया था. यहां से बाहर का लैम्पोस्ट दिखता है. फालतू लगने के बावजूद उसकी रोशनी में आंख गड़ाए रहना उसे अच्छा लग रहा था.

●●

सुबह फैक्ट्री के गेट पर पहुंचा तो देखा, गंगू गुरु पहले से ही मौजूद है. लाल झण्डे के साथ सिर्फ चार-छह मजदूर बैठे थे. ज्यादातर लोग खिसक गए थे. दूसरी जगह नौकरी कर ली थी; कुछ लोगों ने पकौड़े वगैरह की दुकानें खोल ली थी. गंगू गुरु बैठकर खैनी मल रहा था. गोरखपुर जिला छोड़ देने के बावजूद यह पुरानी आदत आज तक बरक़रार है.

विनायक को देखते ही गंगू उठ खड़ा हुआ—जै राम जी की. ह्यां तो इत्ता सारा होग गया और तुमने कुछ बताया नाय...

फैक्ट्री के फाटक पर कम्पनी की तरफ से ताला-बन्दी की नोटिस लगी है. ताला कई दिनों से लगा है और अपनी-अपनी समझ के मुताबिक लोगो ने फाटक पर गालियां लिख रखी है.

कुछ फ़ासले पर पुलिस वाले बैठे हैं. वे लोग जरूरत के लिए सारे साज़ो-सामान के साथ तैयार हैं. वैसे इस वक्त वे वक्त काटने के लिए ताश खेल रहे हैं.

कोने की तरफ़ एक छोटा-सा गेट है. आठ-दस बन्दूक वाले सिपाही वहां मौजूद है और मालिकों की तरफ वाले आफिसरनुमा लोग वहा से आ-जा रहे हैं.

विनायक पहुंचा तो इंतज़ार में बैठे हुए मजदूरों ने नारा लगाया—इनक़लाब ! जिन्दाबाद !!

तालाबन्दी वापस लो !!!

आवाज़ में क़तई जोश नहीं था. वे मरियल किस्म के लग रहे थे. उनके बीच सिर्फ गंगू गुरु की आवाज़ में कुछ बुलन्दी थी.

डिसपैंच सेक्शन का क्लर्क नरेश पिछवाड़े से निकलकर नीम के नीचे आ गया था. उसे बहुत जल्दी अपनी भूमिका अदा करनी थी. विनायक ने उसे देखा और पीछे की तरफ़ चला गया.

जाने से पहले बोल गया—नारे खूब जोर से लगाओ.

इशारा गंगू गुरु समझ गया था. अन्दर वालों का ध्यान फिर गेट पर लगा रहेगा. गंगू ने गला खंखारा और जोरों से नारा बुलंद किया।

पुलिस वालों को भी खूब मज़ा आ रहा था. बैठे-बैठे आखिर ताश खेलने की भी कोई हद होती है. वे लोग ताश रोककर चाव से नारा सुनने लगे थे.

दो मिनट के भीतर विनायक लौट आया था.

नारे बन्द हो गए थे.

वे लोग एक घेरा बनाकर फिर वहीं, ज़मीन पर बैठ गए थ.

गंगू की उत्सुकता आंखों से टपक रही थी—सुनाओ, बातें क्या हुई ?

—बहुत बड़ी चाल है मालिकों की. हम लोग हड़ताल पर इसलिए उतरे थे कि वायरिंग शाप के खलासी तुलसी और गनेसी निकाले गए थे. यह उनकी चाल थी. दोनों को ही बहेड़ी की चीनी मिल में मालिकों ने नौकरी दिला दी है.

—हरामखोर कहीं के, गंगू गुरु बोला.

—फिर हमने हड़ताल की तो यूनियन का प्रेसिडेण्ट होने की वजह से मुझपर ग़ैरकानूनी हड़ताल का इल्ज़ाम लगाकर सस्पेंड कर दिया. लेकिन यह सब नाटक था, कोरा नाटक. हड़ताल हुई तो मालिकों को कहने का मौका मिल गया कि पिछले दिनों बहुत घाटा हुआ लिहाज़ा तालाबन्दी. क्या समझे ?

बाकी लोग खामोश थे सिर्फ गंगू गुरु ने मुँह खोला—बोले जाओ.

—लेकिन बातें तो खत्म हो गई फैक्ट्री में मालिकों ने घोटाला इतना किया कि अब घाटे के अलावा कुछ और मुमकिन नहीं है. बिना चालान के ट्रक भर के हर रात माल निकलता रहा है. अब बैंक फैक्ट्री को अपने कब्जे में कर लेगा. अन्दर का सामान शायद कबाड़ी भी न खरीदे. बहुत हुआ तो एक-एक महीने की तनख्वाह और मिल जाएगी. बस, फिर घर बैठो.

—लेकिन गोरमिंट कुछ नाय करेगी ? गंगू ने पूछा.

विनायक को सवाल बिल्कुल ही बेहूदा लगा था. फिर भी वह चुप था. साथ बैठे मजदूरों के चेहरे उसे बहुत निरीह और सरल लगे. इस बात पर दिल में एक हूक-सी उठी कि ये लोग उसके भरोसे उम्मीदें बांधे लड़ाई करते रहे है

धूप तेज हो गई थी.

पुलिसवाले दुबारा ताश खेलने में मशगूल हो गए थे.

विनायक फैक्ट्री की दीवारों पर लिखे यूनियन के इश्तहारों को देर तक देखता रहा था अखबार के पन्नों के ऊपर लाल और नीली स्याही से लिखे ये टनकलौंबी नारे क्या होकर रह गए है ?

गंगू गुरु खामोश हो गया था'

उसे उम्मीद नहीं थी कि इतना सख्त आदमी इस तरह लड़ाई में हार जाएगा. वह आया था एक तरह से सटरगश्ती के लिए ही लेकिन पासा पलटने में जैसे उसके आने की ही देर थी.

—तुम लोग अब जाओ. विनायक सिर्फ इतना ही बोल सका था.

वे लोग कुछ देर तो यूं ही खड़े रहे फिर सायकिल उठाकर चले गए थे जाने के अलावा और कोई विकल्प था उनके पास ? आज शाम से रोटी-पानी के जुगाड़ में फिर चप्पलें घिसनी होंगी.

गंगू गुरु थोड़ा डर गया था. वह उठा और चाय वाले की गुमटी पर जाकर बैठ गया. पड़ोस की फैक्ट्रियों से जोरों की आवाज़ें आ रही थीं.

विनायक सामने के गेट और दीवारों को घूरता रहा.

यहां पर कभी लगातार जलसे होते रहे है. ऐसा कभी नहीं हुआ जब यूनियन ने किसी भी कामगर के ऊपर बेइन्साफी का जवाब न दिया हो. हमेशा लड़ाई में जीतते रहने के बाद आदमी आखिर हारता ही है. हारना इस लिए पड़ता है कि उसे रास्ता बदल कर नए रास्ते पर चलने की ज़रूरत है. लड़ाई यानी हर लड़ाई नई होती है

और उसके मुताबिक रास्ता भी.

जलसे में यहा भीड़ होती थी. पड़ोस की फैक्ट्रियों के लोग भी मौका देखकर आ जुटते थे. आज चंद पुलिसवालों के सिवा यहा कोई नही है.

काफ़ी देर हो चुकी थी

गगू दुबारा करीब आ गया था.

इस बार विनायक झेंप रहा था—काफी देर हो गई, चलो चलते है

गंगू कुछ नही बोल सका था.

●●

विनायक घर लौटा तो नीचे सिर्फ रानी थी

रसोई के दरवाज़े पर पीढ़ा रखकर वह कशीदाकारी-सी कुछ कर रही थी. इस वक्त कायदे से रद्दो के साथ उसे काम मे इतनी व्यस्त रहना था कि सास लेने की भी फुर्सत शायद ही मिल पाती

आज मंगल का दिन है यानी मुहल्ले की दूकानों के लिए छुट्टी का दिन. वर्ना उधार पर ही सही आटा-दाना इतना जरूर आ जाता कि इस वक्त का गुजारा हो जाता विनायक जेब मे हाथ डालने जा रहा था लेकिन फिर नही डाला दो रुपए का एक नोट और कुछ रेजगारी पडी है.

रानी उठ खड़ी हुई थी

—जरा थैला वगैरह तो कुछ दे उसने नाटक किया कि बहुत जल्दी मे है फिर समझ गया कि रानी इतनी बेवकूफ नही हे

वह कुतबखाने की तरफ निकल गया था

सोचा था, कही से पैसे का इतजाम हो जाए तो सबसे पहले बिजली का बिल जमा कर देगा आज का दिन तो खैर यू ही निकल गया अब शाम को कहीसे कुछ बात बनी तो कल सुबह तक शायद पैसा जमा हो जाए

एक बार लगा था, 'कौशल्या भवन' को अगर बेच भी दिया जाय तो कोई हर्ज नही. जितने पैसे उससे मिलेंगे उससे कई काम आसानी से हो सकते है कुछ पुराने कर्ज उतर जायेंगे और रानी की शादी हो जाएगी रानी की शादी की यो कोई जल्दी नही है लेकिन कुन्ती बुआ फिर बेफिक्र हो सकेंगी

लेकिन यह ख्याल एकदम फिजूल का है 'कौशल्या भवन' बिकेगा नही यह मकान ढह सकता हे लेकिन बिक नही सकता

नैना का फिरगी सामने से आता दिख गया था आने दो, अभी वक्त नही है वह उस तरफ ध्यान दिए बिना चलने लगा था

दवाखाने के लिए भी कुछ दवाए लेनी थी पिछले तीन सालो मे ये भी काफी महंगी हो गई है. एक ख्याल यह आया कि मुफ्त मे न बाट कर मरीजो से एक दिन के पच्चीस पैसे भी तो लिए जा सकते हैं आखिर मे अपने ख्याल पर उसे हसी भी आ गई थी यहा जो आते है, उनके पास कई दफा दस पैसे का एक सिक्का भी नही होता महीने में पच्चीस-तीस का ही खर्च है जो किसी-न-किसी तरह निभाता ही रहा है

उसने ढाल वाली सड़क नही पकड़ी

अंदर से होकर यानी ख्वाजा कुतुब के रास्ते से मदारी दरवाजे वाले गट्टूमल की दुकान तक पहुंचा यहा अगर साल-भर भी उधार पडा रहा, तकाजा लगाने वाला कोई नही होगा

वापस घर पहुंचा तो रानी उसी तरह सिलाई वगैरह कर रही थी.

●●

कस्तूरी का कोई व्रत था.

जब से उसका पति उसे यहा छोड़ गया, हफ़्ते मे तीनेक दिन व्रत-उपवास चलता है. बीच-बीच में सिर्फ चार छह बार चाय पी लेती है. शाम को टिंडे की सब्ज़ी से दो फुलके भर ले लेती.

जब शादी के बाद कस्तूरी ससुराल गई थी, उसका रूप देखने काबिल था. दो साल तक खूब राज भी किया था. फिर उसकी सेहत गिरती चली गई थी. कस्तूरी का आदमी शायद समझ गया था, यह औरत कभी भी बच्चा नही दे सकेगी. आखिर मे वे लोग हाथापाई के स्तर पर उतर आए थे.

कस्तूरी जब फिर से यहां रहने के लिए वापस आई तो सूख कर एकदम काटा हो गई थी. उसे देखकर मोहिनी बहुत रोयी थी—हाय क्या हाल हो गया तेरा ! मा-बेटी एक-दूसरे से लिपट कर देर तक रोती रही थी.

तब से कस्तूरी का व्रत-उपवास का सिलसिला चल रहा है.

तारा विधवा होकर यहा लौटी थी और कस्तूरी बाझ होने के कारण तारा फिर एक दिन यहा से चली गई. विनायक को लगता है, कस्तूरी भी तारा की ही तरह चुपचाप चली जाएगी. इस घर से फिर एक-एक बाशिन्दा विदा लेता रहेगा. लेकिन वह आखिरी आदमी कौन होगा, जिसे यह सब झेलना है ? विनायक का दिमाग एक-दम से जैसे ठडे खून से भर गया था. वह अपने बिस्तर पर आकर लेट गया था

कुछ देर मे सीटी बजाता हुआ बालेश्वर कमरे मे आ घुसा था. उसे उम्मीद नही थी, इस वक्त विनायक यहा हो भी सकता है. वह घुसा और फौरन ही बाहर निकल भी आया.

विनायक ने उसे पुकार लिया था

वह वापस आया तो बहुत सहमा हुआ था. अब विनायक को कुछ कहना था. लेकिन लगा, कहने लायक कुछ भी नही है.

—कैसा है तू ? काफी देर बाद बालेश्वर से वह इतना ही कह पाया था

बालेश्वर चौका. ऐसा सवाल इस घर में आज तक किसी ने नही किया होगा.

—कुछ काम वगैरह करने का इरादा हो तो मै दो-एक जगह बात करू ?

—काम कहा मिलेगा भैया ?

विनायक ने नही कहा कि सिनेमा के टिकट ब्लैक करने के अलावा भी काम तो खैर हो ही सकते हैं.

बालेश्वर ने अपने खर्चे के लिए रास्ता निकाल लिया था. हर हफ्ते दस-बीस रुपए की कमाई हो जाती और उसका अपना खर्चा-पानी उसी से निकल आता.

—तू कुछ करने लगेगा तो बुआ को तसल्ली हो जाएगी.

बालेश्वर ने जवाब नहीं दिया. कोई दूसरा होता तो शायद कह देता—बुआ को सिर्फ़ तसल्ली ही नही होगी चाहे सबकुछ और हो जाए.

—नॉवल्टी सिनेमा के पास रॉक्सी ड्राईक्लीनर्स की दूकान है. तू कहे तो सौ-सवा सौ महीने का काम दिला दू.

—मैं कुछ और सोच रहा था.

—क्या ?

—दिल्ली चला जाऊं तो शायद वहा कुछ काम मिल जाए.

—दिल्ली ? दिल्ली क्यो ?

—बड़ा शहर है. काम-धंधे का जुगाड़ कई दफ़ा लग भी जाता है.

विनायक चुप हो गया था. इच्छा हुई थी, एक ज़ोरों का थप्पड़ मार दे.

—कुछ पैसे वगैरह शुरू में चाहिएं. कहीं से इन्तज़ाम हो जाय तो दिल्ली ही चला जाऊंगा. बालेश्वर फिर कमरे से निकल गया था.

रानी एक थाली में खाना लगाकर ऊपर आ गई थी.

—मैं सोच रहा था, आज सब इकट्ठे खाएंगे. विनायक बिस्तर पर उठ बैठा था.

—और किसी दिन खा लेना. नीचे इतनी जगह भी तो नहीं है.

—और लोग ?

—नीचे हैं, रद्दो खिला देगी.

विनायक पानी का गिलास लेकर छज्जे पर आया, मुंह साफ किया और अंदर आकर थाली के सामने बैठ गया. वह समझ गया कि रानी को कुछ कहना है—बोल क्या कहना है तुझे ?

रानी झेंप गई—बस तुम फटाफट खायके आराम कर लेव.

—और ? तेरी नौकरी-वौकरी ?

वह उदास हो गई—मैं पढ़ी-लिखी होती···

—तो ?

—तो क्या ? मेरा एक काम कराय दो.

—हूं.

—मैं कशीदे का काम कर लूगी. तुम दूकान तक पहुंचाय देना.

विनायक चुप था. रानी की तरफ़ देखने की हिम्मत नही हो रही थी.

रोटी खा ली तो बाहर जाकर कुल्ला कर लिया था. रानी ने बर्तन समेटे और नीचे चली गई.

●●

बहुत सारी पुरानी किताबें इकट्ठी हो गई थी, कुछ इनमे शायद काम की भी हैं लेकिन ज्यादातर फालतू थीं. विनायक सोच रहा था कि कोई रद्दी वाला यहां से गुज़रे तो यह कबाड़ साफ हो जाएगा. कबाड़ साफ हो जाएगा और बीस-पच्चीस रुपए मिल जाएंगे.

मोहिनी ऊपर आ गई थी. उसने अंदाज़ा लगाया, वह रोटी खाकर लौटी होगी. जीना चढने की वजह से घुटनो का पुराना दर्द शायद फिर से उभर आया था.

—रद्दो स्कूल नही गई ? उसने खामख्वाह एक सवाल मा से कर लिया.

—नहीं.

लगा, रद्दो का नाम ही शायद स्कूल से कट गया है, या फिर कट जाएगा. इस महीने बोर्ड के इम्तहान की फीस भरनी थी. रद्दो ने सोच लिया होगा, फ़िज़ूल मे स्कूल जाने का फायदा ही क्या है ?

—तुम बैठो, घुटने के दर्द के लिए मैं दवा देता हूं.

—बालेश्वर कैरिया था दिल्ली जाएगा.

—हां.

—कैरिया था, वहा नौकरी मिल जाती है.

—नहीं मालूम. लेकिन इतना मालूम है, उस जैसे लड़के को मजदूरी वग़ैरह का काम मिल जाना चाहिए.

—पैसे के लिए कैरिया था तेरी बुआ से.

—बुआ से कहना, बालेश्वर पैसा मुझ से लेले. विनायक खीझ गया था. फिर उसने दवा निकालकर मोहिनी की ज़बान पर एक बूंद डाल दी थी.

दवा शायद तीखी थी. मोहिनी ने मुह बिदकाया था

—तेरी बुआ कै रई थी, सतनरैन की कथा करावेगी

—क्यो ? अपने ऊपर झुझलाया कि फिजूल मे ही बात बढा दी.

—क्यो क्या ? घर का अच्छा-बुरा भी तो कुछ होता है

विनायक उगलिया चटखाने लगा था जवाब मे कुछ कहने लायक मोचने के बावजूद नही मिला था.

—आज कल मे बिजली के दफ्तर मे पैसे जमा हो जाएगे शायद परसो तक बिजली आ जाए.

मोहिनी ने नही पूछा कि पैसे कहा से आएगे पूछने से वह क्या जवाब देता, मोच रहा था.

—कस्तूरी की सेहत बहुत गिर गई हे विनायक बोला

बेटे की इस बात पर मोहिनी की आखे गीली हो गई थी

—उसे कुछ खास खाने-पीने की तबीयत हो तो कह देना

मोहिनी ने एक लम्बी सास ली.

–इतना व्रत-उपवास रखती हे ···

मोहिनी बोली—इस पे कुछ नाय कैना वा फिर इमके बिना जिन्गी कैसे ? मबकुछ तो खत्म होय गया

—रहो या रानी के साथ शाम को कभी-कभी घूम-फिर आए तो मन थोडा बहल जाया करेगा

—उमका मन, तू मोचता हे, आज भी बहलने लायक है ? मोहिनी ने एक लम्बी सास ली

बातो का मिलसिला खत्म हो गया था

मोहिनी उठकर बगल के कमरे मे चली गई थी

विनायक चुपचाप बैठा रहा था दिमाग की नसो मे बे-इन्तहा तकलीफ होने लगी थी वह फिर आखो के ऊपर कुहनी रखकर लेट गया था

●●

शाम की डाक मे मिर्फ दो चिट्ठिया थी एक पर बहडी की मुहर लगी थी दुर्गा ने लिखा था

बिनायक को याद आया, छह महीने हो गए, दुर्गा यहा नही आई वह शायद जानबूझ कर ही नही आती हे अभी 'कौशल्या-भवन' की जो हालत है उममे आते हुए उसे संकोच होता होगा. कम-से-कम बोझ की तरह रहना तो वह नही ही चाहती होगी विनायक ने चिट्ठी पढ ली

कोई खास बात या सूचना नही थी उसने यह भी नही लिखा था कि इधर कब आ रही है.

दूसरा लिफ़ाफा सरकारी था

चुगी के दफ्तर से लाल लिफ़ाफे मे छपा हुआ सरकारी खत था साल-भर से टैक्स बाकी होने की एक मशीनी सूचना नीचे का हस्ताक्षर बहुत अस्पष्ट था वह उर्दू में था या तमिल मे इतना भी पता नही चल रहा था

दुर्गा की चिट्ठी वह मा को देकर दवाखाना जाने के लिए तैयार हो गया. आज वैसे तबीयत कुछ भारी-सी लग रही है थोडी देर पहले उसने लगभग तय कर लिया था, आज की शाम छत पर कोई किताब लेकर गुजार देगा, जब तक अधेरा नही होता है, पढता रहेगा फिर यू ही टहलता रहेगा.' '

लेकिन पांच मिनट के अन्दर इरादा बदल दिया था.

बाहर निकलने से चार-छह लोगों से मुलाक़ात हो जाएगी और मुमकिन है, रुपए वग़ैरह का भी कुछ इन्तज़ाम हो जाए. उसने दवा का चमड़े वाला बैग उठाया और रानी को पुकार लिया—बाज़ार से कुछ मंगाना हो तो अभी बता दे.

उसने बहुत ज़ोर से रानी को आवाज़ दी थी. मोहिनी ने अच्छी तरह उसकी बातें सुनी होंगी.

रानी ने सर हिलाया था—आज और कुछ नाय चाहिए.

उसके लहजे मे अभिमान-सा भी था, दुपहर को उसने जो कुछ कहा था, उसे कोई इस तरह बेदाम उठाकर फेंक दे, यह उसे मंज़ूर नही था.

—तुझे कुछ चाहिए ?

रानी ने उसे गुर्राकर देखा था. इस तरह अपमानित करने का हक़ तुम्हें किस ने दिया, भैया ? लेकिन कुछ नही बोली.

विनायक उसकी आंखे देखकर सहम गया था.

थोड़े दिनो पहले तक रानी बहुत मामूली लगती थी इधर एक अरसे से वह इतनीसमझदार और महत्त्वपूर्ण हो गई कि अब उससे कुछ भी नही कहा जा सकता कुछ भी कहने के बावजूद वह शायद सुन लेगी और चुप भी रहेगी लेकिन उसकी यह चुप्पी ज़बरदस्त तरीके मे तमाचा भी मार सकती है इस घर मे और कोई समझे या ना समझे. विनायक इतना समझ गया था

बालेश्वर अपनी सायकल पर क्रिश्चियन के साथ कही जा रहा था. सायकल चलाते हुए वह पीछे बैठी क्रिश्चियन से बात कर रहा था उसने भाई को नही देखा था. देख भी लेता तो फ़र्क़ इतना पडता, वह सायकिल किसी गली-कूचे के अन्दर मोड लेता. फिर वहा कही पाच-दस मिनट इन्तज़ार करता.

गगू गुरु ने यो कई बार कहा है कि रुपए वगैरह की ज़रूरत जब भी हो बेहिचक माग ले लेकिन पता नही क्यो, मागने-वागने की बात सोचते ही उसका मन तेज़ी से नीचे की ओर गिरने लगता है

ढाल की बजरिया मे सिपाही लाल का बेटा प्यारे कुछ काच की चूडिया, बिन्दी वगैरह खरीद रहा था साथ उसकी बीवी भी थी, रिक्शे पर बैठी हुई प्यारे अपने ही रिक्शे पर बीवी को लेकर शायद हवा खाने निकला था कुछेक महीना पहले उसने बीवी के कुछ जेवर चुरा लिए थे सिपाही लाल ने बेटे की बहुत पिटाई की थी और जेवर वापस मिल गए थे

उन लोगो को देखकर विनायक को अच्छा लगा, अच्छा लगने की वजह यह कि वे बहुत खुश थे घूघट की वजह से प्यारे की बीवी का चेहरा दिखाई नही पड रहा था. इसके बावजूद विनायक ने अनुमान लगाया कि उसके मनमें एक प्रसन्नता का भाव है.

नुक्कड़ से मुड़कर वह अपने दवाखाने पर आया.

दरवाजे पर खड़िया से किसी ने लिख रखा था—हर गद्दार का यही हाल होता हे.

चुपचाप उन अक्षरो को वह दसेक बार पढ गया फिर दरवाजा खोलकर अन्दर आया और अपनी कुर्सी पर बैठ गया दवा के बैग को उसने बगल मे स्टूल पर रख दिया था.

सिर में चक्कर-सा आ रहा था. लेकिन वह सभला और पीठ पर दबाव डालकर बैठ गया.

मरीजों के आने का वक़्त हो गया था.

●●

बिहारीपुर मुहल्ले की ये गलियां, ढाल का बाज़ार, भगीरथ का 'होटल', लुक्का, नैनामेम—सब अपनी-अपनी जगह पर रुक गए थे. सिर्फ़ विनायक रुक कर भी निकल आया था. बरेली का सिलसिला ही खत्म हो गया था.

यह सब इतनी जल्दी हो गया कि सोचने-समझने तक का मौका नहीं मिला. बिहारीपुर के गली-कूचों की धूल छोड़कर कभी टिकट कटाकर गाड़ी में बैठना पड़ेगा ऐसा परसोराम वैद्य या मुरारी या नौरंगी ने भी नहीं सोचा था. कोई न सोचे, 'कौशल्या भवन' के लोगों के चेहरों की तरफ देखकर विनायक को आखिर में यही सोचना पड़ा था. विनायक ने इस मकान की दीवारों के उतरते हुए पलस्तर और कमरों की सीलन में इतने सारे लोगों को शायद दफ़न होते देख लिया था...

रानी अब बिल्कुल चुप रहने लगी थी. मोहिनी भी. वह कभी अगर बेटे के सामने पड़ जाती, आसमान वग़ैरह के बारे में खामख्वाह बातें शुरू करती. वैसे आदतन चुप रहती और इधर से कोई कबाड़ी गुजरता तो पीतल के तसले थाली वग़ैरह किसी भी भाव बेच देती. अपनी शादी के वक़्त के थोड़े-से जेवर बचे थे, वे भी जैसे खिसक कर कहीं चले गए. एक चन्द्रहार बचा था. सोचती थी, उससे दो गहने बनवा कर रखे और रानी को ससुराल भेजते वक्त देगी, लेकिन मकान के लिए चुंगी का टैक्स देना था, सो विनायक खुद ही कुतबखाना जाकर बेच आया था.

इसके बाद इलाहाबाद से प्रोफ़ेसर बैनर्जी को लिखे खत का जवाब आ गया तो उसने दरी में नारियल की रस्सी से बिस्तर बांध लिया और बीसेक साल पहले जगतनारायण की खरीदी हुई टीन की संदूकची में कपड़े और किताबें वग़ैरह रख लीं. संदूकची का कुंडा टूटा हुआ था, सो रानी ने रस्सी से अच्छी तरह बांध दिया था.

इसके बाद 'कौशल्या भवन' और बिहारीपुर मुहल्ला बहुत पीछे रह गए थे. विनायक गाड़ी की खिड़की से बरेली का पीछे छूटना देख रहा था. थोड़ी देर में अंधेरा हो गया था. बाहर का कुछ भी दिखाई नहीं पड़ रहा था.

●●

त्रिवेणी

ख़बर

त्रिवेणी

•

पश्चिमी उत्तर प्रदेश की
बरेली का विनायक
जो एक श्रमिक संघ का
आदर्शवान युवा नेता है,
अन्ततः नौकरी से
निकाल दिया जाता
निम्न मध्यवर्गीय परिवार का
यह व्यक्ति
इलाहाबाद के कर्नलगंज स्थित
एक जूनियर हाई स्कूल में
अस्थायी अध्यापक नियुक्त होकर
बरेली छोडता है।
फिर शुरु होता है उसका
गंगा के दूसरे पार जाकर
झूसी के उत्पीड़ित किसानों
और वंचित लोगों के पक्ष
में सत्ता के विरुद्ध संघर्ष।
जीवन की वास्तविकता को
सर्जनात्मक अभिव्यक्ति देकर
कथाकार प्रणवकुमार ने
हिंदी उपन्यास की परम्परा को
इस बहुपठित रचना के माध्यम
समृद्ध किया है।

ख़त के जवाब में प्रोफेसर बैनर्जी ने लिखा था, वैसे बिल्कुल अभी कुछ कहना मुश्किल ज़रूर है लेकिन इलाहाबाद आ जाने से कोई-न-कोई काम मिल ही जाएगा. प्रोफेसर बैनर्जी बरेली कॉलिज मे अंग्रेज़ी पढ़ाते थे. रिटायर होने के बाद इलाहाबाद चले गए थे. वहां एक छोटा-सा कॉटेज ख़रीद लिया था और राजनीति वगैरह मे दिलचस्पी लेने लगे थे.

जब वह बरेली में थे, तब भी यही सिलसिला चलता था. थे अंग्रेजी के प्रोफेसर लेकिन क्लास में लेक्चर देते वक्त उन्हें शायद यह याद ही नही रहता था. साहित्य मे चिली की क्रांति तक पहुंच जाते और आख़िर में राय दे देते कि मार्क्स को कम-से-कम तीन सौ बरस पहले पैदा होना चाहिए था.

कोई लड़का खड़ा होकर कह देता—आई एग्री सर. तब कम-से-कम हिन्दुस्तान इतना फ्यूडल न बनता. यही वजह है कि इस मुल्क में छोटे या बड़े आन्दोलन हुए हैं, विद्रोह भी हुए हैं लेकिन क्रांति कभी नहीं हुई.

—राइट. प्रोफ़ेसर बैनर्जी अपने चश्मे के मोटे शीशों के अंदर से उस लड़के को घूरते हुए कह देते—कामू ने 'द जस्ट' में लिखा है, पोयट्री इज़ ऑलवेज रेव्यूलुशेनरी. आफ्टर दिस आई हैव गॉट ए क्वेश्चन. फिर जिन्दगी क्यों नही क्रांतिकारी बन सकती ? पोयट्री चाहे कितनी भी बड़ी क्यों न हो, आख़िर ज़िन्दगी से बड़ी कभी नहीं हो सकती. बल्कि पॉजिटिव वे में कहूं तो कहना पड़ेगा, लाईफ इज़ ग्रेटर दैन पोयट्री. दुनिया के बड़े-से-बड़े पोयट, पेंटर, थिंकर यही कहते रहे हैं.

—मे आई एन्सर टू योर क्वेश्चन, सर ? विनायक खड़ा होता.

—श्योर.

—हम में से ज़्यादातर लोग सच्चाई की नहीं, झूठ और मौक़ापरस्ती की ज़िंदगी जीते हैं. क्रांति के लिए सिर्फ़ झंडे नही, सच्ची आत्मा की ज़रूरत है, सर.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी खुश हो गए—यस, दैटस द ऐन्सर.

साहित्य की क्लास में लेक्चर देते-देते प्रोफेसर बैनर्जी इकोनॉमिक्स तक पहुंच जाते और आख़िर में झेंपने-से लगते—प्रोबेबली आई वाज़ऑफ़ द ट्रैक. लेकिन यह उनकी बरसों की आदत है.

उन्होंने इलाहाबाद से अंग्रेजी में एम. ए. किया था और बरेली आ गए थे. यह बात है बरसों पुरानी लेकिन तब भी आदत, सुना यही जाता है कि ऐसी ही थी. उनकी दूसरी आदतों में ब्लैक कॉफी और सिगार पीना, बहस करना और रात को कम-से-कम डेढ़ बजे तक किताबें पढ़ना तब भी थी, आज भी है.

रिटायरमेंट के फेयरवेल के वक्त अपने उसी पुराने अंदाज़ में उन्होंने कहा था—अब बहस के लिए नई उम्र के लड़के आसानी से नहीं मिलेंगे. बस इतना ही ग़म है मेरा.

उन्होंने चाहा था कि विनायक एम. ए. कर ले और प्रोफ़ेसर हो जाए. लेकिन उसने बी. ए. का नतीजा निकलने से पहले ही नौकरी ढूंढ ली थी. बल्कि ढूंढ ही लेनी पड़ी थी. 'कौशल्या भवन' की दीवारों को देखते हुए तब कोई और विकल्प नहीं रह गया था.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी इस फ़ैसले पर जरा आशाहत हुए थे. प्रिंसिपल से कहा भी था—ए मोस्ट ब्रिलियंट ब्वाय इज़ नाऊ ऑफ़ द ट्रैक.

फिर वह रिटायर होकर इलाहाबाद चले गए थे. शुरू में ख़त वग़ैरह काफी आते रहे हैं. धीरे-धीरे उनकी तादाद कम हो गई थी. वैसे अभी भी, इतना ज़रूर रह गया था कि दो-ढाई महीनों में दो-एक ख़त ज़रूर आ जाते.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी इलाहाबाद के एक जूनियर हाईस्कूल की मैनेजिंग कमेटी के चेयरमैन बन गए थे. विनायक ने ख़त लिखा तो स्कूल की उम्मीद पर ही उन्होंने थोड़ा-सा आश्वस्त करते हुए जवाब दिया था. दिक्कत यह थी कि आजकल सरकारी क़ानून के मुताबिक अनट्रेण्ड टीचर रखे ही नहीं जा सकते थे. प्रोफ़ेसर बैनर्जी ने इन्स्पेक्टर ऑफ़ स्कूल्स से मिलकर फिर एक अलिखित इजाज़त-सी ले ली थी कि किसी बहाने छः महीने के लिए नौकरी पर रख लिया जाए. आगे के लिए उन्होंने सोचा था कि दो-एक बार और छः-छः महीने के टर्म्स दौड़-धूप से मिल ही जाएंगे और इस बीच वह कहीं से बी. एड. कर लेगा. हालांकि इन सारी बातों में कोई मज़बूत बुनियाद नहीं थी लेकिन इसके अलावा फ़िलहाल और कोई रास्ता भी उनके हाथ नहीं था.

विनायक को खत मिला था चिट्ठी डालने के ठीक पांचवें दिन. अब दिक्क़त यह थी कि कहीं से पांचेक सौ रुपए का इंतज़ाम करना था. तीन-साढ़े तीन सौ यहां घर के ख़र्च के लिए फ़िलहाल चाहिएं और बाक़ी अपनी ज़रूरत के लिए. बिल्कुल निजी सामान के नाम पर एक घड़ी थी सिर्फ़. इसे बेचा ज़रूर जा सकता था लेकिन पचास रुपए से ज्यादा शायद कोई देने को तैयार नहीं होगा.

आख़िर मे गंगू गुरु से ही उसने पैसे लिए थे. गंगू को यक़ीन नही आया था कि बरेली छोड़ने की ज़रूरत उसे अब वाक़ई है. एकदम-से उदास हो गया था गंगू. जिन्दगी में यही एक क्रिया है, जो उसे आज तक आई ही नही. आख़िर में उसका गला इतना रुंध गया था कि कुछ भी कह पाना मुमकिन नहीं रह गया था. सिर्फ़ हाथ जोड़ लिए थे गंगू ने विदा!

प्रोफ़ेसर बैनर्जी स्टेशन पर लेने आए थे. बरेली छोड़ने के बाद यह उनका सिर्फ़ तीसरा ही साल था लेकिन उम्र जैसे छलांग मारकर बहुत बढ़ गई थी.

—हलऽऽलो. प्रोफ़ेसर ने हाथ मिलाया था—वेलकम टु एलाबाद.

—थैंक यू···थैंक यू सर.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी फिर उसे अपनी कॉटेज में ले आए थे. विनायक को थोड़ा संकोच हो रहा था लेकिन प्रोफ़ेसर ने कह दिया था—जब तक तुम्हारा कोई ठिकाना नही लगता, यहीं रहोगे. लेकिन मैं इतना बेवकूफ़ नहीं हूं कि ख़ामख़्वाह तुम्हें अपने घर रख लूं. हम लोग बहस किया करेंगे, क्यों? फिर वे दोनों इकट्ठे ज़ोरों से हंस पड़े थे.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी का चर्च लेन का यह छोटा-सा कॉटेज उसे अच्छा लगा. घर इतना साफ़-सुथरा है कि कोई देखेगा तो कहेगा, प्रोफ़ेसर की बीवी ज़रूर कोई आर्टिस्ट होगी. लेकिन विनायक को मालूम है, प्रोफ़ेसर की जिन्दगी शायद शुरू के दिन से ही औरों से अलग रही है. शादी दुनिया में बहुत लोग नहीं करते लेकिन ज़िन्दगी के बारे में ऐसी

व्याख्या बहुतों के पास नहीं होती.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी कभी भावुक ज़रूर होते होंगे लेकिन वैसे मौक़े अक्सर नहीं आते. उनकी ज़िन्दगी के डिटेल्स अपनी तरह के रहे हैं, इतना तो विनायक ने सोचा था लेकिन इससे आगे सोचने में दखलन्दाज़ी लगी थी.

प्रोफ़ेसर बैनर्जी शाम को लॉन में बैठे थे. कोई दूसरा वक्त होता तो शायद कोई-न-कोई बहस छिड़ जाती. इस वक्त वह बहुत संजीदा लगे. कॉफी का प्याला खत्म कर सिगार सुलगा ली और सामने के बोगनवेलिया की तरफ देखते रहे—यू नो, विनायक, ज़िन्दगी को समझकर पकड़ पाना बहुत मुश्किल है. आखिर में बस ज़िन्दगी खत्म हो जाती है और हम जहां के तहां रह जाते हैं. या बहुत हुआ तो खा-पी कर गुजर जाते हैं.

विनायक सिगार के छल्लों को देख रहा था.

—यह जो मिडल क्लास सेंटीमेंट है न, यह एक नेगेटिव फोर्स है. इसको मैं इकोनॉमिक क्लास से ज्यादा एक मेंटालिटी मानता हूं. इसको धक्का देकर पछाड़ न दिया तो समझो सिर्फ खाने-पीने के लिए ही पैदा हुए हो. लाईफ इज फिनिश्ड. इसके बारे में थोड़ा होशियार रहना.

विनायक ने कॉफी को सिप किया.

—कायदे से मुझे भी औरों की तरह गृहस्थ होना चाहिए था. जो लोग समझते हैं, मैं विवेकानन्द बनने के लिए पैदा हुआ, वे मेरे बारे में कुछ नहीं जानते. विवेकानन्द मेरे लिए भी एक इंस्पीरेशन है लेकिन मेरी बुनियाद तो दुनिया की हर छोटी-बड़ी चीजों में है. मैं जब एम. ए. के पहले साल में था, आई मेट ए गर्ल—अलकनन्दा. नहीं मेरी क्लासफेलो-वेलो नहीं थी, यूनीवर्सिटी के आर्ट स्कूल में बहुत सारी लड़कियों के बीच वह भी एक थी. दो साल यह सिलसिला चला था. फिर एक दिन पिताजी से मैंने शादी की बात की तो वह लोहे की तरह सख्त पड़ गए थे. वह थे कायदे के ब्राह्मण. जनेऊ छू कर उन्होंने कहा था कि घर में अगर कोई अजात-कुजात आनी है तो ऐसे पाप में रहने की बजाय वह आत्महत्या कर पापी बनना स्वीकार करेंगे. उन्होंने फिर वंश-परम्परा की बात उठाई थी. मैं उनका सबसे बड़ा बेटा था, लिहाजा उस कुल की मर्यादा का सवाल मेरे ही कंधों पर सबसे ज्यादा था. हालांकि मैं आखिर तक यह समझ नहीं सका था कि हमारा कुल अतत: किस मर्यादा का है. मां भी बहुत रोई थी. कहा था कि मैं चाहे कुछ और कर लूं, कुल की नाक न कटाऊं. गैर-ब्राह्मण की लड़की को घर लाना सरासर पाप है. मां ने यह भी कहा था कि मेरे दादा-परदादा बहुत ज्यादा सत किस्म के लोग थे. इससे उन लोगों का पुण्य छोटा हो जाएगा.

पिताजी ज़िद्दी थे. मैं शायद उनसे भी ज्यादा ज़िद्दी था. लेकिन आखिर में झुका मैं ही. कुल-वंश की बात पर नहीं, मां के विधवा होने के मामले पर. मेरी मां विधवा वाकई नहीं हुई थी. पिताजी के मरने के एक साल पहले उन्होंने आंखें बन्द कर ली थीं. लेकिन यह मसला दूसरा है. अलकनन्दा ने कभी कल्पना भी न की होगी कि मैं झुक सकता हूं. वह इतनी शॉक्ड थी कि अल्टीमेटली शी कमीटेड सुईसाइड. तब तक मेरा रिजल्ट आ गया था. देन आय लेफ्ट एलाबाद फॉर बरेली. इतने दिनों बाद जब दुबारा यहां लौटकर आया तो देखा, मैं बहुत अकेला पड़ गया हूं. इस अकेलेपन से मुक्ति के लिए ही मैंने इलाहाबाद छोड़ा था. लेकिन आखिर में लौटकर यहीं क्यों आ गया, समझ नहीं सका. प्रोफेसर बैनर्जी एकदम-से चुप हो गए थे.

विनायक ने उनकी तरफ देखा. आंखें बन्द थीं. लगा, वह बहुत दिनों बाद रिलैक्स-से कर रहे हैं. अंधेरा हो गया था. कॉटेज में शंभू ने बत्ती जला दी थी. अब शंभू ही इस घर का सबकुछ सभालता है. चाहे खाना बनाना हो, चाहे क्यारियों में पानी देना, शंभू

की ज़िम्मेदारी है. उन्होंने मज़ाक में उसका नाम रख लिया है—होम सेक्रेट्री.

थोड़ी दौड़-भाग ज़रूर करनी पड़ी थी लेकिन नौकरी आख़िरकार मिल ही गई. फ़िलहाल छः महीनों के लिए ही लेकिन चूंकि प्रोफ़ेसर बैनर्जी पीछे हैं, आगे भी कुछ-न-कुछ होता ही रहेगा. वैसे विनायक ने रुख यह बना लिया था कि जो होगा, देखा जाएगा.

तनख़्वाह दो सौ सत्तर रुपए. हेडमास्टर ने डेढ़ेक सौ रुपयों के ट्यूशन अलग से दिला दिए थे. कुलमिलाकर चार सौ तीस रुपए की आमदनी. उसने पन्द्रह रुपए पर कर्नलगंज में एक कमरा ले लिया और बांस की एक चारपाई ख़रीद ली. कमरा आजकल पन्द्रह रुपए में गांव में भी नहीं मिलता लेकिन प्रोफ़ेसर बैनर्जी की वजह से हेडमास्टर को दिलचस्पी लेनी ही पड़ी और उन्होंने अपने किसी दोस्त से कहकर यह कमरा दिला दिया था.

कमरे में चारपाई ज़रूर आ गई थी लेकिन किसी और चीज़ के आने की गुंजाईश थी ही नहीं. विनायक ने तसल्ली कर ली थी—चलो आगे कुछ और ख़रीद-फ़रोख़्त की ज़िल्लत से छुट्टी मिल गई.

कर्नलगंज में रहने का एक ख़ास फ़ायदा यह है कि प्रोफ़ेसर बैनर्जी के यहां किसी भी वक्त पहुंचा जा सकता है. पैदल चलने से सात-आठ मिनट से ज़्यादा वक्त नहीं लगता. चर्चलेन के गिरजे की घंटी जब कभी बजती है, आवाज़ यहां तक साफ़ सुनाई देती है.

यहां रहने वाले लोगों में छोटे-मोटे दुकानदार क़िस्म के लोगों से लेकर एकाउण्टेंट जनरल के दफ़्तर के बाबू, रेलवे के किरानी, प्राइमरी स्कूल के मास्टर और रिटायर्ड लोगों तक हर तबके का बाशिन्दा मिल जाएगा.

सामने कोई बोस बाबू रहते हैं. पहले कार्पोरेशन में हेडक्लर्क थे. पिछले आठेक सालों से रिटायर्ड ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं. अभी तीनेक लड़कियों की शादी नहीं हो पाई है. लिहाज़ा दिमाग़ में हमेशा बे-सिर-पैर की हज़ार चिंताएं जमा होती रहतीं. कोई बंगाली बाबू मिलता है तो सबसे पहले पूछते हैं, उनकी निगाह में कोई लड़का है या नहीं. अपने वक्त का एक हिस्सा वह दामाद ढूंढ़कर और बाक़ी हिस्सा दुकान वग़ैरह में खाता लिखकर गुज़ारते हैं. खाता, वैसे, वक्त गुज़ारने के लिए नहीं, ज़रूरत के लिए ही लिखना पड़ता है. पेंशन के चंद रुपयों से गुज़ारा राजा रामचन्द्र के त्रेतायुग में भी होता था क्या ? शुक्र है जो बाप-दादे का बनाया हुआ एक मकान है. वर्ना अगर किराया देकर रहना पड़ता तो शायद जंगल में ही जाना पड़ता.

बोस बाबू ने आकर अपना परिचय दिया था, एक ही सांस में आदमी जितना बता सकता है, वह बता गए थे. फिर आश्वासन दिया था—कर्नलगंज में एक बार रह लेंगे तो कहीं और जाने का मन होगा ही नहीं. आख़िर में उन्होंने याद दिलाया था कि पण्डित नेहरू भी यहीं रहते थे. 'आनन्द भवन' है ही कितनी दूरी पर ? जहां कर्नलगंज ख़त्म होता है, वहीं पर तो आनन्द भवन का फाटक है.

विनायक ने स्वीकृति में गर्दन हिलाई थी. न भी हिलाता तो बोस बाबू के लिए कोई फ़र्क नहीं पड़ता. अपनी बात वह कहकर ही दम लेते.

उन्हें शायद जल्दी थी.

जिस गति से वह आए थे, उसी गति से सामने की तरफ़ निकल भी गए थे. चलने से पहले बता दिया था कि किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो मांग ज़रूर लें.

बोस बाबू चले गए तो गली के नुक्कड़ पर जो खपरैल का मकान है, उसमें से परमानन्द लाला निकला. वह शायद अपनी खिड़की पर खड़े होकर बोस बाबू का एक-एक लफ़्ज़ निगल रहा था.

पेशे से परमानन्द लाला एक सब्ज़ी की दुकान चलाता है. आजकल खुद नहीं

बैठता, गद्दी पर दामाद को बैठा दिया है. एक ही लड़की है. लिहाजा ढूंढ-ढांढ कर घर-जमाई बनने लायक एक लड़का पकड़ लाया था.

सब्जी वग़ैरह बेचता था इसलिए लोगों ने अपने आप ही नाम के साथ लाला जोड़ लिया था. परमानन्द फिर परमानंद लाला बन गया था.

धंधा चाहे जो भी करता हो, कपड़े वग़ैरह वह सलीके से पहनता. शाम को चुन्नटदार कुर्ता और बंगाली धोती पहनता, सर पर टोपी लगाता और लालाइन को लेकर हवा खाने निकलता.

अभी बोस बाबू के जाते ही लाला इधर आ गया. दोनों हाथों को जोड़कर परम विनय के साथ शुरू में 'नमस्कार' कहा और संक्षेप मे अपना परिचय दिया. संक्षिप्तता के बावजूद अपनी पीढ़ी—पूर्वजों का पुराण सुनाने में तीनेक मिनट लगे थे.

विनायक को थोड़ा संकोच हो रहा था. कमरा इतना छोटा है कि किसी को बिठाने में भी दिक्क़त होती है.

लाला ने यह भाँप लिया. बोला—परदेस मे ऐसा ही होता है. भई, नौकरी-चाकरी हमने कभी की ज़रूर नही लेकिन करने वालो की दिक्कतें खूब समझते हैं. अपनी बात के अन्त में तथागत की मुद्रा में आँखें बन्द कर ली थीं. खैर, अपने मसले पर फिर फौरन ही आ गया था—ये जो बंगाली बाबू है, मुसीबत के मारे है. उनकी औरत शायद पिछले जन्म में मछली थी. दिन में तेरह बार नहाती है. आप उनके घर तो जा ही नही सकते. अगर आप घुस गए उनके घर तो आपके निकलते ही सबसे पहले तो उनकी बीवी कमरे को पाँच-दस बाल्टी पानी से धोएगी फिर अपने ऊपर भी उतना ही पानी डालकर खुद को शुद्ध करेगी. दोनों हथेलियों और पैरों में सिर्फ घाव ही घाव हैं. इतनी देर में शायद लाला को याद आया था कि सामने वाले व्यक्ति से कुछ पूछा ही नही है—आपने अपना नाम वग़ैरह बताया नही

—विनायक हूं. इसी मुहल्ले के चुंगी के स्कूल मे मास्टरी का काम मिला है. बरेली से आया हूं.

—बरेली से ? तब तो आप हमारे पड़ोसी वहाँ भी ठहरे, मैं कोई चालीस बरस पहले बदायूं से यहाँ आया था. आप पढ़े-लिखे आदमी है, संगत अच्छी रहेगी. वैसे साब आपने डिस्ट्रिक्ट तो बता दिया लेकिन कास्ट नही बताई.

विनायक थोड़ा संजीदा हो गया—पता ही नहीं मेरी कास्ट क्या है !

—वाह साब, आप तो मजाक करते हैं.

—नहीं, यह मजाक कहाँ है ? आप शुरू से व्यापारी रहे है लेकिन मै शुरू में क्लर्क था. अब मास्टर हूं.

—आप भी खूब बोलते हैं. हम लोग ज़रा पुराने ढर्रे के आदमी हैं. आजकल के नए-नए लडके क्या बोलते हैं, आधी बातें तो समझ मे नही आती.

—मुझे शायद पौन बातें ही समझ मे नही आती.

लाला ने ज़ोरों का ठहाका लगाया—नही जनाब बातो मे तो कोई आपसे जीत नहीं सकता. अच्छा हुआ जो आप वकील वग़ैरह नही हुए बहुतो की रोजी मारी जाती फिर···

विनायक हस पडा—अभी तो अपनी ही रोजी का कोई ठिकाना नही है.

लाला को एक बात याद आ गई थी—मुहल्ला ज़रा ऐसा ही है. मेरा मतलब और कुछ नहीं सिर्फ इतना है कि तरह-तरह के लोग है, किसके मन मे क्या है, कौन जानता है ? लेकिन इससे आपको क्या ? कोई भी किसी के भी नाम कुछ बोल देगा. आप ज़रा इन्हीं बातों से होशियार रहियेगा. वैसे कोई जरूरत पड़ी तो पड़ोस में मैं

हूं ही.

विनायक को कुछ समझ में नहीं आया था.

—वैसे आपके पास वक्त ही कहां होगा, इन पचड़ों में पड़ने का ? पढ़े-लिखे आदमी हैं, पढ़ने-पढ़ाने में ही वक्त गुज़र जाएगा. हां ज़रा एक बात का ध्यान ज़रूर रखेंगे. अखबार में कभी कोई नई बात हो तो बता ज़रूर दिया करें. अपने यहां तो पढ़ने के नाम पर मामला एकदम साफ है. लाला ने दोनों हाथों को फैलाकर साफ होने की व्यापकता समझाने की कोशिश की थी. फिर उसने खड़े-खड़े ही इलाहाबाद का पूरा नक्शा समझा दिया था. शुरू में 'नमस्ते' कहकर बातों का सिलसिला शुरू करने से लेकर जाते वक्त 'नमस्ते' कहने के बीच का फासला दो घण्टे का था. लालाइन ने खिड़की की ओर से आवाज दी थी, नहीं तो थोड़ा-सा वक्त और वह ले सकता था.

लाला के जाते ही हेडमास्टर साब आ गए थे—तो फिर जमा लिया आपने ?

विनायक ने हंसने की कोशिश की—अभी तो पिघल रहा हूं.

हेडमास्टर ने उस बात पर ध्यान नहीं दिया था. उन्होंने स्कूल का सिलसिला शुरू किया था—आपको वैसे बताने की ज़रूरत नहीं है, अपने आप ही समझ जाएंगे. फिर भी सोचा, वक्त आखिर हरेक के पास लिमिटेड ही होता है. उसे खराब क्यों किया जाय !

—आप ज़रा एक मिनट बैठिए. मैं चाय के लिए कह आता हूं.

हेडमास्टर ने न तो हां की, न ना. गली के नुक्कड़ पर ही चाय-बिस्कुट की एक छोटी-सी गुमटी है. यहां से आवाज़ देकर भी कहा जा सकता था लेकिन विनायक जा कर ही दो चाय के लिए बोल आया था.

हेडमास्टर ने अपनी बातें जहां खत्म की थीं, वहीं से सिलसिले को आगे बढ़ाया—बड़े बुरे दिन आ गए साब ! उन्होंने चप्पलें निकाल कर पांवों को चारपाई के ऊपर कर लिया था—इतना गंदा पालिटिक्स आ गया कि टीचिंग प्रोफेशन की कोई डिगनिटी तो अब रही नहीं. कोई कम्यूनिस्ट है, कोई सोशलिस्ट या जनसंघी या कांग्रेसी, सबका अपना-अपना राग है.

—अच्छा ही है. चाय आ गई थी विनायक ने एक प्याला उन्हें थमा दिया.

—हिन्दुस्तान इसी बात पर तो मारा गया स्कूल को तो साब हम मां सरस्वती का मंदिर ही मानते आए हैं. अब अगर कोई कह दे कि इसे पालिटिक्स का अखाड़ा समझो, तो यह फिर होने से रहा. हेडमास्टर ने एक खुला-सा ठहाका मारा था.

विनायक ने चाय खत्म की और प्याला नीचे रख दिया.

—वैसे कल आप ज्वाइन करेंगे तो लोग आएंगे आपके पास. घुलने-मिलने की कोशिश करेंगे, घर खाने पर बुलाएंगे, हमदर्दी जताएंगे और नीचे से कोई पत्ता ही साफ कर देंगे. अभी तो आपको बी० एड० करके पर्मानेंट होना है. क्यों क्या समझे ?

इस बात का क्या जवाब हो सकता था ? लेकिन हेडमास्टर को शायद बिल्कुल अभी किसी जवाब की ज़रूरत थी. विनायक ने फिर गर्दन हिला दी थी—समझ गया.

हेडमास्टर खुश हुए थे—यस, आई एक्सपेक्टेड दिस फ्राम यू. आप समझदार आदमी हैं. खुद ही वक्त पर सबकुछ समझ जाएंगे. आप बिल्कुल फिकर मत कीजिए. यू विल बी ए पर्मानेंट टीचर हीयर.

विनायक ऊब गया था. ऊब को सतर्कता से छिपाया और बोला—थैंक यू.

—शादी-वादी कर लीजिए फिर.

—अं ?

—आजकल के लड़कों की यही बात मुझे समझ में नहीं आती. उम्र रहेगी तब

शादी नहीं करेंगे. आखिर में जब शादी करेंगे, सर के बाल सफेद हो रहे होंगे. मैं अपने तजुर्बे में से बोल रहा हू दिस इज द प्रोपर टाइम फार सेटलमेंट इन लाइफ गेट मैरेड बी हैपी. हेडमास्टर को अपनी ही बात पर हसी आ गई थी. वह शायद इसकी सच्चाई पर खुद ही यक़ीन नही कर पा रहे थे.

चाय का खाली प्याला उनके हाथ मे था. उसे उन्होंने चारपाई के नीचे रखा, पांवों में चप्पलें डालीं और गुडबाई की मुद्रा मे हथेली ऊपर उठा ली.

●●

मकान के ऊपरी हिस्से मे चौधरी साब रहते हैं पहले पटवारी थे उस नौकरी की बदौलत यह मकान बना था काफी खाया-पीया था उन दिनो चौधराइन को एक से एक भारी जेवर लाकर देते रहे हैं बच्चा वगैरह कोई था नही, लिहाजा चौधरी चौधराइन मे और चौधराइन चौधरी मे ही सिर्फ अपना दुख-सुख ढूढते लेकिन एकदम से वे दिन चले गए. इन्क्वायरी हो गई और चौधरी की न सिर्फ नौकरी ही चली गई, जेल की दीवारों मे भी दो साल काटने पडे जब निकलकर आए, सूखकर कांटा हो गए थे. उस दरमियान मुकदमे के चक्कर मे जितनी सारी जमा-पूजी थी, निकल गई. चौधराइन ने अपने जेवर वगैरह भी कुछ बेच डाले थे, कुछ साहूकार के पास गिरवी रखे थे लेकिन वे वापस नही आ सके थे

अब चौधरी के पास यह मकान है और रद्दी अखबार वगैरह खरीदने-बेचने की एक छोटी-सी दुकान है लेकिन उससे कुछ खास आमदनी होती नही है. न उन्हे दूकान पर बैठना ही अच्छा लगता है.

चौधरी ने मकान के किराए की रसीद पहले कभी नही दी थी यहाँ वैसे रसीद-वसीद का कोई रिवाज नही है लेकिन चौधरी की बात औरो से अलग है जेल से निकलने के बाद उन्हें जैसे किसी भी चीज मे यकीन ही नही आता लिहाजा काम चाहे छोटा हो या बड़ा, कानूनी तौर पर ही कर लेना चाहते है रसीद देने आए तो सबसे पहले माफी माँग ली—माफ कीजिएगा, रुपए लेते वक्त रसीद दे नही पाया था.

—जरूरत नही पडी थी वर्ना शायद मै ही माँग लेता.

—खूब, मुझे भी साफ बातें पसद है वैसे बोस दादा ने आपको मेरे बारे मे सबकुछ बता ही दिया होगा यह उनका एक खास काम है मुहल्ले मे कोई नया किराएदार आता है तो दादा उसके सामने पूरी फेहरिस्त रख देते है. सारी बाते सच्ची ही हों ऐसा नही है लेकिन मै फिक्र नही करता कि कौन मेरे बारे मे क्या कहता है.

—आप मंजे हुए आदमी लगते है विनायक थोडा हसा.

—नही साब, बिल्कुल गलत मजा हुआ होता तो इस उमर तक बहुतकुछ कर लेता. लेकिन मैं कुछ भी नही कर सका वक्त जब था, तब पढाई नही की सिर्फ पाँचवे क्लास तक पढा हूं.अंग्रेजो का जमाना था यस-नो-वेरीगुड भर कह देने से नौकरी मिल जाती थी. आज का जमाना होता तो शायद रेलवे स्टेशन मे कुली बनता

—मेरा वैसे कोई ठिकाना तो है नही लेकिन कभी अगर घर पर हुआ और आप खाली हुए तो आ जाया करे.

—मेरा खाली होना ? चौधरी ने होंठ उलट लिए थे—बस खाली रहने के अलावा अब कोई और काम नही है कभी चौधराइन के साथ गप्पे मार ली या अखबार पढ़ लिया, बस. और कोई काम नही रहता. अब अखबार पढना भी अच्छा नहीं लगता. खबरे रोज ही एक-सी होती है लेकिन वक्त काटना है, सो कुछ-न-कुछ पढ ही लेता हूं.

चौधरी चले गए थे. विनायक ने दरवाजे पर ताला लगाया और निकल आया.

नुक्कड़ पर जो चाय की गुमटी है, वहाँ यूनिवर्सिटी के कुछ लड़के हिन्दुस्तान की राजनीति पर बहस कर रहे थे. थोड़े फासले पर शामियाना लगा था. वहाँ कीर्तन चल रहा था. ढोलक की थापों की आवाज यहाँ तक आ रही थी.

लाला अपनी ललाइन के साथ हवाखोरी के बाद शायद लौट रहा था. विनायक ने उधर ध्यान नहीं दिया और कटरे की तरफ निकल गया. नाम से कटरा ज़रूर है लेकिन ख़ासा लम्बा बाजार है. दवा-दारू से लेकर आटा-दाल तक,सभी तरह की दुकानें मौजूद है.

बोस बाबू शायद यहाँ किसी दुकान में खाता लिखते हैं. उसे उन्होने देख लिया था और आवाज़ दे दी थी—घूमने निकला है ?

—घूम-घाम कर थोड़ा अन्दाजा ले रहा हू.

—गुड. मैं एक बात बोलना भूल गया था. आपका लैण्डलार्ड है न चौधरी. पीने पिलाने का आदत है. पटवारी था तो सुनने में आता है, एक रखैल भी था, यह जो कर्नलगंज वाला मकान है, रखैल यहाँ रहता था. पटवारी रहता था दारागंज मे. क्या राजमहल बनवाया था ! लेकिन पाप का पैसा कहाँ रहता है ? सब खतम हो गया. अब देखो हमारा तरह भूखा-नंगा घूमता है.

—विनायक ने पिण्ड छुडाने की कोशिश की—आप को देर तो नही हो रही है ?

—इस मुलुक मे बस एक ही चीज खूब मिलता है. वो है टाइम. जितना मर्जी ख़र्च कर लो, कोई कुछ नही बोलेगा. हां तो मैं बोल रहा था, अब रखैल तो गया लेकिन भाई, आदत आसानी से तो नही छूटता है. अब कभी-कभी बाजार जाता है. औरत के पास बाज़ार मे जाता है.

विनायक चलने लगा तो बोस बाबू भी साथ हो लिए थे. डिब्बे से उन्होने सूंघनी निकाली और नाक के भीतर ठूस दिया—आप नया आया न, इसलिए सब बता रहा हू आपको. वैसे धीरे-धीरे सबकुछ समझ आ जाएगा बोस बाबू ने अचानक सिलसिला बदल दिया था—यू आर मैरेड ?

—नही.

—आजकल का लड़का लोग बुद्धिमान होता है. हमारा टाइम था, दर्जनभर बच्चा पैदा किया और खाने के लिए दाल-भात नही. बोस बाबू बत्तीसी फैलाकर हंसने लगे थे.

विनायक सोच रहा था, लौटकर चर्चलेन की तरफ निकल जाए.बोस बाबू शायद उतनी दूर नही जाएंगे.

—आपका पड़ोसी है न आलू-टमाटर वाला, ए-वन कन्जूस है. कभी किसी को एक गिलास पानी भी नही पिलाएगा. अरे नही समझा आप ? मै परमानंद लाल का बात बोल रहा. दरवाज़े पर अपना नाम का साइनबोर्ड लगाया है. देखा नही आप ?

—याद नही आता. शायद देखा हो. विनायक ने बात टालने की कोशिश की.

—हाँ, देख लेना. साला करप्ट भी है. इनकम टैक्स थोड़ा ही देता होगा. ऊपर-ऊपर से सड़ा आलू-टमाटर बेचकर लखपति बन गया. ब्रिटिशर्स का जमाना होता तो गवर्नमेंट शूट कर देता ऐसे आदमी को.

सामने से एक रिक्शा आ रहा था. वह इतनी तेज़ी से निकल गया कि दोनों बाल-बाल बचे. बोस बाबू ने अपनी बगाली ज़बान मे रिक्शा वाले को एक ज़बरदस्त गाली सुना दी.

बोस बाबू दुबारा सूंघनी के डिब्बे में से चरा निकालकर नाक में ठूस रहे थे.

फिर नाक साफ करने के लिए उन्होंने जो रूमाल निकाला, उसका असली रंग क्या रहा होगा, शायद ही कोई बता सके वोस बाबू इसे कूड़ेदान में फेकने के बजाय जेब में क्यों रखते है. विनायक लगभग पूछने को हुआ था लेकिन पूछा इसलिए नही कि फिर कम-से-कम आधा घंटा लगातार कोई बेहूदी-सी बात सुननी पड़ेगी

बोस बाबू ने गले को खखारा और थोड़ा करीब खिसक आए—आपके पास पाँचेक रुपया तो नही होगा ? आज एक जगह से पेमेंट मिलना था लेकिन मिला नही. सब साला कुछ-न-कुछ बहाना लगा देता है

विनायक ने जेब से बटुआ निकाला और पाँच का नोट बोस बाबू को पकड़ा दिया बोस बाबू गदगद हो गए थे—थैंक यू. थैंक यू वैरी मच. फिर वह वापस चलने लगे थे.

●●

प्रोफेसर बैनर्जी अपनी छड़ी के साथ मिल गए थे

—हलऽऽलो शाम को तुम्हे घर पर एक्सपेक्ट कर रहा था चलो आज का डिनर मेरे साथ ही लेना प्रोफेसर बोले.

—सर, डिनर ही क्यो, लंच, ब्रेकफास्ट, टी सबकुछ आपके साथ ही अब तक लेता रहा हू

—फिर ? डोण्ट फारगेट दैट इट इज माई सिटी.

—श्योर सर, श्योर

—देन से, थैंक यू फार दिस इनविटेशन प्रोफेसर हस पड़े थे विनायक ने भी साथ दिया था

प्रोफेसर के हाथ में शायद दवा की कुछ शीशियाँ थी विनायक ने अपने हाथ मे उन्हे ले लिया था—सर, हिन्दुस्तान रियली यूनिक है

—ह्वाट डिड यू एक्सपीरियंस अबाउट द यूनिकनेस ?

—वैसे खास कुछ नही आज दिनभर में अड़ोस-पड़ोस के कई लोगो से मुलाकात हो गई हेडमास्टर भी आए थे

—काफी नसीहत दे गए होगे !

—सो-सो

—देन आयदर यू आर लकी ऑर ही वाज इन ए हरी थोड़ी-सी नसीहत तो वह बेचारे दे ही नही सकते है

—थोड़ी ही देर मे ढेर सारी बता गए है.

—यह भी एक मिडल क्लास मेंटालिटी है हिन्दुस्तान के साथ दिक्कत यह है कि यहाँ का इंटेलेजेंशिया बुरी तरह मिडल क्लास वेल्यूज मे जकड़ा हुआ है

—इट इज ए पॉजिटिव साइन सर कबीर आखिर यही पैदा हुआ था

—देखो, तुम फिर लेक्चर वाली बात कर रहे हो बरेली मे तुम नेता जरूर थे लेकिन यहा एक अजनबी हो…

—आप एग्री नही करते

—करता हू लेकिन मैं बहुत इम्पेशेन्ट हो गया हू मैं चाहता हू कि तमाम लोग इम्पेशेंट हो जाए और कुछ भी कर डाले

—कुछ भी क्यो ?

बिल्कुल अभी एक खूबसूरत ब्लू प्रिंट बनाया नही जा सकता लेकिन यह भी कोई बात हुई कि लोग इन्तजार करते रहे ?

—शायद कुछ लोग इन्तजार कर ही नही रहे है.

—राइट ऐस लोग है लेकिन ऐसे बहुत सारे लोगो की जरूरत इस मुल्क को है मगर इस बारे मे कुछ भी कहने का हक मेरा नही है

—क्यो सर ?

—जिन्दगी-भर मै प्रोफेसर बना रहा और लोगो के साथ बहसे करता रहा ह्वाट वाज माई ऐक्शन ? यह भी एक किस्म की दिमागी ऐय्याशी है

प्रोफेसर बैनर्जी बहुत उत्तेजित हो गए थे

विनायक चुप रहा

●●

खाना खाकर वे फिर लॉन मे बैठ गए थे

—तो कल तुम ज्वाइन कर रहे हो ? प्रोफेसर ने पाईप सुलगाकर पूछा

—हाँ सर

—गुडलक लेकिन देखो, मरियल हेडमास्टर-मुशी होकर मत रह जाना यहाँ बहुत सारे मौके आएगे बट एवायड टू बी पिटीड वैसे तुम कभी नही होगे मैं जानता हू

—थैंक्यू सर

—आजकल मुझे यह सोचकर अजीब-सा लगता है कि जिन्दगी-भर मैंने सिर्फ, दिमागी ही सही, ऐय्याशी की है घर-गृहस्थी वाला होता तो भी हालत इससे बेहतर नही होती चीन के रेव्यूलुशन के बारे मे बहस करना और हिन्दुस्तान मे रेव्यूलुशनरी तरीके से जीना एक बात नही है

—हम लोग असफल होकर भी नही सीखते है वर्ना कम-से-कम बरेली मे शायद कुछ तबदीली, एक-आध मुहल्ले मे ही सही आ सकती थी

—इसकी वजह क्या है मालूम ? अपने बारे मे खुद ही का कोई भरोसा नही है जो आदमी आज कम्यूनिस्ट है, वह कल ही सरकारी पार्टी मे शरीक हो जाता है यह सब लगातार यहाँ हो रहा है

—इस लिहाज से मुझे ये रवैराग सबसे ज्यादा क्रांतिकारी लगता है

—राइट हिन्दुस्तान के सेंटीमेंट को शुरू से लेकर अब तक अगर हिस्टोरिकली अनालाईज करो तो पाओगे कि यहाँ फ्यूडल वैल्यूज की जड़े बहुत गहरी है आखिर उन्हे उखाड फेंकने के लिए हमने क्या किया ?.

—सर, स्कूल मास्टर होने का एक फायदा यह है कि लोग सिर्फ मेहरबानी की निगाह से देखेगे इसका फायदा उठाकर शायद कुछ किया जा सके

—तुम किस हद तक जा सकते हो ?

—पता नही

—तुम्हे पता होना चाहिए

—यह पता होना इपासिबल है हम सिर्फ काम करने के बाद ही कह सकते हैं कि यह हमारी हद थी आपने अभी कहा, ब्लू प्रिंट के अलावा भी काम करना पडेगा

प्रोफेसर बैनर्जी चुप हो गए थे

विनायक को अन्धेरे मे उन्हे देखना अच्छा लग रहा था खास तौर पर पाईप के धुए के बीच उनका चेहरा जलता हुआ-सा दीखा था

—हम लोग बहुत बहानेबाज हो गए है, विनायक प्रोफेसर ने काफी देर बाद कुछ कहा था—कोई-न-कोई बहाना ढूढ ही लेते हैं

—लेकिन कुछ हैं जो नही ही ढूढते है

—उन लोगो का नम्बर बढ नही रहा है, तुमने सोचा है ?

—यस, आई नो अबाउट. अच्छी चीजों का नम्बर बहुत तेजी से कभी नहीं बढ़ता. थोड़ा वक्त लगेगा लेकिन···

—मुझे इस 'लेकिन' से जबरदस्त चिढ़ है यह एक तरह का एस्केप है.

—अभी मेरे पास और कोई शब्द नही आज न सही, कल ये शब्द, इनके मतलब, जाहिर है, बदलेंगे. बदलना तो पड़ेगा ही. तब यकीनन मै लेकिन-वेकिन का इस्तेमाल नही करूंगा.

●●

विनायक लौटा तो ग्यारह बज रहे थे

सड़क के किनारे टाट बिछाकर जो लोग सब्जी वगैरह बेचते है, दिन-भर का हिसाब कर रहे थे. ये दूकाने चौराहे से लेकर यूनिवर्सिटी के हॉस्पिटल तक लगातार लगती है चाहे धूप हो या बारिश, इनकी मौजूदगी मे लगभग कोई फर्क नही आता. कभी-कभी जब चुंगी वाले आते है, तब जरा यहाँ की रौनक मे फर्क पड़ जाता है. भागमभाग मे कोई अपना सामान कही छुपाता है, कोई कही. चुंगी वाले अपनी गाडी मे मन-मुताबिक सब्जी और फलो की टोकरियाँ लदवाते और गालियाँ बकते. गालियो से यहाँ कोई फ़र्क नही पडता बल्कि चार जूता भी चाहे मार लो, कोई चू भी नही बोलेगा लेकिन पेट पर लात न मारना

लाला की दूकान अपने ही घर के बरामदे पर लगती है लिहाजा उसकी इज्जत जरा औरों के मुकाबले ज्यादा ही है लाला ने कई बार सोचा भी कि एक साइनबोर्ड लगा दिया जाए लेकिन पडोस के परचूनी वाले ने अच्छी सलाह दी थी, फिर तो लेने के देने पड जाएंगे इनकम टैक्स भरोगे या रोजी-रोटी का धधा करोगे ? लाला ने फिर इरादा बदल दिया था

विनायक लौटा तो लाला पान चबाते हुए सडक पर टहल रहा था. शाम को जो कीर्तन चल रहा था, अभी जारी था चाय की गुमटी पर दो लडके फिल्मी गाने सुन रह थे.

लाला ने पकड लिया--फिर घूमघाम आए ?

—चर्चलेन तक गया था जरा.

—वहा तो भई, कोठी वाले साब है खैर, खाना वगैरह सब निबटा के आए या अभी···

—जी हाँ, खाकर ही आ रहा हू.

—चलिए फिर टहलते है थोडी देर कुछ बाते भी हो जाएगी और आपको इस प्रयाग नगर का ज्ञान भी हो जाएगा

विनायक चुप रहा थकान-सी थी

—अरे चलिए भी साहब प्रयाग की हवा भी खूब होती है. एक बार रम गए तो समझिए फिर रम ही गए आप जरा बगाली दादा के बारे मे होशियार रहिएगा क्या समझे ?

—कुछ भी नही.

लाला हस पडा—मै जानता था, यही जवाब देगे आप.

—आप जानते थे ?

—लीजिए, आप तो मजाक करने लगे ! पढा-लिखा जरूर नही हू लेकिन भगवान ने समझदारी पूरी दी है बगाली दादा के चक्कर मे अगर एक बार पड़ गए तो समझिए कि बाक़ी सारे काम आपको ठप्प ही कर देने होंगे.

—अच्छा.

—मज़ाक मत करो भई, बाद में पछताओगे. दरअसल वह आदमी है सरफिरा. सरफिरा भी क्यों, पागल ही समझो. बीवी तो दिन-भर नहाती और हाथ-पांवों में घाव बनाती रहती है. ऊपर से सर के ऊपर कई-कई जवान लड़कियां. दादा आपके पास आएगा, बकता रहेगा फिर जब वापस जाएगा न, आप देखेंगे कि दो चीज़ें चली गईं. एक है—बहुत सारा वक्त और दूसरा बटुआ. लाला ने बात खत्म की और बदन खुजाने लगा. मौसम गर्मी का नहीं था फ़िर भी पसीने की बू आ रही थी.

विनायक ने जेब से रूमाल निकाला और चेहरा पोंछ लिया. कोई जरूरत नहीं थी फिर भी इतना कर लिया. चुप रहना अच्छा नहीं लग रहा था.

—बंगाली दादा की यह दूसरी बीवी है. पहली शादी के तीसरे ही साल हैज़े से गोलोक धाम सिधार गई. लाला अपने दाहिने बाजू को ऊपर उठाकर गोलोकधाम का रास्ता शायद बता रहा था—फिर बंगाली मोशाय ने अपनी साली से शादी कर ली.

—चलें अब ? विनायक लौट पड़ा था.

लाला को मूड आ जाता है तो वक्त का ख्याल कम ही रहता है. विनायक ने चलने की बात कही, वापस मुड़ा तो वह शायद थोड़ा आशाहत ही हुआ था. इसीलिए आज के लौंडे-लपाड़ों पर गुस्सा आता है. किसी बात पर वे रस क्या लेंगे ? अख़बार पढ़ेंगे और दिल्ली, लखनऊ और जाने कहाँ-कहां की बात पर गिटपिट करते रहेंगे. अरे भई, पहले अपने मुहल्ले को जानो, जिन गली-कूचों में रहते हो, उनकी दीवारों की एक-एक ईंट को तो समझ लो···

वे लोग कटरा तक नहीं जा पाए थे. लेकिन इसी में इतना वक्त निकल गया था. दरअसल लाला की आदत ही ऐसी है कि अगर बातों के दरमियान कोई रसीला सिलसिला आ जाता तो वहीं रुककर उसकी पूरी व्याख्या कर डालता. वे लोग वापस आए तो कर्नलगंज का बाज़ार सूना हो चुका था. रेडियो का आख़िरी फिल्मी गाना भी शायद कुछ देर पहले बज चुका था. चाय की गुमटी को देखकर ऐसा ही ख्याल बनता है.

लाला शायद दरवाजे पर रुककर कोई और नया सिलसिला शुरू करता लेकिन विनायक ने एकदम से नमस्कार कह दिया था. उसने पीछे मुड़कर नहीं देखा था लेकिन समझ गया था, लाला को ठोकर-सी लग गई. वह जल्दी से ताला खोलकर अपने कमरे में घुस गया था.

●●

पीले रंग का एक मकान . पीले रंग का पता अब कम ही चलता है. ज्यादातर हिस्सों में पलस्तर गायब है. कुछ कमरे बने हुए हैं. ये खोह-से लगते है. बाहर एक ईंट की चारदीवारी भी कभी बनी थी. अभी भी कहीं-कहीं ईंटें वगैरह उस अतीत की गवाही देती हैं. मकान के ठीक सामने बोर्ड लगा हुआ है—नगरपालिका जूनियर हाई स्कूल, कर्नलगंज. अन्तिम शब्द नीचे और पहली लाइन के बीचोंबीच लिखा हुआ था. इस मकान में मकड़ों के जाले तो ख़ैर होंगे ही, बरसात में पानी टपकने का इन्तजाम भी होगा. इतनी दूर से ही इसे देखकर कोई भी बता देगा, इन्जीनियर बुलाकर जाँच-

पड़ताल की जरूरत नहीं पड़ेगी. यह अगर मकान न होता तो जरूर ही सरकार इसे उठाकर अजायब घर में ले जाती.

घुसते ही सामने जो कमरा पड़ता है, उसके दरवाजे के साथ टीन का एक नेम-प्लेट लगा हुआ है. विनायक ने पढ़ा -- जनार्दन दास, हेडमास्टर. अन्दर से डांट-डपट की आवाज़ आ रही थी. मिमियाने की-सी आवाज़ में शायद कोई कुछ कहने की भी कोशिश कर रहा था, लेकिन उसके बारे में खास कुछ पता नहीं चल रहा था. विनायक ने बाहर खड़े होकर दो-ढाई मिनट इन्तज़ार किया. स्कूल का वक्त नहीं हुआ था. आधा घण्टा बाक़ी रहा होगा लेकिन कुछ बच्चे और एक-आध मास्टर आ गए थे. हेडमास्टर के कमरे के सामने इस तरह खड़े रहना इन लोगों के दिमाग में कई सवाल पैदा कर रहा था. आख़िर में उसने कलाई की घड़ी देखी और चिक उठाकर अन्दर घुस गया.

जनार्दन बाबू का चेहरा पत्थर की तरह कठिन था. कोने की तरफ़ दुबका-सा बड़ा आदमी शायद दफ्तरी वगैरह था. चेहरे-मुहरे से ऐसा ही लग रहा था. या फिर प्राइमरी सेक्शन का मास्टर भी हो सकता है. दफ्तरी और प्राइमरी सेक्शन के मास्टरों के चेहरों में शायद कोई फ़र्क होता ही नहीं है. अगर कोई फ़र्क दिखता है, तो वह ऊपर का मुलम्मा-भर होता है.

जनार्दन बाबू एकदम वदल गए थे—आइए-आइए. अपनी बत्तीसी दिखाकर उन्होंने स्वागत किया था. चेयरमैन के आदमी को इतना तो ख़ैर करना ही पड़ता है. दुबका हुआ कोने में खड़ा वह आदमी मौका पाकर बाहर निकल गया था. निकलकर उसने आने वाले को खूब दुआएं दी होंगी.

विनायक सामने ही कुर्सी पर बैठ गया. जनार्दन बाबू का चेहरा ही कुछ ऐसा है कि उम्र का पता नहीं चलता. पैंतालीस से पचपन के बीच उम्र कुछ भी हो सकती है. सर पर बाल कभी ज़रूर थे लेकिन अब हाल दिल्ली के रामलीला मैदान की तरह है. हां, कनपटियों के पास दोनों तरफ़ दो सफेद गुच्छे जरूर मिल जाएंगे. चेहरे की पेशियों से लगता है, कभी कुश्ती वगैरह का भी शौक रहा होगा.

जनार्दन बाबू बोल रहे थे—वेलकम टू दिस स्कूल फैमिली.

—शुक्रिया.

—हां आप ज्वाइनिंग रिपोर्ट दे दीजिए. यह पहला काम है.

जनार्दन बाबू ने बगल के कमरे से बाबू को बुलाया और एक फार्म भरवाकर विनायक के दस्तखत के साथ उन्हें थमा दिया.

—इस स्कूल में, दरअसल, हम लोगों को मिलकर कुछ कर ही डालना चाहिए. आप भी जरूर ऐसा सोचते होंगे लेकिन, साब, ऐसा नहीं होगा. जनार्दन बाबू एकदम गम्भीर होकर नाटक के पात्र की तरह रुक गए थे.

विनायक इसके जवाब में कहने लायक कुछ ढूंढ़ रहा था.

—नहीं समझे न ? जनार्दन बाबू ने ठहाका लगाया. थोड़ी देर पहले यही आदमी इतना कठोर दीख रहा था, कोई मान लेगा ?—हां तो जनाब, यह इलाहाबाद है, प्रयाग नगर. यहां सारा मामला ही टेढ़ा है. आप अगर खूब दिलचस्पी से पढ़ाते हैं तो कहने वाले कहेंगे, लौंडों को किस्सा-कहानी बताता है. बाद में ट्यूशन में फांसेगा. अगर आप कोई कल्चरल प्रोग्राम करना चाहते हैं, तो वही लोग कहेंगे, तबलचियों और नचैयों को बुला लेने से स्कूल की शान तो नहीं बढ़ जाती ! और मान लीजिए टीचर्स मूवमेंट में शरीक होते हैं तो वे ही लोग कहेंगे—अब लीडरी पर उतर आया. जनार्दन बाबू पान की पीक थूकने के लिए पांच सेकेण्ड रुके—अब आप ही बताइए, आदमी जा कहां सकता है ? वैसे आप अपने-आप ही लोगों को समझ जाएंगे लेकिन मैं सिर्फ एक

आदमी के बारे मे बता देता हूं—भगवती बाबू के बारे में थोड़ा होशियार रहिएगा. आप प्रोफेसर बैनर्जी के ख़ास आदमी हैं, इसलिए बता देना फर्ज़ समझ रहा हूं.

घण्टी लग गई थी.

विनायक कुर्सी छोड़कर उठा.

जनार्दन बाबू ने तब दराज में से निकालकर टाइमटेबिल थमा दिया था. हिदायत दी थी—बिल्कुल बेधड़क क्लास में घुसिए, आपको सेवन्थ और एट्थ के ही क्लासेज़ दिए हैं सिर्फ. मैं भी राउण्ड पर आऊंगा. कहीं कोई दिक्कत हो तो बेहिचक कहिएगा. पीठ की चमड़ी खींच लूंगा. उन्होंने टेबल के ऊपर पड़े बैंत की तरफ़ इशारा किया था.

●●

चार पीरियड के बाद आधे घण्टे का रिसेस हुआ.

सांवला-सा एक लड़का सामने आया और अपना परिचय दिया—मैं हूं बलभद्र सिंह. हिन्दी और संस्कृत पढाता हूं. आप शायद मिस्टर वी. नायक है ? उसने फिर हाथ मिलाया था.

—विनायक हूं.

बलभद्र ने फिर दूसरे मास्टरों के साथ परिचय करा दिया था. वह भगवती बाबू को ढूंढ़ रहा था. लेकिन लगा, वह छुट्टी पर है या इस वक्त यहां मौजूद नही है.

—आप सुना है, ट्रेड यूनियन वगैरह मे रेगुलर वर्क करते रहे है. अब टीचिंग में आए हैं, थोड़ी दिक्कत हो शायद. गणित और भूगोल पढ़ाने वाले कृपानन्दन ने कहा. इस छोटी-सी बात से जाहिर हो गया, यह आदमी तेज़ किस्म का है.

—दिक्कतें तो वहां भी बहुत थीं···

—जी हाँ, मालूम है. सुबह प्रोफेसर बैनर्जी से मुलाकात हुई थी तो उन्होंने आपकी तारीफ़ बता दी थी.

—देखिए साब, हम लोग तो अब सिर्फ मास्टर होकर रह गए हैं. स्कूल में सुबह से लेकर शाम तक बक-झक करना. फिर ट्यूशन में जुटना और आखिर में दाल-रोटी खाकर चैन की नींद सोना. बलभद्र बोला.

—मैं इस प्रोफेशन में इतना नया हूं कि जोर देकर कुछ कहना शायद मुनासिब नहीं होगा. लेकिन एक बात तय है कि हम में से ज़्यादातर लोग एस्केपिस्ट हैं. चाहे वे टीचर हों, चाहे क्लर्क या दूकानदार. यह चैन की नींद सोना इज़ नथिंग बट एस्केपिज़्म.

—ग्रैण्ड. बलभद्र लगभग उछल पड़ा—बड़ी सटीक बात कही है आपने. उसे उम्मीद नहीं थी कि स्कूल में घुसते ही कोई नया आदमी इतनी तल्खी से बात कर लेगा.

खिड़की के पास कुछ अलग-सा बैठकर एक लड़का रजिस्टर की हाजिरी ठीक कर रहा था, मुरली मनोहर. उसे शायद यहाँ हो रही बातों की कोई परवाह नही थी. कम-से-कम उसका चेहरा देखकर ऐसा ही लगता है. रंग कुछ गेहुंआ-सा है लेकिन आँखें बड़ी-बड़ी हैं. काफी कुछ गहरी भी.

कृपानन्दन ने मुरली को पुकारा—तुसने सुना ही नही, मुरली, विनायक साब क्या कह रहे हैं···

मुरली ने रजिस्टर बन्द कर दिया, चेहरे से जाहिर होता है, उसने यहां हो रही बातें सुनी ही नहीं हैं.

कृपानन्दन ने थोड़ा विस्तार से परिचय दिया—कामरेड मुरली मनोहर प्रसाद

सिंह. पहले बिहार में थे, पटना के पास कोई सोहसराय कस्बा है, वहां. आजकल यहाँ पढ़ाते हैं और झूमी वगैरह जाकर किसानों को हिन्दुस्तान का नक्शा समझाते हैं.

—तुम यार ईडियट ही बने रहे. मुरली ने अपनी कुर्सी खिसका ली थी—मज़ाक करने की सोची होगी लेकिन बेवकूफी कर रहे हो.

कृपानन्दन चुप हो गया.

—मैं, दरअसल, छुट्टियों में गांवों में चला जाता हूं. वहाँ किसान से लेकर पटवारी तक हरेक से बातें होती हैं. सारी बातें काम की ही होती हों, ऐसा तो नहीं है. लेकिन यह तमाम सिलसिला बहुत जरूर हो गया है. कृपानन्दन दोस्त है इसलिए मजाक कर रहा था.

—आप अकेले जाते हैं ? विनायक ने पूछा.

—ज़्यादातर अकेला ही जाता हूं लेकिन कभी-कभी भगवती बाबू भी जाते हैं, कृपानन्दन वगैरह भी कभी-कभी चले जाते हैं. खैर यह तो दूसरी बात है. यह बताइए कि हम लोग इस माहौल में इतना कुछ महसूस करने के बावजूद कुछ कर क्यों नहीं पा रहे हैं ?

—महसूस बहुत थोड़े लोग करते हैं. फिर उनके महसूस करने की भी सीमाएं होती हैं. फिर महसूस कर चुकने के बाद जब जोखम उठाने का सवाल आता है, आधे से ज़्यादा लोग वहीं से वापस आ जाते हैं.

—राइट. लेकिन ऐसा क्यों होता है ? विनायक ने देखा मुरली की आँखों में आग-सी जल रही है.

—क्योंकि हममें से ज़्यादातर लोगों के पास क्रांति की कोई तालीम नहीं है. जो इसे समझते हैं, उनमें एक ख़ासे हिस्से के पास सिर्फ अधूरी तालीम ही है, लिहाज़ा बुनियादी तबदीली को लाने के लिए जितने लोगों की ज़रूरत हमें है, वे नहीं है.

वर्माजी ऊँघ रहे थे. क्लास में भी उनका यही हाल रहता है. बच्चों को इतिहास पढाते-पढ़ाते ऊँघने लगते. फिर इकट्ठे आवाज़ मिलाकर कुछ पढ़ने का हुक्म देकर झपकी-सी ले लेते. इस कोरस की वजह से उन्हें कभी कोई दिक्क़त नहीं हुई. कई दफा तो ऐसा हुआ कि जनार्दन बाबू क्लास में आ घुसते और उन्हें देखकर लड़कों का कोरस रुक जाता. वर्मा जी फिर हड़बड़ाकर उठ खड़े होते.

वर्माजी विनायक की बात खत्म होते ही ज़रा चुस्ती से बैठ गए—भई, आप लोग तो कुंवारे हैं, जो मर्जी कर लीजिए. लेकिन हमें तो कई बातें सोचनी पड़ती हैं. गृहस्थी ऐसे थोड़े ही चलती है.

बलभद्र ने मेज पर मुक्का मारा—शाब्बाश वर्माजी. अब आपको देखकर हममें से जो कुंवारे हैं, शादी का फैसला कर लेंगे. मेरे कहने का मतलब है कि शादी करने की प्रेरणा मिल रही है.

पूरा स्टाफ रूम ठहाकों से गूंज उठा था.

वर्माजी भी इस गूंज में शरीक हो गए.

लेकिन वर्माजी हार कहाँ मान सकते हैं ? मुरली को समझाने की कोशिश की—लो भई हंस लो लेकिन जगन्नाथ वर्मा का सवाल ही तुम लोगों ने नहीं समझा.

बलभद्र बोला—अब आगे कुछ मत पूछिएगा, वर्माजी. वरना हम लोग इकट्ठे फेल हो जाएंगे.

मुरली ने सिलसिला बदल दिया—मैं कोई पांच सालों से लगातार गांव जा रहा हूं. कभी-कभी लगता है कि एकदम से कुछ भी हो जाएगा. यानी यह कैसे मुमकिन हो सकता है कि एक आदमी लगातार मार खाकर आख़िर में मारने वाले की

तमाम शर्तें मंज़ूर कर लेता है ? कभी लगता है, वह एकदम से बाग़ी हो गया और सिर्फ अपनी शर्तों पर ही जिएगा. लेकिन फिर ड्रामे की तरह सबकुछ पलट जाता है.

—इस स्कूल में भी यही हो रहा है. कृपानन्दन बोला.

—हमारी मानसिकता इससे अलग थोड़े ही है ? विनायक ने पूछा – एक सीधा-सा सवाल है. आख़िर हम क्यों समझौता करते है ? समझौते का मतलब तो यह हुआ कि अपनी शर्त पर नहीं जी रहे हैं.

--बीकॉज़ वी वांट टू एवायड सम हार्ड फैक्टस्. मुरली ने जवाब दिया.

—क्यों ?

—उनमें कुछ दिक़्क़तें होंगी, तकलीफें होंगी. आराम फर्माना कौन नहीं चाहता ?

—दिस इज़ द एन्सर. विनायक बोला - सुविधा की यह तलाश ही आदमी को क्रांति से दूर ले जाती है. यह सुविधा अगर सुविधा ही है तो एक या कुछ लोगों को सिर्फ हो सकती है, सबको नहीं. और अगर सबको है तो बस थोड़ी देर के लिए ही हो सकती है, हमेशा के लिए नहीं. मेरा मतलब ज़्यादातर लोगों को हमेशा या कम-से-कम एक लम्बे वक्त के लिए सुविधा सिर्फ क्रांति ही दे सकती है.

- कभी झगी चलिए मेरे साथ. किसानों को आपसे काफ़ी फायदा हो सकता है. जब कभी भगवती बाबू जाते हैं, बहुत उत्साह आता है. यह मुरली था, विनायक के प्रति.

कृपानन्दन ने एक सुझाव दिया—हम लोग अगले हफ्ते एक मीटिंग करते हैं. स्कूल के मिसमैनेजमेण्ट के लिए सोचकर कुछ तय करना चाहिए.

वर्माजी उठ गए थे.

बलभद्र बोला टेपरिकार्डर हैं. सारा उगलने गए होंगे.

—कहां ? विनायक ने पूछा.

—साऽऽहब को. कृपानन्दन हंस पड़ा— आदरणीय हेडमास्टर महोदय के यहां. उनके कुछ और कृपा-पात्र हैं. वे लोग एक दूसरे स्टाफ रूम में बैठते हैं. यह जगह हम लोगों के लिए है.

मुरली बोला कल शायद भगवती बाबू आ जाएंगे. फिर मीटिंग का एजेण्डा तय करेंगे, ही इज़ आवर सेक्रेट्री. संक्षेप में विनायक को उसने समझा दिया.

—पिछली बार की तरह जनार्दन बाबू अपनी ही कमीज़ फाड़ना शुरू कर दें तो ? बलभद्र ने एक पुराना किस्सा उठाया—उन्हें जब बहुत गुस्सा आ जाता है और कहने को कुछ नहीं मिलता तो अपने ही कपड़े फाड़ने लगते हैं. उसने विनायक को समझा दिया.

—फिर ?

— फिर क्या ? बस मामला वहीं खत्म हो जाता है.

— दिस इज़ क्रिमिनल. विनायक पहली बार उत्तेजित हुआ—इतनी-सी बात पर आप लोग चुप्पी साध लेते हैं ?

जनार्दन के अन्दर तकलीफ़ों, दिक़्क़तों के अलावा और क्या है ? चाहे औलाद हो, चाहे बीवी, सबके अपने-अपने राग हैं. लेकिन जनार्दन दास की ज़िन्दगी शुरू हुई थी पंसारी की दूकान में सौदा तोलने के काम से. तब से अब तक बीसियों धंधे किए. सच अगर बोले तो झूठ भी उससे सौ दफ़ा ज़्यादा ही बोले होंगे लेकिन लगन से कभी हटे नहीं. प्राइवेट पढ़कर, मजदूरी कर, फाकाकर कहीं आज गुज़ारे लाइक कोई मुकाम मिला है. ऐसा आदमी अगर इस उम्र में आकर अपने ही बीवी-बच्चों से थोड़े से सुख-

चैन की उम्मीद रखे तो यह गुनाह है क्या ?

मामला दरअसल, दासियों साल पहले हुआ. तब जनार्दन प्राइमरी सेक्सन के एक मास्टर-भर थे. उस वक्त का फोटो देखो तो लगता है, जज-मजिस्ट्रेट से कम क्या होगा ! उन दिनों दूर के रिश्ते का एक साला आया था. ममेरा या मौसेरा साला जैसे कुछ था लेकिन था बहुत दिलेर. सण्डिला से इलाहाबाद गंगा नहाने आया था. सिर्फ सात दिन रहा था यहाँ लेकिन इतने छोटे-से अर्से में ही घर की रंगत बदल गई थी. खूब खर्च किया था और खाया-पिया था. रिश्ता तो खैर जो कुछ था सो था ही लेकिन दोस्त बड़े मज़े का था.

जनार्दन की बीवी को इतना सब पसन्द नहीं आया था. भाई ज़रूर है दूर के रिश्ते का-लेकिन उसकी आदतें कुछ ऐसी हैं कि किसी से ज़िक्र करने में भी शर्म आती है. सण्डिला में कपड़े की एक दूकान है और जेब में ज़रूरत के मुताबिक पैसे. रिश्ते-नाते में कहीं भी ब्याह-शादी हो तो वह हाज़िर है. फिर जवान लड़कियों के साथ कुछ ऐसे फिसाद होते कि वे न तो उगल पातीं न निगल पातीं.

जनार्दन को इस बारे में थोड़ी-सी जानकारी ज़रूर थी लेकिन उन्होंने इस बात को खास अहमियत नहीं दी थी. संसार में हर कोई भीष्म पितामह होकर तो पैदा नहीं होता ! बारीकी से छानो तो फिर शायद कोई भी आदमी बचेगा ही नहीं.

इस साले के आने के साथ ही जनार्दन रास्ता थोड़ा बदल गया था. जनार्दन ने एक दिन कहा भी था—-रमेशजी, झटका-सा लगता है. कुछ समझ में नहीं आता.

रमेश हँसा था—मास्टर हो न. हमेशा बाकी लोगों को सिर्फ लौंडे-लपाड़े ही समझते आये हो. थोड़ा मन को खोलो. देखोगे, तुम्हारे मदरसे के अलावा भी दुनिया है, एक बहुत बड़ी दुनिया

रमेश ने बचपन में शादी एक बार ज़रूर की थी लेकिन छह महीने के अन्दर बीवी मर-खप गई थी, बस दुबारा शादी वगैरह के झंझट में पड़ा ही नहीं. फिर वक्त गुज़रता गया. कपड़े की दूकान खूब फल-फूल गई. काम करने के लिए यार लोग भी रख लिए. अब सिर्फ फुर्सत ही फुर्सत. फिर चार यार-दोस्तो ने मिलकर एक नौटंकी मंडली बनाई और रात-रात भर लोगों को तमाशा दिखाते रहे. पीने-वीने की आदत तभी से पड़ गई थी. सच या झूठ कौन जाने लेकिन लोग कहते हैं, तभी से वह आदमी बर्बाद हो गया. चार-छह औरतों के साथ जुड़ने और दगा देने के किस्से भी उसके बाद लोग सुनते-सुनाते रहे हैं. रमेश के साथ खासियत यह है कि उन औरतों में कुल-वधू से लेकर रण्डी तक हर चीज़ थी.

यहाँ इलाहाबाद आया तो खद्दर की धोती-कुर्ते में बहुत फबा था. जनार्दन की बीवी को लगा था शायद वक्त ने भाई को बदल दिया है. चेहरे पर सुथरेपन की जो चमक थी, जनार्दन भी वह देखकर मान गया था कि हर सुनी हुई बात हमेशा सही नहीं होगी.

रमेश की बीवी ज़रूर गुज़र गई थी लेकिन ससुराल वाले कहीं अगर मिल जाते, वह एक बार फिर से पुराने रिश्ते को याद कर लेता. वैसे कभी ऐसा नहीं हुआ कि खत वगैरह क़ायदे से लिखे और भेजे गए हों लेकिन पुराना आदमी कभी टकराता है तो उसे अच्छा ही लगता है.

यहां कीटगंज में कोई मौसरे ससुर पहले रहते थे. रमेश ने ढूढ़-ढांढ़कर पता निकाला और पहुंच गया. मकान ज़रूर मिल गया था लेकिन दो बरस पहले ससुर का स्वर्गवास हो चुका था. उससे एक बरस पहले उनके बेटे की मौत ट्रक से टकराकर ऐक्सीडेण्ट से हो गई थी. अब घर में सास थी और एक बहू थी.

रमेश ने उस दिन अपनी बरसों पहले हुई शादी का ज़िक्र किया था और देर तक हंसी-मज़ाक मे मशगूल रहा था. साथ जनार्दन भी थे. जनार्दन की वैसे इस तरह चुटकुलेबाज़ी की आदत नहीं है लेकिन मज़ा उसे भी खूब आया था. रमेश के गुज़रे हुए मौसरे साले की बीवी है बिजली. बिजली के साथ जनार्दन की खूब पट गई थी.

बहुत खूबसूरत तो ख़ैर, बिजली को कोई नहीं कहेगा लेकिन आंखें बड़ी कातिल हैं. कम-से-कम जनार्दन को ऐसा ही लगा था. तब से बिजली ने ऐसी बिजली गिराई कि जनार्दन तेज़ी से बदलता गया.

उस शाम रमेश ने मीरगंज का भी चक्कर लगाया था. यह इलाहाबाद का मशहूर बाज़ार है, चौक के इलाके में. शाम होते ही यहां हुस्न बिकता है. मीरगंज का इधर से सौ-दो सौ मील तक नाम है. जानने वाले कहते हैं, कई दफ़ा कलकत्ता-बम्बई से भी नायाब चीज़ यहां मिल जाती है.

रमेश की यह पुरानी आदत है.

जहां भी किसी नए शहर-कस्बे में जाओ तो सबसे पहले मौज-मज़े का ठिकाना ढूंढ़ो. वैसे हर बार ठिकाना उसे ढूंढ़ना नहीं पड़ता है. इतने मशहूर इलाकों के नक्शे एकदम दिमाग में लिखे होते हैं.

लेकिन जनार्दन उतना नही बढ़ पाया था.

मन ही मन एक बार ज़ोर ज़रूर लगाया था पर संस्कार आड़े आ गया. वैसे भी पहली बार थोड़ी-सी पी थी. थोड़ा-थोड़ा असर होने लगा था. और फिर आख़िर में कही किसी के दरवाज़े पर वाक़ई गिर पड़ा तो ख़ासा तमाशा हो जाएगा.

रमेश ने मज़ाक किया था—मास्टर, तुम मदरसे में ही क़ैद रहे.

जनार्दन हंसा था. वेवकूफ़ की तरह.

—हां, एक बात का ख्याल रखना···

खुमारी के बावजूद जनार्दन ने आंख उठाई थी—दस बात बोलो.

—कहीं बिजली को भी हिसाब और दोहे-चौपाई पढ़ाने लग गए तो समझो···

जनार्दन ने बीच में ही उसे रोक दिया था—अब तो तुम्हीं समझोगे !

दोनों फिर देर तक हंसते रहे थे.

जनार्दन एक चाय की दूकान पर बैठकर अख़बार पढ़ते रहे और चौक के घण्टाघर की घड़ी के कांटों का घूमना देखते रहे. आधे घण्टे में रमेश लौट आया था. चेहरे पर क़िला फतह करने की एक अजीब-सी खुशी थी.

—क्या नफीस हुस्न है इलाहाबाद का ! तुमने तो, मास्टर, ज़िन्दगी का कोई मज़ा लूटा ही नहीं. रमेश ने आंखें बन्द कीं और इत्मीनान से बोल गया.

जनार्दन हंसे थे—तुम्हारी जीजी को पता हो जाए तो फिर मज़ा तो तब आएगा. सेकेण्ड वर्ल्ड वार में मुसोलिनी का क्या हाल हुआ था मालूम ? वही हाल मेरा होगा. रमेश ने गर्दन हिलाई थी. लेकिन गर्दन चाहे जैसे भी हिले मुसोलिनी और सेकेण्ड वर्ल्ड वार क्या हैं, उसे नहीं मालूम. इतना ज़रूर मालूम है कि पढ़े-लिखे लोग कई दफ़ा ऐसी बातें बोल देते हैं, जिनके मतलब जाने जा सकते हैं लेकिन उनसे बेह-तर शायद पत्थर से सर फोड़ लेना ही होता है.

रमेश सात दिन बाद ही सण्डीला लौट गया था.

लेकिन यहीं मामला कहां ख़त्म होता है ? क़िस्से की शुरूआत ही यहां से है.

●●

जनार्दन की बीवी यानी सीता को शुरू से ही थोड़ा शक पड़ गया था. लेकिन

छह महीने तक वह कुछ नहीं बोली थी. मर्द एकबार अगर हाथ से छूट गया तो फिर पकड़ में मुश्किल से ही आता है. लेकिन कसाव अगर ज़रूरत से कहीं ज्यादा हो तो रस्सी टूट भी सकती है. सीता पढ़ी-लिखी ज़रूर नहीं थी लेकिन इतनी समझ उसे थी.

लेकिन कोई सब्र करे भी तो कब तक ?

आख़िर में सीता ने अपनी एक रिश्ते की मामी को बुलाकर सबकुछ सुनाया था. मामी कहीं गाज़ीपुर में अपने बुढ़ापे के दिन गुज़ार रही थीं. उन्हें तंत्र-मंत्र कुछ आता था. सुनने में आता है, मामा भी शुरू में ज़रा खुली-सी आदत के थे लेकिन मामी ने झाड़-फूंक से ऐसा बांध रखा था कि कहीं हिलते ही नहीं थे. प्रयाग में गंगा नहाने का नेवता और आने के लिए रेल का किराया मिला तो वह दौड़ी-सी चली आई थी.

जनार्दन ने इस ममेरी सास को पहली बार देखा. जिस्म कुछ भारी ज़रूर दिखता है लेकिन अभी भी गठा हुआ है. उम्र के साथ चर्बी का हिस्सा थोड़ा बढ़ा होगा लेकिन हड्डियां खोखली नहीं लगीं.

सीता ने मामी के पैर पकड़ लिए थे—अब बस तुम्हीं कुछ कर सकती हो. मैं तो लुट गई.

मामी ने आश्वस्त किया था—पिल्ले की तरह देखियो तेरे पीछे-पीछे फिरता रहेगा.

—तुम्हारे मुंह में घी-शक्कर, मामी.

मामी यहां कोई एक महीना रही और घी-शक्कर निगलती रही. हर दूसरे दिन संगम जाकर गंगा-जमना के पवित्र जल में डुबकी भी लगा आती लेकिन जनार्दन बस पिल्ला ही नहीं बना.

जनार्दन शाम होते ही कीटगंज की तरफ भागता.

और जब तक लौटता रात काफी गहरी हो चुकी होती.

शुरू-शुरू में सिलसिला रोज़ का नहीं था. फिर वक्त आगे को खिसकता रहा और जनार्दन भी.

बिजली की सास की आंखों में रोशनी पहले भी बहुत नहीं थी. फिर जवान बेटा मरा तो लगभग अंधी हो गई. ज्यादातर वक्त पूजा वाली कोठरी में बीतता. बाक़ी बचे वक्त साथ के कमरे में अपने बिस्तर पर पड़ी रहती.

आख़िर में सीता ने मामी को गाज़ीपुर वाली गाड़ी में बिठा दिया था. लेकिन कोई बटेसर बाबा मिले थे तो उन्होंने लगभग ऐसा ही एक रास्ता बता दिया था.

सीता तब से सिंदूर और रुद्राक्ष के साथ महाकाली बनी हुई है. घर के एक कोने में सिंदूर से रंगे चंद पत्थर हैं और उन पर छितरे हुए गूलर के लाल-लाल फूल हैं. सीता काली साड़ी पहनती, माथे पर सिंदूर पोतती और गले में रुद्राक्ष की माला डालकर बटेसर बाबा के अबोध्य मंत्र का जाप करती रहती. बीच-बीच में चीख पड़ती और तुरन्त बाद ठहाका मारने लगती. आंखें एकदम सुर्ख. जनार्दन की तरफ़ देखती है तो लगता है, चमड़ी को पारकर हड्डियों में कुछ ढूढ-सी रही है.

रात गहरी होती है और सीता की आंखों में लाल डोरे की चमक उतरने-सी लगती. उसका दुर्बोध्य उच्चारण फटने-सा लगता. उस वक्त अगर कोई सामने पड़ गया तो खैर नहीं. वह उसके बालों को मुट्ठी में पकड़ लेती और फिर कड़ाके की आवाज़ में अट्टहास्य.

कभी-कभी जनार्दन को इस औरत पर रहम आता है.

लेकिन बिजली अपनी जगह पर है. उस औरत ने लिया क्या यह तो जनार्दन को नहीं मालूम, लेकिन जनार्दन भर-सा गया है. कभी-कभी लगता है ज़माने को लात मारे और बिजली को लेकर छोटा-सा एक घर बसाए. लेकिन इसके लिए शायद बिजली ही तैयार नहीं होगी. कभी-कभी वह जब संजीदा हो जाती है, जनार्दन को डर लगता है. लगता है, जनार्दन की आंखों में यह अपने गुज़रे हुए पति को ढूंढ रही है.

एक ही बेटा है जनार्दन का. अक्षय. हाईस्कूल तीन बार की कोशिशों से किसी तरह थर्ड डिविजन में पास हो गया था लेकिन फुलस्टाप वहीं लग गया था. इण्टर में नकल करते हुए पकड़ा गया था. तीन साल के लिए एक्सपलशन हो गया था. पकड़ा अगर नहीं भी जाता, तो भी पास वह नहीं ही हो पाता. खैर, पढ़ाई उसने तभी छोड़ दी थी. तब से फिल्म में हीरो बनने के चक्कर में है.

शाम होते ही बिल्कुल नए कट का कोई रंगीन शर्ट पहनेगा और उसके मुकाबले का पतलून चढ़ाएगा, बालों को, जो लगभग कँधे तक लम्बे हैं, अपने ही तरीके से कंघा कर सिविल लाइन्स की तरफ की सड़कों का चक्कर लगाएगा. कोई लड़की दिखेगी तो सिग्रेट का धुआं उंडेलकर कोई डायलॉग सुना देगा. जेब में कुछ पैसे हुए तो कॉफी हाऊस घुसकर अपने किसी यार से इश्क के गढ़े हुए किस्से सुनाएगा.

एक दफा अपनी मां का कंगन हथिया लिया था उसने. फिर काशी एक्सप्रेस से सीधे बम्बई पहुंचा था. सोचा था, हीरो बनकर जब पर्दे पर लड़कियों को छेड़ेगा, तब इलाहाबाद की ये लड़कियां ठंडी सांसें भरेंगी. लेकिन चिड़िया अगर उड़ गई तो उड़ ही गई. बाद में पिंजरे में ताला लगाओ या अफसोस जाहिर करो—दोनों के बीच कोई फर्क नहीं है.

फिर महीना-भर से पहले ही जब लौटकर आया था, सीता को अपने बेटे को पहचानने में दिक्कत हुई थी. रंग उतर कर सांवला हो गया था. चेहरे पर सिर्फ जबड़ों की हड्डियाँ-भर रह गई थी.

इसके बाद अक्षय ने और भी पटाखे छोड़े.

एकदफा सिविल लाइन्स में शाम के वक्त डायलाग झाड़ रहा था कि चार-छह मुस्टंडे आए और वहीं पर पटरा तना दिया. दिमाग में थोड़ी गड़बड़ी हो गई थी. जिस लड़की को देखकर डायलाग झाड़ रहा था, क्या मालूम था, वह पटाखों को तो फूंक कर उड़ा सकती है. बम वगैरह से कम से उसकी दिलचस्पी नहीं होगी. तब अक्षय ने नहीं समझा था.

हॉस्पिटल में पूरे पन्द्रह दिन लगे थे. वैसे बात फिर पूरी तरह समझ में आ गई थी.

सिविल लाइन्स में चार यार-दोस्तों के साथ घूमता हुआ अक्षय दिखाई आज भी देता है लेकिन पैंतरे अब पुराने वाले इस्तेमाल नहीं होते. दोस्तों से से जब तक कोई लड़की के बारे में आश्वस्त नहीं कर देता, वह सिग्रेट का धुआ नहीं उडेलता.

वैसे बनाए हुए अफसाने सुनाने का सिलसिला वही था.

कॉफी हाऊस में बैठकर पकौड़े खाना, कॉफी की चुस्की लेता और धीरे-धीरे अपना प्रेम-प्रसंग सुनाता. सिर्फ वही नहीं, बाक़ी लोग भी सुनाते. लेकिन हर कोई जानता है कि यहाँ कोई सच बोल ही नहीं रहा है. फिर भी वे देर तक सुनते-सुनाते रहते. कभी-कभी तो अन्दर बत्तियाँ बुझने लगती तो ही वे उठते.

कई दफा जनार्दन बाबू रात को घर लौटते है तब तक अक्षय का पता ही नहीं रहता. फिर उसके भारी बूट की खट्-खट् की आवाज़ से पता चलता कि हज़रत आ गए है. लेकिन जनार्दन बस करवट-भर बदल लेते. कुछ कहने के लिए अन्दर से जो

ताक़त मिलनी चाहिए, वह मिलनी ही नहीं.

उतनी रात में भी गीता का अबोध्य उच्चारण सुनाई देना.

जनार्दन लम्बी सांस भरकर सोने की कोशिश करते हैं फिर, और कुछ नही होता. इस पुराने सिलसिले में नया और हो भी क्या सकता है ?

●●

शाम को यूं कोई प्रोग्राम नही था लेकिन स्कूल के बाद जनार्दन ने कहा था—चलिए घर चलकर चाय पीते है.

विनायक को ट्यूशन पर जाना था. उसने सोचा लेकिन ऐतराज नही किया.

बात ज़बान से निकल गई तो जनार्दन थोड़ा अचकचाने लगे थे. चाय पीने के लिए कहा जरूर था लेकिन हर कहने का मतलब होता है कहीं ? मैने कहा और तुम कोई बहाना बना दो, बस. हो गई छुट्टी. सीता का वह रूप अगर स्कूल का नया मास्टर भी देखता है तब तो फिर सोने में सुहागा. वैसे ही लोग दस बातें कहते हैं, अब दस और जोड़ लेंगे.

जनार्दन को सामने की दुकान से मसाले वगैरह कुछ खरीदने थे. पूरे विनय के साथ सिर्फ़ दो मिनट का वक्त मांगा था लेकिन चार आने का सौदा लेकर जब लौटे, पच्चीस मिनट हो गए थे.

विनायक ने घड़ी देखी थी.

—भई, माफ़ करना, जरा देर लग गई. कमबख्त दुकान वाला कभी अपना ही शिष्य होता था. सो, छोड़ भी नहीं रहा था.

—मुझे ट्यूशन पर जाना है. चाय वगैरह फिर कभी पी लेंगे.

जनार्दन को राहत मिली थी बहुत दिनों बाद बुख़ार उतरने से जैसा लगता है, उन्हें भी शायद वैसा ही महसूस हुआ था बोले थे—चाय तो खैर एक बहाना था. वैसे ही बैठते. गपशप हो जाती. फिर पान की पीक उगल दी थी —खैर चलिए थोड़ी देर आपके साथ चलता हूं. चाय न सही, गपशप तो खैर हो ही सकती है. जनार्दन ने रुककर सांस ली – मैंने आपको पहले ही आगाह किया था. स्कूल का माहौल कोई सुथरा थोड़े ही है. अब फंस गए न उन लोगों के चंगुल में ? जनार्दन खूब जोरों से बनावटी हंसी हंसने लगे थे.

—मुझे फ़ुर्सत ही नहीं मिलती.

—यही तो बात है, समझने की. आपको पता तक नहीं चलेगा और वे लोग आपसे सारे काम करा लेंगे.

—मौसम एकदम बदल गया. विनायक ऊपर की तरफ देख रहा था, आसमान की तरफ.

—हां, आप नहीं समझे न ? अब सुना है, स्टाफ एसोसिएशन की मीटिंग होने वाली है. अच्छा ही है भई, मीटिंग करो, तमाशा करो, हमें क्या ?

—आप फिक्र क्यों करते हैं ? विनायक ने फिर से घड़ी देखी. देर हो रही थी.

—फिक्र क्यों करते है ? जनार्दन ने उसकी पीठ पर धौल जमाई—आप तो साब, एकदम भोलेशंकर हैं. मीटिंग कर मेरे ख़िलाफ रिजोल्यूशन पास करेंगे. मेरा गुनाह ? बस साब, गुनाह यह समझ लीजिए कि मैं हेडमास्टर हूं. कोई दस बांहों वाली दुर्गामाता तो हूं नहीं कि मिनटों में सारे काम भी हो जाएंगे और किसी पर कोई आंच भी न आएगी. बारीकी से देखो तो ब्रह्मा के काम में भी छेद निकल आएंगे, हां. मैं किस खेत की मूली हूं ?

—आप परेशान मत होइए. स्कूल के लोग मंगल ग्रह से आकर यहां आपके ख़िलाफ़ मोर्चा नहीं संभाल रहे हैं. मिल-बैठकर कुछ सोचेंगे. अभी तो मीटिंग होने में दो दिन हैं.

—नहीं साब, परेशान तो यह जनार्दनदास होता ही नहीं. आप नए आए हैं और प्रोफ़ेसर साब के आदमी हैं सो आपको सबकुछ बता भर दिया.

जनार्दन शायद सांस लेकर कुछ और कहते लेकिन विनायक ने मौक़ा नहीं दिया था. कटरा पार कर वह दाईं तरफ़ की गली में घुस गया था. ट्यूशन में कोई आधे घंटे की देर हो चुकी थी.

●●

वर्मा जी थाना और कचहरी के चक्कर में फंस गए.

कोई दसेक बरस से बीवी सिर्फ़ चारपाई पर पड़ी हुई है. एक लड़की है—मृदुला. यूनीवर्सिटी में पढ़ती और लड़कों के साथ आवारागर्दी करती है. वर्मा जी अपनी बेटी के सामने गौ बन जाते. जो कुछ कहने की सोचते हैं, ज़ुबान से बाहर निकलती ही नहीं. लड़की की मां खाट पर पड़ी-पड़ी कराहती रहती. कभी अगर कुछ कहती भी है, वह सब सुनने की फ़ुर्सत इस घर में किसी के पास नहीं है.

यूनीवर्सिटी की मशहूर लड़कियों में मृदुला का नाम आता है.

अजंता स्टाइल में साड़ी बांधेगी और पैरिस के स्टाइल में जूड़ा फिर अगर दिलदार छोकरों का दिल आ गया तो इसमें उनका क्या कसूर ? पांच साल हो गए बी. ए. का दो साल का कोर्स पूरा नहीं हुआ. वैसे फेल सिर्फ़ एक ही बार हुई थी. बाक़ी सालों में इम्तहान में बैठी ही नहीं.

कोई दिलेर लड़का आंख मार देता तो मृदुला कह देती—अभी तो तू दूध पीता बच्चा है···

ऐसे में फिर कोई ठंडी सांसें ही भर सकता है.

एक दफ़ा नैनीताल गए थे यूनीवर्सिटी के लड़के-लड़कियां. दशहरे की छुट्टियां थीं और इस उम्र के लाल-पीले ख़्वाब थे. मृदुला भी साथ गई थी. लौटकर आई तो तरह-तरह के क़िस्से सुनने को मिले.

चरस का मज़ा वहीं पहली बार मिला था.

स्साला इलाहाबाद भी क्या सूखा-सूखा शहर है ! चरस का नाम लो तो यहां वाले चुटिया में गांठ लगाकर पूछेंगे --यह किस वस्तु का नाम है ? वस्तु के बच्चे, तेरी खोपड़ी में भूसा भी नहीं होगा शायद. मृदुला की आंखें लाल होतीं तो दिल भी मचलने लगता है. और आंखें लाल इसलिए होती हैं कि यह उसकी मजबूरी है. चारमीनार का धुआं इसके अलावा कुछ कर सकता है और ?

वर्मा जी को पड़ोस वालों ने बताया भी था, घर की लड़की अगर खूंटे से निकल गई तो हमेशा के लिए धब्बा पड़ गया. कर्नलगंज थाने के सामने जो छोटी-सी चाय की दूकान है, वहां बैठकर वर्मा जी चाय की घूंट भरते और 'परमपिता परमेश्वर' को हर माया और कर्म के लिए ज़िम्मेदार ठहराते.

मृदुला को पुलिस ने गिरफ्तार किया था.

यूनीवर्सिटी के पीछे प्रयाग स्टेशन के पास एक बाबा आदम के ज़माने का मकान है. उसमें चार लड़कों और दो लड़कियों को पुलिस ने गिरफ्तार किया था और चरस बरामद हुए थे.

इलाहाबाद जैसा शहर और चरस का यह अजीबो-गरीब किस्सा ! जो लोग इलाहाबाद को जानते हैं, इस बात पर यक़ीन ही नहीं करेंगे. लेकिन सच आख़िर सच

ही होता है.

ख़बर एक दिन के अंदर इलाहाबाद के चप्पे-चप्पे में फैल गई. जो लोग रोज शाम को कॉफी हाऊस जाकर अड्डा जमाते हैं, चाशनी के इस हादसे को चाटते रहे. रंग-बिरंगी व्याख्याएं देते रहे.

कर्नलगंज के चुंगी स्कूल में भी यह ख़बर आई.

वर्मा जी तब बच्चों को हिन्दुस्तान का नक्शा समझा रहे थे. थाने से जो सिपाही ख़बर लाया था, वह स्कूल के मास्टरों को जानता है. शुरू में कभी उसने भी मास्टर बनने की सोची थी लेकिन फिर इनकी हालत पर तरस खाकर वह तमन्ना वहीं छोड़ दी थी.

वर्मा जी स्कूल छोड़कर थाने में गए.

गिरफ्तार लोगों में दो लड़कियां थीं. दोनों के बाप भी हाज़िर हुए थे. लड़कों के घर से कोई नहीं आया था. शायद इनका कत्ल हो जाता तभी वे आते, इससे पहले नहीं.

वर्मा जी ने मृदुला को देखा और महसूस करने लगे—अड़ोस-पड़ोस का हर कोई तमाशा देख रहा है. परमात्मा में उनका यक़ीन शुरू से ही रहा है. ऐसे मौक़े पर शायद परमात्मा ही याद आता है. चेहरे पर जो कालिख लगनी थी, वह तो, ख़ैर, पहले ही लग चुकी थी, अब पक्की मुहर भी लग गई. एकदम सरकारी मुहर.

गिरफ्तार हुए सभी के चेहरों पर एक खुमारी थी. वे लोग दीवार पर पीठ टिकाए आंखें बन्द किए पड़े थे. लेकिन हालत ऐसी थी कि शायद ज़्यादा देर ऐसे बैठ भी नहीं सकेंगे. लुढ़ककर ज़मीन पर सिर टिका ही लेंगे.

थाने के बाहर यूनीवर्सिटी से सौ-दो सौ लड़के जमा हो गए थे. वे सिर्फ़ तमाशा देखने आए थे. वर्ना कोई दूसरा वक्त होता तो इतने सारे लड़कों को एकसाथ देखकर दरोगा घबरा जाता.

आस-पास के दूकानदार वग़ैरह भी या तो इर्द-गिर्द मंडरा रहे थे या किसी सिपाही से पूछ-ताछ कर रहे थे. सामने प्रभात होटल का चबूतरा है. इस होटल में लोग खाना खाते हैं और ऊपर जो चार-छह खोह-नुमा कमरे बने हैं, उनमें रहते हैं. खाने और रहने वालों में यूनीवर्सिटी के लड़के ही ज़्यादा हैं. शायद एक दफ्तरी बाबू और एक मैडिकल रिप्रेजेण्टेटिव भी है. लोग प्रभात होटल के चबूतरे पर खड़े होकर थाने के भीतर का यह नायाब दृश्य देखने की कोशिश कर रहे थे.

पूरे माहौल में कुल मिलाकर एक सनसनी-सी थी.

वर्मा जी एक कुर्सी पर बैठ गए थे. वह अगर खुद पिट जाते तो भी शायद यह हालत नहीं होती. ऐसे में कोई इसके अलावा सोचेगा भी क्या कि हे धरती मां, तुम दो हिस्सों में बंटो और सीता की तरह मैं तुम्हारे अंदर समा जाऊं.

दरोगा वर्मा जी का स्टेटमेंट ले रहा था लेकिन वह बोल ही नहीं पा रहे थे. गला सूख गया था और जलन-सी महसूस हो रही थी.

थोड़ी देर में जनार्दन भी आ गए थे. आख़िर यह स्कूल के एक मास्टर का मामला है, ऊपर से वर्मा जी. स्कूल में कितनी ही बार तूफान आए, लोग हेड मास्टर पर कीचड़ उछालते रहे लेकिन वर्मा जी ने हमेशा ही साथ दिया है.

दरोगा से सारा मामला सुनकर जनार्दन तय नहीं कर पा रहे थे कि ऐसी हालत में करना क्या चाहिए.

बाहर शायद यूनीवर्सिटी के यूनियन से भी कुछ आधे-नेता क़िस्म के लड़के ख़बर पाकर आ गए थे. कुछ लोग नारा लगा रहे थे—छात्र एकता ! ज़िन्दाबाद !!

मृदुला को शायद थोड़ा-सा होश लौटा था.

वह सामने खड़ी तमाशबीनों की भीड़ को देख रही थी. आंखें सिंदूर की तरह लाल थीं.

●●

कर्नलगंज के इस चुंगी स्कूल की ख़बर रखने की किसे फ़ुर्सत है ? लेकिन यह हादसा ही कुछ ऐसा हुआ कि अख़बारों में वर्मा जी और स्कूल का नाम भी छप गया.

कुछ इत्तफ़ाक़ ही है कि इसी दरम्यान स्कूल के कालीदास चतुर्वेदी का नाम इंसपेक्टर ऑफ़ स्कूल के पास शिकायत के साथ पहुंचा. अधेड़ उम्र के चतुर्वेदी जी में रस-प्रवाह कुछ ज्यादा ही होगा, यह हर कोई जानता था लेकिन आख़िर में ऐसा कुछ हो जाएगा, कौन जानता था ? जनार्दन ने पहले चतुर्वेदी जी का ही पक्ष लिया था. लेकिन इंसपेक्टर है बड़ा जबरदस्त आदमी. वहां का कसाव देखा तो अपनी नौकरी के हक़ में पक्ष बदल दिया था.

कालीदास चतुर्वेदी को शृंगार रस पर विस्तार से बातें करते हुए लोग अक्सर ही सुनते रहे हैं. ख़ूब बढ़िया अचकन, चूड़ीदार पाजामा और टोपी लगाकर वह स्कूल आते. आंखों पर सुनहरे फ्रेम का एक चश्मा चढ़ा रहता और होंठों पर रसीली मुस्कान. आठवें दर्जे के बच्चों को क़ायदे से दोहा-चौपाई के गहरे अर्थ बताने की जरूरत नहीं पड़ती. लेकिन बेक़ायदे ही सही, कहीं शृंगार रस का मामला आता तो वह द्वार तक घुस जाते. लड़कों में से कोई आंख मारकर अपने साथी की तरफ़ इशारा करता और देर तक मजा लेता.

लेकिन मामला कुछ यूं बना कि एक लड़के का बाप जनार्दन से मिलने आया और एक शिकायत का चिट्ठा थमा दिया. चतुर्वेदी जी पर आरोप था कि लड़कों को फुमलाकर वह कहानियां सुनाते हैं और ऐसी हरकतें करते है जो कोई शरीफ़ और साफ़-सुथरा आदमी नहीं कर सकता. स्कूल की छुट्टी के बाद ऊपर के एक कमरे में ऐसा ही एक हादसा हुआ था.

शिकायत वाली बात आग की तरह फैल गई थी.

यह ख़बर भी अख़बारों में छपी थी.

कर्नलगंज का यह चुंगी स्कूल फिर बहुत मशहूर हो गया था.

चतुर्वेदी जी ने जी-तोड़ कोशिश की थी कि साबित हो जाए, यह सब झूठ है. लेकिन साबित आख़िरकार वही हुआ था जो सच था. जिस लड़के के साथ यह क़िस्सा हुआ था, उसके बाप ने भी कोई ढील नहीं दी थी. चतुर्वेदी जी नौकरी से मुअत्तिल कर दिए गए थे और शुरू में उनका साथ देने की वजह से हेडमास्टर को भी चुंगी के अफ़सरों के सामने जवाबदेही करनी पड़ी थी.

●●

स्टाफ एसोसिएशन की मीटिंग.

चार बजे स्कूल की छुट्टी हो गई थी. फिर सामने की तरफ़ वाले स्टाफ रूम में लोग इकट्ठा हुए. भगवती बाबू को क़ायदे से व्यस्त होना था. हुए भी. बलभद्र उनका साथ दे रहा था. उसके पास फाईल थी और अंदर के कागजों को वह निकालता जा रहा था, कुछ पंक्तियों के नीचे लकीरें खींच रहा था.

हेडमास्टर नहीं आए थे. लोग इंतज़ार में बैठे थे. कोई आधा घण्टा बाद जनार्दन आए थे—अरे, तो आप सब आ गए हैं ? मैं जरा पिछले साल के फिनानशियल स्टेटमेण्ट में बिज़ी था……

किसी ने सफ़ाई नहीं मांगी लेकिन सफ़ाई पेश करना जनार्दन दास की पुरानी आदत है. वर्मा जी वगैरह पांच-सात लोग पूरी तरह तैयार होकर कोने की तरफ इकट्ठे बैठे थे. कोई मजाक थोड़े ही है कि जो मर्जी वही कह-सुन लोगे ? आख़िर जवाब हम भी तो दे सकते हैं !

भगवती बाबू उठ खड़े हुए और चार पृष्ठों की अपनी रिपोर्ट पढ़ी. इन चार पृष्ठों में सौ शिकायतें रही होंगी ! जनार्दन बाबू इस बार बिल्कुल उत्तेजित नहीं हुए और पान चबाते हुए एक-एक बात का जवाब देते रहे.

वर्मा जी उठ खड़े हुए—हम लोग आपस में इस तरह तू-तू मैं-मैं करते रहेंगे तो फिर फायदा क्या होगा ?

मुरली मनोहर ने डपटकर वर्मा जी को बैठा दिया था—आप ख़ामोश रहिए वर्माजी. हर चीज हरेक के समझने की नही होती.

वर्माजी आ-ऊ करके बैठ गए थे.

विनायक अब तक सुन रहा था आंखें बंद थी, फिर आंखें खोली और सिलसिला शुरू किया —यह वाकई बहुत सीरियस एलेगेशन है कि अक्सर कुछ लोग स्कूल बगैर छुट्टी लिए नही आते है और हेडमास्टर इस बारे मे ख़ामोश रहते है. मैं पूछना चाहूंगा कि आखिर क्यो ?

—आप अभी टेम्परेरी है. वर्माजी के साथ बैठे हुए लक्ष्मीकांत श्रीवास्तव ने कहा. चेहरे मे वह डाकिया वगैरह कुछ लग रह थे. कुर्ता पहने थे, जिस पर पान की पीक के दाग थे.

भगवती बाबू उठे —यह कोई पार्लीमेण्टरी बात नही हुई. कोई टेम्परेरी है तो है. लेकिन पूछने का हक उसके पास भी उतना ही है, जितना पर्मानेण्ट का.

जनार्दन अचकचा रहे थे—देखिए आप लोग नही समझते है कि हेडमास्टर को किस तरह तलवार की धार पर चलना पडता है. छोटी-मोटी बातों के जवाब मेरे पास है लेकिन उनसे फायदा क्या ? कटुता ही बढेगी···

—चाशनी लगाकर आपके मिसमैनेजमेण्ट को हम चाटेंगे नही. अगर कटुता आती है तो किसी अच्छाई के लिए हम सहेंगे मुरली बोला.

—इसका जवाब आपके पास जो होगा, उसे दूसरे दर्जे तक के बच्चे मान सकते हैं लेकिन हम लोग नही. खैर, आप हफ्ते-भर के भीतर सेक्रेटरी को जवाब दीजिए. हम लोग इंतजार करेंगे. अब दूसरी बात यह है कि लाइब्रेरी में जो किताबें ख़रीदी गईं, उनके दो मसले हैं. बहुत सारी किताबें बिल्कुल फालतू हैं और अन एप्रूव्ड भी. दूसरा मसला है, दूसरे बुक सेलर जहां पच्चीस से लेकर तेतीस परसेंट तक, कभी-कभी इससे भी ज्यादा कमीशन देते है, किताबें उनसे क्यों नही ली गई ? विनायक ने पूछा.

जवाब बलभद्र ने दिया—कमीशन लिया गया लेकिन बिल पर उसका जिक्र नहीं किया गया. यह एक बहुत सीरियस किस्म का घोटाला है और चूंकि इसका रिश्ता एक हेडमास्टर से, एक टीचर से है, मामला और भी सीरियस हो जाता है.

जनार्दन चिल्लाए—इट इज एब्स्यूलुटली फॉल्स.

—इट इज एब्स्यूलुटली ट्रू. मुरली ने पूछा—सबूत चाहिए ?

लक्ष्मीकांत श्रीवास्तव ने कुर्सी की हैण्डिल पर हथेली मारी—आप लोग पढ़ाने आते हैं या जासूसी करने ?

—मस्ती मारने हम लोग नहीं आते हैं. बलभद्र बोला.

जनार्दन फिर चिल्लाए—तो क्या मैं बैठा-बैठा तनख्वाह गिनता हूं ? आप लोग

कहना क्या चाहते हैं ?

विनायक ने उन्हें रोका—आप ख़ामख़्वाह शोर मचा रहे है. श्रीवास्तव जी को इस ढंग से बोलना नहीं चाहिए था. ख़ैर, अब अगला सवाल है, स्कूल में जितनी स्टेशनरी खरीदी जाती है, उसका एक हिस्सा कुछ लोगों के घर तक कैसे पहुंच जाता है ?

—सिर्फ़ इतना ? मेरे पास सबूत हैं कि जिनके यहा ट्यूशन पढाया जाता है, उन्हीं को बाजार से कम भाव पर ये चीजें बेची जाती हैं. भगवती बाबू का चेहरा गुस्से से सुर्ख़ हो रहा था.

वर्मा जी कुनमुनाने लगे थे.

—पता करूंगा. मुझे तो ताज्जुब हो रहा है. जर्नादन हसने लगे थे. यह पहली बार है कि इतनी गर्मा-गर्मी के बावजूद वह अपनी क़मीज नही फाड़ रहे थे. या कम-से-कम उछल-कूद नही मचा रहे थे.

—यू नो एव्री थिंग बलभद्र की आवाज़ तल्ख थी—स्कूल को जहन्नुम में पहुंचाकर आप ऐश कर रहे हैं.

—क्या बोले आप ? जनार्दन कुर्सी छोडकर उठ खड़े हुए

—आप समझ ही गए है. क्यो भाडा फोडवाते है लोग थूकेंगे फिर···

जनार्दन ने सामने की मेज़ को पटक दिया था—मै मास्टर ज़रूर हू लेकिन ज़रूरत पड़े तो गर्दन भी मरोड़ सकता हू.

—सिर्फ़ गर्दन ही मरोड़ सकते है. क्योंकि असल मे आप मास्टर हैं ही नही. मुरली का लहजा लगभग शांत था.

जनार्दन फिर विनायक की तरफ मुडे—यू आर द ब्रेन बिहाईण्ड इट. आपने जिस थाली में खाया, वही छेद कर दिया.

—आपको गलतफहमी हो गई है. आप मुझे बेवकूफ़ समझ रहे है. विनायक अपनी कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा नही हुआ.

जनार्दन बहुत नज़दीक आ गए थे. भगवती बाबू और विनायक के बीच. बगल में मुरली और बलभद्र थे.

लक्ष्मीकात तब तक जनार्दन की बगल मे आ डटे थे. शायद ज़रूरत पड जाए. वह सोच ही रहे थे कि आस्तीन अब खिसकाई जा सकती है···

आख़िर मे एक नाटकीय घटना घट गई.

वर्मा जी नज़दीक आए और मुरली का कॉलर पकड़ लिया—गावो मे रंडीबाजी करने जाते हो, हमें नहीं मालूम ? तुम क्या बोलोगे ? हम ही खोलेगे तुम्हारी पोल. इलाहाबाद मे रहना हराम कर देंगे···

वर्मा जी की बात सत्य होने से पहले ही मुरली ने थोड़ा-सा झटका दिया और वह गिर पड़े. सिर कुर्सी के कोने से टकरा गया था. थोड़ा-सा खून निकल आया था. जनार्दन को इससे बढ़िया मौक़ा और कहा से मिलता ? चिल्लाए—स्कूल को गुण्डागर्दी का अखाड़ा बना रखा है ?एक-एक की ख़बर लेके रहूंगा. शोर-शराबा सुनकर आस-पास के ढेर-सारे लोग ताक-झांक करने लगे थे. उन्हें मज़ा आ रहा था कि कर्नलगंज स्कूल के मास्टर लोग ही आपस में महाभारत मचा रहे हैं. अड़ोस-पड़ोस से कुछ बच्चे भी जमा हो गए थे. वे यहां के छात्र हैं. बड़ों के बीच खड़े होकर तमाशा देखने में उन्हें बहुत मजा आ रहा था. वे तालियां बजा रहे थे.

कर्नलगंज चुंगी स्कूल की ख्याति फिर उसकी चहारदीवारी पार कर दूर-दूर तक फैल गई थी. वैसे इस मुल्क के इतिहास में ऐसी बातें नई जरूर नहीं हैं लेकिन अख़बार वाले हर बात को अहमियत नहीं देते.

यूनीवर्सिटी से निकला एक नई उम्र का लड़का पहली बार रिपोर्टर बना था. उसके दिमाग में पत्रकारिता का जोश किलबिला रहा था, उसी रौ में आकर वह कर्नलगंज स्कूल के बारे में लोकल न्यूज वाले तीसरे पृष्ठ पर लम्बी कहानियां छापता रहा.

वैसे जनार्दनदास और वर्मा जी कहते यही हैं कि यह सब भगवती बाबू और विनायक ने मिलकर किया. नहीं तो अख़बार वालों को सपना थोड़े ही आ रहा था कि कर्नलगंज के चुंगी स्कूल में कौन-से गुल खिल रहे हैं, आकर देखें ? बात चाहे जो भी हो, लोग समझ गए थे कि कर्नलगंज का यह स्कूल कोई मामूली मदरसा नहीं है.

●●

कर्नलगंज का मिज़ाज और मुहल्लों जैसा नहीं है. ऊपर से देखने से उसी तरह के खपरैल के या पक्की छतवाले मकान ही दिखाई पड़ेंगे. दीवारें भी वैसी ही मिलेंगी, जगह-जगह से पलस्तर उखड़े हुए और खिड़कियों-दरवाज़ों की लकड़ियों में दरारें. किसी-किसी मकान में तो खिड़कियों के पलड़े भी गायब मिलेंगे. लेकिन यह नक्शा इस सुजलाम-सुफलाम भारतभूमि के लिए एक आम बात है. हो यह आम बात, इस आम की आड़ में जो ख़ास छिपा है, वह इस कर्नलगंज में मौजूद है.

मुहल्ले का नाम कर्नलगंज कैसे पड़ा, ठीक-ठीक बता पाना मुश्किल होगा. नुक्कड़ पर लल्लू की दूकान है. एक बड़ा-सा कमरा. उसमें आम की या कटहल की लकड़ी से बनी कुछ बेंचें और मेजें हैं. कुछ-कुछ बरेली की भागीरथ की दूकान जैसी. लेकिन लल्लू की दूकान ज़्यादा कुलीन है. यहां मांगने पर आमलेट मिल जाते हैं. चाय के साथ खाने के लिए जो बिस्कुट मिलते हैं, वे सिर्फ़ आटे के लौंदे ही नहीं होते. बढ़िया नमकीन कुरकुरे बिस्कुट भी मिलते हैं. गर्मियों में लस्सी और कोकाकोला का इन्तज़ाम रहता है.

पूरे मुहल्ले में दूकानों की कमी नहीं है. चाहे दूकानदार हों, चाहे मुहल्ले में रहने वाले गृहस्थी, कर्नलगंज के बारे में सारी बातें शायद ही कोई बता पाए. लेकिन लल्लू को बातें तो क्या, पूरा इतिहास ही मालूम है. अब उम्र हो गई, आंखों में रोशनी नहीं है लेकिन दूकान में लल्लू बेटे-पोतों पर भरोसा नहीं करता. सुबह से शाम तक चाय और आमलेट बनाता रहता और कोई पुराना ग्राहक आता तो हाथो को बिना रोके ही थोड़ी देर सुख-दुःख की बातें कर लेता.

विनायक मुहल्ले में नया आदमी है लेकिन कोई लल्लू से पूछे तो नए आदमी की ज़िन्दगी की सारी कहानी सुना देगा. यह बात सुनने से मज़ाक लग सकती है लेकिन हक़ीक़त है. लल्लू जानता है कि मुहल्ले में एक सच्चा इन्सान आया है. सच्चा लफ्ज़ ही इतना झूठा हो गया कि अब इसका ऊपर से कोई मतलब रहा नहीं. लेकिन मतलब जानने वाले आख़िर जानते ही हैं. लल्लू को पता हो गया कि बरेली से आकर इस कर्नलगंज में बसने वाला यह आदमी सिर्फ़ दो हाथों और दो पांवों का ही नहीं है. उसके पास एक ऐसी ज़िन्दगी की बुनियाद है जो लाख-दो लाख में ही किसी-किसी के पास होती है. ऐसे लोग थक ज़रूर जाते हैं लेकिन अपनी हार मंजूर नहीं कर सकते.

विनायक ने एक दिन कर्नलगंज की कहानी बोस बाबू से पूछी थी. बोस बाबू ने लल्लू की दूकान दिखा दी थी—कर्नलगंज तो क्या, उसमें रहने वाले लोगों के पेट की

अन्तड़ियों में कितनी गांठें हैं, वो भी लल्लू चाय वाला बता देगा.

कहानी फिर लल्लू ने ही बताई थी.

कहानी शायद यह लगे, लेकिन कहानी क़तई नहीं है. इस बात के लिए आगाह भी लल्लू ने कर दिया था. वैसे फौज के सूबेदार मेजर रजिन्दर सिंह को और तो और उनके घरवाले भी अब हक़ीक़त नहीं मानते होंगे.

रजिन्दर सिंह फौज में भर्ती हुए थे एक मामूली सिपाही के वतौर. तब उम्र रही होगी कोई अठारह साल. पूरे छह फुट का छरहरा जवान. रंग सावला-सा लेकिन चेहरे पर एक गहरी-सी चमक. रजिन्दर का बाप फूलपुर तहसील में किसान था और अपनी ज़मीन के अनाज के साथ दूसरों के खेतों पर की गई मजदूरी को जोड़कर दो जून रोटी का इन्तजाम कर ही लेता था. लेकिन आखिर के दिनों में जब चकबन्दी हो रही थी, उसने पटवारी से शिकायत की कि उसकी ज़मीन घटा दी गई है. पटवारी हंसा था. पटवारी की हंसी का मतलब वह थोड़ा बहुत जानता ज़रूर था लेकिन तबाह वह करके रख देगा, इतना समझ नहीं पाया था. पटवारी ने बढ़ती ज़मीन जिस आदमी के हिस्से लिख दी थी, वह रिश्ते से उसके साले का दामाद लगता था. हो दामाद लेकिन रजिन्दर के बाप ने इसकी परवाह नहीं की थी. वक्त की मार खाकर वह गरीब ज़रूर हो गया था लेकिन यह भूल नहीं सका कि जिस्म में ठाकुर का खून है. ठाकुर अगर ताव खा जाता है तो फिर अगल-बगल नहीं देखता. इलाहाबाद ज़िले के ठाकुरों के बारे में यही कहा जाता है. गुस्सा ज्यादा आ गया तो उसने लाठी उठा ली थी. लेकिन उसके बाद भाला उसका सीना फोड़कर निकल चुका था. ठाकुर घण्टे-डेढ़ घण्टे तक तड़पता रहा. ज़मीन एकदम लाल हो गई थी. शुरू में लाल थी फिर काली लगने लगी थी.

यह हादसा जब हुआ, रजिन्दर की उम्र थी कुल चार साल. ज़मीन का मोह छोड़कर मरे हुए ठाकुर का बूढ़ा बाप बहू और पोते को लेकर फिर इलाहाबाद आ गया था. फूलपुर की ज़मीन उसने बेच दी थी और इलाहाबाद आकर कर्नलगंज में एक छोटी-सी दूकान खोल ली थी. दूकान में चने, मटर, मूंगफली से लेकर लमंचूस, सलेट, कापी, पेंसिल वग़ैरह तरह-तरह के सामान मिलते.

तब इस कर्नलगंज का यह नक्शा नहीं था. कुल-जमा चार-छह दूकानें रही होंगी. हां, थाना ज़रूर यहीं पर था. थाने के साथ-वाला पीपल का पेड़ भी. मकान वग़ैरह भी तब इतने नहीं थे. तब भी यह इलाका शहर में ही आता था लेकिन खपरैल के मकान ज्यादा थे. पक्की छत वाले मकान भी कुछ पैसे वालों ने बना लिए थे. इसके अलावा कच्चे यानी मिट्टी की दीवारों वाले मकान भी थे. तब सड़कें पक्की नहीं थीं. गलियों से पानी उतरने का रास्ता नहीं था. लिहाज़ा थोड़ी भी बारिश हो जाती तो मुहल्ला कीचड़ से भर जाता. फिर यही कीचड़ सूखती और तब थोड़े दिनों में धूल उड़ने लगती. इसी धूल के बीच रजिन्दर बड़ा हुआ था. ग्यारह बरस का था तो शादी हो गई और सत्रह बरस में गौना. अठारह का हुआ तो जाकर उसने फौज में नाम लिखा लिया था. इतनी-सी उम्र में ही क़द्दावर लगता था. उसकी मां को थोड़ा ऐतराज़ था कि एक ही बेटा है और वह भी फौज में चला गया तो घर कौन रहेगा ? लेकिन अपने ससुर की उमंग के सामने मां को झुकना पड़ा था. वह बूढ़ा मुहल्ले-भर में कहता फिरा—ठाकुर का बेटा है. बन्दूक नहीं चलाएगा तो क्या पतंग उड़ाएगा ?

रजिन्दर फिर छुट्टियों में पल्टन से आता और फौजियों की मजेदार कहानियां सुनाता. शाम के वक्त ये क़िस्से सुनने के लिए उसके पुराने दोस्त वग़ैरह तो आते ही बुजुर्ग लोग भी आ बैठते. वह तोपों और मशीनगनों के बारे में बताता तो सुनने वालों के जिस्म में सनसनी-सी फैल जाती. छुट्टी साल में सिर्फ़ एक महीने की मिलती. वह

वापस पल्टन में जाने लगता तो बीवी का मन तो ख़ैर भारी होता ही मुहल्ले वालों की भी आवाज़ रुंध जाती. वे फिर इन्तजार करते कि अगले साल इन्हीं दिनों रजिन्दर वापस आएगा.

कई बरस गुजर गए.

बूढ़े ठाकुर ने नब्बे की उम्र में पोते के बेटे के साथ खेलते-खेलते आंखें बन्द कर लीं. इस दरमियान मुहल्ले का नक्शा बदलता रहा. पक्के मकान एक की छाती पर दूसरे बनते रहे और सड़कें पक्की हो गईं. उन पर बिजली के बल्ब भी लटक गए, और जिन लोगों के पास जमा-पूंजी थी, घर पर बिजली की बत्ती भी लगवा ली.

फिर उन्नीस सौ बयालीस में लड़ाई छिड़ गई. हिन्दुस्तानी फौज कोहिमा की सरहद पर आजाद हिन्द फौज को जापानी हमलावर समझकर लड़ती रही. तब जमाना अंग्रेजों का था. लोगों को दुश्मन के हमले के बारे में होशियार रहने के लिए आग्रह कर फौज को अंग्रेजों ने कोहिमा भेज दिया था. लड़ाई कई दिनों तक जबरदस्त तरीके से होती रही. रजिन्दर सिंह तब सूबेदार मेजर बन चुका था. उसकी बहादुरी की बात भी दूसरी पल्टनों तक पहुंच चुकी थी. उस लड़ाई में ही रजिन्दर सिंह शहीद हुआ था.

यह खबर इलाहाबाद की छावनी तक पहुंची और छावनी से फौज का एक आदमी आकर उसकी बीवी को यह इत्तला दे गया. वह औरत तो ख़ैर फौरन ही बेहोश हो गई थी लेकिन मुहल्ले वालों में से भी बहुत सारे लोग दिनों तक आंसू बहाते रहे थे.

सूबेदार मेजर रजिन्दर के शहीद होने के तीसरे दिन मुहल्ले वालों ने थाने के सामने पीपल के नीचे जलसा बुलाया था. देर तक लाउडस्पीकर बजा था और आख़िर में आंसू बहाने के बावजूद लोग खुश थे कि यह मुहल्ला एक बहादुर सिपाही का मुहल्ला रहा है. मुहल्ले वालों को पता नहीं है कि सूबेदार मेजर और कर्नल के बीच फर्क भी है या नहीं ? और अगर है भी तो उसका परिणाम क्या है. चाहे सूबेदार मेजर हो चाहे सिपाही, चाहे कर्नल—इस मुहल्ले के लोगों के लिए कोई फर्क नहीं पड़ता. लोगों ने फ़ैसला दिया और तब से यह इलाका कर्नलगंज के नाम से मशहूर हो गया.

कर्नलगंज के नामकरण की यह कहानी लल्लू ने सुनाई और आख़िर में खुद उसे ही ताज्जुब होने लगा कि गला रुंध कैसे गया है ? वह भी इतने बरस बाद··

विनायक ने चाय का घूंट भरकर पूछा था—कर्नलगंज के लोगों को शायद पुरानी बातें याद नहीं हैं !

लल्लू चाय वाले के चेहरे पर म्लान-सी रेखाएं खिंच गईं—भूल जाने में ही तो सहूलियत है. चाहे कर्ज हो चाहे पाप, भूल जाओ तो छुट्टी.

—लेकिन ऐसे भी लोग होंगे जो भूलना नहीं चाहते.

—शायद होंगे. लेकिन उन्हें ढूढ़ निकालना आसान नहीं है, बाबू.

—रजिन्दर सिंह इतनी जल्दी खो सकता है ?

बूढ़ा चाय वाला अवाक् आंखों से पूछने वाले को घूरने लगा—खोने को तो आदमी अपने अलावा कुछ भी खो सकता है.

—रज़िन्दर सिंह की घरवाली ? उसका बेटा ?

—उसकी घरवाली गुजर गई और बेटा कलकत्ते में है. जहाज के कुलियों में दादागिरी करता है. सुनते हैं, आठ-दस बार छुरे-चाकू भी लग चुके हैं लेकिन अभी तक तो जिन्दा ही है. कभी-कभी चक्की पीसने को अन्दर भी चला जाता है···

—ये सारी बातें कर्नलगंज वाले न ही जानें तो अच्छा.

—आप बहुत भोले हैं, बाबू. बहुत लोग ये बातें जानते हैं और बहुत लोग नहीं भी जानते हैं, लेकिन दोनों के बीच कोई फ़र्क नहीं है.

विनायक बूढ़े चाय वाले की लम्बी दाढ़ी के बीच झुर्रियां परखने लगा था. मौसम के अनगिनत थपेड़े इस चेहरे पर हैं. वक्त के गुज़रने के साथ यह आदमी तेजी से गुजरता रहा होगा लेकिन अब शायद एकदम से ठहर गया है. चेहरा देखकर लगता है, अब कहीं से भी कोई जल्दी नहीं है. किसी भी तरह की दौड़-भाग नहीं है.

●●

कर्नलगंज का रूपरंग ही बदलता गया. कोई-कोई कर्नलगंज कहता है और कुछ लोग कण्डैलगंज. सिर्फ़ गंज ही नहीं बदला. वक्त के बदलने के साथ-साथ क्या नहीं बदलता ? झुर्रियों वाले चेहरे का लल्लू चाय वाला भी एक ही दिन में अपने दिलो-दिमाग के साथ इस मुकाम पर नहीं पहुंचा···

तब उम्र थी, जवानी थी, जिस्म में ताकत थी.

लल्लू उस्ताद ने दुनिया को सिर्फ रौंदने-भर का एक उपकरण समझा था. बांहों में ताकत हो और आंखों में जवानी का नशा हो तो लल्लू उस्ताद ही क्यों, ऐसी मिसालें बिना ढूंढ़े और भी मिल जाएंगी. खैर, यहां ज़िक्र सिर्फ़ लल्लू उस्ताद का ही है.

पूरे इलाहाबाद शहर में बेधड़क घूमने के लिए जैसा सीना चाहिए वह बहुतों के पास नहीं होता. लल्लू के पास था. बड़े-बड़े दरोगा भी छेड़ने से डरते थे. बाजार में लल्लू को अगर कोई चीज़ पसन्द आ गई तो साथ के शागिर्द झट से उसे टोकरे में डाल लेते. नहीं, लल्लू इतना बे-अदब नहीं है कि पैसा देना नहीं चाहेगा. माल लिया है तो दाम लो. लेकिन दूकानदार आखिर लल्लू की एक-एक नस पहचानता है. वह जेब में हाथ डालकर बटुआ निकालने को होता और दूकानदार हाथ जोड़ देता, नहीं हुजूर, इसे गरीब की भेंट समझकर रख लो. लल्लू फिर झाड़ियों-सी जबरदस्त मूंछों के भीतर से एक मुस्कान बिखेरकर आगे की तरफ़ बढ़ जाता. दूकानदार कृतार्थ हो जाता.

इलाहाबाद का यह चौक बाज़ार तब भी ऐसा ही था. इसी तरह छोटी-छोटी और तंग गलियां, कपड़ों से लेकर लोहे और मिठाई से लेकर साग-सब्ज़ी की दूकानें, रंडियों की अंधेरी कोठरियां और आने-जाने वालों की गहमागहमी, यही है, लल्लू उस्ताद का इलाका. यह इलाका जिसके कब्जे में हो उसके पास इलाहाबाद तो क्या हिन्दुस्तान की सल्तनत भी छोटी है. सुनने में यह बातें कुछ ज्यादा ही ममालेदार लग सकती हैं लेकिन तब लोगों का ख़याल ऐसा ही था.

लल्लू उस्ताद का अपना अमूल था —औरत, छुरी-चाकू, शराब और पिस्तौल से मुहब्बत और जो आड़े आए, उसकी गर्दन की लम्बाई थोड़ा घटा देना. लोग आड़े नहीं आते थे. उसके लिए जितनी हिम्मत चाहिए, वह कहां मिलती ? लेकिन अगर कोई बेवकूफ मिलता तो लल्लू उस्ताद हंस पड़ता. लल्लू की हंसी से ज्यादा खतरनाक सांप का जहर भी नहीं होता. जानने वाले इशारा समझ जाते हैं. फिर रूह कांपने के अलावा और कोई रास्ता रह जाता क्या ?

एक बार एक पठान टकराया था. शायद हिन्दुस्तान में नया-नया ही आया था. सूद का धन्धा करता और सूखे मेवे वग़ैरह सस्ते भाव पर दूकानों में पहुंचाता. लल्लू से पहले ही मुलाकात में मुठभेड़ हो गई. सौदागरी करने आए हो, नजराना कहां है ?

पठान भी शेर का बच्चा था.

दस लोगों से घिर गया लेकिन डरा कतई नहीं.

चौक में तब भी यही घंटाघर था. घड़ी भी यही रही होगी. दोपहर का वक्त

और सबकी आंखों में एक भयावह-सी उत्तेजना.

लल्लू ने अपने शागिर्दों को हटा दिया था. फिर इन बाँहों को दीमक ने चाट नहीं लिया. अभी भी इतनी ताकत है कि चार लोगों को बगैर किसी की मदद के चित कर सकती हैं.

दोनों ने ही छुरियाँ निकाल लीं और डर के मारे दूकानों के दरवाजे बन्द होने लगे.

कोई आधे घंटे तक छीना-झपटी चली थी. लल्लू को क़ायदे से इतना वक्त कभी नहीं लगता लेकिन पठान कोई चींटा नहीं था. आख़िर में वही हुआ जो होना था. घंटाघर के नीचे की जमीन पठान के ख़ून से एकदम सुर्ख़ हो गई.

पुलिस आई थी. खाना-पूरी के लिए आना ही पड़ता है. लेकिन गवाही के लिए एक भी आदमी नहीं मिला था. दरोग़ा ने भी कोई फजीहत नहीं की थी. कागजी कार्रवाई करनी होती है, वह हो गई और मामला फिर वहीं का वहीं रह गया.

लल्लू उस्ताद के शागिर्दों में चार-छह बम्बई-कलकत्ता जाकर जम गए हैं. कभी इधर आते हैं तो उस्ताद से ज़रूर मुलाकात कर जाते हैं. लल्लू अपनी तरफ़ से किसी को रोकता नहीं है, जहाँ मर्जी हो, सहूलियत हो, वहीं जाओ. वैसे भी हर जगह की मिट्टी हरेक को रास नहीं आती. लेकिन लल्लू जिएगा तो इलाहाबाद में, मरेगा तो इलाहाबाद में.

कभी-कभी लल्लू की बेटी उदास हो जाती है.

बारह बरस की गूंगी लड़की लछमी उर्फ़ छम्मो. छम्मो नाम से पुकारने का हक़ सिर्फ लल्लू के पास ही है. वह पैदा हुई थी और उसकी मां ने आंखें बन्द कर ली थीं. शायद इसी वजह से बेटी पर इतनी ममता है लल्लू की.

कभी-कभी छम्मो की आंखें बतातीं कि वह बेहद उदास है. इस उदासी का मतलब लल्लू समझता है, लिहाजा अब चूड़ी-बिन्दी लाकर उसे खुश करने की कोशिश नहीं करता. पिछले दिनों लल्लू बेटी को खुश करने के लिए यह सब लाता रहा है और वह लड़की इन्हें तोड़कर पिछवाड़े की नाली में फेंकती रही है. ख़ैर, कुछ भी हो, छम्मो की शादी धूम-धड़ाके से ही होगी. पैसा बहाओ तो शेर का दूध भी मिलता है और यह तो दूल्हा हुआ.

घर में रिश्ते की एक बूढ़ी मौसी है, छम्मो की वही देखभाल करती है. फिर ऊपर से लल्लू हिदायत देता है.

कभी-कभी जब वह रात को घर नहीं लौटता है, छम्मो खिड़की पर बैठे-बैठे रात गुज़ार देती. ऐसा अक्सर हो जाता है और लल्लू जैसे अपनी बेटी के सामने एकबारगी हार जाता.

लेकिन सामने अगर सड़क है, लल्लू सिर्फ़ जीत ही सकता है. हारने के मौके कभी-कभी आते भी रहे हैं लेकिन लल्लू जीतकर ही मैदान से लौटा है. पिछले दिनों लोकनाथ की टेढ़ी-मेढ़ी गलियों में जो हादसा हो गया था, वह गवाह है, लल्लू उस्ताद अकेला ही बीस के बराबर है.

लोकनाथ की गलियां जहां धूप कभी आ ही न सकी हो, और हवा भी उतनी ही आती हो, जितने के बिना काम नही चलता, इलाहाबाद के अलावा शायद इस ब्रह्माण्ड में भी कहीं नहीं मिलेंगी. काशी की गलियां मशहूर हैं लेकिन जो लोग इस चौक के इलाके के लोकनाथ को, उसकी गलियों को, जानते हैं, उन्हें मालूम है कि यहाँ का एक-एक सूत बेमिसाल है.

किसी भी गली की तरफ़ बढ़ जाइए, सिर्फ़ खोखेनुमा दूकानें मिलेंगी. यहां की

मिठाई पूरे मुल्क में मशहूर है और इन दूकानों को देखकर कोई अंदाजा नहीं लगा पाएगा कि हर रोज़ लाखों के सामान यहां बेचे जाते हैं. रिक्शे से उन गलियों में शायद शुरू के दिनों में भी कोई घूम नही सकता था. आज बहुत हुआ तो हाथ में साईकिल लेकर पैदल चला जा सकता है. लेकिन हर दस गज के अन्दर तीन टक्करें खानी होंगी और अगर कोई सांड मिल गया तो उसकी पूंछ की मार से कपड़े रंग लेने होंगे. खैर, इन बातों की परवाह यहाँ आने वाले कभी नहीं करते.

अपने तमाम इलाकों में यही लल्लू उस्ताद को सबसे ज्यादा अच्छा लगता है. यहां का चप्पा-चप्पा जैसे सिर्फ़ अपना ही लगता. एक शागिर्द है झबरा. उसने हंसकर कहा था—उस्ताद, तुम पिछले जनम में यहीं पैदा हुए होंगे.

ऐसी फालतू बातों का जवाब लल्लू कभी नहीं देता. लेकिन इस दफ़ा दिया था—इस जनम में कहां पैदा हुआ था, यही नहीं मालूम, पिछले की कौन जाने ?

इस लोकनाथ में दालचंद सुनार की दुकान के सामने अनवर मिल गया था. लल्लू को ताज्जुब ही हुआ था. अनवर मियाँ जब शागिर्दी करता था, तब की बात और है. लेकिन अरसा हो गया उसे लल्लू की शागिर्दी छोड़े हुए. दारागंज में उसने कोयले की एक छोटी-सी दूकान खोल ली थी और चार-छ: लोगों का उस्ताद बन गया था. लल्लू ने इस बात पर ऐतराज नहीं किया. जहाँ जिसे सहूलियत हो, वहीं रहो.

लेकिन हर काम का एक उसूल होता है, एक तरीका होता है. दारागंज में जो मर्जी कर लो लेकिन इस इलाके में आए तो जान लेकर वापस आना मुश्किल हो जाएगा. चौक-घण्टाघर का इलाका लल्लू उस्ताद के अलावा किसी और का हो सकता है, ऐसा खालिस बेवकूफ भी नहीं सोचता. लेकिन अनवर मियाँ को शायद अपनी ताक़त पर कुछ ज्यादा ही यक़ीन हो गया था. उसे शायद लगा था, उसका इलाका दारागंज से बढ़ कर और कुछ नही तो चौक तक ज़रूर आ सकता है.

दस मिनट तक लल्लू खड़ा-खड़ा सोचता रहा. झबरा साथ था. वह समझ गया था कि सस्ते में छुट्टी मिलने से रही. आखिर में वही हुआ, जिसका अंदेशा था. अंदेशा भी क्यों, इंतज़ार था. लल्लू ने ललकारा तो अनवर इस तरह सीना तानकर सामने आया गोया, चलो···चाहते हो तो थोड़ा खेल ही लेंगे. अनवर के सामने आते ही लल्लू ने कसकर लात मारी तो वह सिर्फ थोड़ा-सा हिला था. बस फिर छीना-झपटी शुरू हुई तो दूकानों के दरवाजे बन्द होने लगे. अनवर के होठों से खून निकलने लगा था लेकिन लल्लू को पसीना आ गया था. आँखें बुरी तरह लाल हो गई थीं.

अनवर को शायद अपनी ताकत का अन्दाजा हो गया था. फिर उसने मौका देखा और भाग खड़ा हुआ. लल्लू ने फिर जमीन पर थूक दिया था --फिर कभी यहां नजर आया तो तेरी लाश ही यहां से निकलेगी.

झबरा फिर उस्ताद को लेकर ठेके पर आया था. आधा किलो तली हुई मछली और उतने ही वजन के भुने हुए गोश्त के साथ अद्धा सामने रख दिया. झबरा वैसे शागिर्दों में थोड़ा बेवकूफ ज़रूर है लेकिन उसे पता है कि उस्ताद को किस वक्त क्या चाहिए. लल्लू भी इसलिए उसकी बेवकूफियों पर उतना नाराज नहीं होता, जितना कायदे से होना चाहिए.

लल्लू उस्ताद की जिन्दगी में ऐसी मुठभेड़ के मौके कम ही आते हैं. झबरा गर्दन नचाकर कहता है—लड़ेगा कौन तुमसे ? जान किसे नहीं प्यारी होती ?

लेकिन जब कभी भी ऐसा कोई वाकया हुआ है, लल्लू उस्ताद मैदान से हारकर नहीं लौटा. झबरा अगर साथ होता तो वह शुरू में तो पिलाता, बाद में बांहें और टांगें दबा देता. फिर मीरगंज की किसी जादूगरनी के कोठे तक पहुंचा आता.

इस दफ़ा भी वही हुआ.

झबरा पता कर आया था कि अभी कल ही कलकत्ते के सोनागाछी से एक बंगालन चिड़िया आई है. वह अपने उस्ताद को फिर उसी कोठे पर ले गया था. लल्लू भी खुश हो गया था. मन ही मन फैसला कर लिया था –चल तुझे भी कोई इनाम देकर चौंका देंगे.

लल्लू उस्ताद रात-भर वहीं पड़ा रहा.

सच ! कभी-कभी पता नहीं क्या हो जाता है ! यक़ीन ही नहीं आता कुछ. न कुछ अगला-पिछला ही याद रहता है. छुरे-चाकू के बीच खेलते रहने के बावजूद तब लल्लू को जिन्दगी एकबारगी बहुत नरम लगने लगती है. लेकिन ऐसा हमेशा नहीं होता. हर औरत इस तरह का अहसास दिलाने लग जाए तो शायद हर मर्द अपनी बीवी से तलाक ले ले. लल्लू जब उठा तो रात गुजर तो नही गई थी लेकिन सुबह होने में ख़ास देर भी नहीं थी.

झबरा उसी तरह बाहर बैठा था.

उस्ताद निकला तो उसे रिक्शे पर बिठाकर घर पहुंचाना भी तो उसकी शागिर्दी का एक हिस्सा है. लल्लू सिर्फ झूमता रहा और फिल्मी गाने की कोई पुरानी-सी धुन अपनी बेसुरी आवाज़ में याद करता रहा.

रिक्शा घर के नज़दीक पहुंचा. वहां ख़ासी भीड़ थी. लल्लू के उतरते ही मौसी दौड़ी हुई आई—छम्मो को छुरा भोंककर अनवर मियां भाग गया. किसी तरह इतना भर कहकर मौसी फिर दहाड़ें मारती रही.

पड़ोस के हीरा पंसारी ने आकर कहा –सिरफ़ आधा घंटा पहले यह हो गया. तुम रहते तो अपनी गर्दन वापस लेकर न जाता कटुए की औलाद.

बस यही सबकुछ खत्म हो गया था.

सुबह हो रही थी, उस धुंधलके मे लल्लू उस्ताद गूंगी लड़की की लाश देखता रहा. नही, आंखें थोड़ी जल जरूर रही थी लेकिन बूंद-भर पानी भी नही टपका. झबरा बुत की तरह खड़ा रहा. जिस उस्ताद को हमेशा आग की तरह धधकते देखा है, वह एकदम बर्फ़ बन जाए तो आश्चर्य क्या होगा, यक़ीन नहीं आएगा. झबरा की आंखें भर आई थीं, गला रुंध गया था.

लल्लू उस्ताद नज़दीक आया और लाश के पास बैठ गया. उसकी हथेली को उठाया और चूम लिया. सीने का सारा खून जैसे उफनकर बाहर आने की कोशिश कर रहा था. लड़की गूंगी थी लेकिन जितनी बातें वह लगातार कर गई, उसे लल्लू उस्ताद सिर्फ सुनता रहा है. समझने की जरूरत कभी महसूस हुई ही नहीं. आज वह मर गई लेकिन मरकर भी ख़ामोश नही हुई. लल्लू के होंठ थर्राने-से लगे थे.

बस फिर लल्लू उस्ताद ने उस्तादी छोड़ दी. वह इलाका ही छोड़ दिया था हफ्ते-भर में. तब से यहाँ रहता है, कर्नलगंज मे.

लल्लू ने अपनी कहानी सुना दी. फिर एकदम चुप हो गया था.

विनायक ने देखा, बूढ़े चाय वाले की आँखों में मोती की तरह आँसू चमक रहा है. जिसका पता खुद उसे भी नही होगा.

●●

कर्नलगंज चौक से जो रास्ता पूरब की तरफ़ जाता है, वहां के मकान ज़्यादातर खपरैल के ही हैं. रहने वालों में कहार हैं तो पण्डित भी हैं और चार-छह घर पासियों के भी हैं. अब जमाना बदल गया सो एक ही गली-कूचे में रहना भी पड़ता है. शहर में जहां हवा, पानी सब खरीदना पड़ता है, ऐसी बातों पर शुरू-शुरू में कोई भले ही फजी-

हत करे, बाद में सबकुछ भुलाना ही पड़ता है. खैर, इस रास्ते का महत्त्व ही कुछ और है. चुंगी वालों के खाते में वैसे इसका भी नाम ज़रूर होगा लेकिन लोग कहेंगे, छिद्दा पहलवान की गली है.

छिद्दा ब्राह्मण का बेटा है. बचपन से सिर्फ़ दो ही शौक रहे हैं. दंगल लड़ना और वह करना जो मन में आए. उसका नतीजा क्या होगा, छिद्दा ने कभी सोचा ही नहीं. बाप ने सोचा था, छिद्दा ने पढ़ाई-लिखाई ज़रूर नहीं की लेकिन यजमानी का पेशा तो अपनाएगा ही. बनारस जिले में कैथी गांव की इज़्ज़त गाँवों के बीच कुछ कम नहीं है. यहाँ पक्का कुआं है और डाकखाना है. कैथी में ब्राह्मणों की संख्या सिर्फ़ पन्द्रह-एक घर हैं, लिहाज़ा ब्राह्मण होने को लोग बड़ी बात मानते रहे हैं. छिद्दा दंगल लड़ता रहा, बाप ने इस पर भी कुछ नहीं कहा. सोचा था, शादी-ब्याह हो जाए तो अकल ठिकाने पर आ ही जाएगी. लेकिन छिद्दा इतना बड़ा कलंक कर बैठेगा, यह किसने सोचा था. कहार की बेटी है मनोहरा. छिद्दा ने उसका हाथ पकड़ लिया.

पूरी कैथी के लोग थू-थू करने लगे. लेकिन छिद्दा को किस की परवाह ? उसने मनोहरा का हाथ पकड़ा और सीधे इलाहाबाद चला आया. तब से छिद्दा का बाप सोचता है, बेटा उसके लिए मरा हुआ ही है. जो मरजी में आए समझो. छिद्दा थूकने भी नहीं जाएगा ऐसे गाँव वालों के मुंह पर.

यह बात कर्नलगंज में भी फैली थी.

लेकिन कोई अगर अखाड़ेबाजी करे, उससे कुछ डरना ही पड़ता है. वैसे छिद्दा पहलवान की उम्र तब अठारह बरस रही होगी लेकिन पूरा गबरू लगता था. ठाकुरों जैसी बड़ी-बड़ी मूंछें थीं और उसी हिसाब से चौड़ी छाती. देखने से पूरा ठाकुर लगता था.

यहाँ इलाहाबाद आया तो मुसीबत खड़ी हो गई.

कैथी में जितना मर्ज़ी दंगल लड़ लो, कोई फ़र्क नहीं पड़ने का. खाने-पहनने की कमी से कोई ब्राह्मण आज तक मरा नहीं. और यहां हिसाब ऐसा है कि जनेऊ तक खरीदने होते हैं. गांव में जनेऊ और अंगोछे की कमी नहीं थी. हमेशा अम्बार लगा ही रहता था. यहाँ शहर में रोज़ी-रोटी का ही सवाल इतना बड़ा है कि कोई दंगल क्या लड़ेगा ?

तब इस इलाके में कोई अखाड़ा था भी नहीं.

छिद्दा ने कहा था—हिजड़े जहां रहते हों, अखाड़े का क्या काम ?

यह बात उसने दस दफ़ा कही होगी लेकिन किसी में इतनी जुर्रत नहीं हुई कि इसके खिलाफ़ कुछ बोले.

आखिर में छिद्दा ने भारद्वाज मंदिर के कुएं के पास अखाड़ा बना लिया था.

भारद्वाज आश्रम कब बना था, यह मुहल्ले वाले नहीं बता पाएंगे. कर्नलगंज वाले सिर्फ़ इतना जानते हैं कि इस आश्रम में राम-सीता भी आकर ठहरे थे. बात सही है या ग़लत, कौन जाने ? लेकिन इस बात के आधार पर ही हर रोज़ तीर्थ करने वाले सैंकड़ों मुसाफिर संगम में डुबकी लगाने के बाद यहां भी दर्शन कर लेते. यहाँ कोई टूरिस्ट गाईड वगैरह नहीं है. तीर्थ करने वालों को इनकी ज़रूरत पड़ती भी नहीं है. यह काम या तो पण्डा कर देता है या तांगे वाला. पुण्यप्रार्थी पूरे यकीन और भक्ति भाव से कहानियां सुनता और पैसे चढ़ाता.

छिद्दा का अखाड़ा बना तो वह भी एक आकर्षण बन गया. हिन्दुस्तान के तीर्थ-स्थानों की नालियां भी शायद असाधारण होती हैं. खैर, इसका फ़ायदा दंगल वालों को

हुआ. लोग चलने से पहले आने-दो आने फेंक भी जाते. पैसे गिनते वक्त महसूस होता, आने-दो आने फेंकने वालों की तादाद ईद के चांद की तरह क्षीण रही होगी. ज्यादातर फुटल्ली मिलती थी. ताँबे की फुटल्लियाँ.

शहर में जहाँ साँस लेने के भी पैसे देने पड़ते हैं, इन फुटल्लियों से गुज़ारा तो नहीं हो सकता है. इस बीच मनोहरा ने अपनी करधनी बेच दी थी और कोशिश की थी कि किसी तरह गुजारे लायक कोई रास्ता निकल आए.आख़िर में फैसला किया था कि घर पर चाट-पकौडियां बना दिया करेगी और पण्डित साथ के हनुमान मंदिर के बाहर दिन-भर में बेच लिया करेगा.

बहुत कम समय में छिद्दा की चाट-पकौड़ी मशहूर हो गई थी. मुहल्ले वाले तो ख़ैर आते ही, यूनीवर्सिटी के लड़के भी यहां आने लगेथे. खपत इतनी कि संभालना मुश्किल. दो-एक लोगों ने सुझाव दिया, हाथ बंटाने के लिए कम पैसे में लौंडे-लपाड़े मिल जाएंगे, रख लो. लेकिन मुनाफा के लालच में आकर छिद्दा ने ऐसा नहीं किया. फिर माल घटिया बनेगा और लोग गाली देते फिरेंगे—यह भी साला चोर ही निकला.

पुलिस वालों की आदत आख़िर यही होती है कि माल लो और आगे निकल जाओ. कर्नलगंज थाने में नया हवलदार आया था. उसने आठ आने के चाट के पत्ते चाटे और आगे बढ़ने लगा. हवलदार को यह हक़ अपने आप ही मिल जाता है—लिहाज़ा ऐसी बातें किसको बुरी लगेंगी ? लेकिन छिद्दा ने आवाज़ दे दी—अठन्नी का माल था हवलदार साब.

हवलदार मुड़कर छिद्दा को घूरने लगा. ऐसे लहजे में बात करने की हिमाकत आज तक बड़े-बड़े लोगों तक ने नो की नहीं. ख़ैर, छुछून्दर की जब मौत आती है, हाथी के पास कुचले जाने को भागता है.

सामने बेंच पर बैठे हुए दूसरे ग्राहक समझ गए थे कि अब कोई रामलीला हो के ही रहेगी.

हवलदार ने जेब से निकालकर अठन्नी फेंक दी थी. नजर की तल्खी से उसने चाट वाले के सीने की चौड़ाई एक बार और नाप ली थी और आगे निकल गया था.

इसके तीसरे दिन छिद्दा के घर की तलाशी ली गई और गाँजा बरामद हुआ. कहारिन सिर पटकती रह गई और छिद्दा जैसे आसमान से गिरा. हवलदार से अठन्नी वसूल करने की कीमत यह होगी, कौन जानता था ?

दो साल की सजा काटकर छिद्दा लौटा था.

कहारिन को टी० बी० हो गई थी. छिद्दा के जेल जाने के आठवें महीने पेट में बच्चा लेकर उसने आंखें मूंद ली थी. मुकदमा चला तो जो भी चार-छह जेवर थे, निकल गए और पांच-सात सौ रुपए जो दुकानदारी से मिले थे, खर्च हो गए थे.

मनोहरा चुपचाप मर गई थी.

छिद्दा कोई जज्बाती आदमी नहीं है लेकिन उस कहारिन को इतने बरस बाद भी नहीं भूल सका. कैथी से लेकर कर्नलगंज की तमाम बातें याद आती हैं और सीना एकदम भारी हो जाता है.

उसने फिर पहलवानी छोड़ दी थी.

लोगों ने कहा—बिना घर वाली के घर में प्रेत नाचेंगे.

छिद्दा ने ऐसी बातों का कोई जवाब नहीं दिया.

शादी उसने आख़िरकार नहीं ही की.

कहारिन का हाथ पकड़ा था, इससे आदमी ऐसे पाप का भागी हो जाता, जिस का प्रायश्चित्त हो ही नहीं सकता. पण्डितों ने फिर भी उबरने के लिए कुछ सोना-चाँदी के रास्ते बताए थे. लेकिन छिद्दा ने कभी ध्यान नहीं दिया. इसके बावजूद ब्याह के रिश्ते आने लगे. प्रस्ताव लेकर जो आता, उसके सामने छिद्दा हाथ जोड़ देता—आए हो तो बैठो, चाय पियो लेकिन यह मत सोचो कि छिद्दा पण्डित किसी नवेली को डोली पर बैठा के यहां ले आएगा.

वैसे दिल है तो कभी-कभी उचटता है, लेकिन मीरगंज के कोठों में जाकर ऐश करना छिद्दा को पता नहीं क्यों गवारा नहीं है. दो-एक बार उस तरफ गया भी था लेकिन अंदर घुसने की तबियत ही नहीं हुई. दरवाज़े से वापस आ गया. वह लौटकर चुपचाप खटिया पर पड़ा रहा था.

लेकिन कटरे में एक ठकुराइन है. उसका मर्द कहां है, कोई नहीं जानता. पूछने की हिम्मत उसके फटे बांस की सात सुरों वाली आवाज सुनकर कोई नहीं करता. ठाकुर की एक दही-छाछ-लस्सी की दुकान थी. अब ठकुराइन उसे चलाती है. एक विधवा बेटी रहती है, मां के काम में ज़रूरत के वक्त हाथ बंटाती रहती है.

छिद्दा पण्डित और ठकुराइन की उम्र में फ़र्क कुछ नहीं तो बीस बरस का जरूर है. लेकिन छिद्दा पर ऐसा नशा चढ़ा कि आंखों की रोशनी रंग-सी गई. थोड़ी-सी छुट्टी मिलती नहीं कि ठकुराइन के यहाँ पहुंचता.

पीछे से लोग थूकते थे लेकिन छिद्दा सामने पड़ जाता तो मुस्कुरा कर हाल जरूर पूछ लेते. लेकिन छिद्दा के पास आंखें हैं. कौन कैसे देखता है, इतना समझने के लिए घड़ी-भर का वक्त काफी है. लिहाजा लोग हाल-चाल पूछते और वह पान की पीक उगलकर बिना जवाब दिए ही आगे की ओर निकल जाता.

लेकिन सारा वाकया इस तरह मोड़ लेगा, कर्नलगंज और कटरे वाले तो क्या ठकुराइन भी क्या जानती थी ?

ठकुराइन की बेटी छिद्दा की बाहों को पकड़कर सिसकने लगी थी. छिद्दा पहले थोडा सकपकाया था लेकिन फिर चुपचाप उसके बालों को सहलाने भी लगा था.

छिद्दा इस उम्मीद में था कि ठकुराइन को यह सब मालूम होगा और वह महाभारत खड़ा कर देगी.

लेकिन ऐसा कुछ भी नही हुआ था.

सीने की तकलीफ कौन किसकी समझ सकता है ! लेकिन ठकुराइन ने छिद्दा से कुछ भी नहीं कहा था. अगर तुम्हें यह मंजूर है तो यही सही.

लेकिन ये सब पुरानी बातें है.

छिद्दा आज अकेला है. कोई अगर साथ है तो सिर्फ़ यह कर्नलगंज, कर्नलगंज की सीलन वाली गलियां, जहां धूप का प्रवेश निषिद्ध है.

ठकुराइन इलाहाबाद छोड़कर प्रतापगढ़ जा बसी थी. उसकी बेटी प्रतापगढ़ में ही किसी दरोगा की घरवाली बन कर रहने लगी थी. इसके आगे छिद्दा को कुछ नहीं मालूम.

लल्लू चाय वाले की दुकान में जो रेडियो बजता है, उसकी आवाज यहां तक आ जाती है. कभी-कभी कोई गाना कहारिन की याद दिला जाता है.

उस हवलदार के बारे में जिसने छिद्दा को तोड़-मरोड़ कर रख दिया था, कुछ पता नहीं है. जेल से निकलने के बाद वह कभी दिखाई ही नहीं पड़ा. छिद्दा को कभी-कभी लगता है, चाहे ठकुराइन हो, चाहे उसकी बेटी, चाहे कर्नलगंज थाने का वह हवल-

दार, इनके बीच कोई फर्क नहीं है. इनके सिर्फ चेहरे ही अलग हैं लेकिन अंदर झांककर देखो तो शायद एक-एक नस एक-सी मिलेगी.

छिद्दा की अब उम्र हो गई और पिछले सालभर से कभी-कभी रीढ़ की हड्डो में दर्द होता है. लल्लू चायवाले से पता चला कि कर्नलगंज स्कूल का नया मास्टर डाक्टर भी है. सो, एक दिन दवा लेने आ पहुंचा. दवा ली और मास्टर को घूर कर देखने लगा. आखिर में लगभग एक ही सांस में अपनी ज़िन्दगी की पूरी दास्तान सुना डाली. फिर एकदम हंस पड़ा था. सीने में दर्द था फिर भी—क्यों, समझे कुछ ?

विनायक ने बोलने की कोशिश की थी लेकिन जवाब की जरूरत किसी को नहीं थी. छिद्दा ने अपनी दवा की पुड़िया संभाली और चलता बना. जाते हुए दरवाज़े पर रुक गया था—लल्लू महाराज तुम्हें खूब जानता है. सो, मैंने भी सोचा, चलके 'राम-राम, बोल आऊं. लेकिन देखो, सबकुछ बोल गया और 'राम-राम' की याद ही नहीं आई. फिर दरवाज़े पर मुक्के के साथ वह हंसने लगा था. आखिर में कुछ भी इन्तजार किए बिना गली में उल्टा और सामने चलने लगा.

●●

बोस बाबू कहते हैं—कर्नलगंज में हर आदमी नहीं टिक सकता. यहां का जो धूल-मिट्टी है न, बड़ा लवली है. और यहां जो आदमी टिक गया, वो स्विटज़रलैण्ड को भी रिजेक्ट करके चला आएगा.

विनायक की खिड़की खुली मिलती है तो बोस बाबू कुछ-न-कुछ शगूफा छोड़ देते हैं. नाक में सूंघनी ठूंसेंगे और गला खंखार कर कोई-न-कोई नया समाचार सुनाकर ही जाएंगे. लेकिन इस दफा उन्होंने कोई खबर नहीं दी, न लतीफा ही सुनाया. सिर्फ आधे मिनट तक दोनों हथेलियां मलते रहे— एक रिक्वेस्ट लेकर आया था···

—हुक्म कीजिए.

बोस बाबू ने जीभ काट ली—अरे राम-राम, कैसा बोलते हैं आप ? आफ्टर आल यू आर ए लर्नेड पर्सन. ए ग्रेजुएट. मैं तो मैट्रीक भी नहीं हूं. आज का ज़माना होता तो बर्तन धोने का कोई काम ज़रूर जुटा लेता, लेकिन इसके आगे फुलस्टॉप. खैर, मैं तो एक दूसरा बात बोलने आया था. लेकिन आप इतना बिजी है कि बोलने में थोड़ा संकोच होता है.

भूमिका काफी लम्बी हो गई थी, इतना सुनने वाले का चेहरा देखकर बोसबाबू भी समझ गए थे.

—खैर, बात यह है कि मेरा जो यंगेस्ट डॉटर है न, प्रतिमा, उसका इंगलिश बहुत वीक है. वैसे शी इज़ ए मैट्रीकुलेट. हिस्ट्री और होमसायंस उसे बहुत आता है. बट वेरी वीक इन इंगलिश. जब कभी फुर्सत हो तो आप थोड़ा बता दिया करना—आफ्टर ऑल इस एज में बिना इंगलिश के काम नहीं चलने का. यूनीवर्सिटी के लड़के हिन्दी के लिए मूवमेंट करते हैं, स्ट्राइक करते हैं. कहते हैं, एवरी वर्क इज़ टु बी डन इन हिन्दी. कमाल हो गया साब. इस एज में जब लोग मंगल ग्रह को जाता है, ये स्टूपिड सतयुग का बात करता है ! बोस बाबू को शायद फिर वक्त का अंदाज़ा हो गया था सॉरी, बहुत टाईम ले लिया. मैं प्रतिमा से बोल दूंगा, ओ० के०?

नाक में सूंघनी ठूंसकर बोस बाबू फिर दाईं तरफ यानी गली में मुड़ गए थे. वह चले गए तो विनायक सामने की खाली दीवार देखने लगा था. लगा, दीवार के एक खासे हिस्से में पलस्तर गिर गया है, और वहां पर लाल-लाल ईंटें दिखाई पड़ रही हैं. दीवार के इस जख्म मे बोस बाबू का क्या रिश्ता होगा, एकदम से बताना मुश्किल होगा. लेकिन लगता हे, सिर्फ़ बोस बाबू ही क्यों, पूरे कर्नलगंज का ही रिश्ता ऐसे मसलों

से है.

बोस बाबू की लड़की प्रतिमा चौक के एक मोटर पार्टस वाले से प्रेम करती है या प्रेम करने की कोशिश करती है, यह बोस बाबू के लिए तो खैर है ही, पूरे कर्नलगंज के लिए एक बहुत बड़ा ऐक्सीडेण्ट है. मोटर पार्टस वाला सरदार है, सरदार उजागरसिंह. उम्र भी प्रतिमा के लिहाज़ से कुछ ज्यादा है. चालीस के करीब.

बोस बाबू को पता चला तो गुस्से में आग के बबूले हो गए. लड़की की पिटाई खड़ाऊं से इस तरह की कि उसके बदन की खाल कई जगह से हट गई थी. जहां से नहीं भी हटी थी, नीली धारियां जमकर बैठ गई थीं.

सरदार की दुकान में प्रतिमा पचासी रुपए की नौकरी करती थी. खाता वगैरह लिखने का काम था. घर में तंगी थी ही. सो, बोस बाबू ने मना नहीं किया था. लेकिन इसका मतलब यह कहाँ होता है कि कुल की नाक कटाकर किसी भी डोम-चमार के साथ बँधो ? यही सवाल बोस बाबू ने प्रतिमा से किया था.

प्रतिमा दो दिन दूकान नहीं गई तो उजागर सिंह पता करने खुद ही चला आया था. बोस बाबू उसे लगातार जलील करते रहे लेकिन वह सिर झुकाए चुपचाप बैठा रहा. प्रतिमा से बड़ी है सुचित्रा. वह एक कप चाय भी सामने रख गई थी लेकिन प्याला आखि़र तक ठंडा होता रहा.

अंदर से सुचित्रा इशारे से बोस बाबू को बहुत समझाती रही कि इस तरह के हंगामे से जगहंसाई के सिवा क्या मिलता है ? लेकिन वह चिल्लाते रहे और थोड़ी देर में दरवाज़े के बाहर खासी भीड़ इकट्ठी हो गई थी. कुछेक बच्चे खिड़की से झांक रहे थे. उन्हें बहुत मज़ा आ रहा था. चेहरे के भाव से यही जाहिर हो रहा था

पड़ोस में गोबरधन दास रहते हैं. पहले कचहरी में मुंशी थे. चार बेटे और बहुओं के साथ खुद की कमाई से बने मकान में रहते हैं. गोबरधन देर तक तो सबकुछ सुनते रहे फिर बाहर से बोस बाबू को आवाज़ दे दी. लेकिन बोस बाबू की, खुद की आवाज़ इतनी तल्ख थी कि छोटी-मोटी आवाज़ सुनाई भी नहीं पड़ सकती थी. गोबरधन फिर अंदर घुस गए थे. बिना किसी भूमिका के ही बोले—मुहल्ले में ढिंढोरा पिटवाकर सत्यानाश कर रहे हो, दादा.

—आई विल हैंग हर. यू डोंट नो दैट आई एम हरिचरन बोस. हमने लड़की को काम करने के लिए दिया था, आवारागर्दी के लिए नहीं.

सरदार का चेहरा रुआँसा होकर काला हो रहा था. गोबरधन ने उसे घूरकर देखा— शादी कर सकते हो ?

सरदार की आंखों में आंसू चमक रहे थे.

ऊपर के किसी कमरे में शायद प्रतिमा रो रही थी. सिसकियों की आवाज़ से ऐसा ही लग रहा था.

बोस बाबू उछले— तुम शादी का बात करते हो ? आई विल शूट देम.

काफी देर के धैर्य के बाद गोबरधन गरजे—ख़ामोश ! जवान लड़की की शादी तुम खुद नहीं करोगे तो उसे अपना रास्ता चुनने का हक है. लड़की नाबालिग नहीं है. तुम्हारे चेहरे पर थूककर चली जाएगी.

—डैम इट. बोस बाबू ने ज़मीन पर इतनी ज़ोर से पैर पटका कि कमरा झनझना उठा था.

गोबरधन बाबू सहम गए थे. सुचित्रा आकर बोस बाबू को अंदर ले गई थी.

थोड़ी देर में प्याले वगैरह ज़मीन पर पटकने की आवाज़ आई. कई चीज़े एक-साथ शायद तोड़ दी गई थीं. बोस बाबू उसी तरह चीख रहे थे. आखि़र में शायद वह

प्रतिमा को लकड़ी या उस तरह की चीज से पीटने लगे थे. प्रतिमा पहले तो सिस-कियाँ भर रही थी फिर उसके रोने की आवाज भी साफ सुनाई दे रही थी.

गोबरधन बाबू खिन्नता से निकल गए थे.

सरदार कमरे में अकेला बैठकर हथेली मल रहा था. समझ में नहीं आ रहा था कि इस वक्त क्या करना चाहिए. फिर वह भी चुपचाप उठकर बाहर आ गया था. पड़ोस के लोग उसे दिलचस्पी से घूर रहे थे. वह गर्दन झुकाए गली में से निकल रहा था.

●●

इस घटना पर मुहल्ले में अनेक कहानियाँ बन गई थीं, औरतें फुसफुसातीं और मर्द जायका लेकर कहानी बखानते.

परमानंद लाला की ललाइन ने पड़ोस की पंजाबन के कानों में रहस्य का उद्-घाटन किया था. ऐसा गौरव कभी-कभी ही प्राप्त होता है. लिहाजा ललाइन की आंखें खुशी से चमक उठी थीं.

पंजाबन को शायद पूरा यकीन नहीं आया था लड़की पढ़ी-लिखी है. बचाने का रास्ता भी आता होगा.

—हाय रे दईया ! ललाइन को शायद तकलीफ हुई थी. ऐसी बातों पर कोई यकीन न करे तो यही स्वाभाविक है. हथेलियों को कनपटी के पास ले जाकर बोली थी —मैं बंगाली की लड़की का चेहरा देखते ही समझ गई थी. एकदम पीली हो गई बिचारी. और तू कहती है लड़की पढ़ी-लिखी है··· ! पढ़ी-लिखी है तो क्या हुआ ?ऐसे मामलों में बड़ों-बड़ों के पैर फिसलते हैं. हां.

पंजाबन को अब पूरा न सही आधे से ज्यादा यक़ीन आ गया था. यक़ीन आए बिना कोई रास्ता भी तो नहीं है. कई दफा आटा वगैरह मांग लेना होता है. पंजाबी ज्यादातर बीमार ही रहता है. जब कभी बिस्तर छोड़कर उठ नहीं पाता तो ललाइन ही छिपाकर आटा-दाल दे जाती है. लेकिन पंजाबन फिर अपनी सहूलियत से लौटा भी देती है.

ललाइन ने पान का एक और पत्ता हाथ के डिब्बे में से निकाल मुंह में ठूंस लिया बंगाली है बड़ा चालाक.

पंजाबन ने सिर हिलाया—हुं.

—हुं क्या ? तू समझती क्या है ? ललाइन व्याख्या का मोह नहीं छोड़ पा रही थी —बंगाली सरदार से रुपए ऐंठेगा और फिर ठेंगा दिखाएगा. लड़की ब्याहनी थोड़े ही है ? फिर रुपल्ली कौन कमाएगा ?

पंजाबन को आश्चर्य हो रहा था.

—अब बोल, है न तीस मारखां ?

पंजाबन ने गर्दन हिला दी. लकड़ी के स्प्रिंग वाले खिलौने की तरह.

पेट साफ कराना तो अब चार घंटे का खेल है. बंगाली किसी दाई-वाई से इतना तो करा ही लेगा.

पंजाबन कुछ नहीं बोली. सिर्फ आंखों में आश्चर्य था. कोई किसी को नरक में घुसते हुए देखे तो आंखें ऐसी ही होती होंगी.

ललाइन ने पंजाबन के घुटने में उंगली मारी—यह रहा कण्डैलगंज का महा-भारत. बिचारा सरदार खामखाह मारा गया.

—थोड़ी उमर जरूर हो गई थी बेचारे की, लेकिन बहुत शरीफ लग रहा था. पंजाबन ने ऐसे कहा, जैसे ज्यादा उम्र वाले लोग शरीफ होते ही न हों.

ललाइन ने फिर बंगाली की लड़की के बहाने पूरे मुहल्ले का चिट्ठा खोल दिया था. अगल-बगल की चार-छह औरतें दुपहर का वक्त बिताने आ गई थीं. फुस-फुसाहट और दबे हुए कहकहों में एक लम्बी चौकड़ी-सी चल रही थी. ललाइन सबको पान खिला रही थी.

●●

परमानंद लाला की वैसे नाक शुरू मे ही ऊंची रही है. अपने पास मकान है. चलती हुई दूकान है और सबसे आगे दामाद को यहाँ बाँध रखा है.

वैसे बोस बाबू कहते हैं—बैल है, सो बंधा हुआ है, साँड होता तो रस्सी तोड़ कर कब का भाग गया होता. कहने वाले और भी हैं और वे अपने हिसाब से कहते रहते हैं. परमानंद भी मंदिर के पत्थर की तरह जड़ नहीं है, सो जवाब भी वह अपने ही हिसाब से देता है.कभी-कभी तो जवाब ही अभियोग के मुक़ाबले ज्यादा तेज हो जाता.

फिर भी कुलमिलाकर वह मुहल्ले के दूसरे लोगों से कुछ अलग तो है ही. हमेशा खद्दर के धुले हुए कपड़े पहनता है, टोपी लगाता है और नगद कुछेक हज़ार रुपए का मालिक है. ये उपकरण कर्नलगंज में किसी भी आदमी को विशिष्ट बनाने के लिए काफी है. लेकिन दूसरों को हिक़ारत की नजर से देखने वाले, परमानंद के पाँवों के नीचे की ज़मीन इस तरह खिसक रही है, कोई भी तो नहीं जानता था. एक दिन अल-सुबह पुलिस आई और दरवाजे पर दस्तक दी. दरवाज़ा परमानंद ने ही खोला. सामने दरोगा को देखा तो सारा जिस्म पथराने लगा. बगल में ही सब्जी वगैरह की टोकरियाँ पड़ी हुई थीं. सिपाहियों ने तलाशी ली तो उनमें सिगरेट के डिब्बे मिले. परमानंद को थोड़ा ताज्जुब ही हुआ था. दामाद यानी अलख बीड़ी-सिग्रेट नहीं पीता. फिर सोच लिया, लिहाज़ करके सामने नहीं पीता होगा लेकिन है नए जमाने का ही छोकरा. छिप-छिपा के पीता होगा.

दरोगा ने एक सिग्रेट फाड़ ली और लाला की नाक के सामने हथेलियों पर रगड़ दिया. गांजे की बदबू थी. परमानंद सकपकाया लेकिन तब तक अलख को सिपाहियों ने बिस्तर से उठाकर मजबूती से पकड़ लिया था.

परमानंद को काटो तो खून नहीं.

अलख शुरू से ही कुछ सीधा-सादा रहा है. वैसे और लोग उसे बेवकूफ मानते हैं लेकिन दामाद बनने की वजह से ऐसा कुछ मानना लाला के लिए मुमकिन नहीं था. वह कुलमिलाकर 'सीधा-सादा' ही मानता रहा है. लेकिन आलू-टमाटर बेचने के साथ लखपति भी बनने का सपना अलख देख रहा है, यह लाला को पहली बार मालूम हुआ. मामला ही कुछ ऐसा टेढ़ा था कि ज्यादा झमेला करने का मतलब होता, दामाद के साथ खुद भी हथकड़ी पहन लो.

दरोगा ने फिर अलख की कलाईयों में हथकड़ी डाल दी थी. वह चुपचाप सर झुकाए खड़ा था. उसकी बगल में दरवाजे से सटकर उसकी बीवी खड़ी थी. उसकी आंखों में आंसू थे. वह चुप थी.

लाला सकपका रहा था और तय नहीं कर पा रहा था कि ऐसे मौके पर क्या किया या कहा जाना चाहिए. ललाइन अपना सर कूट रही थी और मुहल्ले वालों से लेकर दरोगा तक सबको गाली बक रही थी. वह शायद हर किसी को फांसी पर लटकाना चाहती थी लेकिन चूंकि ऐसा कर नहीं पा रही थी, सीने के अंदर से एक तेज-सी तकलीफ़ का अहसास हो रहा था. दरोगा को गालियाँ दीं तो दरोगा दहाड़ उठा था. ललाइन डर गई थी. कहीं ऐसा न हो कि दामाद के साथ उसे भी बन्द कर

दे. फिर दरोगा के बारे में चुप रहकर, वह मुहल्ले वालों पर थूकने लगी थी. उसे यक़ीन था, किसी ने दुश्मनी करके एक भले आदमी को फसा दिया लेकिन बचकर कोई नहीं जा सकता. आज ही रात को खून उगल कर मरना पड़ेगा.

लेकिन खून उगलकर इसके बाद भी कई सालों तक कर्नलगंज में कोई नहीं मरा था. न मरने के बावजूद ललाइन सिर्फ़ यही बददुआ सबको देती है.

अलख को पुलिस वाले सबके सामने पैदल थाने तक ले गए थे. यह कर्नलगंज वालों ने गौर से देखा था. वैसे भी तब सुबह हो गई थी. ऊपर से ललाइन की चीख़-पुकार से काफ़ी लोग इकट्ठा हो गए थे.

●●

कटरे का बाज़ार. इतनी भीड़-भाड़ है कि पैदल चलना भी हो तो भी कोई मस्ती की चाल से नहीं जा सकता. छोटी-छोटी दुकानें है. धनिया-मिर्च से लेकर कपड़े-लत्ते और लड्डू-समोसे से लेकर किताब-कॉपी तक सब यहां मिल जाते हैं. ऊपर से खोंमचे और रेढ़ी वालों की भीड़ रहती है. कोई गाडी वाला अगर यहां घुस आता है तो रिक्शे की क्रि···क्रि और गाडी की पों-पों के साथ आदमियों के धकापेल में से निकल आना निपुणता की माँग करता है.

सबसे ज्यादा दिक्कत होती है. तीन पहियों वाले टेम्पो से. वे माल लेकर आते हैं तो न दाएं देखते है न बाए, भीड चाहे कितनी भी हो, वे अपना रास्ता किसी-न-किसी तरह निकाल ही लेते है.

प्रोफेसर बैनर्जी शायद दवा वगैरह कुछ लेने इधर आए थे. गली में से एक रिक्शा निकला तो एकदम से सामने पड गए थे. किसी तरह हड़बड़ाकर उससे बचे तो पीछे आकर टेम्पो ने धक्का मार दिया. फौरन ही छाती के बल सामने गिर पड़े और नाक से खून निकलने लगा. हाथ की छड़ी दो हिस्सों में बंट गई थी. एक हिस्सा नाली में गिर गया था और दूसरा टेम्पो के पिछले पहिए के नीचे. दाई कुहनी के पास चश्मा भी पड़ा हुआ था.

कोहराम मच गया.

टेम्पो में आलू की बोरियां थीं. कुछ लोगों ने उनमें से दो-चार कट्टे भी निकाल लिए. कट्टे फिर टेम्पो से उठकर गलियों में चले गए.

खासी भीड़ इकट्ठी हो गई थी. लेकिन जब तक पुलिस न आए घायल को छूने की हिम्मत कोई नहीं कर रहा था. पुलिस के आने के बाद भी कोई नहीं करेगा, यह तय है. पुलिस वाले आदमी के मरने और फोटोग्राफर के आने का इन्तज़ार करेंगे ताकि कचहरी में ठीक-ठीक सबूत पेश किया जा सके.

कर्नलगंज थाने का सिर्फ दो मिनट का रास्ता है. पुलिस फिर जल्द आ गई थी. कुलमिलाकर पन्द्रह मिनट लगे होंगे. किसी ने शायद जाकर इत्तिला दे दी थी.

पुलिस आई तो भीड़ गोलाई में खड़ी हो गई. हवलदार ने कह दिया था कि

बिल्कुल नज़दीक कोई न आए. लोग ग़ौर से घायल का चेहरा और जिस्म देख रहे थे. लेकिन पता नहीं चल रहा था कि यह आदमी अभी तक ज़िन्दा है या सिर्फ़ बेहोश ही.

टेम्पो का ड्राइवर शायद सिंधी था. पहनावे से ऐसा ही लग रहा था. घबराहट आंखों से बुरी तरह झलक रही थी. दरोगा को यह समझा रहा था कि इसमें उसका कोई कसूर नहीं है. दरोगा उसकी बातों पर ध्यान दिए बिना अपनी डायरी में कुछ लिखता जा रहा था. टेम्पो के साथ वाले कुली चुपचाप बीड़ी पी रहे थे. उन्हें इस बात की परेशानी हो रही थी कि आगे की दिहाड़ी मारी जाएगी. कुछ इत्तफ़ाक है कि दिनभर में यह पहली ही दिहाड़ी थी और ऐसा हादसा हो गया.

एक तमाशे के दृश्य से ज्यादा कटरे वालों के लिए यह और क्या था ? लोग खुसर-फुसर कर रहे थे. दो-चार लोग शायद सिर्फ़ ऊंची आवाज़ में ही बोल सकते हैं. वे अपने-अपने हिसाब से ही व्याख्याएं प्रस्तुत कर रहे थे. कुछ लोगों का ख्याल था कि ड्राइवर दारू के नशे में टेम्पो चला रहा था. साले को फांसी ज़रूर लगनी चाहिए. फांसी लगनी चाहिए, फांसी अगर यहीं पर लग जाती तो शायद वे सही माने में उल्लसित हो पाते. लेकिन कुछ लोगों का ख़याल था कि सबकुछ मायाराम का खेल है, मुट्ठी गरम करो तो फांसी भी टल सकती है.

कुछ लोग छतों पर खड़े हो गए थे. दृश्य नीचे से पूरी तरह शायद देखा नहीं जा सकता था, इसलिए ऊपर खड़े होने वालों में औरतें भी थीं. उन्हें इस बात की फिक्र हो रही थी कि अंगीठी का कोयला ख़ामख़ाह फुक रहा है. वे रसोई में वापस जाने की सोच रही थीं लेकिन यह सब छोड़कर जा नहीं पा रही थीं.

●●

कर्नलगंज में यह ख़बर पहुंची, तब तक स्कूल की छुट्टी हो चुकी थी. विनायक स्टोव बुझाकर चाय के प्याले में चीनी डाल ही रहा था कि बोस बाबू ने आकर यह ख़बर दी. उन्हें शायद राशन वगैरह लाने की जल्दी थी, सो चार लफ्ज़ उन्होंने जबान से झाड़े और पांवों को पहियों की तरह आगे बढ़ा दिया. पहिए रुक सकते हैं लेकिन बोस बाबू के पाँवों का रुकना इतना आसान नहीं है, जब तक कि भूचाल या बाढ़ जैसा कोई संकट न आ जाए.

विनायक कटरा पहुंचा. थोड़ा अलग हटकर दरोगा के कानों के पास कुछ फुस-फुसाया. वह शायद प्रोफ़ेसर बैनर्जी को छूकर देखना चाहता था कि अभी भी सांस चल रही है या नहीं, और अगर चल रही हो तो फ़ौरन हॉस्पिटल कैसे पहुंचाया जा सकता है.

दरोगा अपनी ज़िद पर अड़ा रहा—पुलिस केस का मामला है. जब तक इन्क्वायरी पूरी नहीं हो जाती लाश को कोई छू नहीं सकता.

विनायक ने झिड़का— आपको कैसे मालूम कि यह लाश है ?

दरोगा ने आंखों की पुतलियां नचाईं—मास्टरी अलग चीज़ है और दरोगाई अलग. हम तो सूंघकर बता सकते हैं, कौन, कहां पर किस हालत में है. फिर आत्म-गौरव का एक भाव दरोगा के चेहरे पर छा गया था.

विनायक ने आख़िर में हाथ जोड़े—सिर्फ़ एक बार नब्ज़ पकड़कर मुझे समझ लेने दीजिए. आपकी समझ गलत भी तो हो सकती है.

—बीवी-बच्चों वाला आदमी हूं, बीस से उन्नीस हुआ नहीं कि नौकरी से छुट्टी. मेरे पेट पर क्यों लात मारते हैं ? आप तो पढ़े-लिखे आदमी हैं.

गोलाई में खड़े लोग कुछ स्पष्ट आवाज़ में बातें कर रहे थे. उन्हें शायद यकीन

था कि टेम्पो से घायल आदमी 'गोलोक-धाम' पहुंच चुका है.

दरोगा को पसीना आ गया था. वह जेब से रूमाल निकालकर चेहरे के ऊपर फिरा रहा था.

हवलदार और साथ के दो सिपाही भीड़ को गालियां दे रहे थे कि वे बार-बार नज़दीक आ रहे थे. ज्यादा अगड़म-बगड़म की तो कचहरी की ख़ाक छाननी होगी. कचहरी के नाम से लोग फिर पीछे हटने लगे थे.

विनायक ने प्रोफ़ेसर बैनर्जी के पांवों की तरफ देखा. एक नाखून उखड़ गया था. वहां का लाल मास भयानक लग रहा था. दोनों पैरों से सैंडिल्स छिटककर बाहर निकल आई थी. एक सिरहाने की तरफ थी, दूसरी दाई पिंडली के पास. दाईं तरफ से ही पतलून का नीचे का हिस्सा फट गया था. जो आदमी ज़िन्दगी-भर लोगों से आदर पाता रहा, वह अचानक तमाशाई बनकर किस तरह अनादृत-सा पड़ा हुआ है! विनायक को याद आया कि एक दफ़ा उन्होंने ग्रीक ट्रैजेडी पढ़ाते हुए बताया था कि संसार में शोक और उल्लास इसलिए होते हैं कि हम अपने अंदर आकांक्षाएं पालते हैं, बल्कि ज्यादातर लोग सिर्फ आकांक्षाओं के लिए ही ज़िन्दा रहते हैं. हर कड़ी में उन्हें अनजाने ही बढ़ाते चले जाते हैं. इण्डियन माईथोलॉजी में जो फ़कीर का कॉन्सेप्ट है,यूनीक है. उसकी कोई आकांक्षा नहीं होती. वह नदी होता है, आसमान होता है और ज़मीन होता है. इसलिए उसका न तो शोक होता है, न उल्लास.

●●

शंभू चुप बैठा था.

अंधेरा था. उसका चेहरा साफ दिखाई नहीं पड़ रहा था.

इस कॉटेज का वैसे पहले कोई नाम नहीं था. प्रोफेसर बैनर्जी ने खरीदकर नाम दिया था—'एकान्त'.

विनायक ने एक बार कहा था—यह नाम कुछ समझ में नहीं आया, सर आप तो 'मास-मूवमेंट' की बात करते रहे हैं, उसके साथ यह 'एकान्त' कुछ जंचता नहीं है.

—ऊपर से शायद न जंचे लेकिन अंदर एक दूसरा मतलब है. प्रोफेसर ने आरामकुर्सी पर अपने को रिलैक्स कर लिया था—यह दरअसल एक आईना है. जैसे कि बाथरूम में लगा हो. यहां ज़रूरत है, अपने सारे अहम को, उतारे हुए फटे कपड़ों की तरह, छोड़कर खड़े होने की. खड़े होने पर पता चलता है कि हम उतने खूबसूरत नहीं हैं, जितना समझे जाते हैं.

ये बहसें शंभू को कभी समझ में नहीं आई. लेकिन इतना वह समझ गया था कि जिसका यह घर है, वह आदमी बरगद के पेड़ को ठुकराकर घास-फूस से भी मुहब्बत कर सकता है.

विनायक ने शंभू को हिलाया—बहुत तकलीफ है. है न?

शंभू कुछ नहीं बोला.

आंखों में आंसू नहीं थे. सिर्फ चेहरा स्याह था. चेहरे की यह स्याही अंधेरे में शरीक होकर पूरे घर को रात बना रही थी.

विनायक फिर ख़ामोश हो गया. कहने के लिए जितनी बातें थीं, इनके मतलब शायद खो गए थे. और इस तरह खो जाने के साथ यकीन नहीं आ रहा था कि शोक और उल्लास को अहमियत न देने वाला आदमी इस तरह से ग़ैरमौजूद हो गया! इस पर यकीन करेगा कोई? अभी जैसे अपने स्टडी रूम से निकलकर बासठ बरस का वह बूढ़ा ठहाका लगा देगा—हऽलऽलो विनायक, चुपचाप कैसे बैठे हो?

शंभू उठ गया था. वह शायद पिछवाड़े चला गया था. उठने से पहले बाहर के

लैम्पपोस्ट की रोशनी उसके चेहरे पर पड़ी थी. विनायक को लगा, वह एकदम से कभी भी कुछ कर सकता है. ख़ाली वक्त काटने के लिए उसके पास एक स्लेट थी. आज पहली दफा वह खाली है और साथ स्लेट नही है.

सामने बेडरूम दिख रहा है. कोने में रिकार्ड प्लेयर और दीवार पर रिकार्डस का शेल्फ. शाम को अक्सर प्रोफ़ेसर बैनर्जी संथाली और बाऊल गीत सुनते थे. उस वक्त कोई भी आता, न तो मिलते थे, न बात करते थे, विनायक आता तो चुपचाप बगल की कुर्सी पर बैठ जाता. फिर रिकार्ड के रुकने पर आंख खोलकर प्रोफेसर कहते— तुम आए हो ? अच्छा किया. शंभू तो यह सब सुनता नहीं है, सो अकेले ही बजाना पड़ता है.

विनायक ने आंखें फिरा ली थीं. यादें इतनी तकलीफ दे सकती हैं, इसका अहसास इससे पहले सिर्फ तारा के गुजर जाने पर हुआ था. लगा था, प्रोफेसर की तरह तारा भी उसे अन्दर से पकड़ना चाहती है. शाम का अन्धेरा उसे सिर्फ तोड़ रहा था. अपनी टूटन को धीरे-धीरे बढ़ते हुए देखना कभी-कभी एक ध्वस देता जाता है जिसका कोई रूप-रंग नही होता. विनायक को महसूस हुआ, उसे सिर्फ यही मिला है.

अचानक वह उठ खड़ा हुआ. शम्भू को आवाज दी. आवाज को थोड़ी देर बाद दोहराया भी. लेकिन शम्भू सामने नही आया. विनायक फिर टांगों को घसीटने लगा. शम्भू पिछवाड़े घुटनों में सर छुपाए सिसकियां भर रहा था. उसके अलावा बाकी माहौल में सन्नाटा-सा था. वह मिनट-भर वहाँ खड़ा रहा फिर चुपचाप वहां से निकल आया.

●●

वकील ने वसीयत खोली तो पता चला, प्रोफेसर बैनर्जी अपना सबकुछ कोढ़-आश्रम को दान दे गए है. बैंक मे कोई खास पैसा नही था. चर्चलेन का यह मकान था और मकान के अन्दर कुछ जरूरी-गैरजरूरी सामान थे. तादाद में जो चीज सबसे ज्यादा थी, वह थीं किताबें.

उनके रिश्तेदारों के बारे में एक बार विनायक ने पूछा था तो टाल गये थे. पाईप में धुआं उडेलकर कहा था—आदमी का रिश्ता सिर्फ जमीन से होता है, बाकी लोग पड़ोसी होते है.

वैसे दूर के रिश्ते का एक चचेरा भाई दारागंज मे रहता है, इतना विनायक को मालूम था. लेकिन उसे कभी इधर आते हुए शम्भू ने भी देखा नही है. सिर्फ इतना पता है कि वह वकालत करते हैं और उनके बच्चे वगैरह नहीं है.

वसीयत खोली गई तो कर्नलगज स्कूल के कई मास्टर मौजूद थे. वकील पढ़ता जा रहा था और वे सब शब्दों को निगल-से रहे थे. नही, ऐसी कोई उम्मीद नही थी कि इनमें से किसी को कोई हिस्सा मिलेगा लेकिन वसीयत है ही ऐसी चीज़ कि उसके नाम से मन हिलोरें खाने लगता है.

एक आदमी मकान के सामने आकर रुका था. उम्र साठेक बरस की होगी और चेहरे की लकीरों मे खासी परेशानी-सी झलक रही थी. एक दरी में लपेटा हुआ बिस्तर था और बीच के आकार का एक जंग लगा टीन का बक्स था. आंखों पर ऐनक चढ़ा था. ऐनक के शीशे बहुत मोटे किस्म के थे. उसके बावजूद उसे मकान का नम्बर पढ़ने में तकलीफ़ हो रही थी. विनायक बाहर निकला तो उसने अपना परिचय दिया—मैं प्रोफेसर बैनर्जी का मामा हूं, नरेन्द्रमोहन मुखर्जी. लेकिन यह नाम दफ्तर के खाते में ही लिखा है, लोग धुनी बाबू कहकर पुकारते हैं. जबलपुर से आ रहा हूं. सारी बातें एक ही सांस में कह गये थे.

विनायक को याद आया, इनका ज़िक्र एक-आध बार प्रोफ़ेसर बैनर्जी ने किया भी था. ज़िक्र इसलिए किया कि यह अपने सबसे छोटे मामा से उम्र में दो बरस बड़े थे.

बचपन मे वे साथ-साथ खेलते थे और आज भी साल-दो साल में एक-आध चिट्ठी आ ही जाती है.

वकील को देखकर धुनी बाबू ने अन्दाज़ा लगा लिया—वसीयत पढ़ रहे होंगे आप. ले-देकर एक ही भानजा था, वह भी चला गया. बात खत्म करने के बाद उनकी बनावटी सांस इतनी गहरी हो गई थी कि कमरे में एक दबी किस्म की हंसी उभर रही थी.

लेकिन वकील ने वसीयत दुबारा नहीं पढ़ी थी. उसे धुनी बाबू के हाथ थमा दिया था.

धुनी बाबू की आंखें चमक-सी उठी थीं. इतने लम्बे सफ़र की वजह से आँखों में शायद कुछ तकलीफ़ भी हो रही थी. लिहाज़ा कागजों को उन्होंने विनायक की तरफ़ बढ़ा दिया—पढ़िए साब, आप ही पढ़िए.

विनायक ने संक्षेप में बता दिया—सबकुछ कुष्ट आश्रम के नाम कर गए हैं.

—स्ट्रेंज. धुनी बाबू धप्प से बगल में पड़ी स्टूल पर बैठ गए. उनके चेहरे पर हवाईयां उड़ने लगी.

वकील चला गया था.

स्कूल से जो लोग आये थे, वे भी चुपचाप निकल गए थे. घर में धुनी बाबू के अलावा शम्भू और विनायक थे.

फिर एकाएक धुनी बाबू उत्तेजित हो गए—इट'ज इम्पासिबल. आफ्टर ऑल हमारा भी कोई राइट होता है. यह छोटा था तो अक्सर बीमार रहता था. एक दफा तो हालत यह हो गई थी, डॉक्टर ने जवाब दे दिया था और घर में रोना-पीटना शुरू हो गया था. लेकिन अपनी नानी की वजह से बच गया. मेरी मदर ने तो दिन-रात एक कर दिया था.

शम्भू ने सामने चाय का प्याला रख दिया था. विनायक ने प्याला उनकी तरफ़ बढ़ा दिया—आपने मेरा परिचय नहीं पूछा लेकिन खुद ही बता रहा हूं. मैं प्रोफ़ेसर साब का स्टूडेण्ट रहा हूं. हम लोगों का रिश्ता इतना नज़दीकी था कि मुझे नहीं लगता, वह अपनी वसीयत में कुछ और लिख सकते थे.

—इस आईडियलिज़म से पेट भरता है ? मैं रेलवे में बुकिंग क्लर्क था. अट्ठावन की उम्र हो गई तो रिटायर हो गया और अब इस उम्र में भी सुबह नौ से शाम के छह तक एक ठेकेदार के यहाँ कैशियर का काम करता हूं. मैंने शादी ज़रा देर से की थी. बच्चे सारे नाबालिग है. लड़कियाँ सर के ऊपर हैं, जिनकी शादी करनी है. मैं ब्राह्मण हूँ बाप-दादे की नाक कटाकर लड़कियों को भंगी-चमार के हाथ तो छोड़ नहीं सकता. कोई मेरी हालत में रहे तो समझेगा कि कहीं कोई आईडियलिज्म होता ही नहीं. आखिरी वाक्य के साथ धुनी बाबू ने चीकट बनियान के नीचे से जनेऊ निकालकर दिखा दिया था कि सचमुच वह ब्राह्मण हैं.

विनायक ने धुनी बाबू को शायद तसल्ली देनी चाही थी—यह जो लड़का है न, शंभु, ब्राह्मण नही है. इसका बाप चौक की एक गली में छतरी लगाकर जूते वगैरह सिलता रहा है.

—यू मीन, यह चमार है ? अगर कोई कह देता कि वह लड़का मंगलग्रह से आया है तो भी शायद धुनी बाबू इतने विस्मित नहीं होते.

— प्रोफेसर बैनर्जी की देखभाल यही करता रहा है. और प्रोफ़ेसर साब इससे बहुत मुहब्बत भी करते थे.

—करते होंगे. धुनी बाबू खिन्न-से हो गए थे—लेकिन मेरा असूल बिल्कुल

अलग है. मैं तो रेल तक के सफ़र में कुछ खाता-पीता नहीं. अपने बाप-दादों के पुण्य की परवाह मुझे है. मुझे इस बात का गौरव है कि मैं यज्ञोपवीतधारी भारद्वाज गोत्रीय ब्राह्मण हूं. इतना बड़ा वंश जिसका हो, वह मनमानी नहीं कर सकता.

धुनी बाबू को शायद उल्टी-सी आने लगी थी कि उन्होंने नीची जात के हाथ की चाय पी ली. लेकिन इस वक्त मामला इतना संगीन है कि इसको लेकर झमेला खड़ा नहीं किया जा सकता—जमीन-जायदाद का मामला है, तिस पर जो वसीयत है वह कुछ और ही कहती है.

—आप नहा-धो लीजिए. खाना वगैरह खाकर आराम कीजिए फिर तसल्ली से बात करेंगे.

धुनी बाबू तनकर बैठ गए थे—वाह साब, मैं आराम करने के लिए छुट्टी लेकर यहां थोड़े ही आया हूं. मुझे तो लगता है, वसीयत में कोई घोटाला है. वर्ना ऐसे कैसे हो जाता. भानजा अपना फर्ज भूल जाता ? इन्सान का जब वक्त ख़त्म होने लगता है, पाप-पुण्य याद आता है. सारा लेना-देना भी आँखों के सामने तैर आता है.

धुनी बाबू को रुकना पड़ा था, विनायक ने हथेली उठायी थी—पाप-पुण्य वगैरह पर प्रोफ़ेसर साब को कभी बात करते हुए नहीं सुना. उन्हें शायद ऐसी बातों की फ़िक्र भी नहीं थी.

—ह्वाट?आप कहना क्या चाहते हैं कि ज़िन्दगी का कोई तरीका नहीं होता ? मैं गृहस्थ ब्राह्मण हूं. मैं जानता हूं कि वंश चलाए बिना आत्मा स्वर्ग नहीं पहुंच सकती. उसने शादी नहीं की तो हमने कुछ नहीं कहा. लेकिन इसके माने यह नहीं होते कि पाप-पुण्य से आदमी बेख़बर रहे. खैर, इस तत्त्व में पड़ने से क्या फ़ायदा ? मैं तो सिर्फ़ अपना हक लेने आया हूं, भानजा आख़िर मेरा था···

—मुझे जरा निकलना था. कुछ आश्रम वालों से पता करना था कि इन किताबों का वे क्या करेंगे. वहां जरूरत न हो तो ये यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी को दी जा सकती हैं.

धुनी बाबू बौखला उठे. पटाखे में माचिस लगाने के बाद जो हालत होती है, लगभग उसी तरह चिल्ला पड़े—मैं पूछता हूं कि आप कौन होते हैं ? मैं आदमी की शकल देखकर उसके पेट के अंदर की बातें उगलवा सकता हूं. दिस इज ए कांस्पिरेसी. कुष्ट आश्रम तो बहाना है, रिश्तेदारों से जायदाद छीनने के लिए आप लोगों ने एक दम तोड़ते आदमी से यह वसीयत करवा ली. मैं हाईकोर्ट जाऊँगा और एक-एक को जेल भिजवाकर ही दम लूंगा. आई से यू गेट अवे···

—जो बात आप मुझसे कह रहे हैं, वही मुझे आपसे काफ़ी देर पहले ही कह देना चाहिए थी. लेकिन आप मेरे प्रोफ़ेसर के मामा हैं, इसलिए आपको इतनी मार्जिन दी हो, ऐसी बात नहीं. आप बुजुर्ग आदमी हैं, इस वजह से सिर्फ़ लिहाज़ की वजह से कुछ नहीं बोला.

धुनी बाबू ने कुर्ते की आस्तीन ऊपर उठाई और दरवाजे पर मुक्का मारा. एक शीशा टूट गया और उनकी हथेली में से ख़ून निकल आया. ख़ून देखकर कोई दसेक सेकिण्ड के लिए वह भौंचक्के रह गए थे. फिर बनियान के नीचे से जनेऊ निकाल लिया—मैं निष्ठावान ब्राह्मण हूं. मेरा शाप झूठा नहीं होगा. मेरा शाप है कि आप बिना पानी के दम तोड़ेंगे और लोग तब आप पर थूकेंगे.

शम्भू हड़बड़ा रहा था. बात इतनी बढ़ जाएगी, इसकी उम्मीद उसे नहीं थी. आख़िर में वह टूटे हुए शीशों के टुकड़ों को बटोरने लगा था.

धुनी बाबू ने अपना टीन का बक्सा खोला और पुराने कपड़े का एक टुकड़ा

जो सफ़र में सफाई के लिए काम आया होगा, निकालकर फाड़ लिया.

शम्भू ने शीशे के टुकड़ों को उठाया और बोला   मैं आपको साफ़ कपड़ा देता हूं. बर्नोल भी है.

—बहुत हो गया. मुझे तो अफ़सोस इस बात का है कि यहां आकर मैंने चाय ही क्यों पी ? इसका प्रायश्चित्त मैं करूँगा लेकिन जिनके मन में पाप भरा है उनका भी निस्तार नहीं है. धुनी बाबू अपनी हथेली पर एक बेहद मैली पट्टी कर रहे थे. और आख़िर में अपने शाप की बात याद दिला दी थी. उनके नथुने सांप की तरह फूल रहे थे.

धुनी बाबू ने उस दिन फलाहार किया था. ऐसे अपवित्र घर को जब तक विधिवत यज्ञ वगैरह से पवित्र नहीं किया जाता, खाने का सवाल ही कहां पैदा होता है ! और वह भी चमार के हाथ का दाल-भात खाकर स्वर्ग में अधिष्ठित पूर्व-पुरुषों के मुख पर मूतना थोड़े ही है ! ख़ैर, यहां की बातें उन्हें कुछ भी समझ में नहीं आई थीं और वह शाप की याद दिलाते हुए अगली सुबह जबलपुर वापस चले गए थे.

●●

प्रोफ़ेसर बैनर्जी की मौत के अगले दिन कर्नलगंज स्कूल में एक शोकसभा हुई थी और स्कूल की छुट्टी हो गई थी. ज्यादातर बच्चे खुश होकर घर की तरफ़ आ गए थे. मुफ्त में एक और दिन की छुट्टी मिल गई ! मास्टरों में कुछ घर चले गए थे, कुछेक सिनेमा वगैरह की तरफ़. विनायक स्कूल नहीं गया था.

पुलिस की हिफ़ाज़त से लाश लेने में ही काफ़ी एड़ी-चोटी एक करनी पड़ी. लाश पोस्टमार्टम के बाद मिली तो रात के डेढ़ बज रहे थे. फूंक कर लोग लौटे तो दिन के ग्यारह बज रहे थे. जनार्दन को यह बात अखरी थी कि बिना अर्जी के विनायक छुट्टी पर था. शाम को साग-सब्जी के लिए बाज़ार आए तो परमानंद लाला से अपनी नाराज़गी ज़ाहिर की थी. होशियार कर दिया था कि सरकारी मामला है. यहां सब-कुछ कायदे-कानून से होता है.

परमानंद ने भी हामी भरी थी. कानून आख़िर कानून ही होता है. बिना अर्जी के नागे पर रहना सरकार थोड़े ही समझ जाएगी.

ख़ैर, यह बात यहीं खत्म हो गई थी.

जनार्दन बाबू ने सोचा तो था लेकिन विनायक के मुंह पर कह देने लायक साहस नहीं जुटा पाए थे.

परमानंद लाला अपने दामाद को तो वैसे तीसरे ही दिन जमानत पर छुड़ा लाया था लेकिन दुकानदारी फिर खुद ही संभाल ली थी. लिहाज़ा घूमने-फिरने का वक्त आजकल थोड़ा कम ही मिलता है. पहले वक्त मिलता तो अख़बारों में क्या छप रहा है, किसी को पकड़कर पढ़वा लेता, आजकल उतनी फ़ुर्सत ज़रूर नहीं है लेकिन कभी विनायक मिल गया तो ख़बरों के बारे में पूछ जरूर लेता है. उसने फिर बता दिया था हेडमास्टर बिना अर्जी के नागा करने की वजह से ख़फ़ा हो गया और कह गया है कि हरेक को कानून से चलना चाहिए.

विनायक ने बात शायद आधी ही सुनी थी और चलने लगा था. परमानंद ने रोक लिया—वो छिद्दा कहता है, खामे डाक्टर हो. ज़रा हाज़मे की कोई दवा हो तो देना. फिर उसने तराज़ू को खिसकाया और गर्दन आगे की तरफ बढ़ा दी—बुरा न मानो तो एक बात कहूं···?

—एक नहीं दस कहो लेकिन जल्दी.

—हां-हां, जल्दी ही कहूंगा, कौन-सी रामायण सुनानी है ! मैं तो चाहे बुरा मानो, चाहे भला बात साफ़-साफ़ ही कहूंगा. सुनते हैं, प्रोफेसर काफी पैसे छोड़ गए है. न जोरू न बच्चे. रुपए-पैसे वो न छोड़ेगा तो क्या कर्नलगंज का धनिया-मिरच वाला छोड़ेगा ?

—प्रोफेसर आख़िर मास्टर ही होता है. जोड़ेगा भी तो कितना जोड़ेगा ? कोई लखपति तो नही बन सकता.

सामने मूढ़ा-सा रखा था. परमानंद ने उसकी तरफ इशारा किया—बैठो, वैसे बात तुम लाख टके की करते हो.

विनायक नहीं बैठा.

—नही बैठोगे, मालूम है. तुम ठहरे पढ़े-लिखे मास्टर. हम आलू-गाजर बेचते हैं. किस्मत में पढ़ना-लिखना रहता तो तुम्हारी तरह पैरों में पहिए बांधे यहां से वहाँ खूब चक्कर लगाते.

उसकी बात ख़त्म होने से पहले ही विनायक चला गया था. कोई आलू का खरीदार आया था. परमानंद ने तराजू पर बाट चढ़ाया और तौलने लगा. कभी-कभी साग-भाजी तौलने का यह सिलसिला बहुत ऊबा देता है. कोई टके भाव पूछता ही नहीं. वैसे अब ज़माना ही ऐसा आ गया कि बड़े-बड़े 'बी०ए० पास' भी टक्करें मारते फिरते हैं. लेकिन फिर भी पूछ तो पढ़े-लिखों की ही है.

●●

बोस बाबू झोले में मछली लेकर घर लौट रहे थे. लाला ने पकड़ लिया—कहां गोली दागने जा रहे हो, बंगाली दादा.

बोस बाबू अपनी बत्तीसी दिखाकर रुक गए. उन्हे चलना या रुकना, किसी में ज्यादा वक्त नही लगता. न फर्क़ ही पड़ता. बोले—गोली तो हमारा ग्रैण्डफ़ादर दागता था. ही वाज ए ज़मीदार. अंग्रेज़ों का पीरियड था.और वो रायबहादुर टाइटल के साथ ज़मींदारी करता था. मैं कौड़ीराम हूं. सो मुझे देखकर लोग सच नही मानेगा. इसलिए मैं भी किसी से यह सब नही बोलता.

परमानंद को शायद बहुत मज़ा आया था. उसने सामने के गुमटी वाले से दो फश्टक्लास' चाय के लिए आवाज़ मार दी. बोस बाबू ने नाक में सूंघनी ठूँसी और मूढ़े पर बैठ गए.

चाय की चुस्की के साथ लाला ने बात शुरू की—तुम्हारी बिरादरी का मामला है, तुम्हें पता होगा, प्रोफेसर वाला मामला.

बोस बाबू के होंठों पर व्यंग्य-हंसी थी—हां, पता है. आफ्टर ऑल आई नो एव्री बेंगाली ऑफ इलाहाबाद.

यह अंग्रेजी वाला हिस्सा लाला को समझ में नही आया. लेकिन यह कहना कुछ अटपटा-सा लगता है कि सीधी-सादी हिन्दी में बोलो तो हम भी समझें. ख़ैर, बात उसने आगे ढकेल दी—प्रोफेसर का कोई मामा आया था जबलपुर से. और इधर तुम्हारा यह मास्टर सबकुछ हड़पने को बैठा है.

—यही मज़ा है. बोस बाबू ने रूमाल से अपनी नाक की सूंघनी साफ की—पैसा अगर हो तो भूत भी पीछे पड़ जाता है. और आदमी तो भूत का भी बाप होता है. क्यों ?

लाला ने इस क्यों को टाल दिया. मिनट-भर सोचता रहा. फिर बोला—वकील बुलाकर वसीयत बनी है कि सबकुछ किसी आश्रम-वाश्रम को चला जाएगा. यहां मामला ज़रा टेढ़ा हो गया.

—यम आई नो. बाद में देखोगे कि आश्रम-वाश्रम सब फुस्सऽऽ. सबकुछ मास्टर हड़प कर मौज करेगा.

—देखो दादा, मामला है तुम्हारी बिरादरी का. हम बनियों में ऐसा होता तो दस लोग विरोध करते और कोई-न-कोई रास्ता निकाल लेते. लेकिन माफ़ करना, ये बंगाली लोग मछली-भात खाएंगे और दुर्गापूजा मनाएंगे. कहीं लड़ाई-झगड़े की बात हुई नहीं कि धोती संभालकर लगे भागने.

बोस बाबू को ऐसी बातें आए दिन सुननी पड़ती हैं. लिहाज़ा एक रेडीमेड जवाब पास रहता है. फौरन उसे बढ़ा दिया—तो नेताजी सुभाषचन्द्र बोस कर्नलगंज के गली-कूंचे में पैदा हुए थे ?

परमानद इस सिलसिले को आगे घसीटना नहीं चाहता था. दिमाग में प्रोफेसर बैनर्जी की जायदाद वाली बात के कीड़े कुलबुला रहे थे. वही बात फिर से उठाई—मास्टर ऊपर से जितना शरीफ़ दिखता है, उतना है नहीं. क्यों ?

बोस बाबू ने अपनी गर्दन नचाई—अरे लाला, यही तो संसार है. तुम्हारे आलू-बैंगन के अंदर कीड़ा भरा है, न तो खरीदार को घर ले जाकर काटने से पहले मालूम होगा, न तुम ही बताके बेचोगे.

—बड़ी ज़बरदस्त बात कह दी तुमने, दादा. दुनिया एक तमाशा है, लेकिन हममें और मास्टर में एक फरक है. वो मास्टर है, पढ़ा-लिखा है. जो कुछ कहता है, मुहल्ले वाले रामायण की तरह सुनते है. आख़िर में ऐसा आदमी झांसा दे दे तो फिर विश्वास भगवान पर भी नहीं रहता.

बोस बाबू कुछ उदास-से हो गए—बिट्रे तो भगवान भी करता है. नहीं तो यह हरिचरन बोस जमींदार बनकर हुक्का गुड़गुड़ाता. थैला हाथ में लटकाकर सूखे हुए बैंगन और आधे-सड़े आलू नहीं खरीदता. बोस बाबू का चेहरा शुरू में उदास था. बाद में एक प्रतिहिंसा का भाव उभर आया था.

—ख़ैर, मैं तो यह कह रहा था, तुम कुछ ज्यादा ही घुले-मिले हो मास्टर से. वैसे पता तो करना, मन में है क्या छोकरे के. आजकल तो सुनते हैं कालेज के 'बी. ए. पास' लड़के डकैती करते फिरते है, बैंक लूटते हैं.

बोस बाबू खिन्न हो रहे थे. होंठ उलटकर कहा—करता होगा, मेरे तो सिर्फ लड़कियां हैं, हम काहे को दिमाग ख़राब करें ?

—वैसे एक बात है दादा. लाला ने बड़े रसीले अंदाज़ में कहा - आजकल तुम्हारी लड़की मास्टर के यहां खूब आ-जा रही है. लोग आख़िर चुप थोड़े ही बैठे हैं. काना-फूसी होती है, और तरह-तरह की बातें फैलती हैं.

बोस बाबू तमतमा उठे - कर्नलगंज को तो बस एक बम लाकर उड़ा ही दो तो बात बनेगा. अरे भई, अपना ही घर संभालो तो बहुत है. मेरा लड़की अगर इंग-लिश पढ़ने मास्टर के यहां जाता है, तुम्हारा क्यों सरदर्द होता है ?

—हां तो यह कहो न, अंग्रेजी पढ़ने जाती है. बिना अंग्रेजी के तो दादा, आज-कल कोई बात नहीं बनती. सुना है, आजकल दफ्तरों में चपरासी लगते हैं, वो भी 'बी.ए. पास' अंग्रेजी बोलने वाले होते हैं. क्या ज़माना आ गया. लाला ने बोस बाबू का तमतमाया चेहरा देखकर बात को घुमाना चाहा था.

· बोस बाबू उसी सिलसिले पर अड़ रहे—मेरा दो नहीं, दस आंख है. मेरा लड़की क्या करता है, कहां जाता है, आई नो एव्री थिंग.

लाला ने स्वीकृति में सर हिलाया--बंगाली का आख़िर दिमाग कद्दू जैसा थोड़े ही होता है. मैं तो गोबरधन बाबू की बात कह रहा था. बोल रहे थे, सरदार से खूब

रंगरेलियां मनाई और अब मास्टर को फांस रही है.

बोस बाबू ने पूरा चेहरा बिगाड़ लिया था--वह गोबरधनदास करेगा क्या ? काम-धाम तो कुछ है नहीं. सारा दिन खाली बैठना और अखबार का न्यूज चाटना है. जैसे उसी में इस कर्नलगंज का फ्यूचर डिपेंड कर रहा है और जो स्पेयर टाइम बचे, उसमें दूसरों की बहू-बेटियों पर कीचड़ उछालो. फिर दुनिया को बताओ तुम तो दूध के धुले हो, कहीं रत्ती-भर भी तो दाग नहीं है. मैं तो एक-एक को नंगा कर सकता हूं. बस, मेरे पास फैक्ट्स हैं.

बोस बाबू फिर नाक में सूंघनी ठूंसकर गली में घुम गए थे. लाला तराजू से पीले किस्म के गाजर तौलने लगा था.

●●

दोपहर का वक्त काफी कुछ खाली रहा है. कर्नलगंज का यह मुहल्ला कोई चौक बाजार थोड़े ही है जो रात के बारह बजे तक लगातार गहमा-गहमी लगी रहेगी. दोपहर का यह वक्त यहां के व्यापारियों को थोड़ा आराम करने का मौका देता है. लोग रोटी खाकर गद्दी पर ही ज़रा कमर सीधी कर लेते हैं. कोई-कोई तो दस-बीस मिनट के लिए झपकी भी ले लेता है लेकिन बीच में कोई ग्राहक आ गया तो फिर उठना ही पड़ता है. पांच पैसे का धनिया खरीदने वाला ग्राहक आखिर ग्राहक ही होता है. लक्ष्मी की कृपा को एक बार ठुकरा दिया तो जिन्दगी-भर के लिए फोकटिया बन-कर फिरते रहो.

लाला के साथ सेवाराम की परचूनी की दूकान है. जात से भंगी है लेकिन अब दूकानदारी करके मालदार हो गया. लाला को कई बार यह बात खल भी जाती है. लेकिन खले चाहे अच्छी लगे, किया क्या जा सकता है ? इस जमाने में तो भंगी-चमार से लेकर पण्डित तक हर कोई एक-दूसरे की बराबरी कर रहा है. सेवाराम हिसाब मिला रहा था. दोपहर के इस वक्त का इस्तेमाल उसका अक्सर हिसाब मिलाने में ही हो जाता है. नाक बजाकर सोना न तो उसे पसन्द है, न आता ही है. हिसाब का काम न रहा तो कनस्तर वगैरह साफ़ कर लेता है. झाड़न उठाकर इधर-उधर की धूल-मिट्टी पर ही मार देता है.

लाला अपनी दूकान से उतरकर सेवाराम के सामने आ गया. अपनी आदत के मुताबिक उसने बनियान उठाकर पीठ खुजाई और हालचाल पूछने लगा. हालचाल के बाद मास्टर वाली बात पर आ गया था—हम-तुम तो बस तराजू थामते-थामते ही दम तोड़ देंगे. वह मास्टर को देखो, बरेली से आया था तो सिर्फ़ एक टीन का बक्सा-भर था. अब देखना, लाखों में खेलेगा.

सेवाराम ने हिसाब वाली कापी बगल में रख दी—अच्छा है. कर्नलगंज वाला आज तक लखपति बना तो नहीं. चलो मास्टर ही सही.

--तुम तो बस हल्दी और गुड़ ही तौलते रहोगे ! इधर दुनिया में क्या-क्या तमाशा हो रहा, पता भी किया करो. मास्टर एक प्रोफेसर का मकान और लाखों रुपये बस हड़पने ही वाला है. हम तो हर गली-कूंचे की खबर रखते हैं. सो, हमें पता है, हर बात. प्रोफेसर का मामा आया था. उस बिचारे को तो मार-पीटकर ही भगा दिया. लाला के मुखमंडल पर उस 'बिचारे' के लिए एक शुद्ध दया का भाव उभर आया था.

सेवाराम झाड़न से मर्तबानों पर पड़ी धूल साफ कर रहा था.

—ऊपर से बंगाली की लड़की वाली बात तो है ही. लाला ने थोड़ा इधर-उधर देखा. एक ओर आँख दबाकर मामला समझा दिया लड़की देखना कहीं की नहीं रहेगी. बंगाली है गधा. अब कुछ कहो तो ताव खाकर खड़ा हो जाएगा और मोहल्ले-

भर को उल्टी-सीधी सुना देगा. फिर देखना सर फोड़ता रहेगा.

बात सेवाराम की समझ में आ गई थी. उसे यह सोचकर अच्छा लगा कि उस पर कोई उँगली नहीं उठा सकता है. किसी से न लेना है, न देना. पहले लोग भंगी कहकर दूकानदारी पट करने की कोशिश करते थे. अब वे ही लोग आते हैं, और खड़े होकर घंटों गली-मुहल्ले के किस्से सुनाते हैं. यही लाला पहले देखकर नाक-भौं सिकोड़ता था. लोगों से कहता था, झाड़ू मारने वाला अगर पंसारी बन गया तो फिर सारे बनिए जाकर पाखाना ही माफ़ करेंगे. लेकिन यह शुरू की बात थी. सेवाराम आखिर में पंसारी बन ही गया और दूकानदारी चल ही गई. इन सबके बावजूद कर्नलगंज के बनियों ने जाकर पाखाना साफ करना शुरू नहीं किया. सेवाराम को पुरानी बातें याद तो आती हैं लेकिन बस मुँह नहीं खोलता. जब पड़ोस में रहना है तो सांप-नेउले की तरह रहना भी क्या रहना हुआ !

परमानंद देर तक अपनी गर्दन नचाता रहा—मास्टर बरेली का है और मैं बदायूं का. वैसे बदायूं से अब क्या लेना-देना रह गया है ? फिर भी बापदादों का घर आख़िर घर ही होता है. उसे कैसे कोई भुला देगा ? मैं सोचता था, अपनी तरफ़ का आदमी है सो, पड़ोस अच्छा रहेगा. लेकिन यहां तो जमाना ऐसा बदला कि हम-तुम पीछे ही रह गए. जिस पर भी विश्वास किया, वह लंगोटी तक उतरवा लेगा. क्या समझे ?

सेवाराम को हंसी आ गई थी—तुम्हें क्या फिकर ? तुम लंगोटी बांधते ही कहां हो ?

लाला को मजाक बेमतलब की लगी थी. थोड़ा गुस्सा भी आया था. भंगी-चमारों को सिर पर बिठाओ तो खोपड़ी फोड़ने लगेंगे. जब तक जूते के नीचे रखो, तभी तक सही तरीके से चलेंगे. लेकिन इस जमाने में अब कहे कौन ? दूकान पर कोई ग्राहक आया था. लाला ने धोती का बन्द कसा और अपनी तरफ़ आ गया. मन थोड़ा कड़वा हो गया था. ख़ामख्वाह अपनी मजाक करवा ली. ख़ैर, कर लो मजाक. लेकिन मौका औरों को भी मिलता है. चार पैसे क्या कमा लिए कि अपने को बनियों में गिनने लगे !

सेवाराम जानता है, लाला दो दिन तक उसे सुना-सुनाकर औरों से वे ही बातें करता रहेगा. झाड़ू लगाने वाला, पाखाना साफ़ करने वाला आज सौदागरी पर उतर आया तो कल बामन बनकर हवन भी करेगा, कॉलेज में पोरफेसर भी बनेगा. लेकिन भइया, हम अब यहाँ नहीं रहने के. हम तो अब हरिद्वार ही जाकर बाकी के दिन काट लेंगे.

लाला अब पाखाना साफ़ करने की बात नहीं करता, हरिद्वार जाकर बाण-प्रस्थी बनने की सूचनाएं देता है. ये सूचनाएं तब देता है, जब सेवाराम से किसी बात पर खटपट हो जाती है.

यह सिलसिला इतना पुराना हो गया कि सेवाराम को अब गुस्सा भी नहीं आता. बल्कि आटा-दाल तोलते-तोलते जब थकान-सी लगने लगती है, थोड़ी चटनी-सी मिल जाती है. सेवाराम जानता है कि तीसरे ही दिन लाला किसी बहाने फिर किसी नए किस्से के साथ आएगा और रस ले-लेकर देर तक एक ही बात को सुनाता रहेगा.

●●

कटरे में पहले ठठेरों की एक पट्टी हुआ करती थी. वक्त के साथ-साथ वे इधर-उधर चले गए, कुछ लोगों ने दूसरा धन्धा अपना लिया. आख़िर में सिर्फ एक ठठेरा रह गया था – नत्थन. कोई कुछ पूछता तो नत्थन हंसकर टाल देता. बाप-दादों का पेशा है. ये हाथ दूसरे काम करने लगें तो 'बिसकर्मा' का शराप लगेगा. इस 'शराप' के भय से नत्थन आज भी लोटा-कटोरा ढालने का काम करता है. अड़ोस-पड़ोस में जहां दूसरे ठठेरे काम करते थे आज या तो वहां कपड़े की दूकान लग गई या लोहे-लक्कड़ की.

नत्थन ठठेरा काम के बीच कभी फुर्सत निकालकर ठठेरिन से गुज़रे दिनों की बात करता तो दिल में एक हूक-सी महसूस होती है. वैसे भी इस उम्र में तन्हाई-सी महसूस होती ही है. सिर्फ एक बार ठठेरिन की कोख भरने लगी थी. लेकिन बस तीसरे ही महीने खराब हो गया था. उसके बाद ठठेरिन ने कितनी मनौतियां मना डाली, कितने साधु-फकीरों से जंत्री लेकर गले में और बाँहों पर बांधती रही, खुद वह भी ठीक-ठीक नहीं बता पाएगी.

ठठेरिन को मलाल आज भी सिर्फ उसी बात का है. अब उम्र हो गई लेकिन वह जैसे उस मोह से अपने को मुक्त नहीं कर पाती. ठठेरे की बात ज़रा अलग है. वह सिर्फ ठठेरिन के बारे में सोचता है. यानी वक्त पूरा होने पर यहां से जाना ही पड़ेगा. तब ठठेरिन कहीं की न रहेगी. एक तो हद से ज्यादा सीधी है, ऊपर आज तक कभी अकेले रही भी नहीं है.

ठठेरिन को थोडा बुख़ार आ गया. बुख़ार तो आता-जाता ही रहता है. इसकी परवाह कभी अगर नत्थन ने की भी तो ठठेरिन ने नहीं ही की. बुख़ार में भी घर का सारा काम करती और ठठेरे के साथ हाथ बटाती. फिर अपने ही आप दो-तीन दिन में बुख़ार उतर जाता.

लेकिन इस दफा बुख़ार चढ़ा तो सर में इतना दर्द शुरू हो गया कि उसने चारपाई पकड़ ली. तीन दिन तक नत्थन ने परवाह नहीं की. लेकिन चौथे दिन से हालत इतनी बिगड़ी कि वह हड़बड़ा गया. कटरे में छिद्दा पहलवान मिल गया था. उसी ने सलाह दी थी, मास्टर की दवा एक खुराक ठठेरिन के पेट में गई नहीं कि समझो चंगी हो गई.

ठठेरा गया और सारा हाल बताया तो विनायक दवा का बैग लेकर खुद ही आ गया. ठठेरिन कराह-सी रही थी. उसने नाड़ी देखी और चौंक उठा. अब बुलाया तो क्या बुलाया ? पूरे जिस्म में चमड़ी के नीचे फोड़े निकल आए हैं. रिश्तेदारों को खबर कर दो कि आकर देख जाएं. आख़िर में बैग उठाकर निकलने से पहले वह चार खुराक छोड़ गया लेकिन समझा गया था कि बहुत हुआ तो तीनेक दिन और जिन्दा रहेगी यह औरत.

ठठेरा एकदम पत्थर-सा हो गया था. चेहरे से लगातार पसीना निकल रहा था और चक्कर-सा आ रहा था. पड़ोस में कचहरी के क्लर्क रहते हैं बलराम बाबू. उन्होंने टैक्सी बुलवाई और नत्थन और ठठेरिन को लेकर सीधे हस्पताल पहुंच गए. पहले तो डॉक्टरों ने मना कर दिया था लेकिन बलराम बाबू का थोड़ा परिचय एक वार्ड ब्वाय से था. उसने मदद की तो आख़िर में एक बैड मिल गया था.

बलराम बाबू ने तसल्ली दी––देखना यहां से ठठेरिन चंगी होकर लौटेगी.

लड्डू बांटना फिर. आजकल इतनी दवाएं निकल आईं, ठठेरिन का मर्ज़ आख़िर किस खेत की मूली है.

बलराम बाबू तसल्ली ज़रूर दे रहे थे लेकिन ख़ुद भी आश्वस्त नहीं थे. मर्ज़ क्या है वह तो डॉक्टर-वैद्य ही समझा सकता है लेकिन ठठेरिन की हालत देखकर लगता नहीं कि वाकई ठीक होकर निकल पाएगी.

लेकिन ठठेरिन ठीक दो महीने ग्यारह दिन बाद हस्पताल से बाहर निकल आई. उस दिन भी बलराम बाबू साथ थे. उन्होंने लड्डू वाली बात याद दिलाई थी. इस बीच दवा-दारू में बहुत पैसे खर्च हो चुके थे और हाथ एकदम तंग थे. रहे तंग, नत्थन ने ढाई किलो लड्डू खरीद लिए और एक लड्डू अपने हाथ से बलराम बाबू के मुंह में ठूंस दिया.

यह खबर कटरे की चौहद्दी पार कर कर्नलगंज तक पहुंची. विनायक फिर ठठे-रिन को देखने आया था. ठठेरे से बोला—मैं गलत साबित हुआ, इस बात की खुशी मुझे है.

परमानन्द लाला भी वहां था. यह ख़ासा मौक़ा था. बोला—देखो मास्टर, मदरसे में बच्चों को गिनती सिखा दो, हिसाब बता दो लेकिन आगे से आदमी को उल्टी-सीधी पुड़िया चटा के श्मशान न भेज देना. लाला फिर जोरों से हंसा था.

विनायक का चेहरा सुर्ख़ हो गया था. दोनों कानों में खून का दबाव इतना बढ़ गया था कि वे पलाश के फूलों की तरह लग रहे थे. बोला—अपनी समझ से ही कोई गलत इलाज करता है. मैं झूठी तसल्ली देता और मेरे ही हाथों ठठेरिन मर जाती, तो आपको खुशी होती क्या ?

—नहीं मास्टर, तुमने मेरी बात ही नहीं समझी. लाला ने अपने दोनों जबड़ों के दांत दिखा दिए—बात यह है कि मैं तो तुमसे एक ही बात कहूंगा. भई, तुम इन पचड़ों में पड़ो भी मत.

—मेरे अड़ोस-पड़ोस में जो लोग रहते हैं, सबके पास इतने पैसे नहीं होते कि सर्दी हो चाहे ज़ुकाम, डाक्टर के पास जाएं और पांच-सात रुपये खरच कर दवा-पानी ले आएं. इन छोटी-मोटी बीमारियों के लिए ही मैं दवा वगैरह अपने पास रखता हूं···

—तुम्हारा इरादा वैसे नेक है, क्यों नत्थन ? लाला ने ठठेरे की तरफ आग्रह से देखा—लेकिन भई बात यह है कि हर काम का एक असूल होता है. असूल से हो तो सब ठीक है वर्ना फिर दस तरह की दिक्कतें सामने आती हैं.

—यह पहली दफ़ा ऐसा हो रहा है कि मैं सचमुच गलत साबित हो गया. मैं पता करूंगा कि कहां गलत हूँ. अपने गलत साबित होने पर मुझे जितनी खुशी है, जाहिर है कि सही साबित होने पर उतना ही दुःख होता.

—खैर छोड़ो इन बड़ी-बड़ी बातों में रखा ही क्या है ? लाला खुश था कि अरसे बाद कहने का एक मौका मिला था.

—बात बड़ी है या छोटी, मैंने सोचकर नहीं देखा. लेकिन इसमें बहुत कुछ रखा है. कम-से-कम मुझे पता हो गया कि मेरा यक़ीन हमेशा सही नहीं साबित होता.

लाला एकबारगी संजीदा हो गया था.

उसने भौंहें सिकोड़ीं और बोला—फिर इस गलत यकीन को अपनी डाक्टरी के साथ संगम में जाकर डुबो दो. समझे ?

—डुबो भी सकता था अगर उससे लोगों का भला होता. गली-मुहल्ले वाले अगर पेट दर्द या ज़ुकाम के लिए डाक्टरों की फीस चुका पाते, मैं फिर वही करता जो आपने कहा है.

नत्थन अचकचा रहा था. कुछ भी हो, डॉक्टर से बैर न रखने में ही भला है. कौन जाने कब, किस वक्त ज़रूरत पड़ जाए ? अब तो ठठेरिन भी भली-चंगी होकर लौट आई है. ख़ामख़्वाह बात बढ़ाने से फायदा भी क्या ! लेकिन लाला के मुंह पर यह कह देना कि चुप रहो, कुछ जंच नहीं रहा था. फिर भी उसने दोनों हथेलियां कंधों तक उठाकर कहा था—चलो, अब चाय पीते हैं इकट्ठे.

विनायक निकल आया था. ट्यूशन का वक्त हो गया था.

●●

बरेली में थोड़ा वक्त मिल जाता था. रोज़ी-रोटी की दिक्क़तें भी इतनी नहीं थीं. वहां किसी तरह 'बरेली होम्यो क्लीनिक' की ज़िम्मेदारी निभ ही जाती थी. लेकिन यहां सुबह से शाम तक पहले स्कूल में पढ़ाओ फिर ट्यूशन करो. बच्चों को पढ़ाना वैसे बुरा नहीं लगता लेकिन दवा का बैग रखकर उसका इस्तेमाल न होना कभी-कभी खलता है.

खैर, छिद्दा पहलवान ने ढिंढोरा तो नहीं पीटा था लेकिन प्रचार इतना किया था कि पूरे कर्नलगंज वालों को मास्टर-डाक्टर की ख़बर हो गई थी. लोग आते हैं अब लेकिन दिक्कत इस बात की होने लगी कि इतने छोटे-से कमरे में किसी को बिठाने की न तो जगह है न कुर्सी वग़ैरह का इंतजाम. कुछ लोग दवा लेने स्कूल भी पहुंच जाते हैं. उन्हें न तो क्लास की परवाह होती न वक्त की. आख़िर में उसने सुबह सात बजे से आठ का वक्त बांध लिया था. लोग आते तो बाहर गली में बिछी चारपाई पर बैठते और दवा लेकर वापस चले जाते. किसी-किसी को वापस लौटने की शायद जल्दी नहीं होती. ऐसा अगर कोई चारपाई पर इत्मीनान से बैठकर कोई किस्सा-कहानी शुरू करता तो विनायक हथेली घुमा देता. यानी अब टलो यहां से.

कर्नलगंज के लिए ऐसा कोई संकेत एकदम नया है. शुरू में लोग यह हथेली घुमाना नहीं समझते थे. अब अच्छी तरह समझ गए हैं. कोई अगर नहीं भी समझता है, दूसरे लोग समझा देते हैं.

छिद्दा पहलवान के ठीक सामने कोई अरशाद पतंगवाला रहता है. अब तो खैर पतंग वग़ैरह बनाता नहीं है लेकिन नाम वही रह गया. सात-सात बेटे हैं. हर कोई कुछ-न-कुछ धंधा करता है और अरशाद बस आराम से अपना वक्त काट देता. इस उम्र में इतना आराम मिलता ही कितनों को है? कभी छिद्दा पूछता तो अरशाद हथेली ऊपर उठा देता—खुदा की मेहरबानी है.

इस आराम के बावजूद अरशाद की दो तकलीफ़ें हैं. एक यह कि घर भरा होने के बावजूद तनहाई महसूस होती है. दो साल हो गए बीवी को गुज़रे हुए. और दूसरी तकलीफ़ है डेढ़ेक साल से छाती में जलन-सी होने लगी है. कभी-कभी यह जलन बहुत बढ़ जाती तो रात की नींद हराम. दिन में सोने की आदत नहीं है और अगर रात भी ऐसे ही गुज़री तो आदमी भला ज़िन्दा कैसे रह लेगा ?

अरशाद मियां एक सुबह फिर विनायक के यहां आ ही गया.

वैसे इससे पहले चौक के मशहूर हकीम खुदाबख़्श का इलाज भी कराता रहा है. खुदाबख़्श इस इलाके के मशहूर हकीम हैं और खूब जांच-पड़ताल के बाद ही नुस्खा देते हैं. महीनाभर इलाज चला था. शुरू में थोड़ा फायदा ज़रूर पहुंचा था लेकिन दसेक दिन के बाद से हालत फिर पुरानी जगह ही लौट आई थी. इसके बावजूद बीस दिन तक इलाज जारी रखा था अरशाद मियां ने. फिर एक दिन हकीम की पुड़िया चाटना बन्द कर दिया था. छिद्दा ने पूछा तो बता दिया—अब उमर ही कितनी रह गई ? क्या होगा हकीम को बदनाम करके ?

—दूसरों का बड़ा ख्याल रखते हो मियां.

जवाब में अरशाद को अपने गुज़रे हुए दिन याद आ गए थे, कहा—किसी एक दूसरे का ख़याल कभी नहीं रखा. अब उसके एवज में बाकी दूसरों का ख़याल रखता हूं. रखता हूं कहना गलत होगा, रखने की कोशिश करता हूं.

छिद्दा ने बात आगे नहीं बढ़ाई. बीवी के गुज़रने के बाद से अरशाद को उस औरत के प्रति की गई ज्यादतियां अक्सर याद आती हैं, इतना छिद्दा समझता है. जो आदमी पहले छोटी-छोटी-सी बात पर खून-ख़राबा करने पर तैयार हो जाता था, आज वही शख्स बड़ी बात पर कुछ नहीं बोलता. सिर्फ़ एक लम्बी-सी सांस-भर लेता है. आंखों में एक सूनापन-सा तैर आता है.

यह एक बदलाव है.

छिद्दा पहलवान ने देखा, यही अरशाद पतंगवाला कभी अपनी बीवी को धोबी के गधे की तरह पीटता रहा है. तब तक उसका पीटना जारी रहता जब तक पड़ोस वाले जाकर मियां के हाथ की लकड़ी न छीन लेते.

एक दफा तो वह औरत इतनी पिटी कि नाक से खून बहने लगा था. पेट में बच्चा था और वह औरत बुरी तरह हांफ रही थी. उसका हांफना मुहल्ले वालों ने देखा था. हलाल के बकरे की तरह वह दौड़ती हुई घर से बाहर निकल आई थी. बाहर के बरामदे पर आई तो अरशाद ने कसकर लात जमा दी थी. वह औरत मुंह के बल सड़क पर गिरकर बेहोश हो गई थी.

उस दफा छिद्दा पहलवान ने ही मियां के हाथ पकड़े थे. छिद्दा को अमूमन गुस्सा नहीं आता लेकिन अगर कभी आया तो ख़ैर नहीं. उसने अरशाद के हाथ से लकड़ी छीनी और कसकर चार चांटे जमा दिए—औरत पर हाथ उठाने से पहले जाओ, गले में फांसी लगाकर मरो.

इस तरह के हादसे अक्सर होते रहे हैं और पूरा मुहल्ला अरशाद पतंगवाले का बहकना देखता रहा है.

लेकिन ये बातें आज सिर्फ़ गुजरे हुए दिनों की ही याद दिलाती हैं.

अरशाद को इस भरे-पूरे घर में सिर्फ़ वही याद आती है.

वक्त तो ख़ैर किसी तरह कट ही जाता है लेकिन कोई बारीकी से देखे तो समझ जाएगा कि अरशाद मियां का सिर्फ़ वक्त ही नहीं कटता है. जो सीना पहले चट्टान की तरह लगता था, आज उसके अंदर दरारें आ गई हैं. वैसे देखने वाले ऊपर से यही देखते हैं कि अरशाद को आज बहुत आराम है, सुख-चैन है लेकिन जो उसे जानता है, वह समझता है, कितना खाली हो गया है यह आदमी.

छिद्दा पहलवान के साथ लड़ाइयां हुईं और मुहब्बत भी की. कभी अगर अरशाद खामोश भी हो गया, छिद्दा ने आकर गुदगुदा कर मन की गांठ खोल दी. अरशाद भी यकीन करता है, पूरे मुहल्ले में अगर अब कोई पुराना दोस्त बाकी रहा तो सिर्फ़ छिद्दा पहलवान ही है.

अब और तब में फर्क भी कितना आ गया !

तब टमटम, बग्घी चलती थी. अब क्रि···क्रि रिक्शे की घंटियां बजती हैं, मोटर सायकिल और मोटरें दौड़ती हैं, छटांक-भर के लड़के अब अंग्रेज़ी में बात करते हैं. लेकिन तीस बरस पहले भी पूरे कर्नलगंज में अखबार पढ़ने वाले मुश्किल से चार-छह आदमी रहे होंगे.

अरशाद मियां मांझे के धागे से पतंग लड़ाता तो देखने वाले देखते ही रह जाते. यह बात हर कोई समझ गया था कि पतंगबाजी में अरशाद को कोई हरा नहीं सकता.

वह अपनी पतंग को देर तक ऊपर-नीचे करता फिर आखिर में ऐसा दांव मारता कि लड़ाने वाले की पतंग 'बोकट्टा' हो जाती.

काफ़ी मशहूर हो गया था अरशाद. पूरे इलाहाबाद में सब जानते थे. बसंत-पंचमी के दिन पतंग की लड़ाई होती तो अरशाद बाजी लगाता और शाम तक सौ-दो सौ पतंग काटकर ही घर लौटता.

एक दफा लखनऊ के एक रईस ने वहां जाकर पतंग लड़ाने की दावत दी थी. रईस नवाबी खानदान के आदमी थे और सिर्फ़ दो ही चीजों का शौक फरमाते थे. एक ताश, दूसरी पतंग. पुराना वक्त होता तो शायद सिर्फ़ शतरंज ही खेलते रहते. लेकिन कहते हैं, शतरंज के खिलाड़ी ही अब कहां रह गए ? नवाब वाजिदअली शाह के साथ ही शतरंज के नवाबी कायदे भी दफन हो गए. लिहाजा अब उसमें पड़ना भी क्या ? वक्त किसी तरह बस ताश के पत्तों से कट ही जाता है. और न कटे, तो नौकर के हाथ चर्खी थमाकर पतंग उड़ाते हैं.

अरशाद मियां को दावत मिली तो अचम्भे में पड़ गया था बेचारा. कहां लखनऊ का नवाबी खानदान और कहां कर्नलगंज का अरशाद पतंगसाज. तय नहीं कर पा रहा था कि किया क्या जाय ! उस दफा भी छिद्दा पहलवान ने ही हौसला बढ़ाया था—मियां, नसीब खुल गया तुम्हारा. जाओ और अपना हुनर दिखाके आओ, लखनऊ का भी सैर-सपाटा हो जाएगा, ऊपर से इनाम भी कमाके लाओ. लेकिन एक बात का ख्याल रखना, हां.

अरशाद समझ गया कि यह एक बात हो क्या सकती है. छिद्दा की पीठ पर खासी धौल जमा दी थी—खासी मसखरी करते हो पहलवान.

—मसखरी नहीं है, मियां सुना है, नवाबजादियों की निगाह सिर्फ ऊपर की तरफ ही रहती है, और तुम ठहरे इलाहाबाद के अव्वल दर्जे के पतंगबाज.फिर समझ लो, खुद ही.

दोनों फिर देर तक ठहाका मारकर हंसते रहे.

अरशाद मियां लखनऊ पहुंचा.तो नवाबी तौर-तरीके देख दंग रह गया था. दिल धक्-धक् कर रहा था. फिर संभला और सोच लिया, आखिर यह अरशाद मियां भी कोई गंगू तेली नहीं है. हुनर है और उसके बूते पर ही इलाहाबाद से इतनी दूर चला आया.

लखनऊ पहुंचने के बाद तीन दिनों तक पतंगबाज़ी की कोई बात ही नहीं हुई. बतौर शाही मेहमान खाओ-पिओ और खूब सैर-सपाटा करो. हां,इस बीच अगर चाहो तो यहीं से चर्खी का, मांझों का इन्तजाम भी हो सकता है. अरशाद मियां यह मजाक बखूबी समझता है. तीन दिन तक सिर्फ़ कभी गोमती के किनारे घूमता रहा, कभी इमामबाड़ा में, कभी हजरतगंज में.

चौथे दिन सुबह तकरीबन दस बजे पतंग की लड़ाई शुरू हुई. नवाब साहब ने खासा इन्तजाम कर रखा था. देखने वालों का इतना बड़ा हुजूम अरशाद मियां ने कभी नहीं देखा था. खाने-पीने का भी खूब इन्तजाम था. मैदान में शामियाना लगाकर कुर्सियां डाल दी गई थीं और लोग आइसक्रीम और तले हुए काबली चने खाने के साथ मुकाबला देख रहे थे.

पहला दांव मारते ही अरशाद समझ गया कि नवाब कोई कच्चा खिलाड़ी नहीं.

नवाब साहब आंखों पर धूप का चश्मा चढ़ाए कभी ढील दे रहे थे, कभी कसते जा रहे थे. पीछे एक नौकर चर्खी लिए खड़ा था. अरशाद की चर्खी थामने के लिए भी उन्होंने एक नौकर भेज दिया था लेकिन उसने हाथ जोड़ लिए थे—ये दोनों

बाजू ही काफ़ी हैं.

अरशाद को पसीना आ रहा था.

वह सिर्फ़ ऊपर की तरफ आंखें गड़ाए रहा. ज़रा भी चूक गया तो पासा ही पलट जाएगा. चारेक घण्टे तक मुकाबला चला था. आख़िर में नवाब साहब की पतंग कट गई थी.

शुरू में तो नवाब साहब दंग रह गए थे. लखनऊ वाले जानते हैं कि इधर के दस-बीस सालों में इतना होशियार और हुनर वाला पतंगबाज पूरे जिले में तो क्या अवध में भी पैदा नहीं हुआ है. खैर, आख़िर में नवाब साहब आगे बढ़े और अरशाद मियां को सीने से लगा लिया. और मौजूद मेहमानों के सामने अपनी उंगली से हीरे की अंगूठी निकालकर उसकी उंगली में डाल दी.

अरशाद इलाहाबाद वापस आया तो साथ नकद पांच हज़ार रुपए थे, हीरे की अंगूठी थी और मखमल के, रेशम के ढेर सारे कपड़े थे.

ये बातें मियां को याद आती हैं तो साथ ही सकीना के लिए भी दिल भारी होता है. वह औरत बेगार की तरह खटकती रही और अपने शौहर की मार खाती रही. इसी तरह एक जिन्दगी निकालकर वह खुदा की प्यारी हो गई.

यह एक अतीत है.

आज अरशाद जहां जिन्दा है, वहां चेहरे पर झुर्रियां हैं और सीने की लाइलाज जलन है. हकीम खुदाबख्श शायद थोड़ी तसल्ली रखने से ठीक कर देता लेकिन अरशाद को अब ज़रूरत ही नहीं महसूस होती. तकलीफ बढ़ती है, रात-रात भर पीठ के पीछे तकिया लगाकर बैठा रहता लेकिन कायदे से इलाज अब किया नहीं जाता.

इस दफ़ा छिद्दा ने समझा-बुझाकर भेज दिया था.

अरशाद मियां विनायक के यहां आया तो हंसी आ गई थी. इतना बड़ा और बुजुर्ग हकीम ही जब कुछ नहीं कर पाया, यह चार दिन का छोकरा क्या कर लेगा? खैर छिद्दा की तसल्ली के लिए सही. विनायक ने पहले नब्ज देखी, फिर आंखें और जीभ. आख़िर में नली से सीने का मुआयना करने लगा—गांजा पीते हो, न? वह स्टेथ-स्कोप को मोड़कर रख रहा था.

मियां ने गर्दन हिलाई—यह बहुत पुरानी आदत है.

—और क्या लेते हो?

अरशाद हंसा—किस-किस चीज़ का नाम लूं?

—नाम तो मैं ही ले दूंगा. लेकिन दवा लो या फिर ये ही लेते रहो.

बाकी लोग मुंह बाए देख रहे थे.

विनायक ने एक शीशी निकाली—दवा दूं फिर.

—तुम मज़ाक करते हो, मास्टर. अरशाद अपनी टोपी उतारकर सर खुजा रहा था.

—फिर एक काम करो मियां, अब तो हफ्ते-दस दिन में बदन पर लोटा-डेढ़ लोटा पानी डालकर नहा लेते हो.

अरशाद मुस्कराया—दस दिन तो खैर नहीं होते, हफ्ता ज़रूर लग जाता है. यह जो रोज़-रोज़ का नहाना है न, ज़रा रास नहीं आता. इस बुढ़ापे में निमोनिया हो गया तो गए काम से.

—उस बात की परवाह मत करो. निमोनिया नहीं होगा, हुआ तो मैं अभी यहीं हूं.

—चलो तुम्हारी मर्ज़ी से सही, रोज़ चार लोटा पानी डाल लूंगा अपने ऊपर.

अपने को पता नहीं क्यों…

विनायक ने रोक दिया—अपने गुसलखाने में नहीं. हर रोज़ सुबह संगम जाओ और सांस रोककर डुबकी लगाओ. मिनट-डेढ़ मिनठ तक लगा सको तो बहुत अच्छा. उतनी देर सांस न रोक पाओ तो कम ही सही. रोज़ कम-से-कम बीसेक मिनट तक यह सिलसिला चलाओ.

अरशाद मियां अब डर गया– या अल्लाह ! तुम तो बेमौत मार डालोगे मास्टर. जो नुस्खा बता रहे हो, वह यह चरमराती हड्डियों वाला कैसे निभा सकता है, थोड़ा सोच तो लेते ? खैर छोड़ो, कोशिश मैं ज़रूर करूंगा, अभी तुम दवा तो बांधो.

—यही दवा है, वो सब फालतू चीजें मत पियो और संगम में जाकर डुबकी लगाओ. हफ्ते-भर बाद आकर बता जाना फिर.

अरशाद मियां पशोपेश में पड़ गया था. न दवा, न दारू—नुस्खे में सिर्फ दो जुमले बता दिए !

वहां से निकलकर घर की देहरी तक भी नहीं पहुंचा था कि छिद्दा ने अपने दरवाजे पर आवाज़ लगा दी. मियां मुड़कर आया और देर तक हंसता रहा—मिल आए तुम्हारे मास्टर से. कहता है, दरिया में जाकर डुबकी लगाओ, दम न मारने वाली बात वह छिपा गया था.

छिद्दा ने अपनी बांहों की मछलियां उभार लीं— ये देखलो संगम में डुबकी लगाने का सबूत. दंगल अब ज़रूर नहीं लड़ता लेकिन चार-छह को अब भी ज़रूरत पड़ने पर पछाड़ सकता हूं.

आखि़र में छिद्दा खुद चलकर गया और विनायक से नुस्खे की तमाम बातें मालूम कर आया. फिर संगम में ले जाकर आधे-आधे घण्टे तक ऐसी डुबकियां लगवाईं कि मियां को जुकाम हो गया. जुकाम ज़रूर हो गया लेकिन छाती वाली तकलीफ़ आधी रह गई थी. आखि़र में छिद्दा ने कसम देकर गांजे की चिलम भी तोड़ डाली थी.

बरसों की आदत है, एकदम से बन्द कर दो, सांस फूलने लगती है. लगता है, बस आंखें बाहर निकल आएंगी. लेकिन छिद्दा ने कुछ आसन बता दिए थे, थोड़ी राहत मिलने लगी थी इससे.

हफ्ते-भर बाद मास्टर से मिलना था. मियां आया और छिद्दा को पकड़ लिया — तुम भी साथ चलो पहलवान. सच बड़ा दिमाग पाया है मास्टर ने, लेकिन देखो जुकाम अभी तक नहीं गया.

विनायक ने जुकाम की दवा दे दी थी. कुछ हिदायतें भी दे देना चाहता था. लेकिन अरशाद ने दाईं हथेली उठा ली थी—याद है, मास्टर, खूब याद है, उमर ज़रूर हो गई और तुम्हारी तरह बी.ए. पास भी नहीं हूं लेकिन जो बात एक बार दिमाग में बैठ गई, वो फिर बैठ ही गई.

अरशाद मियां फिर सलाम कहकर वापस आ गया था. साथ छिद्दा था. उसने यार की पीठ पर अपनी आदत के मुताबिक धौल जमा दी थी – लो मियां, देखो कितने चंगे हो गए. अब ऐसा करो, रोज सुबह संगम में जाकर नहाओ और सारा दिन पतंग-बाजी करो. जवानी वापस आ गई तुम्हारी.

बाक़ी बातें तो खै़र ठीक हैं लेकिन सुबह-सुबह नहाने की बात ज़रा रास नहीं आती. लेकिन अरशाद ने इस दफ़ा कुछ नहीं कहा. गली से निकलते हुए छिद्दा के साथ खूब हंसने लगा.

●●

परमानंद लाला ने सिलसिला शुरू किया था—परदेसी आदमी ! यहां आकर जमीन पर पैर रखे नहीं कि बड़ा उपकारी बन गया. मजा तो यह है, मास्टरी से डाक्टरी भी शुरू हो गई.

मंगल दर्ज़ी ख़ाली वक्त होता तो दूकान के दरवाज़े पर स्टूल डालकर बैठ जाता और लाला से क़िस्से-कहानी का सिलसिला शुरू करता. आजकल सब नए मिजाज के हैं. पुराने दरजियों के पास आता ही कौन है ? दो बित्ते का लड़का भी पतलून सिलवाने सिविल लाइन्स के जगमग रोशनी वाले दरज़ी के यहां दौड़ लगाता है. मुहल्ले के कुछ पुराने लोग हैं, जो मंगल दर्ज़ी के अलावा कहीं और नहीं जाते. उन्हीं के लिए कभी कुछ सिल दिया, कभी फटा-पुराना घटा-बढ़ाकर ठीक कर दिया. इतने से ही गुजारा करना पड़ता है.

मंगल और लाला की दूकानें एक ही महीने में लगी थीं. और वैसे भी दोनों एक-दूसरे के सामने हैं. शुरू से ही रिश्ता प्यार-मुहब्बत का रहा है. मंगल के पास काम न हो, दूकान जरूर रोज़ खोलकर बैठता है. फिर कभी अगर लाला के हाथ खाली देखे तो कोई-न-कोई सिलसिला शुरू हो ही जाता है.

लाला ने अपनी बात कही तो मंगल अपना गोल शीशे वाला चश्मा, जो लटककर काफी नीचे आ गया था, ऊपर खिसका रहा था. खिसका लिया तो बोला—यह कोई अजोद्धापुरी थोड़े ही है राजा रामचंद्र की ? यह कण्डैलगंज है. तमाशा है, देखे जाओ. मज़ा ही मज़ा है. मंगल कर्नलगंज को कण्डैलगंज कहता है. यह उसकी आदत है. शुरू-शुरू में लाला टोक भी देता था लेकिन मंगल की आदत आख़िर तक बनी ही रही.

लाला को ऐसी बातें पसन्द नहीं हैं. गुस्से में आकर कहता—फिर जाओ. आरती उतारो मास्टर की.

मंगल जवाब में एक भद्दी-सी हंसी देर तक हंसता रहता.

—वो बंगाली है न, कुएं के सामने वाला, उसका तो समझो सिर ही फिर गया. लाला फिर व्याख्या करता—जवान लड़की है, पढ़ने जाती है मास्टर के पास. क्या समझे ?

मंगल खंखारकर ढेर सारा थूक उगल देता है—खूब समझा, तभी तो कहता हूं, तमाशा है. देखो और मजा लूटो.

—देखना फिर, बंगाली के मुंह पर कालिख न पुती तो मैं भी परमानंद लाला नहीं हूं, जो मन में आए कह लेना.

—वैसे छोकरा है बड़ा तेज. एक दिन यहां आया था एक कुर्ता सिलवाने. मैं बोला, पांच रुपये लूंगा. लेकिन एक बार भी वह नहीं बोला कि चार ले लो. अगले दिन पांच का पत्ता थमाया और कुर्ता ले गया. कुछ होगा रुपया-पैसा अपने पास सो घमण्ड बहुत हो गया. लेकिन हमें क्या ? हम तो मजदूरी करते हैं, उसका दाम लेते हैं.

यह पैसे वाली बात लाला को बहुत पसन्द आ गई.

परमानंद तनकर बैठ गया था—मुझे तो भई, चाहे कुछ भी कह लो, थोड़ा शक ही होता है. बरेली से आया था तो साथ था क्या ? एक पुरानी संदूकची और एक दरी में लिपटा हुआ एक बिस्तर. अब देखो शान से चलता है, मुफ्त में दवा बांटता है और चमार-भंगियों से लेकर कटुओं-जनखों से यारी करता है.

लाला बीच-बीच में सेवाराम पंसारी की तरफ़ भी मुख़ातिब हो रहा था. लेकिन सेवाराम को इस वक्त फ़ुर्सत नहीं थी. वह पीछे की तरफ़ रखे हुए कनस्तरों को एक के बाद एक साफ़ कर रहा था.

ॐ

प्रतिमा का सरदार की दूकान पर जाना बन्द हो गया था. बोस बाबू कोशिश में थे कि कहीं और कोई नौकरी मिल जाए तो घर में चार पैसे आएं और लड़की का वक्त भी कट जाए.

एक दिन इत्तफ़ाक है कि वह विनायक के कमरे से निकली और सीढ़ी के पास पांव फिसल गए. हफ्ते में दो-तीन बार ग्रामर की किताब लेकर कभी सुबह, कभी स्कूल की छुट्टी के ठीक बाद वह आ जाती है. विनायक पच्चीस-तीस मिनट में जितना मुमकिन है, बता दिया करता है. फिर प्रतिमा खुद ही उठ जाती है—आपका बहुत सारा वक्त ले लिया. एक ही वाक्य वह लगभग हर बार दोहराती है. विनायक कभी जवाब नहीं देता. प्रतिमा को शायद जवाब की ज़रूरत भी नहीं रहती. वह फिर साड़ी सम्भालकर उठ खड़ी होती.

इस दफ़ा शायद गली में पानी वगैरह कुछ पड़ा था. उसके पांव वहां पड़े और फिसल गए. सामने ही गोबरधनबाबू का मकान है. सुबह वह बरामदे में कुर्सी डालकर अख़बार पढ़ते हैं. यह आदत बरसों की है.

लाला का भी यही वक्त है दातौन का. सुबह उठकर मील-दो मील चलकर आता फिर गली में इस दरवाजे से उस दरवाजे तक दातौन मुंह में दबाए फिरता रहता. इसमें घंटा-भर निकल जाता. पहले जब दामाद गद्दी पर बैठता था, वक्त की कोई फ़िक्र नहीं थी. अब ज़रा दिक्कत होती है . लाला जब तक तैयार नहीं हो जाता, ललाइन को जिम्मेदारी संभालनी पड़ती. वैसे ठीक से देखो तो ऐसी कोई फ़िक्र की बात भी नहीं है. ललाइन चाहे मण्डी जाकर सब्ज़ी खरीदनी हो, चाहे यहां दूकान पर दूकानदारी, लाला से इक्कीस ही होगी. लाला यह जानता है फिर भी ललाइन के सामने बड़े प्यार से कहता है--आख़िर तू औरत ही है न ?

बस ललाइन कुप्पे की तरह फूल उठती है.

लेकिन ये बातें तो अलग हैं. सिलसिला है, प्रतिमा के गिर जाने का. वह गिरी थी तो शुक्र है कि एकदम से चित नहीं हो गई थी. कमर में शायद फिर भी चोट कुछ ज्यादा ही लगी थी. ख़ैर, वह एकदम से उठ खड़ी हुई और भाग निकली.

गोबरधनबाबू ने अख़बार पढ़ने के बावजूद सारा दृश्य देखा था.

लाला ने भी देख लिया था. फिर वह धीरे से कदम बढ़ाता हुआ गोबरधनबाबू के पास पहुंचा—क्यों, समझे कुछ ?

गोबरधनबाबू ने आंखों का चश्मा उतार दिया—समझना क्या है ? मुहल्ले की लड़की है लेकिन बाप की नीयत अच्छी नहीं है.

लाला थोड़ा संजीदा हुआ—मास्टर को फंसाकर कुछ ऐंठना चाहता है. लेकिन मास्टर भी कोई दूध का धुला नहीं है.

—कौन दूध का, कौन पानी का यह तो कहना मुश्किल होगा लेकिन जवान लड़की का इस तरह चलना-फिरना ज़रा अच्छा नहीं लगता. सरदार को लेकर ख़ासा किस्सा हो गया लेकिन बोस बाबू की आंखें फिर भी नहीं खुलीं. गोबरधनबाबू बात करते हैं तो रुक-रुककर. धीरे-धीरे तसल्ली से ब्योरेवार वह कहते चलते हैं.

—लेकिन असली बात तो आपने समझी ही नहीं. लाला ने बगल की नाली में थूक दिया था.

—असली-नकली तो वे ही जानें लेकिन इससे लड़की की ज़िन्दगी तो ख़ैर बर्बाद हो ही जाएगी, दूसरी बहनों की भी शादी आसानी से नहीं होने की.

बोस बाबू तेज़ कदमों से अपने दरवाज़े में से निकल आए थे.

गोबरधन और लाला चुप हो गए थे.

बोस बाबू ने दूर से ही आवाज़ लगा दी—अरे भई, मास्टर, प्रतिमा फिसल कर गिर पड़ा था. कमर में थोड़ा चोट है, कोई मेडीसन हो तो फटाफट दे दो.

लाला ने आंखें मटकाईं—मेरी घरवाली ने शुरू में ही समझ लिया था. गोबरधन बाबू को मामला समझ में नहीं आया था.

लाला ने दातौन को दांतों से निकालकर हाथ में थामा और क़रीब खिसक आया लड़की के पांव भारी हैं.

गोबरधनबाबू दंग रह गए.

अगर बिजली का खुला तार भी छू जाता तो भी शायद इतनी परेशानी न होती. वह संजीदा हो गए—मैं तो पहले ही समझाने गया था, शादी सरदार से ही कर दो. आजकल जात-बिरादरी कौन देखता है ?

लाला को जात-बिरादरी वाली बात नही जंची थी लेकिन गर्दन हिला दी—बिल्कुल सही कहा था तुमने.

बोस बाबू जल्द ही दवा की पुड़िया लेकर लौट गए थे. वह लौट गए तो लाला ने गोबरधन को दिखाकर एक बार और थूक दिया—खूब जमींदारी हांकते थे न, अब चेहरे पर कालिख लगाकर फिरना पड़ेगा.

सुबह का वक्त था. विनायक के मरीज़ आ गए थे. लाला फिर दातौन को दांतों की कोरों में दबाकर अपने दरवाजे पर लौट गया था. गोबरधन अख़बार पढ़ने लगे थे. अख़बार के पन्ने ज़रूर हाथों में थे लेकिन लाला ऐसी बात बोलकर गया था कि कुछ पढ़ा नहीं जा रहा था. वह फिर बरामदे में टहलने लगे थे.

●●

सोहबतिया बाग यहां से कम-से-कम डेढ़ेक मील के फ़ासले पर होगा. वहां के लोग दवा-दारू के लिए कर्नलगंज का रास्ता नहीं नापते. वैसे भी आजकल हकीम-वैद्यों से लेकर डाक्टरों की क्या कमी है ? घर से निकलो तो पांच ख़ाली बैठे, मक्खी मारते डाक्टर मिल जाएंगे. लेकिन अरशाद मियां ने ऐसा ऐलान किया कि पुराना दोस्त मुश्ताक़ यहां तक चला आया.

मुश्ताक़ वैसे देखने में अरशाद मियां की ही तरह अनपढ़ है लेकिन अरशाद के दिल में उसके लिए इज्जत है. एक लकड़ी काटने के कारखाने में काम करता है और लाल झंडा लगाकर 'इनकलाब-जिन्दाबाद' बोलता है. ब्याह-शादी की नहीं, सारा वक्त इसी में निकल जाता है. अरशाद को जब भी कोई परेशानी हुई है, मुश्ताक़ ही उसका कोई-न-कोई हल निकालता रहा है.

अरशाद कभी मज़ाक में कहता—अच्छा हुआ जो शादी नहीं की तुमने, वर्ना जोरू किसी और के साथ भाग जाती. जोरू के साथ बैठने तक की फ़ुर्सत तुम्हें शायद नहीं मिलती.

मुश्ताक हंस पड़ता—खूब कहते हो मियां.

अरशाद मुश्ताक की तरफ देखता है तो कभी-कभी दिल भर-सा उठता. आज तक कभी ऐसा नहीं हुआ, जब वह अपनी तकलीफ़-परेशानी पर कुछ बोला हो. जब भी मिलो, इतना खुश नजर आएगा जैसे ग़म से कभी पाला पड़ा ही न हो. कई दफ़ा पुलिस वालों की लाठियां झेलीं, इनकलाबी में फूट डालने वालों के छुरे-चाकू सहे लेकिन मुश्ताक मियां कभी पज़मुर्दा नहीं नज़र आया. अब तक जेल भी बीस बार गया होगा लेकिन वहां से निकलता और फिर उसी तरह झण्डा गाड़कर बोलना शुरू कर देता.

अरशाद को जेल-पुलिस वाले हमेशा ही बहुत ख़तरनाक लगे हैं. जेल में मिलने

जाता तो उसे हमेशा एक डर-सा लगा रहता. लेकिन मियां को देखो तो पता नहीं चलेगा कि ससुराल में है या जेल में.

इधर तीनेक सालों में मुश्ताक़ थोड़ा परेशान है. अंतड़ियों में घाव हैं और खाने-पीने का न तो कोई तरीक़ा ही बन पाया, न परहेज़ ही रखा जाता. कई दफ़ा जब थकान बहुत महसूस होती है, डबलरोटी को छोले के साथ खा लिया और चाय पी ली. आटा सानकर रोटी बनाने तक की ताक़त जैसे रह नहीं जाती.

इधर महीने-भर से तकलीफ़ बहुत बढ़ गई है. अरशाद ने सलाह दी तो मुश्ताक मियां अपनी खड़खड़िया साईकिल उठाकर एक सुबह कर्नलगंज पहुंच गया. लल्लू उस्ताद भी पुराना यार है. वैसे वाक़फ़ियत अरशाद की वजह से ही है. लेकिन कभी इधर आना होता तो यहां बैठकर एक प्याला चाय ज़रूर पी लेता. चाय पीता और घण्टा-आध घण्टा यहां-वहां की बातें करता.

लल्लू कभी मज़ाक कर देता—हम लोग तो उमर वाले हो गए. अरशाद की तो कमर भी झुक गई है. लेकिन एक तुम ही हो, जो अब तलक जवान बने हुए हो. छोकरियां भी अभी मरती होंगी.

जवाब में मुश्ताक सिर्फ़ हंस भर देता.

लल्लू ने ही फिर मास्टर के बारे में सबकुछ बता दिया था. बरेली की सारी कहानियों से लेकर कर्नलगंज तक का सारा मामला आधे घंटे में सुना दिया था. आख़िर में कहा था—खरा है, एकदम तलवार की तरह.

ये सब बातें अरशाद को समझ नहीं आतीं. यहां तो सिर्फ़ रोटी-पानी से मतलब है, यार-दोस्ती में दिलचस्पी है, लेकिन यारों की बातें हों तो सुन ही लेनी पड़ती हैं.

विनायक के पास मुश्ताक को लेकर अरशाद पहुंचा तो दवा लेने वाले लगभग जा चुके थे. अरशाद ने अपने दोस्त की तारीफ़ बताई और अर्ज़ किया कि इस बीमारी से छुटकारे के लिए दरिया में सौ दफा डुबकी लगानी हो, वह अपने दोस्त से लगवा देगा.

संगम को अरशाद दरिया ही कहता है. छिद्दा पहलवान कई बार टोक चुका, लेकिन शुरू की आदत है, सो नहीं छूटी.

विनायक ने डुबकी लगाने की हिदायत आख़िर तक नहीं दी. सिर्फ़ हफ्ते-भर के लिए एक खुराक दे दी थी.

अरशाद ने कह ही दिया—तुम भी मास्टर, आदमी देख के ही नुस्खा बताते हो. हम कोई तुम्हारे दुश्मन थोड़े ही थे जो दरिया में डुबकी लगवा दी. शुक्र है, अभी तक सिर्फ़ ज़ुकाम ही हुआ है, निमोनिया नहीं हुआ.

विनायक अरशाद को बग़ैर जवाब दिए मुश्ताक से बात कर रहा था.

ट्यूशन के लिए देर हो रही थी फिर भी उसने गुमटी के चाय वाले को आवाज़ देकर तीन प्याले चाय के मंगवा लिए.

मुश्ताक ने उसे दावत दी—यूनियन में आप भी आओ. झण्डा उठाकर हम आपको सलाम करेंगे.

चाय आ गई थी.

विनायक एकदम से नाटकीय हो गया, चाय वाले छोकरे को वापस भेज दिया—माफ़ कीजिए आप लोगों को चाय नहीं पिला सकता.

अरशाद को कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था.

मुश्ताक़ भी उलटते-उलटते बचा.

—आप लोगों के मर्ज़ कुछ ऐसे ही हैं कि चाय वगैरह का सवाल ही नहीं पैदा होता, क्यों मियाँ ? विनायक ने अरशाद से पूछा.

अरशाद को इतनी देर में बात समझ में आई थी.

मुश्ताक फिर उठ खड़ा हुआ था—आप आइए, ज़रूर हम लोगों की यूनियन में. ज्यादातर लोग मेरे जैसे ही अनपढ़ मिलेंगे लेकिन दो-एक लोग हैं जो कॉलिज में पढ़े हुए हैं.

विनायक ने हाथ मिलाया अरशाद को लेकर ही एक दिन पहुंच जाऊंगा. लेकिन दवा का ज़रा ख्याल रखना. इसके साथ तेल-घी, मिर्च-मसाले, प्याज, लहसुन सब बन्द.

मुश्ताक़ अचकचा रहा था लगता है, हवा-पानी में ही गुजारा करना पड़ेगा.

अरशाद ने मुश्ताक की साईकिल की सीट पर मुक्का मारकर ठहाका लगाया. फिर वे गली में बाहर निकल आए.

●●

रात के डेढ़ बज रहे थे.

लाला की नींद खुली तो ललाइन बुरी तरह उल्टी कर रही थी. चेहरा एकदम सफ़ेद हो गया था और सांस लेने में भी उसे बेहद तकलीफ़ हो रही थी. ऊपर वाले कमरे में लड़की-दामाद सो रहे थे. लाला ने चीख मारी तो वे नीचे उतर आए.

बरामदे का एक हिस्सा उल्टी से एकदम सफ़ेद हो गया था. बलगम ढेर सारा निकल आया था. बलगम के नीचे रात की चबाई हुई रोटी के टुकड़े थे. बिल्कुल ज्यों-के-त्यों.

ललाइन के शायद पेट में भी तकलीफ़ थी. वह दोनों हथेलियों से पेट थामे कराह रही थी.

दामाद कोने में खड़ा था.

लड़की रसोई में चली गई थी. पानी लाना था वह पानी लेकर आई और अपनी मां के चेहरे पर छपके मारने लगी.

लेकिन ललाइन कराहती और ढेर सारा बलग़म उगल देती. सांस लेने में उसे इतनी तकलीफ़ हो रही थी कि कराहा भी नहीं जा रहा था.

परमानंद को कुछ भी नहीं सूझ रहा था. मन-ही-मन जितने सारे देवता के नाम याद थे, सबके सामने मनौतियाँ मना डाली. बुढ़ापे में अगर अकेली जिन्दगी काटनी पड़ी तो उससे अच्छा है ललाइन के साथ ही ख़त्म हो जाऊं.

कटरे में डॉक्टर की एक दूकान है. लेकिन डॉक्टर कहीं और रहता है और दूकान अभी बन्द है. मुहल्ले में अंग्रेजी डाक्टर वैसे एक है लेकिन वह भी कहीं बारात में बाहर गया है. पड़ोस में है मास्टर. मन नहीं हो रहा था कि मास्टर को यहां बुलाकर लाए. लेकिन ललाइन का सफ़ेद चेहरा देखकर लाला का हौसला एकदम पस्त हो गया.

मास्टर के कमरे में बत्ती जल रही थी. लाला ने खिड़की से झांका तो देखा, किताब लेकर बैठा है. ख़ासा अचरज ही हुआ. जब दुनिया नींद में बेहोश है, तुम किताब पढ़ रहे हो ? आजकल के लड़कों का हाल ही कुछ ऐसा है कि परमानंद समझ नहीं पाता. ख़ैर, उसने खिड़की से आवाज़ दी—जाग रहे हो मास्टर ? फिर संक्षेप में उसने ललाइन का हाल बता दिया.

विनायक दवा का बैग लेकर आया तो उल्टी के साथ दस्त भी होने लगा था. ललाइन का सारा जिस्म ठण्डा हो गया था. ठण्डा और सफ़ेद-सा.

विनायक ने ललाइन की जीभ में शीशी की एक बूंद डाल दी. फिर एक-एक घंटे तक चार खुराक देकर चलने लगा—हैजा है. बोतल में गर्म पानी भरकर हथेली और तलवे सेंकते रहो.

लाला ने हाथ जोड़े—बिस्तर लगा देता हूं. यहीं ठहर जाओ.

—उसकी ज़रूरत नहीं पड़ेगी. दवा ने अगर काम किया तो यही काफी होगी. सुबह का वक्त निकल गया तो समझो, ख़तरा टल गया.

सुबह हुई थी फिर.

ललाइन नशे मे डूबी-सी पड़ी हुई थी. लाला ने नाक के पास हथेली रखकर महसूस करने की कोशिश की कि सांस चल भी रही है या ललाइन धोखा देकर भाग गई. लाला को तसल्ली हुई थी.

आज घूमने के लिए निकलने का सवाल ही नहीं था. सुबह हो गई थी लेकिन दूकान भी नहीं लगी थी. ललाइन को दी जाने वाली खुराक खत्म हो गई थी और मास्टर से नई दवाई लेनी थी.

लाला अपने दरवाज़े पर खड़ा रहा.

सामने गोबरधन बाबू रोज की तरह अख़बार पढ़ रहे थे.

मास्टर के दरवाज़े के सामने चारपाई पर बैठे लोग दवा का इतज़ार कर रहे थे.

लाला मास्टर के सामने जाने से अचकचा रहा था. उसने गोवरधनबाबू की तरफ़ देखा. लेकिन वह अख़बार में इस तरह डूबे हुए थे कि आवाज़ देना मुनासिब नहीं लग रहा था. लाला अन्दर गया और एक दातौन लेकर चबाने लगा. यह शायद एक इन्तज़ार था.

●●

मुरली के साथ विनायक एक इतवार की सुबह झूसी पहुंचा. साथ भगवती बाबू थे. भगवती बाबू की अब उम्र हो गई है, घर-गृहस्थी की भी परेशानियां हैं लेकिन कहीं से भी अगर थोड़ी-सी फुर्सत मिली तो चुंगी के स्कूल मास्टरों के संघ के दफ्तर पहुंच गए. वहां बैठकर कानून की किताबें उल्टी-पल्टीं और इस बीच जो लोग स्कूलों से निकाल दिए गए, उनके हक़ में मसौदा तैयार कर लिया. शुरू में वह मंत्री थे. इधर तीन सालों से अध्यक्ष हैं. कभी-कभी मुरली के साथ भी इधर झूसी की तरफ़ आ जाते हैं.

मुरली ने एक लड़के से विनायक का परिचय कराया—नन्दू से. आंखों से ही ज़ाहिर होता है, भड़कती हुई आग है. उम्र बाईस-तेईस की होगी. थोड़ी-सी ज़मीन है. अपने रिश्ते के एक गूंगे ताऊ के साथ खेती करता है.

आजकल जमींदारी ज़रूर नहीं है लेकिन बड़ी-बड़ी ज़मीनों वाले महाजन लोग हैं. जमुना पार यहां झूसी में ऐसे महाजन बड़े ठाठ से राज करते हैं और खेतीहर मज़दूरों से लेकर बुनकरों तक में जमींदार ही कहलाते हैं. मुरली ने बताया कि पांचेक साल पहले ऐसे ही एक जमींदार ने नन्दू के मां-बाप दोनों की हत्या करवा दी थी. वैसे

पुलिस की जांच-पड़ताल वग़ैरह् सब कानूनन ही हुई थी और मुकदमे में एक लठैत को चौदह् साल की और एक अहीर को दस साल की सज़ा हो गई थी. वह ज़मीदार मूंछों में तेल चुपड़कर आज भी सीना तानकर घूमता है. कहीं से नंदू अगर एक़दम से सामने ही पड़ गया तो कनखियों से घूरकर निकल जाता है.

दोपहर को मीटिंग थी.

नंदू के घर के छप्पर पर टीन का एक लाल रंग का बोर्ड टंगा है—किसान कल्याण समिति. हर इतवार को मुरली आता है और दोपहर को समिति के अध्यक्ष, मंत्री और कार्यकारिणी के सदस्य आपस में मिलते हैं. कुलमिलाकर छह लोग हैं. अध्यक्ष हैं क़ादिर मियां और मंत्री है नन्दू यानी नंदकिशोर. और चारेक कार्यकारिणी के सदस्यों में सियाराम, नगीना, इक़बाल और लालचंद हैं.

क़ादिर मियां जब अंग्रेजों की हुकूमत थी, खूंखार क्रांतिकारी था. कुलमिलाकर पच्चीसेक अंग्रेजों का सफाया किया था. कोई मिलता तो भान तक नहीं होता कि इसी लुंगी-कुर्ते में बीड़ी का कश लगाते दाढ़ी वाले के पास सबकुछ उड़ा डालने का कोई ख़तरनाक मसाला भी हो सकता है. पुलिस वाले कई बार लगभग पकड़ने को भी हुए थे. लेकिन क़ादिर मियां चकमा देकर फरार ही होता रहा. फरार होकर काबुल-कंधार से रंगून तक कहां जाएगा, यह उसके दोस्त भी बहुत बाद में ही जान पाते थे.

एक दफा वाक़ई पकड़ लिया गया. हवालात में इतनी पिटाई हुई कि बस रीढ़ की हड्डी ही नहीं टूटी थी. पांवों और हाथों की उंगलियां भारी बूटों से कुचल दी गई थीं और सीने पर लोहा गर्म कर दाग दिया गया था. जिस्म हट्टा-कट्टा था लेकिन महीने-भर में सूखकर कांटा हो गया था. फिर बुख़ार आने लगा था. उधर कचहरी में मुक़दमा चल रहा था, इधर क़ादिर मियां बुख़ार में तपकर काला होता रहा.

फिर एक दिन जेल की घंटी बज उठी और जेलर पागल की तरह यहां से वहां फिरता रहा. पता चला कि नौ नम्बर वार्ड का क़ादिर मियां फरार हो गया. उस दफ़ा पूरे तीन साल सिंगापुर में एक आढ़ती के यहां लक्ष्मण दुबे बनकर काम करना पड़ा था.

फिर मुल्क आज़ाद हुआ तो क़ादिर मियां अपनी खेती-बाड़ी में लौट आया था. तब लोग अपना-अपना सौदा पटाने में मशगूल थे. खद्दर का कुर्ता पहन लिया और सिर पर टोपी रख ली और लोगों को याद दिला दी कि आज़ादी की इस लड़ाई में उन्होंने कितनी रातें जेल में काटी हैं. बहुत सारे लोगों को इनाम मिल गए थे. लेकिन क़ादिर मियाँ अलग ही रहा. न तो उसने इनाम मांगे न कोई देने ही आया.

एक दफ़ा इलाहाबाद में पन्द्रह अगस्त के जलसे में उसने कहा था—आज़ादी हाथ में है लेकिन हाथ आज़ाद नहीं हैं. जलसे में बड़े-बड़े टोपी वाले नेता अर्द्धनेता-से कुछ लोग थे. उन सबकी आंखें लाल हो गई थीं. फिर झूसी लौट आया तो थानेका दरोगा आकर समझा गया—इसी तरह बोलते रहे तो हथकड़ी लग जाएगी.

क़ादिर मियाँ हंस पड़ा था—अच्छा ही होगा. हाथ आज़ाद ही कहां हैं, जो हथकड़ी की फिकर लगी रहे ?

अब जिस्म साथ नहीं देता. लेकिन क़ादिर मियां बूढ़ा हो गया, ऐसा और लोग सोचते होंगे, वह नहीं सोचता. छोटी-सी एक ज़मीन है और एक खाली घर है. जब जवानी थी तब ब्याह-शादी की फ़ुर्सत ही नहीं थी. अब फ़ुर्सत तो है लेकिन उम्र शादी लायक नहीं रह गई. वैसे भी फ़ुर्सत तो कहने-भर की है ! जब से किसानों की समिति बनी है, महाजनों के साथ कुछ-न-कुछ खटपट लगी ही रहती है. किराए पर किसी को खेत नहीं मिला तो किसी को काम के बदले में पूरा अनाज नहीं मिला. इन्हीं बातों का

फैसला करने म मारा वक्त निकल जाता है.

इूमी मे अब जलसे होने लगे हे.

रामलीला की झाकी निकली है, पन्द्रह अगस्त मनाया जाता है होली मे खूब अबीर-गुलाल उडते हे पिचकारी . ... ह नेतागीरी करने वाले भी अब ढेर सारे हो गए हे लोग टोपी लगाकर किसानो, मास्टरो से लेकर महाजनो के बीच घूमते है उनमे से कई-एक की तो पहुच दिल्ली-लखनऊ तक है वे लोग नेताओ मे जरा कुलीन माने जाते महाजन के यहा वे पहुचते तो चाय के प्याले या लस्सी के गिलास के साथ लड्डू की तश्तरी आ जाती और अब झूसी को शायद याद ही नही रहा, यही का एक आदमी जान की बाजी लगाकर आजादी के इनकलाब मे कभी कूद पडा था आज भी पुरवा चलती है तो उसकी हड्डियाँ दर्द करने लगती पुलिस की लाठियो की वजह मे सर्दियो और बरसात मे आज भी घुटने सूज उठते हे

मुरली ने विनायक से कादिर मिया की तारीफ बताई तो उसने हाथ जोडे थे—तुम भी मास्टर, पता नही किस जमाने की बाते करते हो !

विनायक ने कादिर से हाथ मिलाया—आपसे हाथ मिलाने का मौका भी बहुत खुशकिस्मती से ही मिल सकता है

कादिर शर्म मे गडा जा रहा था—क्यो शर्मिन्दा करते हो, बाबू, मुझे तो याद ही नही कि किस जमाने म क्या किया था

इस बात का जवाब होना है कोई ? नही होना विनायक ने दिया भी नही था सिर्फ गर्दन झुका ली थी बस

कादिर मिया ने ही फिर मुरली को याद दिलाई थी —अब किस्सा-कहानी से आगे दो बाते काम की करनी है मिट्टी-पानी की

वे फिर मीटिंग करने लग गए

कादिर मिया ने तहसीलदार सिह से बात शुरू की जात से तहसीलदार ठाकुर है लेकिन पिछले पाचेक बरस से महाजनी करता है नैनी मे एक आटे की चक्की है और यहा गाव मे बिजली वाला पक्का मकान पानी का इन्तजाम अभी तक हैडपम्प मे ही करना पडता है लेकिन तहसीलदार ने लोगो मे कह दिया, अगले फागुन तक कुआ खोदकर पानी ऊपर लाने की मशीन फिट कर लगा लेकिन यह तहसीलदार आज मे दस साल पहले सिफ पुलिस म हवलदार था एक दफा हेराफेरी मे पकडा गया तो नौकरी म छुट्टी हो गई पैसे काफी पहले ही जोड लिए थे उससे अपनी जमीने बढवा ली और दो साल बाद नैनी म आटे की चक्की खरीदकर बेटे को बैठा दिया अब बेटा ही चक्की सम्भालता है लेकिन फुर्सत मिली तो तहसीलदार भी कभी-कभी देखने-भालने के लिए नैनी चला जाता है

कादिर मिया ने रुककर थोडा दम लिया और बीडी का कश खीचा – अब तहसीलदार रघू स कहता है कि अगली फसल के लिए जमीन खाली नही है

—क्यो ? विनायक ने पूछा

— इस क्यो का कोई जवाब नही होता यहाँ कोई नही पूछता कि क्यो ? नगीना उत्तेजित-सा समझा रहा था तहसीलदार का पोता जन्मा था, चक्की वाले बेटे का लडका सौ-पचास लोगो की दावत देकर पूडी-कचौडी और लड्डू, रायता खिलाया रघू से कहा था, दरी वगैरह बिछाकर पत्तले, कुल्लड लगा देना लोग खा चुके तो पत्तल वगैरह बाल्टी मे भरकर पीछे वाले खड्डे मे डाल देना रघू ने इन्कार कर दिया था बस यही मे खटपट शुरू हो गई पिछले चार सालो से वह लगान भरता और तहसीलदार से तीन बीघा जमीन लेकर जोतता रहा है लगान खत्म होते ही इस

दफ़ा तहसीलदार ने अगली फसल के लिए मना कर दिया है.

—मैं ठीक कर दूं ? नन्दू ने पूछा.

क़ादिर मियां ने उसे रोका—तू चुप रह.

लेकिन नन्दू चुप नहीं रहा जो बात उसके दिमाग में आई थी, बोल ही गया—डंडा घुसेड दूंगा पीछे से.

कादिर मियाँ इस दफ़ा कुछ नहीं बोला.

विनायक ने नंदू की तरफ देखा. उसकी आंखें आग के शोलों की तरह हो गई थीं. चेहरे पर एक पुराना-सा रूखापन था.

सब चुप थे.

विनायक बोला—नंदू की बातें सुनने में अटपटी लग सकती है लेकिन इसके पीछे एक बहुत बड़ी गहराई है शायद वक्त की सच्चाई यही है.

कादिर मियां इशारा समझ गया लेकिन चुप रहा.

मुरली इतनी देर तक चुप था. अब बोला—अहिंसा का कोई रास्ता शायद होता ही नहीं है. जब एक तरफ लोग हिंसा पर तुल जाएं तो इन रामनामी बातों का कोई मतलब नहीं रह जाता है. न हम लोग यकीन ही करते हैं लेकिन झूमी की हालत ऐसी है कि बीस से हम इक्कीस भी हुए तो उड़ा दिए जाएंगे.

—उड़ा तो दिए ही जाने चाहिए. विनायक बोला—आखिर वे लोग बैठकर सत्यनारायण की कथा थोड़े ही बाचेंगे ? लेकिन सवाल है कि इन नए आदमखोरों से आदमी को जिन्दा रखकर बचाया कैसे जा सकता है ?

कादिर मियां ने समझाया—दरोगा भी ले-लिवाकर उन्हीं की सुनता है. मिली-भगत है

—ठीक है. अब सोचो कि तुम लोग क्या कर सकते हो …

कादिर मियां सिर खुजाने लगा था कोई जवाब था ही नहीं.

विनायक ही तीनेक मिनट की चुप्पी के बाद बोला था फिर—जिसके पास जमीन एक भी फसल के लिए रही, जमीन उसी की है इस बात को बिल्कुल अंदर से समझ लोगे तो ताकत अपने आप ही आ जाएगी

लालचंद ने कहा—आखिर कानून भी तो है

—हां है. लेकिन कानून अगर दो जून रोटी नहीं दे सकता है, उसकी लाश कंधे पर लादे फिरोगे ? कानून को बदलो लेकिन कीमत चुकानी पड़ेगी उसके लिए तुम पर लाठियां बरसेंगी, गोलियां चलेंगी तब एकसाथ उसी खेत पर खड़े होकर उन्हें झेलो घर में बैठकर हनुमान की तस्वीर के सामने हाथ जोड़कर मनौतियां न मनाना

कादिर मियाँ को पुराने दिनों की याद आ गई थी शायद. लालचंद से पूछा—समझे कुछ ?

विनायक ने समझाया—मैं मानता हूं जो आदमी कायर की तरह जुल्म सहता है वह खासा गुनाह कर रहा है. अब फैसला कर लो कि आगे करना क्या है ? रघू में कम-से-कम इतना हौसला तो है कि ठाकुर के मुंह पर मना कर सका था.

—हां, सो है. परवाह तो वह शायद खुदा की भी नहीं करता. कादिर बोला.

—ऐसे रघू और भी हैं लेकिन वे सो रहे होंगे. उन्हें जगाओ और मैदान में आ जाओ. लेकिन इन बातों का फैसला जलसा बुलाकर नहीं किया जाता. एक-एक आदमी से मिलो, बैठो और समझाओ. देखना एकबार आदमी समझ गया तो बाढ़ का पानी बन जाएगा. उसे रोकना किसी के बूते का नहीं रह जाएगा.

मुरारी का चेहरा खिल उठा था

भगवती बाबू भी तनकर बैठ गए थे अन्दर की बात को कायदे से बाहर रख दिया आपने

नदू बोल पड़ा— जो लोग हिंसा के जवाब में अहिंसा की बात करते हैं बड़े नालायक और होशियार है तिलक लगाएंगे, टोपी लगाएंगे अहिंसा राग कर कुछ निहत्थे लोगों का मरवा देंगे

विनायक बोला यह मामला जोश में आकर कुछ कर देने का नहीं है जोश कभी ना ठंडा पड़ ही जाएगा और मामला भी वही का वही रह जाएगा सारी बातो को अच्छी तरह समझो और एक-एक आदमी को समझाओ उसके बाद आगे बढ़ना

नगीना बोला—यहां तो सब मूरख है समझाना आसान कहां है ?

विनायक मुस्कराया—शहर मे भी ज्यादातर लोग मूरख ही है फर्क यह है कि वे बी ए पास मूरख है.

सब लोग हस पड़े

—खूब मजाकिया हो, मास्टर कादिर बोला

—लेकिन यह मजाक नही विनायक संजीदा हो गया– बहुत बड़ा सच है यह बी ए. पास मूरखो से अच्छे ये अनपढ़ मूरख है इन्हे समझाओगे तो देर-सबेर समझ जाएंगे वहा तो बहुत मुश्किल है लोग पहले से ही इतना समझ चुके है कि दिमाग एकदम बस ठस हो गया आगे किसी बात के लिए जगह नही है

मुरारी बोला —ठीक है मै तहसीलदार से मिलकर पूछ लेगा वह अपनी जिद पर अड़ा ही रहा तो…

नदू ने बात छीन ली- बलवा हो जाएगा फिर कुछ सोचकर बोला– ठाकुर का बच्चा है वैसे बड़ा डरपोक शायद बलवे तक की नौबत नही आएगी

यह एक मजेदार बात थी

सब लोग हस पड़े थे

इकबाल को ज्यादा बोलने की आदत नही है वह देर से कान खुजा रहा था सब हस चुके तो बोला– सुना है, जाड़ा तक चकबन्दी हो जानी है जमीनो मे बहुत ज्यादा हेरा-फेरी चलती आ रही है सालों से.

—तुम भी मियां एकदम लपाड़ू ही ठहरे कादिर ने बीड़ी का धुआ उगला— जमीन तो तुम्हारी ईद के चांद की तरह घटनी जाएगी फिर मुट्ठी गरम करो तो कोई काम बनता है समझ गए ?

—तो मैं क्या शाहशाह का किस्सा सुनाने जा रहा था या तोता-मैना का ? यह इकबाल था

—फिर क्या करने की सोचते हो ? विनायक ने पूछा

सब चुप थे

भगवती बाबू विनायक का चेहरा गौर से देख रहे थे

—इलाहाबाद जाकर कचहरी मे मुकदमा लड़ोगे या यही कोई रास्ता निकालना है ? मुरारी का यह सवाल सबके लिए था

नदू ने जवाब दिया—जेब मे से सिर्फ बीड़ी का बण्डल निकलेगा इसके बूते पर मुकदमा नही लड़ा जा सकता

—राइट इसका जवाब यह भी है विनायक बोला– वैसे भी मुकदमेबाजी मे ज्यादा यकीन सही ढंग से सोचकर चलने मे रखना होगा यह रास्ता बहुत खतरे का है पाव अगर जरा भी फिसला, हड्डी-पसलिया बराबर हो जाएगी लेकिन और कोई

रास्ता अब जीने के लिए रह नहीं गया है.

सियाराम ने पहली बार मुंह खोला— तहसीलदार तो चूहा है. मिलकर अड़ जाओ तो डर जाएगा, लेकिन नछत्र यादव तो कम का भी ताऊ है. नछत्र के सामने बड़े-बड़े नेता चक्कर काटते रहते है. बूढ़ा हो गया लेकिन सांड की तरह मजबूत है और चार रखैलें पालता है. सियाराम ने शायद सांड की उपमा और चार-चार रखैलों का जिक्र यादव का आकार समझाने के लिए किया था.

—फिर तो बीस-पच्चीस लठैत भी होंगे. और एक-एक लठैत अपनी-अपनी लाठी के साथ पांच-पांच लोगों का मुकाबला कर सकता होगा, क्यों ? विनायक ने सियाराम की अधूरी बात पूरी कर दी.

सियाराम ने स्वीकृति में गर्दन हिलाई—उसका दामाद सुल्तानपुर में वकालत करता है.

—फिर क्या करोगे ? विनायक ने सीधा सवाल किया.

कादिर मियां ने यादव की कहानी बताई. अभी-अभी की बात है, लिहाजा सबके दिमाग में बातें ताजी हैं.

एक पुत्तन पासी हुआ करता था. यादव से थोड़ी-सी ज़मीन लेकर खेती करता और बांस के टोकरे वगैरह बनाकर बाजार में बेच आता. जात का पासी था लेकिन ठाकुरों की तरह दबंग. शाम को खाली हुआ तो आल्हा गाता था. आवाज कोई खास सुरीली नहीं थी लेकिन अन्दर से दिलेर बहुत था.

यादव को फसल देनी थी आधे-आधे का हिसाब था. बाकायदा इसकी लिखा-पढ़ी हुई थी. पुत्तन ने अंगूठा लगाया था, यादव ने कागज पर अपना नाम लिखा था. अरहर की दाल को लेकर झगड़ा उठ खड़ा हुआ अहीर ने कहा था दाल की किस्म बहुत मामूली है लिहाजा दो पसेरी ऊपर से लेगा.

पुत्तन था तो दबंग ही. अड़ गया था. एक दाना भी ज्यादा देने का सवाल नहीं पैदा होता. मुंशी समझाता रहा उसे मालूम था, अहीर का हुक्म अगर एक बार ज़बान से निकल आया तो पत्थर पर लकीर खिंच गई बूढ़े मुंशी का अपना तजुर्बा है. भरे-पूरे पुत्तन की जवानी देखकर उसे शायद तरस आया था --भइया क्या फर्क पड़ता है इतने में ? झूठ-मूठ में फसाद काहे को करता है ?

लेकिन पुत्तन के खून में गर्मी थी

इसके तीसरे दिन पुत्तन की लाश दरिया के किनारे रेत पर मिली थी.

कादिर मियां ने सिर्फ दो महीने पहले का यह हादसा सुनाया तो आंखें भर आई थीं. आवाज गले से आखिर में निकल नहीं पा रही थी

विनायक ने समझाया—पुत्तन की सबसे बड़ी ताक़त क्या थी, मालूम है? यही कि वह एक मामूली आदमी था. मामूली आदमी से छीनने के लिए जान के अलावा और कुछ नहीं होता. लेकिन जो महाजन है, उसके पास छीनने को बहुत कुछ है, इस फिक्र में उसकी रात की नींद हराम हो सकती है.

नंदू को बात दिलचस्प लगी—कहो तो बाजी लगा दूं जान की

--अभी नहीं. विनायक ने समझाया- -बाजी लगाकर हारने का कोई मतलब नहीं होता. पुत्तन की तरह तुम भी खत्म हो जाओगे. बाजी तब लगाओ जब दूसरे को हराने का रास्ता तुम्हारे पास हो. लेकिन यह रास्ता अपने आप नहीं आता है. बड़ी मेहनत करनी होती है और सूझ-बूझ से काम करना होता है.

भगवतीबाबू को रोमांच-सा हो रहा था. बड़े दिनों बाद एक सचमुच जिहादी आदमी मिला जो सोच सकता है और कर सकता है. चुंगी स्कूल के मास्टरों के यूनि-

यन की बैठकों में भी लगातार वह यही बात कहते आए हैं. हमारे पास सोचने की ताक़त होनी चाहिए. कुछ लोग जोश में आकर काम तो कर डालते हैं और देर-सबेर उसका कम या ज्यादा अच्छा असर भी होता है लेकिन सही ढंग और गहराई से सोचने वाले बहुत कम हैं.

—पासी की जोरू कहां है, मालूम ? अपने सवाल का जवाब नंदू ने खुद ही दे दिया—यह सिर्फ हफ्ता-भर पहले मालूम हुआ है. हम तो सोचते थे, मारके कहीं दफ़ना दिया होगा अब पता चला, अहीर के बेटे के हरम मे है.

नंदू को उम्मीद थी कि विनायक को ताज्जुब होगा, लेकिन ऐसा कुछ भी नही हुआ.

—ऐसी हालतों में शायद सिर्फ यही हो सकता था. विनायक ने संक्षेप में अपना वाक्य पूरा किया और पुराने सिलसिले पर आ गया—जरूरत इस बात की है कि सिर्फ एक नछत्र यादव ही नही, सारे यादव और ठाकुर यानी आदमी खाने वालों को इन पुत्तनों और रघुओं की ताकत का पता चल जाए, बस.

नंदू हंसा—वैसे अहीर बडा भक्त आदमी है. हर सुबह हनुमान जी की आरती उतारता है. और मच्छर तक नही मारता. कहता है, प्रभु का जीव है. लेकिन आदमी की हड्डियाँ चूसना उसे बेहद पसंद है.

कादिर मियां और सियाराम हंस पड़े थे.

भगवती बाबू ने चुनौती-सी दी—जमीन की कसम खाकर तैयार हो जाओ. कम-से-कम तुम्हारे बेटे ही सुखी रहेंगे.

नंदू ने ज़मीन पर जोर से घूसा मारा—क़सम ? कसम तो अपने अंदर है. बाहर आई नहीं कि आग बन जाएगी या फिर एकदम लाल खून

विनायक, मुरली और भगवती बाबू दंग रह गए थे. बाईस-तेईस साल का एक अनपढ़ लड़का इतनी बड़ी बात बोल जाएगा, ऐसा हकीकत में अक्सर नही होता. फिल्म और जासूसी उपन्यासों की बात और है.

शाम हो गई थी.

विनायक और भगवती बाबू को लौट जाना था. मुरली सुबह की पहली बस से इलाहाबाद पहुंचेगा. पूरी शाम और रात-भर में दस-बीस और लोगों से मुलाकात हो जाएगी.

चलने का वक़्त हुआ तो नंदू अपनी रसोई मे घुसा. एक-एक लिफाफे में कोई पाव-एक-भर चिवडा और गुड़ लेकर आया— रास्ते में काम आएगा

विनायक ने हाथ फैलाकर ले लिया. फिर नंदू की पीठ पर प्यार से चपत मार दी—लेकिन हम लोगों का रास्ता बहुत लम्बा है, समझते हो न ?

नंदू ने गर्दन हिलाई—हाँ लम्बा है लेकिन अंदर की आग भी बहुत बडी है.

सामने ही सड़क है. बस आ गई थी.

नंदू की बात वहीं खत्म हो गई थी

विनायक और भगवती बाबू बस पर बैठ गए. विनायक ने खिडकी से गर्दन निकाल कर देखा, वे सब इकट्ठे हाथ हिला रहे हैं वह अपने हाथ में थमा हुआ गुड़ और चिवड़े की मुहब्बत महसूस करने लगा था. बस के पहियों से धूल उड़ रही थी.

●●

मुश्ताक मियां खुद ही दवा लेने आया था. पहले तो उसने अपनी तबियत का हाल बताया कि अब तकलीफ़ बस थोड़ी-सी रह गई है और वह चाय वगैरह बिल्कुल नही पीता. फिर बोला—अब तैयार हो जाओ. यूनियन की मीटिंग है. लकड़ी चीरने की आरे

की मिलों में पिछले तीन महीनों में खूब मनमानी हुई. बीसेक लोगों की छुट्टी हो गई. हमने नोटिस दी है. फिर हड़ताल करेंगे. छापाखाने वालों का मजदूर संघ भी अपने साथ है.

प्रेस और सॉ मिल के बीच कोई रिश्ता बनता है क्या? विनायक ने बूढ़े मुश्ताक की झुर्रियों को पढ़ने की कोशिश की. पूरे जिस्म में एक रोमांच-सा महसूस होने लगा था. सताए गए लोगों की यह जद्दो-जहद पूरे मुल्क में क्यों नहीं फैल रही है, वह मुश्ताक मियां से लगभग पूछने ही वाला था.

मुश्ताक समझ गया. आंखें देखकर ही वह इन्सान की अंतड़ियों की ख़बर पढ़ सकता है. मजदूरों और फटे-हालों से लेकर लखनऊ-दिल्ली के नेताओं और मिल-मालिकों से बरसों की बहस ने उसे इतना ज्ञान दे दिया है. उसने आखिर में पूछ ही लिया—अपने वक्त को ढूंढ़ रहे हो मास्टर?

विनायक बुरी तरह चौंका था. शायद अपना ही पता कहीं खो गया था. बोला—ढूंढ़ तो लिया है. अब उसके साथ चलने की कोशिश कर रहा हूं.

—चलो फिर चलते है. मुश्ताक ने अपनी साइकिल के कैरियर पर विनायक को बैठाया और गली से बाहर निकल आया.

रास्ते-भर मुश्ताक मियां इलाहाबाद की कहानी सुनाता रहा. कैसे-कैसे बड़े-बड़े वकील और एम. एल. ए. वगैरह सिर्फ़ वोट बटोरने के लालच मे मजदूरों से मीठी बातें करते रहे हैं, सब्जबाग दिखाते रहे हैं. आख़िर में हर कोई ऐसा धोखा देता रहा कि कोई क्या संभलेगा? इनमें नामी-गिरामी मंत्रियों से लेकर टटपूंजिया नेता, यानी हर किस्म का आदमी शरीक होता रहा है.

मुश्ताक सिर्फ सुना रहा था.

विनायक सुन रहा था. लेकिन ये बाते हर जगह इतनी बार घट चुकी हैं कि इनमें नया कुछ रह ही नहीं गया. चाहे बरेली हो या इलाहाबाद या झूसी, हर जगह सिर्फ एक ही तस्वीर क्यों है? वह कई बार प्रोफेसर बैनर्जी से अक्सर पूछता रहा है.

इन तमाम सवालों का सिर्फ़ एक ही जवाब होता है, प्रोफ़ेसर बैनर्जी बिना परेशान हुए जवाब देते—अपने ऊपर यकीन का न होना. कोई बाहर का आदमी आकर योगी की तरह तुम्हारे प्राब्लेम्स का रास्ता निकाल देगा, ऐसा सोचना रेत पर महल बनाने जैसा ही है. बाहर का आदमी अगर कच्चे सोने की तरह सच्चा है तो कुछ मदद कर सकता है. लेकिन लड़ाई की बागडोर सिर्फ़ अपने पास होनी चाहिए.

विनायक को महसूस होता, ये बातें बहुत बुनियादी हैं लेकिन हम समझना नहीं चाहते.

सायकिल आकर रामबाग स्टेशन के पास एक गली में रुकी. आकार-प्रकार में ये गलियां कर्नलगंज के माहौल से अलग नहीं हैं. लोग भी लगभग वे ही सारे हैं. सिर्फ़ उनके नाम और चेहरे अलग हैं. खपरैल के छप्पर वाला एक मकान है, जिसकी दीवार पर एक बोर्ड लगा है—इलाहाबाद सॉमिल वर्कर्स यूनियन. अंदर कुछ आदिकालीन कुर्सियां और एक मेज है. बिजली का वैसे इंतजाम है लेकिन बल्ब की रोशनी बहुत दूर नहीं जाती. उसका रंग भी बेहद पीला लगता है, एक पंखा भी टंगा है लेकिन वह तेजी से घूम नहीं सकता. टी.बी. के मरीज की तरह खट-खट की आवाज के साथ हांफ कर चलते-चलते कभी-कभी रुक भी जाता है. तब कोई उठकर स्वीच ऑफ़ कर देता है. यानी पंखे को अब कम-से-कम आधे घंटे का आराम देना होगा. फिर आधे घंटे या पैंतालीस मिनट बाद कहीं पंखा चालू होता है.

विनायक को लेकर मुश्ताक पहुंचा तो अंदर बीसेक लोग थे. ज्यादातर लोग

सॉमिल यूनियन के थे, सिर्फ़ तीन लोग प्रेसों से आए थे.

मुश्ताक ने मास्टर की तारीफ बताई—एक जबरदस्त आग को पकड़ लाया हूं. हमारे कर्नलगंज मदरसे में मास्टर हैं, विनायक मास्टर.

इस तरह की तारीफ के सामने शायद बड़े-से-बड़ा पहलवान भी शरमा जाए. विनायक संकोच के मारे गले के अंदर थूक निगल गया.

मुश्ताक मियाँ यूनियन का प्रेसीडेण्ट है, सो उठ खड़ा हुआ और बताया कि लखनऊ जाकर किन-किन ऑफीसरों और नेताओं-मंत्रियों से दरियाफ्त हुई है. लेकिन इतनी बातों के बावजूद अभी तक कोई उम्मीद के मुताबिक नतीजा सामने नही आया. कम उम्र का एक लड़का अखबार हाथ में लेकरदीवार से सटकर बैठा था. वह उठ खड़ा हुआ—हड़ताल इसका इलाज नही है. अगर मिले चार महीने बन्द भी रहीं, मालिकों का कुछ नहीं बिगडेगा. मजदूर भूखा मारा जाएगा.

—हाँ तो,रास्ता बताओ. आखिर बीम लोगों की रोज़ी-रोटी का मामला है. वे रोटी किस गुरुद्वारे में जाकर खाएंगे?

विनायक को लड़का औरों से अलग लगा.

—घिराव करेंगे. चार घंटे अगर चाय नही मिली तो शायद उन्हें पता लगेगा कि आदमी का पेट क्या होता है, भूख क्या होती है?

मुश्ताक ने विनायक की तरफ देखा—तुम बोलो, मास्टर. घिराव भी इतना आमान नहीं है. पुलिम आकर डंडे मारकर अंदर भी तो कर मकती है !

सस्ते टूटे हुए प्यालों में नजदीक का कोई चाय वाला चाय दे गया था. मुश्ताक ने पहले प्याले की तरफ देखा फिर मास्टर की तरफ. आखिर में प्याले को आगे की तरफ खिमका दिया.

विनायक उठा. चारों तरफ बैठे लोगों को गौर मे देखता रहा.लगा, बरेली के यूनियन वालों का ही एक हिस्सा ये हैं. या इन दोनों के बीच शायद कोई बुनियादी फ़र्क़ नहीं है.

—इम तरह की किमी भी बात से पहले हम लोगों को मजदूर आंदोलन को, उसकी ताकत को अच्छी तरह ममझ लेना है मिल मालिक यानी पूंजी का मालिक कामगरों की रोटी का उतना हिस्सा छीनेगा, जिसके बाद आदमी लाचार होकर हर शर्त मान लेता है. उसके आगे यह कोशिश कोई होशियार व्यापारी इसलिए नहीं करेगा कि फिर मजदूर की जिन्दगी और मौत का मवाल पैदा हो जाएगा. ऐसी हालत में कई बार ऐमा देखा गया कि कामगर किसी भी बात की परवाह किए बिना बम के गोले की तरह फट जाता है. उसमें इम बात की गुंजाइश रहती है कि पूंजी का मालिक ही खत्म हो जाए. विनायक ने अपनी बात खत्म की तो मुश्ताक ने मेज पर चपत मार दी. आँखें उसकी जल-मी रही थीं.

अखबार वाला लड़का एक-एक लफ्ज़ ध्यान से सुन रहा था.

—आई बात समझ में बरमा ? मुश्ताक ने दोनों हथेलियाँ उठाकर पूछा.

विनायक समझ गया कि उसका नाम असल में ब्रह्मा होगा. तोड़-मरोड़ कर जुबान की सुविधा के लिए बरमा कर लिया गया.

—अब आगे बोलो,मास्टर. मुश्ताक मियाँ ने ब्रह्मा के जवाब मे पहले ही विनायकमे कह दिया.

—यह कोई नए क़िस्म की परेशानी नहीं है. विनायक बोला—बल्कि तीन महीनों में बीस लोग निकाले न गए होते तो नई बात होती, मुझे ताज्जुब होता. अब सवाल यह है कि ये लोग आख़िर निकाले किस वजह गए ? ज़ाहिर है कि ये कातिल

या लुटेरे तो रहे नहीं होंगे.

—मैं कहता हूं. ब्रह्मा ने हाथ में पकड़े अखबार को बगल में रख दिया और थोड़ी देर के लिए चुप हो गया. फिर बोलना शुरू किया—यह निकालना दरअसल एक साज़िश है. बाक़ी कामगरों के दिमाग में एक डर-सा आ जाएगा और किसी में इतनी हिम्मत नहीं रह जाएगी कि मालिकों के जुल्म के ख़िलाफ़ आवाज उठाएं.

—राईट. बड़ा सटीक जवाब दिया ब्रह्मा ने. विनायक बोला.

—लड़का होशियार है बहुत. मुश्ताक ने कहा.

अचानक विनायक चौंक उठा. ब्रह्मा के पास एक ही हथेली है सिर्फ दूसरा हाथ सिर्फ़ कलाई तक है.

ब्रह्मा मुस्कराया—इसे देख रहे हैं ? आरे की करतूत है. लेकिन यह तो कुछ भी नहीं है. कई ऐसे लोग हैं, जिनकी पूरी बाँहें चली गई हैं. अब तो वे सोचते भी नहीं कि उनके पास कभी दो बाँहें भी थीं.

दिमाग की नसों मे एक तीखे किस्म का दर्द उभरने लगा था. यह कोई नई बात नही है, फिर भी विनायक को लगा, आदमी का पूरा घाव शायद वह खुद भी नही जानता. भूख जानने नही देती. वह जान जाए तो शायद दुनिया का नक्शा ही बदल जाए.

विनायक बोला – ब्रह्मा का ख़याल वक्त के मुताबिक है. घिराव करो. इससे मालिकों की दिली ताकत चकनाचूर हो जाएगी. कुछ साथियों को शायद पुलिस उठाकर ले जाए लेकिन घिराव पर बैठने के लिए अगर दूसरा और तीसरा फिर चौथा, पाँचवाँ, छटा, सातवाँ दस्ता तैयार है, तो यह जुल्म बहुत ज्यादा दिनों तक नहीं चलने का, जहाँ तुम्हारी रोटी छीनी जा रही है, वहाँ जल्मी को साँस लेने की भी इजाजत मत दो.

सब दंग रह गए.

मुश्ताक को भी कुछ समझ में नहीं आ रहा था. यूनियन की मीटिंग मे गर्मा-गर्मी हो जाती है, हाथापाई भी हो जाती है लेकिन इस तरह की बातें पहली ही बार हुईं.

दो-तीन लोगो को प्रस्ताव अच्छा नही लगा. कुछ एतराज भी उनकी तरफ से था. लेकिन वे बहुत ज्यादा बोल नहीं सके थे, प्रस्ताव पास हो गया.

मीटिंग ख़त्म हुई तो प्रेस की तरफ से आने वाले लोग विनायक के पास आए. आधी उम्र के सफेद बाल वाले एक सज्जन थे. आकर अपना परिचय दिया—मैं अम्बा प्रसाद हूं. मुट्ठीगंज के जयभारत प्रेस में प्रूफ देखता हूं. लेकिन इस मूल काम के साथ कई तरह के काम और भी करने होते हैं. कई दफ़ा जरूरत पड़ने पर झाड़ू लगानी होती है. पानी के मटके भरने होते है, वगैरह-वगैरह. प्रेस वर्कर्स यूनियन का ज्वाइंट सेक्रेटरी हूं. अम्बा प्रसाद ने फिर साथ के दो लोगों के नाम बताए थे—चुन्नीलाल और जटाशंकर. दोनों ही कम्पोजिटर हैं और यूनियन की एक्जीक्यूटिव कमेटी के मेम्बर हैं. फिर वह यूनियन के अन्दर की बातें करने लगा था.

ब्रह्मा के साथ मुश्ताक मियाँ आकर खड़ा हो गया.

विनायक बोला—मियाँ तुमने मुझे खूब फंसाया.

मुश्ताक ने जोरों का ठहाका मारा—अभी क्या फंसे मास्टर ? अभी तो और भी फंसोगे.

अम्बाप्रसाद ने मुश्ताक से अपनी बात दुहरा दी—अगले इतवार को यूनियन का चुनाव है. इनसे अच्छा सेक्रेटरी हमें कहाँ मिलेगा ?

मुश्ताक ने फिर समझा दिया कि पुराने सेक्रेटरी एम. एल. ए. है और उन्हें लखनऊ की दौड़ लगाने से ही फ़ुर्सत नहीं मिलती. यूनियन के पैसे से पिछले पांच सालों से खूब तफ़रीह करते रहे हैं और जब कभी ज़रूरत पड़ती वह अपनी सूखी-सूखी बातें थमा देते.

विनायक ने अभी-अभी मीटिंग में हुई बात दुहरा दी—ट्रेडयूनियनों में बाहर का आदमी घुस कर अपना फ़ायदा नहीं करेगा, ऐसा क्यों सोचते हैं आप लोग. चाहे मंत्री हो चाहे अध्यक्ष, अपना ही आदमी होना चाहिए. बाहर के आदमी से मदद लो लेकिन उसकी मदद अपनी शर्तों पर मंजूर करो.

चुन्नीलाल ने दोनों हथेलियाँ जोड़ ली—आप भी अपने ही हो जाएंगे थोड़े दिनों में. पूरे इलाहाबाद में छोटे-बड़े प्रेस कुलमिलाकर डेढ़-सौ प्रेस हैं. तकरीबन ढाई हज़ार लोग काम करते हैं हर प्रेस सुबह से लेकर रात तक चलता है लेकिन महीने के आख़िर में मजूरी निकलती है सौ रुपए. चार-चार आने, बीस-बीस पैसे घंटे के भाव पर भी लोग काम करते है.

विनायक ने फिर अपनी बात रखी—आपकी मीटिंग में मैं पहुंचूंगा. फैसले के मुताबिक काम भी करूंगा लेकिन जो पहले कहा था, उसी को दुहरा रहा हूं, यूनियन के तमाम पदाधिकारी प्रेस वर्कर्स मे से ही होंगे, इस बात को अपने संगठन के असूल के तौर पर मंजूर कर लीजिए. आप लोगों का अपना कांस्टीट्यूशन तो होगा. उमे बदलिए और इस बात को दर्ज कर लीजिए.

ब्रह्मा को बात समझ में आ गई थी. अम्बा प्रसाद भी आधा समझ गया था.

विनायक बोला—जब भी मीटिंग हो, मुझे इत्तला भेज दो. पहुंच जाऊंगा.

अम्बा प्रसाद ने डायरी जेब मे निकालकर पता लिख लिया—ठीक है मास्टर साब, यही तय रहा. वे लोग फिर चले गए.

ब्रह्मा के पास सायकिल नहीं थी. लिहाज़ा तीनों ही पैदल चल रहे थे.विनायक समझा रहा था कि हिन्दुस्तान में मजदूर आंदोलन क्यों नही मजबूती ले पाया.मुश्ताक एकदम खामोशी से सुन रहा था. ब्रह्मा बीच-बीच मे एक-आध सवाल कर रहा था. आख़िर में विनायक ने बताया कि आज हर आदमी या तो कम्युनिस्ट है या प्रगतिशील. लाल झण्डा उठाकर हर शख्स इन्कलाबी और बागी बनता है. चाहे वह आढ़ती हो या दफ्तर का बाबू या कालेज का छात्र, इतनी-सी चालाकी से नेता बन जाता है,और यहाँ के लोगों के दिमाग में हजारो सालों तक की गुलामी की जकड़न इतनी मजबूत है कि वे हर सामने आने वाले को मंजूर कर लेते है. यही वजह है, हिन्दुस्तान में सच्ची प्रगतिशीलता का एक साफ नक्शा बन नहीं पाया और मजदूर आंदोलन अपने यक़ीन की कमी की वजह से ठीक-ठीक उभर नही सका.

वे लोग पैदल काफ़ी दूर चले आये थे. मधुवापुर वाले रेल के पुल से काफी नज़दीक ब्रह्मा को अकेले लौटना था, सो यही से वापस चलने लगा. चलने से पहले मास्टर के मकान तक पहुंचने का रास्ता उसने मुश्ताक से पूछ लिया था.

●●

विनायक स्कूल से लौटा तो देखा, दरवाजे पर नंदू बैठा हुआ है, चेहरा एकदम उतरा हुआ और स्याह. आँखों में गहरी थकान की छाप थी. घुटनों में सर छुपाए वह शायद सो रहा था.

—विनायक ने पीठ पर हथेली रखी तो वह उठ खड़ा हुआ, होंठ कांप रहे थे.

— बात क्या है, नंदू ? विनायक ने पूछा.

मुरली मास्टर का कत्ल हो गया. नंदू की आवाज़ कांप रही थी.

विनायक पत्थर-जैसा हो गया.

जिस्म में तपा हुआ लोहे का सरिया घुसेड़ देने से भी इससे ज्यादा तकलीफ़ नहीं होती.

नंदू सामने वाले दरवाजे की तरफ देख रहा था. एक कैलेंडर दिखाई पड़ रहा था जिसमें तारीखें छपी थीं. तारीखों के ऊपर सफ़ेद गुलाब की एक तस्वीर भी थी. नंदू को लगा, न तो तारीखों की जरूरत है, न सफेद गुलाब की, न कैलेंडर की ही. ये सब एक अंधेरे में गडमड हो रहे थे.

विनायक ने दरवाज़े का ताला खोला और दीवार के सहारे बैठ गया. नीचे की जमीन गंदी थी लेकिन यह धूल अब बहुत ज़रूरी लगी.

नदू दरवाज़े के चौखटे पर बैठ गया.

दस मिनट तक वे ख़ामोश थे. फिर नंदू बोला—कल रात के ढाई बजे मास्टर कादिर मियाँ के घर से लौट रहे थे तो यह हो गया. कुछ पता नहीं कि कितने लोग थे, कौन-कौन थे.

विनायक नहीं बोला कि ये सब तो पता ही है. नए सिरे से मालूम करके कागज पर दर्ज जरूर किए जा सकते हैं.

ट्यूशन पर निकलने का वक्त हो गया था. लेकिन दिमाग में अंधेरा-सा था और दर्द हो रहा था.

लाश कहाँ है ? बहुत देर बाद विनायक कुछ बोला तो पूरे जिस्म की नसें झनझना उठीं.

—इलाहाबाद आई है चीर-फाड़ के लिए. सब लोग वहीं हैं.

विनायक फिर उठ खड़ा हुआ. उठते वक्त घुटने हिल रहे थे. बाँहों की जैसे सारी की सारी ताकत निचोड़ ली गई थी.

सामने से एक रिक्शा पकड़कर वे बैठ गए.

नंदू शायद बीच-बीच में कुछ बोल रहा था. वैसे उसकी आवाज़ बहुत हल्की और काँपती-सी थी. विनायक कुछ भी नहीं सुन रहा था. आँखों से उठकर एक दर्द अन्दर की तरफ जाता-सा लग रहा था.

मुरली का चेहरा याद आ रहा है. मुरली ने अपनी जिन्दगी की कहानी किसी को नहीं बताई. सिर्फ इतना-भर मालूम है कि वह बिहार से आया था और आगे-पीछे रिश्तेदार कहने लायक कोई नहीं है. चाय पीते हुए जब कभी वह जिन्दगी और वक्त के बारे में व्याख्या करता, पता चलता, अन्धकार के बादशाह की तरह वह आग में लगातार झुलस रहा है. विनायक महसूस करता कि सामने का यह लड़का चुपचाप बहुतकुछ पाकर मर गया है.

मुरली ने ज़िंदगी-भर में कभी शायरी नहीं की होगी लेकिन वह शायर था. विनायक ने एकबार कहा था—जिसके पास इतने सपने हों, इतनी आग हो, वह सिर्फ एक योद्धा-कवि ही हो सकता है.

हो-होकर मुरली देर तक हंसता रहा था. विनायक ने मार्क किया, ऐसी प्रांजल हंसी हर कोई नहीं हंस सकता.

रिक्शा आकर रुका तो कादिर मियाँ, नगीना वगैरह सब चुपचाप खड़े दीखे. कादिर मियाँ का आबनूसी चेहरा कोयले की तरह हो गया था. बाकी लोग शायद चुप रहने के अलावा फिलहाल कुछ नहीं कर सकते थे.

पोस्टमार्टम होने तक घंटा-भर वे सिर्फ जमीन पर बैठकर घास तोड़ते रहे. नंदू की उंगलियाँ एक नुकीले पत्थर से छिल गई थीं. वहाँ से खून रिस रहा था. सबने

देखा, खून निकल रहा है. सब खामोश थे. नंदू जख्म को कुरेद-सा रहा था.

कादिर मियाँ ने एक लम्बी साँस ली. बस इतनी ही आवाज़ हुई थी. इसके अलावा बाकी सबकुछ जड़-सा था.

थोड़ी देर में एक पुलिस वाले ने आकर लाश उठा लेने की इत्तिला दी. वे लोग उठे और छोटे-से सीलन वाले कमरे में जा घुसे.

लाश जमीन पर नंगी पड़ी थी. ऊपर से एक खून के धब्बों वाली चादर डाल दी गई थी. चादर शायद बहुत लापरवाही से डाली गई थी. पूरा जिस्म ढक नहीं पाया था.

क़ादिर मियाँ ने चेहरे के ऊपर से चादर हटाई तो विनायक चौंक उठा. खून की शायद आख़िरी बूंद बहकर निकल गई थी. इतना सफ़ेद भी आदमी का चेहरा हो सकता है, विनायक ने यक़ीन किया. दिमाग की नसों में वह दर्द फिर से उभरने लगा था.

वे फिर बाहर निकल आए थे.

नंदू अर्थी का सामान खरीदने बाजार चला गया था.

वे फिर घास पर बैठ गए. सब चुप थे.

●●

दारागंज तक पहुंचने में डेढ़ घंटा लग गया. रास्ते-भर किसी ने 'राम नाम सत्य' नहीं कहा.

नंदू अर्थी का सामान पहुंचाकर रिक्शे से पहले ही यहाँ आ गया था. चिता के लिए लकड़ी सजाकर रख दी गई थी.

नगीना फिर लाश को गोदी में उठाकर नदी तक ले गया. उसके पीछे कादिर मियां और सियाराम थे. मुरली को उन लोगों ने आख़िरी बार नहलाया और एक नई धोती पहना दी.

विनायक रेत पर बैठ गया.

आजू-बाजू में और कई लाशें जल रही थीं. चारेक जगह लाशों के जल चुकने के बाद सिर्फ राख रह गई थी. बगल में या नज़दीक ही कुछ मिट्टी के टूटे हुए घड़े और बुझे हुए दीए वगैरह थे.

विनायक ने कहा तो कादिर मियाँ ने लाश को आग दी.

हड्डियाँ चटखनें लगीं तो उनकी आवाज़ रेत और पानी के घरौंदों से लगातार टकराती रही. वे फिर चुपचाप बैठकर आग की लपटें देख रहे थे. आग की उठती हुई लपटों को देखकर मुरली के अस्तित्व के बारे में सोचा. लगा, वह अपने आपमें हमेशा के लिए लौट गया.

●●

सुबह के चार बज रहे थे.

कादिर मियाँ, नंदू वगैरह झूसी लौट गए. विनायक कर्नलगंज वापस आ गया. स्कूल में मुरली नहीं होगा, यह यकीन करने की इच्छा हुई. जनार्दन बाबू शायद एक शोक-प्रस्ताव भी पास करेंगे. ममकिन है, प्रार्थना के बाद स्कूल की छुट्टी भी हो जाए. उसे लगा, इन सबकी कतई जरूरत नहीं है और न ही हों तो अच्छा.

कुछ देर उसने चुपचाप पड़े रहने की कोशिश की. आँखें बन्द कर ली तो आग की लपटें दिखाई देने लगीं.

दरवाजे पर दस्तक हुई. उसने आँखे खोली. बाहर रोशनी थी. धूप का एक टकडा खिड़की से अन्दर आ गया था, बिस्तर तक.

विनायक उठा और दरवाजे की कुंडी हटा दी. प्रतिमा थी. हाथ में एक कॉपी थी और शायद एक किताब भी.

—आप बीमार हैं क्या ? प्रतिमा की आवाज में करुणा थी.

विनायक ने महसूस किया, इसको वैसे बीमारी कहा भी जा सकता है. उसने हाथ हटा लिया और बोला—सर में दर्द हो रहा था थोड़ा…

प्रतिमा सकपकाने लगी थी—फिर आप आराम कीजिए. मैं किसी और वक्त आऊंगी. फिर लगभग एक साँस में उसने कह दिया था—आप अपनी सेहत की परवाह बिल्कुल नहीं करते…

प्रतिमा इसके बाद बहुत जल्द यहाँ से निकल गई थी.

अख़बार वाला अख़बार फेंक गया था. वह समाचारों में कोई विशेष बात ढूंढ़ने लगा. आख़िर में सिर्फ कुछ इश्तहार और ख़बरें हाथ लगीं. यानी मुल्क के लिए कोई फ़र्क नहीं पड़ता अगर मुरली मनोहर प्रसाद सिंह दारागंज के श्मशान में जलकर बुझी हुई आग के साथ ख़त्म हो जाता है.

परमानंद लाला उसी तरह दातौन मुंह में दबाए गली में आते-जाते लोगों से बात कर रहा था. किसी को कोई जल्दी नहीं थी और लोग ठहर कर कुछ कह-सुन रहे थे. चेहरे के भाव से लगता है, वे सब खुश हैं. खुश और बेफिक्र.

●●

कर्नलगंज स्कूल की उस दिन छुट्टी हो गई थी. उसके बाद अगले ही दिन से स्कूल का लगना शुरू हो गया था. जनार्दन ने नए मास्टर की नियुक्ति तक मुरली के क्लासों को कुछ अपने ऊपर ले लिया, कुछ दूसरों पर बांट दिया. इस बार वह होशियार हो गए थे कि बिना जाँच-पड़ताल किए किसी को स्कूल में घुसने नहीं देना है. वर्माजी ने भी यही राय व्यक्त की थी. वह कह रहे थे, स्कूल को स्कूल बनाए रखने के लिए इसके अलावा कोई और चारा नहीं है.

भगवती बाबू बहुत उदास रहने लगे थे.

इस बीच नंदू ने कई ख़त डाले थे, नगीना कोई दो बार आकर मिल गया था. उसने इत्तला दी थी कि तहसीलदार अब गुण्डई पर नहीं उतरता और बेहद डरा हुआ है. रघू को भी ज़मीन मिल गई है. नछत्र यादव ज़रूर अभी तक नशे में ही है और उसके आदमी उसी तरह घूमते हैं. नगीना ने आगे यह बताया कि नंदू कई दफ़ा बहुत खूंख़ार हो जाता है कि अहीर को सीधा कर देगा. तब उसे संभालना बहुत मुश्किल हो जाता है. आख़िर में नगीना ने हाथ जोड़कर पूछा था कि वह गांव कब आ रहा है.

—किसी रोज़ पहुंच जाऊंगा. बहुत जल्द. विनायक ने आख़िर में कहा—देखो मुरली को मरने मत देना

नगीना कुछ नहीं बोला.

विनायक को लगा, नगीना की चुप्पी एक बहुत बड़ी ख़ूनी किस्म की है.

●●

अम्बा प्रसाद आया था.

साथ में ब्रह्मा भी था.

प्रेस वर्कर्स यूनियन ने चुनाव से पहले ही एक जरूरी मीटिंग बुलाई थी. इन लोगों के पास अपना कोई कमरा बतौर दफ्तर नहीं है. जहाँ भी जगह मिल गई, मीटिंग हो गई. कई दफ़ा मैदान वगैरह में भी बैठना पड़ता है.

इस बार मुट्ठीगंज में ब्रह्मा के कमरे में मीटिंग थी. कमरा कहना गलत होगा. बहुत हुई तो एक कुछ बड़ी-सी कोठरी होगी. एक दरवाजा है और दरवाजे के ऊपर

एक रोशनदान. हवा और रोशनी के लिए यह इन्तज़ाम है. खिड़की इस कोठरी के साथ कभी थी ही नहीं. मकान मालिक पिछले सप्ताह-भर से कहता रहा है कि बना देगा. लेकिन आश्वासन के अलावा और कुछ नहीं दे पाएगा, ब्रह्मा अब समझ गया था.

ब्रह्मा ने अंदर से चारपाई निकालकर बाहर गली में रख दी थी. अन्दर फर्श पर किराए की एक दरी बिछा दी गई थी. बर्तन वगैरह जो कुछ उसके पास थे ऊपर एक आले में उठा रखे थे.

अम्बाप्रसाद ने बताया कि 'प्रयाग प्रिंटर्स' में काम करते हुए एक मशीन मैन का हाथ ट्रेडिल के जबड़े के बीच आ गया था. उस दिन से उसको नौकरी से छुट्टी हो गई और इलाज वगैरह का भी इन्तजाम मालिक ने नहीं किया. मशीन मैन का नाम उसने मक़बूल बताया. आदमी पचपन के ऊपर का है और उसके आठ बच्चे, दो बीवियां हैं. सिर्फ एक लड़की की शादी हो पाई और बड़ा लड़का बहादुरगंज में किसी जिल्द-साज के यहां नौकर है.

—प्रेस चल रही है ? विनायक ने पूछा.

—नहीं, अम्बा प्रसाद बोला—दो-तीन कम्पोजीटरो ने मशीनमैन की तरफ से मुआवजा मांगा था, तब से प्रेस बन्द है. मालिकों का भी कोई पता नही है. घर पर कभी मिलता ही नही है.

सब लोग चुप हो गए थे.

—सबसे पहले तो यूनियन मशीनमैन के इलाज का इन्तज़ाम कराए. आप लोग थोड़ा चंदा उगाएं और थोड़े-थोड़े पैसे उस प्रेस के हर कामगर तक पहुंचाएं. वैसे कितने लोग काम करते है वहां ?

—छह-सात लोग. अम्बा प्रसाद बोले—प्रेस वैसे छोटा-सा ही है. मालिक बंटवारे से पहले लाहौर में किताबों की दुकान मे नौकर था. फिर यहां आकर एक पुराना प्रेस ख़रीद कर चला रहा है. साथ में पुराने मोटरमाइकिल, स्कूटर वगैरह दिल्ली से सस्ते भाव पर ख़रीदकर यहां महंगे भाव पर बेचता है…वग़ैरह-वग़ैरह. अम्बा प्रसाद ने जो सूचनाएं दी, उनसे पता चलता है कि प्रयाग प्रिंटर्स का मालिक एक अड़ियल लेकिन डरपोक क़िस्मका आदमी है.

ब्रह्मा बोला—सिर्फ़ दो रास्ते है. प्रयाग प्रिंटर्स के समाने चाहे धरना दो, चाहे पत्थर पर मारकर सर फोड़ लो, कोई फर्क नहीं पड़ता. वैसे भी पंजाबी के पास पैसा है, चार महीने अगर प्रेस बन्द रहे तो उसे दाल-रोटी की दिक्क़त नही होगी. अब पहला रास्ता है, यूनियन इलाहाबाद-भर में हड़ताल करवा दे. मेरा मतलब है सारे प्रेसों में. और दूसरा रास्ता है, पंजाबी को पकड़ो और दाल-रोटी का असली मतलब बता दो.

यूनियन के सेक्रेट्री लखनऊ में थे और अध्यक्ष अपनी पार्टी के काम से बनारस गए हुए थे. लिहाज़ा अम्बा प्रसाद को संचालन करना पड़ रहा था.

एक सांवले-से लड़के ने हाथ उठाया—मैं बोलूगा.

अम्बा प्रसाद ने इजाज़त दी—बोलो-बोलो.

—यूनियन एक बार इजाज़त दे दे तो रास्ता मैं अपने हिसाब से ख़ुद ही निकाल लूगा. पंजाबी फिर गिन-गिनकर सांस लेगा. यह जो गर्दन की लम्बाई है न, वहां छटांक-भर की धौल पड़ जाए तो सात पुश्तों की कहानी याद आ जाएगी. प्रेस भी खुल जाएगा और मशीनमैन को मुआवज़ा भी मिलेगा. जो शख्स क़ायदे से नहीं देता है, उससे छीनने मे कोई गुनाह नही है. उसकी बात बस इतनी ही थी.

ब्रह्मा विनायक के नज़दीक बैठा था. बोला—बल्देव है यह.

अम्बा प्रसाद दुविधा में पड़ गए थे.

यह रास्ता इतना टेढ़ा था कि बाकी लोग हिम्मत नही कर रहे थे. ज्यादातर या तो बीड़ी पी रहे थे या जम्हाई ले रहे थे.

एक बुजुर्ग-से आदमी ने फिर से बात शुरू की—वैसे प्रिंटर्स एसोसिएशन से भी तो बात की जा सकती है. आखिर मे जरूरत पड़ी तो सारे प्रेसो मे हड़ताल हो जाएगी. वह फिर अपना सिर खुजाने लगा था.

—इम्पासिबल्. विनायक बोला—इस सेटअप में सारे प्रेसों मे हड़ताल हो ही नही सकती. अलग-अलग राजनीतिक दल है, उनकी अलग-अलग नीतियाँ है. इसके बावजूद वे इस बात पर सहमत हो जाएगे कि यूनियन वाकई मजबूत न हो जाए और इसके लिए हड़ताल सारे प्रेसो मे किसी भी हालत मे न हो. और अगर हड़ताल कामयाब न हुई, मजदूरों का यह यूनियन दस साल पीछे खिसक जाएगा. आप कमजोर हो सकते है लेकिन उन लोगों को जता दें कि आप मे ताकत है. हड़ताल तब सक्सेसफुल हो सकती है, जब फूट डालने वालों की ताकत यूनियन से कही कम हो.

—फिर ? उसी बुजुर्ग आदमी ने पूछा.

—यहा तो लोगों को पता ही नही है कि असली दुश्मन कौन है ? लोग बहुत जज्बाती है. असली वजह जाने बिना छोटी-छोटी बातो पर ही खुश या गमगीन हो जाते है

—मै यहा जो कुछ बोल रहा हूं, बहुतों को ये लफ्ज नाटक लगेगे. कुछ लोग आधा यकीन करेगे और ज्यादातर लोग समझेगे ही नही. मै मानता हूं कि जब तक एक-एक आदमी मे सम । न पैदा हो, इस तरह के काम कामयाब नही हो सकते है. क्या आप लोग यकीन करेगे कि बल्देव ने जो कुछ कहा, वही मै भी उतने यकीन के साथ कहूंगा और ये बाते ऊपर से ओढ़ी हुई नही, अन्दर के तकाजे के लफ्ज है.

बल्देव का चेहरा खिल गया

विनायक ने एक अप्रत्याशित-सा सवाल कर दिया—बल्देव का साथ देने के लिए कितने लोग तैयार है ?

चुप्पी

थोडी देर मे ब्रह्मा ने हाथ उठाया—मै.

विनायक ने उसके हाथ का कटा हुआ हिस्सा पकड लिया—हाथ सिर्फ ऐसे ही होते है. पान के साथ चूना चाटने के लिए नही होते.

कमरे के अन्दर कशमकश की आबोहवा-सी छा गई थी. बीड़ी के धुए से भी कुछ घुटन होने लगी थी.

विनायक बोला—अभी ये दो ही काफी है लेकिन आप लोग जिस शाति का इन्तजार कर रहे है, वह कभी इसलिए नही आएगी कि कही वह है ही नही. एक खास तरह की तालीम की जरूरत आप लोगों को है. फिर शाति-क्रांति के झूठे किस्सों से यकीन हट जाएगा और आप इन्तजार भी नही करेगे. बल्देव और ब्रह्मा ही आपको वक्त पर तालीम दे देगे.

सबको बात बहुत रूखी लगी थी.

मीटिंग यही खत्म हो गई थी.

अम्बा प्रसाद सकपका रहे थे कि यूनियन की मीटिंग मे कुछ अजीब किस्म की बाते हो गई

विनायक ने उसे समझाया—गलतफहमिया तो खैर होंगी ही. लेकिन एक-एक आदमी को सारी हालत सिर्फ बातों से ही नहीं, काम से भी समझाइए. फिर वक्त ही

आप लोगों का इन्तजार करेगा.

सब लोग चले गए थे.

विनायक ब्रह्मा और बल्देव के साथ हीवेट रोड पर पैदल चल रहा था. वे लोग कलकत्ता की जूट मिलो की यूनियन के बारे मे बाते कर रहे थे जो बाते अखबारो मे कभी नही छपती.

●●

इलाहाबाद बन्द.

कीमतों की बढोत्तरी रोकने मे सरकार की नाकामयाबी के खिलाफ 'नागरिक परिषद' ने इलाहाबाद बन्द का फैसला किया और सबसे अपील की कि इस बद को सफल बनाएं. यूनिवर्सिटी के लडको ने भारी सहयोग दिया. हर मुहल्ले मे एक कमेटी बना ली गई.

कर्नलगज कमेटी मे यूनिवर्सिटी के कुछ लडके थे, भगवती बाबू थे यूनिवर्सिटी मे ही इकोनॉमिक्स पढाने वाला एक लडका-सा प्रोफेसर था—शिवमगल और विनायक था. लडको ने भगवती बाबू को सयोजक बनाना चाहा था लेकिन उन्होने बदले मे दो लोगों के नाम प्रस्ताव मे रखे थे, विनायक का और यूनिवर्सिटी छात्र सघ की तरफ से पारसनाथ का.

पूरे शहर मे पोस्टर चिपका दिए गए थे और दफ्तरो से लेकर रेढ़ी लगाने वालो को मिल-मिलाकर समझा दिया गया था ऐसा नही कि हर कोई असली वजह को समझ गया था लेकिन माहौल ऐसा था कि 'ना' कहना मुनासिब नही लगता चूकि लडको का इस हडताल मे सक्रिय हिस्सा था, सिनेमा वालो से लेकर पसारी तक हर कोई चुप था. यह अलग बात है कि कोई उनके पीठ-पीछे उनके बाप-दादे के नाम पर थूक दे या निहायत भद्दी गालियां दे दे.

यूनिवर्सिटी के गेट के बाहर दो दिन पहले ही चार लडके गिरफ्तार हो गए थे. इस हादसे का असर यह हुआ कि कर्नलगज थाने तक जाकर लडको के जत्थे पुलिस वालो पर पत्थर फेकने और गालिया देने लगे. यूनिवर्सिटी के कुछ प्रोफेसरो ने जाकर मामला सुलझाना चाहा था लेकिन फायदा नही हुआ था. लडके 'छात्र एकता जिन्दाबाद' का नारा लगा रहे थे और पथराव कर रहे थे.

इस बीच अधेड़-सा एक आदमी लडको की पकड़ मे आ गया था लडके बुरी तरह उत्तेजित थे कि एक जासूस को पकड लिया है. उसकी कमीज फाड डाली गई और नेता किस्म के चार-छह लड़कों के बचाव के बावजूद मुक्के-चाटे बरस रहे थे. उसके हाथ के तमाम कागज छीनकर फाड डाले गए थे. फिर किसी ने उन्हे माचिस का तीली दिखा दी थी.

आखिर में अण्डरवियर को छोडकर उसके सारे कपडे लडको ने उतार लिए थे. दूकाने सारी बन्द हो चुकी थीं लिहाजा कोई नाई भी मौजूद नही था. एक लड़के ने कहीं से एक कैंची का इन्तजाम कर लिया और उसके बाल बेतरतीब आधे हिस्से

मे काट दिए गए. वे असल मे आधा सिर मुडा देना चाहते थे लेकिन नाई के अभाव में ऐसा मुमकिन नहीं हो पाया था.

कर्नलगंज थाना चूंकि यूनिवर्सिटी के इलाके म पडता ह, इसका ओहदा दूसरे थानो से कुछ अलग ह पहले यहा एक सब इन्सपक्टर बतौर ऑफिसर इन्चार्ज हो गया था पिछले चार सालो से यहाँ इन्सपक्टर है सरकारी तौर पर कोशिश यह की जाती कि इन्सपेक्टर बी. ए. या एम. ए. पास हो

अमूमन यहाँ दस-एक सिपाही होते है यह इलाका चौक जैसा नही है जो दिन-दहाडे कत्ल हो जाएगा या जेवरात की किसी दूकान मे चार गुण्डे पिस्तौल के साथ घुसकर बैग मे सामान भरेगे और हवा हो जाएगे यहाँ जो रहते है मानो वे सरकारी दफ्तरो के बाबू है या आलू-भिण्डी, कपडे-लत्तो के सौदागर या यूनिवर्सिटी के लौंडे-लपाडे है दस सिपाही भी ऐसे इलाके के लिए बहुत होते है इन्सपक्टर था होशियार उसे अंदाजा था कि इस गिरफ्तारी को लेकर लडके चुप नही बैठे रहेगे यूनिवर्सिटी मे ही कुछ प्रोफेसर भी ऐसे है जो लडको की बातो के हर जलसे वगैरह मे बोलते रहते है इन्सपेक्टर ने दारागंज और सिविल लाइन्स थानो म पाँच-पाच सिपाही और मगा लिए लेकिन बात इतनी बढ जाएगी कि पचास सिपाही भी कम पड जाएगे, इतना शायद खुद पुलिस कप्तान ने भी नही सोचा था

लडकों ने टेलीफोन की लाइन काट दी थी

वायरलेस की जरूरत पड जाएगी यह किसी ने नही सोचा था न ऐसा इन्तजाम ही था

पूरे कर्नलगंज और कटरे की दूकाने बन्द थी और रिक्शे वगैरह थाने या यूनिवर्सिटी के पास से नहीं गुजर रहे थे जो मकान यूनिवर्सिटी और थाने के करीब है, उनकी छतो पर लोग बिलबिला रहे थे कुछ मनचले किस्म के लडके छत पर खडी लडकियों को देखकर अपनी उंगलिया चूम रहे थे और आख मार रहे थे

थाने के ठीक सामने का 'प्रभात होटल' देर से बन्द था यह होटल सिर्फ यूनिवर्सिटी के लडको के लिए ही चलता है रात के बारह बजे तक कभी भी आने से यहा सिर्फ तल्ख आवाजो मे बहस करते लडके ही मिलेगे इन बहसो की वजह से दूसरे लोग कम ही इधर आते है. कभी-कभी थाने के लोग चाय पीने आ जाते है. बहस मे तो खैर नही लेकिन कोई हसी मजाक की बात हुई तो वे बराबरी मे हिस्सा लेते है दो-तीन सिपाहियो ने बातो ही बातो मे कुछेक लडको से गाव का या दूर का रिश्ता-नाता जैसा कुछ निकाल लिया था तब से बाकी लडके पुलिसवालो को मामा कहने लगे है

लेकिन आज का दृश्य बिल्कुल अलग है.

'प्रभात होटल' के सामने सिर्फ लडके है होटल के लोग छत पर खडे होकर बीडी के कश के साथ मजा ले रहे है. मजा इसलिए आ रहा था कि मुफ्त मे छुट्टी मिल गई और सामने खासा तमाशा हो रहा है ऐसी कोई बात हो या मदारी का खेल, ये लोग तमाशा ही कहते है दोनो ही हालतो मे उन्हे शायद बराबर मजा आता है

इन्सपेक्टर खबर तो नही भिजवा पाया था लेकिन कोतवाली मे खबर हो गई थी एकदम से पुलिसवालो के दो ट्रक दिखाई पडे तो लडके कुछ पीछे हट आए थे दोनो ट्रक आकर थाने के सामने रुके और उनमे से सीने पर पैड और हाथो मे लाठी और बास की ढाल के साथ सिपाही उतर कर कतारो में खडे हो गए.

'प्रभात होटल' के सामने का हिस्सा खाली हो गया था अब वहा चार-छह

हवलदार क़िस्म के लोग खड़े थे.

लड़कों का एक हिस्सा चौराहा पार कर कटरे वाली सड़क पर कुएं के पास चला गया था. दूसरा हिस्सा यूनिवर्सिटी के बड़े फाटक की तरफ़ जाने वाली सड़क पर. यहां किराए पर साईकिल देने वालों की दो दूकानें और दो-तीन लॉण्ड्री थीं. सबके दरवाज़े बन्द थे. इनके सामने ज़मीन पर गड़ी हुई लकड़ी की बेंचें हैं. लड़के उन पर जमकर बैठ गए थे. कुछेक लोग जगह की कमी की वजह से अपने दोस्तों की गोदी पर बैठ गए लेकिन ज्यादातर लड़के उत्तेजित और खड़े थे. वे थाना और पुलिसवालों पर पत्थर ज़रूर फेंकने की कोशिश कर रहे थे लेकिन फ़ासला बहुत ज्यादा था और यह मुमकिन नहीं हो पा रहा था.

यह सिलसिला शाम तक चला.

पूरे इलाके मे इतना तनाव था, गोया दो मुल्कों के बीच लड़ाई हो रही हो. दो मुल्कों के बीच की लड़ाई कैसी होती है इनमें से किसी ने भी नहीं देखी होगी. लेकिन कोई भी अंदाज़ा लगा पाएगा कि उसमें इससे ज्यादा ख़तरा नहीं होता होगा.

लड़कों का पथराव जारी था. बीच-बीच में वे अजीब क़िस्म के शोर भी कर रहे थे. ऐसे शोर की मिसालें शायद नही होती.

पुलिस कप्तान भी कोतवाली से आ गया था. उसने चौक से आगे बढ़ने की कोशिश की थी लेकिन पत्थर ओलो की तरह बरस रहे थे. एक पत्थर आकर उसकी नाक पर लगा तो उसने जेब से निकाल कर उस पर रूमाल रख दिया था. थोड़ी देर में रूमाल लाल हो गया था.

इसके बाद लाठीचार्ज हो गया.

लड़को मे चीख-पुकार और भगदड़ मच गई थी. बहुत-सारे लड़के भाग गए लेकिन कुछ बगल के हॉस्टेल के कमरों में घुस गए. वे शायद अपने को सुरक्षित महसूस करने भी लगे थे. लेकिन ज्यादा देर ऐसा महसूस करना मुमकिन नहीं हुआ था. पुलिसवालो ने आंसू गैस के गोले छोड़ दिए और हाथ की लाठियों और पैरों के बूटों से दरवाज़े तोड़ने लगे. ज्यादातर दरवाज़े या तो टूट गए थे या उनके कुण्डे बाहर निकल आए थे. फिर एक-एक लड़का तब तक पिटता रहा, जब तक कि वह लहूलुहान होकर बेहोश नही हो गया.

पुलिसवाले फिर लड़को के कमरों से ट्रांजिस्टर, कपड़े वग़ैरह उठाने लगे थे.

आख़िर में जो लड़के पकड़ मे आए थे, वे थाने पहुंचाए गए और वहां से पुलिस लाइन होते हुए रात को कोई ग्यारह बजे नैनी जेल में डाल दिए गए. कुछ लड़को की चोटें ज्यादा थी और वे हिलडुल नही सकते थे. नैनी जेल तक पहुंचते-पहुचते बहुतों की कमर, उंगलियों और चेहरे पर सूजन बहुत बढ़ गई थी. अपेक्षाकृत कम घायल लड़कों और क़ैदियों ने उन्हें वार्ड में पहुंचा दिया था.

●●

विनायक फरार हो गया.

पुलिस वालों ने कर्नलगंज स्कूल के पाखाने से लेकर बाज़ार का एक-एक बोरा या लकड़ी का बक्सा तक छान मारा.

लाला के पास दरोग़ा आया तो सीने में सरसराहट होने लगी थी. पिछले दिनों दामाद चरस के मामले में पकड़ा गया था. जमानत पर उसे छुड़ाने के लिए एक तो एड़ी-चोटी एक करनी पड़ी ऊपर से अभी मुक़दमा चल रहा है. मुए वकील का पेट ही नहीं भरता. लेकिन लड़की की ज़िन्दगी का मामला है, सो रुपए-पैसे का मोह छोड़कर

कुछ-न-कुछ करना ही पड़ता है.

दरोगा आया. तो लाला ने गुमटी वाले छोकरे को चाय के लिए आवाज दी. लेकिन दरोगा को या तो ऐसी दुअन्निया चाय पसंद नही थी या फिर हाथ में वक्त नही था.

दो-चार ग्राहक थे. लाला ने बिना माल दिए सबको टरका दिया. पड़ोस के दूकानदार कनखियों से दृश्य घूर रहे थे. ऐसे मामलों में डर थोड़ा बना ही रहता है. पुलिस वालों का क्या भरोसा ? हथकड़ी पहना दें तो कोई क्या कर लेगा.

मंगल दरज़ी अपनी दूकान से उतर कर दरोगा के सामने आ गया—नमस्कार कप्तान साब.

पहले का ज़माना होता तो दरोगा को कप्तान कहने से वह खुश हो जाता. आज बेवक़ूफ़ दरोगा भी यह मज़ाक समझता है. कहने वाले के लहजे में अगर मज़ाक नहीं भी होता, सस्ते क़िस्म की चापलूसी ज़रूर होती. बुद्धू हवलदार को भी ऐसी चापलूसी से अब ऊब होती है.

दरोगा ने मंगल के अभिवादन का जवाब ही नही दिया.

बोस बाबू कहीं भागकर जा रहे थे. कही भी उन्हें जाना होता, चाहे मरघट तक हो, चाहे बराती बनकर दुल्हे के साथ, चाल एक-सी रहती. दरोगा को देखा तो नथुनों को फुलाया और पडोस वाले पसारी से खुसर-पुसर करने लगे. पंसारी ने उन्हे टाल दिया और सौदा तौलने लगा.

बोस बाबू ने समझ लिया कि मामला कुछ टेढ़ा है. वह ठहरे घर-गृहस्थी आदमी. बन्द हो गए तो घर की दीवारें कोई लेकर हवा हो जाएगा. ऊपर से सर पर जवान लडकियां है. उन्हें फिर यहां से खिसक जाना ही मुनासिब लगा था.

लाला ने अपनी बत्तीसी दिखाई और कह दिया—मास्टर को समझ लेना उतना आसान नहीं है, दरोगाजी. तुम चलते हो डाल-डाल, मैं चलता हूं पात-पात जैसा मामला है.

मंगल थोड़ा और क़रीब आ खड़ा हुआ—मुफ्त मे दवा बांटता है, मास्टरी करता है और उसी मे खूबपैसा कमा लेता है. यह तो रही ऊपर की बात. अंदर से क्या है, तुम पुलिसवाले ही ज्यादा जानते हो. हम से क्यों कहलाते हो ? दरज़ी के चेहरे पर एक आत्मप्रसन्नता का भाव था.

दरोगा झुंझला रहा था.

मंगल को लगा, उसे शायद इतना खुश नही होना चाहिए था.

—इस वक्त मास्टर कहां हो सकता है, कुछ तो अंदाजा होगा आप लोगों को ? आख़िर पडोस में आंखों पर पट्टी बांधकर तो नहीं रहते हैं ? कब आता है, जाता है, देखते तो होंगे ही···. दरोगा अपनी डायरी पर कुछ नोट कर लेना चाहता था.

मंगल संजीदा हो गया—यह हुजूर, इस पूरे कर्नलगंज में सिर्फ एक ही को मालूम है. मास्टर से बैठकर हम लोग क़िस्से-कहानी थोड़े ही सुनते-सुनाते हैं ?

—कौन है ?

मंगल हंसा—बात ज़रा वैसी है. मास्टर है नम्बरी दिलेर आदमी. आख़िर जवान है, कुआंरा है, हो भी क्यों न ? हां तो, यहां जो बंगाली दादा रहते हैं, उनकी छोटी लड़की से आजकल ज़रा मामला गर्म चल रहा है. पहले इसी लड़की का मामला चौक के एक सरदार से चलता था.

दरोगा की इच्छा हुई कि बैल या गधा जैसा कोई लफ्ज़ कह दे. आख़िर में कुछ भी बिना कहे वह चला गया.

दरोगा चला गया तो मंगल ज़ोरों से हंसा—अब फंसा मास्टर का बच्चा, बडा लीडरी करता है. जवाहरलाल के बाद इलाहाबाद ने तुझे ही तो जना था ! अब ससुराल जाकर मौज करो.

ससुराल का मतलब हर कोई जानता है. लाला का बेवक़ूफ़ दामाद, जो ससुराल में ही रहता है, जानता है कि ससुराल का असली मतलब क्या होता है. अलख खिडकी पर खड़ा था. दरज़ी ने 'ससुराल' लफ्ज कहा तो वह फिक्क से हंस पड़ा.

लाला को दामाद की ऐसी बेवकूफ़ी-जैसी अदाएं बिल्कुल नागवार लगती हैं. लेकिन कुछ कहो तो लड़की मुंह फुला लेगी. उसने सिर्फ खिडकी की तरफ़ घूर कर देख लिया.

जनार्दन बाबू गुज़र रहे थे. उन्होंने भी आधे मिनट के लिए रुककर मामला क्या है, पूछ लिया.

मंगल फिर अपनी दूकान पर वापस चला गया.

लाला को पसीना आ रहा था. गला सूख गया था. मुहल्ले में और भी तो लोग हैं. दरोगा आख़िर यहीं क्यों पूछने चला आया ? उसे लगा, पड़ोस वाले भंगी के बच्चे ने, जो अब पसारी बन बैठा है, ज़रूर दो-दो चार बनाया होगा. तभी दरोगा आया तो वह बेफिक्री से सौदा तौल रहा था.

वैसे कल इलाहाबाद बन्द है.

लाला को लगा, आज ही वह अपनी दूकान बन्द कर देता अगर मालूम होता कि सुबह-सुबह ऐसी फ़ज़ीहत होने वाली है.

दीवार से पीठ टिका कर वह चुपचाप बैठ गया.

●●

आज इलाहाबाद बंद है.

पुलिस वालों ने जीप पर लाउडस्पीकर लगाकर गश्त लगाना शुरू कर दिया था और दुकानदारों से अपील की थी कि वे बिना किसी डर के अपनी-अपनी दुकान खोलें.

चौक से जो सड़क ज़ीरो रोड के नाम से पूरब की तरफ जाती है, वहां किताबों की दुकानों से लेकर कड़ाही-कछुली तक की दुकानें है. हर दस क़दम पर एक गली मिलेगी. जिनके अंदर एक अलग ही दुनिया है. सीलन और बदबू के साथ यहां के लोग मिल-जुल कर रहते है. सूरज की रोशनी कभी-कभी जरूर आती है लेकिन टिकती है बस थोड़ी ही देर.

इस इलाके में एक महाजनी टोला है

महाजन यहां तो क्या, इसके सौ-पचास गज के अदर भी कभी पैदा नही हुआ होगा. लेकिन शुरू से ही इसी नाम से यह मुहल्ला जाना जाता है. महाजनी टोला, ज़ीरो रोड से जब पूरब की तरफ जाते है, बाएं हाथ की तरफ पड़ता है

यहां, मुहल्ले में घुसते ही छुन्नन हलवाई की एक मिठाई की दुकान है. यह दुकान भी शायद मुहल्ले के जन्म की तरह सत्य या त्रेतायुग में पैदा हुई थी. छुन्नन हलवाई कब का मर कर राख हो गया लेकिन दुकान उसी के नाम से जानी जाती है.

बन्द के बावजूद छुन्नन हलवाई की दुकान खुली थी. दुकान बीच बाजार में नहीं है, यह सोचकर ही हलवाई ने खोली होगी. चार-छह लड़के पता नहीं गिद्ध की तरह पंख लगाकर कहां से उड़कर आए और लगे हलवाई पर धौल जमाने. शीशे का शो. केस था. पुराना ज़रूर था लेकिन था पुख्ता ही, टूटकर चकनाचूर हो गया.

लड़के चले गए तो हलवाई में शायद सांस लेने की भी ताक़त नहीं रह गई थी.

मन एकदम गिर गया था. हलवाई पर आज तक किसी ने हाथ नहीं उठाया था लेकिन बुढ़ापे में कैसी बेइज़्ज़ती हो गई ! छुन्नन शायद हलवाई का पितामह लगता था. हलवाई ने छुन्नन को याद किया और उबरना चाहा. इत्तफ़ाक है कि उसने देख लिया था कि लोग खिड़कियों से झांक रहे है.

हलवाई को अपनी कमर सीधी करने मे वक्त लगा था. वक्त थोड़ा और लगता अगर गश्त मे निकले हुए होमगार्ड के सिपाही आ न गए होते.

वैसे महाजनी टोले में दूकान वग़ैरह जो कुछ है, नुक्कड़ पर ही है. अंदर की तरफ़ भारद्वाज मुनि के ज़माने की तमाम इमारतें हैं और गलियां हैं. इमारतें अब अदरक के पंजे की तरह लगती हैं और गलियां पेट की अंतड़ियों की तरह. ये कहां से शुरू होकर कहां ख़त्म होती हैं, सरकार के सर्वे डिपार्टमेण्ट के लोग ही सिर्फ़ बता सकते है. इन गलियों मे अगर कोई छिप गया तो पुलिसवाले असामी को सिविल लाइन्स के पार्कों में ढूंढते हैं. सरकारी क़ानून है, ढूंढना तो पड़ेगा ही लेकिन उन गलियों मे अगर कोई घुसा तो ऊपर से ईंट-पत्थर नहीं गिरेंगे, सरकार ऐसा अभय नहीं देती है. सुनने में आता है, बड़े-बड़े खूनी यहां आकर छिपते रहे हैं.

लेकिन इस दफ़ा छुन्नन हलवाई की दूकान के हादसे से पुलिसवालों को शक पड़ गया. खोजने को वे सिविल लाइन्स की घास-फूसों में कुछ खोज सकते थे लेकिन कोतवाली से छोटे कप्तान के साथ एक दरोगा और तीन हवलदार आ गए थे. फिर एक-एक मकान की तलाशी ली गई. आठ-दस सिपाही बन्दूक ताने हर गली के मोड़ पर खड़े रहे. ऊपर से एक पत्ता भी अगर गिराया, भून देंगे. लेकिन न तो विनायक मिला न दूसरे हड़ताली. पूरे चार घण्टे तक तलाशी जारी रही. एक-एक को पसीना आ गया. आखिर में छोटे कप्तान ने चलने से पहले मुहल्लेवालों को सुना ही दिया, एक भी हड़ताली को यहां ठहराया तो उसके साथ ही नैनी जेल की हवा खानी पड़ेगी.

●●

हीवेट रोड में एक प्रेस है—न्यू भारत प्रिंटर्स. जीर्ण चेहरे के इस प्रेस को देखकर कोई हँस सकता है, दयावान हुआ तो दया भी कर सकता है. लेकिन इसको लेकर शक आज तक पुलिस तो क्या साथ वाले पनवाड़ी तक को नहीं हुआ.

न्यू भारत प्रिंटर्स के मालिक बदरीनाथ जी आज़ादी की लड़ाई में छुरे-बन्दूक से लेकर उन सब निषिद्ध वस्तुओं का इस्तेमाल करते थे, जो गुलाब की पंखुड़ियों की तरह मखमली नहीं होतीं. शुरू में सत्याग्रह वग़ैरह भी किया था लेकिन बहुत जल्द फिर अपने लिए नया रास्ता चुन लिया था. सुनने में आता है, एक रात मे सात अंग्रेज़ अफसरों को अकेले साफ़ कर दिया था. पुलिसवालों को शक था लेकिन सबूत कुछ भी नहीं था. अंग्रेज़ को सच्चा सबूत न सही, झूठे सबूत की ज़रूरत पड़ती है. यह न्यायप्रिय जात कम-से-कम गढ़े हुए सबूतों के अलावा कोई अदालती सज़ा नहीं सुनाती. लेकिन बदरीनाथ जी ठहरे पात-पात चलने वाले आदमी. गढे हुए सबूत का भी इंतज़ाम नहीं हो सका. लेकिन पुलिस की छिपकलियां फिर चौकन्नी हो गई थीं. खून-खराबा करनेवालों से लेकर सत्याग्रहियों तक हर कोई जासूसों को छिपकली की इज्जत ही देता आया है.

आख़िर में पात-पात चलनेवाले बदरीनाथ जी भी पकड़े ही गए. अल्फ्रेड पार्क की लाइब्रेरी में इलाहाबाद का कलक्टर रोज़ पढ़ने आता था. ऊपर की मंज़िल में एक छोटा-सा कमरा है. कलक्टर वहां घण्टा-दो घण्टा पढ़ता और चलते वक्त एक-आध किताब बगल में दाब लेता. अर्दली बाहर, गाड़ी के पास इंतज़ार करता रहता. पुलिस-

वाले भी पूरा ध्यान रखते लेकिन कलक्टर ने कहला दिया था कि ध्यान रखने के लिए लाइब्रेरी में घुसने की जरूरत नहीं है. बदरीनाथ जी ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाया. आदमियों को जिन्दा जलानेवाला अंग्रेज अफ़सर बदरीनाथ के रिवाल्वर की गोली से लाइब्रेरी के अंदर ही ढेर हो गया.

वहां से भाग सकना मुमकिन नहीं है, बदरीनाथ इतना जानते थे. फिर भी इस तीसरी मंज़िल से छलांग लगाई और यूनिवर्सिटी की तरफ़ आधे मील तक दौड़ते रहे. पकड़ने के लिए पीछे कितने लोग थे, बदरीनाथ के लिए गर्दन मोड़कर देखना मुमकिन नहीं था. सिर्फ़ दस-बारह लोगों के होने का अंदाज़ा लगा लिया था. कर्नलगंज थानावालों को ख़बर कर दी गई थी. बदरीनाथ फिर सामने पुलिसवालों को देखकर गली में घुस गए थे. पैरों में गोली वहीं लगी थी.

मुकदमा चला और कचहरी से मौत की सज़ा मिली. मिलनी ही थी. न मिलती तो अंग्रेज़ों और कचहरी की कार्रवाइयों पर बदरीनाथ को भी शक हो जाता. जिले की अदालत की इस राय के बाद मुकदमा हाईकोर्ट में गया. बदरीनाथ जानते थे, हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा वकील भी यह मुकदमा जीत नही सकता. नैनी जेल की दूसरी कोठरियों में मौत के इंतजार में बैठे कैदी गीता-रामायण पढते थे. बदरीनाथ को कभी किसी ने 'ईश्वर' को याद करते नही देखा. वह दोस्तों को खत लिखते या डायरी लिखते. पुराना सिपाही रामवचन कभी 'ईश्वर' की याद को सलाह देना या उसकी महिमा सुनाता तो बदरीनाथ हंस के टाल जाते.

इत्तफ़ाक है कि अंतरिम सरकार बन गई थी हाईकोर्ट मे मुकदमा खत्म होने से पहले ही बदरीनाथ को रिहाई मिल गई.

फिर हिन्दुस्तान आज़ाद हुआ.

मुल्क की सेवा करनेवालों मे से कुछ मंत्री हुए. जो नही हो सके, वे किसी और पद की कोशिश करते रहे. लोगों मे देशप्रेम बखानने की होड-सी लग गई. टोपी लगाकर कोई नेता हुआ, कोई नेता का सेवक.

बदरीनाथ ने टोपी न पहले लगाई थी, न बाद में पहले खद्दर पहनते थे बाद में सूती पहनने लगे

अब उम्र हो गई है.

पहनावा है—गेरुआ रंग का एक कुर्ता और मैली-सी एक धोती चेहरे पर एक गोल फ्रेम का ऐनक है, बिल्कुल सफेद दाढी है. लोग बाबा कहते हैं. कुछ उम्र के कारण, कुछ प्रेम के कारण. हर पांचवे साल चुनाव आता है. लोग जिद करते है कि इस दफा चुनाव लडना ही पड़ेगा. लेकिन बदरीनाथ वोट डालने भी नही जाते. हंसकर वोट को कहते हैं नौटंकी.

न्यू भारत प्रिंटर्स में बदरीनाथ बैठते हैं—तो ज्यादातर वक्त सामने प्रूफ का बण्डल होता. और अगर प्रेस में नहीं हैं तो दीनानाथ जी के यहा मिल जाते है. दीनानाथ अण्डमान के सेलूलर जेल में थे. चालीस साल की सजा हुई थी लेकिन अन्तरिम सरकार की वजह से तेरह साल के बाद रिहाई मिल गई. जेल से बाहर आए तो एक फेफड़ा और गुर्दा बेकार हो चुका था. उम्र तब पचास की थी लेकिन अस्सी के लगते थे. आंखों में रोशनी लगभग नहीं के बराबर रह गई थी. बदरीनाथ की तरह दीनानाथ अविवाहित है. उम्र में खासा फ़र्क़ है लेकिन पिछले लगभग तीस सालों से वे दोस्त है. दीनानाथ का गुजारा स्वतंत्रता आंदोलन के सिपाहियों को दिए जानेवाले एक सौ तीस रुपए की पेंशन से होता है. होता है कहना गलत होगा. इस महंगाई में एक सौ तीस नोटों से गुज़ारा नहीं होता, करना पड़ता है. बदरीनाथ ही देखभाल करते हैं. ख़र्चे

वगैरह की ऊपर की जिम्मेदारी अपने कंधों पर ले ली है. बदरीनाथ को लगता है, दीनानाथ अब कभी भी अपनी आंखें बन्द कर सकते हैं. शायद उन्हें इस बात की बहुत जल्दी भी है. उनके बारे में बदरीनाथ कुरेद-कुरेद कर सूचनाएं इकट्ठा कर डायरी में पिछले साल-भर से लिख रहे हैं. यह ख़बर कभी अख़बार में नही छपी. बदरीनाथ ने भी यार-दोस्तों से कभी ज़िक्र नहीं किया. लेकिन जो लोग करीब के हैं वे जानते हैं कि साठ बरस के बदरीनाथ की ज़िन्दगी मे लालसा का दौरा कभी भी बहुत आसानी से नहीं पड़ा. समूचा हीवेट रोड गवाह है कि बदरीनाथ पत्थर की तरह मजबूत है. आग में तपकर बना हुआ आदमी है.

●●

न्यू भारत प्रिंटर्स में छापा पड़ा. बन्द की वजह से प्रेस के दरवाज़े पर बड़ा-सा एक ताला लटक रहा था. लेकिन अंदर मशीन चालू थी और कुछ ध्यान देने पर उसकी आवाज़ भी सुनी जा सकती थी. लेकिन आवाज़ सुनने की फ़ुर्सत अपने आप ही किसी को मिलती है क्या ?

पुलिसवालों ने आकर ताला तोड़ा था.

तब तक ख़बर पाकर बदरीनाथ भी आ गए थे. हड़ताल की शाम थी लेकिन प्रेस के सामने ख़ासा मजमा लग गया था. दरोगा अदर घुसा तो लोग नज़ारा देखकर दंग रह गए. सामने दो लोग थे. एक पुराने जमाने का ट्रेडिल मशीन चलानेवाला मशीनमैन और दूसरा विनायक फर्श पर हड़ताल के अनगिनत छपे हुए इश्तहार बिखरे पडे थे.

दरोगा की आंखे जल रही थी. इतना बडा इनाम प्रयाग के पुण्य से ही मिल सकता है. मास्टर को पकडने का मतलब एकदम सीधा है. वह सीधा मतलब दरोगा तो क्या गलियों के आवारा कुत्तों को भी मालूम होगा.

बदरीनाथ एकदम शात खडे थे. फौलाद की मूर्ति की तरह. दरोगा की आंखों पर निगाह गई तो कर्नलगंज थाने के उभ दरोगा का चेहरा याद आ गया, जिसकी गोली से वह जख्मी होकर गिर पडे थे. गिर पड़े थे लेकिन होश नही गंवाया था. इसलिए याद है, उस दिन वह आदमी भी अप्रत्याशित रूप में इतना ही ख़ुश हुआ था.

दरोगा ने हुक्म दिया था या शायद नही दिया था. बहरहाल चार सिपाहियो ने विनायक और मशीनमैन की कलाइयो में हथकडी लगा दी थी. सुरक्षा की दृष्टि से यह व्यवस्था शायद नाकाफ़ी लगी थी. फिर मोटी रस्सी से दोनों को कमर से बांध दिया गया था. इतनी मोटी रस्सी से बांधने से आदमी तो क्या हाथी भी कही भागकर जा नही सकता.

दरोगा लौटकर बाहर निकला और बदरीनाथ के सामने आकर रुक गया. इस तरह के दृश्य पहले नाटक वगैरह मे काफ़ी देखने को मिलते रहे हैं. आजकल भी फिल्मों में लगभग ऐसे ही नजारे मिल जाते हैं. बदरीनाथ नाटक या फिल्म न देखने के बावजूद यह जानते हैं.

दरोगा ने चारमीनार सुलगाई—स्ट्रेंज ! इतने बडे क्रिमिनल के पीछे आप है, यह इलाहाबाद वालों को कभी नहीं पता चला

बदरीनाथ चुप रहे. इस बात का जवाब भी तो कुछ नही होता

—रेसपेक्ट की वजह से मैं आपको हथकड़ी नही पहना रहा हूं. बट यू आर अरेस्टेड. थाना चलना होगा.

—चलिए.

विनायक मशीन के पहिए की तरफ कुछ देख रहा था. ऊपर एक टिमटिमाता-सा बल्ब जल रहा था उसकी रोशनी दूर तक नही जाती. रोशनी का रग भी चमकीला नही, पीला-सा है वैसे प्रेस के इस माहौल मे यह एकदम सटीक है कम-से-कम विनायक को यही लगा.

पुलिस वालो के पास कोई वाहन नही था दरोगा के पास एक सायकिल थी सिर्फ थाने तक का फासला कोई पौन मील होगा किराए पर रिक्शे वगैरह लिए जा सकते थे लेकिन ऐसे 'मुजरिमो' की परेड से जो आत्मिक आनद मिलता है, उससे कौन वचित होना चाहेगा ? दरोगा ने तो, कम-से-कम, नही ही चाहा था ऐसी खबरे शायद हवा से भी ज्यादा तेज फैल सकती है फैली भी थी छत और छज्जो पर जैसे पूरा इलाहाबाद शहर ही उमड पडा था सब से आगे दरोगा भविष्य-सुख की रोमाचक कल्पना मे लगभग विभोर-सा नौटकी के कोतवाल की तरह झूमता हुआ डग भर रहा था.

●●

बदरीनाथ को मालूम है, पुलिस वालो के पास कोई आइना ऐसा नही है कि न्यू भारत प्रिटर्स की अतडियो की तस्वीर थाने मे बैठकर देखते रहे हिन्दुस्तानी पुलिस की अकल मे खूखारपन हो सकता है लेकिन आईना नही होता शायद अग्रेज सरकार भी यही चाहती थी आज भी वही तरीका चला आ रहा है बदरीनाथ जानते है, मुट्ठीगज का मदन पसारी आटा-दाल तौलते हुए सिर्फ इस बात पर जला जा रहा है कि बदरीनाथ से इस इलाके के लोग मुहब्बत करते है मदन पसारी भी गिरफ्तारी के वक्त अचानक वहा पहुच गया था चेहरे पर परम करुणा का भाव उतार कर सिर्फ कृपामय भगवान से इन भाग्याहतो के लिए प्रार्थना करता रहा

उसी रात पसारी की दूकान जल गई थी

गवाही के लिए पुलिस वाले आए तो सब ने कहा कि कुछ मालूम ही नही है पूरा मुहल्ला सो जाए तो किसको क्या पता ? मदन घायल शेर की तरह सिर्फ गुर्राता रहा बदरीनाथ बाहर होते तो सबसे पहले जाकर उसकी गर्दन पकड लेता दरोगा कभी बेचारा नही होता लेकिन हुआ था यह सिर्फ बेचारगी ही थी कि इतने मुहद मदन पसारी की मदद नही हो सकी थी

इस हादसे के तीन दिन बाद यूनिवर्सिटी के चार-छह लडको ने पसारी को बहुत पीटा था हड्डिया वगैरह तो नही टूटी थी लेकिन पूरा जिस्म हफ्ता-भर सूजा हुआ था मदन को शायद अपनी नियति मालूम हो गई थी इस बार इतनी मार खा कर भी वह दात जरूर निपोरता रहा लेकिन जुबान खामोश थी

●●

विनायक की गिरफ्तारी के बाद दारागज के एक कमरे मे यूनिवर्सिटी स्टूडेण्ट्स यूनियन का नेता पारसनाथ, इकोनॉमिक्स के लेक्चरर शिवमगल और कर्नलगज स्कूल के भगवती बाबू इकट्ठे हुए दसेक और लडके भी थे वे दफ्तर मे बाबू थे, कॉलेज के छात्र थे और काम की तलाश मे बेकार नौजवान थे

शिवमगल के चेहरे पर भयकर थकान थी जाहिर है, पिछली तीनेक रातो मे सोने की फुर्सत नही मिली होगी चेहरा काला-सा हो रहा था दाढी काटो की तरह दीख रही थी

भगवती बाबू बोले—तुम बीमार पड जाओगे, शिवमगल

—मजाक कर रहे हैं ? शिवमगल चिढ गया था

—वट यू मस्ट टेक केयर ऑफ योरसेल्फ.

शिवमगल कुछ नही बोला

पारसनाथ ने इशारा किया. भगवती बाबू भी चुप हो गए

शिवमगल उठा—विनायक अरेस्ट हो गया, यह कोई छोटी बात नही है,क्या हम लोग बन्दूक वगैरह का इस्तेमाल नही कर सकते ?

पारसनाथ बोला डोण्ट बी पोयटिक.

—फिर पोयट्री सिर्फ लैला-मजनूँ की मुहब्बत है, क्यो ?आई केन प्रूव पोयट्री और बन्दूक के बीच कोई फर्क नही है.

होशियार सिह बोला—क्या हम लोग हडताल मे अगली कोई चीज सोच सकते है, तय कर सकते है ?

होशियार मिरजापुर का इण्टर पास नौजवान है साल-भर मे नौकरी की तलाश मे इलाहाबाद की सडको पर भटक रहा है इलाहाबाद की सडको, गलियों के बारे मे कार्पोरेशन वालो को भी जरूरत पडने पर सूचनाए देने की हैसियत वह रखता है दोस्त लोग मजाक मे कहते है- कन्फ्यूशियम पिछले जन्म मे शायद वह चीन मे पैदा हुआ था तब से पैदल चलने की आदत-सी बन गई है

होशियार खेबारा की डायरी के पन्ने उलट रहा था

शिवमगल बोला— हम लोग इस सेट-अप मे पोलीटिकल पार्टी नही है, लेकिन इन तमाम स्वार्थी पार्टियो के बारे मे जनता को आगाह कर सकते है

—लेकिन अगर हम पावर मे नही आते है तो चेंज' लाने का कोई भी तो जरिया हमारे पास नही होगा होशियार बोला

—क्यो हम चुनाव के धोखे को मजूर कर सकते है ?

—सवाल मजूर करने का है ही नही सवाल है धोखा देने वालो को क्या हम धोखा नही दे सकते है ? देश के हक मे यह शायद अविकल्प है बहुत जरूरी…

—कैसे ? पारसनाथ ने पूछा

—समझौते के अलावा किसी भी रास्ते मे वियतनाम की अगस्त क्राति हो या क्यूबा का विप्लव हर जगह एक मिसाल मिलती है कि समझौते के जरिए मियाँ-बीवी के झगडे दूर हो सकते है लेकिन कोई भी बडा काम नामुमकिन है

होशियार भगवती बाबू की बगल मे बैठा था वह शायद शब्दो के अभाव मे बहुत कुछ नही कह सका था भगवती को महसूस हुआ, उनकी बगल मे एक जगली आग है.

शिवमगल की आखे सुर्ख थी. माथे की शिराए उभर-सी आई थी चेहरा देखकर लग रहा था, अदर कोई तीखा-सा दर्द चल रहा होगा

वह बोला—हडताल के बाद अगला कदम होशियार ने समझा दिया वी मस्ट एग्री टु हिम विनायक की रिहाई के बाद हम लोग अपनी अगली स्ट्रेटजी तय करेगे.

—फैसला लेने से पहले हम मे से हरेक को अपने आप के बारे मे सारे शक दूर करने होगे. होशियार बोला

पारसनाथ देर से चुप था. पूछा —रास्ता ?

—रास्ता अन्दर का है सवाल अपने आप मे करना होगा किसी बाहरी जवाब या अदालतनामे की जरूरत नही है. लेकिन जब तक कि हमलोग अपने भीतर स्फटिक की तरह स्वच्छ नही हो जाते है, आगे बढना मुनासिब नही होगा

'स्फटिक' शब्द सुनकर पारसनाथ को हसी आ गई थी. इसके बावजूद वह गभीर था. बोला —इलाहाबाद को यह सब बताना इतना आसान नही है. मुनासिब

नहीं होगा.

—फुलिश ! शिवमंगल भभका—सवाल इलाहाबाद या दारागंज या कर्नल-गंज के सब्जी-बाजार का नहीं है. सवाल पूरे मुल्क का है. वियतनाम पूरी दुनिया को आजादी का रास्ता अगर दिखा सकता है, इलाहाबाद भी पूरे हिन्दुस्तान को कुछ बता जरूर पाएगा.

भगवती बाबू सीधे बैठे थे. अब तन गए, बोले—अब एक सवाल और है. मेह-नतकश की तकलीफ़ का अहसास अगर हममें से किसी के भीतर नहीं है, बन्दूक की गोली या हथगोलों से क्या हम सचमुच क्रांति ला सकते हैं ?

—नो. वी काण्ट एक्ट लाइक ए मशीन. सबसे पहला सवाल तो यह है कि दूसरों की तकलीफें किस हद तक हमारी अपनी बन पाई हैं ? इस कैपिटलिस्टिक माहौल में अगर हममें से कोई उतना सॉफ्ट नहीं है, उसे हम निकालेंगे नहीं लेकिन इंत-जार करके उतना मैच्योर उसे होना पड़ेगा. देयर इज नो अदर ऑल्टरनेटिव ऑफ दिस कंडीशन.

—ग्रैण्ड ! भगवती बाबू उछल-से पड़े—भई शिवमंगल, रियली आ'म प्राउड आफ यू.

—किसी भी रिव्योलूशन में सबसे ज्यादा ख़तरा उन जड़ समाजवादियों से है जो महज तर्क के लिए बिना रत्ती-भर अहसास के लड़ते हैं लड़ाई खत्म हो जाने के बाद उनका रवैया वैसा ही हो जाता है, जैसा वेस्टेडइण्टरेस्ट का होता है. ऐसे लोगों से हमें होशियार रहना पड़ेगा. सुनने में यह बात काफी आईडियलिस्टिक लग सकती है लेकिन यह एक सच्चाई है.

भगवती बाबू बोले—रास्ता लम्बा है लेकिन लम्बा ही सही.

शिवमंगल बोला—शॉर्टकट से भिण्डी-आलू के बाजार तक जरूर जा सकते हैं. बस इसके आगे जाने के लिए रास्ता लम्बा ही होता है.

पारसनाथ कहीं से कुल्हड़ में चाय ले आया था. एक दोने में पकौड़े भी थे. चाय की खुशबू से माहौल जैसे एकदम बदल गया. भगवती बाबू ने भी मह-सूस किया, अभी उसमे जवानी काफी बाकी है. बोले—सच, मैं कभी भी बूढ़ा होना नहीं चाहता.

सब हंस पड़े.

होशियार नहीं हंसा. बोला—वक्त को बांटने का तरीका आपको मालूम हो गया. बहुत थोड़े लोग यह जानते हैं. वक्त शायद कभी खत्म होता ही नहीं. इसलिए उसे लम्बा कहकर जो लोग बैठ जाते हैं, वे बहानेबाज और कायर हैं सिर्फ. सवाल यह है कि इस लम्बे वक्त के बावजूद हम कितना बेचैन हो सकते हैं.

—क्या हम लोग अपने आप से सवाल नहीं कर सकते हैं ? शिवमंगल का यह सवाल किसके प्रति था, पता नहीं चला. शायद यह किसी ख़ास आदमी के प्रति नहीं था. कुछ देर तक किसी ने जवाब नहीं दिया. वे शायद सवाल को समझ लेना चाहते थे.

भगवती बाबू ने चाय का आख़िरी घूंट पिया और कुल्हड़ सरका दिया. बोले—सवाल कर सकते हैं और करना भी पड़ेगा. लेकिन सवाल का सही जवाब नहीं भी तो हो सकता है.

—यानी आत्मप्रवंचना की बात कर रहे हैं आप ?

—राइट. दूसरों को डिसीव करने से भी कहीं ज्यादा गुनाह अपने को धोखा देना है. वियतनाम की क्रांति की कहानी पढ़कर हम में से कई लोग रोमांचित होते

हैं. फिर सपना देखने की तरह कसम खाते हैं कि एक नया 'सोशल ऑर्डर' लाने के लिए अपने को कुर्बान कर देंगे. आख़िर मे शादी करते हैं, बीवी-बच्चों के साथ सुख से या दुख से गृहस्थी निभाते हैं.

—अगर इस पूरे मुल्क में कभी आग लग गई तो सिर्फ़ इसका जवाब मिल सकता है.

—यहाँ सबकुछ हो चुका है लेकिन आग कभी नही लगी.

—यह इतिहास है लेकिन आने वाले कल की ख़बर नही.

—यह सिर्फ इसलिए हुआ कि यहां के पॉलिटिक्स के दलाल हवा के साथ हवा और पानी के साथ पानी और धूप के साथ धूप बनते रहे हैं.वेश्या के दलाल का भी एक चरित्र होता है लेकिन इन दलालों का कुछ नही होता. कुलमिलाकर वे गिरगिट होते हैं···

––सिलसिला था आने वाले कल का. इस बारे मे हम होने को बहुत उत्साहित जरूर हो सकते हैं लेकिन यह हमारी गलती भी हो सकती है.

—जरूरत है हालात के मुताबिक ऐक्शन की. एक सही समझ की. इस समझ को लोगों मे फैलाने की. चीन और क्यूबा में यही हुआ है, हालांकि उनकी भौगोलिक परिस्थितियां और समाज-व्यवस्था एक-दूसरे से बहुत ही अलग किस्म की है.

विनायक अक्सर ग्वेवारा की रणनीति का हवाला देता रहा है. वेस्टेड इण्टरेस्ट के साथ लड़ाई में सिर्फ एक ही वियतनाम क्यों ? दो-चार या सौ भी हो जाएं तो भी कम ही होंगे. पूरी दुनिया का वेस्टेड इण्टरेस्ट सिर्फ एक होता है.

—हम लोग साथ-साथ आग और मिट्टी नहीं बने रह सकते हैं. या तो सिर्फ आग बन जाते हैं या फिर सिर्फ मिट्टी. ऑर्गेनाइजेशन की यह गड़बड़ी ही सबकुछ मटियामेट कर देती है.

—आग-मिट्टी के सिलसिले में कॉलिजों मे पढ़ने वाले नयी उम्र के लड़कों के चेहरे याद आते हैं. जमीन मिले तो इनमे से कई लोग बहुत अच्छी फसल साबित हो सकते हैं.

—यह भी एक ड्रीम है. मारिजुआना इन्हें जानबूझ कर दिया जाता है. एल. एस. डी. की गोलियां इन्हें हासिल कराई जाती हैं, किसी-न-किसी बहाने. आख़िर उनमें से हरेक के पास एक जिस्म-भर रह जाता है.

—विनायक कभी-कभी कहता है, वक्त की एक ख़ास किस्म की ख़बर होती है. हम में से कई लोग यह पढ नही पाते हैं. इसलिए कभी कोई बूढा, अनपढ़ किसान हमें बागी दिखता ही नही.

— हम लोगों को होशियार यानी और भी ज्यादा होशियार होना चाहिए कि पत्थर को सिर्फ पत्थर समझे और आदमी को आदमी.

थोड़ी देर पहले होशियार बाहर गया था. वह दौड़ता हुआ वापस लौटा. बुरी तरह हांफ रहा था. चारेक सेकेंड रुक कर उसने शायद दम लिया था. बोला—सिवीलियन ड्रेस में पुलिस आ रही है. गेट अवे.

वे फिर तितर-बितर हो गए.

कमरा सूना पड़ा रह गया.

●●

आठ घंटे पुलिस थाने में और इक्कीस दिन तेरह घंटे हवालात में गुजारकर विनायक बाहर निकला. बदरीनाथ की जमानत मंजूर नहीं हुई थी. नैनी सेंट्रल जेल के फाटक पर भगवती बाबू और शिवमंगल थे. चार-छह यूनीवर्सिटी के लड़कों के साथ

बाद में होशियार भी पहुंच गया था सबके पास एक-एक सायकिल थी. सबसे पहले भगवती बाबू ने विनायक को गले लगाया. फिर बाक़ी लोगो ने वही किया.

—दुबले हो गए हो थोड़ा, क्यों ? भगवती बाबू की आवाज मे लाड था.

शिवमंगल बहुत दिनों बाद हसा—मोटा होकर निकला हे जवान. जेल आख़िर तीन तरह के लोग जाते है. नम्बर वन जो आराम करना चाहते है नम्बर टू जो बेवकूफ हैं, नम्बर थ्री जो सचमुच क़ातिल-वातिल कुछ हैं. यानी क्रिमिनल्स एण्टर द गेट ऑफ ए जेल. क्यों मास्टर ?

विनायक को बात मजेदार लगी. वह भी हसा

होशियार सिंह ने बदरीनाथ के बारे मे पूछा.

—इन इक्कीस दिन और रातों मे उन्होने जिन्दगी का तजुर्बा इक्कीस साल का कर दिया, रियली ही इज ग्रेट. कभी-कभी अपनी डायरी के पन्ने पढ़कर सुनाते थे. आदमी के लिए इस आदमी के दिल मे इतनी मुहब्बत हो सकती हे. ऐसा आदमी महान क्रांतिकारी ही हो सकता है सिर्फ. बाहर से देखकर उनके अदर की गहराई का पता नहीं लगता. लेकिन गहराई अगर किसी ने देख ली तो एक अजीब किस्म की ख़ुशी से मन भर जाता है कि इतने सम्पन्न लोग भी हमारे इर्द-गिर्द है.

सायकिल हाथ मे ले सब पैदल चल रहे थे.

—बाहर आने के बाद हर चेहरा बडा अपना, बडा ख़ूबसूरत-सा लग रहा है सबकुछ कितना बदला-बदला-सा है, जबकि यह सच नही हे दीवारो के अदर रहकर मैं ही शायद थोडा बदल गया. विनायक बोला.

होशियार बोला– अब, सर, आपको मास्टरी की फ़ुर्सत नही मिलेगी शायद हम लोग लगभग फौजी बन चुके है मै बेकार जरूर हूं लेकिन सिर्फ इस वजह से ही फौजियों के खाते मे नाम नही लिखाया

विनायक को बात अधूरी लगी. उसने कुछ नही पूछा. वैसे भी होशियार के साथ बहुत ज्यादा पहचान नही थी.

भगवती बाबू ने एक बीडी सुलगाई. अधजली माचिस की तिल्ली को किनारे की तरफ घास पर फेक दिया तो एक गौरैया उड गई. होशियार सिंह इस घटना को देखता रहा. घटना, उसे लगा, काफ़ी गहरी हे. यानी हम कैसे-कैसे किसी को तकलीफ देते हैं, कभी सोचते ही नही.

शिवमंगल को होशियार का चेहरा बहुत सजीदा लगा. बोला—एकबारगी ख़ामोश हो गया तू.

वह हस पड़ा—मास्टरों की बाते सुन रहा हूं.

शिवमंगल को याद आया, पेशे से वह भी मास्टर ही हे. यह एक ऐसा मसला है जो उसे याद ही नही रहता. भूलने में, कम-से-कम यह बात भूलने मे, न तो कोई दिक्कत होती है, न इस वजह से मलाल ही.

भगवती बाबू ने आखरी कश लेकर बीड़ी का टुकड़ा फेक दिया वह सड़क पर एक किनारे गिरा. शायद थोडी देर में बुझ भी गया. होशियार को देखकर सुख मिला कि इस बार इस घटना से किसी चिडिया को उडना नही पडा.

होशियार सिंह के साथ आए यूनीवर्सिटी के लडके इन लोगो की वजह से न तो सिग्रेट पी पा रहे थे न कोई फिल्मी गाना ही गा पाना मुमकिन हो रहा था. और नैनी का यह इलाका इतना खूबसूरत है कि गाने की धुन निकल ही सकती है. वे लोग अपनी इच्छा दबा गए थे. सिर्फ़ एक लड़के ने कहा था—इस कातिल जेल के आस-पास का इलाका इतना खूबसूरत कैसे बन गया ?

भगवती बाबू ने जवाब दिया— रामायण नही पढ़ी न ? रावण की रानी मंदोदरी त्रिभुवन में सबसे ज्यादा ख़ूबसूरत थी.

फिर देर तक वे सब ठहाका लगाते रहे है.

भगवती बाबू ने समापन किया—अब चलो, सायकल पर सवार होते हैं. विनायक भगवती बाबू की सायकल के कैरियर पर बैठ गया.

वे कर्नलगंज की तरफ़ जा रहे थे.

●●

कर्नलगंज मे अख़बार वाले शायद ही कभी आते हों. यहां जो ख़बरें बनती या बिगड़ती है, उनमें उनकी दिलचस्पी अक्सर नही ही होती. छह-सात महीने पहले एक ख़बर छपी थी, मंगल दरजी की लड़की स्टोव फट जाने से जल गई थी. अस्पताल में लड़की की मौत हो गई. इसकी अगली ख़बर अख़बार में नही छपी थी. सिर्फ़ मुहल्ले वाले कहते है : लड़की के पाँव भारी थे. अट्ठारह बरस की कुआँरी लड़की के साथ ऐसा कोई वाकया जुड़ जाए तो उसका बाप मुंह दिखाने लायक रह जाता है कहीं ? सुनने में आता है, इस हादसे को लेकर बाप ने बेटी को चारपाई के एक खुले हुए पाए से इतना मारा था कि रीढ़ की हड्डी पर चोट लगते ही लड़की बेहोश-सी होने लगी थी. मंगल ने इसकी परवाह नही की और कटरा चला गया था. मामला ही ऐसा था कि सबसे कहा भी तो नही जा सकता था. कटरे में एक पुराने हकीम हैं, दिलावर हुसैन. ऐसे मामलों में उसने कइयों की मदद की है.

मंगल लौटकर आया तो घर के सामने मुहल्लेवालों का हुजूम-सा खड़ा था. वह परमानंद लाला के साथ अंदर घुसा तो सर में चक्कर आ गया था. गिर ही पड़ता अगर लाला ने ऐन मौक़े पर पकड न लिया होता. स्टोव फट गया था और लड़की बुरी तरह जली हुई पड़ी थी. बदन की चमड़ी इस तरह सिकुड़ गई थी कि देखने से दहशत-सी होती है. परमानंद ने अस्पताल फोन करवा दिया था. एम्बुलेंस आयी तो मंगल और लाला लड़की के साथ अंदर जा बैठे. शाम के पाँच बजे यह हुआ था. रात के ग्यारह बजे तक सारा मामला ख़त्म ही हो गया.

कहने वाले कहते ही हैं.

सबसे पहले बोस बाबू ने सिलसिला शुरू किया था शायद. या मुमकिन है उनसे पहले भी किसी और ने कर दिया हो. बहरहाल, हफ्ते-दो हफ्ते तक लोग काफ़ी फुसफुसाते रहे हैं. ख़ास तौर पर औरतें. मंगल की घर वाली नहीं है. मंगल ने कभी ज़िक्र नहीं किया लेकिन ललाइन ने खोद-खोद कर असली बात पता कर ही ली. वह मंगल के ही रिश्ते के एक मौसा के साथ प्रतापगढ़ रहती है. ठेकेदार के यहां मौसा काम करता है और कभी भी शादी-ब्याह की ज़रूरत महसूस ही नहीं हुई. दसियों बरस से वे पति-पत्नी की तरह रहते आ रहे हैं.

दुपहर को ललाइन के पास कोई काम नहीं होता. गली में जो दरवाज़ा खुलता है, उसके चौखटे पर बैठ जाती और घर-गृहस्थी, दुख-सुख की कहानियां सुनती-

सुनाती रहती. सुनती वह कम ही. सुनाने की आदत ऐसी पड़ गई है कि सुनने का मौक़ा आता ही नही.

इस हादसे के बाद मंगल ज़रा बुझ-सा गया.

दूकान अक्सर बन्द ही रहने लगी है. दूकान को ताला लगाकर घर पर भी नहीं मिलता. कभी किसी साधु-फ़क़ीर के यहा चिलम भरते मिल जाता, कभी सड़क पर यू ही घूमता हुआ.

परमानद लाला ने कई बार समझाया भी—यह सब ऊपर वाले का खेल है, भाई तुम्हारा क्या कसूर ?

मंगल ने कभी भी ऐसी बातो का जवाब नही दिया.

परमानंद कुछ कहता है तो चुपचाप सुन लेता है. फिर एकदम मे उठकर चलने लगता है. जैसे कोई निहायत जरूरी काम भूल आया हो.

एक और घटना इस कर्नलगज में घट गई. लेकिन यह सिर्फ मुहल्ले वालों को ही पता है. अखबार में तो कुछ छपा ही नही. परमानद लाला को इस बात की बहुत दिलचस्पी रहती है कि अख़बार में कर्नलगंज के बारे मे क्या छपता है.

लेकिन यह बात कुछ अलग ही ढंग की थी.

चूने के गोदाम के साथ एक सायकिल मरम्मत वाला है एहसान मिया. पहले शायद रेलवे मे था. था वैसे खलासी लेकिन शाम को टेरीलीन की कमीज और पाँवो में बूट के साथ जब निकलता तो उसके यार-दोस्त भी यकीन नही करते कि यही शख्स दिन-भर मजदूरी करता है. जेब से वह चारमीनार की पैकेट निकालता और खडा-खड़ा धुए के छल्ले उड़ाने लगता. शाम होते ही याद ही नही रहता कि एहसान मिया रेलवे के लोको डिपार्टमेंट मे खलासी है.

काम का वक्त होता तो एहसान अपनी नीली वर्दी मे तब तक इजन के नीचे लोहे के सरिए से सफाई करता, जब तक दुपहर को खाने की सीटी न बज जाती या शाम की छुट्टी न हो जाती. चेहरा एकदम काला हो जाता. वैसे भी रग गोरा नही था, कुछ-कुछ ताबई-सा था. ऊपर से इजन की कालिख लग जाती तो चेहरा अजूबा-सा लगने लगता, यार-दोस्त मजाक करते—तेरे चेहरे पर कालिख ही पुतेगी कभी.

एहसान जवाब नही देता ऐसी बातों का. होंठों के बीच पहलवान छाप बीड़ी दबी होती और हाथ होता सरिए पर. हां, रोटी खाने के वक्त कभी कोई हंसी-मजाक भी हो जाता. लेकिन ऐसा बहुत कम ही हुआ है, जब अपनी तरफ से उसने मजाक का कोई सिलसिला शुरू किया हो.

दोस्त लोग पीछे से फब्तिया कसते—साले ने शादी की तो बीवी भी घर छोड कर भाग जाएगी. अरे भई, कभी तो हंसो, खेलो, कूदो, जिन्दगी का सिर्फ एक ही रग थोड़े ही होता है.

सण्डीला से बदली होकर एक शटर आया था सूरज सिह. वह शायद हमेशा याद रखता था कि वह हिन्दू है. इलाहाबाद आते ही पूरी छान-बीन कर ली कि लोको-शेड में कितने हिन्दू हैं और कितने 'कटुए'. फिर एक-एक मुसलमान के घर की एक-एक बात मालूम कर एक ख़ासी रिपोर्ट बना ली थी.

अरसा पहले एहसान का बाप पाकिस्तान चला गया था और वहा जाकर अब नए सिरे से घर भी बसा लिया. अम्मी यही रह गई है. सूरजसिह ने इसी मामले पर एक भद्दा-सा मजाक किया – कटुए का बाप साला पाकिस्तानी है तो माँ भी गगा-जमना की नही होगी. आख़िर में एक अश्लील-सा लफ्ज उसने ज़बान से उडेल दिया था.

एहसान मियाँ को मालूम हुआ तो हाथ मे थमा गर्म सरिया लेकर दौड़ आया

था. सूरज सिंह भी पूरा ठाकुर था लेकिन उस वक्त मियां के सामने पिद्दी लग रहा था.

जो लोग इस लोकोशेड के पुराने आदमी हैं, उन्हें मालूम है कि एहसान मियां का गुस्सा दिल्ली की कुतुबमीनार से कम का कभी नहीं होता. लोगों ने पकड़ लिया था नहीं तो सूरजसिंह को शायद इंजन की भट्टी में ही फेंक दिया जाता. यह मुमकिन ज़रूर नहीं हुआ था लेकिन एहसान मियां ने गर्म सरिए से शंटर की ऐसी ख़बर ली कि बायां हाथ और दाहिनी टांग की हड्डियां टूट गईं, घुटने के प्लेट में भी दरार आ गई थी.

शंटर को ठीक होने में कोई सातेक महीने लगे थे. सात महीने बाद भी टाँगों में इतनी ताकत नहीं रह गई थी कि उन पर पूरा वज़न डाला जा सके. सूरज सिंह शंटर से ड्राईवर बनते-बनते इंजन से ही उतार दिया गया. शेड में फिटर की जगह पर तब्दीली हो गई.

एहसान मियां की भी छुट्टी इसके बाद ही हो गई. इस ज़माने में किसी राजे-महाराजे की रियासत चली जाए और किसी की नौकरी छूट जाए—वापस नहीं मिलती. वापस पाने के लिए कोशिश भी नहीं की थी. लोकोशेड के बड़े फाटक पर थूक कर बाहर निकला तो अंदर फिर दुबारा घुसा ही नही.

इसके बाद सायकिल वग़ैरह मरम्मत की एक दुकान खोल ली. कर्नलगंज में चूने के गोदाम के पास एहसान मियां ने छप्पर डाल लिया. छप्पर डाले भी कोई तीनेक बरस हो गए. दुकान की हालत वैसी है.

पूरा कर्नलगंज जानता है एहसान मिस्त्री को. पहले मियां कहलाता था, अब लोग कुछ डर से, कुछ प्यार से, मिस्त्री कहकर बुलाते है. ख़ून वग़ैरह जिन्दगी में कभी किया नहीं लेकिन आंखें हमेशा ही पता नहीं क्यों सुर्ख़-सी बनी रहतीं. लोग डरते भी शायद इसीलिए हैं. न डरने से सचमुच क़त्ल ही कर डालेगा क्या यह शख्स ? करने से भी गवाही के लिए शायद चार लोग नहीं मिलेंगे.

मुहल्ले-भर में अगर किसी के सामने झुकता है यह मिस्त्री, तो वह सिर्फ़ मास्टर ही है. एक दफ़ा पथरी का दर्द इतना ऊंचा उठा कि बेचारा सुबह से लेकर शाम तक सिर्फ़ कराहता रहा. बीच-बीच में तीनेक बार बेहोश भी हुआ है. शाम को दुकान में जो छोकरा काम करता है, मास्टर से दवा की पुड़िया ले आया था, तब से आराम है. इलाज वैसे अभी भी जारी है लेकिन वैसा दर्द फिर कभी नहीं उठा.

एहसान मिस्त्री फिर मास्टर का गुलाम-सा बन गया. एक तरह से मास्टर से जान-पहचान भी तभी से शुरू हुई थी. एकदफा उसने कह दिया था—आपको तो आदमी की बजाय फरिश्ता होना चाहिए था.

विनायक ऐसी बातों को सुनना पसंद नही करता, इतना कह चुकने के बाद ही वह समझ गया था. लेकिन बस, फिर कभी ऐसे सस्ते ढंग से खुश करने की कोशिश उसने की ही नहीं. सिर्फ हफ्ते में दो-एक बार आकर खैरियत ज़रूर पूछ जाता.

●●

सायकिल मरम्मत के मिस्त्री के पास कोई दिल का बीमार आदमी आए तो ताज्जुब ही होता है. ताज्जुब तो एहसान को भी हुआ था लेकिन अपनी थोड़ी-सी ज़हमत से अगर किसी की तमाम परेशानियां दूर होती हों तो वही सही. लेकिन अब ज़माना बदल गया. ऐसे मामलों में ख़तरा भी तो कम नहीं है. सामने खड़े ईंट की भट्टी के मुंशी को देखकर दिल में फिर रहम आ गया था. शक्ल से ही लगता है, ख़ुदा की मार से टूटा हुआ है बेचारा.

लेकिन थोड़ा शक भी पड़ गया था.

इस बूढ़ी उम्र मे जवान लड़की से शादी करने का लालच क्यो हुआ था ?

मुंशी समझ गया था कि मिस्त्री पूछना क्या चाहता है बोला था वक्त के तूफान की मार से चेहरा सिकुड़ा हुआ बैंगन-सा दिखता है, वर्ना राम कसम उम्र सिर्फ पैंतालीस बरस है दस जनो का बोझ उठाते-उठाते कभी फुर्सत ही नही मिली कि अपने लिए भी एक घर के बारे मे सोचूं न किसी ने सलाह दी, न अपने ही गरज से खुद उस हद तक बढ़ा लेकिन मुकद्दर भी शायद कोई चीज होती है पहले यकीन नही करता था अब करता हू पटवारी ने अपनी लड़की की कहानी सुनाकर एक तरह से फास-सा लिया था आखिर आदमी के दिमाग की हस्ती ही क्या है ? बड़े-बड़े मुनि-ऋषि भी मेनका, रभा के सामने पानी होते रहे है, स्वर्ग के देवता उनके कदम चूमते रहे है मै ठहरा मुंशी मथुराप्रसाद दिमाग फिर गया और अगले ही दिन पण्डित बुलाकर शादी कर ली

मिस्त्री कहानी सुनता रहा

मेनका, रभा की बात समझ म जरूर नही आई लेकिन लगा, मुंशी के दिल मे तकलीफ है. जो छोकरा मरम्मत के काम मे शागिर्दी करता है, खिक् खिक कर रहा था आस-पास कोई आईना होता तो मुंशी को दिखा देता—तुझे देखकर तो भूतनी भी भाग जाएगी

मिस्त्री को यह सब बदगलू की पसद नही है भोहो को सिकोड़कर एक बार पीछे की तरफ गर्दन मोड़ ली तो लड़का तुरत गभीर हो गया. हाथ भी बैंस खाली नही थ पक्चर जोड़ने का तीन ट्यूब पड़े हुए थ

अब तुम्ही पार लगा सकते हो मिस्त्री मुंशी कातर हो रहा था

— हु

बस खर्चे-पानी की फिकर मत करना

—साले मूतता ह तेरे पैसे पर एहसान एकदम स खूखार हो उठा था कभी-कभी भ्रम हो जाता है, यह शख्स सचमुच आदमी है या शेर ? शेर जैसा दिखता तो कम-से-कम कोई गलतफहमी नही होती

मुंशी ने हाथ जोड़े—माफ करना मिस्त्री दिमाग तकलीफ के मारे परेशान ह कुछ कहना है, कुछ कह जाता हू

—शाम को दस बजे दारागज के हनुमान मदिर के सामने मिलना

मुंशी न परम विनय से गर्दन हिला दी फिर हाथो को जोड़े हुए खिसकने लगा भरोसा क्या है ? एक ही मिनट म बात बदल ले तो ताज्जुब नही होगा शेर की माद म से निकलने के बाद आदमी की हालत ऐसी ही होनी होगी

●●

मिस्त्री ठीक दस बजे पहुच गया साथ म दो-तीन यार-दोस्त थे उन्ह मुंशी नही पहचानता न पहचानना ही शायद अपने हक म अच्छा है शक्ल-सूरत स य लोग मिस्त्री के यार ही लगते है खतरनाक भी

मुंशी ने रास्ता दिखाया—आखिरी मकान है पटवारी न लड़की की शादी कर दी और हफ्ते-भर के अदर पुष्पक रथ म बैठकर ऊपर चला गया मुंशी तमाम गमो के बावजूद रस बरसा रहा था

मिस्त्री को ऐसी बातो मे दिलचस्पी होती ही नही है आधी बातें तो समझ मे ही नही आती है वह चुपचाप चलता रहा मुंशी के हाथ मे टार्च था उसकी रोशनी मे रास्ते का पता चल रहा था

मुंशी ने फिर अपनी जुबान चालू की—बाप मर गया लेकिन मिजाज तो देखो ! रिश्ते की कोई मौसी वौसी रहती है, उसके पास चली आई बुढ़िया दरोगा

बनते-बनते औरत बन गई मां, भानजी को लगता है, ऐसी मौसी की गिरफ्त से छुडाने वाला तीन लोको मे भी कहा कोई होगा ?

नीम के पेड के पास जाकर मुशी रुक गया - यह मकान है.

मिस्त्री पेड पर चढ गया और ऊपर से छलाग मार दी सीधे आगन पर जाकर उतरा. दरवाजा खोल दिया तो उसके यार लोग भी अदर घुस गए मुशी के दिल म ओले बरस रहे थे नसो के अदर खून इतनी तेजी से भागता ह, कभी आज तक मालूम ही नही हुआ था

कही मौसी की बच्ची कब्जे मे न आई तो सबको दारागज के मरघट पर भस्म कर डालेगी मरघट कोई खास दूर भी तो नही है यहा से. मुशी खडा-खडा तमाम देवी-देवताओ के नाम याद करने लगा सवा रुपए की मनौती भी मना डाली

शुरू मे उछल-कूद की एक दबी हुई-सी आवाज आने लगी थी. लेकिन उन लोगो ने शायद मौसी के सिर मे डडा मारकर बेहोश कर दिया था अब रही दो बित्ते की छोकरी उसकी क्या चिता ?

वे लोग बाहर निकल आए

मिस्त्री के कधे पर लडकी थी फिर वे सब भागने-से लगे

मुशी को शक होने लगा. छोकरी कही खत्म तो नही हो गई ? एकदम चुप-चाप मुर्दे की तरह पडी हुई है.

पूरे डेढ मील दौडना पडा था

फिर एलनगज के बाध के पास लाकर मिस्त्री ने छोकरी को पलट दिया. मुह मे कपडा ठूसा हुआ था इस वजह से आवाज नही कर पा रही थी. ऊपर से दम भी शायद काफी कुछ घुटने लगा था कुछ-कुछ बेहोश-सी लग रही थी आखे बन्द थी

बोझ को जमीन पर उतार कर मिस्त्री अगोछे से पसीना पोछ रहा था फिर बाध से नीचे उतरा और पानी लाकर छोकरी के चेहरे पर छपके लगाए, ठडक पडी तो उसने आखे खोल दी मिस्त्री ने पहले ही मुह का कपडा भी हटा दिया था

छोकरी फिर एकदम से उठ बैठी बोली—आप लोग हमे गगा मे बहा दो लेकिन इसके साथ मत भेजो.

मुशी अट्टहास-सा कर रहा था अब 'इसके' साथ ही जाना है वह अपनी छाती पर घूसा मार रहा था पौरुष की भला इससे बडी मिसाल और हो भी क्या सकती है ?

छोकरी है कि शेरनी ? उसने मुशी के मुह पर थूक दिया फिर एहसान का पाँव पकड लिया—यह आदमी मुझसे पेशा करवाना चाहता है ग्राहक ढूढ कर लाता है, जब भी मौका मिलता है

लेकिन नही एहसान मिस्त्री का दिल इतनी छोटी-मोटी बातो से नही पसीजने का औरत और बिल्ली का कोई भरोसा नही होता झूठ पर चलना दोनो के ही लिए मामूली बात है.

एहसान ने बीडी का बण्डल निकाला और जोर से कश खीचा इस वक्त कही चिलम का इतजाम होता तो बडा मजा आता

थोडी देर मे छोकरी उठ खडी हुई और सामने बढकर मुशी के गाल पर जोरो से थप्पड रसीद कर दिया--लुच्चा कही का

मुशी सहम गया

मिस्त्री को भी गुस्सा आ गया था—साली के हाथ-पैर बाध कर दरिया मे ही बहा दो.

फिर छोकरी एहसान के सामने आ खड़ी हुई—यह आदमी मर्द नहीं है.

मिस्त्री को सांप ने काट लिया था—क्या ? बुरी तरह चौंक उठा था एकदम से. साथ के यारों को भी यह बात समझ में नहीं आई थी.

मिस्त्री ने दोस्तों से इशारा किया—उतारो साले के कपड़े.

बस. अंधेरे में फिर मथुराप्रसाद अंधा बनकर दौड़ता चला गया. एहसान ने बीड़ी को नीचे फेंक पांव से कुचल दिया था फिर.

●●

इसके बाद कहानी की पटभूमि बदल गई.

मिस्त्री छोकरी को अपने डेरे पर ले आया. छोकरी ने भी चू नहीं की. जैसे इस घटना के लिए ही सदियों से वह इंतजार करती रही है.

सुबह होते ही यह ख़बर कटरा-कर्नलगंज के इलाके में धुएं की तरह फैल गई. एहसान मिस्त्री एक क्या दस औरतों को भी अपने घर ले आए तो कोई मगज नहीं मारता. लेकिन सवाल है हिन्दू-मुस्लिम का. हिन्दू सुहागन को कोई कटुआ उड़ा लाया, आग भभकने के लिए यह वजह कम होती है क्या ?

परमानंद लाला ने सलाह दी—मिस्त्री, काहे को फज़ीहत करते हो, अपनी बिरादरी में से किसी को घर बैठा लो. वर्ना आग जली तो पूरा कर्नलगंज ख़ाक हो जाएगा. कम-से-कम औरो का ही कुछ तो ख़याल करो.

मिस्त्री जवाब मे दहाड़ उठा था. फिर लाला के बूते में इतनी ताक़त नहीं रह गई कि मियाँ को समझाए. लाला वापस आ गया था. आख़िर में गोबरधन बाबू से सलाह की और मास्टर के पास आ गया.

लाला को कहानी सुनाने की आदत है. इससे शायद स्वर्ग का सुख मिलता है. लिहाज़ा बात चाहे कुछ भी हो, लाला पर्त-दर-पर्त खोलता चला जाता है.

विनायक होशियार सिंह को हिन्दुस्तानी संस्कृति और रस्मों के बारे में बता रहा था. लाला ने बात शुरू की तो बीच मे ही रोक दिया था— बहुत मामूली बात है. पाप-पुण्य का रिश्ता है इससे, ऐसा पुराणों या वेदों में कहीं नहीं लिखा है. छोकरी मिस्त्री की घर वाली बनना चाहती है तो उसमे कोई क्यो दख़लदाज़ी करे ?

लाला सहम गया था. फिर थोड़ी देर में मुंह खोला—वाह मास्टर, तुम पर तो अभी तक बरेली का ही नशा छाया है. यह इलाहाबाद है, इलाहाबाद. जलकर राख बन जाओगे. समझ लेना, हाँ.

—और ?

—मजाक करते हो, न ? भई, तुम्हारे सामने तो बुजुर्ग ही हूं. इसीलिए कहता हूं, कटुए को जाकर समझाओ. हम कुछ कहते हैं तो काटने को दौड़ता है. आख़िर कटुए का ख़ून जो है.

—आप एक काम कीजिए.

—मैं ? लाला को काम के नाम से ही डर होने लगता है. आजकल के लड़कों का क्या भरोसा ? कुछ भी कह दें !

—अपने जान-पहचान वालों को समझाइए कि सब गृहस्थी लोग हैं, बखेड़ा न खड़ा करे. रोटी खाएं, सिनेमा देखें, मटरगश्ती करें लेकिन इस मामले में उलझें नहीं.

लाला ने जवाब नही दिया. थोड़ी देर वहां चुपचाप खड़ा रहा फिर मुंह बिचका कर अपनी दूकान की तरफ खिसक आया.

●●

इस घटना के बाद पांचवे दिन एहसान मिस्त्री की लाश प्रयाग स्टेशन के पास

झाड़ियों में मिली थी. खोपड़ी फट कर तीन टुकड़ों में बंट गई थी. अन्दर का लाल-लाल नरम गोश्त बाहर निकल आया था. उस पर चींटियां रेंग रही थीं. काफ़ी ख़ून निकला था, लिहाज़ा वहां की धूल-मिट्टी पहले तो लाल रही होगी लेकिन अब रंग बदल गया. जमा हुआ एक काला-सा रंग था.

छोकरी का पता नहीं चला था. एहमान मिस्त्री के डेरे में आने के तीसरे ही दिन वह उसकी बीवी बन गई थी. यह बात लोग जानते थे. यानी बात फैल गई थी. इस मामले को लेकर गिरस्तिन औरतें अगर मुमकिन होता, उल्टी कर देतीं. इस प्रयाग नगर की ही जब यह दशा हो गई औरों के बारे में पूछना ही क्या है ?

मिस्त्री की दुकान बन्द पड़ी थी. काफी अरमा तक बन्द ही रही. जो लडका मरम्मत के काम में शागिर्दी करता था, वह चौक में दूसरे मायकिल वाले के यहां नौकरी करने लगा था.

कर्नलगंज के लोग कहते, मियाँ की दूकान के अन्दर उसका भूत बैठा है. कोई-कोई बात का यक़ीन भी कर लेते हैं. जो यक़ीन नहीं करते, उन्हें भी ऐसी चटपटी बातें बुरी नहीं लगतीं.

कोई पन्द्रह-एक दिन बाद लोगों ने देखा, एहसान मिस्त्री की दूकान का ताला टूटा हुआ है. अन्दर धूल-मिट्टी के अलावा बाक़ी कुछ और नहीं था. दूकान में ढेर-से पुराने टायर, टूटी हुई रिमें, तीलियाँ और हथौड़े, पेंचकम मे लेकर पंक्चर जोड़ने के सामान तक हर तरह का माल था. सबकुछ साफ़ हो गया था.

परमानंद लाला को शायद बहुत आश्वस्ति हुई थी. आखिर हिन्दुओं का मुहल्ला है, पाकिस्तान या अफगानिस्तान थोड़े ही है ! लाला की जिन्दगी की सारी तकलीफ़ों की जड़ जैसे पाकिस्तान और अफगानिस्तान में ही हो. विनायक मिला तो लाला ने रोक लिया मैं कहता था न, लेकिन तुम सुनने वाले कहां थे ? वक्त पे समझाते तो कम-से-कम जान न चली जाती बेचारे की.

लाला ने एक बार पकड लिया तो आसानी से छोड़ने का सवाल ही नहीं पैदा होता. कोई जोंक की गिरफ्त मे छुटकारा पा सकता है लेकिन लाला के कब्जे से नहीं. इत्तफ़ाक़ है कि नाटक की तरह एक घटना घट गई थी. लाला का दामाद लहू-लुहान होकर रिक्शे पर से उतर रहा था. रिक्शे पर तीन लोग और थे. और पांचेक लोग साथ, सायकिलों पर थे. कौन लोग हैं ये ? इस मुहल्ले के तो बिल्कुल ही नहीं हैं, अड़ोस-पड़ोस के भी नही.

ललाइन ने खिड़की से देख लिया था. रोती-बिलखती बाहर आ गई थी. हाय राम ! क्या हो गया अपने लाला को !!

लाला के दामाद के घड़े में अकल कितनी है, मुहल्ला जानता है. छोटे बच्चे भी मजाक में बीरबल का ताऊ कह कर पीछे से पुकारते हैं. शहंशा-ए-हिन्दुस्तान अकबर और सभासद बीरबल के तेज़ दिमाग की कहानी मे छोटे बच्चे इतिहास से ज्यादा बतौर कहानी जानते हैं. लिहाजा हाथ आए मौक़े को कौन गंवाना चाहेगा ? पीछे से चिढाते हैं—बीरबल का ताऊ ! बीरबल का सचमुच कोई ताऊ था भी या नही यह कोई इतिहासकार ही बता सकता है लेकिन लाला का दामाद गर्म तेल को पानी के छींटे के समान, यह सम्बोधन सुनकर, जलभुन उठता है. धोती संभाल कर पीछे मुड़ता लेकिन तब तक कहने वाला नौ-दो-ग्यारह हो चुका होता.

लेकिन अभी सिलसिला कुछ और है. दामाद यानी अलख ख़ून से लथपथ. पाजामे और क़मीज़ पर सिर्फ़ लाल और काले-से धब्बे. लाला ने आगे बढ़कर दामाद को सहारा दिया. वह बेहोश अगर नहीं भी था, अपने आप उठ सकने की हालत में भी

नहीं था.

ललाइन ने चीख मारी—पुलिस मे 'रपट' लिखा दो. एक-एक को वन्द करवा दूगी. लडकी घर पर नही थी. वर्ना वह भी मा के साथ सुर मिला कुछ तो चीख ही सकती थी.

लाला ने झिड़की दी—चुप रह.

ललाइन का अपने गले पर नियन्त्रण जबरदस्त है. इशारा मिला नही और चुप हो गई.

सायकिल को बगल के लैम्पपोस्ट से टिकाकर एक मुस्तडा-सा आदमी सामने आया. उसका चेहरा बिल्कुल चिकने और काले पत्थर से काफी मेल खाता है. नाक के नीचे दो जबरदस्त मूछें हैं, लम्बाई मे कानों तक. पाजामा और कुर्त्ता पहने था. कुर्त्ते के ऊपर एक चमड़े की जैकेट थी. जैकेट के साथ कुर्त्ते का कोई सम्बन्ध नही होता है. लेकिन इस बात की परवाह उसे नहीं है, इतना उसके चेहरे का चिकनापन ही बता देता है, जबान खोलकर बताने की जरूरत नही पड़ती. डाकू मानसिंह की कोई तस्वीर लाला ने कभी नही देखी. नाम-भर सुना है. लगा मानसिंह भी ऐसा ही दिखता रहा होगा.

वह आदमी लाला के सामने आकर रुक गया पूछा—कौन लगता है यह भडवा तुम्हारा ?

इतनी बड़ी गाली सुनकर लाला कतई तिलमिलाया नही. दिल धडकने लगा था. साक्षात यमदूत भी इससे ज्यादा ख़तरनाक नही लगता होगा. गले मे थूक अटक गया था. उसे निगल गया. बोला दामाद लगता है बेटी का आदमी है.

— निकाल फिर तीन सौ रुपए.

लाला को समझ नही आ रहा था.

तब तक किसी तरह अलख अन्दर चला गया था. विनायक भी दवा का बक्सा उठाने यहाँ से निकल गया था.

साथ के एक आदमी ने फिर वजह बता दी—रसूलन बाई के यहा जुआ खेलने गया था तुम्हारा दामाद.

रसूलन बाई कौन है, परमानद लाला नही जानता. कभी नाम भी नही सुना है. सिर्फ़ पता था. ऐसे नाम रंडी-वंडी के ही हो सकते है.

साथ वाला आदमी समझ गया, आलू-टमाटर बेचते हुए अन्दर से भी एकदम शाकाहारी बन गया है यह आदमी. बोला—चौक की मटकेवाली रसूलनबाई का नाम तो कलकत्ता, बम्बई तक मे मशहूर है, तुमने कभी सुना ही नही ?

लाला ने अबोध बालक की तरह गर्दन हिलाई—कभी नहीं सुना

—तो फिर अब सुन लो. वह आदमी फिर खिक्-खिक् कर हसने लगा था.

लाला को उबकाई-सी आने लगी थी. चेहरे पर एक शुद्ध बेचारगी उभर आई थी.

●●

जो लोग रंगीली तबीयत के हैं, मीरगंज की गलियों की खबर रखते है, वे जानते हैं, रसूलनबाई का मतलब क्या होता है. इतनी मशहूर औरत साम्राज्ञी विक्टोरिया भी थी क्या ?

रसूलनबाई पहले बम्बई में थी. वहाँ ईरानीबाई कहलाती थी. बाप था गुजराती मुसलमान. चोरी-छुपे दारू वगैरह का धंधा करता था. मौका मिलता तो अरब से, ईरान से तस्करी का सोना लाकर चढ़े भाव पर बम्बई के भिण्डी बाजार मे बेच भी देता था.

भिण्डी बाजार सोने-चांदी का बाजार नही है. लेकिन जानने वाले जानते हैं, वहां सब-कुछ चलता है. दुनिया की एक से एक बेहतरीन चीज कोई भिण्डी बाजार की गलियों में हासिल कर सकता है. बशर्ते तरीका और पता मालूम हो.

दारू का व्यापारी अमूमन दारू की ही गिरफ्त मे अपने को फंसने नही देता. लेकिन रसूलन बाई का बाप वही गलती करता रहा. बीवी से बीसियों बार लड़ता रहा लेकिन लोग तारीफ करते है कि न तो पीकर आसमान सिर पर चढाने की आदत छूटी, न फौजदारी ही कभी हुई. बीवी ज्यादा झगडा करती तो दादर जाकर दो टकिया वाली औरतों के पास पडा रहता. शौहर आखिर शौहर ही होता है. बीवी चार-छह दिन बाद आदमी भेजकर शौहर को बुला लाती.

रसूलन बाई की अम्मी थी ईरानी औरत. वह मटके का काम करती थी और दूर-दूर तक उसके हुस्न और धधे की मकबूलियत थी. मटके का धधा करने वाले तब भी सैकडो थे लेकिन शहनाज बानो की बात ही और थी आज भी लोग उसकी मिसाल देकर बात करते है लाखों का धधा चलता था. लेकिन कोई नही कह सकता, जो कभी पैसा भर का धोखा भी उसने किसी को दिया हो.

जिस वक्त शादी हुई, रसूलन का बाप था एक फटीचर आदमी. लेकिन ईरानी बाई उसके ऊपर ऐसे फिदा हुई कि तीन दिन के अन्दर शादी हो गई लोगो को यकीन नही आया था. कहा मटके वाली बाई और कहां दारू का व्यापारी अजमल मियां ! शकल-सूरत से भी अजमल मिया बस ठीक भर रहा है. कहने वाले आज भी कहते है, शहनाज बानो की खूबसूरती कभी मुगलो मे रही हो तो रही होगी, आज के जमाने में ऐसा चेहरा सिर्फ कोई उस्ताद बनाने वाला ही बना सकता है

अजमल मिया अपने गैरकानूनी धधे के सिलसिले मे पुलिस की गोली खाकर जख्मी हुआ था मरा भी था पुलिस की ही हिरासत मे. रसूलन बाई तब तक जवान हो चुकी थी है ये बाते बरसों पुरानी लेकिन यादें आज भी ताजी है. सब कुछ उसी तरह याद है.

अजमल मिया के गुजरते ही शहनाज बानो जैसे बुझ-सी गई. मटके का धधा फिर बन्द कर दिया था मन में सुख-चैन न हो तो सोना-चादी इकट्ठा करके होगा भी क्या ? इससे पहले कभी उसने नमाज नही पढी थी. मस्जिद जाने का तकाजा था कभी अन्दर हुआ ही नही था अब जाने लगी थी ज्यादातर वक्त अकेले मे गुजारती और शाम को समदर किनारे जाकर रेत पर बैठी रहती साथ मे रसूलन होती तो कभी-कभी समदर की कहानी सुनाती. उसे ख्याल ही नही रहता कि जवान लडकी को समदर की कहानी मे ज्यादा दिलचस्पी दूसरे मामलो मे हो सकती है

इसके बाद शहनाज बानो कुलमिलाकर ग्यारह महीने जिन्दा रही थी ग्यारह महीने तक मटके का धंधा पूरी तरह से बन्द था कुछ लोगों की तो रोटी ही इस बूते पर चलती थी. सबने मिलकर फरियाद की—मटका अब तुम सभालो बाई. रसूलन की आंखों म तब सिर्फ रंग था रग से ज्यादा था नशा तब इर्द-गिर्द चक्कर काटने वाले कितने ही दिलदार थे. और वैसे भी इस धधे मे जो मजा है, रसूलन उतना समझ चुकी थी.

आखिर मे उसने मटका सभाल लिया था. शहनाज बानो के वक्त धंधा जितना चलता था, उसमे रत्ती भर कम नही हुआ. रसूलन शायद पूरी तरह समझ गई थी कि धंधे का असूल क्या होना चाहिए. इस समझ की वजह से ही तोहफे के साथ हाजिर हुए दिलदारों को कभी-कभार इजाजत जरूर बख्शी लेकिन उनका तोहफा कभी कबूल नहीं किया.

अब्बाजान की ज़िंदगी और अम्मी की तकलीफ़ें वह लगातार इस कदर देखती रही है कि अब शादी-वादी की तमन्ना होती ही नहीं. पहले कभी होती थी. अब उन ख्यालों पर या तो हंसी आती है या डर लगता है.

शहनाज बानो ने भी पैसा बहुत कमाया था लेकिन कोलीवाड़े की खोली नहीं छोड़ी थी. कहती थी, यहां की रेत-मिट्टी का कर्ज इतना बड़ा है कि खोली छोड़ी नहीं जाती. किसी दूसरे इलाके में शहनाज बानो अपने को शायद मना भी लेती लेकिन अजमल मियां ऐसा आदमी था, जो सिर्फ इस इलाके में ही गुज़र कर सकता था. रसूलन समझ गई थी कि अब्बा की वजह से अम्मी कोलीवाड़े की यह खोली छोड़ नहीं रही है.

शहनाज बानो गुज़र गई तो रसूलन सिर्फ़ तीन महीने यहां रही थी. फिर लाख रुपए लगाकर एक चार कमरे का खूबसूरत फ्लैट खरीद लिया था. खिड़की और दरवाजों पर कीमती पर्दे लगाए और एक से एक बेहतरीन चीजों से मकान को भर दिया.

शहनाज बानो के सामने गुण्डे दबते रहे हैं. रसूलन के सामने वे डर कर बात करते हैं. एक थप्पड़ अगर रसीद कर दिया तो खड़े होने में ही पांच मिनट लग जाएंगे.

रसूलन बचपन में लड़कों के कपड़े पहनती रही है. जवान हुई तो भी वही जारी रहा. मिलिट्री की तरह एड़ी तक हटी पतलून और गाढ़े पीले रंग की कमीज. बाल कटे हुए. कोई दूर से देखे तो मर्द समझने की गलतफ़हमी हो सकती है. लेकिन पास से देखने पर यक़ीन नहीं आता कि यही औरत इतनी ज़बरदस्त है. पर यक़ीन करना पड़ता है. रसूलन बाई नाम ही इतना मशहूर है कि हज़ारों को इसके कारनामे मालूम हैं. दो-तीन बार अखबार में फोटो भी छप चुके है लेकिन छापा मारकर पुलिस कभी भी गिरफ्तार नहीं कर सकी. छापामारों की मुट्ठी पहले ही भर जाए तो फिर चाहे कितनी भी तलाशी ले लो, क्या फर्क पड़ता है ? लेकिन कोई अड़ियल किस्म का अफ़सर होता तो वह छापा जरूर मार लेता लेकिन हाथ मिट्टी भी नहीं आती.

कई दफ़ा दूसरे मटकेबाजों ने धंधा तोड़ने की कोशिश में गुण्डे लगाए, छुरे-चाकू के करतब दिखाए लेकिन नतीजे में हुआ यह कि उनमें से ही एक-आध बदनसीब की जान ही चली गई.

लेकिन वे सारे दिन अब ख्वाब की तरह लगते हैं. यकीन ही नहीं आता कि आज की यह बम्बई; वह पुरानी बम्बई है. हाँ, समंदर वही, घास, मिट्टी और पत्थर भी वही है लेकिन ज़माना वह नहीं है.

हर दूसरे दिन पुलिस आकर तंग करने लगी. ऊपर से दूसरे मटकेबाजों की बेअदबी तो थी ही. आखिर में रसूलन बाई ने अपना मकान बेचा और सिर्फ एक छोटी-सी संदूकची में थोड़े-से कपड़े और गहने लेकर बम्बई से निकल आई.

निकल तो आई लेकिन सवाल सामने आया कि जाए कहाँ ? तीन महीने तक भोपाल, नागपुर, कलकत्ता और बनारस में घूमती रही. तय नहीं कर पा रही थी कि बसना कहां है ? फिर बनारस के बाद गाड़ी पर बैठी तो इलाहाबाद आकर उतरी. यहां कोई घर जमाने का इरादा नहीं था लेकिन हफ्ता-भर गुज़रा तो यहाँ के हवा-पानी का सरूर छाने लगा. तब से रसूलन बाई इलाहाबाद में है.

मीरगंज के बदनाम इलाके से सटकर एक गली दक्षिण की तरफ़ जाती है, मुट्ठीगंज की तरफ. वहां किराए पर एक मकान ले लिया. खरीद भी सकती थी लेकिन तबियत नहीं हुई. यहां कितने दिन टिकना होगा, कौन जानता है ? लेकिन रसूलन इसे खुदा की ही मर्जी कहती है कि यह शहर अब छोड़ने को जी नहीं चाहता.

जो लोग मीरगंज की गलियों का चक्कर काटते हैं, वे जानने लगे कि रसूलन बाई की क़ीमत क्या है. रसूलन ने चाहा तो था नहीं लेकिन क़िस्मत शायद पीछा नहीं छोड़ती. कम-से-कम बाई यही कहती है. मटके का धंधा यहां भी शुरू कर दिया.

इलाहाबाद के लिए यह एक नया तजुर्बा था. धंधे में जवान औरत की तरह आकर्षण तो था ही, तरीका भी नया था. रसूलन बाई रातों-रात यहां भी मशहूर हो गई और तजुर्बे का फ़ायदा उठाया. कई लोगों ने धंधा जमाने की कोशिश की लेकिन बाई ने एक-एक की जड़ उखाड़ फेंकी.

रसूलन बाई की अदाएं अब वैसी नहीं हैं. उम्र की छाप चेहरे पर उतर आई है. लेकिन दिलदारों को बाई की आँखों में अगर एक भी चीज़ हासिल हो गई, बाक़ी चीजें वे नज़रअंदाज़ कर देते हैं. लिहाजा पीछे से कहने वाले यही कहते हैं—दस मर्दों को पालती है बाई.

ये बातें खुद उसके भी कानों तक आती हैं. लेकिन इन पर उलझने के लिए जितनी फ़ुर्सत चाहिए, वह यहां नहीं है. रसूलन सिर्फ़ पीक उगल देती है ऐसे लफ्जों पर.

पुलिसवाले कभी-कभार मीरगंज की कोठियों में छापा मारते हैं. दो-चार औरतों को कई बार पकड़ भी ले जाते हैं चंद दिनों के लिए लेकिन रसूलन बाई के अड्डे तक कभी नहीं आए. एक आध बार आने की ख़बर जरूर उड़ी थी लेकिन पहले से इंतजाम कर लिया. शैतान भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता, ये बेचारे तो घर-गृहस्थी वाले पालतू किस्म के लोग हैं. चवन्नी मिली नहीं कि महीना-भर के लिए खुश हो गए.

संक्षेप में यह है रसूलन बाई की कहानी.

परमानंद लाला ने किस्सा सुना तो दंग रह गया. औरत है कि बम का गोला! इतना सुनने के बावजूद यह नहीं समझ में आ रहा था कि उस औरत के साथ अलख का क्या रिश्ता हो सकता है ? हां, जुए की बात जरूर हो सकती है लेकिन यह तो मुहल्ले में भी चलता है.

उस मूंछों वाले आदमी ने समझाया था—कर्नलगंज के लोग मच्छर तक नहीं मार सकते हैं. जुआ क्या खेलेंगे ?

थोड़ी देर के लिए मीरगंज की गलियों का खयाल भी अलख के सिलसिले में लाला के दिमाग में आया था. लेकिन तुरंत ही फिर जीभ काट ली थी. अलख बेवकूफ हो सकता है, लालची भी होगा लेकिन इस तरह दगाबाजी नहीं कर सकता.

सामने खड़े आदमी को शायद जल्दी थी. बोला—जल्दी कर, निकाल तीन सौ रुपल्ली. रसूलन बाई का उसूल अगर किसी ने तोड़ा तो उसकी लाश तक का फिर पता नहीं चलता. जेब में फुटल्ली नहीं, गया था जुए का दाव मारने ! मुंह के अन्दर सुर्ती थी, उसमें से काली-सी थूक उगल दी थी.

परमानंद हड़बड़ाने लगा था. अलख को पैसे बनाने का इतना बड़ा शौक कहां से मिला, समझ में नहीं आ रहा था. गुस्से के मारे जिस्म की नसें सुलग-सी रही थीं. लेकिन दामाद आख़िर दामाद ही होता है. कहा भी क्या जा सकता है ऐसे रिश्ते के बाद ? पिछली बार चरस के हंगामे में जब पकड़ा गया था, लाला ने थोड़ा सुना दिया था. सुना दिया तो कौन-सा गुनाह हो गया ? लेकिन लड़की ने मुंह फुला लिया था ! जो पराया है, उसे कोई फर्क नहीं पड़ा था लेकिन अपनों को ही यह कहना-सुनना मंजूर नहीं. चार दिन तक बाप-बेटी में बोलचाल बन्द रही थी.

खैर, परमानंद अन्दर घुसा और संदूक खोलकर सौ-सौ के तीन पत्ते ले आया.

इस हादसे के बारे में थोड़ा-बहुत और तहकीकात कर सकता था लेकिन उस मुस्टण्डे को देखकर सारी हिम्मत पस्त हो जाती है. रुपए लो और टलो तो मुझे भी थोड़ी राहत मिले.

तीन सौ लेने के बाद उसने डेढ़ रुपए और मांगे. रिक्शे का किराया. आखिर रसूलन बाई का हिसाब है. पैसा-भर भी इधर से उधर हुआ तो खैर नहीं, ज्यादा अड़ंगाबाज़ी की तो गर्दन भी उड़ सकती है.

रिक्शे वाला दुबका-सा खड़ा था. देर उसे, जाहिर है, हो ही रही थी लेकिन पैसे माँगने के बाद घूंसे-मुक्के नहीं मिलेंगे, इतना बेफिक्र शायद वह हो नहीं सका था.

लेकिन रसूलन बाई का असूल ही कुछ अलग है. किसी को देना है तो पाई-पाई चुका दो. और अगर वसूल करना है तो खोटी कौड़ी की भी रियायत मत दो.

पैसा लेकर वे सब चले गए तो लाला ने देखा, गली के अंदर बहुत सारे लोग जमा हो गए हैं. खिड़कियों से घर की बहुएं झांक रही थीं. जो लड़कियां हैं उन्हें छज्जों तक आने की आजादी है. छज्जों पर वे खड़ी थीं.

परमानंद की धोती भी अगर कोई कर्नलगंज के इस बाज़ार में खोल लेता, शायद इतनी बेइज्ज़ती नहीं होती. उसके नथुने फूल रहे थे और आँखें मारे गुस्से के सुर्ख हो गई थीं.

बोस बाबू ने मुलायम आवाज़ में आख़िर पूछ ही डाला—लालाजी, मुहल्ले में एक साथ रहता हूं, दुख-सुख में काम आ ही सकता हूं, कोई काम हो तो बताओ.

इच्छा हुई थी एक चाँटा रसीद कर दे. दो टके का छपकली-सा आदमी और छलांग मारना चाहता है शेर की तरह.

लाला ने बोस बाबू से तो कुछ नहीं कहा लेकिन गोबरधन बाबू से कहा—नसीब का खेल है सब.

बोस बाबू बोले—तुम्हारा दामाद है रंगीन तबियत का आदमी. नसीब-वसीब का खेल तो होता ही रहता है, थोड़ा इधर-उधर भी गया तो क्या हर्ज है, आख़िर मर्द आदमी है···

इतना बड़ा अपमान सहकर भी लाला चुप ही रहा.

कर्नलगंज स्कूल के हेडमास्टर जनार्दन बाबू अपनी साइकिल समेत पहुंच गए थे. सायकिल की शायद चेन उतर गई थी. उनकी दोनों हथेलियां काली थीं. कुर्ते के निचले हिस्से में थोड़ी-सी कालिख लग गई थी. रास्ते में ही जनार्दन बाबू को पूरे हादसे का एक हिस्सा पता हो गया था.

सायकिल को दीवार से टिकाकर उन्होंने पूछ लिया—क्यों मास्टर, माजरा क्या है ?

गली में स्कूल में पढ़ने वाले कुछ छोटे बच्चे भी थे—हेडमास्टर को देखकर उन्हें वहां से खिसक जाना पड़ा. इतना बड़ा हादसा रोज नहीं होता. लिहाज़ा इसका आकर्षण भी बहुत होता है ! लेकिन हेडमास्टर या यमराज सामने आ जाए तो मन की इच्छाएं मन में ही दबा लेनी पड़ती हैं.

लाला जनार्दन के सवाल का जवाब दिए बिना गोबरधन बाबू से ही बात कर रहा था.जनार्दन कुछ देर तो चुपचाप खड़े रहे फिर अपने आप ही जवाब दे दिया—इसमें तुम्हारा कोई गुनाह थोड़े ही है ? वैसे भी जो हुआ सो हुआ···

गली पर खुलने वाली खिड़कियों से फुसफुसाहट की आवाज़ आ रही थी.लाला ने महसूस किया, अन्दर से औरतें मजाक में खूब खुश हो रही हैं. हाथी अगर गड्ढे में

गिर गया तो मेंढक भी लात जमाकर ही आगे निकलता है, यह बचपन में सुनी हुई एक कहानी थी. अब लगा, यह कहानी नहीं है. अपनी हालत से साफ ज़ाहिर होता है, यह एक कडवी हक़ीकत है.

बोस बाबू फिर बोले—दामाद और इष्ट देव का समान सम्मान होता है. और तुम्हारा दामाद तो लाला, देखने-सुनने में देवता की तरह ही सुन्दर भी है···

अलबत्ता अगर रूपवान होता भी तो शायद इतनी तकलीफ दिल में न होती. या फिर किसी अच्छे लडके के साथ बेटी का ब्याह भी तो हो सकता था. सबकुछ आखिर में सोने-चांदी की ही माया है ! लक्ष्मी निकालो तो नाव भी जमीन पर चल सकती है.

अन्दर से ललाइन ने आवाज लगा दी थी

यह एक मामूली आवाज नही थी. एक बहुत बडा ताण था. लाला फिर एकदम अन्दर घुस गया था.

गली मे अब भी लोग खडे थे

बोस बाबू रसूलनबाई के कारनामो के बारे मे गढी हुई कहानियाँ सुना रहे थे. सब जानते है कि कहानियाँ बिल्कुल मन-माफिक गढी हुई है बोस बाबू जैसे पिद्दी आदमी सिर्फ अपने ही घर मे उछल-कूद सकते है. कभी अगर सचमुच रसूलन बाई के सामने पड गए तो कपडे गदे हो जाएगे इसके बावजूद वे सब बोस बाबू की बातें सुन रहे थे. सिर्फ गोबरधन बाबू चले गए थे और कुछ देर बाद जनार्दन मास्टर भी.

●●

मंगल दर्जी फिर अपनी दूकान पर बैठने लगा था वैसे आजकल काम इतना मंदा है कि बैठने से भी कोई फर्क नही पडता बैठकर या तो बीडी फूकता रहता या लाला से सुख-दुख की कह-सुन लेता कभी कोई टोपी या रूमाल सिलाने आ भी अगर गया, उसमें वक्त ही कितना लगता है ?

पहले मगल अपनेपन से बात करता था बरसो की पुरानी दोस्ती है लेकिन लाला को लगता है, मंगल अब पहले की तरह नजदीक नही रहा, कभी-कभी मजाक भी कर देता है. हां एक बार कहा था—पूरे कण्डैलगज को तुम्हारे दामाद की वजह से लोग जान गए है.

लाला क्या जवाब देता ? तराजू की रस्सी टूट गई थी, उसे जोड रहा था दिमाग की नसें फट-सी रही थी.

लाला ने कुछ देर बाद पूछा था—चाय तो नही पीनी है ?

मंगल ने मना कर दिया—अब तो रोटी भी खाने की तबियत नही होती.उमर हो गई इत्ती लेकिन देखो मन वही है.

इस बात का मतलब लाला ने समझाने की कोशिश की लेकिन पल्ले कुछ भी नही पड़ा —लो, बीडी पियो फिर. पैसे वाली सदूकची मे से निकालकर एक बीडी और माचिस की डिब्बी उसने सामने फेंक दी थी

मंगल एकदम से बहुत बदसूरत हो उठा था। बीडी सुलगा ली और थोड़ा-सा धुआँ उगल दिया. बोला—रसूलन बाई बहुत मशहूर औरत है लाला, तुम्हारे दामाद को ऐसे ही नहीं छोड़ेगी.

लाला चौंक उठा.

—हमें तो बाई के सारे कारनामे मालूम है. घाट-घाट के पानी के तजुर्बे वाली औरत है. इकट्ठे बीस-बीस मर्दों को बैल की तरह घुमा सकती है. समझे कुछ ?

लाला ने फटी-फटी आंखों से उसे देखा.

—साली रंडी है, रंडी. मटके का धंधा करती है और ऊपर से मर्दों को फांसती है. पूरा मीरगंज ही उसके इशारे पर चलता है.

परमानंद का सर चकराने लगा था.

—यह दामाद तुम्हें तबाह करके ही दम लेगा, लाला.

परमानंद ने किसी तरह पूछा—फिर ?

—फिर क्या ? मंगल ने परम निस्पृहभाव से हंसी बिखेरी. अपनी लड़की को मनाओ कि दामाद की नाक में रस्सी डालकर रखे. मर्द को जब तक बैल की तरह घुमाया, बस तभी तक ठीक है. थोड़ी भी छूट दी तो सांड की तरह निकल गया. एक बार अगर निकल गया तो हाथ आना मुश्किल ही है.

लाला को गुस्सा आया था. इतनी बड़ी भूमिका बांधने के बाद चुहिया-सा यह समाधान ?

—कभी बैठो तो रसूलनबाई के और भी किस्से सुना देंगे. तुमने दुनिया ही नहीं देखी लाला. दुनिया का रंग वो नहीं है, जो तुम देखते हो. आंखें खोलो तो पता चलेगा, दुनिया क्या है, उसका रंग क्या है.

इशारा लाला समझ गया था. कहीं ललाइन के कानों में यह बात पड़ जाती तो महाभारत हो जाता. ग्राहक आया था. लाला ने तराजू उठाई और सौदा तौलने में मशगूल हो गया. मंगल भी रास्ता पार कर अपनी दूकान में चला गया था. बोस बाबू मछली का थैला हाथ में लटका कर भागते हुए-से इधर आ रहे थे. लेकिन लाला ने कोई परवाह नहीं की. ग्राहक सामने हो तो बाक़ी दुनिया छोटी हो जाती है. वह सौदा तौलने लगा.

●●

गोबरधन बाबू के यहां अख़बार नहीं आया. विनायक के यहां आया है लेकिन अंग्रेज़ी का है. गोबरधन बाबू की दिक्कत यही है. ज़िन्दगी की शुरूआत अंग्रेज के यहां नौकरी से की लेकिन बोलने की ज़रूरत अगर कभी पड़ी तो पैर तले की ज़मीन खिसकनी शुरू हो जाती है. पढ़ने का भी वही हाल है. अख़बार वग़ैरह कभी अंग्रेज़ी में अगर पढ़ना पड़ा तो सांस फूलने लगती है. पता नही क्यों सबकुछ पराया-पराया लगता है और समझ में भी कुछ नहीं आता. लेकिन अख़बार पढ़ने की आदत कुछ ऐसी बन गई है, बिना उसके पूरा दिन एकदम बेकार-सा लगता है.

शाम को विनायक स्कूल से लौटा तो गोबरधन बाबू अख़बार लेने आए. कमरे में कोई और नहीं था. कभी-कभी गोबरधन बाबू को दया आती है. पलभर के लिए भी तो अकेले रहने की फ़ुर्सत नहीं मिलती बेचारे को. कभी कोई दवा लेने आएगा तो कभी झण्डा उठवाने. ठीक है, नौजवान है लेकिन शरीर की भी एक मांग होती है. उसे आराम नहीं दिया तो कब तक काम करता रहेगा बेचारा ?

विनायक हंसता है सिर्फ़. बोलता है—और सुनाइए क्या हो रहा है आजकल.

—क्या हो रहा है ? हिन्दी के 'सात' की तरह गोबरधन बाबू मुंह बनाते हैं—मुझसे पूछते हैं क्या हो रहा है ? दशहरे में रामलीला होती है न, यहां कर्नलगंज लीला चल रही है. नहीं, वह हंसते ज़रा भी नहीं हैं. उसी तरह संजीदा बने रहते हैं.

—मेरा वक्त तो मास्टरी में ऐसा निकल जाता है कि कुछ पूछिए मत. कभी सोचा भी नहीं था कि मास्टर बन जाऊंगा.

—अच्छा है, आपका वक्त तो निकल भी जाता है. मेरा ही बस नही निकलता. अख़बार की एक-एक ख़बर पढ़ता हूं, रेडियो वग़ैरह भी कई दफ़ा खोल लेता हूं लेकिन वक्त नहीं खिसकता. रिटायर्ड लाईफ की इससे बढ़कर और परेशानी भी क्या

हो सकती है ? वैसे परेशानी भी क्यों, तकलीफ़ कहिए, तकलीफ़.

—थोड़ी समाजसेवा शुरू कर दीजिए. वक्त मज़े से कट जाएगा.

—नहीं साब, हर जगह पॉलीटिक्स है. कोई कांग्रेसी है तो कोई जनसंघी, कोई कम्यूनिस्ट. इस पॉलीटिक्स की कीचड़ से तो भगवान ही बचाए ! थोड़ी-सी जो चैन है, उसमें धंसा तो वह भी निकल जाएगी. वैसे भी आजकल के लड़कों का क्या भरोसा ? छुरे-चाकू से कम तो बात ही नहीं करते.

विनायक हंसा—शायद अब ज़रूरतों में ये भी आ गए है !

—ह्वाट ? आप तो बम फोड़ रहे हैं. नई उमर के हैं न, इसीलिए. मेरी खोपड़ी पर यह चांद देखी है आपने ?

—उम्र से माओत्से-तुंग और लेनिन भी बूढ़े थे. लेकिन उनकी जैसी जवानी तो करोड़ों में एक को ही मिलती है.

अब गोबरधन बाबू हंसे—एक्जाम्पल तो आपने नायाब दिया. मुझे फिर उन तमाम लोगों में गिन लीजिए जो करोड़ों में एक नही है. सरकारी दफ़्तर का बड़ा बाबू, वह भी रिटायर्ड, आख़िर यह हक़ीक़त तो मंजूर करनी ही पड़ेगी.

—आपको पता है, माओ एक मामूली आदमी के बेटे थे. ख्रुश्चेव का बाप गड़रिया था और···

—बस-बस साब, मैं आख़िर कर्नलगंजवाला गोबरधनदास ठहरा. आख़िर मुहल्ले का भी एक चरित्र होता है. कुछ असर तो उसका भी होगा. लेकिन अब तो बस इस मुहल्ले में रहने की तबीयत ही नही होती. जिसे देखो, वही दूसरे के सूराखों में झांक रहा हे. बड़ा डर्टी हो गया है पूरा मुहल्ला. लेकिन मकान है, सो छोड़कर कहीं जाने का सवाल ही नहो उठता.

ललाइन दूकान पर बैठी थी. लाला को अब शाम तक के लिए फ़ुर्सत है. वैसे जिसके यहां घरजमाई हो, उसे तो बस फ़ुर्सत ही मिलनी चाहिए. लेकिन जिसके भेजे में अकल नाम की चीज ही न हो, वह ससुर की मदद भी क्या कर सकता है ? लाला इसे नसीब कहता है. बाक़ी बातों को अगर छोड़ भी दो, पैदा होना, मरना और शादी सिर्फ़ नसीब है. ऊपर वाले ने जो लिख दिया उससे रत्ती भर भी इधर-उधर कुछ हो नहीं सकता.

लाला अगर थोडी-सी भी गर्मी हुई, बदन के ऊपरी हिस्से में कुछ नहीं डालता. आज थोडी उमस-सी है, सो ऐसे ही निकल आया. सामने विनायक और गोबरधन बाबू दिखे तो दूर से ही बोलना शुरू कर दिया—कहो मास्टर, स्कूल में आजकल चल क्या रहा है.···

—पढ़ाई. विनायक बोला.

—तो मैं कहां कह रहा था कि कत्थक चल रहा है ? सुना है, हेडमास्टर तुम्हारे पीछे पड़ गया ?

—हां.

—अरे भई, परदेस का मामला है. रोटी कमाने आए हो न कि तोप दागने. इन झगड़े-लड़ाइयों में किसी को मिलता ही क्या है ?

—जनार्दन बाबू को सुकून मिलता है.

लाला ने अपनी तोंद खुजाई. बोला—कमाल का बोलते हो, मास्टर. वैसे जनार्दन बाबू अपने ही आदमी हैं. तुम भी कौन पराए हो ? कहो तो सुलह करा दूं. भई, काहे को फजीहत करते हो ? यहां आए हो, नामा कमाओ और छुट्टी करो.

गोबरधन बाबू अख़बार उठाकर पढ़ने की कोशिश में थे.

विनायक ने सिलसिला मोड़ लेना चाहा—अब कैसा है अलख़ ? हरी सब्जी का सूप दीजिएगा.

लाला के लिए यह मसला अब कबाब में हड्डी जैसा है. लगता है, हर कोई मज़ाक ही करता है. मुंह बिचका कर बोला—ठीक ही होगा. हम तो भई दूकानदारी करते हैं और छुट्टी मिली तो परमेसर की सेवा करते हैं. दुनिया मे चाहे जो हो, उससे मतलब भी क्या अपने को ?

—मतलब है, लालाजी, मतलब सिर्फ़ दुनिया से ही है ? परमेसर आपकी दूकान में न तो आलू ख़रीदने आता है न तौलने. लिहाजा उसके बारे में अगर नहीं भी फ़िक्र करेंगे, आपका कुछ बिगड़ेगा नही.

—ख़ैर छोड़ो, तुम जिसे मानना हो मानो, हम कुछ नही कहते···

—मैं ? मैं तो आपको मानता हूं, बोम बाबू को, मंगल दरजी को, सबको मानता हूं. दुनिया को मानता हूं.

लाला खूब जोरों से हंसा—कड़ाके की बात बोलते हो मास्टर. तुम चले गए तो कण्डैलगंज में रह क्या जाएगा ? यह मुहल्ला न छोड़ना.

ललाइन कॉलेज के किसी छोकरे से उलझ पडी थी. छोकरे ने शायद छेड़ने के लिए आंख मार दी थी और विविध भारती के किसी गाने की एक लाइन सुना दी थी. बस, ललाइन के लिए यह रात तक का मसाला हो गया. फटे बास का उदाहरण बहुत पुराना है लेकिन ललाइन की आवाज़ के साथ कोई भी नया उदाहरण सटीक नहीं बैठता. लाला के सीने में थोड़ा हौसला अगर होता तो वह, जाहिर है, सिर्फ यही कहता.

लाला चलने लगा. बोला—घड़ी-भर कहीं खड़े होकर बात कर लूं, इतनी भी फ़ुर्सत नहीं मिलती.···

गोबरधन बाबू ने चुटकी ली—जल्दी पहुंचो लाला कोई रावण आया होगा सीता-हरण करने.

ललाइन को अगर गोबरधन बाबू ताड़का राक्षसी भी कहते, लाला को शायद इतनी तकलीफ़ नही होती. लेकिन सीता कहकर, लगा, उनके ऊपर भूसीवालों ने मैला उठाने की पूरी गाड़ी ही उलट दी हो. वह वहा से चला गया. गोबरधन बाबू ने भी अंग्रेज़ी अख़बार में मगज मारने के बाद उसे वापस कर दिया. विनायक दरवाजा भिड़ा कर चारपाई पर पसर गया. झूसी से क़ादिरमियां की आड़ी-टेढ़ी लिखावट का ख़त आया है. उसे पढ़ने लगा.

●●

कर्नलगंज स्कूल का नाम एक बार और अख़बार में छपा.

जनार्दन बाबू तीसरे दर्जे मे भूगोल पढ़ाते है. हर कोई जानता है, उनके क्लास में कोई चू नहीं कर सकता. चेहरे की शिकनें डराने के लिए काफ़ी है. लेकिन जनार्दन बाबू अपने कमरे से अगर कभी भी बाहर निकले तो हाथ मे बेंत जरूर होता है. भले

ही स्टाफ रूम की तरफ़ क्यों न जा रहे हों. कभी-कभार कहते भी रहे हैं, मास्टर के हाथ में अगर बेंत ही न हुआ तो वह मास्टर लगेगा कहां से ?

आठ बरस का रामानंद समझता है कि हेडमास्टर की मार क्या होती है. अमेरिका की राजधानी का नाम और दुनिया का वज़न अगर नहीं बता पाया तो इस बेंत का इस्तेमाल उसकी पीठ पर हो सकता है. बल्कि हो ही जाएगा. घर में करने के लिए जो काम दिया गया था, उसने नहीं किया है. अमाजन नदी अफ्रीका में है या अमेरिका में, वह सोचता रहा लेकिन लिखकर नहीं लाया. बस भूगोल की क्लास एक ऐसी है, जब रूह कांपती है.

रामानंद ने बचने का क़ायदा सोच लिया.

मास्टर ब्लैकबोर्ड की तरफ मुड़कर कुछ लिखें तो दरवाज़े से वह खिसक जाए. होशियारी से आज वह इसलिए आख़िरी बेंच पर बैठा है.

जनार्दन बाबू कहते है, वह मास्टर ही क्या हुआ जो चेहरा देखकर सामनेवाले के मन मे क्या है, न जान सके ? वर्ना ये पटाखेनुमा छोकरे धोखा न दे जाएं ? आजकल के बच्चे तो पैदा होते ही इतने होशियार होते हैं कि बाप को ही बेच दें. मास्टर की परवाह ही कौन करता है ? इसलिए केयरफुल हमें अपने आपको रखना ही है.

रामानद खिसकने की सोचता रहा और चेहरे का रंग उड़ता गया. जनार्दन बाबू भी पुराने खिलाडी हैं. चश्मे को थोड़ा-सा नीचे किया और बेंत उचका कर इशारा किया—इधर आईए महाशय.

रामानंद एकदम सफ़ेद हो गया. इस आमंत्रण का मतलब वह जानता है. क्लास का हर कोई, बल्कि स्कूल का हर लड़का समझता है.

—बोलो, चन्द्रमा का वजन क्या है ? और हिन्दुस्तान मे गैंडे कहा मिलते हैं ? जनार्दन बाबू निश्चित थे कि यह लड़का तो क्या, इसका बाप भी जवाब नहीं दे पाएगा.

रामानंद चुप रहा

आश्चर्यजनक रूप मे जनार्दन बाबू ने बेंत का इस्तेमाल नही किया. रामानंद इसके लिए तैयार ही था. लगातार दस भी बेंत हथेलियों और पीठ पर लगा देते तो उसे नही लगता कि खास कुछ हो रहा है.

बगल में, क्लास के साथ एक छोटी-सी कोठरी है. पुराने कनस्तर वग़ैरह रखे रहते है. जनार्दन बाबू ने रामानद को वहां घुसेड़ दिया. बोले—अब तो बेंत भी शर्माता है तेरे ऊपर आते हुए चल कोठरी में बैठा रह. फिर उन्होंने अपने हाथों से बाहर की कुण्डी चढ़ा दी.

रामानंद अन्दर का अंधेरा देखकर शायद बहुत डरा था. फिर उसने सिसकियां भरनी शुरू की होंगी. लेकिन उसकी सिसकियों की आवाज़ बाहर आ पाती, ऐसा कोई ज़रिया था ही कहां ?

यह दुपहर के तीन बजे की सज़ा थी. उसी दिन से दशहरा-दीवाली की बीस दिनों की छुट्टियां शुरू हुई और स्कूल बन्द. चौकीदार ने हर कमरे में अलीगढ़ी ताला लगा दिया. जनार्दन बाबू ने ख़ास हिदायत दे दी थी—अच्छी तरह से ताला लगाओ और चाबी दफ्तर में जमा कर दो. जनार्दन बाबू को स्कूल की सम्पत्ति के चोरी होने का इतना डर है कि उन्होंने अपने हाथ से चौक के बाज़ार से बड़े-बड़े ताले ख़रीदे थे.

रामानंद के गुम होने की ख़बर फिर कर्नलगंज थाने में लिखा दी गई थी और

तहकीकात के लिए आए हवलदार को दफ्तर के बाबू ने बता दिया था, स्कूल के बाद सारे बच्चे घर चले गए.

रामानंद का बाप कटरे में बढ़ई है. उसने पूरा कर्नलगंज-कटरे का इलाका छान मारा लेकिन पता कैसे चलता ? आख़िर में उसने समझ लिया था कि उसके बेटे को कोई उठाकर ले गया होगा.

जनार्दन बाबू ने छुट्टियां इस दफ़ा बनारस में गुज़ारीं. एक भतीजा रहता है, उसके यहां चले गए थे. लौटे तो बेहद खुश थे. दुनिया बदल ज़रूर गई लेकिन अपना खून आख़िर अपना ही होता है. भतीजे ने चाचा की आवभगत की थी और जनार्दन मास्टर को बरसों बाद कुछ अच्छा-सा महसूस हुआ था.

स्कूल का ताला तब खुल सकता है जब जनार्दन मास्टर पान चबाते हुए वहां पहुंच जाएं. इससे पहले लाख ज़रूरत पड़ने पर भी चौकीदार नहीं खोलेगा. आख़िर हैडमास्टर के हुक्म की तामील न हो, इतनी हिम्मत चौकीदार तो क्या, पुराने से पुराना मास्टर भी नहीं करता.

दस बजे से स्कूल लगता है.

जनार्दन बाबू साढ़े नौ बजे पहुंचे और अपने कमरे में घुस गए. फिर कमरे खुलने शुरू हुए. मास्टर और लड़के भी झुंडों में आने लगे. दस बजते-बजते स्कूल मेला जैसा दिखने लगा. स्कूल बन्द होता है तो कर्नलगंज सूना-सूना लगता है. मुहल्ले मे जान नहीं रहती.

आख़िर में चौकीदार हांफता हुआ जनार्दनबाबू के कमरे में आ घुसा. चेहरे पर पसीने की बूंदें उभर आई थीं. बोला—पीछे की तरफ़ एक कोठरी में गुम हुआ लड़का मरा पड़ा है, सरकार.

जनार्दन बाबू को सांप सूंघ गया क्या ?

ज़िन्दगी में गलतियां एक नहीं, हज़ार बार हुई हैं. लेकिन कोई गलती इतनी बड़ी हो जाएगी कौन सोचता था ?

पूरा स्कूल फिर उस कोठरी के गिर्द उमड़ पड़ा. रामानंद का चेहरा इतना भयावह हो सकता है क्या ? सूखकर कांटा-सा एक हड्डियों का ढांचा और उस पर चमड़ी की एक हल्की-सी पर्त. सड़न की बदबू बुरी तरह फैल गई है. चींटियों के लिए यह एक महोत्सव है. सारा जिस्म चींटियों की पर्त से काला हो गया है. आंखें उघड़ी हुई और मुंह खुला-सा: जीभ का रंग लाल होता है, रामानंद की जीभ देखकर कोई नहीं कहेगा. मटमैले किस्म का एक अजीब-सा रंग उभर आया है.

रामानंद ने ज़िन्दगी में वापस जाने की फिर से कोशिश की थी, इसका सबूत मिला. ऊपर की तरफ़ एक छोटी-सी खिड़की है. कनस्तरों को एक के ऊपर दूसरा रखकर खिड़की का एक पलड़ा ज़रूर थोड़ा-सा खोल लिया था लेकिन मज़बूत छड़ें कैसे टूटतीं ? वहां से थोड़ी रोशनी आती रही होगी, रोशनी के साथ हवा भी आई होगी. लेकिन अंधेरे की तरह हवा और रोशनी की तकलीफ़ भी इतनी ख़तरनाक हो सकती है, रामानंद ने शायद बहुत देर में महसूस की थी. पहले पता हो जाता तो खिड़की के रास्ते से भागने की यह नाकामयाब कोशिश शायद न करता.

दीवार पर पेंसिल से लिखे अनगिन शब्द थे, कुछ अधूरे कुछ पूरे. जो पूरे भी थे, शायद अधूरे जैसे ही थे, अम्मा मुझे भूख लगी है.···अम्मा···अ···दीवारों पर जितनी दूर तक हाथ पहुंच सकता है, उसने सिर्फ़ भूख लगने की ही बात लिखी थी. इस अंधेरी कोठरी में उसे डर भी लगा होगा. लेकिन भूख लग जाए तो डर-वर शायद कोई मायने नहीं रखता.

अख़बारों ने इस हादसे को छापा था. एक अख़बार में रामानद की एक तस्वीर भी छपी थी. कर्नलगंज मे सनसनी-सी फैल गई . यूनीवर्सिटी तक ख़बर पहुंची तो डेढ़ेक सौ लड़के जनार्दन बाबू की चमडी उधेड़ने इकट्ठा हो गए. कटरा और कर्नल-गंज के बढ़ई भी फाटक के पास खड़े थे. रामानंद का बाप निरीह-सा एक कोने मे खड़ा था. उसकी बीवी का विलाप पत्थर को भी पिघला रहा था.

थाने में ख़बर हो गई थी. इस दफ़ा पुलिस के आने में ज्यादा देर न लगी. कर्नलगज थाने से एक सबइन्सपेक्टर और चार सिपाही आ गए थे.

जनार्दन बाबू ने अपने कमरे में वापस आकर मेज पर सर टिका लिया. दिमाग की नसें झनझना रही थीं.

वर्माजी उनके पीछे-पीछे कमरे में आए थे. दस मिनट तक तो वह तय ही नही कर पाए कि बिल्कुल इस वक्त कहा क्या जा सकता है. तुरन्त बाद विनायक को लेकर भगवती बाबू अन्दर आ घुसे. जनार्दन बाबू ने मेज पर से अपना सिर उठाया. आंखों में एक खालीपन-सा था.

विनायक बोला—आप पीछे वाले फाटक से निकल जाइए. यूनीवर्सिटी के लड़कों का कोई भरोसा नही है.

जनार्दन बाबू बुरी तरह हिल गए. आवाज कांप रही थी. बोले—भाग जाऊँ ?

—पूछिए नही. फौरन चले जाइए.

फिर वर्माजी वफादार अनुचर की तरह जनार्दन बाबू को पिछवाड़े के फाटक तक छोड़ आए थे. फाटक के साथ लकड़ी की टाल है. लेकिन यहा का भरोसा भी क्या है ? जनार्दन बाबू फिर एक रिक्शा पकड़कर बैठ गए थे.

●●

स्कूल तीन दिन के लिए बन्द था. ऐसा नहीं कि रामानद की मौत का शोक इतना गहरा था जो तीन दिन के लिए स्कूल बन्द करना पड़ा हो. लेकिन वातावरण इतना गर्म था कि थाने वालों ने यही हिदायत दी थी.

तीन दिन के बाद स्कूल खुला तो फाटक के बाहर चबूतरे पर रामानद की माँ बैठी मिली. बाल बुरी तरह उलझे हुए थे. चेहरा उसमे उलझ गया था. आखों मे आँसू की एक भी बूद नही, सिर्फ़ सूनापन भरा हुआ. यह औरत अगर इस मुग़ालते में रहती कि उसके बेटे को कोई उठाकर दिल्ली या कलकत्ता ले गया है, शायद ज्यादा सुखी हो सकती थी.

उसके गले की आवाज़ ख़त्म हो गई क्या ? अभी तीन दिन पहले ही जो औरत पूरे इलाके को कपाकर विलाप कर रही थी. आज, वर्ना, इस क़दर खामोश कैसे हो गई ? चबूतरे पर चुपचाप बैठी हुई है. उसे अब किसका इन्तज़ार हो सकता है. इन्तजार न सही, उसे शायद बैठने के लिए सिर्फ़ एक यही चबूतरा मिला है. स्कूल में शोर करते बच्चों को घूरती-सी वह क्या सोचती है, वही जाने. गोद में साल-भर की एक नगी लड़की उसके सूखे स्तनों को चाट रही है.

स्कूल खुलने के बाद जनार्दन बाबू इस अहाते मे पहली बार बेचारगी की मुद्रा में नज़र आए. वर्माजी को तकलीफ़ होती है इससे. कलेजा फटने-सा लगता. जो आदमी शेर की तरह दहाड़ता रहा है, नसीब के फेर से कितना कमज़ोर बन गया.

कृपानंदन ने कहा—ऐसे लोगों को नौकरी करने का कोई हक़ नही है और वह भी शिक्षा के पेशे मे तो नहीं ही. अच्छा हो, जनार्दन बाबू कर्नलगंज में अगर कसाई की एक दूकान खोल लें.

वर्माजी के कलेजे पर कोई अगर हाथी भी चढ़ा देता, इतनी तकलीफ़ नहीं होती.

स्टाफरूम में बलभद्र ने वर्माजी से पूछ ही लिया—अब आप ही फ़ैसला कीजिए, वर्माजी, वर्ना कल तक शायद और चार-छह की जान चली जाए.···

वर्माजी पूरा मुंह खोलकर हंसे—क्यों मज़ाक करते हो, भई ? मुक़द्दर के ऊपर वश ही किसका चलता है ?

—नैतिक रूप में वैसे जनार्दन बाबू को यहां रहने का कोई अधिकार अब रह नहीं गया. कृपाशंकर बोला.

—भई, अब पेट के लिए करना पड़ता है आप भी तो इस पेट की ही वजह से परदेस में पड़े हुए हो. वर्माजी गौतमबुद्ध की मुद्रा में समझाने की कोशिश कर रहे थे.

—ह्वाट, पेट के लिए ? पेट के लिए कोई धनिया-मिर्च भी बेच सकता है, पुलिस में हवलदार या दरोगा बन सकता है. अगर डाका भी डालता है तो भी इतनी क्रूएलटी नहीं साबित होती.

कृपानंदन ने पूछा—हम लोग जनार्दनजी को यहाँ से निकालने की मांग कर रहे हैं. आप उस पर दस्तख़त करेंगे ?

वर्माजी की हालत मारीच की-सी हो रही थी. लंका में रहने से रावण के हाथों मौत होगी और दण्डकवन जाने मे राम के हाथ. बुरी तरह अचकचाने लगे—भई, मैं ठहरा शुद्ध गृहस्थी आदमी. मुझे काहे को घसीटते हो ?

—हो गई न, टांय-टांय फिस्स ? फिर बीवी के साथ सुख से गृहस्थी चलाइए. यहां तो दुख ही दुख है.

वर्माजी सिर से पांव तक जल-भुन उठे थे. लेकिन जाल में फंसने से शेर भी हाथ-पांव मार लेने के बाद चुप ही हो जाता है. अपने को सिर्फ़ शेर के साथ तुलना करके ही इस गम में वर्माजी को थोड़ी तसल्ली मिल रही थी.

भगवती बाबू ने घोषणा की कि स्टाफ एसोसिएशन इस हादसे की जांच के लिए एक समिति का निर्माण करेगी और उसकी सिफारिशों के मुताबिक जनार्दन बाबू के खिलाफ आंदोलन का मोर्चा बांधेगा.

वर्माजी ने हिन्दी का एक अख़बार उठा लिया, पढ़ शायद वह नहीं रहे थे लेकिन हाथों मे वही था.

भगवती बाबू ने एक नोटिस लिखकर सर्क्यूलेट कर दिया कि कल स्कूल की छुट्टी के बाद स्टाफ एसोसिएशन की मीटिंग है. यह संघ वैसे सिर्फ़ स्कूल के मास्टरों के लिए ही है लेकिन चौकीदार, दफ्तरी, चपरासी, बाबू वग़ैरह भी इसमें हिस्सा लेने के लिए आमन्त्रित किए गए थे.

घण्टी बजी तो वर्माजी को राहत मिली थी. झट से उन्होंने रजिस्टर उठाया और क्लास में पहुंच गए. वैसे अमूमन घंटी बजने के पांचेक मिनट बाद ही वह स्टाफ-रूम से क्लास के लिए निकलते हैं.

जनार्दन बाबू चुपचाप फाइलों के काम निपटाते रहे. तीसरे दर्जे में भूगोल का क्लास था. लेकिन खुद नहीं गए. वर्माजी को भेज दिया वहां. हाँ, वह चौथे दर्जे में गणित का क्लास लेने ज़रूर चले गए थे. इस दफ़ा हाथ में बेंत नहीं था और चेहरे का भाव भी इतना रूखा नहीं था कि बच्चे डर जाएं. कुछ बच्चे सवालों के जवाब नहीं दे सके लेकिन इसके बावजूद उन्होंने कुछ नहीं किया. क्लास ख़त्म हुआ तो चुपचाप निकलकर अपने कमरे में घुस गए.

वर्माजी शायद कुछ कहने के लिए आए थे. जनार्दन बाबू ने उनकी तरफ़ नहीं

देखा और इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स को भेजी जाने वाली रिपोर्ट का ड्राफ्ट दुबारा, तिबारा और शायद पांचवीं बार पढ़ने लगे.

पांचेक मिनट तक वर्माजी चुपचाप खड़े रहे. फिर गले को खखारकर माफ किया और जता दिया कि कुछ देर से एक आदमी कोने में खड़ा है. जनार्दन बाबू ने फिर गर्दन सीधी की. आँखों पर चश्मा चढ़ा हुआ था. उसे उतारकर मेज पर रख दिया.

वर्माजी सामने वाली कुर्सी खींचकर बैठ गए. जेब में हमेशा पान की डिबिया रहती है. उसे सामने की तरफ़ बढ़ाया लेकिन जनार्दन बाबू ने मना कर दिया. फिर एक पत्ता अपने मुंह में ठूस लिया और तनकर बैठ गए. बोले—जो हो गया, सो हो गया. मैं समझता हूं, आप कुछ दिनों के लिए छुट्टी लेकर बाहर घूम आएं तो मन स्थिर हो जाएगा.

—अभी आपका क्लास नहीं है क्या ? जनार्दन बाबू ने आहिस्ते से पूछा

वर्माजी सकपकाने लगे—मैं दरअसल···

—जाइए और क्लास लीजिए.

वर्माजी निकल आए. दिल कड़वा हो गया था. जिस भी आदमी का भला करने जाओ वही काटने को दौड़ता है. दुनिया बदल गई, अब इस बात पर उन्हें यकीन कर ही लेना पड़ा.

●●

स्टाफ एसोसिएशन की मीटिंग हुई तो आधे से ज्यादा लोग नहीं आए थे. कुछ लोग उस दिन छुट्टी पर थे. उन्हें शायद बहाना वग़ैरह बनाना मुनासिब नहीं लगता है. बाकी लोगों में जिन्हें स्कूल की छुट्टी के बाद तुरन्त घर या कहीं और जाना था बुरी तरह जल्दी में थे. उनमें से किसी की बीवी बीमार थी, किसी का बच्चा. बीमारी का यह दौर सिर्फ एक दिन के लिए ही आया था. मीटिंग वाले दिन.

जनार्दन बाबू के पास, लिखित रूप में हाज़िर रहने का निमन्त्रण था. भगवती ने भिजवा दिया था. उनके आने की न तो उम्मीद थी न कोई इन्तजार ही कर रहा था. वर्माजी और बहुत सारे लोग छुट्टी पर थे.

मीटिंग में मास्टरों में विनायक, कृपानन्दन, बलभद्र, भगवती बाबू वगैरह कोई दसेक लोग थे. कुल पैंतीस मास्टर हैं इस स्कूल में. जो लोग यहां पढ़ाते नहीं है, उनमें से दो दफ्तरी, एक चौकीदार, एक चपरासी और दफ्तर का एक बाबू था. कोरम पूरा हुआ था.

कृपानन्दन उठ खड़ा हुआ और शिक्षक की नैतिकता और सामाजिक दायित्व पर आधा घंटा तक बोलता रहा. एक दफ्तरी पूरी बातें तो समझ नहीं रहा था लेकिन बाद में कुछ सवाल किए थे. उनमें पूछा था —शिक्षक की नैतिकता, सामाजिक नैतिकता से क्या कभी अलग हो सकता है ?

दर्जा आठ तक पढ़ा हुआ चरनदास दफ्तरी इतना बड़ा सवाल कर देगा, कृपा-नंदन नहीं जानता था. जवाब के लिए वह ख़ास तैयार भी नहीं था.

जवाब विनायक ने दिया—सामाजिक नैतिकता एक बहुत बड़ी छतरी है. उस में शिक्षक की नैतिकता है,चौकीदार की भी, दफ्तर के बाबू और छात्र की भी है. उनमें आपसी टक्कर नहीं होनी चाहिए. लेकिन टक्कर अगर किन्हीं वजह से होती भी है, उस का मतलब यह हुआ कि समय के मूल्यों के साथ हम बदले नहीं हैं कोई भी मूल्य शाश्वत नहीं होता. दुनिया में कोई भी इमारत या धर्म या विचार कभी भी शाश्वत नहीं हुआ है. सवाल यह है कि कितने ज्यादा वक्त तक कोई मूल्य टिका रहता है. आज

का मार्क्सवाद भी वह नही है जो कार्ल मार्क्स का मार्क्सवाद था. वक्त की ज़रूरत और बदलते मूल्यों के मुताबिक मार्क्सवाद भी बदलता रहा है. शायद इसलिए मार्क्स आज भी हमारे बीच ज़िन्दा है.

चरनदास को सारी बातें तो समझ में नहीं आई थीं लेकिन वह शायद बहुत-कुछ समझ गया था.

भगवती बाबू ने अब रामानंद-प्रसंग को उठाया और इसके लिए हेडमास्टर जनार्दन बाबू को पूरी तरह ज़िम्मेदार ठहराया.

मीटिंग में एक चुप्पी-सी छा गई थी.

—हम जानते है, यह काम बहुत ख़तरे का है लेकिन हम लोग एक जांच-समिति का निर्माण करते है, जो सात दिन के भीतर अपनी सिफ़ारिशें प्रस्तुत करेगी. उन सिफ़ारिशों के आधार पर हम अपना अगला मोर्चा तय करेंगे. आप लोगों में से जो मेरे साथ सहमत हैं, हाथ उठाएंगे.

सबसे पहले चार हाथ उठे. कृपानंदन, विनायक, बलभद्र और चरनदास के. बाद में बाक़ी लोगों ने भी उठा लिए.

मीटिंग यही तक थी. कुलमिलाकर घंटा-भर लगा था, फिर चरनदास को साथ ले विनायक निकल आया. बाक़ी लोग भी स्कूल से बाहर निकल आए.

●●

चरनदास को शायद इस स्कूल में पहली बार किसी ने उसके अस्तित्व की स्वीकृति दी थी. वह बोला—मास्साब, कई दफा मैं अपने बारे में सोचता हूं लेकिन यह नहीं साबित कर पाता कि मेरे होने की शर्त अपने अलावा बहुतकुछ है.

– यह, दरअस्ल, एक तरह का डर है. आदमी जब तक इसमे फंसा होता है, पता ही नही चलता कि उसके अंदर शक्ति कितनी है. विनायक ने चरनदास को समझाया. वे लल्लू चाय वाले के यहां बैठे हुए थे.

तेजी से विविध भारती का गाना चल रहा था. आवाज इतनी तेज़ कि थाने के हवलदार और सिपाही भी मस्ती मे झूम जायें. पूरे वाल्यूम में रेडियो चलाकर भी लल्लू निर्विकार ही रहता है.

विनायक ने आवाज दी —लल्लू भाई, अभी तो तुम्हारी दूकान में हम दो ही है सिर्फ़, बिना गानों के भी हमारा काम चल जाएगा.

लल्लू चाय का प्याला देकर चुपचाप बैठा था. वह हंसा, उठा और रेडियो बन्द ही कर दिया.

विनायक बोला लगता है, मै अगर यहां आता रहा, तुम्हारी दूकानदारी ठप्प हो जाएगी.

—तुम आओ तो सही, मास्टर. लल्लू की चाय तो एक बार भी जिसने पी, वह बार-बार यही आएगा. आख़िर में आहिस्ते से बोला—सिवाय तुम्हारे.

उसके कहने का ढंग इतना नाटकीय था कि तीनों इकट्ठे हंस पड़े थे.

चरनदास ने चाय का घूंट लिया और पूछा—मैं पढ़ा-लिखा आदमी ज़रूर नहीं हू लेकिन जानने की इच्छा होती है, इस डर से बचने का रास्ता क्या है ?

– बचने का ? बचने का रास्ता हमलोग ढूंढे भी क्यों? इसे जीतने का तरीका आना चाहिए. एण्ड वी मस्ट लर्न दैट. विनायक ने चाय का प्याला खिसका दिया.

चरनदास चुप है.

—पहले तो अपने आपमे ही तर्क करना पड़ता है कि हम किसी ख़ास चीज़ को क्यों एक्सेप्ट करें, क्यों रिजेक्ट करे ? हममें ज्यादातर लोग अपने आपमे सवाल किए

बिना ही चीजों को मंजूर कर लेते है या उनके खिलाफ हो जाते है

— यह बडा मुश्किल है, मास्साब

—आसान सिर्फ एक बात है, बहती हुई धारा के साथ आराम से बहते जाना इसे मै क्लर्क मेंटालिटी कहता हू अंग्रेज हिन्दुस्तानियों का यही देकर गए है

—लेकिन मास्साब, मै तो पढा-लिखा भी नही हू···

विनायक ने उसे वही रोक दिया—यह अच्छा ही हुआ वर्ना तुम भी औरों की तरह इस मुगालते मे रहते कि पढे-लिखे हो. दरअस्ल हमलोग सिर्फ लिट्रेट है यानी साक्षर-भर है बी ए, एम ए की क्लासो मे शिक्षा थोडे ही मिलती है ? साक्षरता मिलती है और हममें गुमान आ जाता है कि हम पढे-लिखे है आखिर जिस तरह की शिक्षा अपने फायदे के लिए अंग्रेज यहाँ, स्कूलो, कॉलेजो मे बाँटता रहा है, आज भी वही जारी है हिन्दुस्तान की गरीबी की वजह किताबो म यह लिखी है कि हम गरीब है इसलिए गरीब है इग्लैण्ड का इतिहासकार यह अपने स्वार्थ के लिए लिखता है और देखो, कितना बडा मजाक है कि हमारा इतिहासकार भी उसे स्वीकार कर लेता है वह भी अपनी किताबो मे ये ही बाते दोहराता है किसी को यह लिखने की हिम्मत हुई ही नही कि चूकि विदेशी सरकारे और लुटेरे हमे लूटते रहे है, हम गरीब है

यूनीवर्सिटी के कुछ लडके चाय पीने आ गए थे रेडियो नही चल रहा था, लेकिन वे चाय के साथ जम गए थे

एक लडके ने पूछा फिर आपके पास विकल्प क्या है ? हम लोग पढाई छोड कर मैदान मे आ जाए और झण्डे उठाले ?

—मै मैदान मे आने की बात जरूर कहता हू लेकिन पढाई छोडने की नही वैसे पढाई छोडना अगर वक्त की माग हो तो उसे भी छोडना तो पडेगा ही आप लोग हडताल इसलिए करते है कि पढाई अंग्रेजी मे नही हिन्दी म होनी चाहिए लेकिन यह मामला तो बाद का है सबसे पहले आप इस बात के लिए क्यो नही आदोलन करते है कि आपको अंग्रेजो की बनाई शिक्षा नही, इस मिट्टी की जरूरत वाली शिक्षा चाहिए और जब तक वह हो नही जाए, आप क्लास रूम से बाहर भी रह सकते है

वह लडका बहुत प्रभावित हो गया था—आपका नाम जान सकता हू ?

—विनायक.

वह लडका उछल-सा पडा—ओह, यू आर द ग्रेटमैन ! आपका नाम मेरे और हम लोगो के लिए नया नही है मैं नगेन्द्र हू नारायण प्रसादसिह

—नाम से ही जाहिर होता है, जमीदार-वमीदार कुछ है

—पिताजी थे, मै नही हू जमीन तो खैर नही ही है हा एक द्वार भर रह गया है बिहार के आरा जिले मे एक गाव है चौगाई. द्वार वही है

वे लोग प्रसगेतर बाते कर रहे थे सो चरनदास ने पूछ डाला—लेकिन मास्साब, शिक्षा एक दिन मे बदल तो नही सकती तब तक य लडके क्या करे ?

—तुम्ही बोलो, क्या करना चाहिए नगेन्द्र के लहजे म मजाक था चरनदास की फटी हुई कमीज देखने के बाद यह मजाक उसे चटनी की तरह स्वादिष्ट लगा था

विनायक सजीदा हो गया बोला— मै अभी चरनदास से बात कर रहा था कि हम लोग अपने पढे-लिखे होने के मुगालते म है कम-से-कम हममे से हरेक के पास इतना जरूर होना चाहिए कि दूसरो के लिए मन मे रेस्पेक्ट हो.

नगेद्र झेप गया, माफी तो उसने नही मॉगी लेकिन शर्मिन्दा हो गया वह फिर उगलियां चटखाने लगा था.

विनायक फिर चरनदास की तरफ मुड़ा और बोला—एक दिन में न सही, एक साल में तो बदल ही सकती है. इतनी बड़ी बात के लिए क्या एक साल की कुर्बानी बहुत होती है ?

— इसके लिए बहुत समझदारी और आर्गनाइजेशन की जरूरत है. नगेंद्र बोला.

—हां है. कुछ सैक्रीफाइस तो करना ही पड़ेगा.

नगेंद्र चुप हो गया

—अगर हम सफल नहीं होते हैं तो ? चरनदास बेचैन-सा हो रहा था.

—यह सवाल सिर्फ मौकाप्रस्त लोग कर सकते हैं. वी विल फाइट एण्ड विन. वक्त भले ही थोड़ा ज्यादा लग जाए लेकिन जीतना तो हमें होगा ही. न जीतने का मतलब होगा, हम अपने अस्तित्व की सार्थकता साबित ही नहीं कर सके.

नगेंद्र के साथ वाले सारे लड़के अब तक खामोश थे. उनमें से छरहरा किस्म का एक लड़का बोला—जो आदमी कुछ कर नहीं सकता, आइडियलिस्ट हो जाता है. आपके इस आइडियलिज्म और सड़े टमाटर के बीच कुछ भी फर्क है क्या ?

—है. विनायक शांत था. बोला—दरअस्ल, हम लोगों के दिमाग में कूट-कूट कर यह बात भर दी गई है कि आदर्श आदर्श होता है और यथार्थ सिर्फ यथार्थ. लेकिन यथार्थ और आदर्श के दरम्यान कोई दीवार नहीं है, इस बात को चुनौती की तरह इसलिए नहीं मंजूर कर पाते कि हमारे दिमाग का विकास उपनिवेशवादी तरीके से हुआ है. उस चोले को उतार फेंकिए तो महसूस करेंगे कि वह आदर्श हुआ ही नहीं जिसकी जरूरत यथार्थ में नहीं है.

वह लड़का चुप हो गया, उसे लगा इन मसलों में कभी दिलचस्पी थी भी नहीं. सवाल, बस, यूं ही कर दिया था. कुछ देर वह बैठा रहा फिर उठकर हॉस्टल की तरफ निकल गया.

उसकी वजह से नगेन्द्र थोड़ा शर्मिन्दा हुआ.

विनायक नगेन्द्र की तरफ मुखातिब हुआ—दोस्त है न आपके? इनके दिमाग में संदेह है इसलिए यकीन नहीं करना चाहते. और बिना यकीन किए कुछ भी करने का मतलब नहीं होता.

आई एग्री विनायक साब.

—लेकिन शक तो आपके मन में भी है.कभी-कभी उस पर एक पर्त बिछ जाती है और ऊपर से पता नहीं चलता.

—इसका इलाज ?

—अपने आपसे सवाल कीजिए. सिस्टम से लड़ने से पहले आदमी को अपने आपसे लड़ाई करनी पड़ती है. जो जहरीले संस्कार अन्दर तक घुस गए हैं उन्हें जानने के लिए थोड़ा वक्त तो लग ही सकता है. सिर्फ वक्त ही नहीं, एक आंतरिक शक्ति की भी जरूरत है.

वे सब बात समझने की कोशिश में थे. नगेन्द्र, उसके बाकी दोस्त और दफ्तरी चरनदास. लल्लू के भी कानों का रुख इधर ही था. विनायक ने एकदम से कलाई पर बंधी घड़ी देखी और उठ खड़ा हुआ—बातों-बातों में वक्त का खयाल ही नहीं रहा. चलते हैं फिर.

मजलिस वहां बर्खास्त जरूर हो गई थी लेकिन लड़कों की चाय खत्म नहीं हुई थी. लल्लू ने सबको समझा दिया—बहुत बड़ा ज्वालामुखी है यह मास्टर. दो दिन और मिलो तो पता चले. फिर या तो आग से जलकर राख बन जाओगे या तप कर सोना बनोगे..

लल्लू की बातों पर कोई ध्यान नहीं देता. लड़कों को अब दिक्कत होने लगी थी कि रेडियो मे फिल्मी गाने बज नहीं रहे हैं. एक लड़का उठा और रेडियो का नॉब घुमा दिया. मस्ती मे वे सब फिर टेबल पर तबले बजाने की तरह थपकियां देने लगे

नगेन्द्र उठकर बाहर चला गया. उसके पीछे चरनदास था.

●●

कृपानंदन भगवती बाबू के घर पहुंचा था. बलभद्र भी अपनी सायकिल के कैरियर पर बिठाकर विनायक को लेकर पहुंच गया. सायकिल बीच में पंचर हो गया था, इस वजह से थोड़ी देर हो गई थी. बलभद्र बहुत ज्यादा उत्तेजित था और माथे की नसें फूल आई थीं. लेकिन वह लगभग खामोश ही था.

सायकिल मरम्मत की दुकान में एक फटी नेकर वाला लड़का गंदले पानी के एक बड़े-से तसले में ट्यूब डुबाकर पंचर ढूंढ रहा था.

विनायक स्वगत बोला—एहसान मिस्त्री की याद आती है.

बलभद्र ने यह बात सुनी लेकिन रिमार्क नही दिया. वह शायद देर होने की वजह से खीझ भी रहा था. कोई दसेक मिनट लगे थे पंचर जोड़ने में.

वे भगवती बाबू के यहां पहुंचे तो देखा, वह कृपानंदन के साथ कुछ कानूनी किताबें पलट रहे हैं.

कमरे में एक कुर्सी, दो स्टूल और एक चारपाई है. दीवार मे खाने बने हैं, वहां किताबें, दवा की बोतलें और तीनेक टूटे हुए खिलौने रखे हुए है. अन्दर एक कमरा और है. भगवती बाबू का अंतर्कक्ष. इस वक्त वहा उनकी पत्नी और बच्चे हैं. एक छोटा-सा लडका दरवाजे ... लटकी हुई परित्यक्त साडी का पर्दा उठाकर इधर झांक रहा था.

विनायक स्टूल पर बैठ गया. बलभद्र चारपाई पर.

कृपानंदन ने बात बिना भूमिका के शुरू की —जनार्दन बाबू ने तुम्हे टर्मिनेट करने के लिए चेयरमैन से सिफारिश की है. चेयरमैन है भी वैल टाईप आदमी. पता नही वह करेगा क्या.

— फाईन. विनायक हंसा.

— वैसे तुम्हें बी० टी० जरूर कर लेनी चाहिए थी. एक बार कन्फर्म हो गए तो कोई डर नहीं रहता, बलभद बोला.

—खूब बोले! विनायक एकाएक संजीदा हो गया. बोला —यानी अपने को प्रॉटेक्टेड करके फिर विरोध करें, लड़ें, झगड़ा उठाए, क्यों ?

बलभद्र झेंप गया.

भगवती बाबू ने आंखों पर से चश्मा उतार लिया और बगल में पड़ी किताब पर रख दिया. बोले—लेट मी कम टू द प्वाइंट. जनार्दन बाबू लीगली बहुत गलत नही हैं, लेकिन स्कूल में जो हादसा हो गया है उसके बैकग्राउण्ड में हम लोग म्यूनिसीपेलटी के एजूकेशन डिपार्टमेंट से गुजारिश कर सकते है कि जब तक जनार्दन बाबू वाला मामला निपट नहीं जाता है, तब तक इस मामले में कुछ भी न किया जाए. भगवती बाबू ने किताब खोलकर एक क्लॉज दिखा भी दिया, जिसके आधार पर टर्मिनेशन की इस सिफारिश को सस्पैंड किया जा सकता है. वैसे परसों स्टाफ एसोसिएशन की मीटिंग है. रामानंद की मौत पर कल इन्क्वायरी कमेटी की रिपोर्ट मिल रही है. मीटिंग में कमेटी की सिफारिशों पर विचार के अलावा इस इशू को भी हम उठाएंगे.

—फिर हम लोग इस बीच क्या करें ? बलभद्र ने पूछा.

भगवती बाबू ने जवाब विनायक को दिया—हम लोग चाहे कुछ भी करें,आप

कुछ मत कीजिए. हेडमास्टर को कोई और चांस नहीं मिलना चाहिए कि आपके खिलाफ एक और प्वाइण्ट तैयार करें.

--माफ़ कीजिएगा, यह मेरे आइडियलिज्म के खिलाफ जाता है, विनायक बोला--कायर की तरह चुप रहकर हम अगली मंजिल के बारे में सोचते रहें, यह नहीं हो सकता.

भगवती बाबू हंसे—आपकी स्पिरिट एक्सेप्शनल है. इसीलिए तो आपकी जरूरत भी इतनी है. वी डोण्ट वांट टू लूज यू. सिर्फ बात इतनी-सी है कि चंद दिनों के लिए आप बोलना-चालना बन्द रखिए.

—वह मेरे अस्तित्व की शर्त है, भगवती बाबू, मैं कोई तोप नही दाग सकता कि जुबान बन्द रखने मे कोई फर्क नहीं पड़ेगा.

कृपानंदन बोला—आप तोप ही तो दागते हैं. बोल चुकने के बाद वह थोड़ा हंसा भी. स्थिति को हलका करने के लिए यह एक कोशिश-सी थी.

—देन यू डू वन थिंग. भगवती बाबू ने सुझाव दिया—हफ्ते-भर के लिए छुट्टी ले लीजिए.

—बात एक ही है. लेट मी बी सैक्ड बाई द हेडमास्टर. लोग झूठ और बेईमानी के लिए बर्खास्त होते है मैं सच बोलने के लिए नौकरी से अलग कर दिया जाऊंगा.इसमें डरने जैसा कुछ भी नहीं.

—यह समझदारी की बात नहीं हुई, डियर. कृपानंदन बोला —यह कोई शहादत नही होगी कि इससे तुम्हारा न सही, औरों का भला होगा.

– औरों के बारे में अभी सोच नहीं रहा हू. ऐसा न करने मे कम-से-कम अपना ही नुकसान इतना हो जाएगा कि आइ विल बी डेड फॉर एवर,

भगवती बाबू का लडका एक केतली मे चाय और चार प्याले रख गया था. प्यालों मे तीन के हैण्डिल नही थे. चारों ही बहुत पुराने और टूटे हुए थे. उनके असली रंग भी बदले हुए थे.

भगवती बाबू ने चाय उंड़ेली. समझ गए कि विनायक शॉर्टकट रास्ता अख्तियार करेगा ही नहीं. फिर इस सिलसिले को यहीं खत्म कर दिया. विनायक को प्याला थमाया और बरेली के मौसम के बारे मे पूछने लगे.

--सचमुच आप बरेली का ही मौसम जानना चाहते है ? विनायक ने पूछा और मुस्करा दिया.

इस मुस्कराहट के पीछे का व्यंग्य भगवती बाबू बखूबी समझते है. बोले--कभी-कभी मौसम के बारे में सूचनाएं इकट्ठा कर हम आदमी के दिमाग के विकास के बारे में बहुतकुछ सोच लेते हैं.

—ग्रैण्ड. विनायक ने शाबासी दी.

फिर भगवती बाबू सिर्फ चाय पीने लगे.

बलभद्र बोला—जनार्दन बाबू अभी भी कितने ऐम्बिशस है. इतनी बडी घटना घट गई लेकिन उनकी महत्त्वाकांक्षा की कुतुबमीनार उसी तरह खड़ी है. बात खत्मकर थोड़ी देर बाद बोला — इटेज स्ट्रेंज.

चाय खत्मकर वे लोग उठ खड़े हुए. भगवती बाबू धोती और बनियान में थे. अंदर जाकर कुर्ता डाल आए और चौराहे तक जाने के इरादे से उनके साथ हो गए. कृपानंदन ने एक बीड़ी सुलगाई थी. बलभद्र बिल्कुल खामोश था. विनायक उसकी सायकिल की सीट पकड़कर चल रहा था.

चौराहे तक पहुंचकर भगवती बाबू ने याद दिलाया—आज इतवार है. लेकिन

देखो, हम लोग इतवार हो या सोमवार, फर्क करना ही नहीं जानते.

कृपानंदन बोला—आज सोऊंगा दिन-भर.

बलभद्र कुछ नहीं बोला. विनायक भी चुप था. लेकिन यह चुप्पी कुछ अखर-सी रही थी. सो, बोला—आज कुछ गप्पें मारूंगा पड़ोस वालों के साथ.

भगवती बाबू समझ गए कि उसने खामख्वाह कुछ कह दिया. इस कहने का मतलब भी तो कुछ नहीं होता.

फिर कृपानंदन अपनी सायकिल पर बैठ गया.

विनायक बलभद्र की सायकल के कैरियर पर सवार हो गया.

●●

स्टाफ एसोसिएशन की मीटिंग में इस बार कुल पंद्रह लोग थे. पहली बार की संख्या इससे कम थी.

'इनक्वायरी कमेटी' की रिपोर्ट आ गई थी. कमेटी मे यूनीवर्सिटी के एक लेक्चरार, गवर्नमेण्ट हाईस्कूल के एक जूनियर मास्टर और 'साप्ताहिक आवाज' के संपादक थे.

भगवती बाबू ने कमेटी की जांच की रिपोर्ट और सिफारिशे पढीं, सात पृष्ठों का बयान था. बयान में हेडमास्टर को एक लापरवाह, गैर जिम्मेदार और अनैतिक व्यक्ति बताया गया था. रिपोर्ट में और भी अनेक बाते थी लेकिन ऊपर का यह वाक्य उसका निचोड़ है.

सभी जानते थे, इसी तरह की रिपोर्ट कोई जांच समिति ही दे सकती है. बात अपेक्षा के मुताबिक थी चिन्नाजा इस वजह से कोई मनमनी जैसी चीज नहीं फैलने लगी थी.

आखिर में भगवती बाबू ने सिफारिशे पढीं.

उनमें भी कोई नई बात नही थी. यानी जिस बात की प्रतीक्षा लोगों में थी, सिफारिश भी वही थी. यानी ऐसे गैर जिम्मेदार आदमी को हेडमास्टर बने रहने का कोई नैतिक अधिकार नही है. इस कारण या तो वे अपने आप ही त्यागपत्र दे दें या उन्हें स्कूल की सेवाओं मे निलम्बित कर दिया जाए.

भगवती बाबू ने अपनी कर्मसूची बनाई हम लोग चुगी के चेयरमैन मे मिलकर इस रिपोर्ट की एक प्रति देंगे और स्कूल कमेटी के चेयरमैन मे भी आग्रह करेंगे कि वह मुनासिब कदम उठाएं.

विनायक और कृपानंदन इकट्ठे बोले—मैं इसका समर्थन करता हूं.

बलभद्र के अलावा तीनेक और लोगों ने भी यही कहा. बाकी लोग समर्थन में नीमराजी-से थे.

कृपानंदन उठा. बोला — मैं समझता हूं, जब तक कि हेडमास्टर हटा नही दिया जाता, हम लोगों को स्ट्राइक करनी चाहिए.

—अभी नहीं. बलभद्र बोला—बच्चों के अभिभावकों की सिम्पैथी इससे हमारे साथ नहीं भी बनी रह सकती है. हम लोगों को तो आम जनता की भी सिम्पैथी की जरूरत है.

—दैट्स राइट, स्ट्राइक कॉल करने के लिए हम लोगों को स्ट्रैटेजी बनानी पड़ेगी. यूनीवर्सिटी, कॉलेजों और इलाहाबाद के तमाम स्कूलों से भी एक दिन की टोकन-स्ट्राइक के लिए हम कह सकते हैं. लेकिन पहले ऑथरिटीज के साथ बातचीत होनी जरूरी है. विनायक बोला.

भगवती बाबू ने समर्थन में गर्दन हिलाई—प्रीमैच्योर आउटबर्स्ट से हम लोगों

को नुकसान पहुंच सकता है. उन्होंने फिर दूसरा प्रसंग शुरू कर दिया—हेडमास्टर ने विनायक जी को बर्खास्त करने के लिए नए चेयरमैन से सिफारिश की है, आरोप लापरवाही का या ग़ैरज़िम्मेदारी का नहीं है. इसलिए नहीं है कि यह साबित ही नहीं हो पाएगा. आरोप इतना है कि अभी तक विनायक जी टीचिंग डिप्लोमा ले नहीं पाए हैं. अब चेयरमैन की मर्ज़ी है कि अगले साल के लिए इन्हें रखा जाए या नहीं.

चरनदास दफ्तरी उठ खड़ा हुआ—हेडमास्टर और उनके चार चमचों की मनमानी है यह. स्कूल बन्द करवा देंगे…

चरनदास और भी कुछ कहने को जा रहा था, भगवती बाबू ने हथेली उठाकर उसे रोक दिया—फ़िलहाल हम ऑथरिटीज़ से आग्रह करेंगे कि ऐसा कोई कदम न उठाया जाए. क्योंकि इस बर्ख़ास्तगी के पीछे सिर्फ़ कुछ जाती वजहें हैं. कोई भी पब्लिक इन्स्टीट्यूशन इन वजहों से नहीं चला करता. फिर उन लोगों का रुख देखकर ही आगे का प्रोग्राम तय करेंगे.

मीटिंग यहां पर बर्खास्त कर दी गई. बर्ख़ास्तगी से पहले वे ढाई घंटे तक बहस करते रहे हैं. कृपानंदन के चेहरे पर पसीने की बूंदें जमा हो गई थीं.

●●

भगवती बाबू और कृपानंदन इस सिलसिले में बहुत दौड़-भाग करते रहे. चुंगी के चेयरमैन से लेकर एजूकेशन कमेटी के लोग और स्कूल कमेटी के चेयरमैन शायद किसी के भी पास फ़ुर्सत नहीं थी.

बाद में कृपानंदन ने रहस्योद्घाटन किया था. चेयरमैन का पी. ए. जनार्दन बाबू के गांव का है. गांव के रिश्ते से साला या साढ़ू जैसा कुछ लगता है. किसी ज़माने में वह सत्याग्रही था. आज भी खद्दर पहनता है.

स्कूल कमेटी का चेयरमैन पुराना गांधीवादी है. आजकल लोहे का व्यापारी बन गया. वाणिज्ये वसति लक्ष्मी. लोहे का व्यापार शुरू करते ही उनकी कोठी तैयार हो गई. टिकट की कोशिश में वह बुरी तरह लगा हुआ है. मिल गया तो अगले चुनाव में विधानसभा के लिए लड़ेगा.

भगवती बाबू और कृपानंदन स्कूल की मैनेजिंग कमेटी के चेयरमैन से मिलने गए.

चेयरमैन से कृपानंदन ने जोर देकर कहा—एक टीचर की नौकरी जाने के पीछे अगर, असल में, सिर्फ़ कुछ जाती वजहें हैं, आने वाला कल आज को माफ नहीं करेगा. बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी इसलिए.

चेयरमैन के होंठ बंद थे, बन्द ही रहे.

फिर भगवती बाबू उठ खड़े हुए थे. चेयरमैन के चेहरे का भाव ऐसा था कि अभी इन फालतू बातों के लिए वक्त कहां है ? यह भाव कोई पहचान जाए तो फिर उठना ही पड़ता है.

—हम लोग रियायत नहीं, न्याय चाहते हैं. कृपानंदन बोला—इस न्याय के लिए हम लोग हर तरह की लड़ाई लड़ेंगे, वी हैव दैट करेज.

वे लोग फिर चेयरमैन की सुसज्जित बैठक से बाहर आ गए थे. एक जंजीर से बंधा हुआ कुत्ता भूंकने लगा था. जंजीर न बंधी होती तो वह आकर जरूर काट लेता.

कृपानंदन ने सोचा, शायद यही होना चाहिए था. इसमें कोई गैरइन्साफी नहीं होती.

भगवती बाबू उसका मन समझ गए थे. पीठ पर थपकी दी और बोले—कहीं

चलकर चाय पीते है.

कृपानदन कुछ नही बोला.

●●

बलभद्र ने खबर दी —जनार्दन बाबू छुट्टी पर जा रहे हैं तीन महीने की छुट्टी. पूअर चैप उसने बनावटी सहानुभूति प्रकट की. बाद मे एक लम्बी सांस भी ली. बाद वाला मामला कुछ ज्यादा ही नाटकीय हो गया था भगवती बाबू हस पड़े थे.

यह स्टाफ रूम ही है लेकिन लोग इस वक्त बहुत ज्यादा नही थे जो थे, या तो अख़बार पढ रहे थे या रजिस्टर की हाजिरी ठीक कर रहे थे

बलभद्र ने कृपानदन के कानो के पास मुह ले जाकर बात कही—हडका दिया तुमने चेयरमैन को···

- -गैंडे की चमडी को कौन हड़का लेगा, बन्धु ? उन्हे दरअसल चुनाव लड़ना है. इन बातो मे पब्लिक इमेज को धक्का पहुंचता है. लिहाजा जनार्दन बाबू छुट्टी पर जा रहे हैं और विनायक की बर्खास्तगी बिल्कुल अभी नही हो रही है.

विनायक कुछ कापिया जाच रहा था

भगवती बाबू इलाहाबाद के तमाम स्कूलो मे भेजे जाने वाले खत का ममौदा तैयार कर रहे थे.

बलभद्र ने भगवती बाबू मे कहा—इलाहाबाद के तमाम टीचर्स का एक कॉमन फोरम बनने वाला था तीन माल गुजर गए अभी तक कुछ नही हुआ.

— हा. भगवती बाबू ने मसौदे का करेक्शन करते हुए सक्षिप्त उत्तर दिया.

—अब इस पर काम करना होगा.

—होगा भगवती बाबू ने कलम पर कैप डाल ली—लेकिन पहला काम तो यह है कि हम लोग इसी स्कूल के साथियो के साथ उठे-बैठे, समझाए

विनायक बोला—कम्युनिस्ट टर्मिनालॉजी मे एक शब्द है, लुम्पेन प्रोलीतेरिएत मार्क्स ने इस शब्द का बहुत इस्तेमाल किया है. इसका मतलब है ज्यादातर लोग अपनी विवशताओ के कारण सर्वहारा है जैसे ही मौका मिला, वे उन्ही तमाम मूल्यो मे घुस गए, जो सिर्फ पूजीवादियों के होते है

बलभद्र बोला —बहुत कडवा सच है, डियर.

—हा, है किसी भी पब्लिक ऐक्शन की पहली शर्त होती है, 'मास सपोर्ट'. अपने साथियों में जो निरीह हैं उन्हें तो खैर समझाया जा सकता है लेकिन जो पाचवे दस्ते के है, उन्हें पहचान लेना भी एक जरूरी शर्त है. समर्थन के नाम पर अगर प्रतिक्रियाशीलो की मदद हमने ली, वह आखिर मे हार का कारण बनेगा. किसी भी सघर्ष मे जो लोग शर्त रखकर हिस्सा लेते है, उनकी मदद की जरूरत हम लोगो को नही है.

—व्हाट नेक्स्ट ? भगवती बाबू ने पूछा.

—'टीचर्स फोरम' का एक क्रांतिकारी 'ब्लू प्रिंट' हमारे पास होना चाहिए वर्ना सालाना जलसा करने के लिए ढेर-सारी समितिया हैं पहले हम लोग, आइए अपना प्रोग्राम तय करते हैं, फिर 'फोरम' बनाकर उसे पास करवा लेगे.

—आप ही यह जिम्मेदारी क्यो नही लेते हैं ?

—ले सकता हूं लेकिन एकदम से कुछ कर नही सकता मेरे प्री-ऑकोपेशन्स इतने हो गए है कि थोड़ा वक्त लगेगा.

बलभद्र ने मजाक किया—यस कॉमरेड, यह बन्दा आपका रिसर्च असिस्टेंट बनकर हुक्म की तामील करेगा.

वे लोग फिर संयुक्त रूप से हंस पड़े.

रिसेस के बाद घंटी हो गई थी.

वर्मा जी अब दिखाई पड़े. उनका चेहरा उतरा हुआ था. भगवती बाबू बिल्कुल ही सामने पड़ गए तो थोड़ा मुस्कराए भी. कृपानंदन समझ गया कि इस मुस्कराहट के पीछे कितना बड़ा गम छिपा है. जनार्दन बाबू अगर इतनी लम्बी छुट्टी पर जा रहे हैं तो फिर वर्मा जी बेचारे रह ही कहां जाते हैं···

बलभद्र ने वर्मा जी को देखा और जम्हाई ले ली. बलभद्र शायद चिढ़ाने का यही एक तरीका जानता है. वर्मा जी जले-भुने होंगे लेकिन उस तरफ़ ध्यान नहीं दिया. जेब से डिबिया निकाल कर मुंह में एक पत्ता ठूंस लिया.

एक-एक करके फिर सब क्लास लेने चले गए. स्टाफ रूम खाली हो गया. वर्मा जी जड़वत बैठे थे. उनके सर में शायद दर्द था. वह चुपचाप आंखें बन्द किए बैठे हुए थे.

●●

हिन्दुस्तान के सरकारी दफ्तरों को हर कोई गाली देता है. गाली हमेशा ही अकारण नहीं होती. जला-भुना आदमी आसानी से और कुछ दे सकता है क्या ? लेकिन डाक विभाग की सेवा सचमुच अकल्पनीय है. वैसे अख़बार में 'सम्पादक के नाम पत्र' कॉलम में अक्सर छपता है कि किसी को एक चिट्ठी मिलने में पांच साल लग गए तो मनीऑर्डर मिलने मे आठ साल. ये सारी बातें झूठ नहीं हैं. लेकिन एक दूसरा सत्य भी है. वह है—क़ादिर मियां का ख़त भी सही पते पर पहुंच सकता है. विनायक को झूसी से लिखा हुआ जो पोस्टकार्ड मिला, उसका लेखक है क़ादिर मियां. डाकखाने वाले शायद ज्योतिष भी करते हैं वर्ना यह ख़त बिना किसी भी दिक़्क़त के 'डेड लेटर ऑफिस' तक जा ही सकता था.

क़ादिर मियां ने बचपन में अलीफ़ बे तक की तालीम जरूर पाई थी लेकिन वह सब अब मगज में थोड़े ही बैठा है. तिस पर अब ज़माना ऐसा आ गया कि हिन्दी सीखनी पड़ी.

मरने से पहले मुरली ने एक बार मज़ाक किया था—मियां, इसी को नसीब कहते हैं शायद. मेरे नाना या दादा वग़ैरह कोई ज़िन्दा होते तो इसे नसीब के फेर के अलावा और क्या मानते ? नसीब खुश रहता तो इस उमर में अ से अमरूद और आ से आम पढ़ने की जरूरत थोड़े ही होती ? वैसे उमर की दुहाई तुम्हारे साथ नही चल सकती. पैंसठ बरस के नौजवान हो, नौजवान.

क़ादिर मियां हंसा था—खूब कहते हो मास्टर.

विनायक तब इस दृश्य में नहीं था. लेकिन सारी कहानियां उसे मालूम होती रही हैं. मुरली उसे सुनाने के लिए ही इतनी सारी कहानियां अपने पीछे छोड़ गया है क्या ? कभी-कभी लगता है, एकदम से सामने आकर मुरली पूछ बैठेगा—कैसे हो कॉमरेड ?

कैसा हूं ? यह भी कोई सवाल हुआ ? कभी सोचता ही नहीं कि कैसा हूं. सोचने की फ़ुर्सत ही कहां मिलती है ?

क़ादिर मियां ने ख़त लिखा था. क्या लिखा था, शायद वही बता पाए. इतना ज़रूर पता चल गया, फ़ौरन ही एक बार झूसी जाने की ज़रूरत है. विनायक ने झोला उठाया और चार कपड़े डाल लिए. यह शनिवार की शाम है. सोमवार की सुबह तक कोई छत्तीस घण्टे का वक्त मिलेगा. फिर दरवाज़े पर ताला लगाकर वह बस अड्डे के लिए निकल पड़ा.

●●

झूसी पहुंचा तो रात के ग्यारह बज रहे थे. डेढ़ घण्टे का रास्ता था, पूरे चार घण्टे लगे थे. बस का टायर फट गया था और कार्बोरेटर काम नहीं कर रहा था. बहुत बड़ा ऐक्सीडेण्ट हो सकता था लेकिन संयोग है कि ख़ास चोट किसी को नहीं आई थी. दाहिनी आंख के ऊपर वाला हिस्सा तिरछा होकर थोड़ा छिल गया था. भूख के मारे अंतड़ियां तक जल रही थीं.

नंदू के घर में अंधेरा था. कहीं ताला भी अगर लगा मिला तो जले पर नमक छिड़कने का एहसास हो ही जाएगा. लेकिन खुशक़िस्मती तो कभी-कभी आती ही है ! ताला दरवाजे पर नहीं था. विनायक ने थपकी दी तो बगल से चूं की आवाज़ हुई और बगल का तंग जंगला खुल गया.

अंधेरे की वजह से चेहरा पहचान में नहीं आ रहा था.

नंदू के कुछ पूछने से पहले ही विनायक बोला—दरवाज़ा खोलकर अंदर आने की इजाज़त दो, फिर तहक़ीक़ात कर लेना.

—अहऽऽहा, मास्टर बाबू. फिर नंदू तड़ाक से उछल कर दरवाज़े पर आया और चिटकनी खोल दी—क़ादिर मियां अभी-अभी गया है. तुम्हें ही याद कर रहा था.

नंदू ने खच्चम से माचिस जलाई और ढिबरी सुलगा ली. फिर चौंका—यह क्या ? चोट कैसी यह ?

विनायक ने मज़ाक किया—ऊपर नहीं जा सका इसलिए. नीचे रहने के लिए बतौर सज़ा यह ज़्यादा है क्या ? अब फटाफट कुछ खाने का निकालो.

नंदू ने दस सेकेण्ड के लिए सर खुजाया. फिर बोला—बैंगन का भर्ता और बाजरे की रोटी चलेगी ?

—मैं सोचूंगा, दिल्ली के अशोका होटल का खाना खा रहा हूं.

अशोका होटल के नाम से नंदू को कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा. उसने कभी यह नाम सुना नहीं है. ख़ैर, वह लगभग छलांग लगाकर बाहर निकला और दो बैंगन ले आया. कहीं से चोरी करके या डाका डाल के ही लाना पड़ा होगा, उसके कोने में रखे रसोई के खाली बर्तन वग़ैरह से विनायक ने इतना भांप लिया. वह चुप रहा और उसके बिस्तर पर पसर गया.

नंदू लकड़ी जलाकर नली से फूंक मार रहा था. थोड़ा धुआं हो रहा था और आ भी बिस्तर की ही तरफ़ रहा था. लेकिन इस वक्त इतनी नवाबी नहीं चलेगी कि धुएं को बाहर निकलने का हुक्म-वुक्म दिया जाए.

चूल्हे के अंदर शायद उसने दोनों ही बैंगन डाल दिए थे. विनायक को हंसी आ गई. नंदू ने शायद राक्षस वग़ैरह कुछ समझ कर ही तीन-तीन पाव के दो बैंगनों का इंतज़ाम किया है. फिर तसले में आटा लेकर वह गूंथने लगा. कम-से-कम तीनेक लोग किसी तरह ये रोटियां शायद निगल सकते हैं. विनायक ने आंखें बन्द कर लीं

और जम्हाई ले ली. एक बहुत पुराने गाने की धुन याद आ गई. बरेली में जो ग्रामोफोन रखा है, वह इस शताब्दी के शुरू में कभी बना होगा. बेचने से एण्टीक पीस के भाव पर अमरीकी लोग शायद कुछेक हजार देने को तैयार होंगे. आवाज़ उससे अब भी निकलती है. लगभग उस ज़माने के चार-छह रिकार्डस् भी हैं. पता नही क्यों उनमें से एक गाने की धुन याद आ गई. लगा, वह गाना नंदू की आंखें देखकर ही किसी भोले कवि ने लिखा होगा.

चूल्हे पर तवा रखकर नंदू रोटी सेंकने लगा. पूछा—हां तो, आपने बताया ही नहीं कि चोट कैसे लगी ?

विनायक काफ़ी देर तक चुप रहा. शुरू में नंदू ने तुम कह कर सबोधित किया था, अब 'आप' पर वापस आ गया. फिर चुप्पी के बाद उसने ऐक्सीडेण्ट की पूरी कहानी सुना दी.

—भगवान-वगवान मानता नहीं. वर्ना उससे शुक्रिया ज़रूर बोल देता. नंदू बोला—फिर कोई और बस पकड़ के ही आ जाते तो इतना टैम तो नही लगता....

—बसें सारी भरी हुई आ रही थीं. ख़ाली भी आती, मै अपनी ही बस से आता. इसकी भी एक वजह है.

नदू ने गर्दन ऊपर उठाई.

—एक भरी हुई बस के लोग झल्ला रहे है कुछ लोग ड्राइवर और कडक्टर को गालियां और अभिशाप दे रहे है, कुछ लोग बगल के खेत मे चने के बूटे उखाड़ रहे हैं और कुछ निर्विकार लोग चुपचाप बैठे है. ऐसा क्लाइमेक्स हमेशा थोड़े ही मिल जाता है ? विनायक समझ गया कि नदू ने क्लाइमेक्स का मतलब नही समझा फिर उसने हिन्दी में आसपास का एक शब्द बता दिया.

खाना लग गया था. लोटा लेकर विनायक बाहर गया और हाथ-मुंह धो लिए. बाहर के अंधेरे मे खेत समदर की तरह लग रहे थे. उसने कभी समदर देखा तो नहीं है, लेकिन सोचा, ऐसा ही लगता होगा. नदू ने आवाज़ लगाई तो वह चौक कर मुडा.

तीन रोटियां खाकर उठा तो लगा, इनके पचने मे अब हफ्ते भर का वक्त तो लग ही जाएगा. बहुत सारी रोटियां बच गई थी लेकिन नदू ने मामूली-सा दो-एक बार आग्रह भर किया था. वह झेंप रहा था कि मास्टर को इतना मामूली खाना खाना पड़ा. ऐसे खाने को लेकर ज्यादा आग्रह भी तो नही किया जा सकता.

इसके बाद नंदू ने ज़िद की और विनायक उसकी चारपाई पर लेट गया. नंदू एक फटी हुई दरी बिछाकर कुछ फ़ासले पर, नीचे सो गया.

●●

सुबह पौ फटते ही नंदू निकल गया था. इस बात का पता तब चला जब क़ादिर मियां नगीना के साथ आ धमका—आदाब-अर्ज़, मास्टर.

आंख खुल गई थी. विनायक माथे पर बाज़ू रखे छप्पर मे लटके जालों को देख रहा था. वह मुड़ा और उठ बैठा—आदाब-अर्ज़ मियां. कुछ कमज़ोर से लग रहे हो.···

क़ादिर ने अपने सीने पर मुक्का मारा—कमज़ोर कहते हो ? दंगल लड़ो तो अभी भी चार-चार को अकेला पछाड़ सकता हूं. अभी तो नछत्तर अहीर से मुक़ाबला ही नहीं हुआ. नछत्र यादव को अपनी सुविधा के लिए क़ादिर ज्यादातर अहीर ही कहता है, कभी-कभी नछत्तर अहीर भी.

विनायक फिर लोटा लेकर बाहर, खेत में चला गया. दरवाज़े पर पानी की एक बाल्टी रखी थी. बाल्टी में जंग देखकर लगता है, यह सम्राट हर्षवर्द्धन के ज़माने

में बनी होगी. नीचे पेंदा वैसे था लेकिन दो-तीन छेद भी थे. पानी लिहाज़ा ज्यादा देर तक नहीं ठहरता था. लेकिन नंदू के साम्राज्य में यह भी एक बेशकीमती सामान है. पानी लगभग बह कर निकल ही गया था. नंदू ने बगल के कुएं से उसे दुबारा भर दिया. कई बार वह ज़िक्र करता रहा है कि थोड़े-से पैसे हाथ में आ जाएं तो हैण्डपम्प लगा लेगा. हैण्डपम्प की कल्पना उसके लिए एक मूल्यवान प्रसंग है. जैसे हैण्डपम्प के लगते ही वह वरुण देव बन जाएगा.

हाथ-मुंह धोकर विनायक अंदर आया. सामने अख़बार का टुकड़ा बिछाया गया था. निशान वग़ैरह से लगा, इसका इस्तेमाल इससे पहले भी कई बार हो चुका है. अख़बार पर तरबूज़े के टुकड़े थे. भगोने में चाय थी. और तीनेक एल्यूमीनियम के मरोड़े हुए-से गिलास थे. ज़ाहिर है, स्वागत की इतनी बड़ी व्यवस्था सिर्फ़ इसलिए हुई है कि मास्टर आज गांव आया है.

नंदू जिस दरी पर रात को सोया था, उसका एक कोना अभी भी खाली था. क़ादिर मियां बोला—आओ मास्टर, चाय पीते है.

वे लोग दरी के फटे हुए हिस्सों और ज़मीन पर बैठे थे. मास्टर को एक साबुत कोना दिया गया था.

—यह तो ख़ासी दावत हो गई, मियां. फिर नंदू की तरफ़ मुड़कर विनायक ने एक मीठी-सी डांट सुना दी—तो श्री नंदकिशोर जी, सुबह से आप इसी काम में लगे थे.

विनय से नंदू विगलित-सा हुआ. कुछ नहीं बोला.

गिलास सिर्फ़ तीन-चार ही थे और आदमियों की संख्या छह-सात. ज़ाहिर है, चाय बारी-बारी से पीनी पड़ी. विनायक ने सोचा, इकट्ठे चाय के साथ गपशप की योजना दुनिया में जिसने सबसे पहले बनाई थी, उसे शायद पता नहीं था कि मूसी के नंदू के पास एक साथ इतने सारे गिलास कभी होंगे ही नहीं.

—क्या सोच रहे हो, मास्टर ? क़ादिर मियां ने पूछा.

—सोच रहा था, हम लोगों का यह नंदकिशोर कभी अक्लमंद होगा भी या नहीं ?

सब हंस पड़े. विनायक नहीं हंसा.

अब फिर नछत्र यादव का सिलसिला शुरू हुआ.

क़ादिर मियां ने बताया कि कैसे-कैसे अहीर चकबन्दी वालों से मिलकर ज़मीनें अपने नाम कर रहा है. पुत्तन पासी का एक रिश्ते का भतीजा था. वह अहीर के साथ मिल गया और दरोगा के सामने उल्टा बयान दिया. पुत्तन के पास कोई आधा बीघा ज़मीन थी. कर्ज़ की वजह से वह अहीर के पास ही थी. भतीजे को वह ज़मीन मिल गई और मरे हुए चाचा का क़र्ज भी अदा नहीं करना पड़ा.

—ऐसा तो होना ही था. विनायक ने छोटा-सा जवाब दिया.

वे सब एक-दूसरे का चेहरा देख रहे थे.

—और कोई बात ? मास्टर ने नगीना से पूछा.

जवाब क़ादिर मियां ने दिया—एक नहीं, एक हज़ार हैं. लखनऊ जाकर अहीर मिल-जुल आया है. लौटा तो देखा, थाने का दरोगा भी सलाम मारता है. अब तो रुतबा इतना हो गया कि...

—तुम लोग इस बीच एक-एक आदमी से मिलकर समझाते रहे हो कि नहीं ? विनायक उत्तेजित हो रहा था.

—मिलता तो मैं रहा, नगीना और इक़बाल भी रहे. लेकिन अड़ियल हैं

सब, बात नहीं समझते. अहीर से हर कोई डरता है. अब की दशहरे में रामलीला के लिए मिरजापुर से उसने पैसा देकर नौटंकी वालों को बुलाया है. लोग तो इतने में ही खुश हो जाएंगे. कोई चूं नहीं करेगा फिर.

—वैसे एक बात है. नगीना को अंधेरे में उम्मीद की एक छोटी-सी किरण दिखाई दे रही थी—अहीर का मुंशी है रामकिशन दास. उसका पोता कलकत्ता से बी. ए. पास कर गांव लौट आया. बड़ा दबंग क़िस्म का है छोकरा. पोते के साथ रामकिशन का झगड़ा इस बात पर हो गया कि अहीर की पूजा में वह अपना मुंह काला कर रहा है.

रामकिशन का बेटा तब मर गया था, जब यह लड़का पेट में सातेक महीने का था. अपने बाप की मौत के बाद वह दुनिया में आया था. उसके जन्म के कोई चारेक महीने बाद बहू ने भी आंखें बन्द कर ली थीं. ले-देकर रामकिशन का एक पोता सिर्फ़ रह गया है. उसे उसने बहुत लाड़-प्यार से पाला और किसी भी तरह की कमी कभी महसूस होने ही नहीं दी. वही लड़का अगर पढ़-लिखकर सयाना बनने के बाद झगड़ा-लड़ाई शुरू करे तो किस का दिल नहीं टूटेगा ? रामकिशन की आंखों में लोग क्रूरता ही देखते रहे हैं, आंसू कभी किसी ने नहीं देखा. अब इस घटना के बाद लोग कहते हैं कि रामकिशन बहुत देर तक बच्चे की तरह सुबकियां भरता रहा है. जिसके लिए जिन्दगी-भर मुंशीगिरी की, ज़िल्लतें उठाई, वही जब आंखें लाल करता है तो कोई नौकरी ही क्यों करे ? यादव के पास जाकर रामकिशन ने कहा भी था—हुज़ूर, उम्र-भर आपका नमक खाता रहा हूं. बदले में जैसा भी बन पड़ता, आपकी ख़िदमत करता रहा हूं. अब हमें छुट्टी दे दो.

लेकिन यादव जानता है कि इतने बरस के तजुर्बेकार मुंशी को हाथ से निकल जाने दिया तो बहुतकुछ हाथ से निकल जाएगा. रामकिशन ने संकट के मौक़ों पर ऐसी सलाहें दी हैं कि अहीर आख़िर उबरता ही रहा है. मुंशी ने तो पीछे की सारी बातें नहीं बताई थीं लेकिन अहीर ने अपने आदमियों से सारी बातें मालूम कर लीं.

मुंशी की अर्ज़ी के जवाब में अहीर ने परम करुणा से प्लावित एक स्निग्ध मुस्कान बिखेरी थी—काम-धाम करने के लिए और भी लोग हैं. आप भगवान का नाम ज़रूर लीजिए लेकिन यहां रहकर ही.

मुंशी फिर कोई जवाब नहीं दे पाया था. बरसों का नमक खाने के बाद इतनी हिम्मत नहीं रह गई थी कि मना कर दे.

अहीर ने फिर रामकिशन के पोते विनय किशन को बुला भेजा था. लेकिन वह कहां आने वाला था ? उसने साफ़ जवाब दे दिया—फ़ुर्सत नहीं है.

नहीं, यह जवाब सुनकर भी नछत्न यादव बिल्कुल नहीं बिगड़ा. चेहरे की लकीरों में कोई तनाव आया ही नहीं. बल्कि कृपानिधान की मुद्रा में थोड़ी देर मुस्कराता ही रहा.

उस दिन शाम को यादव फिर रामकिशन के घर के सामने स्वयं हाजिर हुआ था. मुंशी को हवेली में काम पर लगा आया था. देखा, गोरा-चिट्टा-सा एक लड़का बरामदे में कुर्सी पर बैठ कर लालटेन की रोशनी में एक अंग्रेज़ी किताब पढ़ रहा है. यादव को यही बात समझ में नहीं आती. पढ़ने के लिए हिन्दी किताबों की कमी है क्या ? लेकिन कॉलेज के पढ़े-लिखे लड़के एक तो चाय-सिग्रेट पिएंगे और अंग्रेज़ी किताब पढ़ेंगे.

सामने जाकर यादव ने खंखारा. अपना अस्तित्व ज़ाहिर करने के लिए ऐसा नछत्न यादव को कभी नहीं करना पडना. घर से निकलते ही लोग हाथ जोड़कर नमस्कार

करना शुरू कर देते हैं. हर दस कदम पर सर झुकाने वाला कोई-न-कोई मिल ही जाता है. यादव हर अभिवादन का जवाब भी नहीं देता. आदमी का वज़न देख कर ही चेहरे की पेशियों को ढीली करता या खींच लेता. यह एक नया तजुर्बा था. लेकिन एक बीस-बाईस साल के छोकरे के सामने यादव ने अपने को थोड़ा कमजोर ही महसूस किया.

विनय ने गर्दन ऊपर की और अंधेरे में खड़े आदमी को पहचानने की कोशिश की.

—मुबारकबाद देने आया हूं. इस गांव के पहले बी. ए. पास तुम हो. यादव कहते हुए नजदीक आया.

तब तक रोशनी में चेहरा स्पष्ट दिखाई दे गया था. विनय बोला—धन्यवाद. फिर कुर्सी खिसका दी — बैठिए.

नक्षत्र यादव बैठिए कहने भर से आज तक कहां बैठा है? इतनी फुर्सत भी तो नहीं रहती. फुर्सत से भी बड़ा सवाल है रुतबे का. लिहाजा बाहर कहीं बैठने का सवाल ही नहीं पैदा होता.

लेकिन यादव बैठ गया. हाथ की छड़ी को साथ वाले खंभे से टिका दिया. यहां भी एक कानूनी व्यक्ति कम हो गया. नक्षत्र यादव के सामने कुर्सी पर बैठने की हिमाक़त कोई आज तक कर सका है क्या ? अदब तो यही कहता है, यादव को पूरे सम्मान से कुर्सी पर बैठाओ और खुद हाथ जोड़कर सामने खड़े रहो. गांव का इतना बड़ा रईस मेहरबानी करके यहां आया है, यह तेरे सात पुरखों के पुण्य का प्रताप होगा.

यादव मुस्कराया —और बोला — अब कैसा लगता है गांव ?

इस तरह के फालतू सवालों का जवाब क्या हो सकता है, विनय सोच रहा था. आख़िर में उसे कहने लायक इतना ही मिला था —ठहरिए चाय पिलाता हूं आपको.

—च ऽ च ऽ ऽ ऽ. भई आजकल पीने वाले चाय ही पीते हैं लेकिन मैं कोई आज का आदमी थोड़े ही हूं. चाय अभी तक तो चखी नहीं. थोड़े से और दिन बाक़ी रह गए हैं. दूध-दही मिल ही जाएंगे. ख़ैर, मैं एक ख़ास काम से आया था तुम्हारे पास.

विनय चौंका. नक्षत्र यादव का ख़ास काम जिन लोगों से पड़ता है, उनका लठैत होना जरूरी है.

—भई तुम ठहरे अपने आदमी. यादव ने कुर्सी खिसका ली और बड़े इत्मीनान से बोलना शुरू किया—कलकत्ते में मेरा साला तेल की एक मिल खोलना चाह रहा है. खोलना क्या चाह रहा है, खरीदनी है. जयपुर के एक मारवाड़ी की मिल थी. पिछले महीने हार्ट अटैक से वह चले गए. यादव ने वाक्य के अंतिम शब्दों के साथ एक छोटी-सी सहानुभूति भी प्रकट की—सब ईश्वर की लीला है भैय्या, यहां पर आज जो खेल-कूद रहे हैं, वह कल सबको रुलाता छोड़कर नहीं जाएंगे, इसकी कोई गारंटी थोड़े ही है ?

इस तरह के बंधे-बधाए सहानुभूति के वाक्य इतनी बार सुनने पड़ते हैं कि अब ये सुनकर दिल को कोई फ़र्क़ ही नहीं पड़ता. विनय को तो नहीं ही पड़ा था.

ख़ैर, यादव असली सिलसिले में लौट आया—हां, भई, बात यह है कि चाहे मैं हूं चाहे अपने साले साहब, आख़िर हैं तो हम लोग पुराने जमाने के ही आदमी. आज-कल दुनिया बदल गई और हम वहीं रह गए जहां हमारे बाप-दादा हमें छोड़कर गए थे...

सेकेण्ड-भर के लिए विनय ने महसूस किया कि अंदर का पित्त जल रहा है. यादवों को बापदादा जहां छोड़कर जाते हैं, वहां सिर्फ़ दो कटोरे और एक थाली होती

है, बस. फिर सारी दुनिया ही मुट्ठी में चली आती है. ख़ैर, उसने अपने आपको झटका-सा दिया और तय पा लिया कि अभी यादव की बात सुननी है.

यादव बोला – तुम लोग आजकल के पढ़े-लिखे नौजवान हो, काबलियत ही कितनी अलग है. फर्राटे-से अंग्रेजी में बोल सकते हो, लिख-पढ़ सकते हो. तो भई साले साहब ने बहुत दबाव डाला कि मिल को हम खरीद ही लें. वैसे मुझे क्या ? मैं तो जितना है, उसीसे ख़ूब संतुष्ट हूं, दोनों टैम रोटी मिल जाती है और पहनने को कपड़े भी. और रह ही कितने दिन गए हैं. तिजोरी भर कर ले थोड़े ही जाना है.

विनय के जी मे आया था कि इतने प्रभावशाली भाषण के बाद ताली बजा ही देनी चाहिए. उसे अब यक़ीन हो गया कि नछत्र यादव में लोगों को यक़ीन दिलाने की अद्भुत क्षमता है. ख़ैर, उसने ताली नहीं बजायी.

यादव बोला— तो भई, मैं चाहता हूं, तुम कलकत्ता चले जाओ और मिल को हम ख़रीद लें, हां. मैनेजरी तुम्हें ही करनी पड़ेगी. नहीं बाबा, तुम्हारे रहते और किसी पर मैं भरोसा नही कर सकता. अपने साले साहब पर भी नहीं. वो वैसे आते-जाते रहेंगे लेकिन चलेगी सिर्फ़ तुम्हारी.

विनय ने जम्हाई ली और बोलो— मैं मैनेजर बना तो फिर आपकी मिल का भट्ठा ही बैठ गया समझिए.

नक्षत्र यादव साफ-सुथरे रास्ते पर चलते हुए एकदम से खड्ड में गया. सामने अगर कोई जहरीला काला नाग भी फन उठाए मिलता, वह इतना नहीं चौंकता. बोला—तुम तो हंसी करते हो भैया.

—नही, सच है, वैसे भी मिल-विल की मैनेजरी की तबीयत होती ही नहीं. मेरे बाबा करते है वही बहुत है.

पुराणो मे दैत्यों के अट्टहास का जो वर्णन है, उसी तरह यादव हंसता रहा. दैत्यों के अलावा किसी और से विनय तुलना नही कर पा रहा था.

फिर हंसी रोककर यादव एकदम चुप हो गया. गर्दन हिलाते हुए पूछा—फिर सन्यास वगैरह लेकर जंगल-वगल जाने का तो इरादा नही है ! सुना है, मेरे बाबा के बाप साधू होकर कही चले गए थे. कही ऐसा तो नहीं कि उन्होंने ही तुममें दुबारा जन्म ले लिया ?

—आप चाय न सही, पानी ज़रूर पीकर जाइए. नक्षत्र यादव जैसे प्रतापी आदमी के लिए इससे बढ़कर अपमानजनक शब्द नही हो सकते, लेकिन इसके बावजूद उसने अपने चेहरे पर शिकन तक नही आने दी.

विनय चादी के एक गिलास मे पानी लेकर लौटा तो उसने पी भी लिया. फिर उठ खड़ा हुआ-सोचो, सोच के देखो. कई बार होता यही है कि एकदम से दिमाग को कुछ नहीं सूझता और हम एक ग़लत फ़ैसला कर लेते है कोई जल्दी नही है. आराम से सोचो और हफ्ते-दसदिन बाद कभी फिर इधर से निकलते हुए मै ही पूछ लूगा. तुम तो आओगे नहीं गरीब की कुटिया मे. अच्छा भई, चलता हूं फिर.

सामने अन्धेरा था, यादव उसमें अदृश्य हो गया. विनय को लगा, यह आदमी गांव का रईस न होकर अगर शहर का अभिनेता होता, उसकी इज्ज़त करनी पड़ती. एक-एक शब्द कहने का ढग, आंखें मटकाने का तरीका और उठने-बैठने के क़ायदे बिल्कुल दुरुस्त हैं. कही जैसे कोई गलती हो ही नहीं सकती.

अधेरे के बावजूद कुछ देर तक चलता हुआ यादव दिखाई पड़ा था. उसके सफेद कपड़े दिखाई पड रहे थे. विनय ने फिर छोड़ी हुई किताब उठाई और बन्द किया हुआ पन्ना ढूंढने लगा.

••

नगीना ने बिना सास लिए पूरी कहानी सुना दी बोला—पटाखा है, एकदम पटाखा कभी भसम करके रख देगा सब लेकिन···

विनायक ने तसल्ली दी—लेकिन की कोई बात नही है यादव इस लडके को डरा सकता है लेकिन मार नही देगा अभी रामकिशन की जरूरत उसकी बनी हुई है

नद्दू ने गर्दन हिलाई—यह हुई न फिर असली बात···

—मै उससे जाकर शाम को कभी मिल आऊँगा फिर आगे तुम लोग उस हिसाब से चलते रहना विनायक बोला

कादिर मिया ने सर पर उग आए पसीने को अगोछे से पोछा अगोछे की जीर्णता इतनी है कि विनायक उस बूढे चेहरे की लकीरो मे भविष्य खोजने लगा भविष्य की जानकारी ऐसे नही मिलती, सिर्फ आने वाली तकलीफो के बारे मे पता चल जाता है यह सत्य मास्टर जानता है, समझता भी है लेकिन लगता है कादिर मिया का जैसे कोई अन्त है ही नही न आदि, न अन्त

मिया ने सदानद हलवाई का जिक्र शुरू किया— अहीर ने मिठाई खाई थी डेढ किलो गरम जलेबी सुबह के वक्त ग्राहक जलेबी खाने और चाय पीने आते है उस वक्त थोडी भीड भी हो जाती है वैसे भी इस इलाके मे सदानद की जलेबी मशहूर है शादी वगैरह मे लोग पहले से 'आर्डर' की मिठाई बनवा लेते है अहीर का आदमी आया और फरमान रख दी डेढ किलो जलेबी बनाने मे आखिर टैम तो लगना ही है, जब सामने और भी खाने वाले बैठे हो लेकिन हलवाई अहीर का मिजाज जानता है, चूल्हे के कोयले की तरह सो, औरो को बिठाकर पहले डेढ किलो जलेबी बना दी डेढ किलो जलेबी के नौ रुपये बनते है लेने वाले आदमी ने पैसे गिनकर दिए और चला गया कोई पन्द्रह मिनट बाद वही आदमी वापस आया और मिठाई के दोने को हलवाई के मुह पर दे मारा—अब से जाकर पखाना साफ करना, समझे ? साले पैसे लेते हो गर्दन काटने के भाव और जो मिठाई दी, मक्खी भी नही भिनभिनाएगी इस पर

हलवाई मजबूत किस्म का आदमी है ऐसे पिद्दी किस्म के प्यादो को चुटकीभर मे ठडा भी कर सकता है लेकिन उसने सिर्फ गर्दन उठाकर देख-भर लिया फिर बगल मे पडी सदूकची मे से नौ रुपए निकालकर सामने फेक दिए—अब इस पे बैठकर अडे देना, मिठाई खाने के लिए तरीका सीखना पडता है, समझे ?

उसने इस सवाल का मतलब भले ही न समझा हो अहीर समझ गया था शाम को हवाखोरी मे निकला तो हलवाई की दूकान के सामने रुक गया—सुनने मे आता है सदानद हलवाई अब बम्बई मे होटल बना रहा है क्यो भई ?

इस व्यग्य का सिर्फ एक ही अर्थ हो सकता है कारण भी हलवाई बखूबी इतना समझता है बोला—गाव वालो को मिठाई खाने की आदत कहा है ? उन्हे भेली गुड और चना चाहिए दूकानदारी नही ही चली तो शायद चला ही जाऊ

—आदत ? अहीर हस पडा यह बात मै भी कहता हू आजकल लोग शहर आ-जा रहे है सिग्रेट, चाय, विलायती दारू पीते है मिठाई-विठाई अब वे कहा पूछेगे लेकिन हम तो ठहरे पुराने आदमी मिठाई खाने का जी करेगा तो सिर्फ मिठाई ही खाएगे किसी और चीज से भुला नही सकते, हलवाई

नक्षत्रराय फिर चला गया था बात शायद यही खत्म करनी थी या हाथ मे वक्त नही था

हलवाई मिठाई बनाते-बनाते भी समझ गया कि हवा का रुख किधर जा रहा

है. अहीर बरसों से यही मिठाई निगलता रहा है. अब अगर गले के नीचे यहां की जलेबी नहीं उतरती तो कसूर जलेबी का नहीं, किसी और ही मसले का है, जिसका पता अभी नहीं है.

हलवाई के पास चार बीघे का खेत भी है. गेहूं पक गया था, सिर्फ़ कटने-भर की देर थी. एक रात पूरा खेत जलकर राख हो गया था. जितना नहीं जला था अहीर के लठैतों ने काट लिया.

फिर पुलिस वालों के यहां रपट लिखाई गई लेकिन काज़ी की मर्ज़ी न हो तो एक पत्ता भी तो नहीं हिल सकता, मामला वहीं रफ़ा-दफ़ा हो गया. हलवाई दरोगा से पूछता तो वह अपने छेदों वाले दांतों के बीच से जवाब देता—भई, कानून सिर्फ़ अपना रास्ता पहचानता है. हम तो उतना ही कर सकते है, जितनी इजाज़त कानून देता है. बाकी अपने घर से तो तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर सकते. जब भी हलवाई ने बात की, खैनी चूसते हुए दरोगा ने एक ही जवाब दिया. अब हलवाई कहता है, इलाहाबाद जाकर कचहरी में मुक़दमा लड़ेगा.

—मुक़दमा लड़ेगा ? तबाही शायद बिचारे की अभी पूरी तरह नही हुई. तुम लोग कभी समझा तो सकते हो, विनायक ने नगीना से कहा.

—कोई साला सुनता नहीं, मास्टर. लोग सोचते है, चुनाव में हम वोट मांगने आएगे सो, पहले से मक्खन मार रहे है. नगीना बोला.

—ठीक ही सोचते है. विनायक बोला—गांव वाले ज्तोतिष थोड़े ही करते है जो तुम्हारी मंशा जाते ही समझ लेंगे. मिलो-जुलो, बैठो. भई, वक्त तो थोड़ा लगेगा ही. यादव के जो लठैत हैं न, देर मे ही उन्हे भी एक दिन समझ में ज़रूर आएगा. देखना, एक बार अगर बात दिमाग में बैठ गई तो फिर ये ही लोग अंगद के पांव की तरह अड़ जाएगे. बल्कि कहो चट्टान की तरह.

नदू, क़ादिर मियाँ और नगीना को कुछ-कुछ यकीन आया था. लेकिन सियाराम, इक़बाल और लालचंद पूरी तरह यकीन नहीं कर सके थे. वे खाली-सी निगाहों से मास्टर को घूर रहे थे.

—मुरली नहीं मरा. विनायक बोला—देखना, मुंशी का यह पोता ही एक दिन मुरली की जगह खड़ा होगा. तुम लोग सोच रहे होगे, ये सब सिर्फ़ दिली खयाल है, जज़्बात हैं. होंगे भी, लेकिन सच भी यही है. जो आदमी तुम लोगों से इतनी मुहब्बत करता था, वह बाहर कहां जा सकता है.

●●

शाम को क़ादिर मियां के साथ विनायक लौट रहा था. अहीर चबूतरे पर बैठकर हुक्का गुड़गुड़ा रहा था. चार-छह तेलू क़िस्म के लोग प्रवचन सुनने की मुद्रा में खड़े थे.

—कौन हो भई, क़ादिर हो क्या ? नक्षत्रराय ने आवाज़ दी.

क़ादिर मियां रुका—संग में मास्टर है. इलाहाबाद का सरकारी मास्टर.

तब तक वे लोग चबूतरे के पास आ गए थे.

नक्षत्रराय ने स्वागत किया—यही एक पेशा दुनिया में रह गया, जिसके लिए मन में अब भी इज़्ज़त है. हम तो भई, इस शिक्षादान से ज्यादा क़ीमती कुछ और समझते ही नहीं. अरे आप खड़े क्यों हैं ? बैठिए-बैठिए, सामने चार-छह कुर्सियाँ पडी थीं लेकिन सभी खाली. सिर्फ़ एक ही घिरी हुई थी. नक्षत्रराय वाली. विनायक बैठ गया.

—नहीं साब, घड़ी मत देखिए. शहरियों की यही आदत मुझे पसन्द नहीं है. हमेशा पैरों में पहिया लगाए फिरेंगे. भई, कहीं मिलो-बैठो. हुक्का-पानी पियो. तब न

कुछ बात बनती है.

विनायक निस्पृह-सा रहा.

—तो जनाब, पसन्द आया गरीबों का यह गांव ?

—पसंद-नापसंद का सवाल कहां है ? हिन्दुस्तान के सारे गांव लगभग एक से ही हैं. जहां मुहब्बत हो गई, वही गांव पसंद आ गया. फ़र्क़ इतना है कि किसी गांव में जोंक ज्यादा होती हैं और किसी गांव में कम.

—वाह साब, खूब कहा आपने. यादव नली के सिरे को मुंह में लगाकर गुड़गुड़ाता है. चिलम की आग थोड़ी और सुर्ख होती है तो उसकी रोशनी में राय का आबनूसी चेहरा दिखाई देता है. रामायण में वर्णित विभीषण का चेहरा भी शायद ऐसा ही है.

यादव ने चार-छह कश के बाद नली फिर हथेली में उतार ली— आप ज्ञानी आदमी हैं. गांव भी देख ही लिया. कुछ हम लोगों को भी बताइए.

—देख कहां लिया ? देख रहा हूं. थोड़ा समझ लेने दीजिए. अपने आप ही फिर बता दूंगा.

—हां याद आया, इलाहाबाद से ही एक मास्टर आता था. क्या नाम था भई ? फिर सोचने के अंदाज़ में कोई पांचेक सेकेण्ड के लिए आंखें बन्द कर लीं और बोला—हां, नाम शायद मुरली-वुरली कुछ था. लोग कहते हैं, आदमी शरीफ़ था. कहते हैं तो रहा ही होगा, लेकिन साब ऊपर वाले की मर्जी तो देखिए. बड़ी बेरहमी से मारा गया मास्टर. कौन जानता है, कल क्या होने वाला है ?

विनायक उठ खड़ा हुआ —ऊपर वाले से तो कभी मुलाकात नहीं हुई लेकिन नीचे वालों की मर्जी हम जरूर जानते हैं. इसलिए पता है कि कल क्या होने वाला है ! आप ठहरे धार्मिक आदमी. लोग इस तारीफ़ की चर्चा करते रहते हैं. कंस भी मारा गया था. यह कहानी आपने सुनी जरूर होगी.

मुलाकात इतनी ही थी.

काफ़ी दूर चले जाने के बाद ही कादिर मियां कुछ बोल पाया—अहीर को मालूम है सबकुछ. आज की बात से यकीन हो गया. बात पर बौखलाना मियां की आदत नहीं है. लेकिन अंधेरे के बावजूद विनायक को लगा कि उसके चेहरे में तनाव है. चेहरे की पेशियां कड़क-सी रही हैं.

—क्या सोच रहे हो मियां ?

—जो तुम्हारे दिमाग में है.

—हूं ? अहीर अपने नाम के साथ राय लिखवाकर, देखना, आंगन पर शामियाना लगाएगा. पूड़ी-कचौड़ी और लड्डू बांटेगा दावत में.

—सब भुक्खड़ हैं न, गिद्ध की तरह टूट पड़ेंगे,

—भूखे आदमी को इज्जत की परवाह हो सकती है क्या ?

चुप्पी.

—अच्छा मियां, तुम लोग एक नौटंकी नहीं खोल सकते ?

—नहीं. क़ादिर की आवाज़ दृढ़ थी—हम लोगों की तिजोरियों में खजाना भरा दिखता है क्या तुम्हें ?

—चिढ़ गए न ?

चुप्पी.

—सिर्फ़ तख्त बिछाकर उसके ऊपर दरी डाल दो. हां, किराए में दो गैस की लाइटें जरूर मंगानी पड़ेंगी. फिर पाउडर और रोली चेहरे पर पोतकर नचैया-गवैया

बन सकते हो. जो कपड़े तुम लोगों के पास हैं, उसी से 'कंस वध' की नौटंकी हो सकती है. सिर्फ कंस के लिए ही तो किराए पर कपड़े लेने होंगे. बाक़ी लोग तो तुम्हारी ही तरह थे. कुल पांच-सात रुपए का खर्चा है. पैसे मैं दूंगा. तुम लोग इसका इंतज़ाम कर लो.

क़ादिर मियां उत्साहित नहीं हुआ.

— इससे फ़ायदा होगा, मियां. पासा इससे भी पलट सकता है.

—अच्छा ! काफी देर बाद क़ादिर कुछ बोला.

—जब एक चले आ रहे तरीके को बदलना होता है, उसमें बंदूक के अलावा बहुतकुछ काम आता है. आजमा कर देख तो लो.

वे लोग घर तक आ गए थे.

सामने नंदू था. सियाराम, नगीना, इक़बाल वगैरह भी.

नंदू फिर अंदर घुसकर दरी बिछाने लगा. बाजरे की रोटी और आलू की सब्ज़ी के साथ उन लोगों को इकट्ठे महाभोज का आनंद लेना है.

●●

- खाना खाकर विनायक ने डकारें लीं और बाहर निकलने लगा.

नगीना ने रोका—कहां जाते हो, मास्टर.

—अभी आ जाऊंगा आधे घण्टे में.

क़ादिर मियां हंसा-- खुदा न करे ऐसा हो. लेकिन अहीर की धमकी याद नहीं है ? आधा घण्टा क्या, कभी भी नहीं लौट सकते हो. चलो साथ मैं भी चलता हूं. मियां अंगोछे से अपने गीले हाथ पोंछ रहा था.

—मुंशी के पोते से बात करनी थी. तुम साथ चलोगे तो काम थोडा बिगड़ ही जाएगा. चलो, मुझे एक लाठी दे दो.

सब ठठाकर हंस पड़े.

क़ादिर बोला— खूब कहा तुमने, मास्टर. मास्टरी करना और लाठी चलाना एक बात थोड़े ही है ?

खैर, आखिर में तय हुआ कि क़ादिर और नगीना साथ जाएगे. वे लोग साथ जाएगे लेकिन मुंशी के घर तक न जाकर कुछ फासले पर ही रुक जाएंगे. विनायक ने ऐतराज नहीं किया.

●●

नक्षत्र यादव के सर के दोनों तरफ़ की नसें झनझना रही थी. हुक्का गुड़गुड़ा रहा था लेकिन लगता था, धुआं कसैला होकर गले में घाव-सा बना रहा है. बाहर अंधेरा है, सामने सिर्फ एक दिल्ली से खरीदा हुआ नक्काशीदार लैम्प है. इस वक्त अंदर जाकर आराम किया जा सकता था लेकिन राहत उससे भी नहीं मिलती. रात हो चुकी है. यादव ने कलाई में बंधी घडी का रेडियम डायल देखा. फिर सामने खड़े कृपा-प्रार्थियों को जाने की आज्ञा दे दी सिर्फ नौकर रह गया था और एक लठैत किस्म का आदमी, जो वास्तव में लठैत नहीं भी हो सकता था. नौकर चिलम के पास उकडू बैठ कर बीच-बीच में फूंक मार रहा था.

यादव अंधेरे को देखता है और लगता है, एक यही चीज रह गई है जिसे कोई छू नहीं सकता. इसके अंदर रहा जा सकता है लेकिन छूने की इजाज़त नहीं है. इस वक्त थोड़ी-सी हवा चलती तो शायद दिमाग की नसों का दर्द इतनी तकलीफ न देता.

आजकल पुलिस वाले माल तो खा जाते हैं लेकिन बात सुनने की फुर्सत उन्हें

नहीं है. होती तो यादव के दिमाग की नसों में कम-से-कम यह तकलीफ़ न होती. वक्त आख़िर इतनी तेज़ी से क्यों भागता है ? नक्षत्र यादव अगर नक्षत्र राय, रईस कहलाता है, थोड़ी-बहुत ज़मीनें बन जाती हैं तो यक्ष का भण्डार क्या घट जाएगा ? अब पुराना ज़माना नहीं है वर्ना गांव के रईस होने की बजाय जमींदार भी हुआ जा सकता था. फिर शायद सरकार बहादुर की तरफ़ से रायसाहब का खिताब अपने आप ही मिल जाता. यादव सिर्फ़ एक बात जानता है. जिसके पास पौरुष है, सबकुछ है उसके पास. नहीं तो एक मामूली ग्वाले का लड़का, नछित्तर हवेली बनाकर उसका हकदार नहीं बन सकता था. नछित्तर ग्वाला फिर नक्षत्र यादव बना.

नक्षत्र मन-ही-मन हंसता है. टुकड़े फेंको तो अपना ही क्यों, मरे हुए बाप का भी नाम बदल सकता है. चिलम के साथ बैठा नौकर ऊंघने लगा था. यादव को याद आया, देर से कोई कश खींचा ही नहीं है. चिलम का तम्बाकू भी अब जलकर बुझने लगा था. नहीं, अब उठना ही पड़ेगा. यादव ने नौकर को नली पकड़ाई और अंदर घुस गया. आज भूख बिल्कुल नहीं है, सिर्फ़ गिलास-भर पानी पीकर बिस्तर पर पसर जाएगा. सर में जैसा दर्द हो रहा है, उससे नींद नहीं भी आ सकती है. न आई तो एक और रात सड़े हुए आलू-टमाटर के गोदाम में बैठने जैसी काटनी होगी. शायद इसके अलावा कोई और चारा भी नहीं है.

●●

क़ादिर मियां और नगीना ने देखा, मुंशी का पोता कोई घण्टे-भर बाद मास्टर को छोड़ने बाहर के फाटक तक आया है. फाटक से कुछ हटकर रास्ता है. रास्ते के बाद एक खड्ड है. बरसात में यहां पानी और मच्छर इकट्ठा होते हैं. खड्ड के बाद तीन-चार नीम के पुराने पेड़ और एक पाकड़ है. पाकड़ के पास क़ादिर मियां अंगोछा बिछाकर आ लेटा था और बगल में पाल्थी मारे नगीना बैठा था.

क़ादिर मियां ने सुनने की कोशिश की लेकिन फ़ासला ज्यादा था और आवाज़ कम. बस आकृतियां-भर दिखाई दे रही थीं. फाटक पर दस मिनट हो गए थे और क़ादिर मियां उतावला हो रहा था.

विनायक कुछ आगे बढ़ कर आया तो वे लोग भी साथ हो लिए. कादिर कुछ पूछने से पहले मास्टर के चेहरे की लकीरें पढ़ लेना चाहता था. अंधेरे में चेहरा कहां से दिखाई पड़ता ! उसने बीड़ी सुलगाने के बहाने माचिस जलाई लेकिन बस चेहरा भर दिखाई पड़ा. कुछ समझ में नहीं आया. फिर मियां ने बीड़ी सुलगाई और खंखार कर गला साफ़ किया, एक कश खींचा. अब पूछा जा सकता है. बोला—आधे घण्टे में नहीं लौट आए मास्टर. मैं तो समझ रहा था, मुंशी के यहां कोई पोती भी होगी.... फिर वह हंसता और खांसता रहा.

विनायक ने मिनट-भर का वक्त लिया मियां खांसना न शुरू करता तो इस एक मिनट की ज़रूरत नहीं होती. कई बार मना भी कर चुका हूं, जब इतनी खांसी है, बीड़ी मत पियो. लेकिन यही एक नशा है, जो कोशिश करने के बावजूद मियां छोड़ नहीं सका.

—बड़ा तेज लड़का है. विनायक बोला—कलकत्ते में वजीफे के साथ पढ़ाई करता रहा. कहता है, पढ़ाई तो कर नहीं पाया, गोले-बारूद का इस्तेमाल ज़रूर सीख गया. कलकत्ता रहना अब उसके लिए खतरनाक है, वर्ना इतनी जल्दी गांव वापस नहीं लौटता.

—मुंशी घर नहीं था ? नगीना ने पूछा.

—था. लेकिन शाम के बाद बोतल के साथ अपने सोने के कमरे में चला जाता

है. फिर दुनिया में क्या होता है, उसे पता ही नहीं रहता. लड़का कह रहा था, मुंशी-आइन कोई तीनेक बरस पहले हैजे से रात-भर के अंदर सफ़ेद होकर ख़त्म हो गई थी. तब से मुंशी की पीने की लत और भी बढ़ गई है. पहले भी वैष्णव नहीं था लेकिन अब बोतल न हो तो महाभारत हो जाए.

—अहीर को लूट भी रहा है खूब. नगीना बोला.

विनायक ने याद दिलाया—मुंशी के पोते की कलकत्ते वाली बात अपने तक ही रखना. बड़ा नाज़ुक मामला है.

क़ादिर मियां ने कश लेकर गर्दन हिला दी.

नगीना ने 'हां' कही.

—मैंने कहा था न, मुरली मर नहीं सकता. समझ लेना, यही लड़का मुरली मास्टर है. आदमी वही है, सिर्फ़ नाम बदला हुआ.

वे लोग नंदू के छप्पर तक पहुंचे तो सियाराम, इक़बाल, लालचन्द वग़ैरह जा चुके थे. बाहर नंदू इंतज़ार में बैठा हुआ था.

—तुम लोगों को वहां जाने की ज़रूरत नहीं है. विनायक बोला—जब तक बातें छुपी रहती हैं, हमारे लिए अच्छा ही है. फिर जब खुल जाएंगी तो उस वक्त के हालात के मुताबिक सोचेंगे. वही यहां आता रहेगा. फिर मैं बीच-बीच में आकर मिलता रहूंगा. तुम लोग सिर्फ़ एक-एक आदमी से मिलना-जुलना शुरू कर दो. जो लोग तुम्हारा यक़ीन नहीं करते हैं, वही सबसे ज्यादा यक़ीन भी करेंगे.

क़ादिर मियां ने हामी भरी. नंदू और नगीना चुप थे. सिर्फ़ बातें सुन रहे थे.

—सुबह की पहली बस से निकल जाऊंगा. हां, क़ादिर मियां, डाकखाने वालों का शुक्रिया अदा करने मुझे जाना ही पड़ेगा. आखिर तुम्हारा ख़त भी उन लोगों ने पहुंचा ही दिया था. तुम ऐसा करना. पोस्टकार्ड की बजाय लिफ़ाफ़े में डाल कर ख़त भेजना. विनायक ने कुर्ते की जेब से एक पांच का पत्ता निकाल लिया—लिफ़ाफ़े वग़ैरह ख़रीदने के काम आ जाएंगे.

क़ादिर मियां पीछे हट गया—यह क्या करते हो, मास्टर ? तुम उन लोगों में से थोड़े ही हो जो ग़रीब को नंगा कर मज़े लूटते हैं ! मियां की आवाज़ में शिकायत शायद हो सकती थी लेकिन नहीं थी. एक गहरा-सा दर्द था.

विनायक भी और कुछ बोल नहीं सका था.

इसके बाद बोला भी क्या जा सकता है ?

वे लोग फिर अंधेरे में निकल गए थे. रात गहरी हो गई थी. नंदू ने मास्टर के लिए बिस्तर को झाड़कर सोने लायक कर दिया था. अपने लिए उसने ज़मीन पर दरी बिछा ली थी. कमरे में अंधेरा था. कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था.

●●

दरवाज़ा खोलते ही विनायक को एक पोस्टकार्ड मिला. थोड़े फ़ासले पर एक मनीऑर्डर की रसीद भी थी. पिछले हफ्ते बरेली में मां को पैसे भेजे थे, उसकी रसीद. पोस्टकार्ड छोटे-छोटे अक्षरों से भरा हुआ था. मां ने लिखा था. एक अंतर्देशीय में जितने

शब्द आ सकते हैं, उतने ही पोस्टकार्ड में भी आए होंगे.

झूसी से लौटकर सीधे स्कूल चला गया था विनायक. अभी चार बजे कमरे में वापस आया तो बदन थक कर चूर लग रहा था. प्यास भी थी. सुराही उंडेलने लगा तो पता चला, पानी बस गिलास-भर का ही होगा. पानी के साथ एक मरी हुई छिपकली भी निकली.

उठ कर वह चुपचाप बिस्तर पर आ गया. फिर पोस्टकार्ड को उठाया. पढ़ने में थोड़ा वक्त लगा लेकिन कोई नई बात नहीं थी. रद्दो अब काफ़ी सयानी हो गई है और कुतबखाने के एक नाच सिखाने वाले मास्टर ने नींद हराम कर रखी है. मास्टर के बीवी और तीन बच्चे हैं.

फिर बालेश्वर की बात.

आजकल वह कई-कई रात लगातार बाहर रहता है. शायद गांजे-भांग का कोई ग़ैर क़ानूनी धंधा भी कर रहा है. अपनी मां को महीने के आख़िर में सौ-पचास रुपए दे भी देता है. कई दफ़ा घर लौटता है तो उसके पास घड़ियां, शराब की बोतलें वग़ैरह होती हैं. एक घड़ी उसने रद्दो को दी है. कुंती झगड़ालू ज़रूर है लेकिन अंदर से भोली भी है. उसे अब ख़ुशी है कि इतने दिनों बाद बालेश्वर कुछ कमाने लायक बन गया.

बालेश्वर की और भी बातें होंगी, जो मां ने नहीं लिखीं. उन्हें मालूम भी नहीं होंगी. रद्दो के बारे में जो बातें लिखीं, वे नई नहीं हैं. विनायक जब बरेली में था, तभी ये बातें शुरू हुई थीं. रद्दो को नाच-गाने का कभी शौक नहीं था, सिवाय फिल्मी गाने गुनगुनाने के. खत्रियान मुहल्ले के एक पंसारी की बेटी अनीता कभी उसके स्कूल में पढ़ती थी. अनीता ही रद्दो को अपने संग नाच सीखने के स्कूल में ले गई थी. नाच रद्दो को न तो सीखना था, न दिलचस्पी थी. लेकिन अनीता के साथ चली गई थी. बस यूं ही.

यह मामले की शुरूआत है.

विनायक को सरदार हरबन्स सिंह ने यह इत्तिला दी थी. एक दफ़ा शायद उसकी दूकान में नचैय्या मास्टर के साथ वह दुपट्टा वग़ैरह कुछ ख़रीदने गई थी. सरदार है तजुर्बेकार आदमी. लड़की की आंखें देखते ही समझ गया कि नदी में बाढ़ आ चुकी है.

विनायक ने पहले रद्दो को समझाया था. वह सिर्फ़ चुप थी. सर झुकाए इस तरह खड़ी रही, जैसे शापग्रस्त अहल्या हो. पत्थर की एक नारी मूर्ति.

हरबन्स जगतनारायण की वजह से दुखी तो था लेकिन विनायक से कभी भी इज़्ज़त पर आंच आने लायक एक भी लफ्ज नहीं कहा था. मन में उसके लिए थोड़ी-बहुत मुहब्बत जम आई थी. फिर डेढ़ेक महीने बाद सरदार ने इत्तिला दी कि बड़े बाजार के करोड़ी चाट वाले के यहां मास्टर के साथ लड़की चाट खा रही थी. हरबन्स सिंह कोई लिहाज़ रखकर किसी से बात नहीं करता. ऐसी आदत ही नहीं है. लेकिन इस मामले को लेकर उसने वाक़ई बहुत आहिस्ते से बात की थी. कुछ-कुछ अपने घर का मामला समझ कर.

रात को विनायक दवाख़ाने से लौटा और रद्दो से लगातार पांच मिनट तक सवाल करता रहा. इतनी देर तक एक ही बात करने की आदत उसकी नहीं है. लेकिन तमाम सवाल उसने इकट्ठे कर लिए थे.

रद्दो ने जवाब नहीं दिया था. उसी तरह सर झुकाए खड़ी थी. पहले दिन की तरह.

– एक सवाल करता हूं. सीधा जवाब देना. तू शादी करेगी उससे ?

विनायक को इच्छा हुई कि एक चांटा रसीद कर दे. रद्दो लड़की न होती तो यही शायद करता. नफ़रत से सारा जिस्म जल-सा रहा था. लेकिन नफ़रत थी किसके लिए ? रद्दो के लिए ? उस मास्टर के लिए ? या उसकी शादी न कर पाने की मजबूरी के लिए ?

एकदम से फिर आवाज़ में करुणा उतर आई थी. बहन के माथे को उसने कभी नही चूमा था. अब चूम लिया. रद्दो की आंखों में पानी था.

—मास्टर से तू प्रेम करती है कि नहीं, पहले इतना अपने आप से पूछकर पता कर ले. उसके बीवी-बच्चे जो हैं, सो तो है ही लेकिन उससे भी बड़ी बात यह है कि उसकी बीवी के बाद तू ही उसकी ज़िन्दगी की एकमात्र लड़की नहीं है. सारी इत्तिलाएं तुझे दे दीं. शायद कुछ तुझे मालूम भी रहा होगा और मास्टर ने सहानुभूति बटोरने के लिए उन इत्तिलाओं का एक ऐसा तर्जुमा पेश किया होगा, जिससे ज़ाहिर होता है, दुनिया ने हमेशा ही उसके साथ सिर्फ़ मज़ाक किया है. उसे लगातार धोखा दिया है. अब तू सोचकर बताना. जो तू चाहेगी, वही होगा. विनायक फिर छत से उतर आया था. ज़ीना बहुत लम्बा लगा था और नीचे की तरफ़ दाहिना पैर इस तरह बेक़ायदे गिरा था कि वह बस गिरते-गिरते बचा था.

इसके बाद भी हरबन्स सिंह से मुलाक़ात हुई है लेकिन इस सिलसिले में वह कुछ नही बोला था. सिलसिले को बढाना उसे फिजूल लगा होगा.

मां का ख़त पढ़ लिया तो रद्दो के लिए मन में गुस्सा नही आया. हर ख़त में मां लिखती हैं कि रद्दो के लिए कोई लड़का ढूढो. ढूढ़ता वह रहा है लेकिन नाच सिखाने वाले से जो बेहतर मिलते हैं, उनकी शर्तें पूरी नही हो सकतीं. लड़को का बी. ए. पास होना, नक़द बीसेक हजार के साथ जरूरी है. ये दोनों ही शर्तें ऐसी हैं कि कोई चाहे कितना हाथ-पांव मार ले, पूरी नहीं हो सकतीं. रुपए की मात्रा तो शायद जोर देकर पांच-सात हजार घटाई जा सकती है लेकिन लड़की को बी. ए. पास नहीं बनाया जा सकता.

ख़त में बालेश्वर के सिलसिले में और भी बातें थीं. वह खुद ही एक-आध रिश्ते की खबर ले आया था. लेकिन रद्दो ने साफ़ मना कर दिया, अभी शादी-वादी सोचनी ही नहीं है.

विनायक ने एक लम्बी सांस ली. आदमी जब फैसला, अपनी कमजोरी की वजह से, नही कर पाता, ऐसा ही होता है. चक्की की पाटों की तरह पिसता रहता और छुटकारे का रास्ता नही सूझता.

पिछले दिनों एक खत में मां ने लिखा था, रद्दो सूखती जा रही है. रंग उतर कर लगभग काला हो गया है.

विनायक चारपाई पर पसर गया. आंखें बन्द कर लीं. रद्दो अब समझ चुकी होगी कि जिस आदमी से वह प्रेम कर सकती है, वह यह आदमी नहीं है. वह शख्स आदमी कभी था भी नहीं. लेकिन ऑक्टोपस की तरह उसकी गिरफ्त इतनी मज़बूत है कि लगता है, निकलने के सारे दरवाज़े बन्द कर दिए गए हैं. या तमाम सड़कों पर चारों तरफ से ज़हरीले सांप फन उठाए खड़े हैं.

बोस बाबू ने आवाज़ दी—मास्टरसाब हैं क्या घर में ? फिर दरवाज़े को धक्का दे कर ऊंट की तरह अपनी गर्दन अंदर कर दी—तो अंदर चुपचाप बैठकर ध्यान-व्यान लगा रहे हैं ?

विनायक लेटा था. उठ बैठा. हाथ में पोस्टकार्ड थमा था. उसे बगल के आले

में रख दिया.

बोस बाबू अंदर आए और स्टूल पर बैठ गए. वह कत्थई रंग की लुंगी, एक मैला-सा सफेद शर्ट और रबड़ की चप्पलें पहने थे. लुंगी के नीचे के हिस्से में तीनेक छेद भी थे. शायद और भी थे. लेकिन वे सामने से दिखाई नहीं पड़ते. कमीज में दो बटन ग़ायब थे और बगल की तरफ से सिलाई काफ़ी नीचे तक खुली हुई थी. बोस बाबू ने सूंघनी की डिबिया निकाली और चुटकी-भर लेकर नाक में ठूंस दी. जेब में शायद रूमाल नहीं था. लुंगी को नीचे से उठाया और गर्दन को झुकाकर कमर तक ले आए. फिर नाक साफ कर ली. लुंगी का रंग ही कुछ ऐसा है कि इस तरह के छोटे-मोटे निशानों का तो पता ही नहीं चलता.

अब बोस बाबू दीवार से पीठ टिकाकर इत्मीनान से बैठ गए. कोई जल्दी नहीं है. गपशप में घंटा-आधा घंटा गुजारा ही जा सकता है. बोले—विनायक बाबू, आपने कभी नसीब-वसीब के बारे में सोचा है ? भगवान, देवी-देवता वगैरह मानते हैं ?

पता ही नहीं चला कि सवाल का सर कहां है ? सर-पैर सोचकर बात और लोग करते होंगे, बोस बाबू को जरूरत नहीं पड़ती - तो फिर नहीं समझता ? यस, आई न्यू इट. बोस बाबू के होंठों पर विजय की एक मुस्कान-सी थी. बोले—मेरा एक भतीजा है, सगा भतीजा नहीं, ममेरे भाई का लड़का. तो जनाब, हजरत एक एंग्लो-इण्डियन लड़की को वहू बनाकर ले आए. आज ही भाई साहब का चिट्ठी आया है. इसे क्या कहेंगे आप ?

—कुछ नहीं. मामूली-सी बात है. प्रेम किया फिर शादी कर ली.

—व्हाट ? मामूली सी बात है ? बोस बाबू के गले में आवाज निकालने वाला ग्लैण्ड शायद ऐसा है कि धीमी आवाज निकल ही नहीं सकती —मास्टरसाब, दिस इज वेरी इम्पार्टेण्ट इन लाइफ. शादी हम करते हैं लेकिन ऊपर जो ऑलमाइटी है न, वही कराता है. अब समझे ? इसी को कहते हैं नसीब.

घड़ी-भर के लिए बोस बाबू रुके. दम लेने के लिए शायद. इस उम्र में एक साथ इतनी सारी बात उगल देने से थकान भी हो जाती है. बोले—भाईसाब तो मेरे लुट गए. बर्बाद हो गए बेचारे. हां, मुझे देखकर भाईसाब के बारे में आप कोई फैसला नहीं कर सकता. मैं तो साब, मॉडर्न एज का आदमी हूं, उसी तरह कदम मिलाकर चलता भी हूं. लेकिन भाई साब हैं परम वैष्णव. मदन मोहन का पीठ खुद उनके घर में है. स्वप्न में उनके बाबा को आदेश मिला था और अगली ही सुबह टिकट कटाकर वह वृन्दावन चला गया था. दस दिन बाद लौटा तो काले पत्थर का मदन मोहन उनके साथ था. यू फॉलो मी ?

उन्हें शायद पूरी तरह यकीन नहीं हो रहा था कि मास्टर के कानों से होकर यह इतिहास अंदर जा भी रहा है या नहीं.

लेकिन बोस बाबू को अपने हर सवाल के जवाब की जरूरत नहीं रहती. कुछ कहना होता है सो कह देते हैं. जवाब-ववाब का इंतजार उन्हें खास रहता भी नहीं है. बोले—मेरा दादा, आई मीन माई कजीन, पूरा जिन्दगी ओनली मदन मोहन के साथ निकाल दिया, उसी को खिलाना, उसी को पिलाना और उसी का सेवा करना. अब ऐसे भक्त के घर अगर ट्विस्ट करता हुआ कोई फिरंगी लड़की आता है, बीड़ी-सिगार पीता है तो कैसा लगेगा ? मेरा दादा तब से बीमार है. लेकिन मैं चिट्ठी लिखूंगा. शादी तो सिर्फ ऊपर वाला तय करता है. उस ऑलमाइटी का डिजायर था, इसलिए ऐसा हुआ. ऑफ्टर ऑल आदमी को अपना संस्कार तो पूरा करना ही पड़ता है. क्या समझे ?

विनायक ने गर्दन हिलाई—कुछ नहीं.

बोस बाबू ने मुंह बिचकाया—ये जो आजकल के लड़के हैं न, पता नहीं क्या सोचते रहते हैं ? ग्रीस में एक सॉक्रेटीज पैदा हुआ था, ये तो उसके भी ग्रैंड फादर हैं भई. जिन्दगी है, कुछ सोचो-समझो, तब न काम बनेगा. लेकिन आदमी जब तक क्वांरा रहता है न, उसका अकल वाला बक्सा एकदम 'निल' होता. बाई द वे, व्हाट्स योर एज ?

—अट्ठाईस.

—यू मीन ट्वेंटी एट ? मास्टर साब, इस उमर में तो मैं दो डॉटर्स का बाप था. जिन्दगी की मार खाते-खाते अब इतना पुख्ता हो गया हूं कि अब कोई धोखा नहीं दे सकता. शादी जब तक नहीं हुआ था, मैं भी आपकी तरह आसमान में घूमता था. फिर प्रतिमा का मदर आया तो पता चला कि लकड़ी-पानी, आटा-दाल का भाव क्या है ! इसलिए कहता हूं, फ्रॉम माई ओन एक्सपीरिएंस, मैरेज इज एसंशिएल. कर लो नहीं तो जिन्दगी एकदम सूखा-सूखा लगेगा. अभी खून गरम है, मानता हूं···लेकिन यह गर्मी रहेगा कितने दिन ?

— आप अपने भतीजे की बात कर रहे थे न ? विनायक ने याद दिलाया.

— हां-हां, नेफ्यू के बारे में ही बोल रहा था. तो भई, मेरे दिल में इसके लिए यानी इस मैरेज के लिए कोई कष्ट नहीं है. लेकिन यह बात प्रतिमा के मां से कह दूं तो खुद तो बाथरूम मे घुसकर नहा ही लेगा मुझपर भी चार बाल्टी पानी डाल देगा. यह चिट्ठी उस घर से आकर यहां तक मेरे पास पहुंचा है, घर की अपवित्रता के लिए यह वजह कम तो नही है.

—बात आप भतीजे की कर रहे थे.

— हां, तो लड़का शुरू से ही था थोड़ा अलग क़िस्म का. छुपकर बीड़ी-सिग्रेट पिएगा, सिनेमा देखेगा, लाल-पीले कपड़े पहनेगा वगैरह-वगैरह. पढ़ाई में लड़का वैसे शार्प था. टेंथ क्लास में पहुंचा तो दादा थोड़ा रिलैक्सड भी हुआ था कि बेटा अब मैट्रिक कर लेगा तो घर का रेस्पांसिबलेटी थोड़ा तो शेयर कर ही लेगा. लेकिन एक्जाम से हफ्ता-भर पहले लड़के को टाईफ्वायड हो गया. इक्कीस दिन बाद जाकर कहीं फीवर उतरा. हम लोग ठहरे लोअर मिडिल क्लास के लोग. पढाई में एक बार अगर ब्रेक लग गया तो पहिया जाम ही हो गया. लड़का हमेशा के लिए नॉन मैट्रिक रह गया. वैसे अंग्रेजी पता नहीं कैसे खूब बोल लेता है. हम तो इसे तमाशा ही समझते हैं. मैट्रिक तक तो किया नहीं और बोलने लगा सात समंदर पार का लैंग्वेज. आजकल बड़े-बड़े बी. ए., एम. ए. पासों को चप्पल घिसना पडता है लेकिन नौकरी नहीं मिलता. फिर नॉन-मैट्रिक को कौन रखता ? फैमिली बैकग्रांउण्ड ऐसा है कि दरबान, दफ्तरी या चपरासी तो लड़का बन नहीं सकता और बाबुओं वाला काम मिलने से रहा. चार साल फिर कैलकटा के सड़कों पर खूब मस्ताना बना घूमता रहा. कलकत्ता के छोकरों से तो ऑलमाइटी गॉड भी डरता है. इश्तहार निकला था. उसे देखकर फैक्ट्री के मालिक के पास जाकर लड़के लोग बोले, ट्रेनी वेल्डर, वाइंडर के लिए मुहल्ले के लड़कों के अलावा किसी और को लिया तो फ़ैक्ट्री की जगह थोड़े दिनों में मैदान मिलेगा. हम लोगों को फुटबाल वगैरह खेलने का भी कोई ग्राउंड नहीं है.···

—बस जनाब किला फ़तह. अपनी जिन्दगी और जिन्दगी की सांस फैक्ट्री किस मालिक को नहीं प्यारा होगा ? नौकरी मिल गया. अब तो लड़का सुपरवाइजर भी बन गया है. चारेक सौ रुपये कमाता है. मालिक भी खुश है. जब से ये लड़के फैक्ट्री में आए हैं, यूनियन वालों का दबदबा काफ़ी घट गया. बात-बात पे पहले वो

लोग आंख लाल करता था, तड़ी मारता था, अब कम हो गया. यह भी तो ऑलमाइटी का ही मर्ज़ी है !

बोस बाबू ने डिबिया निकालकर एक बार और सूघनी नाक में ठूस दी, छींक आ गई थी. फिर पूर्ववत् उन्होंने नाक साफ की और डिबिया जेब में रख दी, बोले—यह एक दवा है, दवा. माइण्ड बड़ा रिलेक्सड रहता इससे. मैं जब मैट्रिक में था न, तब से यह आदत है. रात को देर तक पढ़ता था. नींद आ जाता था. तब जनाब, चाय-कॉफ़ी का कोई रिवाज थोड़े ही था. हम लोग समझते थे, मलेच्छ चीज़ है. अंग्रेज़ लोग या पैसे वाले लोग ही इसे पी सकते हैं. अब देखिए कितने मज़े का बात है कि इंग्लैंड का आदमी पी नही सकता, बहुत कॉस्टली है वहाँ. और यहाँ भंगी-चमार भी पीता है. यह भी ऑलमाइटी का एक तमाशा ही है.

अंदर उमस-सी हो रही थी. बोस बाबू को इससे कोई दिक्कत नहीं थी. हाँ, सर्दियों में जरूर वह मफ़लर से सिर को गर्दन तक इस क़दर लपेटे रहते हैं कि आँखों की जगह के अलावा पूरा चेहरा ढका रहता. मुंह के ऊपर भी मफ़लर रहता और उनकी बातें मुश्किल से ही समझ में आतीं. गर्मी में लू के बीच खड़े होकर भी वह घंटों बात कर सकते है. कहते हैं—हमारे टाइम में घी-दूध से लेकर सबकुछ असली होता था. उसी का रिजल्ट है, मास्टर, चूल्हे में भी झोंक दो, थोड़ी देर वहां भी टिका रहूंगा.

विनायक जानता है, थोड़ी देर ही क्यों, काफ़ी देर वह आराम से निकाल मकते हैं. और इसी वजह से सुनने वाले आदमी के सर मे दर्द होने लगता है. लेकिन दर्द की बात बोस बाबू को अगर बता दी तो फिर दर्द के इलाज पर वह फौरन सौ नुस्खे सुना डालेंगे और आख़िर मे सीना ठोककर कहेंगे—इस बोस बाबू को आज तक सर दर्द के इलाज का जरूरत कभी नही हुआ.

आजकल के लड़के किसी को छोड़कर कहाँ बात करते है ? गोबरधनबाबू के छोटे लड़के ने एक बार कह दिया था—सिर दर्द के लिए कम-से-कम सिर का होना तो ज़रूरी है. सबके पास यह होता ही कहां है ?

तब से बोस बाबू ने मुहल्ले के लड़कों को पकड़कर नसीहत देना छोड दिया है. लेकिन बरसों की पुरानी आदत है, इतनी आसानी से छूट भी कैसे सकती है ? लिहाज़ा थोड़ी बडी उम्र के किसी को पकड़ा और अन्दर का गुब्बार निकाल लिया.

विनायक ने उमस की वजह से खिडकी खोल दी.

—हाँ, एक और मज़ेदार बात है. मैं तो बोलना भूल ही गया था. बोस बाबू ने आँखे बड़ी-बड़ी कर लीं - मेरा जो भतीजा है न. ही इज बेयर ट्वेंटी थ्री. और जो मेम ले आया है, वह ट्वेंटी एट की है.

विनायक को यक़ीन आ गया, उम्र के इस फ़र्क के लिए बोस बाबू बेहद खुश हैं. भतीजा अगर कहीं डकैती करते हुए पकडा जाता तो भी वह इतने ही खुश होते. इन तमाम बातों से बोस बाबू की छाती गर्व से फूल उठती है कि उनके यहाँ कोई ऐसा मलेच्छाचार नहीं हुआ है. मज़ाक थोड़े ही है. आख़िर कुल, वंश-परम्परा का भी तो कोई मतलब होता है. ऐसा होने की गुंजाइश अगर रत्ती-भर भी हो, बोस बाबू अपनी बेटियों को शायद काटकर संगम में डाल आएंगे. इस घर में 'पाप' घुसने की इजाज़त मरते दम तक वह नहीं दे सकते. विनायक जानता है, बोस बाबू की खुशी क्या है और गम क्या ? इसका पाप-पुण्य भी अब समझ में आ गया है. प्रतिमा की बात अगर उसने अभी कह दी, बोस बाबू शायद बेहोश ही हो जाएंगे. खैर उसने बात बदल दी —आज अखबार में एक ख़बर छपी है. बैरहाना मुहल्ले में कुछ पढ़े-लिखे

लड़कों ने बूट-पॉलिश का एक कारखाना लगाया है. कारखाना क्या, चार-छह लोग काम करते हैं. उन लोगों को साल-भर में सारे खर्च वग़ैरह निकालकर कोई दसेक हज़ार का फ़ायदा हुआ है. सबकुछ इन लड़कों ने अपने आप किया है. सामान बनाने से लेकर पैकिंग, मार्केटिंग तक.

बोस बाबू के चेहरे के भाव पर कोई फ़र्क़ नहीं आया. बूट-पॉलिश बनाने की बजाय वे अगर तोप भी बनाते, उन्हें खुशी या तकलीफ़ नहीं होती. उन्हें सिर्फ एक बात मालूम है. साइंस का ज़माना है. लोग अब मंगल ग्रह तक जाने लगे हैं. कल को शायद दुनिया छोड़कर वहाँ बसने भी लगेंगे. ऐसी हालत में बूट-पॉलिश और साबुन भला क्या मायने रखता है ?

—आपके ज़माने में तो दूध दो आने सेर के हिसाब से मिलता होगा, वह भी एकदम गाढ़ा और ताज़ा दूध. विनायक को कोई और शब्द याद नहीं आए थे. या याद अगर आए थे, कहने लाइक नहीं लगे थे.

—हाँ, साब, दो ही आने था. बोस बाबू उठ खड़े हुए. इतने बेवकूफ़ वह नहीं हैं कि दूध के भाव पूछने का मतलब समझे ही न हों. वैसे भी कौन यहाँ मैं जमने आया था ? तुम नहीं भी कहते तो भी मैं उठ ही जाता. वह उठ खड़े हुए. खड़े हो गए तो याद आया असली बात तो हुई ही नहीं. लेकिन अब बैठा भी नहीं जा सकता था. शुरू में तो वह सिर खुजाने लगे फिर सूंघनी की डिबिया निकाल ली, सूंघनी कई दफ़ा बड़ी ताक़त दे जाती है.

फिर नाक झाड़कर बात कह ही डाली. जो बात कहनी ही है, उसके लिए इतनी शर्म से क्या फ़ायदा ?—वो प्रमिता है न, आपकी बड़ा तारीफ़ करता है. बोलता है अंग्रेजी का इतना नॉलिज बड़ा-बड़ा प्रोफ़ेसर के पास भी नहीं है. आई एम ग्रेटफुल टू यू. आपने हेल्प किया और लड़की अब काफी अप-टू डेट हो गया. साल-छह महीने में कोई जॉब-बॉब भी मिल जाएगा. मैं कह यह रहा था कि कैजुअली के बजाय आप डेली कोच किया करें तो प्रतिमा जल्दी पिक-अप कर सकती है. लेकिन आप इतना बिज़ी हैं.

—जी हाँ, बहुत बिजी हूं. सिर्फ़ कभी-कभी ही कुछ बता सकता हूं···

बोस बाबू हें हें करने लगे—खैर, अभी न सही. फिर कभी. जब भी आपको लगे कि आप रेगुलरली कोच कर सकते हैं, लड़की को बुला भेजिए. फिर वही हें हें, इसके बाद वह चले गए.

विनायक ने आंखें बन्द कर लीं. दिमाग दर्द करने लगा. बोस बाबू अगर इस आख़िरी बात के लिए इतनी बड़ी भूमिका न बांधते तो वह शायद सचमुच कृतज्ञ होता.

प्रतिमा का नाम याद आते ही लगा, उस लड़की की तकलीफ़ का शायद कोई बयान नहीं हो सकता. अपने बाप से अगर नफरत के अलावा कुछ और वह करती है, वह है एक मजबूरी को मंजूर कर लेना. विनायक जानता है, प्रतिमा ने बोस बाबू के साथ उसके अंग्रेज़ी ज्ञान के बारे में कभी भी बात नही की होगी, की होगी तो बोस बाबू कमर में अंगोछा बांधकर यहाँ तक आ जाते—तुम तो छुपे रुस्तम निकले मास्टर. बहुत यक़ीन करके, शरीफ़ आदमी समझ के लड़की को यहां पढ़ने भेजा था. जैसे इससे बड़ी मेहरबानी संसार में और कुछ हो ही नहीं सकती. विनायक फिर एकदम शांत हो गया. कुछ भी सोचना अच्छा नहीं लग रहा था.

●●

ट्यूशन पर निकलने का वक्त हो गया था.

विनायक उठा और हैण्डपम्प के पास जाकर चेहरे पर पानी के छटके मारने लगा, थोड़ा पानी पी भी लिया. कमरे में आकर रस्सी पर टंगे हुए तौलिए से चेहरा पोंछने लगा तो याद आया, यह बुरी तरह से बदरंग हो चुका है. कई जगहों से फट भी गया है और ऊपर से मुलायम दाने घिसकर बराबर हो गए हैं. कई बार इसे फेंकने की सोचता रहा, लेकिन बस हुआ ही नहीं.

बाहर गुमटी वाले के यहाँ चार-छह लड़के आती-जाती लड़कियों को देखकर सीटी बजा रहे थे. वैसे चाय पीने भी आए थे, सामने एक-एक प्याला रखा था. रेडियो में शायद सरोद चल रहा था. इन लड़कों के कहने की जरूरत नही पड़ी थी. गुमटी वाले ने अपने आप ही रेडियो बंद कर दिया था.

विनायक जाकर एक कुर्सी पर बैठ गया—एक कप स्ट्रांग बनाना. चीनी सिर्फ़ आधा चम्मच. सामने हिन्दी का अख़बार था. इन लड़कों ने या इन जैसे दूसरों ने फिल्मी इश्तहारों के पन्ने में अभिनेत्रियों के चेहरे पर स्याही से मूछें बना दी थीं. नीचे कई-एक जगह पर अश्लील मंतव्य लिखे हुए थे. पहले पृष्ठ पर किसी नेता की तस्वीर थी. परम्परागत नेता के अनुरूप तस्वीर. भीमकाय चेहरा और टोपी. वह शायद फीता वग़ैरह कुछ काट रहा था. उस तस्वीर को स्याही की रेखाओं से इतना बदल दिया गया था कि चेहरा अब धंधा करने वाली औरतों की मौसी का लग रहा था. सस्ते उपन्यासों से लेकर फिल्मों में इन मौसियों का इतना ज़िक्र रहता है कि कलाकार को अब मगजपच्ची नहीं करनी पड़ती.

तस्वीर के नीचे उसी तरह एक अश्लील फिक़रा था. शायद तुलना करने से इसकी अश्लीलता अं र भी ज्यादा लगेगी.

विनायक ने बात की—तुम लोग शायद इस मुहल्ले मे नही रहते, क्यों ?

लाल टी शर्ट में आबनूसी रंग का जो लड़का जेब से बार-बार कघा निकालकर बाल संवार रहा था, जवाब उसने दिया—हम लोग किसी भी मुहल्ले-वुहल्ले में नहीं रहते. उसके चेहरे से जाहिर था, ऐसे सवालों से उन्हें खुशी नहीं होती. तुम्हें क्या फ़र्क़ पड़ता है, बाबा, चाहे हम कहीं भी रहें.…

विनायक ने देखा, उस लड़के की कलाई में एक घड़ी भी है. दूसरी कलाई में एक लोहे का निकल किया हुआ कड़ा था. कमर पर एक चौड़ी-सी पेटी थी. हिन्दी फिल्मों में मार-धाड़ करने वाले बम्बईया दादा ऐसी पेटियों का इस्तेमाल बहादुरी दिखाने में अक्सर करते हैं.

—तुम लोग शायद कही काम-वाम करते हो ? विनायक ने चाय का घूट लेकर पूछा.

—आप काम देने वाले अफसर हैं क्या ?

विनायक ने गर्दन हिलाई—यह जो सामने पीले रंग का मकान है न, यह कर्नलगंज का चुंगी स्कूल है. वहाँ पढ़ाता हूँ.

—पढ़ाइए. हमारे काम-वाम आपके पढाने में कभी नही आएंगे.

तब तक एक लड़का जेब में से ताश की गड्डी निकालकर फेंट चुका था. लेकिन बांटने से पहले उस सांवले लड़के के हुक्म का इन्तज़ार कर रहा था. विनायक समझ गया कि यह लड़का कप्तान है.

विनायक ने गुमटी वाले से कहा—एक-एक चाय और मेरी तरफ से.

—नहीं साब, दुबारा पीने का वक्त नहीं हुआ.

लड़के का इतना दबंग होना विनायक को अच्छा लगा. इस लड़के से यह पहली मुलाकात है. लेकिन लगा, पहले अक्सर वह दिखाई पड़ता रहा है. सिर्फ़ इलाहाबाद

में ही नहीं, बरेली और झूसी में भी. कहीं और जाने से शायद वहां भी वह मिल जाएगा. यह बात आधुनिक कविता की तरह लगी लेकिन विनायक ने समझ लिया कि यह सच है.

—तुम लोग कभी स्कूल गए हो ?

—मैं दो-एक साल गया था. फिर नहीं गया.

विनायक ने वजह नहीं पूछी. इतनी जाहिर वजह पूछने की जरूरत कहां है ? उसने अपना नाम बताया—विनायक कहते हैं मुझे. तुम लोगों ने अपना नाम नहीं बताया !

तब तक एक लड़का सीटी बजाकर मेज़ पर ताल देने लगा था. इन फालतू बातों में, जाहिर है, उसका मन नही लग रहा था. साले चाय वाले ने भी रेडियो बद कर दिया. कुछ अईया-अईया ही हो जाता.

—चुप बे. सांवले लड़के ने उसे डांट दिया था.

वह चुप हो गया.

सांवला लड़का थोड़ी देर चुप रहा. सोचने के लिए थोड़ा वक्त ले रहा था शायद. फिर विनायक का चेहरा अच्छी तरह घूरकर आश्वस्त हुआ कि चलो, ख़ाम-ख्वाह ही सही, नाम बताने में कोई हर्ज नहीं है. इन दस मिनटों के दरमियान वह लड़का शायद समझ गया था कि मास्टर और गो मे कोई फ़र्क़ नही है. फिर उसने नाम बताया था—मैं हूं पीटर.

बाकी लोग निसार, बुल्ला, बाबू और कल्लू थे.

विनायक ने इन लोगो को फिर से एकबार और देख लिया. कल्लू इनमे सबसे ज्यादा निरीह लगा. उसके बाल काफ़ी लम्बे थे और तेल के अभाव मे लाल-से हो रहे थे. एक छींट की कमीज, सफेद पतलून और हवाई चप्पले पहने था.

पहनावे की ये तीनों ही चीज़े अपनी उम्र पार करने के बाद भी इस्तेमाल में आ रही थी. पतलून का असली रंग चूंकि सफ़ेद था, गन्दी दीख रही थी. कमीज और हवाई चप्पल पर धूल-मिट्टी का इतना स्पष्ट असर नहीं हो पाया था.

इन पांच लोगों के चेहरे पर वक्त के तूफान और आंधी मे लड़ते रहने की छाप स्पष्ट है. ये लोग कहां से आए, कोई नहीं जानता. पूछने से या तो जवाब नही देते या झूठ-मूठ कुछ भी कह देंगे. खुद इन्हें भी इस सवाल का जवाब पता नही है. विनायक समझ गया.

पीटर की दाहिनी हथेली पर नजर पड़ी. वहाँ दो उंगलियां गायब थी. चेहरे पर जख्म का एक काफ़ी गहरा दाग़ है. ऐसे दाग़ हर चेहरे पर नही होते. एक तरह से छंटे हुए लोगों में जो पुलिस के खाने मे चिह्नित रहते है, ऐसे दाग़ वाले होते है. लेकिन अभी इनमें से किसी ने भी पच्चीस बरस तक पार नहीं किए. सबसे बड़ा पीटर ही है. उम्र का हिसाब लगाना आसान नही है. न वह खुद जानता है, न कहीं इस तथ्य का रिकॉर्ड ही होगा. देखकर जो धारणा बनती है, उससे लगता कि तेईस-चौबीस से ज्यादा का नहीं होगा. सबसे छोटा है बाबू. उन्नीस-बीस बरस का होगा. सबसे छोटा जरूर है लेकिन इसकी आंखें इन पांचों में सबसे ज्यादा तेज हैं. शायद पीटर के बाद हैसियत में उसी का नम्बर आता है.

—शायद तुम लोग सोच रहे होंगे कि मैं जासूसी-वासूसी कुछ कर रहा हूं. विनायक चाय की आख़िरी घूंट पी चुका था, बोला—सिर्फ़ यूं ही पूछ रहा हूं. जसे एक सराय में दो मुसाफिर मिले और एक-दूसरे से थोड़ी देर दुख-सुख की बातें हो गई. बातें नई नही होतीं, सिर्फ उनका सिलसिला नया होता है. एक-दूसरे को तजुर्बे

की कहानियां सुनाते हैं तो लगता है, चलो किसी को सुना तो दिया.

पीटर थोड़ा द्रवित होता रहा था. उसने भौंहें सिकोड़ी और इस बेवकूफ़ मास्टर का चेहरा घूरने लगा. बेवकूफ़ न होता तो जो नाम उसने थोड़ी देर पहले बताये थे, वह यक़ीन नहीं करता. एकदम लपाड़ू है साला. मन-ही-मन पीटर ने खूब हंस दिया.

—मैं अगर राइटर होता, तुम लोगों पर एक कहानी ज़रूर लिखता. विनायक ने पीटर से कहा.

—फिर उस पर फिल्लम बनती. बाबू ने इस तरह कहा कि सब हंस पड़े. पीटर भी. लेकिन यह तरीका पीटर को पसंद नहीं आया. उसने झिड़की दी—चुप रहेगा बे. बाबू फिर चुप हो गया. मिलिट्री में ही इस तरह का हुक्म चलता है. विनायक को अच्छा लगा कि ये लोग कहीं से डिसिप्लीण्ड भी हैं.

पीटर थोड़ी देर पहले उठना चाह रहा था, अब बात करना अच्छा लग रहा था. यह शायद इसलिए कि यह बेवकूफ़ मास्टर अपनी शराफ़त के नशे में अक्खड़ नहीं है. अक्खड़ नहीं है और थाने वालों की तरह बदतमीज़ी से बात नहीं करता. कहीं-कहीं से इज्जत बख्श कर ही बोलता है.

पीटर हंसा—आप समझ ही गए होंगे कि हम लोग है कौन ? नाम-पता न भी बताता फिर भी इतना तो कोई भी समझ सकता है, ख़ैर, जनाब हम लोगों को इस बात की कोई परवाह नहीं है कि कौन क्या सोचता है.

निसार नाम से जिस लड़के का परिचय हुआ था उसने पीटर को आंखों से इशारा किया. इसका असर नहीं हुआ तो बोला—अमां चुप भी हो जा

काट डालूंगा तुझे पीटर ने बहन पर दी जाने वाली वही आम गाली दी. यह एक ऐसी मामूली प्रक्रिया थी कि निसार को बुरा नहीं लगा, वैसे वह चुप हो गया. ऐसी गालियां न हों तो शायद इन्हें यक़ीन ही नहीं आएगा कि ये आपस में दोस्त भी है.

पीटर फिर उन चारों की तरफ़ मुड़ा—तुम लोग चलो, मैं आता हूं थोड़ी देर में.

एक तरह से उन लोगों को इससे राहत मिली थी. सीटी बजाते हुए वे उठ खड़े हुए, फिर कटरे की तरफ़ निकल गए.

—काफ़ी पुरानी दोस्ती मालूम होती है ? विनायक ने पूछा.

पीटर ने जीभ को तालू से लगाकर 'च्च' की आवाज़ की. यानी नहीं. सिर्फ़ ढाई बरस की बात है.

—इससे पहले ?

—इससे पहले का मामला बड़ा गोलमोल है. मैं इलाहाबाद ही तीन साल से हूं. इससे पहले कलकत्ता में था. कलकत्ते से बनारस. फिर यहां.

विनायक ने जन्मसूत्र नहीं पूछा. बोला - शादी वग़ैरह करने की क्यों नहीं सोचते ? औरत का प्यार आदमी को ऊंचाई तक पहुंचा देता है.

पीटर ने वहीं ज़मीन पर थूक दिया. औरत और इस थूक में कोई फ़र्क़ है क्या ? आप मास्टरी करते हैं, कुछ पता ही नहीं है. समझे कुछ ?

विनायक ने गर्दन हिलाई. यह अस्वीकृति थी.

—कलकत्ते का स्यालदा स्टेशन देखा ?

—नहीं.

—फिर क्या समझेंगे आप ?

विनायक चुप रहा.

पीटर ने जेब से पैकेट निकाली और खच्चस् से एक चारमीनार सुलगा ली— चलेगा ? अपन को इसी मे मज़ा आता है.

विनायक ने फिर से गर्दन हिलाई.

पीटर हंसा —फिर बैठ के कटोरे का दूध पियो. ख़ैर, मैं कलकत्ते की बात कह रहा था. स्यालदा स्टेशन में मैं पैदा हुआ था. जिस औरत ने मुझे पैदा किया था, हर अठारहवे महीने वह एक बच्चा पैदा करती. एक ही मर्द से नहीं, अलग-अलग मर्द होते थे. कई लोग ख़ासे पैसे वाले और शरीफ़ क़िस्म के होते.

विनायक ने महसूस किया कि सांस की रफ्तार तेज़ हो गई है. लेकिन ताज्जुब है कि कहने वाला लड़का बेबाकी से अपनी ज़िन्दगी की कहानी बयान किए जा रहा है.

— क्यों साब, घबरा मत जाना बाबू छाप लोगों की बात सुनके. हम लोग देखते कि मेरी मां अक्सर शाम होते ही निकल जाती और सुबह होने तक लौटती. कई बार लौटते वक्त हाथ मे कुछ सामान भी होते थे. हम लोग भाई-बहन कुल मिला-कर ग्यारह पैदा हुए थे. एक भाई यार्ड मे कोयला चुराते वक्त पुलिस वालों की गोली से मरा था और दूसरा भाई, यार्ड में ही इंजन का कोयला बटोरते हुए कट गया था. कुल नौ फिर ज़िन्दा थे. इस वक्त कितने होंगे, नही मालूम. मैं पंद्रह का होते ही एक सेठ के पीछे लग गया और बनारस चला आया.

विनायक पीटर की आंखों की रोशनी मे कुछ ढूंढ रहा था.

—ऐसी कलकत्ता छाप कहानी आप लोगों के इलाहाबाद में नही मिलती. यहां भगत लोग आते है सिरफ.

चुप्पी.

पीटर ने ज़ोर से एक कश खींचा. बहुत बदबू निकल गई थी. विनायक समझ गया कि गांजा है. बालेश्वर की याद आ गई.

कश खींचकर मिनट-भर के लिए वह एकदम ख़ामोश रहा. फिर धुए को नाक से निकाल दिया मेरी मा यार्ड से कोयला बटोरती थी, भीख मागती थी, मर्दों के साथ सोकर बच्चा पैदा करती थी और मौक़ा लगा तो हाथ साफ करती थी. एक दफ़ा मुझे याद है, एक लडकी का हार खींच लिया और जब तक कि लड़की शोर मचाती स्यालदा स्टेशन के समंदर मे खो गई. सुबह से लेकर रात तक इतनी धकापेल रहती है कि स्यालदा बस समदर-सा ही लगता है.

कई बार मेरी मा केले, अमरूद वग़ैरह की सस्ती टोकरियां ख़रीद लाती और स्टेशन के बाहर टाट बिछाकर दुकान लगाती. लेकिन पुलिस वाले मक्खियों से कम तंग नहीं करते. जो जी मे आए, किलो-दो-किलो उठा ले जाते ऊपर से उनकी मुट्ठी भी गर्म करनी पडती. इसके अलावा कहीं साडे ने मुंह मार दिया, हो गया कुछ और फालतू नुकसान. मा को यार्ड मे से कोयला बटोरना बहुत पसद था. वहां भी पुलिस वालों के डडे खाने पड़ते थे लेकिन माल थमा देने से काम भी बन ही जाता था. कोयला बटोरने मे एक फायदा और है. यार्ड है न. कभी गाड़ियो की गद्दी काट ली, कभी कोई पुर्ज़ा उठा लिया.

मेरी मां पहले बेवकूफ थी. कबाड़ी के पास जाती थी. फिर देख-सुनकर अक्ल अपने आप ही आ गई थी. ऐसे माल खरीदने वाले मोटे असामी होते हैं. मां उन्हीं को अपना सामान बेचती थी.

जब से यह बिजली का इंजन चलने लगा, कोयले का धंधा थोड़ा मंदा हो

गया फिर भी चलता है. कोयले का इजन एकदम-से खत्म होने का मतलब है, स्यालदा स्टेशन के कई सौ लाग भी खत्म हो जाएगे ऐसा कभी थोडे ही होने का है ? विनायक ने देखा, पीटर की आखो मे एक यकीन न करने लायक यकीन है काफी सोचने के बावजूद इसकी मिसाल नही मिली

पीटर की सिगरेट खत्म हो गई थी उसकी राख मेज पर बिखरी थी कुछ अखबार पर भी थी

रेडियो मे फिर फिल्मी गाना आने लगा था दूकान वाले ने अब रेडियो खोलकर आवाज बढा दी यूनीवर्सिटी के कुछ लडके चाय पीने आए थे सख्या मे चार लोग बनारस मे छात्रो पर हुए पुलिस हमले के बारे मे वे बात कर रहे थे

पीटर ने एक और सिगरेट सुलगा ली—मै तब तक यार्ड मे हाथ साफ करते हुए एक बार महीना-भर के लिए जेल हो आया था. पुलिस वाले लुच्चो के डडे तो खैर इतने खाए कि कभी गिनकर देखा ही नही उन सालो के 'उसमे' अगर वे ही डडे घुसेड दू, मै साला समझूगा, दुनिया जीत ली 'उसमे' की व्याख्या मे पीटर ने उगलियो मे एक तग गोल छेद बनाया था फिर मुह बिचका लिया था

मै भी तग आ चुका था कई बार लौडिए मुझे भी घूरती थी यार्ड मे कोयला बटारते हुए मेरी तरफ देखती रहती मै मूतता हू लौडियो पर औरत जात और कोठी का पाखाना, साला बराबर है तग जरूर आ गया था लेकिन कलकत्ता छोडकर जाता भी कहा ? लेकिन कलकत्ते मे रहने का मतलब है, अपनी मा को हर अठारहवे महीने बच्चा पैदा करते देखना साली थकती भी नही है एक सेठ मिल गया था तब बनारस का था पूरा तोदू था मै सोचता था सोने-चादी का व्यापारी होगा मौका अगर मिल गया तो साले का भट्ठा ऐसे बैठाऊगा कि गगा मे डूबकर फिर खुदकशी ही कर लेगा लेकिन समझने मे ही गलती हो गई थी वह खूसट था बाजे वाला एक बैण्ड कम्पनी थी

मरता क्या न करता मै बैण्ड पार्टी मे कागज और दफ्ती की घोडी के साथ राजकुमार बनकर उछलता-कूदता रहा यह काम था रात का. दिन को दुकान मे झाडू लगाता, बाजे वगैरह की सफाई करता, सेठ के पाव दबाता एक धोखा और खाया था साला था लौण्डेबाज मुझे घडी-घडी चूमता-चाटता यह सब अच्छा तो नही लगता था मुझे लेकिन तब साले को समझ नही पाया था

मै रात को दूकान मे ही सोता था सेठ की चौकीदारी भी हो जाती और मुझे भी सोने की जगह मिल जाती एक रात सेठ आया और मेरे पाजामे के अदर हाथ डालकर हरकत करने लगा मै उठा सेठ को धक्का दिया और भाग खडा हुआ दुबारा फिर लौटकर वहा नही गया था वह रात स्टेशन पर गुजरी थी

सुबह काम की तलाश मे निकला अपने पास बीस पच्चीस रुपए वैसे थे लेकिन खत्म होने मे कितनी देर लगती ? बनारस मे रडियो का मुहल्ला है दालमडी. दालमडी मे कुछ कबाडी और रद्दी वाले भी है इसके अलावा नुक्कड पर ही मोटरसायकिल, स्कूटर वगैरह मरम्मत करने की एक दूकान है तीस-बत्तीस बरस का एक ईसाई उसका मालिक है वहा काम सीखने लगा मेरा उससे पहले कोई नाम भी नही था पूछने से कुछ भी बता देता बस गाडी इसी मे चल जाती उसका नाम था जोजफ जोजफ ने मुझे गले मे लटकाने के लिए एक पीतल का क्रास दिया और एक ईसाई नाम भी तय कर दिया अपन को क्या फर्क पडता ? रोटी मिली तो नाम कुछ भी पुकार लो जोजफ ने ही किताब-कॉपी से मेरी मुलाकात करवा दी थी थोडा-बहुत लिखना-पढना उसकी वजह से ही सीख गया था लेकिन हमारे बाकी साथी इस

मामले में बिल्कुल उजड्ड हैं.

वहां छह-सात महीने काम किया था. पैसे भी खूब बनाए थे. जोज़फ था होशियार आदमी. मरम्मत का काम तो दिखावे का था. उसका असली धंधा था कलकत्ता और बम्बई से स्मगलिंग की घड़ियां, सोना, ट्रांजिस्टर वग़ैरह लाकर बेचना. उसका एक उसूल था, स्मगलिंग का सामान बनारस में उसने कभी नहीं बेचा.

मैं अक्सर सामान पहुंचाने इलाहाबाद लखनऊ आगरा जाता था. एक दफ़ा इलाहाबाद स्टेशन पर उतरा ही था कि पकड़ा गया. दो साल की सज़ा हो गई थी. जेल में ही मालूम हो गया, जोज़फ़ भी बन्द है. दूकान पर 'गोरमिंट' ने ताला लटका दिया.

मुक़द्दर में जेल है तो जेल ही सही. कलकत्ते में भी तो जेल जा चुका था. इलाहाबाद में भी सही.

जेल में एक लियाक़त उस्ताद मिला था. पुराना क़ैदी था. चाहता तो नम्बरदार बनकर खूब मौज कर सकता था. लेकिन उसूल का था एकदम पक्का. जेल के अंदर भी पुलिस वालों पर थूकता था.

लियाक़त उस्ताद के पांव दबाए तो पता नही क्यों, बहुत खुश हो गया था.

उस्ताद ने मुझे चेला बना लिया. पूरा इंतज़ाम कर दिया था कि बाहर निकलू तो जमे हुए धंधे मे लग जाऊ.

उस्ताद ज़रूर अंदर था लेकिन ज्यादातर चेले बाहर ही थे. उस्ताद अंदर से ही ज़रूरत के मुताबिक़ हिदायतें भेजता था.

मुझे तो सिर्फ़ डेढ़ साल काटने थे. लियाक़त उस्ताद को ज़रूर दसेक साल और रहना था. खून वग़ैरह तक का इल्ज़ाम था.

खैर, मैं बाहर आया और पते पर पहुच गया. लूकरगज मे बाजार के पीछे एक खपरैल का मकान है. शमशेर दर्जी की दूकान और घर. यही है मिल-बैठने का अड्डा.

मेरे पहुचने से पहले ही हिदायत पहुच गई थी. खैर, खूब खातिरदारी हुई और सात दिन तक सिर्फ आराम करता रहा. शाम को जाकर फिल्म-विल्म देख आता था. खाना जाकर बाहर, ढाबे में खा आता था. जो मर्जी खाओ— मुर्गा, अण्डा; तली मछली, बकरा, कोई मनाही नही. खा-पीकर सात दिन में ही मुटा गया था. फिर चाकू का काम सीख गया. इस्तेमाल की ज़रूरत अमूमन नही पड़ती थी. दिखाने-भर से काम निकल जाता. बीच-बीच मे जाकर उस्ताद से जेल में मिल भी आता था.

लेकिन इसे मेरी बदनसीबी ही कहिए कि मेरे जेल से निकलने के साल-भर बाद उस्ताद जेल में खून उगलकर ख़त्म हो गया. बाद में मालूम हुआ था, पुलिस वालों ने पीटकर भर्ता बना दिया था.

इसके बाद गिरोह टूटने लगा. बीस-पच्चीस लोग थे. आपस में ही लड़ने-भिड़ने लगे. मै था सबसे नया आदमी. मेरी क्या पूछ ? शमशेर दर्जी ने ऐसा थप्पड़ मारा कि सर चकरा गया था. ज़मीन पर गिर पड़ा था. समझ गया कि यहां से टलने का 'टैम' आ गया.

——बस फिर वहाँ से निकल आया.

एक दिन कल्लू मिला. फिर निसार, बाबू और बुल्ला भी. समझ गए कि हम लोगों का रास्ता एक ही है. तब से हम लोग साथ है.

पीटर ने बात ख़त्म की तो विनायक ने देखा, सामने की मेज पर सात-आठ सिग्रेट के टुकड़े पड़े हुए हैं. इन आठ टुकड़ों मे से कम-से-कम तीन में गांजा भरा हुआ

रहा होगा पीटर की आखे आग की तरह लाल थी

वह फिर एकदम से हस पडा—मत सोचना, कि अब आपकी कहानी पूछ लेगे आपका किस्सा आप ही का है अपन को उसमे मतलब नही कुछ

—चाय पिओगे ? विनायक ने पूछा

पीटर ने घडी देखी और दस सेकेण्ड के लिए सोच लिया फिर गुमटी वाले से खुद ही कह दिया —कडक वाला देना

—मेरा एक पता है. विनायक बोला – इस गुमटी के पीछे रहता हू किसी से भी पूछो, मेरा घर बता देगा

—लेकिन साब, आपके पते से होगा क्या ? घर मे एक चारपाई होगी और एक फटा हुआ बिस्तर नही, साब ऐसे माल मे हम लोग दिलचस्पी नही लेते

विनायक ने उसके पते के बारे मे नही पूछा. पूछने से भी बताएगा नही शायद पुलिस वालो के लिए रखी हुई कोई गाली सुनाकर उठ खडा होगा

—कभी-कभी तुम मेरे यहा आ सकते हो विनायक बोला

—आपको फायदा होगा कुछ इससे ?

—फायदा ? पता नही

—पता कीजिए, फिर खुद ही समझ जाएगे, घाटे का सौदा है यह

—सौदा कहा कर रहा हू

—आप पढे-लिखे है, कुछ भी बोल लीजिए मै सौदा ही कहता हू घाटा-फायदा सोचे बिना नही आ सकते ?

—यह जो सूरत देख रहे है न, इसे देखकर कोई भी औरत अदर घुसने की इजाजत नही देगी मेरे चेहरे पर जो जख्म का दाग देखना है वह मेरे बारे म कोई अच्छी बात नही बताता, इसका पता मुझे है एक दफा पकडते-पकडते बस बच गया था दरोगा के हाथ मे हटर था, उसका निशान है

विनायक ने देखा, इतनी लबी बात बताने के बावजूद उसके चेहरे के भाव म कोई फर्क नही है अभी जैसे सीटी मारता हुआ वह उठ खडा होगा फिर किसी सिनेमा हाल म घुस जाएगा

—आप सोच रहे होगे, कितना बेवकूफ हू पुलिस वाले लुच्चे पीछे पडे होगे और मै आपको पूरी कहानी बता रहा हू दरअस्ल ये सब मामूली बाते है अदर-बाहर तो हम लोग होते ही रहते है अदर घुसना हम चाहते जरूर नही है लेकिन अगर घुसना पड गया तो वही सही. आखिर 'गोरमिट' दाल-रोटी कब तक खिलाती रहेगी ? एक न एक दिन छोडना तो है ही लेकिन अभी कोई ऐसा डर नही है कोई नई बात होगी तो सोचेगे पीटर बेबाकी म बोला और उठ खडा हुआ—अच्छा साब चलते है, आपने अपने यहा आने के लिए इतना कहा कभी शायद आ ही जाए

पीटर चला गया

विनायक चुप बैठा था पीटर को जाते हुए देखा यूनानी सूरमा अलेक्जेण्डर जग जीतने के बाद ऐसे ही जाता रहा होगा पीटर के लिए जीत और हार अलग-अलग मायने नही रखते उसे शायद चलने का एक ही तरीका आता है उसी तरीके म वह जा रहा है

●●

शोर-सा हो रहा था.

इतनी रात गए ऐसा अमूमन नहीं होता. लगभग ग्यारह का वक्त था. विनायक एक किताब पढ़ रहा था, अधलेटा-सा. सिरहाने जंगला-सा है. मकान मालिक इसे खिड़की कहते हैं और वह शुरू से ही जंगला कहता आ रहा है. जंगले का पलड़ा खोला तो सामने छिद्दा पहलवान दिखाई पड़ा. साथ कई और लोग थे. भारद्वाज आश्रम के पास जो चूड़ी, बिन्दी, खिलौनों और कुम्हारों की दुकानें हैं, वे उनके मालिक हैं. छिद्दा पहलवानी करता था तो इनमें से कई उसके शागिर्द थे. अब पहलवानी छोड़े उसे बरसों हो गए लेकिन उन लोगों का शागिर्दों वाला अंदाज़ लगभग वैसा ही है. पुराने दिनों की तरह.

बीच में जो आदमी खड़ा है, उसका चेहरा दिखाई नहीं पड़ रहा है. लेकिन आसामी वही है. मुफ्त में मुक्के लगाने का शायद सुख ही कुछ और होता है. वर्ना इस भीड़ में घुसकर लाला का दामाद अलख भी दो हाथ जमाने नहीं आता. बगल में ही लैम्पपोस्ट है. उसकी रोशनी में अलख के चेहरे का उल्लास देखने लायक है. मुहल्ले के लड़कों में से कोई निकल आता तो कह देता—नेपोलियन बोनापार्ट. शायद सुबह तक कोई कहने भी लगे.

विनायक बाहर निकला.

छिद्दा चिल्लाया—आओ मास्टर, तुम्ही फैसला करो.

फैसला जिसका करना था, उसकी नाक और कनपटियों से खून की धारा निकल रही थी. वज़नदार मुक्के खाते-खाते उसकी अतड़ियां भी सूज उठी थी शायद. चार-छह लोग उसके बाल पकड़े थे. लेकिन हालत यह थी कि अभी अगर उसे रिहा भी किया जाता है, चार कदम जाने से पहले ही गिर पड़ेगा.

विनायक ने पहचानने की कोशिश की. इस मुहल्ले में यह आदमी इससे पहले कभी दिखाई नहीं पड़ा, इस बारे में शक नहीं है. कहीं और भी उसे देखा हो, ऐसा याद नहीं आया

छिद्दा ने एक धौल जमा दी—हरामी की औलाद है साला. इतनी जबरदस्त धौल हज़म करने की ताक़त पहलवानो में ही हो सकती है सिर्फ. उसने आंखें खोली थीं फिर बन्द कर लीं.

तब तक एक आदमी उसका पाजामा खोलने लगा था—चूरा बना दो साले का 'वो'.

हद हो गई थी.

लाला ने खिड़की खोलकर हालत का थोड़ा-सा मुआयना किया फिर पलड़े बन्द कर दिए. अलख को उसकी बीवी ने अंदर बुला लिया था.

मंगल दरजी अपनी छत पर खड़ा था. खड़ा-खड़ा बीड़ी का धुआं निगल रहा था.

बोस बाबू निकल कर बाहर आए थे लेकिन ऐसे नालीछाप लोगों में उलझना नहीं चाहा था. कुछ देर तो वह खड़े रहे फिर वापस चले गए. बिस्तर से उठकर आए थे, इसलिए सिर्फ लुंगी में थे. ऊपर, बदन का हिस्सा एकदम खुला था. चमड़ी फोड़कर सूखी हुई हड्डियां कभी भी निकल आएंगी.

उस आदमी के पाजामे के नाड़े में शायद गांठ थी. जो आदमी नाड़ा खोलने

की कोशिश में था. आखिर में बीच वाले आदमी का गुप्तांग अपनी हथेलियों में लेकर निहायत अश्लील ढंग से पाजामे के नीचे से औरों को दिखा रहा था. उसके चेहरे पर उल्लास तो खैर था ही, और लोग भी खुश थे.

विनायक छिद्दा के नज़दीक आया—यह सब हो क्या रहा है ? वाक्य में सवाल कम तल्खी ज्यादा थी.

—मरवाता है साला. छिद्दा के शागिर्दों में से किसी ने जवाब दिया. उसने कहा और आदिकाल के-से उल्लास से ही-ही करने लगा. पुराने ज़माने में राजा जब आसामी को भूखे शेर के पिंजरे में छोड़ देता था, तमाशबीनों की आँखों में इसी तरह की चमक आती रही होगी.

जिस आदमी ने यह जवाब दिया था, उसके हाथ में टीन की एक संदूकची भी थी. बोला—चोर है (एक अश्लील शब्द)···

छिद्दा ने उसका बाल छोड़ा और कहानी बताई. कहानी ज़रूर बताई, लेकिन यह कहानी नहीं है, सच है.

—भारद्वाज आश्रम में पडे हैं न, अपने चौबेजी, दया आ गई थी, इस भुक्कड़ पर. चार दिन पहले आया था कहीं दरभंगा से. सब साले मरने यहीं चले आते हैं. छिद्दा के मुंह के अंदर खैनी थी. थोड़ा-सा कसैला थूक उसने निकाल दिया.

विनायक सुन रहा है.

—हाँ तो चौबे जी ने सोचा, सफ़ाई-वफ़ाई कर दिया करेगा. चौबे जी के बेटे की खिलौनों की दुकान भी वहीं है. चार दिन से उनके आंगन में भी झाड़ू-बाड़ू लगा देता था और दुकानदारी में भी हाथ बंटाता था. परदेसी आदमी है, जात-पांत का पता तो कुछ है नहीं फिर भी चौबे जी ने रख ही लिया था.

— पहले इस आदमी को आराम से बैठने दो. नाक से जिस तरह खून निकल रहा है, लेने के देने पड़ जाएंगे तुम लोगों को. विनायक बोला.

छिद्दा को इस लेने-देने से न तो कोई परहेज़ है, न डर. फिर भी बात वह सिर्फ इसलिए मान गया कि मास्टर ने कही है.

वह आदमी फिर वहीं ज़मीन पर पड़ गया था.

गुमटी का चाय वाला चुपचाप खड़ा था. दुकान में ताला लगाकर वह चलने ही वाला था कि यह सब हो गया. सामने चुंगी का नल है. कुल्हड़ लेकर वह नल तक गया और पानी लेकर उस आदमी के चेहरे पर छटके मारने लगा. अब तक वह कराह भी नहीं रहा था. अब कराहने लगा.

साथ के लोग गोलाई में खड़े हो गए. लगभग पुराने ज़माने के तमाशबीनों की तरह.

छिद्दा ने सिलसिला फिर से शुरू किया —साला ढाई सेर तो एक ही 'टैम' में गटक जाता है. भूखा बंगाली था (पहले का अश्लील शब्द). तो जनाब को इतना आराम कैसे सुहाता ? चार दिन बाद बोला—हिसाब करो हमारा. अब तुम्हीं सोचो, मास्टर, चार दिन का कोई हिसाब होता है ? लेकिन चौबे जी ठहरे शरीफ आदमी. पूरे तीन रुपए दे दिए. तिस पर भभक उठे जनाब. कोई लाट 'गोअरनर' तो है नहीं जो चार दिन में हजार रुपए बन जाएंगे. दो घंटे तक इसी बात पे आसमान सर पे उठाता रहा. फिर अपनी संदूकची उठाकर चलने लगा. जाओ फिर जहन्नुम में. लेकिन चौबे जी की एकदम से नज़र पड़ गई कि रस्सी पर लटकता उनका शाल नहीं है समझ गए, इसीने सफ़ाया किया होगा. तब तक चौराहे तक पहुंच गया था (वही अश्लील गाली. छिद्दा की जुबान से यह तीसरी बार निकली थी). चौबे जी ने शोर मचाया तो मुहल्ले वालों

ने जाकर पकड़ लिया. संदूकची छीनी तो उसमें दुशाला तो था ही पीतल की एक थाली और चप्पलों की एक जोड़ी भी थी. पंडिज्जी ने अपना सामान पहचाना. कोई फोकटिया माल तो है नहीं कि जाने दो. पंडिताइन ने भी आकर थाली पहचान ली. चप्पलें पंडिज्जी की ही थीं. अब साले को थाने पहुंचाएंगे.

विनायक का चेहरा कठिन हो गया—तुम लोगों को मौका मिल गया. इसलिए खून तक उगलवा लिया इस आदमी से. कभी शायद मौका इसे ही मिल जाए.

छिद्दा को इस तरह के वाक्य की उम्मीद नहीं थी.

विनायक उस पड़े हुए आदमी के पास गया. गुमटी का चाय वाला दूसरी बार जाकर कुल्हड़ भर लाया था. वह एक ही सांस में पूरा पानी गटक गया. फिर सामने की तरफ़ देखा. विनायक की तरफ़. आंखों में कुछ देर पहले आंसू थे. अब उसका दाग़-भर रह गया है और एक ख़ालीपन-सा है.

—शर्म नहीं आती चोरी करते हुए ? विनायक बोला. इस सवाल की जरूरत नहीं थी, पूछने के बाद उसे महसूस होने लगा.

वह आदमी अब उठ बैठा.

जवाब में गढ़ कर कुछ शायद बोल सकता था लेकिन चुप रहा.

— पक्का घाघ है साला. कैसा टुकुर-टुकुर घूरे जा रहा है. अभी तो दरोगा का डंडा पड़ा नहीं. फिर बच्चू, छठी का दूध याद आ जाएगा. छिद्दा ने खैनी की थूक उगली और बोला.

एकदम से फिर फूट-फूट कर रोने लगा वह आदमी. जो शख़्स इतनी मार खाकर भी लगभग चुप था, बच्चे की तरह रोने लगा अब.

विनायक थोड़ा सकपका गया.

—चोरी की सजा दे लो जो मर्जी. चाहे तो गर्दन भी घोट दो. लेकिन यह संदूकची और यह कम्बल अपनी कमाई का है. अपनी मां की कसम खाकर कहता हूं, इसमें कोई बेईमानी नहीं है.

विनायक ने अपने हाथ में संदूकची को लेकर जांचा. मामूली टीन का पांच-सात बरस का पुराना एक मामूली बक्सा. कभी इसमें कुंडी वगैरह जरूर रही होगी लेकिन अब नहीं है. खरीदते वक्त जो रंग रहा होगा, वह अब ज्यादातर हिस्सों में गायब है. लगभग सारी दीवारें इस क़दर बेडौल हो चुकी हैं कि अब उसका ढक्कन शायद लगता भी नहीं है. अंदर वाक़ई काले रंग का एक कम्बल भी है. उसे बिछाने-ओढ़ने से लेकर शायद सामान बांधने के काम में लाया गया है. कई जगह से फटा हुआ भी था. जो बरदाश्त से बाहर बदबू उसमें से निकल रही थी, वह ऊंट के जिस्म में भी शायद नहीं होती.

विनायक ने उस आदमी की तरफ देखा. फिर छिद्दा की तरफ़—अब तुम लोग यहां से जाओ पहलवान.

छिद्दा चौंका—तुम्हारे जिल्ले वाला है क्या ? वह एक तरह से निश्चित हो चुका था कि मास्टर के साथ पुराना परिचय ज़रूर रहा होगा. वर्ना इतनी हमदर्दी सड़क चलते आदमी के लिए कभी पैदा नहीं होती. साले ने कहा जरूर अपने को दर-भंगे वाला लेकिन कहीं और का होगा, इसमें शक ही क्या ?

विनायक ने छिद्दा के सवाल का जवाब नहीं दिया.

छिद्दा को भी मौका मिला था. मास्टर पर रहम करने का मौका रोज-रोज थोड़े ही मिलता है ! चलो मास्टर तुम भी खूब याद करोगे. आज तुम्हारी ही बात सही.

फिर वे लोग चले गए.

●●

सुबह दामोदर चौबे आए.

दामोदर चौबे से इससे पहले मुलाक़ात नहीं थी लेकिन रात वाली घटना की वजह से अंदाज़ा लगाने में दिक्कत नहीं हुई कि आने की वजह क्या है !

चौबे जी का जनेऊ इस मुहल्ले में मशहूर है. छिद्दा पहलवान भी कई बार जिक्र कर चुका है. इतना मोटा कि ज़रूरत पड़ने पर भैंस न सही, गाय शायद बांधी ही जा सकती है. छिद्दा ने जो सूचना दी थी, वह सच लगी. छिद्दा ने ज़रा भी बढ़ा-चढ़ाकर नहीं कहा था.

चौबे जी माथे पर भस्म लगाए और भस्म पर चंदन की धारियां बनाए थे. उनके शरीर के डीलडौल के अनुपात में यह सब ग़ैरप्रासंगिक नहीं था. एक धोती-भर बांधे थे. ऊपर जनेऊ था. जनेऊ शायद ऊपर के वस्त्र का प्रतीक भी होता है. जनेऊ हो तो कुर्ते-कमीज़ से अंग्रेज बने बिना भी आदमी इज़्ज़त पा सकता है. दामोदर चौबे का इस पर पक्का यक़ीन है.

सुबह-सुबह मरीज होते हैं. अखबार भी देख लेना होता है. चार-छह मरीज़ थे, एक-दो और आ रहे थे.

विनायक समझ गया, रात वाले मामले के सिलसिले में चौबे जी आए हैं. रात को अगर पूरी कहानी सुन ली होगी तो शायद सो भी नहीं पाए थे. चौबे जी ज़रा हट कर खड़े थे. दस ज़ात के लोग जिस चारपाई पर बैठते है, उस पर बैठकर अपना धरम-करम क्यों बरबाद करना !

काम का सलीका वह जानते हैं. बोले——दवा बांट लीजिए. फिर इधर सुनिएगा. आवाज़ में हुक्म की छाप साफ थी. पुराने जमाने में जमींदार क़िस्म के लोग अपने मुनीम वग़ैरह से शायद इसी लहजे में बात करते थे.

पांच-छह लोगों का हाल पूछना हो तो कुछ वक्त लग ही जाता है. विनायक समझ रहा था कि दामोदर चौबे अधीर हो रहे हैं लेकिन बिल्कुल अभी इसका इलाज भी क्या हो सकता है ? चौबे जी ने भी बीच में टोककर नहीं कहा, जल्दी करो, यहां कोई फालतू वक्त नहीं है.

फिर भी कोई पौन घंटा इंतजार करना पड़ा.

लाला इस बीच कई बार इधर का चक्कर लगा गया था. उसे, ज़ाहिर है, यकीन हो गया था कि कुछ मसालेदार वाकया ज़रूर होने वाला है. दामोदर चौबे की अपनी इज़्ज़त है और इस इज़्ज़त के बारे में वह चौकस भी है. ऐसे-वैसों से बात करने की आदत उन्हें पहले भी नहीं थी.

बोस बाबू भी इधर से गुज़रते वक्त समझ गए, तूफान आने वाला है. अपनी करनी का फल कुछ तो भुगतना ही पड़ेगा. तुम्हें कहा किसने बाबा कि दूसरों के मामले में टांग अड़ाओ ? लीडरी करते फिरते हो, अब भरो ख़मियाज़ा. बोस बाबू एक थैली में सब्जी, दूसरी में मछली लेकर लौट रहे थे. पंडितजी के सामने से मछली की थैली लेकर गुज़रते हुए थोड़ी झिझक महसूस होने लगी थी. चौबे जी की तरफ उन्होंने कनखियों से देखा था. वह नाक-भौंहें सिकोड़े बिना खड़े थे.

गोबरधन बाबू अपने पोते को भूगोल पढ़ा रहे थे. यह वक्त भूगोल पढ़ाने का नहीं है. लेकिन पोते का इम्तिहान शायद एक ही आध दिन में होने वाला है लिहाज़ा अख़बार छोड़कर उन्हें भूगोल तक जाना पड़ा. भूगोल का यह चक्कर न होता तो शायद वह इधर एकबार आते और विनायक को एक-आध उपदेश देकर लौट जाते.

कम-से-कम लाला से कुछ बातें ज़रूर कर लेते.

मरीज चले गए तो विनायक ने दवा का बक्सा बन्द किया, अंदर स्टूल पर रखा फिर बाहर आ गया, दामोदर चौबे के पास—आप शायद रात वाली बात से बहुत परेशान हैं ?

चौबे जी कह सकते थे, न होने से आप खुश होते शायद. कह सकते थे लेकिन नहीं कहा. विनायक का एक-एक रोम घूरने लगे. कोई मिनट-भर का वक्त लिया था. इस तरह कोई घूरता रहे तो एक मिनट भी बहुत होता है. बोले—सुना है, आप मास्टरी करते हैं. चोर-डाकुओं से मास्टर का क्या रिश्ता हो सकता है, पूछने चला आया. दामोदर चौबे का उच्चारण स्पष्ट था. कॉमा, फुलस्टाप तक का लिहाज़ उनके वाक्यों में है. अमूमन कोई पंडा इस तरह नहीं बोलता.

—मेरी बात उन लोगों ने मानकर उस आदमी को छोड़ दिया, इसलिए कृतज्ञ हूं.

—यह मेरी बात का जवाब हुआ क्या ?

—उसने चोरी की थी, उसकी सज़ा मिलनी ही थी. मिली भी. लेकिन अगर कोई जंगली बनकर इतिहास के 'प्रस्तर युग' में चला जाता है तो क्या ग़लती नहीं करता ?

—आप सिर्फ़ इतिहास ही पढ़ते हैं क्या ?

—आप बहुत जल्दी कर रहे हैं.

—क्या ? इतिहास को ? या सवाल को ?

विनायक समझ गया, दामोदर चौबे कभी ज़रूरत पड़ने पर कचहरी में अपने मुकदमे की पैरवी ख़ुद ही कर सकेगा. वकील वग़ैरह की ज़रूरत शायद नहीं पड़ेगी. बोला—सवाल को. हफ्ते-भर बाद शायद आप ख़ुद ही समझ जाएंगे कि ग़लती मेरी ओर से नहीं हुई थी.

—मैं आपको नहीं जानता. लेकिन पता चला, छिद्दा आपकी इज्ज़त बहुत करता है. उम्मीद मत कीजिएगा कि इसके बाद भी करेगा.

—क्या आप चाहते हैं कि माफ़ीनामे पर दस्तख़त कर दूं ?

— नहीं, इन अंग्रेजी तरीकों में मेरा कोई यक़ीन नहीं है. माफ़ हम क्या करेंगे ? करने वाला तो ऊपर है.

विनायक ने कहना चाहा—नहीं नीचे ही है. आप शायद ख़ुद ही ख़ुद को माफ़ नहीं करेंगे. शायद कल या परसों या महीना-भर बाद. सोच लिया लेकिन नहीं बोला.

—मेरी उम्र देख रहे हैं ? दामोदर चौबे ने जनेऊ पकड़ ली—आपके बाप से शायद कम नहीं है. लिहाज़ा उपदेश देने का हक़ है. दामोदर चौबे अपना हक़ तो जानते ही हैं, उसे जताना भी आता है. वर्ना गले की आवाज़ में इतना यक़ीन शायद नहीं होता. बोले—शरीफों के बीच रहते हैं, मास्टरी का पेशा भी है, लिहाज़ा चोर-डाकुओं से कोई रिश्ता अब नहीं ही रखिएगा. मत सोचिएगा कि आप पढ़े-लिखे हैं इसलिए पुलिस वाले कुछ करेंगे नहीं. पुलिस वाले अगर न भी करें, मुहल्ले वाले ज़रूर दुरुस्त कर देंगे.

विनायक का चेहरा काला हो गया.

—सबके साथ हम बराबर बर्ताव नहीं करते. जैसा देव, वैसी ही उसकी पूजा.

—एक हद तक हम सबके साथ बराबर सलूक करते हैं. चाहे कोई भी हो. दामोदर के लफ्ज़ों के जवाब में विनायक बोल तो गया लेकिन लगा, तमाम लफ्ज़ फिसल कर निकल गए.

—आप दरअसल, दामोदर चौबे को नहीं जानते हैं न, इसलिए इतना बोल गए. वर्ना दामोदर किसी को इतना मौक़ा नहीं देता. भारद्वाज मुनि के वंश का ब्राह्मण हूं लेकिन आप शायद कोई लल्लू-पंजू समझ रहे हैं.

विनायक अब संतुलित हो गया. जिस तरह दामोदर उसे कुछ देर पहले घूर रहे थे, उसी तरह वह भी घूरने लगा. जैसे भारद्वाज मुनि की वंश-परंपरा का बिल्कुल अभी पता लगाना निहायत ज़रूरी है.

चौबे जी चलने लगे. निहायत एक जाहिल आदमी को इतना वक्त दे दिया था. इसके लिए उन्हें अफसोस भी होगा.

चलने से पहले एक बार और उसी तरह घूर लिया. इसका मतलब विनायक समझ गया. दामोदर चौबे के पास अगर भस्मासुर बनने की क्षमता होती तो उस प्रताप का इस्तेमाल वह शायद सबसे पहले विनायक पर ही करते.

●●

लाला दातौन करने के बहाने इस बीच गली में चहलक़दमी कर रहा था. पेट में शायद खलबली-सी हो रही थी. इतनी बड़ी बात हो जाए तो कुछ कहना-सुनना तो पड़ता ही है.

लाला फिर इधर आ गया.

ऊंट की तरह गर्दन बढ़ाकर पहले अपनी दूकान को देख लिया था. ललाइन गद्दी पर बैठी थी. अलख आलू के बोरे में से सड़े हुए दानों को अलग कर रहा था. अब घड़ी-दो घड़ी बात करने में कोई हर्ज नहीं है.

लाला ने नाली पर दातौन की पहली किस्त की थूक उगल दी—तुम सुनते नहीं हो, मास्टर. यह ठहरा इलाहाबाद. फिर मुंह बिचका लिया—पंडित-पंडों से लेकर चोर-उचक्के तक सब एक-से हैं, हां.

विनायक को याद आया, शुरू-शुरू में परमानंद लाला इसी इलाहाबाद की तारीफ़ के पुल बांधता था. कहने का लहजा कुछ ऐसा होता, जैसे यहां की विष्ठा भी पवित्र होती है. इस पुरानी बात की याद उसने लाला को नहीं दिलायी. दिलाने से उसकी सफ़ाई में कम-से-कम आधे घंटे के लिए ज़रूर पकड़ लेता.

प्रतिमा सामने से कहीं निकल गई.

लाला ने घूरकर देखा. नज़र में कितनी नफ़रत है और कितनी नए सिरे से जांच-पड़ताल, पता नहीं चला.

—क्या समझे ? लाला का सवाल शायद प्रतिमा ने भी सुन लिया है. लेकिन इस बात की चिंता परमानंद लाला नहीं करता. कोई झूठ थोड़े ही बोल रहा हूं ! डाका भी नहीं डाल रहा, जो औरतों की तरह फुसफुसा के बात करूं.

—तुम क्या समझोगे, मास्टर ? एकदम रंडी है रंडी. दूसरा वाक्य कहते वक्त सुर काफ़ी नीचा था.

—लालाजी, प्रतिमा अगर वापस आ गई, उसके सामने खड़े होकर यह सब कह लेंगे क्या ?

परमानंद हंसा. उस हंसी का मतलब हर कोई नहीं समझेगा. लेकिन लाला को मालूम है, मास्टर समझ गया. यानी तुम कहां से क्या करते हो, इस लाला के पास उसकी पूरी ख़बर है. आंखों में पट्टी बांधकर नहीं फिरता यह बनिए का छोरा. एक-एक नस तक का पता है कि मुहल्ले की किस कोठरी में हो क्या रहा है. लेकिन चीखने-चिल्लाने की आदत नहीं है, सो ज़ुबान नहीं खोली, वर्ना तुम तो क्या, एक-एक की धोती उतार कर फिरा सकता है यह परमानंद लाला.

—ख़ैर, मुझे क्या ? प्रसंग को बदलने में लाला ने आधे मिनट का वक़्त लिया था—कोई रँडी हो चाहे माँ जगदम्बा, लाला को तो आलू-प्याज़ ही तौलते रहना है. जुबान से फिर खिक-खिककी एक आवाज़ निकल आई थी—अब भी सम्भल जाओ मास्टर. पण्डित-पण्डे से उलझे नहीं कि राख हो गए. एकबार गोबरधन बाबू बता रहे थे कि मथुरा में पंडों ने मिलकर एक आदमी को मारके नाले में फेंक दिया था. कोई किस्सा-कहानी नहीं है. बाक़ायदा अख़बार में खबर छपी थी. उसी को पढ़कर सुनाया था.

—आपका दामाद ठीक है आजकल ?

लाला अब संजीदा हुआ—ठीक क्या, बेठीक क्या ? मैं होता तो चार ही दिन में ठोंक-पीटकर कायदे का कर देता. लेकिन इससे पहले ही लड़की गले में रस्सी बांधकर लटक जाएगी. सब माँ जगदम्बा की ही इच्छा है. जो है, सो ठीक ही है. आख़िरी वाक्य सुनकर लगा, नसीब को मंजूर करके भी लाला बहुत दुखी नहीं है.

—आजकल पैसे बनाने की धुन सवार नहीं होती क्या ?

लाला बहुत ख़ुश हुआ था शायद. पैसे के नाम से ही आँखें बड़ी-बड़ी होकर चमकने लगती हैं. पैसा आख़िर पैसा थोड़े ही होता है. लक्ष्मी होती है साक्षात लक्ष्मी. इसकी क़ायदे की इज़्ज़त न हुई तो पाप होता है.

—देखो मास्टर, बनिए का छोरा, कुछ मैला कुछ गोरा. पैसे बटोरने की बात दिमाग में तो आएगी ही.

विनायक ने कहना चाहा—लेकिन दिमाग न होने पर भी तो आख़िर पैसे बटोरने की बात आई ही, बस सोचकर रह गया. बोला—आपका दामाद है. कुछ बटोर लेगा तो आप ही की बेटी सुख से रहेगी.

लाला खिस-खिस करने लगा.

कर चुका तो माथा ठनका. ख़ासा मजाक कर दिया मास्टर के बच्चे ने. दो अच्छर पढ़ क्या लिए, ज़मीन पर पैर ही नहीं टिकते. अभी चौबे चार जनों को लाकर मरम्मत कर जाता तो शायद अकल ठिकाने आ जाती.

लाला फिर पुराने सिलसिले पर आ गया—भई, पढ़े-लिखे शरीफ़ आदमी हो, पड़ोसी हो, जभी कह रहा हूं.

कहने का अन्दाज़ कुछ ऐसा था, जैसे पढ़े-लिखे लोग एकसाथ शरीफ़ और पड़ोसी हो ही नहीं सकते. यह लाला की इनायत है कि एकसाथ इतना सारा ख़िताब दे दिया.

—कोई चाहे चोरी करे या डाका डाले, तुम्हें क्या ? अपना खाओ, कमाओ और मौज करो.

सिर्फ़ मौज करने की बात कह पाने से ही लाला शायद बहुत ख़ुश होता और कुछ ही देर पहले प्रतिमा भी यहाँ से गुज़री है, सो बात एकदम सटीक बैठ जाती. इतनी बड़ी लालसा दबाने के लिए नहीं होती लेकिन लाला ने उसे जीत ही लिया.

—यह जो चौबे पंडित सुबह-सुबह धमा-चौकड़ी कर गया, करम से एकदम क़साई है, क़साई. बनारस में बेटे को ब्याहा था. लेकिन बहू निकली पूरी इक्कीस. थी वह पंडे की ही लड़की लेकिन बात करती थी झांसी की रानी की तरह.

लाला की सूचनाओं से किसी को भी लगेगा कि झाँसी की रानी से उसकी अक्सर ही मुलाकात होती रही है, और दामोदर चौबे की बहू को तो क्या उसकी रगों तक को वह बख़ूबी जानता है. झांसी की रानी के साथ चौबे की बहू को इकट्ठे घोड़े पर बैठाकर उसने तुलना भी कई बार की होगी.

—तो हुआ यह कि सास अगर एक बात कहती, बहू दस झाड़ देती. ससुर यह सब कैसे बर्दाश्त करता ? वैसे साल-भर तक चुपचाप बरदाश्त किया ही था. लेकिन फिर बहू को बनारस भेज दिया और पन्द्रह दिन के अन्दर बेटे की शादी कर डाली. पुरानी बहू के पेट में तब पांच महीने का बच्चा था. बहू के बाप ने आकर, सुना है, पांव तक पकड़ लिए थे, लेकिन दामोदर चौबे ठहरा भारद्वाज मुनि के कुल का, थूककर चाटने की आदत इस कुल के लोगों की नहीं हो सकती. लाला ने मुंह बिचकाया—चौबे पिछले जनम में डोम-चमार ही रहा होगा.

विनायक ने सिर्फ़ सुना. नहीं पूछा—डोम-चमार होना और कोतवाली के अनपढ़ हवलदार की तरह बर्ताव करना, एक बात होती है क्या ?

—तो भई, पंडित-पंडों में यह सब चलता है.

विनायक समझ नही सका कि क्या चलता है ? क्रूरता या अपने पूर्वजों की दुहाई ? पूछा—क्या चलता है ?

—वही तो बता रहा हूं. जासूसी कहानियों मे जैसे-जैसे कातिल के पीछे जासूस भागता जाता है, रोमाच भी बढ़ता जाता है. इस आदमी ने ज़ाहिर है, जासूसी कहानियां नहीं पढ़ीं, लेकिन बातें करने का अन्दाज़ वही है. पर्त-दर-पर्त बातें खोलता जाता है—चाहे बनारस में पूछ लो चाहे मथुरा मे, हर जगह इस मामले में सब एक मिलेंगे. एक बेटे की चार भी बहू हों तो कोई हर्ज नहीं. अब जमाने की हवा बदल गई सो, इतना वह करने की हिम्मत नहीं करते. दामोदर चौबे की घर वाली अभी जो है, सो तो है ही, एक औ॰ थी. लेकिन करम जले को कहां मे इतना सुहाता ! दूसरी वाली शादी के बाद डेढ साल में ही चल बसी. वैसे सुनने में आता है, बड़ी वाली ने छोटी को दूध में ज़हर मिलाकर दिया था. क्या मालूम, क्या सच है और क्या झूठ ? खैर, इसके बाद चौबे को फिर से सेहरा बांधने की हिम्मत नही हुई. पण्डिताइन क्या है, तुम क्या जानो ! हमने देखा है. रमैन की कोई राक्षसी लगती है. पूरे बदन मे शायद दांत और आंखों की पुतलियों के मिवा कुछ भी सफेद नहीं है.

घड़ी-भर के लिए लाला रुका, सांस लेने की जरूरत थी शायद. नीम के दातौन के साथ यही तो फायदा है. दांत भी चांदी की तरह चमकते जाएंगे और बातें भी होती जाएंगी. एक पंथ दो काज.

विनायक को लगा, लाला थक गया है, घड़ी देखी . काफ़ी वक्त हो गया था. लाला को न सही उसे देर हो रही थी. लेकिन इतने सस्ते मे लाला से छुट्टी किसको मिली है ? जब तक कि कहानी पूरी नही हो जाती, लाला का न तो दातौन पूरा होगा न विनायक को छुट्टी मिलेगी. भागने की कोशिश करने से शायद कलाई ही पकड़ लेगा—उम्र की तजुर्बे की बात है. लौंडे-लपाड़ों की तरह बिना सुने खिसक गए तो पछताना पड़ेगा, हां.

—हां तो मैं कह रहा था, बहू का बाप तैयार हो गया कि दामोदर चौबे बेटे के लिए चाहे चार बहुएं और लाएं वह एतराज नहीं करेगा. उसकी बेटी को, दासी की हैसियत से ही सही, यहां कबूल कर लें.

लाला के गले में दातौन का एक रेशा अटक गया था. खंखारकर थूक दिया—लेकिन दामोदर चौबे टस-से-मस नही हुए ? भारद्वाज मुनि के कुल के जो ठहरे. कमान से निकला हुआ तीर भी शायद वापस आ सकता है. राजा दशरथ, सुना है, ऐसा कर सकते थे. लेकिन दामोदर चौबे ने एक बार जो फैसला दिया, वह बदल नहीं सकता. अगर बदले तो देखना, यह चौबे तो क्या दूबे भी नहीं रह जाएगा. घरवाली कच्चा चबा जाएगी, हां.



प्रतिमा वापस लौट रही थी. हाथ मे कुछ किताबे थी. जाते वक्त यह नहीं थीं. लाला ने नाक सिकोड़ ली—आज खूब लेफराइट हो रहा है.

लाला ने फिर प्रतिमा की कमर की तरफ़ देखा—यह बगाली दादा है न, मुहल्ले को बर्बाद करके रख देगा एक दिन, देखना भई. लड़की जवान हुई नही कि बाप की नीद हराम हो जाती है. लेकिन यहाँ तो मामला ही उल्टा है. खूब मटरगश्ती करता है बगाली. मछली खाता और यहाँ से वहाँ, वहाँ से यहाँ भागता फिरता.

—आजकल सीताफल क्या भाव है लाला जी !

—मज़ाक करते हो ! सीताफल का भाव तुम्हें अभी जानना था न ?

विनायक हंसा, काश ! लाला इस हमी की तकलीफ़ समझ पाता.

—खैर, मैं तो दामोदर पंडित की बात कह रहा था. बंगाली जाए भाड में.

आसपास में भाड़ होने से लाला बंगाली को न सही, प्रतिमा को शायद एक बार उसमें झोंक ही आता. प्रतिमा को देखते ही उसकी छाती शायद एक गहरी पीड़ा से कुलबुलाने लगती. मीरगंज की कोई वेश्या अगर नज़र आ गई, लाला को इससे ज़्यादा तकलीफ़ नही होगी.

—बहू का बाप रो-गाकर फिर चला गया था. लोग बताते है कि चौबे के पांव पकड़कर क्या-क्या नही किया उसने. उम्र तो थी ही, यह सब सहन कैसे होता ? लेकिन सहना पड़ता है. ऊपर वाले की मर्ज़ी न हुई तो कोई भी कष्ट छोटा ही है. आख़िर मे बुड्ढा जाकर बीमार पड़ गया.

लाला ने ढेर-सारी थूक इकट्ठे उगल दी नाली मे गिरने की बजाय वह किनारे पर गिरी, लाला को परवाह नही थी लेकिन विनायक का पाजामा गन्दा होते-होते बचा था.

—लेकिन मैंने कहा न, वह थी झासी की रानी की तरह. सो, बाप से सारा हाल सुना और चुपचाप इलाहाबाद की गाडी पर बैठ गई. तब तक उसका बच्चा पैदा हो चुका था. दो-ढाई महीने की उम्र रही होगी. सोचा होगा, बच्चे को देखकर सास को न सही ससुर को दया आ जाएगी.

स्टेशन से एक रिक्शे पर बैठकर बहू यहाँ तक आई थी. सास ने बहू को रिक्शे से उतरते हुए देखा तो लगी बाप-दादों पर बरसने. बहू की आदत चुप रहने की नही लेकिन चुप थी.

दामोदर बाहर आए थे लेकिन पण्डिताइन ने ऐसी झिड़की दी कि उल्टे पाव वापस चले गए. यजमानी का वक्त था लेकिन घरवाली की मर्ज़ी न हो तो कोई टाइम-वाइम नहीं होता.

बहू बच्चे को सीने से चिपकाए खड़ी थी. दामोदर का बेटा अपनी दूकान मे बैठा था. लड़का माँ का भक्त ठहरा. यह सब देखकर अन्दर चला गया. पण्डिताइन चीखती-चिल्लाती रही.

लाला एकदम से रुक गया था. चाबी वाला शेर दम खत्म होते ही जिस तरह रुक जाता है, लाला लगभग वैसा ही लग रहा था.

—फिर क्या हुआ मालूम ? बहू बच्चे के साथ इस हगामे के बावजूद अन्दर घुसने लगी. कहा था न, झांसी की रानी जैसी ही थी, कोई मामूली लड़की होती तो रो-धोकर वापस रिक्शे पर बैठ जाती. पण्डिताइन को यकीन नही था कि दो दिन की छोकरी की इतनी हिम्मत भी हो सकती है. उसने धक्का मारा और बहू बच्चे समेत गिर पड़ी, दाए-बाएं सिर्फ़ पत्थर ही थे. बच्चे की आंख के ऊपर नुकीला एक पत्थर जा घुसा और मक्खन-सा मुलायम शरीर ज़ख्मी हो गया. बच्चा शुरू में चीखता रहा

फिर चीखना अपने आप ही बन्द हो गया था. चीखता कैसे ? बेहोश जो हो गया था. बहू की भी ठुड्डी कट गई थी और खून बराबर निकले जा रहा था. पण्डिताइन पर क्या असर हुआ था, आप सोच रहे होंगे. फु ह् ह्! कोई असर नहीं था. बहू फिर उठी और तीनेक गज के फ़ासले पर पड़े हुए बच्चे को उठा लिया.

बोस बाबू गुजर रहे थे, सो लाला को रुकना पड़ा.

बोस बाबू ने विनायक को सर से पांव तक घूरकर देखा. ऐसा वह कई बार करते हैं. क्यों करते हैं, वह ही बता पाएंगे लेकिन विनायक को एक सुरसुरी-सी होने लगती. इस वक्त वहाँ लाला खड़ा-खड़ा नीम का दातौन और बातों को चबा नहीं रहा होता तो वह कुछ पूछ ज़रूर लेते. खैर, वह जिस तेज़ी से दरवाज़े के बाहर आए थे, उसी तेज़ी से सामने की तरफ़ बढ़ भी गए.

—मैंने कहा न, बहू थी झांसी की रानी. लाला फिर से वही मिसाल दे रहा था. इससे पहले इतनी बार दे चुका है कि किसी को भी गलतफहमी हो सकती है कि झांसी कर्नलगंज में ही कहीं है. बोला— आन वाली थी, पक्की आन वाली. ज़िन्दगी में इज्ज़त ही न मिली तो सोना-चांदी भी क्या है ? धूल है, सिर्फ़ धूल. तो बहू एलनगंज की तरफ़ बढ़ी और बांध पर बच्चे को लिटाकर गंगा मैया के अन्दर जा घुसी. लाश मिली थी दस मील दूर. पूरे इलाहाबाद में तहलका मच गया था इस बात को लेकर. अख़बारों में, गोबरधनबाबू कहते हैं, फ़ोटू वग़ैरह काफ़ी छपता रहा. सारा इलाहाबाद थू-थू करने लगा था, क्या समझे ?

इसमें समझने की क्या बात थी, विनायक सोच रहा था. आख़िर में गर्दन हिला दी थी.. जिसका मतलब 'हां' या 'न' में कुछ भी हो सकता है. लाला ने क्या मतलब लगाया था, वही जाने. बहरहाल कहानी का समापन फिर बहुत जल्द कर दिया था—बहू तो बच्चा छोड़ गई. अब उसी पर जान देती है पण्डिताइन. दूसरी बहू बांझ. अब सर पीटती है चौबे की घरवाली, वंश में दीया जलाने वाला एक मुश्किल से बचा है···यह बच्चा न होता तो पण्डिताइन शायद पागल हो जाती. खैर छोड़ो यह बात. परदेसी आदमी हो, दूसरों के मामले में दख़लन्दाज़ी मत किया करो.

विनायक ने बाँहें ऊपर उठाईं और बदन तोड़ने-सा लगा.

—पूरा इलाहाबाद ही ऐसा है. समझ-बूझ के कदम रखना. कहीं ग़लत कदम रखा नहीं कि खत्म हो गए.

विनायक को लगा, लड़ाई के दिनों में कप्तान अपने सिपाहियों को ऐसी ही हिदायतें देता होगा. क्या पता, दुश्मन ने ज़मीन के नीचे क्या छिपा रखा है ?

—पेट में ज़रा गड़बड़ हो रही थी, कोई पुड़िया हो तो देना.

—शाम को स्कूल से लौटूंगा तो हाल पूछकर दवा दे दूंगा. अभी फौरन मुझे निकलना है. विनायक अगर कह पाता कि ज़ुबान को थोड़ा आराम करने दीजिए, पेट उसी से ठीक हो जाएगा ; तो कुछ सटीक कह पाने का थोड़ा संतोष ज़रूर होता. अब संतोष न सही, राहत इस बात पर होने लगी थी कि लाला की गिरफ्त से छुटकारा मिल गया था.

लाला का दातौन ख़त्म हो गया था.

विनायक ने उसे फेंकते हुए देखा. अगर दातौन थोड़ी देर पहले ही ख़त्म हो गई होती तो एक बहुत लम्बी कहानी सुनने की ज़हमत से वह बच सकता था.

वह कपड़े बदलकर फौरन बाहर आ गया. गुमटी वाले से लेकर चाय पी, दस-दस पैसे वाले दो आटे के बिस्कुट खाए और कटरे की तरफ़ बढ़ गया. ट्यूशन में इधर कुछेक दिनों से थोड़ी लापरवाही-सी आती जा रही थी. इस बीच कई बार दूसरे कामों

में इस क़दर फसा रहा कि कई बार नागे हो चुके है.

●●

कटरे में जमनादास घी वाले की मशहूर दूकान है कटरे की शुरू की दुकानों मे यह भी एक है. आजकल बड़ी-बड़ी रंगीन और तितली छाप दूकाने जरूर वन गई है लेकिन किसी जमाने में इसी दूकान की वहुत ख्याति थी. मिरजापुर, बनारस, प्रतापगढ, रायबरेली तक से लोग घी लेने यहाँ आते थे. सिर्फ़ घी ही लेने शायद न आते रहे हों लेकिन जभी भी इधर आते तो घी लेकर जरूर जाते.

यह ख्याति अब अतीत की बात जरूर हो गई लेकिन पुराने ज़माने के लोग जानते है कि जमनादास का घी क्या होता था. जो लोग भू-शास्त्री है, कहते है, आज जहाँ खन्दक हैं, कभी वहाँ पहाड़ हुआ करते थे. जहाँ हिमालय पर्वत है, वहां किसी ज़माने मे गहरा समंदर था. कुछेक हज़ार साल बाद यह हिमालय फिर गहरी खदकों में बदल जाएगा. वैज्ञानिकों का कहना है कि सूरज मे दरार आ गई है और यह कुछेक हज़ार साल बाद खत्म हो जाएगा. जमनादास को देखकर लगता है, जो बात हिमालय के लिए सच है, वह मानव के लिए भी ज़रूर होगी. जिस घी की दूकान की ख्याति हिमालय पर्वत की तरह थी, आज खुद कटरे वाले ही नही जानते है कि जमनादास घी वाले की दूकान कहां है ?

दसेक साल पहले चुगी वालों ने एक बार तलाशी ली थी. सुनने मे आता है, कनस्तरों मे भरा हुआ वनस्पति मिला था. जमनादास हथकड़ी से तो ख़ैर बच गए थे लेकिन नसीब वही डूब गया था अखबार मे यह खबर छपी थी वैसे भी आदमी की जुबान अख़बारी ख़बरो से कही ज्यादा फैलती हुई होती है. दूकानदारी मे ग्राहक का यक़ीन एक बार चला गया तो फिर क्या बचा ?

वैसे जमनादास कहते रहे है, यह सब हिसाब रखने वाले बाबू की चाल है. दूसरे घी वालो से माल खाकर अपने ही मालिक के खिलाफ साज़िश की और बदनाम कर दिया. हिसाब-बाबू की फिर छुट्टी हो गई थी.

तब से जमनादास खुद गद्दी पर कभी नही बैठे, उनका बेटा बैठता है पीछे ही घर है, सो निगरानी उनकी बराबर रहती है.

जमनादास को इस बाबूछाप पढाई मे कोई यकीन नही है. होता तो शायद महगे स्कूल में भेज देते. पढ-लिखकर कौन-सा तोप दाग देगा कोई ! बी. ए. पास सब मुह लटकाए सुबह से शाम तक फिरते रहते है. फिर भी ज़माने के साथ कदम तो थोड़ा-बहुत मिलाना ही पड़ता है. स्कूल जाते-आते रहेगे तो बच्चो का वक्त भी कट जाया करेगा.

जनार्दन बाबू ने ही यह ट्यूशन तय करवा दिया था, दो बच्चो को सुबह घंटा-भर जोड़-घटाना बता दिया और महीने मे चालीस रुपये ले लिए. रुपए शायद और भी बढ़ सकते थे लेकिन हेडमास्टर ने विनायक से कहा था—अभी इतने ही रहने दीजिए. फिर कभी मौका देखकर खुद ही कह दीजिएगा. लालाजी अगर खुश हो गए तो साठ-सत्तर यहाँ तक कि अस्सी तक देकर सोचेंगे, कम ही दिया.

लेकिन यह अतीत की बात है.

तब प्रोफेसर बैनर्जी ज़िन्दा थे. स्कूल की मैनेजिंग कमेटी के ख़ास आदमो के लिए छोटी-सी यह सेवा कर जनार्दन बाबू कृतार्थ-से हो रहे थे.

जमनादास ने इससे पहले कभी नही पूछा कि उनके पोतों की पढ़ाई कैसी चल रही है. कभी-कभार वह अगर इधर से गुज़रते, दस-बीस सेकण्ड रुक कर आगे निकल जाते.

आज विनायक आकर बैठा ही था कि जमनादास आ गए. भौंहें सिकुड़ी हुई थीं. चेहरे में एक कसैलापन-सा था. विनायक उठ खड़ा हुआ. जमनादास के हाथ में छड़ी थी. उसका सिरा सामने की मेज के ऊपर रख दिया. बोले—कोई कह रहा था, आजकल इधर आने की फुर्सत पहले की तरह नहीं मिल रही है.

पिछले महीने तीन नागे थे. उसके पहले महीने भी दो थे. इस महीने भी एक दिन आकर आधा घंटा बाद ही वापस चले जाना पड़ा था. जमनादास के लहजे में तल्खी थी. वैसे जवाब वगैरह की जरूरत शायद उन्हें नहीं थी.

—जी हां, जिसने भी आपको बताया, गलत नहीं कहा.

जमनादास ने बात पूरी नहीं करने दी—मेरे पास भी आँख-कान हैं, कोई अगर न भी बताए, मैं जान सकता हूं.

चांदी का एक डिब्बा जमनादास के पास हमेशा ही रहता है. निकाल के एक पत्ता मुंह में रख दिया—थोड़ा होशियार रहियेगा. यहां बच्चो को अगर पढ़ाना है तो पढ़ाना ही है, कुछ और नही चलेगा.

लाला जी फिर कदम पटक कर चले गए थे.

विनायक ने फिर पढ़ाने की कोशिश की लेकिन सर दर्द से भारी लगने लगा. छोटे लड़के को जोड़ का एक सवाल देकर बड़े को भूगोल पढाना शुरू किया. ऐसा अक्सर तो नही होता है लेकिन मुरली का चेहरा याद आ गया था. भूगोल की पूरी किताब पर सिर्फ मुरली बैठा था.

फिर रद्दो. रद्दो शायद इलाहाबाद मे भी कभी दिखाई पड़ जाए. नाच सिखाने वाले मास्टर के साथ भागकर वह दुनिया देखने निकल भी तो सकती है ? रद्दो को कभी उसने इस मामले को लेकर चांटे मारने की तरह कड़वी, बहुत कड़वी बात सुनाई थी, आज उसके लिए दिल पसीज रहा है.

छात्र ने पूछा—मास्साब, गंगा नदी कहा से निकली है ?

विनायक को लगा, किसी ने थप्पड़ मार दिया. इस वक्त गगा नदी कहां से निकल सकती है ? लाला जमनादास जैसे व्यंग्य से हंसने लगे थे—इतनी आसान है मास्टरी ?

—क्या पूछा तुमने ? गंगा कहां से निकली है ? अभी कल ही तो बताया था, मानस गंगोत्री से निकली है. अच्छी तरह याद कर लेना.

उस बच्चे ने अध्याय के अंत में दिए हुए सवालों के जवाब में तीसरे सवाल का जवाब लिख लिया—मानस गंगोत्री से.

छोटा लड़का जोड़ वाला सवाल हल कर चुका था. सामने बैठे मास्साब को उसने कॉपी दिखाई. जवाब सही था.

बड़े लड़के ने पूछा—मानस गंगोत्री कहाँ है ?

यह सवाल अध्याय के अंत में नहीं है. पिछले सवाल का जवाब लिखने के बाद उसने यूँ ही पूछ लिया.

सर की नसें शायद ऑपरेशन थियेटर की लाल रोशनी की तरह कुलबुला रही है. थोड़ा भी अगर वोल्टेज और बढा तो रोशनी फ्यूज भी हो सकती है.

बड़े लड़के ने अपना सवाल दोहराया—कहां है मास्साब ?

कहाँ है ? सामने जैसे जमनादास और जनार्दन बाबू खड़े होकर मशविरा कर रहे हैं कि कैसे इस मास्टर छोकरे को खुले आम नंगा किया जा सकता है.

विनायक को क्या वाकई किसी ने अभी-अभी थप्पड़ मार दिया ? गर्दन के ऊपर पसीने की बूंदें जमा हो गई थीं. बोला—हिमालय में है मानस गंगोत्री.

लड़के ने हिन्दी की किताब निकाल ली. तारस्वर मे पहली कविता पढ़ने लगा.बोरे के अन्दर सड़े हुए आलू की तरह वही पुराना राग. सोने की चिड़िया वाला.

छोटा लड़का जोड के बाद अब घटाने का सवाल हल कर रहा था.

काफी वक्त हो गया था.

जमुनादास बाहर निकले थे. अब वापस लौटे लौटते वक्त वह दरवाजे के सामने रुके तो नही लेकिन शेरवानी की ऊपरी जेब से बटन से बधी हुई घडी निकाल कर एकबारगी देख ली.

विनायक ने भी अपनी कलाई की तरफ देखा फिर सामने के बच्चो की तरफ उनकी आंखों मे मुक्ति के लिए अनुनय था.

बहुत देर बाद विनायक मुस्कराया—आज यही छुट्टी करते है.

यह बहुत बड़ी घोषणा थी. लड़को ने अपना बस्ता उठाया और अपरिभाष्य आनद मे लगभग उछलते हुए अदर पहुंच गए,

विनायक भी बाहर आ गया.

बाहरआकर कटरे की भीड़ का एक हिस्सा बन जाना चाहा.

●●

स्कूल मे इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्ज़ का इन्सपेक्शन है.

नया हेडमास्टर टेम्परेरी है. बँरहाना के चुगी स्कूल मे पिछले बीस साल मे मास्टर है जब से जनार्दन बाबू छुट्टी पर गए है, चुगी के शिक्षा विभाग ने इन्हे ऑफिशिएट करने को भेज दिया अम्बादत्त श्रीवास्तव को मालूम है, वैसे ही कायस्थो का चुगी मे जोर अब पहले जैसा नही है तिस पर ज्यादा अडगाबाजी अगर की तो जो चान्स इतनी दौड़-धूप के बाद मिला है, वह बस एक चास-भर होकर रह जाएगा.

अम्बादत्त को पता है कि उम्र जरूर पचास पार कर गई है और सर के बाल आधे से ज्यादा सफेद भी हो चुके है लेकिन हेडमास्टर बनने की नौबत आखिर तक नही भी आ सकती है. चार-चार दिन के छोकरे मक्खनबाजी से अपना काम निकाल ले जाते है और बुजुर्ग लोगो को कोई घास तक नही डालता. जब जमाना ही ऐसा आ गया कि कमर झुका झुका के खूब सलाम करो, बाजार से लौकी और बैगन टोकरी में भर कर पहुंचाओ और सफेद झूठ बोलो कि गाव से आया है, तो कही काम बनता है.

इन्सपेक्टर आफ स्कूल्स है पंजाबी.

सुना है, पहले कही प्रतापगढ में था.

पता नही क्यों, पंजाबियों मे अम्बादत्त को बेहद कपकपी सी महसूस होती. कही अगर साफे वाला सरदार होता तो शायद सचमुच कपकंपी छूटने लगती. खैर, इन्सपेक्शन होना है तो होना ही है. स्कूल दस बजे लगने वाला है लेकिन अम्बादत्त सात ही बजे आ गए. पिछले चार दिन से स्कूल की सफाई हो रही थी लेकिन लास्ट मिनट पॉलिश का मतलब कुछ और ही होता है.

अम्बादत्त खुद लोकनाथ जाकर मिठाई का ऑर्डर दे आए थे. वहां का गुलाब-जामुन मशहूर है. फिर बरफी, कलाकंद का नम्बर आता है और जो छोटे-छोटे तिकोने है, उनकी ख्याति बनारस-लखनऊ तक फैली हुई है. अच्छी तरह समझा दिया था—भाव में चाहे दो पैसे ज्यादा लो, लेकिन माल उन्नीस नही होना चाहिए.

दो पैसे ज्यादा की बात सुनकर हलवाई का पोता हस पड़ा था. अम्बादत्त ने उसे घूरकर देखा था. हुंह से मिलता-जुलता एक शब्द गले के नीचे से निकल आया था.

कटरे मे जमनादास घी वाले के बराबर मे एकदम फर्स्ट क्लास लस्सी और रबड़ी मिलती है. लस्सी का मामला थोडा अलग पड़ता है. ताजा न हुई तो असली स्वाद कहां से आएगा ? और इतने बड़े अफसर को घटे-दो घंटे की पुरानी लस्सी पिलाकर बेइज्जती थोडे ही करनी है ? खैर, इसको लेकर परेशान होने की कोई जरूरत नही है. वक्त पर चौकीदार अगर सायकिल उठाकर गया तो लौटने में पांच मिनट से ज्यादा नही लगेगे.

अम्बादत्त ने अच्छी तरह मुआयना कर लिया. नही, अब साफ-सफाई के बारे मे इन्सपेक्टर उगली नही उठा सकेगा.

सुबह उठकर अम्बादत्त ने सातेक बाल्टी पानी में नहाया और सूरज भगवान को जल चढ़ाया—कृपा रखना प्रभु.

सातेक साल पहले ससुराल से एक अचकन मिली थी महगी चीज़ है. अम्बादत्त की जिदगी में बाकी सारी चीजें ही शायद इसमे सस्ती हैं. इस अचकन को वह हिफाजत से रख देते हैं. कहीं कोई खास जलसा हुआ या ब्याह-शादी मे कही जाना हुआ, सिर्फ तभी इसका इस्तेमाल करते है. बीच मे से एक बटन पूरा और नीचे से एक आधा पता नहीं कैसे गायब है ! ड्राइक्लीनर को चाहे कितना समझाओ, ध्यान देने की फुर्सत कहा है उसे. फिर दर्जी के पास बटन बदलने के लिए ले गए तो इस आकार के तो मिल गए लेकिन रंग मे फर्क था. दर्जी ने समझा दिया, नए बटन के रंग मे फर्क तो होगा ही. खैर, तब से अचकन इन डेढ़ बटनो के बिना ही वह पहन रहे हैं. पहन रहे है मतलब—जरूरत के वक्त पहनते है.

अम्बादत्त उस अचकन और चूड़ीदार पाजामे मे जाकर शीशे के सामने खड़े ही हुए थे कि कमरे में छोटा लड़का आ गया—वह अचकचाने लगे. लड़का शायद अलमारी खोलकर कुछ ढूंढ़ना चाह रहा था. खैर, अम्बादत्त को फिर अपने ऊपर मुग्ध हुए बिना ही निकल जाना पड़ा. लेकिन वह सतर्क हो गए थे कि पान चबाते हुए एक भी छींटा अचकन पर पड़ना नहीं चाहिए.

सर पर उन्होंने शायद कम-से-कम पाव-भर आवला तेल चुपड लिया था. कंधों तक तेल मटके में से रिसने की तरह निकल कर आ रहा था. अम्बादत्त निश्चित थे कि दिमाग ठडा रहेगा. दिमाग ही जिसका ठंडा नहीं है, वह तरक्की क्या खाक करेगा ?

दस बजे विनायक मिला.

अम्बादत्त सामने आए और दात दिखाकर हंसे—कहिए विनायक बाबू, सब ठीक-ठाक.

विनायक ने मजाक किया—सब ठीक-ठाक तो इन्स्पेक्टर का भी नहीं होगा.

महाकाली की तरह जीभ निकालकर अम्बादत्त सकपकाने लगे—यह क्या कहते हैं आप ! जी एकदम से खट्टा हो गया था. यहां विभीषणो की कोई कमी है क्या ! कोई वहां तक खबर पहुचा भी तो सकता है !

लेकिन यह वक्त दिमाग गर्म करने का नहीं है. तिस पर काले-सफेद बालों में

इतना तेल चुपड़ा हुआ है कि सर गर्म कैसे होता ! अम्बादत्त को शीशा देखने से अब दुख ही होता है. बाल अब चौथाई भी तो नहीं रह गए है. चाद बड़े आराम से बाहर झाँकने लगी है. गजा वैसे अपने आपको बिल्कुल अभी तो नही समझते लेकिन मालेक-भर मे समझना ही पड़ेगा.

—आप जरा ध्यान रखिएगा, हाँ. आफ्टर आल आई डिपेंड ऑन यू वैरी मच. स्कूल का प्रेस्टीज आपका भी तो प्रेस्टीज है.

विनायक नही रुका.

लगभग यही बात कुछ देर पहले वह वर्माजी से कर रहे थे. फिर वह दिखाई पड़ा तो वर्मा जी को छोडकर उससे दुहरा दी.

अम्बादत्त पाखानो मे भी गए.

इन्स्पेक्टर का क्या भरोसा ! कही मर्जी हुई और पाखाना ही देखने चला गया तो बाल की खाल वहा भी तो कोई निकाल ही सकता है ! सो शुरू से ही होशियार रहना चाहिए. खुद सामने खड़े होकर मेहतरों से अम्बादत्त ने अच्छी तरह साफ करवाया था. लेकिन करवाने से ही क्या होता है ! यहां के लोग साफ रहना जानते कहां हैं !

खैर, आज वह दुबारा उधर चले गए. जिस बात का डर था, वही हुआ पड़ा था. खैर, अम्बादत्त ने नाक को रुमाल मे दबाया और मेहतरो को हिदायत देने लगे. अच्छी तरह बता दिया कि कहाँ-कहाँ झाडू मारनी है. फिर एक चौकी-दार को वहाँ खड़ा कर दिया कि लडको को इन्स्पेक्टर के चले जाने से पहले पाखानों में घुसने न दिया जाए.

सब-कुछ तैयार.

अपने कमरे मे एक गुलदस्ता मगवाकर कुछ फूल भी उसमे रख लिए. गैंदे और गुलाब. गैदे और गुलाब के बीच आज तक जोड़ी किसी भी माली ने बाधी होगी क्या ! इन सब पचडो मे पडने से फायदा भी क्या ! यह कोई दिल्ली के फाईव स्टार होटल मे पार्टी है या कर्नलगज चुगी स्कूल के हेडमास्टर का कमरा ! गुलदस्ते का एक हिस्सा टूट गया था. कब किसने तोडा, इस पर पूछ-ताछ जरूर होनी चाहिए लेकिन बिल्कुल अभी इस पर ध्यान न देना ही बुद्धिमानी लगी. अलबत्ता टूटे हुए कोने को अम्बा-दत्त ने अपनी तरफ कर लिया था. इन्स्पेक्टर को पता भी नही चलेगा और अपना काम भी निकल जाएगा.

हे ईश्वर, हेडमास्टरी है या शेर के मुंह मे सर रखना ! साँस निकली जाती, प्राण कापता है लेकिन जिम्मेदारियां खत्म नही होतीं. किसी भी बात पर चौकीदार से लेकर बाबू या मास्टर तक किसी पर यकीन किया नही कि वही फिसले. अम्बादत्त का अपना तजुर्बा यही कहता है. अब इस तजुर्बे के बाद कौन अपने पैरो पर कुल्हाडी मारना चाहेगा.

वह अपने कमरे से बाहर निकले और तीन कमरे छोडकर चौथे की चिक उठा कर अदर घुस गए. हेडमास्टर स्टाफ रूम में घुस आए तो यह कमरा स्टाफ रूम नही, महात्मा गाधी की समाधि लगता है. हर कोई एक बनावटी सजीदगी चेहरे पर ओढ़कर उठ खड़ा होगा. जैसे राष्ट्रपिता की याद मे कलेजा फटा जा रहा है. हुआ भी वैसा ही. ज्यादातर लोग उठ खड़े हुए. जो खड़े हुए, वे जानते हैं कि हेडमास्टर होता क्या है! कुछ लोग नही भी खड़े हुए, विनायक, भगवतीबाबू, कृपानंदन, बलभद्र वगैरह. विनायक अखबार पढ़ रहा था. भगवती बाबू रजिस्टर खोलकर कुछ कर रहे थे. बाकी लोग आपस में बातें कर रहे थे.

अम्बादत्त जल-भुनम्र रह गए. आखिर मास्टरी के पेशे में भी अगर अदब की उम्मीद न की जाए तो फिर हममें और भंगी-चमार में फर्क रहा कुछ ! लेकिन इस नाजुक मौके पर बहस करके मिट्टी पलीद कराने की बेवकूफी वह नहीं करेंगे. उन्होंने खंखारा. निर्विकार लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए यह एक सिग्नल था. रेलवे का कायदा दूसरा है. पहले सिग्नल मिलता है फिर गाड़ी आती है. यहां ठीक उल्टा. गाड़ी आ गई अब सिग्नल दिया जा रहा है.

विनायक ने अखबार से आंखें हटाईं—आइए श्रीवास्तव जी.

धृष्टता की भी आखिर कोई हद होती है या नहीं ! नवाब की तरह कुर्सीपर डोल रहे हैं और फर्मा रहे हैं—आइए श्रीवास्तव जी.

अम्बादत्त के जबड़ों में सारे दांत मौजूद नही हैं. बत्तीसी दिखाने का उनका इतना आग्रह है लेकिन भाग्य देखिए कितना उल्टा है. उल्टा अगर नहीं भी, विरूप तो जरूर ही है.

खैर, अम्बादत्त लगभग सारे मौजूद दांतों को दिखाकर ही गदगद हुए—हां जी, आ ही गया. बी केयरफुल एण्ड स्मार्ट टु डे. जब किसी बात पर जोर देना होता है, वह अंग्रेजी में ही बोलते हैं. हमेशा वाक्य सही नही बनते. लेकिन कहना अंग्रेजी में ही पडता है. हिन्दी में कहने से जैसे बात कुछ हल्की सी हो जाती है.

विनायक ने अखबार को तह कर रख दिया —केयरफुल तो चौकीदार ही हो सकता है. हम लोग मास्टर हैं, क्लास में पढाते है. दुश्मन का मुकाबला करने थोड़े ही जाते हैं···

अम्बादत्त नजदीक आए और दोनों हथेलियां उठाकर समझाने लगे—नहीं-नहीं, साहब यह बात नहीं. मेरा मतलब है इन्सपेक्टर एक अच्छे इम्प्रेशन के साथ ही यहां से जाएं.

कृपानंदन बलभद्र से बात कर रहा था. सिलसिला रोककर बोला – जरूर जाएगा. आखिर स्कूल अब सिविल लाइन्स के रेस्टॉरेण्ट की तरह चमक भी तो रहा है.

अम्बादत्त खुश होते लेकिन वर्मा जी की आंखों पर नजर पड़ते ही समझ गए, बात घुमाकर की है छोकरे ने.

अब वर्मा जी को बोलना ही पडा—भई आप लोग है कि कुछ अच्छाई दिखाई ही नहीं देती कही. आखिर दुनिया चल रही है. कही-न-कही कुछ अच्छाई तो जरूर होगी.

वर्मा जी मुंह खोलते हैं तो पान की पीक बाहर निकलती रहती है.अम्बादत्त थोडा पीछे हटे. कहीं ऐसा न हो कि इतनी कीमती अचकन पर छींटा पड़ जाए. इस नाजुक वक्त पर स्टाफ दो हिस्सों में बटे और लड़े, यह अम्बादत्त नही चाहते हैं. उन्होंने बीच-बचाव किया—भई, जो भी है, अपना ही स्कूल है. ख़ामियां एक नहीं, एक हजार मिल जाएंगी, लेकिन दूसरों को बताने से फ़ायदा क्या ? वह सकरुण आंखों से फिर भगवती बाबू की तरफ देख रहे थे. उम्र में वह इन लौण्डे-लपाड़ों से आगे के हैं, शायद इसलिए.

भगवती बाबू ने रजिस्टर बन्द किया और आंखों से चश्मा उतारा—ख़ामियां छिपा-भर देने से मिट नहीं जाती हैं. हर कोई जानता है कि ख़ामियां हैं. इन्सपेक्टर जानता है, चुंगी का चेयरमैन जानता है, आप जानते हैं और हम लोग भी जान्ते है. सवाल यह है कि ख़ामियां हम लोग मिटा भी सकते हैं या नहीं ?

हे प्रभु ! यह क्या हो रहा है ? ये तो भाषण दे रहे हैं, जैसे कोई भी नेता

वगैरह दिया करता है. अम्बादत्त को लगा, भाग्य सचमुच ही उल्टा है. वर्ना और भी स्कूल्स हैं. इन्सपेक्टर वहां भी जाता है लेकिन कहीं भी हेडमास्टर की ऐसी त्रिशंकु-जैसी हालत नहीं होती.

विनायक बोला—बैठिए.

अम्बादत्त खिलौने के राजा की तरह बैठ गए.

जो लोग अब तक खड़े थे, वे भी बैठ गए.

—एक बात ज़रा ध्यान से सुनिए. विनायक बोला.

स्टाफरूम में हर कोई ध्यान से सुन ही रहा था. ऐसा आदमी कब क्या कह देगा, कोई भरोसा नहीं. लिहाज़ा ध्यान ही से सुनना पड़ता है. अम्बादत्त यहां नए ज़रूर हैं लेकिन आते ही पूरी रिपोर्ट मालूम हो गई थी कि कौन क्या है ?

—हम लोग जिस सिस्टम में हैं, पूरा सिस्टम ही ग़लत है. उसमें हर कोई आता है, इन्सपेक्टर भी है, चुंगी भी है, आप-हम भी हैं. हमारी तरह बहुत लोग इस को महसूस करते हैं लेकिन कहने और सुनाने की हिम्मत कोई नहीं करता. नहीं, मैं भावुक आइडियलिस्ट की तरह बात नहीं कर रहा हूं. ये फैक्ट्स हैं. कहीं से अगर कोई चिनगारी निकले, हो सकता है, बहुत बड़ी आग उसी से लग जाए ! इससे बढ़कर और कोई 'अचीवमेंट' हो सकता है ?

अम्बादत्त के चेहरे पर एक ख़ालीपन था. क्लास में जिस लड़के को गणित का सवाल नहीं आता, वह भी मास्टर की तरफ़ ऐसे ही देखता है.

—यू डिडण्ट फॉलो मी. विनायक ने कहा—जो कुछ हम लोग पढ़ते और पढ़ाते हैं, अगर माचिस की तीली सुलगाकर जला भी डालते हैं इन्हें, कोई नुकसान होगा किसी को ? नहीं होगा. तीसरे दर्जे के बच्चे को अगर नहीं भी आता है कि अफ्रीका के जंगलों में कहां-कहां गेंडे मिलते हैं, हम लोगों का यह वतन फिर भी कायम रहेगा. वी नीड ए ड्रास्टिक चेंज. संशोधन-संबोधन नहीं. संबोधन की बात बीच वाले लोग करते हैं. हम लोगों को चाहिए कि एजूकेशन के इस पैटर्न यानी सिस्टम को उखाड़ फेंकें और यहां की मिट्टी से पढ़ना-पढाना सही मायने में शुरू करें.

वर्मा जी का धैर्य जवाब दे गया—विनायक साब, अगर आप किसी दूसरे मुल्क में होते तो हैंग कर दिए गए होते.

—फाईन. क्या बुरा होता ? यहां भी लोग हैंग किए जाते हैं. एक और सही. आप क्या समझते हैं कि फांसी देने के बाद उनकी तस्वीरें अख़बारों में छपेंगी ? लेकिन आपका कहीं से भी नुकसान नहीं होगा, इतना मैं कहे देता हूं.

—प्लीज़···प्लीज़. अम्बादत्त अगर बीच दरिया के भंवर में फंस जाते तो भी इस क़दर असहाय न होते.

—खैर, मैं आपको बता रहा था कि इस इशू को लेकर इन्सपेक्टर के सामने आज हम लोग इकट्ठे आ सकते हैं. वह बिचारा, कर कुछ नहीं सकता, यह मैं भी जानता हूं. लेकिन यह एक शुरूआत तो होगी. विनायक अम्बादत्त से बोला.

अम्बादत्त को काटो तो खून नहीं. हेडमास्टरी का चांस मिलना तो दूर नौकरी बनी रही तो वही बहुत बड़ी बात होगी. अम्बादत्त को याद नहीं आता कि उनकी सात पीढ़ियों में भी किसी ने कोई ऐसा गुनाह किया, जिसकी सज़ा आज उन्हें भुगतनी पड़ेगी. पसीना आ गया था.

कृपानंदन को थोड़ा अचरज तो हुआ लेकिन वह कुछ भी सुनने के लिए तैयार ही था. अगर इतना सारा कहने की बजाय विनायक एक बम लाकर स्कूल को उड़ा देता तो भी इससे ज्यादा आश्चर्य उसे नहीं होता.

बलभद्र ने वर्मा जी की तरफ़ देखा. जैसे वर्मा जी अभी रो पड़ेंगे—भई, हम लोग ठहरे गृहस्थी आदमी. इस उमर में पेट पर लात मरवाने की बात क्यों सोच रहे हो ?

लेकिन वर्मा जी पान चबा रहे हैं. अंदर गुस्सा कुलबुला रहा है, यह बात आंखें ही बता रही थीं. लेकिन वह बिल्कुल अभी कुछ और नहीं बोले.

—क्यों, कुछ ग़लत कहा मैंने ? विनायक ने पूछा. लेकिन यह सवाल सिर्फ़ अम्बादत्तश्रीवास्तव के लिए नहीं था. सबके लिए था. वर्मा जी के लिए भी और बलभद्र या भगवती बाबू के लिए भी.

वर्मा जी के साथी हैं द्वारका शास्त्री. पहले भी जनार्दन बाबू को मक्खन ही लगाते रहे लेकिन हद से बाहर वह कभी नहीं निकले. पुराने आर्यसमाजी हैं और इस देश का उद्धार सिर्फ़ आर्यसमाज की शक्ति में ही मानते हैं. बाक़ायदा गुरुकुल में रह कर उन्होंने पढ़ाई की है. शास्त्री जी बोले—क्रांति की बात है, सो ग़लत नहीं है. लेकिन उसका भी एक समय होता है. समय से पहले किया तो मिट्टी में मिल गए.

—क्रांति सिर्फ़ समय पर ही होती है. विनायक बोला.

इस वक्त अगर अम्बादत्त को हार्ट अटैक हो जाता तो वह भगवान का लाख-लाख शुक्रिया अदा करते. बहुत हुआ तो महीना-भर हॉस्पिटल में ही रहना पड़ता लेकिन इस ज़हमत का तो सामना नहीं करना पड़ता.

—भई टाइम नहीं है. कुछ बोलिए तो आप लोग. अम्बादत्त को कहने के लिए कुछ भी सूझ नहीं रहा था.

—मेरा यह एक सुझाव ही तो है. फैसला तो सब मिलकर करेंगे. विनायक बोला.

वर्मा जी को अब बोलना ज़रूरी लगा—माफ़ करना भई, आपका सुर काफ़ी कुछ फ़ैसले जैसा ही था.

—आपके पास समझ और दूरदृष्टि है. कल की बात मुमकिन है, आज ही समझ गए हों.

मज़ाक का घूंट पीने की आदत वर्मा जी की है. पीना भी पड़ा.

—भगवती बाबू सीनियर आदमी हैं. स्कूल की इज़्ज़त का सवाल है. वी मस्ट बी केयरफुल एबाउट इट. अम्बादत्त ने इस दफ़ा केयरफुल कह लिया तो लगा, ख़ासी बेवकूफ़ी हो गई है. सिलसिले को उन्होंने आगे बढ़ाया—वैसे विनायक साब का ख्याल बड़ा सुन्दर है···.

बलभद्र ने रोककर कहा—नहीं श्रीवास्तव जी, बहुत खुरदुरा है.

खिक-खिक की आवाज़. आवाज़ में गदगद होने का एक दुर्लभ भाव, जो पर्मानेण्ट हेडमास्टर में कभी नहीं मिलता. अम्बादत्त बोले—ख़ैर, मुझे तो सुन्दर ही लगा. कभी इस पर भी विचार किया जा सकता है.

विनायक ने मज़ाक किया—आप का यह सुन्दर लगना भी नफ़ीस है. लेकिन इस पर विचार करने की फ़ुर्सत लोगों को मिलती ही नहीं है. आज मौक़ा अच्छा था, सो सोचा आज ही क्यों न हो जाए.

इसके बाद कोई क्या कहेगा ?

—वर्मा जी, अगर आप दरोगा होते तो शायद मेरी फांसी की सज़ा के लिए महामान्य न्यायाधीश के सामने खूब पैरवी करते. विनायक बोला.

वर्मा जी खून का घूंट पीकर रह गए.

भगवती बाबू ने विनायक को रोका—वर्मा जी काफ़ी परेशान होंगे, उन्हें अब

छोड़ो भी….

अम्बादत्त ने कलाई पर बंधी घड़ी देखी. शरीर के अन्दर रक्त-संचार कैसे होता है, अच्छी तरह महसूस हो गया.

यह स्टाफ रूम न होता तो विनायक का हाथ अपनी हथेली में लेकर अम्बादत्त ज़रूर ही रो पड़ते. विनायक के कंधे पर उन्होंने हाथ रखा — भई, तुम्हारा सोचने का तरीका बहुत अच्छा है.

कृपानंदन ने मार्क किया कि हेडमास्टर 'आप' से 'तुम' पर आ गया है. बहुत कम समय में अपनापन जताने का शायद इससे अच्छा कोई और रास्ता भी नहीं होता.

बलभद्र धीरे से बोला—सोचने का तरीका ही तो अच्छा नहीं है.

अम्बादत्त बहरे नहीं हैं. लेकिन किया क्या जाए ? सुनकर भी बात उन्होंने सुनी ही नहीं.

बलभद्र फिर मुस्करा रहा था. व्यंग्य करने के ऐसे मौके बाद में नहीं भी तो मिल सकते हैं !

अम्बादत्त ने यह भी देखा. हथेली को विनायक के कंधे पर झटके से रखा—बीस साल से मास्टरी कर रहे हैं. कभी रिवोल्यूशन वगैरह पर पढ़ने-वढ़ने का मौका ही नहीं मिला. आई विल कम टु योर प्लेस सम डे. कुछ गाइड तो आप कर ही सकते हैं.

एक टेम्परेरी मास्टर के सामने हेडमास्टर रोनी सूरत में कुछ अर्ज कर सकता है, कोई यकीन करेगा ? विनायक को लगा, इससे ज़्यादा हृदय-विदारक दृश्य तो रामायण में राजा दशरथ के मरने के प्रसंग तक में नहीं है.

अम्बादत्त फिर उठ खड़े हुए. अब एक बार ऑफिस स्टाफ को लास्ट मिनिट इन्सट्रक्शन्स देनी हैं. फिर जाकर गेट पर खड़ा होना है. उन्होंने शुरू में विनायक की तरफ़, फिर भगवती बाबू की तरफ़ देखा—चलता हूं फिर, हां. चार शब्दों के इस वाक्य में जितनी उम्मीदें थीं, जितना अनुनय था. दुनिया की जो तमाम उम्मीदें और अनुनय है, जोड़ डालने से भी शायद भगवती बाबू की गुज़ारिश के वजन में हल्के ही बैठेंगे.

हेडमास्टर के निकलते ही वर्मा जी भी निकल गए. लगभग उनके पीछे-पीछे ही. बलभद्र एकदम से हंस पड़ा.

●●

अम्बादत्त ने सबसे पहले पानी पिया. गला सूखकर रेगिस्तान हो गया है. फिर वर्मा जी को देखकर एक लम्बी सांस ली. इतनी लम्बी कि अन्दर उनका फेफड़ा फूल कर शायद दुगुना हो गया.

वर्मा जी ने ढाढ़स बंधाया—अपने को शहीद भगतसिंह से कम नहीं समझता छोकरा. जनार्दन बाबू ने इतनी मदद की, कई ट्यूशन दिलाए लेकिन देखिए, उन्हीं के पीछे पड़ गया. ख़ैर, आप फिक्र मत कीजिए. आख़िर हम लोग भी तो हैं. चार उजड्ड छोकरे कुछ कर लेंगे, ऐसा हम होने देंगे ? इट इज़ इम्पासिबल. वर्मा जी खुश हुए थे कि वह अंग्रेज़ी में बोले और वाक्य एकदम शुद्ध निकला.

हेडमास्टर को यह ढाढ़स कहां से रक्षा करता ? जेब से रूमाल निकाल कर उन्होंने चेहरे का पसीना पोंछा—कोई यक़ीन नहीं करेगा यह सब.

—हम लोग आराम से चल रहे थे. अपना दुख-दर्द आपस में कह-सुनकर बांट भी लेते थे. बस फिर राहु का उदय हो गया. उसी दिन से समझिए, यहां, गेट के अन्दर घुसते ही मन खट्टा हो जाता है.

—वैसे सुना है, इन्सपेक्टर पक्का घाघ आदमी है, ऊपर-ऊपर मुस्कुराता रहेगा और अन्दर से जो रिपोर्ट भेजेगा, उसी में भट्ठा बैठा देगा.

—लेकिन दौड़-भाग हम लोग भी तो कर सकते हैं. आख़िर दो-चार लोग अपनी पहचान में भी हैं. वर्मा जी ने यक़ीन ज़रूर दिलाना चाहा लेकिन उनकी बातें एल्यूमुनियम के दबोचे हुए बर्तनों की तरह हल्की लगीं.

—यह ग्रुपबाजी है. मैं सोच रहा हूं, अगर वाक़ई ये लोग इन्सपेक्टर आफ स्कूल्स को रिवोल्यूशन बताने आए तो फिर मेरी तो मिट्टी ही पलीद हो गई.

—आप बेफ़िक्र रहिए….

अम्बादत्त अब झुंझलाए—तो क्या मैं तकिया मंगाकर सो जाऊं ?सपना देखूं ?

वर्मा जी चुप हो गए. एक-आध बार कुर्सी को इधर-उधर खिसकाया. फिर आहिस्ते से उठकर बाहर चले आए.

●●

अम्बादत्त ने प्रभु का नाम एक बार और लिया. पता नहीं क्या है तेरी इच्छा, प्रभु ! ख़ैर, जो भी है तेरी लीला ही है.

पूरे दस बज गए.

घंटी बज गई.

अम्बादत्त ने फिर दफ्तर में घुमकर बाबू को सबकुछ समझा दिया—जैसे ही मैं कोई फाईल वग़ैरह मांगू, आप फौरन चले आइएगा. सब ठीक-ठीक कर लीजिए. कहीं ऐसा न हो कि आप ढूढ़ते ही रह जाएं. अफसर आदमी हैं. बीस से उन्नीस भी हुआ तो पता नहीं क्या रिपोर्ट लिख दें.

दफ्तर के बाबू पुराने आदमी हैं. आंखों में निकेल का गोल चश्मा चढ़ गया यही बाबूगिरी करते हुए. रिटायर होने मे शायद अब साल-भर ही बाकी होगा. उन्होंने अम्बादत्त को पूरी तरह आश्वस्त कर दिया—आपने इशारा किया नहीं कि फाईल हाज़िर हुई.

अम्बादत्त आश्वस्त नही हुए थे. ख़ुद ही एक बार सामने जाकर सारी फाईलों के नम्बर-वग़ैरह सरसरी निगाह से देख गए.

सामने जमादार एक कनस्तर में कागज वग़ैरह उठा रहा था. वैसे सफ़ाई पूरी थी ही लेकिन एक-आध टुकड़ा शायद बाद में किसी ने फेंका था. इस वक्त जमादार का होना मुनासिब नहीं है. उन्होंने इशारा किया—तू अब टल भई, यहां से.

अब बस सबकुछ तैयार है.

अम्बादत्त गेट के पास खड़े हो गए. इन्सपेक्टर चूंकि ड्यूटी पर आ रहा है, रिक्शे से ही आएगा. अम्बादत्त ने तय कर लिया कि जैसे ही साहब बहादुर का रिक्शा आकर रुकेगा, झट से बटुआ निकाल कर किराया चुका देंगे. पूरा नोट देंगे और छुट्टा वापस नहीं लेंगे. मन-ही-मन थोड़ा-सा रिहर्सल भी दे लिया कि कैसे झुककर नमस्कार कहेंगे और उनके हाथ की फाईल लेकर कैसे कहेंगे —आइए.

अम्बादत्त को फिर प्यास लगी. लेकिन ऐन मौके पर मंगाकर पानी पीना भी अच्छा नही लगता है. जब तक सबकुछ अच्छी तरह निपट नही जाता, प्यास तो लगती ही रहेगी. वह जानते हैं, प्रभु के स्मरण से बल मिलता है. उन्होंने वही किया. इन छोकरों पर फिर भी भरोसा नहीं आ रहा है. ये लोग तो ऐसे हैं कि अपना ही घर फूंक सकते हैं. प्रभु, इन्हें कम-से-कम आज के दिन के लिए सद्बुद्धि देना.

धूप में खड़े-खड़े पसीना आ रहा था. सर में चुपड़ा तेल भी अब बहने लगा था. हाथ में एक छाता होता तो इस चिलचिलाहट से कुछ तो राहत मिलती. रूमाल से

वह अपनी गर्दन पोंछ रहे थे.

अचानक ख़ाकी वर्दी में चपरासी आया. सरकारी तमगा लगा हो तो थोड़ा झुकना ही पड़ता है. अम्बादत्त झुके. क्या मालूम, कहीं साहब का ख़ास अर्दली ही न हो ! चपरासी ने चिट्ठी थमाई, दस्तख़त कराया और सायकल मोड़कर वापस चला गया.

साहब बहादुर के आज न आ पाने की सूचना थी.

अम्बादत्त का जैसे बुख़ार उतरा. अब अन्दर कमरे में आकर दो ग्लास पानी पिया और कुर्सी पर आराम से बैठ गए. जी में आ रहा था, विनायक को जाकर सुना आए—अफ़सोस है बन्धु, तुम्हारी मंशा पूरी नही होगी. लेकिन वह जानते हैं, टेम्परेरी हेडमास्टर यह कभी कह ही नही सकता.

●●

आसमानी रंग की कुछ सिकुड़ी हुई साड़ी में दरवाज़े पर एक बार दस्तक देकर प्रतिमा आ घुसी. पीछे उजागरसिंह था. इस उजागरसिंह को कुछ ही दिन पहले एक बार बोस बाबू के यहाँ बुरी तरह जलील होना पड़ा था. नितांत निरीह की तरह वह रुआंसा बैठा था.

विनायक मां को खत लिख रहा था. शाम हो चुकी थी. अंधेरा बहुत गहरा तो नहीं था लेकिन थोड़े-से फ़ासले के आदमी को भी पहचाना नही जा सकता था. रास्तों पर चुंगी की लाइटें जल गई थीं.

स्कूल के बाद घर में बीस-पच्चीस मिनट के लिए बैठा था वह. इस बीच चरनदास दफ्तरी इत्तिला दे गया था कि जनार्दन बाबू ख़ूब दौड़-भाग कर रहे हैं. विनायक फौरन निकाला जा सका तो उनसे बढ़कर खुश कोई नही होगा. चरनदास के जाने के बाद वह मम्फोर्डगंज में ट्यूशन पर गया था. कोई दस मिनट पहले लौटा है. थोड़ी देर में थाने के सामने वाले दीना पंसारी के तीन बेटों को पढ़ाने निकलना है.

प्रतिमा अन्दर आई तो विनायक चौंक गया. पीछे उजागर का होना, पूरे दृश्य को काफ़ी कुछ नाटकीय कर रहा था. प्रतिमा कभी भी इस वक्त नहीं आती. इधर हफ्ते-भर से अंग्रेज़ी पढ़ने आई भी नही थी. अब अचानक उजागरसिंह के साथ आई तो समझ में नहीं आया कि बिल्कुल अभी क्या कहा जा सकता है.

प्रतिमा ने दरवाज़े को बोल्ट कर दिया. फिर झुककर पांव छू लिए—हम लोगों ने शादी कर ली···कहते हुए उसकी आवाज़ दिए की लौ की तरह कुछ कंपी थी.

विनायक ने उसके हाथ पकड़ लिए—बधाई ! बहुत-बहुत बधाई. फिर उजागर सिंह के कंधे पर भी हथेली रखी—कांग्रेचूलेशन्स.

प्रतिमा के चेहरे पर भयंकर थकान थी. तूफानों में से गुजरने के बाद आदमी के चेहरे पर जैसी छाप रहती है, लगभग वैसी.

—आज सुबह कोर्ट में सब हो गया. सोचा, आपसे ज्यादा खुश कौन होगा, सो दिन-भर इंतजारी के बाद सबसे पहले आपके पांव छूने आई हूं.

विनायक सकपकाया. एकदम से रद्दो का चेहरा याद आ गया था. बोला—

ज़रा एक मिनट ठहरो, मैं अभी आया.

प्रतिमा ने विनायक का हाथ पकड़ लिया—मिठाई खिलाएंगे न ? आज नहीं. थोड़ा वक्त और निकल जाने दीजिए. प्रतिमा जैसे अपने ही ऊपर आश्वस्त नहीं हो पा रही थी.

इस लड़की के चेहरे पर एक ही हफ्ते में काली झाइयां उभर आई हैं. हफ्ते-भर में किसी की उम्र दस साल आगे बढ़ सकती है, उसे देखकर यक़ीन करना पड़ा.

—घर पर पता है ? विनायक ने पूछा.

—अभी नहीं. घंटे-भर बाद मेरी तलाश शुरू होगी शायद. फिर अपने आप ही पता हो जाएगा. प्रतिमा के गले में अभिमान था. अभिमान से भी ज्यादा अपमान की कड़वाहट.

उजागरसिंह चुप है. आज थोड़ी देर पहले जिस आदमी की शादी हुई है, वह अभी तक तूफान के ही बीच है ? सबूत के साथ कहने से भी कोई यकीन नहीं करेगा.

—आपके अलावा किसी ने भी मेरी परेशानियां नहीं समझी थीं. आप हौसला न बढ़ाते तो शायद फैसला करने में मैं और भी कमज़ोर पड़ जाती. शादी के बाद लड़कियां रोती हैं. प्रतिमा की भी आंखों में पानी था. लेकिन घर छोड़ने का नहीं, कृतज्ञता का. इस तरह कृतज्ञ किसी-किसी के प्रति ही हुआ जा सकता है सिर्फ़.

—सो, यू आर हैपी नाउ ? विनायक उजागर सिंह की तरफ़ देखकर मुस्कराया.—बहुत खुशकिस्मत हो, सरदारजी. बहुत अच्छी बीवी मिल गई.

जवाब में उजागरसिंह थोड़ा-सा हंसा.

प्रतिमा विनायक के और भी करीब आ गई. उसकी हथेलियों को मुट्ठी में ले लिया—आपने तो सिर्फ बधाई दी, आशीर्वाद कौन देगा ?

मंगल-कामना में आशीर्वाद भी रहता है, अलग से कहने की जरूरत नहीं पड़ती.

प्रतिमा ने अपने पर्स से निकालकर उजागर सिंह की दूकान का एक कार्ड थमाया. उसमें घर का पता लिखा है—अगले हफ्ते किसी दिन आपका इन्तज़ार करूंगी.

वे लोग फिर बाहर निकल गए.

जिस रिक्शे से यहां आए थे, वह इन्तज़ार में रुका हुआ था. उस पर जाकर बैठ गए.

●●

दीना पंसारी के यहां से विनायक लौटा तो बहुत भूख लग रही थी. थकान भी इतनी थी कि स्टोव जलाकर रोटी सेंकने की इच्छा नहीं हो रही थी. वैसे यह कोई परेशानी की बात नहीं है. कर्नलगंज में कई सारे ढाबे हैं, जिन्हें मुहल्ले वाले 'होटल' कहते हैं. उसने तय किया, घर जाकर हैण्डपम्प के ताज़े पानी से नहाएगा, मां की अधलिखी चिट्ठी पूरी करेगा और किसी ढाबे मे घुसकर रोटी-सब्ज़ी खा लेगा.

गली में घुसते ही बोस बाबू की चीख-पुकार सुनाई पड़ी.

—तो आ गए हैं आप ? विनायक को देखते ही बोस बाबू बोले. लहजा कुछ ऐसा था कि नहीं भी अगर आते, हम गले में रस्सी का फंदा डालकर खींच ही लाते.

बोस बाबू के गिर्द परमानंद लाला, मंगल दर्जी, ललाइन, अलख, गोबरधन बाबू, उनका टाइप सीखने वाला छोटा लड़का वग़ैरह बहुत सारे लोग थे. 'वग़ैरह' का मतलब है, बाक़ी लोगों के चेहरे गली में अक्सर नज़र आते हैं लेकिन उनके नाम विनायक नहीं जानता.

बोस बाबू विनायक के सामने आए—मेरा लड़की घर छोड़कर भाग गया. आपको शायद पता नही होगा. क्यों ?

लाला खिस-खिस कर रहा था. उसे शायद इस बात पर बेहद खुशी थी कि उनका खयाल गलत नही साबित हुआ. रंडी न होती तो क्या सरदार के साथ भागती ? वेश्या होने के लिए किसी और दलील की जरूरत है, परमानद लाला नहीं समझता.

—प्रतिमा ने शादी की है.

—और आप उस शादी के पंडित थे, यही न ? बोस बाबू ने मुह बिचकाया.

लाला ललाइन से फुसफुसाकर कुछ कह रहा था दोनो की ही आखो मे जो चमक थी, वह गहरे आनन्द के अलावा नही उभरती.

—मेरा लडकी सरदार के साथ रिक्शे मे बैठकर अभी यहाँ आया था और आपने उन लोगों को भाग जाने मे मदद किया. बोस बाबू बौखला रहे थे.

—वे लोग भागेंगे क्यों ? कोई क्राईम थोडे ही किया है ? विनायक समझ गया कि लाला या ललाइन ने उन लोगो का आना-जाना जरूर देखा होगा और उनके जाते ही बोस बाबू के यहा जाकर उगल दिया होगा.

—ह्वाट ? क्राईम और क्या होता है ? आप मास्टर है कि गुण्डा ! मुहल्ले मे घर-गिरस्थियो के बीच रहकर गुडागर्दी करते है ! मुहल्ले वाले आखिर मे उधेड़ देंगे आपको ! मुहल्ले के लडको से कह दूं तो खोपडी फोड डालेगे आपका.

—खैर, छोडो दादा, अब तो जो होना था, सो हो ही गया लाला लगभग उपदेश के स्वर मे बोल रहा था

— मेरा घर बर्बाद हो गया. पार्टीशन से पहले बोस फैमिली के पास पैलेस था, पैलेस यहाँ कोठरी मे गुजारा करना पडता है, इसका मतलब यह तो नही कि मेरा कोई इज्जत नही है.

बोस बाबू के घर मे रोने-धोने की आवाज आ रही थी. उनकी बीवी शायद सर फोड रही थी

विनायक अब थोड़ा सख्त पडा - मेरी खोपडी आप मुहल्ले के लडकों से नही, गुण्डो से जरूर फोडवा सकते है, अगर उन लोगों से आपका रिश्ता है, तो···

—देखा, देखा आपने गोबरधन बाबू ! बित्ते-भर का छोकरा मुझे गुण्डा बनाता है. बोस बाबू बौखलाहट मे थर्रा रहे थे

गोबरधन बाबू हाथ मे अखबार लिए खडे थे, मामला इतना गदा है कि भंगी-चमारों के मुहल्ले मे ही कोई ऐसे लड-झगड सकता है. गोबरधन बाबू भले ही मुंह खोलकर न बताते हों लेकिन अपने पडोसियों को वह भंगी-चमार से ज्यादा कभी नही समझते.

लाला ने सान्त्वना देने की कोशिश की—सरदार भी आखिर हिन्दू ही होते है, आजकल तो कटुओं तक से हिन्दू लोग शादी रचा रहे हैं.

—हुंह ! बोस बाबू ने मुंह बिचकाया हिन्दू हो या क्रिश्चियन, मैं अपना बेटी का शादी किसी के भी साथ कर सकता हूं लेकिन उस सरदार के बच्चे के साथ नही. आई···आई हेट हिम.

—वह आदमी आपसे कही सुपीरियर है विनायक ने कहना चाहा लेकिन कुछ सोचकर बोला—लडका बहुत अच्छा है.

— हू आर यू टू गिव फैसला ! बोस बाबू ने होठों को फैला लिया—जिस आदमी से मैं नफ़रत करता हूं, उसे अपना लड़की नही दे सकता.

—अच्छा होता, आप खुद ही देते. तो कम-से-कम वे लोग आपसे नफ़रत तो

नहीं करते ! विनायक बोला.

—मैं तुम्हें जेल भिजवाऊँगा. याद रखना. आई एम फ्राम बोस फैमिली. पार्टीशन न होता तो तुम्हें मैं ह्विप करता.

—पार्टीशन हो गया, इसलिए गाली दे रहे हैं. कभी शायद गुण्डों से पिटवा भी देंगे. तसल्ली होगी तब !

ललाइन ने कहकहा लगाया—खूब बोलते हो मास्टर.

सास हंस रही थी इसलिए अलख भी थोड़ा हंसा. उसकी बीवी दरवाज़े पर खड़ी थी.

—सरदार और बंगालन की जोड़ी बंधने की बात कभी सुनाई में तो नहीं आई लेकिन चलो, कर्नलगंज से शुरुआत ही सही. लाला बोला. कहकर बहुत खुश हुआ. आखिर घर संभालना सबके बूते का थोड़े ही होता है !

लाला की बात बोस बाबू ने सुनी थी लेकिन उसके पीछे का व्यंग्य नहीं समझा था. समझने की हालत तब थी भी नहीं.

—मैं कल ही कोर्ट में जाऊंगा. मकान बेच दूंगा लेकिन तुम्हें भी जेल भिजवा कर ही दम लूंगा. दीज आर माई वर्ड्स, माइंड इट.

बोस बाबू गुस्सा होते है तो दोनों जबड़े तेज़ छुरे की तरह लगते हैं. तीन दिन से शायद उन्होंने दाढी भी नहीं बनाई थी. वैसे भी हफ्ते में दो बार से ज़्यादा नाई के पास कभी नहीं जाते. खुद शेव नहीं करते. कहते हैं—बाप-दादों से विरासत में मिला बरसों पुराना आदत है. अंग्रेज़ के देखादेखी लोग विलायती कायदे से खुद ही दाढ़ी-मूछें साफ जरूर करने लगे लेकिन यह अपने से नहीं होने का. जब नौकरी में था या उससे भी पहले जब अंग्रेज़ों का जमाना था, तब भी हफ्ते में दो बार ही नाई के पास जाता था. आज रिटायर होने के बाद सात-आठ बरस हो गए लेकिन आदत पुराना ही रह गया.

—अपना लड़की को मैं आपके पास आवारागर्दी करने के लिए भेजता था या दो-चार अच्छी बातें सीखने के लिए ! बोस बाबू की आवाज काफ़ी चढ़ने के बाद फट-सी रही थी. वह जहाँ खड़े थे, उसके पीछे गोबरधन बाबू की रसोई की दीवार है. दीवार पर हेल्थ डिपार्टमेण्ट वालों ने कत्थई रंग का खाना बनाकर पेंसिल से तारीखें डाल दी थीं. जब-जब मलेरिया वग़ैरह के बारे में पूछताछ करने आते हैं, तारीख डालकर दस्तखत कर जाते है.

बोस बाबू की तन्दुरुस्ती के बारे में कभी किसी ने पूछा है क्या ! पूछने वाले डॉक्टर-हकीम नहीं होते हैं. लेकिन जरूरत पड़ने पर अस्पताल का इन्तजाम जरूर कर सकते हैं. कभी अगर उनमें से किसी ने बोस बाबू का चेक-अप कराया तो शायद पता होगा. इकट्ठे ही मलेरिया, डिसेंट्री, सर्दी, जुकाम, सरदर्द सबकुछ है. और किसी बात का हो या नहीं, उनके सर का इलाज जरूर होना चाहिए था. विनायक को लगा, यह न करवाकर उनके घर वालों ने उनके साथ बहुत ज़्यादती की है. घर वाले न सही, मुहल्ले वाले, अड़ोस-पड़ोस के लोग भी तो इतना कर सकते थे.

बोस बाबू ने लुंगी में कमर के साथ खोंसी हुई डिबिया निकाली और चुटकी-भर लेकर नाक में घुसेड़ दी—आपके यहां आने से पहले मेरा लडकी घर से आख़िर निकलता ही था ! लेकिन कभी ऐसा प्रॉब्लेम नहीं आया.

—फिर ! क्या करने से आपको तसल्ली होगी ?

—जूता, जूता मारने से समझे !

लाला खिक-खिक करने लगा. अलख भी. इतना लम्बा दृश्य रामलीला में भी

नहीं होता.

विनायक के चेहरे की पेशियाँ फड़क उठीं.

बोस बाबू कूद रहे थे—इस कर्नलगंज के चौराहे पर तुम्हें जूता मारूँगा, डोम-चमारों से मरवाऊंगा.

शोर सुनकर लल्लू चाय वाला झांकने आया था. दो-तीन यूनीवर्सिटी के लड़के भी पीछे-पीछे आए थे. सिर्फ कौतूहलवश.

—देखा तुमने लल्लू भाई ! बोस बाबू लल्लू में शायद सहारा ढूढ़ रहे थे—मेरा घर जला दिया इस मास्टर के बच्चे ने मैं बर्बाद हो गया.

थोड़ी देर बाद गला फाड़कर रो लेने से बोस बाबू का कलेजा शायद थोड़ा ठंडा पड़ता.

लल्लू ने कुछ नहीं पूछा. शायद आश्चर्य भी नहीं हुआ था उसे.

लाला अब आगे बढ़ा—दादा की लड़की एक सरदार के साथ भाग गई, भैया. इस वाक्य में सूचना कम, खुशी ज्यादा थी.

—इसने, इस मास्टर के बच्चे ने यह सब करवाया. बोस बाबू ने विनायक को छोटा-मोटा एक धक्का ही दे दिया.

यूनीवर्सिटी के लड़के तमाशा देख रहे थे. ये सब हॉस्टल के लड़के है. रात को खाना खाने के बाद शायद चाय पीने और गाना सुनने लल्लू के यहा आए थे. अब यहाँ तमाशा देख रहे हैं. उनमें मे एक लडका जो गले मे रूमाल बांधे था बोला—हिस्ट्री आपने शायद नही पढी. पृथ्वीराज भी तो संयुक्ता को लेकर भाग गया था संयुक्ता के बाप ने इसलिए गली मे खड़े होकर रोना-गाना नही शुरू किया था, बाकायदा लड़ाई की थी.

हुंह ! बोस बाबू के जख्म पर जैसे किमी ने नमक छिड़क दिया. यूनीवर्सिटी में नाम क्या लिखा लिया, अपने को मॉक्रेटीज समझने लगे.

गोबरधन बाबू की बीवी अपनी बहू के माथ छज्जे पर खड़ी थी इतना जीर्ण छज्जा गोबरधन बाबू की हस्तिनी पत्नी का भार कैसे उठा रहा है, देखकर लड़कों को ताज्जुब ही हुआ. कामशास्त्र के आचार्य वात्स्यायन ने स्त्री जाति को चार हिस्सों में बांटा था—पद्मनी, शंखनी, मृगनयनी और हस्तिनी. गोबरधन बाबू की पत्नी के वजनका अंदाजा लड़कों ने तीन मन का लगाया और निष्कर्ष निकाल लिया कि वात्स्यायन ऋषि के अनुसार यह औरत हस्तिनी ही होगी. जाहिर है, विभाजन करते समय ऋषि ने गोबरधन बाबू की पत्नी को नहीं देखा था. वर्ना कोई पाचवा वर्ग वह जरूर बनाते. रूमाल वाले लड़के ने ऊपर छज्जे की तरफ देखकर सीटी बजाई. उसकी निगाह, बहू की बजाय सास की तरफ है, इतना शायद अलख ने भी समझा था.

—तुम्हारे बाप का उमर का हूं, हिस्ट्री पढ़ाने आए हो ? कहने के बाद तुरंत ही बोस बाबू समझ गए, उन छोकरों से उलझना बेकार है.

वह लड़का हंसा—नहीं जनाब, इस उम्र में आप हिस्ट्री पढ़ेंगे तभी तो उसके अंदर की बातें बता रहा हूं.

गोबरधन की पत्नी बहू को लेकर अंदर चली गई थी. अंदर जरूर चली गई थी लेकिन इतने बड़े 'सुन्दर कांड' मे वह अपने को वंचित नही रख सकती. गोबर-धन बाबू जानते हैं, उनकी पत्नी निश्चित रूप मे किसी खिड़की-दरार मे आख लगाए खड़ी होगी. लड़कों का यह बर्ताव उन्हें नागवार लगा था, लेकिन उलझने से फायदा कुछ नहीं होगा, इतना समझ गए थे. कीचड़ में पत्थर डालो तो छींटा अपने ही ऊपर

आता है. इन लड़कों को कीचड़ से ज्यादा कुछ और समझने की जरूरत समाज-सुधारकों की हो सकती है, उनकी नहीं है.

—यह है शहर-भर के उचक्कों का गुरु. बोस बाबू ने विनायक को मुक्का दिखाया. फासला थोड़ा और नजदीक होता तो लग भी सकता था.

—बंगाली, बहुत दहाड़ रहे हो. इतनी देर बाद लल्लू बोला. बरसों बाद शायद जिस्म का वह लल्लू उस्ताद वाला पुराना खून थोड़ा उफनने लगा था.

—यू मोन, मैं दहाड़ रहा हूं ? बोस बाबू ने अपने ही माथे पर थप्पड़ मारा —मैं बर्बाद हो गया, जलकर राख हो गया और तुम लोग तमाशा देखते रहे हो.

अब लल्लू कड़का—खामोश !

सब खामोश हो गए.

लल्लू चायवाला इस तरह कड़क लहजे में बोल सकता है, किसी को अंदाजा ही नही था. यूनीवर्सिटी के लड़के भी सहम गए.

खामोश बोस बाबू भी हो गए थे. सहमे भी थे. लेकिन फिर एकबारगी सन्नाटे को तोड़ ही दिया. छाती पीटने लगे—अब काट डालो चाहो तो मुझे, लेकिन जस्टिस करो. यह मास्टर का बच्चा डकैत हे, डकैत···

बोस बाबू फिर रोने लगे.

प्रतिमा की ठीक ऊपर वाली लड़की अणिमा बाहर आकर बाप को अंदर ले जाना चाहती थी. र्वा ..त बोस बाबू घायल शेर की तरह बार-बार अपना ज़ख्म चाटकर गरज रहे थे. छाती पीट रहे थे. यूनीवर्सिटी के लड़के खासा तमाशा देख पाने की खुशी मे अगले दृश्य का इन्तज़ार कर रहे थे.

अणिमा इस तमाम झमेले मे शर्मिन्दा-सी हो रही थी. बोस बाबू को इस बात की परवाह नही थी कि अणिमा बहुत ज्यादा देर यहां ठहरना नही भी चाह सकती है. वह चिल्लाए—ईच वन इज ए करप्ट.

अंग्रेजी की दुरूहता के कारण परमानंद ने और लल्लू ने मतलब नही समझा. मतलब और भी लोगों ने नही समझा. उनमें ललाइन, अलख वगैरह बहुत सारे लोग थे.

अणिमा ने बोस बाबू की बांह पकड़ ली—अब बस कीजिए···.

अभी अगर इस जगह बिजली भी गिरती, किसी को इतना ताज्जुब नहीं होता जितना बोस बाबू के इस व्यवहार से हुआ. उन्होने अपना दाहिना हाथ उठाया और उस जवान लड़की के गाल पर चांटा रसीद कर दिया.

शुरू में खुद अणिमा को ही यह यकीन नही हुआ था, वैसे ऐसा नही है कि वह अपनी लड़कियों को सिर्फ साडी-गहने ही हमेशा लाकर देते रहे हैं लेकिन इतने सारे लोगों के सामने इस हद तक वह चले जाएंगे, अणिमा नही समझ पाई थी. फिर समझ पाई तो बहुत मुश्किल से ही अपना रोना रोक पाई थी, लेकिन बस, उसके बाद पल-भर के लिए भी यहां नही रुकी, अन्दर घुसकर धड़ाम से दरवाजा बन्द कर लिया था.

विनायक काफी देर से कुछ नही बोला था. आंखों की कोरों मे जलन-सी महसूस हो रही थी. बोला—कभी यही लड़की थूकेगी आप पर.

—आई से शटअप. अपनी बहिन से थुकवाना अपने मुंह पर. बोस बाबू जोर-जोर से साँस ले रहे थे.

लाला एक कदम पीछे हट गया था.

—इस साँड छाप अक्ल के साथ घर से निकलते हुए अगर आपको थोड़ी भी शर्म आती, अच्छा रहता.

—व्हाट ? सांड़ बोला मुझे ? देख रहे है आप लोग. यह दो बित्ते का छोकरा मुझे साँड कहता है.

—कम ही बोला मास्टर ने, कुत्ता कहना चाहिए था. लल्लू बोला. चेहरा एक दम काला हो गया था.

सांडों की लडाई में हारा हुआ सांड जिस तरह भीड़ की तरफ देखता है, बोस बाबू भी वही कर रहे थे.

—घंटू हो, बंगाली, तुम साले घंटू हो. रूमाल वाले ने कहा और उसके साथ वाले लडके हंस पड़े. उन्हें शायद इस घंटू शब्द के साथ बोस बाबू का इतना सामंजस्य मिल गया था कि खुशी उफनकर जाहिर हो रही थी

—भई बस करो न, बहुत हो गया. गोबरधन बाबू बोले. आवाज मे मिमियाहट-सी थी. किसके प्रति यह आरजू थी, पता नही चला.

बोस बाबू ने नाक सिकोड़ ली थोड़ी. नया कुछ कहना होता है तो ऐसा ही करते हैं. बोले—सबको समझाऊंगा एक दिन. आफ्टर ऑल आई ऐम फ्रॉम बोस फ़ैमिली.

यूनीवर्सिटी के लड़कों को शायद समझ मे नही आया था. एक ने पूछ लिया—कहाँ के हो बंगाली ?

—आपने बाप से पूछना, समझे ?

—लेकिन बाप को अभी कहा से लाऊंगा ? रूमाल वाले लड़के ने पूछा. साथ के लड़के उसी तरह ही-ही कर रहे थे. वे शायद सिर्फ इतना ही कर सकते थे.

—गो टू हेल. जहन्नुम से ले आओ बाप को. फिर बैठाके पूछ लेना वन टू ऑल सारे कोश्चेन. बोस बाबू फिर नाक साफ करने लगे. गोबरधन बाबू थोड़ा हट गए. नाक साफ कर उन्होंने गंदे हाथ को गोबरधन बाबू की रसोई की दीवार में पोंछा. गोबरधन बाबू ने देखकर नाक को थोड़ा सिकोड़ लिया.

बोस बाबू हाथ उठाकर कभी-कभी आसमान छूना चाहते हैं. विनायक यह जानता है. विनायक ही क्यों, लाला को भी यह मालूम है आखिर पान-बीड़ी बेचने वाला भी अब महीने में हजार रुपया कमाता है. और यहां देखिए, इतनी बडी और बोस फैमिली का यह आदमी दाल-भात खाकर किसी तरह अपना गुजारा कर रहा है. कभी-कभी बोस बाबू अपना नसीब विनायक के सामने खोलकर शायद थोड़ा हल्कापन महसूस करते थे—आप लोग नसीब-वसीब नही मानते है तो मत मानिए लेकिन कभी मानना ही पड़ेगा. मेरी उमर तक आते-आते नसीब तो क्या भगवान को भी मानने लगेंगे, हां.

प्रतिमा के बारे में कभी पिता की हैसियत से बात करते तो विनायक को लगता, यह पिता एक क्रूर सपना देख रहा है.

—शी इज वेरी इण्टेलीजेण्ट राइट फ्राम द बिगनिंग. लेकिन मेरा पॉकेट पहले भी क्या रहा है, आप समझ ही सकता है किसी इंगलिश मीडियम स्कूल में एडमीशन दिलाता तो टॉप क्लास एक्जीक्यूटिव होता.

विनायक चुप ही रहा है, ऐसी बातों के सिलसिले में. कुछ कहने से बोस बाबू का सपना टूट जाएगा.

—प्रतिमा की सर्विस जरा ठीक-ठाक लग जाय, फिर मकान को रिनोवेट करूंगा. ऊपर के कमरों में पानी लीक करता है, नीचे की दीवारों में क्रेक आ गया है,

सब रिपेयर करा दूंगा. एक सोफा-सेट लाकर बैठक मे डाल दूंगा और दिन-भर कुछ-न-कुछ पढ़ता रहूंगा. इस उमर मे मेहनत होता है कही ?

बोस बाबू को अपने पितामह की याद आ गई थी—मेरा ग्रैण्डफादर थे न, उन का दो बीवी था पहला बीवी तो एकदम पद्मिनी था जैसा रूप वैसा गुण, कचहरी के मुंशी की बेटी थी. और मेरा ग्रैण्डफादर शादी के टाइम सेवथ मे पढ़ता था उमर कोई कम नही था सेवथ मे ही तीन साल लग गए थे और इससे पहले भी कोई क्लास उन्होंने दो साल से कम मे पार नही किया था ज्यादातर तीन-तीन साल हर क्लास मे लगते रहे है शादी हुई तो फिर बहू के रूप पर ही मुग्ध हो गए. बस स्कूल जाना ही छोड दिया था.

ससुर ने कहा, पढ़-लिखकर कौन-सी नौकरी करना है ? पैसे देकर लकड़ी खरीदने-बेचने का धधा दामाद के लिए ससुर ने शुरू कर दिया था. लेकिन मेरा ग्रैण्ड फादर घर जमाई नही था सेल्फ रेस्पेक्ट का पूरा ख्याल रहता था बाप नही था, पाँच विधवा बुआ उन्हे पालता था पालता क्या था, राजकुमार को जैसा दुलार मिलता है न, वैसाही दुलार रखता था कभी किसी मास्टर ने अगर बच्चे को मारा तो पाँचो बुआए जाकर मास्टर को इतना झाडता कि वह बेचारा बस सकपकाता रहता

ग्रैण्ड फादर के ससुर का एक ही लडकी था ऐंड ही वाज ए रिच पर्सन कचहरी का काम आखिर दो नम्बर का पैसा कम नही लाता है. मेरे ग्रैण्डफादर को जब भी पैसे का जरूरत पडता, धमकी देता कि फौरन कुछ भेजो वर्ना एक और शादी कर लेंगे

वैसे तो जमाना ही दूसरा था कायस्थो मे कुलीन घराने का लडका दो तो क्या पाच भी शादिया कर सकता था लेकिन ससुर को अपनी लडकी की परवाह थी. दामाद जब भी धमकी देता, तभी वह कुछ-न-कुछ भेज ही देता एक दफा उन्होने फिर ऐसी चिट्ठी भेजी तो एक ममेरे साले ने, जो वही रहता था, चिट्ठी किसी के हाथ पडने से पहले ही छिपा ली और जवाब लिख दिया—धमकी किस बात पर देते हो, कर लो शादी

और देखिए तमाशे से भी ज्यादा मजेदार बात है कि मेरे ग्रैण्डफादर ने हफ्ते-भर के अदर दूसरी शादी कर ली बहू को सुहागरात से पहले उन्होने या तो देखा नही था या बडी बहू को मजा चखाने के लिए तारकोल के रग की लडकी के गले मे माला डाल दी थी

ससुर ने दामाद की हरकत देखी और भौचक्के-से रह गए लेकिन अब तो घर मे बहू भी आ चुकी, किया ही क्या जा सकता था ? मेरे ग्रैण्डफादर की बुआए इस बात पर बहुत खुश हुई थी कि अब उन लोगो के वश का निर्वाह बडे आराम से होता रहेगा

मेरे फादर बडी माँ का बेटा है. छोटी मा की सिर्फ एक लडकी थी, जो शादी के बाद बच्चा होते वक्त बच्चा-समेत गुजर गई थी लेकिन एक बात रियली बहुत मजेदार है कि मेरे ग्रैण्डमदर्स के बीच आपस मे कभी लडाई-झगडे हुए ही नही सौत नही, जुडवा बहनो की तरह दोनो बहुए रहती थी

यह तो रही ग्रैण्डफादर के जवानी के दिनो की कहानी फिर जैसे-जैसे उनकी उम्र बढ़ती गई, कुछ-कुछ वैरागी होते चले गए वह बाद मे दाढी बढा ली थी, गेरुआ पहनते थे और शिव-पूजा करते थे वैसे बेसिकली हम लोग वैष्णव थे मेरे ग्रैण्डफादर से पहले दस पीढ़िया तक सिर्फ मनमोहन को ही भोग लगाया जाता रहा है. आज भी

कलकत्ते में भाई के यहा कृष्ण का ही पीठ है लेकिन मेरे ग्रैण्डफादर के बाद फैमिली मे कुछ लोग शाक्त भी हो गए थे. वैसे साब, मैं कुछ भी नही हू, न वैष्णव, न शाक्त पेट के धधे मे जिस सुबह से शाम तक लगे रहना पड़ता है, वह क्रूड लैंग्वेज मे सिर्फ 'बेगर' ही हो सकता है. आई एम वन ऑफ देम खैर यह दूसरी बात है, मेरे ग्रैण्ड फादर ने प्रतिमा का पत्रा खुद बनाया था. बोला था, इस लडकी का गुरु स्थान बहुत प्रबल है, शायद पचम स्थान मे बताया था. ऐसी लडकी बहुत विदुषी है

बोस बाबू की यह ललक-सी है कि प्रतिमा सिर्फ विदुषी बने. खास तौर पर जब वह अपने मकान के गिरते हुए पलस्तर को देखते है तो लगता है, इसके अलावा कोई और चारा नही है पहले पता नही था लेकिन अब विनायक यह मोटी-सी बात समझ गया.

बोस बाबू हाफने लगते है तो आँखो की पुतलिया बाहर निकलने-सी लगती शरीर मे अब सिर्फ सूखी हड्डिया-भर रह गई है कभी जब बिना कमीज या कुर्ते के बाहर निकलकर गोबरधन बाबू या परमानद लाला से बातचीत करते है, लगता है, अंदर की हड्डिया अब पुरानी होकर खोखली भी हो रही है.

बोस बाबू न तो वैष्णव है न शाक्त. सिर्फ पेट की चिता मे जिसका सर गजा हो रहा हो, वह ऐसी विलासिता मे जा भी नही सकता. इसके बावजूद घर के एक कोने मे काली, दुर्गा, शिव, कृष्ण वगैरह की तस्वीरें, जो ज्यादातर कैलेण्डरो मे से काटकर फ्रेम करवाई गई है, परम पवित्रता से रखी हुई हैं. पेट के इस जाहिल धधे के बावजूद बोस बाबू सुबह नहाने के बाद घटा-भर दुर्बोध्य मत्र बडबडाते है. क्या कहा है कोई नही समझता. शायद बोस बाबू खुद भी नही समझते लेकिन यकीन रखते है. यकीन कुछ और नही, सिर्फ एक ही बात का है भगवान कभी तो खुश होगा ही, तब सारी तकलीफें, दुख-दर्दों को खत्म होना ही पडेगा. शायद इस आसपर ही आज तक वह जिन्दा है.

●●

खास तमाशा था

सबसे ज्यादा प्रसन्नता लाला-ललाइन की जोडी को थी यूनीवर्सिटी के लडकों को भी बहुत दिन बाद कुछ मसालेदार मिला था

अणिमा अदर शायद रो रही थी, इस चीख-पुकार के बावजूद विनायक को यह लगा.

लल्लू को ज्यादा बात करने की आदत नही है लेकिन जब बोलता है, तब सामने वालो को सुनना पडता है सुनने के अलावा कोई और विकल्प नही होता बोला—देखो बगाली, बहुत शोर-शराबा कर लिया. अब जग-हसाई मत करो और घर जाकर रोटी खाओ, सो जाओ

गर्म तेल में पानी पडने पर जो हालत होती है, बोस बाबू की भी वही हुई —यू मीन, शोर-शराबा कर लिया ! इस लफगे मास्टर को जेल नही भिजवाया तो …बात खत्म नही हुई थी आक्रोश मे बोस बाबू ने विनायक के मुह पर एक घूमा जमा दिया.

विनायक अचानक धक्का खाकर थोडा हिला जरूर था लेकिन गिर नही पडा होंठों के ऊपर के हिस्से मे थोडा-सा खून निकल आया

बोस बाबू हाफ रहे थे

लल्लू फिर लगभग छलांग मारकर सामने आया, उनके बालो को मुट्ठी मे पकड़ लिया—यहीं गाड़ दूगा जमीन पर.

गोबरधन बाबू और लाला ने बीच-बचाव किया था.

गाड़ने की जरूरत नहीं पड़ी थी.

पहले तो बोस बाबू मिनट-भर ज़ोर-ज़ोर से सांस लेते रहे फिर एकदम से अपने दरवाजे की तरफ बढ़ गए. सधे हुए ऐसे मंथर कदमों से वह आज तक कभी नहीं चले होंगे. इतनी चीख-पुकार के बाद भी इस तरह ख़ामोश शायद आज से पहले वह कभी नहीं हुए हैं.

विनायक जेब से रूमाल निकाल कर खून पोंछ रहा था. इस वक्त थोड़ा खून जरूर निकल रहा था लेकिन उसे नहीं लगा कि इसकी मात्रा ज्यादा है. थोड़ा और भी निकलता तो भी उसे कोई खास परेशानी नहीं होती. यह जख्म तो चारेक दिनों में ही भर जाएगा.

●●

बुल्ला आया है.

इस लड़के के चेहरे पर दाढ़ी-मूछों का जंगल छाया है. इसके नीचे क्या है, आसानी से पता नहीं चलता.

बुल्ला के आने की बात नहीं थी कभी फुर्सत मिलती तो शायद पीटर आता. वही लड़का शायद सबसे ज्यादा भावुक और निष्ठुर है जरूरत पड़ने पर किसी को हलाल कर सकता है और बाद में अपने किए पर सर भी फोड़ सकता है. भावुकता की इस वजह से ही उस औरत के प्रति उसके मन में नफ़रत की बाढ़-सी है, जिसने उसे पैदा किया था. उसे वह औरत सिर्फ़ एक औरत-भर लगी थी. मर्द चाटने वाली एक भूखी औरत.

विनायक ने बुल्ला से बैठने के लिए कहा.

बुल्ला खड़ा रहा.

स्टूल पर एक किताब रखी थी. विनायक ने उसे हटा लिया—लो बैठो. चाय चलेगी ?

—पीटर मर गया. बुल्ला एकदम से बोल गया.

विनायक शुरू में सुन्न-सा रह गया. पीटर ज़मीदार की तरह डनलोपिलो के गद्दे पर लेट कर हकीम-वैद्यों के इलाज से नहीं मरा होगा, इतना वह समझ गया. थोड़ी देर में पूछा—मर गया ?

—गोली लगी थी. बुल्ला की आवाज पत्थर की तरह भारी सुनाई पड़ती है—यार्ड में वैगन का ताला तोड़ रहा था. बस, रेल-पुलिस वालों ने गोली मार दी. छलनी हो गयी थी छाती. चार गोलियां लगभग इकट्ठे आ लगी थीं.

विनायक एकदम चुप था.

बुल्ला दीवार के सहारे खड़ा उंगलियां चटखा रहा था. जैसे इतना करने भर से उसका ख़ालीपन भर जाएगा.

उस दिन चाय पीते हुए पीटर लगातार चारमीनार का धुआं उड़ाता रहा. शायद कोशिश कर देख रहा था कि इसके साथ भविष्य की किसी ऊंचाई तक पहुंचा जा सकता

है या नही ! रास्ता उसे मिला था या नही, इसका पता उसे ही रहा होगा लेकिन विनायक ने भी समझा था, उसकी सांस मे एक बेचैनी है.

कलकत्ते से निकल आया तो फिर मुड़कर देखा ही नही. मां न सही, भाई-बहन तो होते है. उनके लिए दिल में कभी दर्द नही होता ?

पीटर एक क्रूर हसी हंसा था—दर्द ? दर्द का अहसास भी एक हद के बाद ख़त्म हो जाता है. जिस आदमी की टांग रेल के नीचे आकर कट जाती है आप क्या समझते हैं, वह दर्द से कराहता है ? कई दफ़ा वह बेहोश तक नही होता और दर्द-वर्द का पता भी नहीं चलता.

विनायक को लगा, यह लड़का दार्शनिक हो सकता था. शायर-वायर भी हो सकता था शायद.

पीटर ने अख़बार मे नेता की जो तस्वीर छपी थी, उसके चेहरे पर सिग्रेट का सिरा लगा दिया था. फिर फिल्म-विज्ञापन के पन्ने पर एक अभिनेत्री की तस्वीर में स्तनों के हिस्से के साथ भी यही किया था. यह कर पाने के लिए वह बहुत खुश हो उठा था. बोला—रंडी की मैं इज्ज़त करता हूं लेकिन नेता और उन गिरस्तिनो की नही जो बड़े पाक बने रहने की दुहाई देते है.

विनायक ने देखा, अख़बार के जले हुए हिस्सो मे से धुआ निकल रहा है. चाय वाला भी यही देख रहा था. लेकिन कुछ कहने के लिए हिम्मत चाहिए, वह कहा से आएगी ? पीटर ने फिर थपकी देकर बुझा दिया था. चाय वाले पर इतनी मेहरबानी कर पाने के लिए वह इस वक्त बहुत सुखी था.

—यह बुल्ला है न, मेरी तरह बिना पेंदे का नही रहा. अब ज़रूर है. उसका बाप मिस्त्री था. बनारस में रेलवे का जो कारखाना है, मिस्त्री का काम करता था. फिर क्या हुआ मालूम. तब बुल्ला सालभर का बच्चा ही था. बाप साधू होकर घर से निकल गया. बनारस से निकल कर सीधे वृन्दावन आ गया था मिस्त्री. आपको यकीन नही आता न ?

—आता है.

—आता है ? यानी आप मानते है कि कोई मिस्त्री हथौड़ा और पेचकस गगा मे फेंककर दाढी बढाकर, चोगा पहन कर फकीर बन सकता है खैर, मै बुल्ला की बात कह रहा था. मिस्त्री घर से निकल गया, तब बुल्ला की मां के पेट मे एक बच्चा था. उसने बच्चा गिरा दिया. अपने लिए खाने की रोटी नही है, बच्चे को लाकर तकलीफ देने मे क्या फ़ायदा ? बुल्ला की माँ ने रेलवे का क्वार्टर छोड़ दिया. चारेक घरों मे बर्तन वगैरह माँजने का काम करना पडता था,

बुल्ला फिर बड़ा होने लगा स्कूल वगैरह क्या जाता ? जिसके लिए लगोटी तक का ठिकाना नहीं है वह स्कूल क्या झाड़ू लगाने जाएगा ! वैसे उसकी मां थी होशियार. जानती थी, आज के जमाने मे सोना-चांदी कही से मिल सकती है लेकिन नौकरी नही. उस औरत ने भी कभी कोशिश नही की कि बेटा स्कूल जाए, पढे-लिखे और नौकरी करके रुपए कमाए जो होना ही नही है, उसके लिए मगजपच्ची मे फ़ायदा है कुछ ? बुल्ला फिर चौदह बरस का हो गया. चौदह बरस के छोकरे को बहुतकुछ चाहिए. उसकी दुनिया ही कितनी बदल जाती है ! एक वेल्डर के यहां वह काम सीखने लगा था. सुबह से रात तक की जानलेवा मेहनत और बदले मे सिर्फ तीस रुपल्ली. जिस आदमी को कुछ आता ही नही है, उसे इससे ज्यादा कोई भंडार लुटाने वाला भी तो नहीं देता. आदमी आखिर उम्मीद पर ही जिन्दा रहता है. बिचारा सोचता था, साल-दो साल में काम सीख लेगा तो कहीं-न-कहीं मिस्त्री जरूर बन

जाएगा.

इस बीच एक दिन घर लौटकर बुल्ला ने देखा कि मा बहुत रो रही है. सामने एक आदमी बैठा था. बुल्ला के पहुंचने के बाद वह दरवाज़े से निकलकर गली में चला गया था. मां के पास खटोले में कपड़े का एक झोला पड़ा था. झोले में शायद कुछ कपड़े वगैरह थे और एक चश्मा था.

पीटर ने सिग्रेट का कश जोर से खींचा था—बुल्ला की जिन्दगी का क़िस्सा इसी मोड से बदल गया.

यहां क़िस्सा कहां है, विनायक समझ नही पा रहा था.

—वह औरत फिर बुल्ला का पाँव पकड़कर रोने लगी. बुल्ला क्या करता ? कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि आख़िर हो क्या रहा है ? फिर उसकी मां उठी और झोले में से कपड़ा वग़ैरह निकालकर दिखाने लगी. ये सब कपड़े और एक गोल फ्रेम का चश्मा मिस्त्री का था. पिछले हफ्ते वृन्दावन में उसकी मौत हो चुकी थी. जो आदमी अभी कुछ देर पहले दरवाजे से निकल गया. वह वृन्दावन में मिस्त्री के साथ ही रहता था. भक्त छाप आदमी रहा होगा, सो मरे हुए आदमी की अमानत उसकी अपनी जगह पहुंचा गया था. लेकिन बुल्ला के लिए यह कोई ख़ास बात तो नहीं हो सकती थी. जिस आदमी की याद उसके मन में है ही नही, उसके लिए वह आख़िर करता भी तो क्या करता ?

पीटर ने चाय का घूट लिया फिर होंठों के बीच सिग्रेट रख दी थी. राख से उसकी पैण्ट गंदी हो रही थी होने दो गंदी इस बात की परवाह किसे है ? पीटर सिर्फ आसमान की तरफ देख रहा था बुल्ला की मा ने फिर सबकुछ खोलकर रख दिया. मिस्त्री उसका शौहर नही, शौहर का चचेरा भाई था वह औरत एक दिन अपने देवर के साथ घर से निकली तो वापस ही नही गई तब वे लोग लखनऊ में थे. स्टेशन आकर टिकट लिया और बनारस की गाड़ी पकड ली जिस आदमी के साथ बुल्ला की मां निकली थी, लखनऊ में बिजली के कारखाने में वह मिस्त्री था. हुनर अगर किसी के पास हो तो उसे रोटी की फिक्र क्या ? देर-सबेर काम मिल ही जाता है. बनारस आया तो रेलवे में पहले फिटर का काम मिला था, सालभर के अन्दर मिस्त्री हो गया था.

दो साल तक खूब मौज से रहे वे. मियां-बीवी की तरह रहते रहे पड़ोसियों को भान तक नहीं हुआ था कि दाल में कहीं काला भी हो सकता है दो साल के बाद बुल्ला पैदा हुआ था.

इसके बाद से ही जैसे उन लोगों को महसूस होने लगा कि यह सब बहुत गलत हो गया. जज्बात में बहकर वे लोग इतनी दूर चले तो आए थे लेकिन लौटने के रास्ते तो खुद ही बन्द कर आए थे. फिर भी साल-भर तक मिस्त्री साथ ही रहता रहा. आख़िर में एक दिन घर से निकल गया. बहुत बाद में फिर पता चला था कि वह वृन्दावन में साधू बनकर रह रहा है.

उस औरत ने बुल्ला को सबकुछ बता दिया था. उसे लगा होगा, बेटे को सुना देने से पाप भले ही न कटे लेकिन दिल को थोड़ी राहत जरूर मिलेगी.

बुल्ला का हाल ! काटो तो खून नहीं. उसे लगा होगा कि खूब जोर से चीखे और मुहल्ले वालों को डरा दे. फिर पहने हुए कपड़ों को फाडकर एकदम नंगा होकर गली में निकल जाए.

लेकिन यह सब उसने नहीं किया था. दीवार के सहारे चुपचाप बैठकर घुटनों में सर छुपा लिया था सिर्फ़.

इसके तीन दिन बाद बुल्ला की मां ने फांसी लगाकर खुदकशी कर ली थी.

बुल्ला की कहानी यहीं ख़त्म होती है.

पीटर ने कहानी ख़त्म कर पूछा था—आप तो साग-भाजी वाले शरीफ आदमी हैं. हम लोग ठहरे सांप, मेंढक, रीछ, चीता तक खा जाने वाले. क्या करेंगे यह सब सुनकर ?

विनायक ख़ुद ही नहीं जानता कि क्या करेगा.

पीटर ने ज़ोर से कहकहा लगाया—लौंडिया-छाप कहानी हम लोग सुना ही नही सकते. यहां तो मिर्च-मसाले की बात है.

विनायक को तब पता तो नही था लेकिन लगा था, पीटर सबकुछ कह देना चाहता है. तो क्या वह समझ गया था कि उसके दिन ख़त्म हो गए है ? ऐसे लोगों के दिन शुरू से ही तो ख़त्म हुए रहते हैं. इसके बावजूद जितनी सांसें वे ले पाते है, वे उनकी ऊपर की आमदनी की तरह होती है.

—कभी तुम स्यालदा जाकर शायद फिर सबकुछ देखना चाहो. विनायक बोला.

—हुंह ! जहन्नुम में खुशी-खुशी जा सकता हूं लेकिन स्यालदा नही. मुझे अब याद ही नही है कि स्यालदा है कहां ?

—यहीं रहोगे ? इलाहाबाद में ?

बहुत ज्ञानी पुरुष की तरह बिना आवाज के पीटर हंसा था—कुछ भी तय नही रहता पीटर के लिए. कहीं भी रह सकता हूं. जब तक यहां रहने को दिल करेगा, रहूंगा. जिस दिन नहीं करेगा, सीधे निकल पड़ूंगा.

—ये दोस्त-साथी ?

—कहा न, आप साग-भाजी वाले शरीफ़ आदमी है. तभी तो मतलब नही समझते. सबका रास्ता अलग है. कौन कितने दिन साथ रहेगा, क्या मालूम ? स्यालदा के रेलवे यार्ड मे मेरा एक भाई मरा था न, लेकिन देखिए हम लोग नही रोए थे. हफ्ते-भर बाद तो भूल ही गए कि एक लड़का कभी बरसों हम लोगों के साथ रहता भी रहा है. पीटर अब हंसा—शरीफ लोग यह सब नही समझते. शराफत की चौहद्दी से थोड़ा बाहर निकलिए, फिर पता चलेगा, यह पीटर क्या है. बुल्ला, बाबू वगैरह क्या हैं ?

●●

इसके बाद पीटर ने बाबू की बात शुरू की.

—मिरजापुर मे छतरी मरम्मत का काम करता था अकबर मियां नाम था, अकबर लेकिन एकदम फटीचर. एक जून रोटी खाली तो पता नही रहता, अगली बार 'टैम' मे मिलेगी भी या नही. तिस पर दर्जन-भर बच्चे. मिया छतरी मरम्मत करता ऊपर से मौका लगा तो हाथ भी साफ़ कर लेता. लोटा, कटोरा, थाली, जांघिया, बनियान जब जो हाथ आता, लेकर झोले में डाल देता. न करे तो गिरस्ती कैसे चले. एकदफा एक पसारी की दूकान मे छतरी की मरम्मत करनी थी. दूकान के सामने भीड़-भाड़ रहती है, ऊपर से जगह भी तंग थी. पंसारी ने मियां को अंदर की तरफ बिठा दिया था. चार-चार छतरियां थी. थोड़ा वक्त भी लगना था.

मियां को ख़ासा मौका मिला था. रोज-रोज नसीब इतना ख़ुश कहां होता है ? जिस झोले मे तौलियां रहती हैं, मरम्मत के औज़ार रहते हैं, उसमें उसने थोड़ी-सी उड़द की दाल और साबुन की एक बट्टी डाल ली.

पंसारियों की शायद सर के पीछे भी आंखें होती हैं. एक तरफ से सौदा तौल-

कर 'ग्राहक' से पैसे गिनता है, दूसरी तरफ से चौकीदारी करता है कि कही से चूहा तक एक दाना लेकर न भाग सके पसारी ने पकड लिया चारो छतरियाँ बनाकर घटे-भर बाद मियाँ उठने लगा तो उसने झोला पकड लिया मिया गिडगिडाता रहा लेकिन पसारी ने ऐसी धौल जमाई कि सडक पर जा गिरा आँखो पर चश्मा था, जो सुतलियो के सहारे कानो के साथ बधा था चश्मा झटका खाकर निकल आया और शीशे टूट गए फिर तो उस पाव-भर दाल और एक बट्टी साबुन के लिए इतनी कुटाई हुई कि मियाँ चलने लायक भी नही रह गया किसी तरह घर पहुचा और चारपाई पकड ली वैसे भी दमे की बीमारी थी ही यह सब हो गया तो साँस लेना भी दूभर हो गया

बाबू तब तेरह बरस का था कभी कभी एक रद्दी वाले के यहाँ काम मिल जाता था कभी कागज के थैले वगैरह भी बना लेता था लेकिन इतने लोगो का गुजारा इससे थोडे ही होना था ! छोटा-सा शहर है मिरजापुर कही कुछ हो गया तो पूरे शहर मे बात शाम तक फैल गई चोर के बेटे को फिर जानबूझ कर कौन काम पर रखता ?

उधर मियाँ बीमार पडा है दवा-दारू छोडो, रोटी तक के लिए जुगाड नही लग रहा था कभी बाबू की मा ने गुड की काली चाय बनाकर पिला दी तो समझ लिया, कुछ आराम जरूर पहुचा होगा

खैर बाबू को महीने-भर मे काम मिल गया था सत्तर रुपए की तनख्वाह और ईद, मुहर्रम के वक्त पाच-पाच रुपए ऊपर से जिल्दसाज के यहा गत्तो म लेई लगाकर कागज चिपकाने का काम था सुबह नौ बजे दूकान खुलती और रात के नौ बजे तक खुली रहती बीच मे दुपहर को एक से डेढ नक रोटी खाने की छुट्टी मिलती शाम को चार बजे मालिक की तरफ से गिलास मे चाय मिलती

बाबू की मा रद्दी वालो से अखबार खरीद लाती और थै ा बनाकर दूकानो को पहुचाती. गाडी इसी तरह चल रही थी इस बीच मिया को एक हकीम बुलाकर दिखा भी दिया था हकीम शायद रहमदिल था पैसे वगैरह उसने कुछ लिए नही थे. ऊपर से कागज मे नुस्खा लिखकर दिन मे चार-चार बार खाने वाली कुछ गोलियाँ भी बाबू के हाथ थमा दी थी लेकिन सिर्फ एक किस्म की गोलियाँ क्या करती ? हकीम ने जो नुस्खा लिखा था, उसम दसेक दवाए थी लिहाजा कोई खास फायदा नही पहुचा था मिया को

आठ-नौ महीने ऐसे ही निकले थे निकले क्या थे बस घसीटे गए थे फिर मियाँ ने आँखे बन्द कर ली

बाबू की अम्मी के पास फिर कुछ मनचले किस्म के लोग बुरे मकसद से आने-जाने लगे शुरू मे उस औरत ने कुछ नही समझा था बाद मे समझा तो वे लोग आँखे लाल करने लगे गिरस्तिन बन के रहना था तो इतने दिन माल क्यो उडाती रही ? फजीहत थी पूरे मुहल्ले मे इस बात को लेकर मारपीट हो गई थी गुण्डे आखिर गुण्डे ही होते है उनसे बीवी-बच्चो वाले लोग भिडना नही चाहते सबको ही जान तो आखिर प्यारी ही होती है लेकिन अकबर मियाँ की बीवी इतनी नेक और सीधी थी कि लोग तरस खाते थे काफी मारपीट हुई, तब जाकर कही मामला निपटा

बाबू तब तक बहुत समझदार हो चुका था ये सब सस्ती बाते उसके दिल पर जख्म का असर करती और बिचारा मन मसोस कर रह जाता

एक दिन उन लोगो ने बाबू को ही जिल्दसाज की दूकान के सामने पकड लिया और लगे मुक्के, घूसे, थप्पड रसीद करने रात को दूकान बन्द होने के बाद यह हुआ था बेचारा मार खाकर आधे घटे तक वही पडा रह गया था उसके गाल पर जो एक जख्म का निशान है, वह उसी दिन बना था

मुहल्ले वालों ने पुलिस में 'रपट' लिखाने की बात कही थी. लेकिन बाबू की हिम्मत जवाब दे गई थी. उसकी अम्मी ने भी यह नही चाहा था. वह समझ ही गई थी कि कुछ होना-वोना तो है नही, ऊपर से एक बार और मारपीट की नौबत आ जाएगी.

उसकी अम्मी दिलासा देती कि काम सीखकर चार-छह साल बाद वह भी जिल्दसाजी की दुकान खोल सकेगा. इस काम में बाबू की कोई खास दिलचस्पी नही थी लेकिन वह समझ गया था कि उसके लिए कोई और रास्ता खुला नही है.

तभी एकदिन मालिक आसमान सर पर उठाकर चीखने-चिल्लाने लगा. किताब में पुट्ठे के साथ लगाने का जो कपडा आता है, उसमे चार गज कम था नीले रंग का कपडा आया था कोई चारेक दिन पहले, अब उसमे से चार गज कम था. कौन मालिक यह बट्टा अपने सर पर ले लेगा ? आज कपडा गया कल को नोट भी तो उठ सकता है !

बाबू पर ही शक हुआ था.

शुरू मे मालिक ने डॉटा-फटकारा फिर समझाने लगा. बेइज्जती से बाबू का चेहरा एकदम स्याह हो गया था.

आधे घण्टे तक मालिक समझाता-बुझाता रहा लेकिन जिस लडके के पास कुछ है ही नही, उससे निकल क्या सकता था ?

आखिर मे मालिक ने कस कर एक झापड रसीद कर दिया था. फिर पूरी ताकत से लात जमा दी थी. बाबू दुकान से छिटक कर सडक पर आ गिरा था. मालिक अपनी ही जगह पर बैठा था बाकी कारीगर तमाशा देख रहे थे. मालिक शायद तैयार ही था कि लडका उठकर चलने लगे तो एक लात और जमा देगा चोर की औलाद आखिर पीर-फकीर तो बन नही सकती. मालिक शायद इस बात पर अन्दर से यकीन करता था. उसे अफसोस था कि तरस खाकर इस छोकरे को दुकान मे रख लिया था

बाबू की ठुड्डी और दाहिनी कुहनी से खून निकल रहा था. उसने अपना खून देखा और झटके से उठ खडा हुआ. पैर के पास एक ईंट का अद्धा पडा हुआ था. उसे उठाया और सामने बैठे शख्स की तरफ खीच के फेंक दिया एक जबरदस्त आवाज गले से निकालकर लुढक गया था जिल्दसाज जो आदमी घडी-भर पहले ही गाली बक रहा था, अब किस तरह बेचारा होकर बेहोश हो गया था !

पीटर ने बीच मे एक सवाल पूछ लिया—हर दूसरा दिन बदला हुआ होता है, क्यों साब मानते है यह ?

विनायक को अचानक ऐसे किसी सवाल की उम्मीद नही थी.

—खैर, आप माने या न माने यह हकीकत है. हर दिन ही क्यों, हर घंटा, हर मिनट बल्कि उससे भी आगे हरपल बदला हुआ होता है वर्ना ऐसा कैसे हो जाता है कि जो शख्स थोडी देर पहले भूत की तरह ह ह कर रहा था, बेहोश होकर गिर पड़ता ? जिल्दसाज की खोपडी से खून तो क्या लाल फव्वारा निकल रहा था. बाबू ने फिर जो दौड लगाई, दौडता ही चला गया बस, ट्रक, टेम्पो और जाने किस-किस में चढकर इलाहाबाद आकर रुका. हफ्ते-भर तक फरार रहा. जेब म एक कौडी नही. दो दिन तो फाके में ही गुजर गए तीसरे दिन एक ढाबे में बर्तन साफ करने का काम मिल गया. ढाबे वाले ने नाम पूछा तो कह दिया—किशोरी. मिरजापुर में एक किशोरी हलवाई की दूकान थी. उसी का नाम एकदम से याद आ गया था. अगर बताता कि वह मुसलमान है. फिर तो छुट्टी हो गई होती. पांच दिन उस ढाबे में रहा था, छठे दिन पुलिस आ टपकी थी.

बाबू नाबालिग था, इसलिए सिर्फ़ छह महीने की मज़ा हुई थी. बच्चों के लिए अलग जेल है, वहीं रहा था.

जेल जाने का ग़म बाबू को आज भी नहीं है. असली गम तो यह है कि वह लुच्चा जिल्दमाज़ सिर्फ तीन महीने अस्पताल में था. मुकदमे मे काफी पैसा भी खर्च किया था उसने लेकिन जज को शायद बाबू का चेहरा देखकर तरस आ गया था.

●●

निसार की कहानी की शुरुआत वह खुद ही नही जानता. बहुत थोड़ा मालूम है उसके बारे में पीटर को. जोड़-जाड़कर तमाम बातों को अगर कहा जाए तो कहना पड़ेगा, जब वह सिर्फ़ नौ साल का था, उसका बाप रेल से कटकर मर गया था. वह हादसा निसार को अब भी याद है. दारागज स्टेशन के पास इंजन देर तक सीटी बजाता रहा. लोग दौड़ते हुए उधर जा रहे थे. मेला-जैसा लग गया था. थोड़ी देर में निसार को पता चला कि उसका अब्बा रेल से कटकर दो हिस्सों मे बंट गया है. इंजन का पहिया धड़ और एक बांह के ऊपर से गुज़र गया था.

निसार को अपनी अम्मी की कोई बात याद नही है. अब्बा था फेरी वाला. चूडी, कंघी. बिंदिया वगैरह एक बक्से में लगाकर सुबह से शाम तक गली-कूचों में घूमता.

निसार को बहुत ज्यादा तो मालूम नहीं है लेकिन सुना है, मीरगंज की किसी एक औरत के चक्कर मे पड़ गया था मियां. मियां जाता था, जिस्म की भूख के लिए लेकिन वह रंडी फिदा हो गई थी. फिदा होने लायक क्या था मियां के पास, निसार नहीं जानता वैसे मुहल्ले वाले बाद मे कहते थे, असल मे रंडी को एक बेवकूफ मर्द की जरूरत थी, जो फुर्सत के वक्त उसका इधर-उधर का काम कर दिया करे. उधर मियां ने समझा कि वह औरत उससे मुहब्बत करती है. उसके लिए जान तक कुर्बान कर सकती है. नमाजी आदमी जब जज्बात से अलग हटकर सोचे, दिल मे तकलीफ तो होगी ही. पक्का मजहबी था मिया नमाज का वक्त हुआ और जहां भी वह हुआ, वहीं पर कंधे का अंगोछा बिछाकर नमाज़ पढने लगा ऊपर से घर में औलाद थी. मियां अन्दर ही अन्दर खत्म हुआ जा रहा था कि गुनाह की कीचड में धंस रहा है. कमजोर आदमी इसी कशमकश मे खत्म हो जाता है मियां भी हुआ था

अब नौ बरस का निसार जाता तो कहां जाता ? कभी किसी रिश्तेदार को देखा ही नहीं. सुनता था, एक खाला हैं उसकी. लेकिन बरसों से वह पाकिस्तान में है वह भी कहां है, कैसी है, कुछ पता ही न था.

दारागंज में एक इदरीस दर्ज़ी की दूकान थी बुड्ढा दर्ज़ी दो-एक कारीगरों से काम चलाता था. काफी रहमदिल रहा होगा बुड्ढा. निसार को दूकान में मुकम्मल कर लिया. बटन वग़ैरह लगाना सिखा दिया और खाली वक्त वह गौर से देखता कि दर्ज़ी की कैंची किस हिसाब से कपड़ों पर चल रही है ?

इदरीस हंसता था—फिकर क्यों करता है ? तू भी बनेगा एक दिन दरज़ी. लेकिन तब यह मियां तेरे सामने नहीं बैठा होगा, बस.

निसार जवाब नहीं देता, लेकिन अन्दर यकीन आ गया था, एक-न-एक दिन दरज़ी ज़रूर बनेगा.

इदरीस मियां अपनी दूकान की सीमेंट उखड़ी फर्श और बदरंग दीवारों को देखकर कहता —लेकिन इस दारागंज में दर्ज़ीगिरी मत करना. चौक मे बढ़िया दूकान लेकर शान से सफेद रोशनी में उसे चलाना. इन दारागंज वालों को शायद दर्ज़ी-वर्ज़ी की जरूरत ही नहीं पड़ती. दिन-भर में कोई टोपी सिलाने आ गया तो कोई पाजामा.

यहां तो कैंची मे जंग लग गया···

निसार इदरीस के यहाँ रोटी खाता और रात को दूकान पर ही सो जाता. दिन आखिर किसी तरह गुजर ही रहे थे. लेकिन शायद मुश्किल से साल-भर ही गुज़रा था. इदरीस मियाँ का हार्टफेल हो गया.

इदरीस मियाँ क्या मरा, निसार को मार गया. सुबह-शाम शहर की खाक छानता बिचारा कि कहीं कोई जुगाड़ लगे. फिर तो क्या-क्या नहीं किया ! हलवाई के यहाँ काम किया, सिनेमा के पोस्टर दीवारों पर चिपकाए, खराद के मशीनमैन की शागिर्दी की, साइकिल मरम्मत की दूकान में पंचर जोड़े और मस्जिद मे झाड़ू लगाई.

मस्जिद में एक पठान आया था नमाज़ पढ़ने. सूदखोरी करता और सूखे मेवे वग़ैरह बेचता. छुरे-चाकू का इस्तेमाल उसी ने सिखा दिया था. कोई डेढ़ साल उसके साथ रहा था. फिर ऐसा उस्ताद बना कि पठान भी देखता रह गया था.

लेकिन तभी एक रात पैसे के लेन-देन पर झगड़ा हुआ और पठान का ही क़त्ल हो गया. इतना ज़बरदस्त मर्द था कि लोग देखकर डरते थे, लेकिन देखो, कितना बड़ा तमाशा है कि उस आदमी का भी खून हो गया !

निसार तब तक अठारह बरस का हो चुका था. अठारह बरस का छोकरा मीरगंज जाता है कभी ? निसार जाता था उसने तय कर लिया. कोई भी ऐसा लुत्फ दुनिया में नहीं होना चाहिए जो उसे न मिले. मीरगंज में ही उसने सबसे पहले लुत्फ का रास्ता ढूंढा था. जितनी कमाई होती, अद्धे की बोतलों और रंडीबाजी में ही उड़ा देता.

लेकिन जब हर मिनट, हर घड़ी बदली हुई होती है, आदमी भी वही नहीं रहता जो पहले होता था.

निसार इस पीटर से जिस दिन मिला, उसके सातवें दिन से पुराना निसार नहीं था और भी ज्यादा खतरनाक हो गया उसके बाद. लेकिन रोज रंडीबाजी की यह आदत छूट गई थी अद्धा वैसे अब भी पीता है लेकिन पीकर धुत्त नहीं पड़ा रहता, पीकर भी पूरा मुकाबला कर सकता है

पीटर थोड़ा हंसा एक आदमी कहाँ पड़ा हुआ था और उसने इस शख्स को कहाँ पहुंचा दिया ! इस बात पर थोड़ा-बहुत घमंड तो हो ही सकता है. पीटर की हंसी में वही घमंड था.

●●

पीटर को जैसे नशा-सा चढ़ गया था बेवकूफ मास्टर को, जिन्दगी की सारी बातें बताकर वह शायद कहना चाहता था, बस लाल बत्ती है यहां पर. इसके आगे गाड़ी नहीं जाएगी पीछे जाने का भी तो कोई रास्ता अब नहीं है वैसे भी कौन-सी गाड़ी पीछे गई है ? यहां पर एक दिन जमीन के अन्दर धंसकर खत्म हो जाना पड़ेगा. कोई भूचाल नहीं आएगा, कहीं कोई तूफान भी नहीं आएगा सिर्फ इलाहाबाद के ये पाँच लड़के एक दिन जमीन के अन्दर धसकर खत्म हो जाएंगे.

आखिरी आदमी था कल्लू.

इलाहाबाद जंक्शन पर फिरता था वह. पुलिस वाले इधर डंडे मारते तो उधर चला जाता फिर उधर से डंडे खाकर इधर अड्डा जमाता. लाईसेंसशुदा कुली वह नहीं था लेकिन कभी मौका लग गया तो किसी का सामान भी पहुंचा दिया. सामान वगैरह पहुंचाते हुए रास्ता अगर मिल गया तो पार भी कर जाता. ज्यादातर मुसाफिर पुलिस में 'रपट' लिखाने के झमेले में पड़ते ही नहीं हैं. एक-आध ने अगर रपट लिखाई

तो पुलिस वाले पकड़कर पीछे से डंडा घुसेड़ देते थे बिचारे ने मार भी सबसे ज्यादा खाई है

कोई गाड़ी आती तो भिखारी भी बन लेता था आध घंटे में रोटी-पानी का इतना जुगाड़ लगता था कि दो दिन तक सोचने की जरूरत ही नहीं रहती पैसे वगैरह भी इतने मिलते थे कि अपना इधर-उधर का खर्च निकल आता था उस पैसे से नाइट शो फिल्म देखता था वह फिल्म देखना और गाना गुनगुनाते हुए स्टेशन लौटता फिर किसी बेंच-वेंच पर पड़कर सो जाता.

पीटर ने एक और सिगरेट सुलगाई थी अंदर गाजा भरा हुआ था खासी बदबू निकल रही थी जोर से दम मारा तो आखे और भी ज्यादा लाल हो गई पहले भी कोई और रंग नहीं था अन्दर दिमाग तक जाकर धुआ पहुचा तो उसने बात आगे बढ़ाई—मैं जा रहा था, प्रतापगढ़ आराम से खिड़की के पास एक सीट पर कब्जा कर ट्राजिस्टर से गाने सुन रहा था गाड़ी छूटने में तब भी दो मिनट की देर थी वैसे भी 'पसिंजर ट्रेन को कौन से सही टैम' पे छूटना होता है ? प्लेटफार्म पर थोड़ी-बहुत भीड़ थी मैंने देखा एक छोकरा मेढक की तरह चल रही एक मारवाड़िन के गले से हार छीनकर भाग गया कई लोग पीछे भागे, कुछ लोग वहीं खड़े होकर तमाशा देखने लगे. शोर मचाने लगे वह औरत चीखने-चिल्लाने लगी इत्तफाक देखिए, इंजन ने तभी सीटी दे दी हिन्दुस्तान में 'पसिंजर' गाड़ी आज तक सही टैम पे छूटी है कभी ? बस सीटी बजते ही, जो पीछे भागे थे, वापस आकर अपने-अपने डिब्बे में चढ़ गए मारवाड़िन भी रोती-पीटती अपने शौहर के साथ डिब्बे में बैठ ही गई

मैं प्रतापगढ़ तो चला गया था उस दिन लेकिन अगले दिन लौट आया और पता लगाया कि वह बहादुर था कौन ? समझ गया था, अभी पूरी तरह होशियार नहीं हो पाया है बिचारा इस धंधे में सही उस्ताद अगर न मिला तो खतरा ही खतरा है

खैर पता मुझे चल ही गया उससे मिला और समझाया—बहुत जल्दी कर रहे हो पकड़े जाने की पूरी उम्मीद थी बस यार्ड में कुछ अंधेरा था कुछ इन्जन की सीटी की वजह थी जो बच गए वर्ना हड्डी-पसली का भर्ता बनाकर रख देती मारवाड़िन

उस दिन से कल्लू मेरे साथ है स्टेशन का भिखमंगा था अब पूरा उस्ताद बन गया अच्छे-अच्छों को नानी का नाम भुला सकता है

पीटर फिर हसा था निसार की कहानी सुना चुकने के बाद जैसे हसा था, उसी तरह

●●

विनायक को एकदम से सारी बातें याद आ गई थी दाढ़ी-मूछों के जगल की वजह से बुल्ला के चेहरे के बारे में कोई धारणा नहीं बन रही थी शायद औरों को यह मौका न देने के लिए ही उसने दाढ़ी बढ़ाई है विनायक को इस वक्त यही सच लगा

—तुम लोग पीटर के साथ नहीं थे ? विनायक ने पूछा

बुल्ला कुछ देर तक सोचता रहा फिर बोला—असल में उसका नाम पीटर नहीं था क्या नाम था, हम लोग भी नहीं जानते अपने को डेविड बताता था वह

विनायक ने नहीं कहा, तुम लोगों के भी तो नाम वे नहीं है, जो मुझे मालूम है

बुल्ला की आवाज भर आई थी—इधर हफ्ते-भर से आपकी बात बहुत करता रहा है डेविड जिन्दा रहने से शायद एक-आध दिन में मिलने के लिए भी आता लेकिन···

—तुम लोग साथ नहीं थे उसके ?

—मैं नहीं था. मुझे बुख़ार था. बाकी लोग थे. लेकिन वे भाग सकते थे. अब फ़रार हैं.

विनायक ज्यादा देर तक बुल्ला की आंखों की तरफ़ देख नहीं सका.

—मुर्दाघर में डेविड की लाश पड़ी है. जा सकने से मैं ही जाता लेकिन मेरे तो सारे रास्ते बन्द है.

विनायक समझ गया कि अब बुल्ला आगे क्या बोलेगा.

—आप लाश को पहचानकर वापस ला सकते हैं ? विनायक जानता था, बुल्ला यही कहेगा. गर्दन उठाई तो देखा, बुल्ला रो रहा है. चुपचाप रो रहा है.

—चल रहा हूं. विनायक उठ खड़ा हुआ. पूरे जिस्म में जैसे ज़ंग लग गया था. कुछ महीने पहले उसी मुर्दाघर से मुरली की लाश ले आया था. आज पीटर की लाश लाने जा रहा है. कुछेक साल और जिन्दा रहने से शायद वह भी मुरली की तरह ही मरता, विनायक ने सोचा.

●●

विनायक रात को ट्यूशन से लौटा तो मां का पोस्टकार्ड मिला. पोस्टकार्ड दोनों तरफ से भरा तो था ही, आजू-बाजू भी जितने अक्षर सजे थे, कोई कायदे से लिखे तो आधा पोस्टकार्ड उनसे भी भर सकता है. मां का ख़त आता है तो विनायक को लगता है, एक औरत सड़क पर खड़ी-खड़ी बदहवास-सी रो रही है. बरसों से उसकी हालत एक-सी है.

उसने कपड़े नहीं बदले और पोस्टकार्ड पढ़ लिया.

रद्दो नचवैया मास्टर के साथ भाग गई है. इस सूचना के बाद कहने को और रह जाता है कुछ ? लेकिन मां ने कहा था. लिखा था कि दिल फटकर टुकड़े-टुकड़े हो गया.

रद्दो के बाद बालेश्वर की बात लिखी थी.

उसने क्रिश्चियन से शादी कर ली और खन्नो मुहल्ले में दो कमरों और रसोई का एक मकान लेकर रह रहा है.

विनायक ने कोशिश की लेकिन इन दो घटनाओं के बीच कोई तालमेल है या नहीं, तय नहीं कर पाया. कभी-कभी लगता है, रद्दो शायद वाकई मास्टर से प्रेम करती है. शायद मास्टर भी करता है. तभी शायद वे लोग एक-दूसरे को पकड़ कर जीना चाहते हैं.

रद्दो जब माथे पर पीले रंग की बड़ी-सी बिंदिया लगाती, खिल-सी उठती है. विनायक को भी यही लगता रहा है. बहन के साथ कभी भी हंसी-मज़ाक नहीं किया वर्ना शायद जिगर या गालिब की शायरी में से कुछ सुना भी देता. बाद में वह सिर्फ़ पीले रंग की ही बिन्दी लगाने लगी थी. शायद मास्टर चाहता था, इसलिए.

इतने बरसों का रिश्ता है लेकिन रद्दो ने कभी खास कुछ नहीं मांगा. उसे शायद इस घर से कुछ लेना ही नहीं था. या हो सकता है, अपने को वह 'कौशल्या

भवन' का एक हिस्सा मान ही नही पाती थी. क्यों नहा मान पाती थी, इसका जवाब जो दे सकती है, आज वह 'कौशल्या भवन' की चहारदीवारी मे नही है.

'कौशल्या भवन' की फर्श और दीवारों की सीमेंट चटख कर कितनी ही जगह से टूट चुकी है. विनायक को लगता है, इस घर के लोगों की ही तरह ये दीवारें भी सलूक करती हैं.

लेकिन बालेश्वर शायद नही टूटता. टूटने-जुड़ने के सिलसिले मे पड़ने के लिए जितनी तकलीफ़ पानी पड़ती है, उसकी फुर्सत बालेश्वर के पास नही है. चाहे रात हो, चाहे दिन उसके पास सिर्फ एक ही योजना रहती है, 'कौशल्या भवन' को बम से उड़ाकर कहीं भी चले जाने की योजना. यहा, अन्दर जो लोग रहते है, वे जिन्दा क्यों रह रहे है, उसने कई बार अपने आपसे सवाल करके जानना चाहा होगा. ऐसे लिजलिजे और मठ्ठा छाप लोग एक दिन सिटी स्टेशन तक जाकर इंजन के नीचे भी तो आ सकते है. लेकिन कायर कभी ऐसा कदम उठा ही नही सकता. कोढ़ी की तरह हर रोज गलकर बदबू फैलाता है और लोगों के सामने गिड़गिड़ाता है कि थोड़ा रहम करो.

विनायक को याद है, रद्दो कभी-कभी एकदम चुप हो जाती थी. शायद वह अपने तमाम रास्तों को खोती और तय नही कर पाती कि रोशनी का दरवाज़ा किधर हो सकता है. बच्चो की किताबो मे राजकुमारी की ऐसी कहानिया मिलती है. रद्दो को देखकर लगता है, ये कहानियां सच हैं.

आखिर मे रद्दो को शायद यही रास्ता मिला था मास्टर का हाथ पकड़कर कही भी निकल जाने का रास्ता. विनायक को लगा, बरसो मे इन्तजार करते-करते थक गई थी बिचारी. दम घुटने लगे तो आदमी आखिर कोशिश मे एक छलांग तो मारता ही है. तब कोई यह नही देखता कि जहा जाकर गिरेगा, वहा दलदल है, या चट्टान.

लेकिन बालेश्वर की बात और है. उसके रास्ते कभी खो नही सकते. लड़का अच्छी तरह जानता है कि उसे पहुचना कहा है ? जहाँ उसे जाना है, वहां वह जाएगा ही. वक्त की महिमा पर उसका यकीन नहीं है. सिर्फ़ मौके का इंतजार रहा है उसे. विनायक को लगा, बालेश्वर को अब उसका प्रतीक्षित मौक़ा मिल गया

रात गहरी हो गई थी. बाहर लाला की दूकान के सामने एक मरियल-सा कुत्ता कू-कू कर रहा था. विनायक बिस्तर से कपड़े बदलने के लिए उठा और बत्ती बुझाकर स्टूल पर चुपचाप बैठ गया, कुत्ते के रोने की आवाज़ बराबर कमरे तक आ रही थी.

●●

सुबह लल्लू की दूकान मे चाय पीने गया विनायक. प्रतिमा वाला किस्सा पूरी तरह फैल गया, इसका सबूत मिल गया यूनीवर्सिटी के चार-छह रसिया किस्म के लड़के निहायत भद्दे ढग से इस घटना पर बात कर रहे थे. वे विनायक को नही पहचानते, वर्ना शायद सामने आकर पूछते—खूब हाथ मारा मास्टर. बड़े चालाक हो. पहले खुद चूमा फिर गुठली सरदार को थमा दी. इस वक्त ये दो-तीन वाक्य और जुड़ जाते तो वाक़ई बहुत सुखी हो पाते ये लड़के.

रेडियो चल रहा था. गाना खत्म होते ही ऐनासिन, गरम कपड़े और पाउडर का विज्ञापन आया. टुन-टुन. फिर एक और गाना. लल्लू चाय बना रहा था. लड़के स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध की चीर-फाड कर मज़ा ले रहे थे. रेडियो का श्रोता सिर्फ विनायक था. वह भी पूरा श्रोता नहीं था. देख रहा था कि लल्लू चाय में दूध डाल रहा है. फिर लड़कों की अश्लील बातें कुछ तो सुनाई पड़ ही रही थीं. उनमें से कोई एक प्रतिमा को

लेकर एक शगूफ़ा-सा छोडता और लल्लू की यह दूकान कहकहो स भर उठती रेडियो का गाना भी उससे दब जाता.

सोचा था, चाय के साथ दो बिस्किट भी ले लेगा लेकिन फिर लल्लू से बिस्किट के लिए नही कहा चाय का पहला घूट लिया तो लगा, यह बाकी सब-कुछ है लेकिन चाय नही

कुल चार घूट लिए थे इस बीच यूनीवर्सिटी के हॉस्टल मे रहने वाले कुछेक लडके आ गए थे. रोज ही ये आते है चीनी की कीमत बढ जाने से हॉस्टल मे चाय मिलनी बन्द हो गई लल्लू ही इन लोगो का त्राणकर्ता है अब वैसे उस तरह के 'होटल' कर्नलगज-कटरे मे और भी है लेकिन लडको को यही आना सबसे ज्यादा पसद है रेडियो के लिए नही, रेडियो तो अब पनवाडियो के यहा भी होता ही है यूनीवर्सिटी की लडकिया इस रास्ते से काफी गुजरती है आख मारने का, सीटी बजाने का मौका बडे आराम से मिल जाता हे यह लुत्फ हर जगह नही मिल सकता

शुरू-शुरू मे लल्लू ऐतराज करता था इस ऐतराज पर वे लडते-झगडते नही या तो ध्यान ही नही देते या मज़ाक करते लल्लू ने फिर कुछ भी कहना छोड दिया था पहले स्वर्ग-नरक की दुहाई देता था, अब अगर हाथ खाली हुआ तो 'हनुमान चालीसा' उठाकर पढने की कोशिश करता है

विनायक दूकान से निकल आया

चौराहे पर दरोगा मिल गया कर्नलगज थाने का दरोगा रेवती पाण्डे दरोगा को शायद कभी फुर्सत नाम की चीज का अन्दाजा लग ही नही सकता सायकिल पर जा रहा था विनायक को देखा तो उतर गया बरसो सिपाही और हवलदार रहने के बाद नया-नया दरोगा बना था, इसलिए तमाम कायदो को अभी तक ठीक-ठीक पकड भी नही सका है दरोगा को सरकार की तरफ से मोटर सायकिल भी मिलती है लेकिन रेवती पाण्डे उस चक्कर मे नही पडा बुढापे मे कही एक्सीडेण्ट हो गया तो टूटी हुई कमर लेकर बाकी जिन्दगी गुजारनी पडेगी सायकिल ही सलामत रहे तो वही बहुत है.

—कहो मास्टर, मिजाज कैसे है? रेवती पाण्डे बरसो लखनऊ रहा है बात-चीत शुरू करता है तो लखनऊ का तरीका भूल नही पाता वैसे भी दरोगा होने के बावजूद मास्टरो-वास्टरो से थोडी इज्जत बरतकर ही बात करता है रेवती पाण्डे जब हवलदार था, तभी से कर्नलगज स्कूल के तमाम मास्टरो को पहचानता है पोता यहा पढता है, लिहाजा बीच-बीच मे मास्टरो से मिलकर पूछना तो पडता ही है कि पढाई मे कोई कमी तो नही रह गई? रेवती पाण्डे ने जरूर हवलदारी मे नाम लिखा लिया था लेकिन ख्वाहिश है कि पोता कम-से-कम वकील वगैरह बन जाए अफसोस ज़ाहिर कर कई बार कह भी देता है—बाप बचपन मे ही मर गया था, सो पढाता-लिखाता कौन? लिहाजा हवलदार बन गया नसीब अच्छा रहता तो कचहरी मे वकील बनता

विनायक ने मिजाज नही बताया सिर्फ हसा था थोडा

दरोगा ने आवाज़ नीची कर ली—दामोदर चौबे के यहा चोरी हुई थी सुना है, चोर को तुमने छिद्दा के हाथ से छुडवा कर भगा दिया था? जिसे का रिश्ता था तो इस रेवती पाण्डे को आकर चुपके से बता ही देते! दामोदर चौबे के यहा चोरी हो और थाने वाले उसे न पकडे, ऐसा हो सकता है? खैर, छिद्दा ही फिर पकड कर ले आया था लडके को 'रपट' मे तुम्हारा नाम भी बताया था लेकिन मैंने फटकार दिया. खैर, फिर तो बन्द करना ही था. अब हवालात मे बन्द है बिचारा आख़िरी

शब्द के बाद जीभ को तलुए से लगाकर दरोगा ने 'चच्च' की आवाज़ की.

विनायक का चेहरा कठिन हो गया.

दरोगा को जल्दी थी. सायकल पर सवार होने ही वाला था कि रुक गया—एक बात सुन लो. दरोगा ने गर्दन को सारस की तरह झटका मारा—चोर-डाकुओं के मामले में नही उलझो तो अच्छा. शरीफ आदमी पर अगर एक बार भी धब्बा लग गया तो बदनामी कितनी होती है.

रेवती पाण्डे ने फिर पैडिल मार दी.

चेहरे पर चेचक के दाग़ वाला वह आदमी कुएं के पास खड़ा-खड़ा भद्दे ढंग से हस रहा था. चेचक की वजह से शायद उसकी एक आंख ख़त्म हो चुकी थी. विनायक को याद आया, दो दिन पहले रात को छिद्दा के साथ उसे लाला की दूकान के सामने देखा था. चोर को पकड़वाने के लिए बहुत ख़ुश था.

फिर छिद्दा दिखाई पड़ा. कुएं तक आकर एक छोटी बाल्टी से पानी निकाल रहा था. कुआं वैसे पक्का है लेकिन रहट का इंतजाम नही है. चुगी वालों को इसलिए यहा से हर पानी निकालने वाला गाली देता है.

चेचक के दाग वाले उस आदमी ने छिद्दा को इशारा किया—तुम्हारा गुरुदेव अभी दरोगा से बात करे था, पहलवान. पीछे से घुसेगा डडा. रेवती दरोगा ऊपर से मीठा है लेकिन वह अपने बाप को भी छोड़ने वाला नही है.

छिद्दा ने इस तरफ़ नही देखा. फिर भी विनायक समझ गया, उसका चौराहे पर खड़ा होना छिद्दा देख रहा है. पानी निकालकर टोकरी में रखी उडद की दाल पर वह डाल रहा था.

—क्यो पहलवान, कुछ तो बोलो ! वह आदमी एक सभाव्य मजे से ख़ुद को वचित नही करना चाहता था उसकी एक आख की जगह एक लाल डरावना-सा जख़्म-जैसा कुछ था. लेकिन बची हुई दूसरी आख ही ख़ुशी जाहिर करने के लिए काफी थी.

छिद्दा के गाल मे पान का बीड़ा था. मुह मे लार भर गया था. गटक गया उसे. फिर अपने साथी की तरफ़ देखा—मास्टर हैं मास्टर…लौण्डियाबाज और चोर-उचक्का नही. समझ के बात करना

एक-एक शब्द से विरूप टपक रहा था.

चेचक के दागवाला काला आदमी रसीली आवाज मे ही-ही करने लगा. वह सिर्फ़ एक धारीदार अण्डरवियर पहने था. विनायक को लगा, अब कभी भी वह इस सक्षिप्त वस्त्र को भी खोल सकता है. ले साले देख ! मर्द इसको कहते है ! !

लल्लू की दूकान से लडको के कहकहों की आवाज आ रही थी. यूनीवर्सिटी का अभी वक्त नही हुआ था. सुबह की स्कूल वाली लड़किया सड़क से गुजर रही थी. लल्लू की दूकान के सामने से वे लोग सीटी मार रहे थे.

शुरू मे छिद्दा को देखकर गुस्सा आया था विनायक को. अब दया आ रही है. छिद्दा शायद दामोदर चौबे के 'पुण्य-प्रताप' के आगे कुछ और समझ नही सकता. पहले यह आदमी वाक़ई पहलवान रहा होगा. बनारस से लेकर इलाहाबाद किसी के सामने न डरा, न झुका. लेकिन आज वही आदमी झुक गया विनायक समझ नही सका कि दामोदर चौबे के पैरो के सामने इतना झुकना जरूरी क्यो हो गया.

शायद लाला की ही बात सही है. वैसे लाला ने कहा था तो लगा था कि आलू-टमाटर का व्यापारी पहलवान से जलता है. ख़बर लाला ही ले आया था कि दामोदर चौबे की जो शेरनी छाप पैंतीस बरस की बहन घर बैठी है, छिद्दा पहलवान उसका हाथ थामने वाला है.

चौबे की इस बहन की करतूते पूरा कर्नलगज जानता है सोलह-सत्रह बरस की थी तभी सगम के भीम वाले मदिर के पण्डित के साथ भाग गई थी वह पण्डित फिर कहाँ गया, इसका तो पता नही चला था लेकिन चौबे की बहन छह महीने बाद लौट आई थी

चौबे की घरवाली जलभुनकर राख हो गई थी. ऐसी कुल्टा औरत को घर मे रखकर पुरखो का सारा 'पुन्न' गगा मे थोडे ही बहाना है ? लेकिन शेरनी छाप इस ननद से पण्डिताइन डरती थी ऐसी औरते जरूरत पडने पर भावजो का खून भी तो कर सकती हे पण्डिताइन को यकीन आ गया था कि ज्यादा अडगावाजी करने पर वह खून ही कर देगी

इसके बाद चौबे की बहन घर छोडकर कभी नही भागी थी शायद इसका खतरा अपने अदर ही समझ गई थी घर लौटने का मौका हर बार नही भी मिल सकता हे कम-से-कम जब तक ऐसी पटाखे-सरीखी भावज जिन्दा है थोडा सोच-समझकर ही बाहर निकलना पडेगा.

ऐसी लडकी की शादी हो सकती है कभी ? रिश्ता लेकर दामोदर चौबे जहा भी गए, खाली हाथ ही लौटना पडा कई जगह तो खासी बेइज्जती भी हो गई थी चौबे ने फिर बहन की शादी का विचार ही मन म त्याग दिया था

पूरा कर्नलगज गवाह है कि चौबे की बहन गली-कूचो से लेकर सडक-बाजार तक कैसे-कैसे पैरो मे पहिया लगाकर घूमती है ! घूमती तो हे ही घुमाती भी है कर्नलगज थाने के हवलदार से लेकर कटरे के पसारी, लुहार तक एक-एक को कहा से कहा तक घुमा दिया देखने वालो को देखकर भी यकीन नही आता है आखिर है तो एक औरत ही. एक औरत एक से एक जबरदस्त मर्द को पस्त कर सकती है, इस सच्चाई को फटी-फटी आखो से कटरा-कर्नलगज वालो ने देखा था

विनायक समझ गया, लाला की बात झठी नही है दामोदर चौबे अब अपनी बहन को छिद्दा के गले मढ रहा है कौन किसके गले मढा जा रहा है, एकदम से कहना मुश्किल होगा

काला आदमी खूब ही-ही कर रहा था

विनायक फिर वापस मुड गया, ट्यूशन पर जाने का वक्त हो गया था छिद्दा के लिए मन म अब करुणा भर गई थी

●●

दस बजे स्कूल पहुचा तो देखा, कृपानदन उसी का इतजार कर रहा था विनायक को इतजार के बारे मे उमर खैय्याम की एक रुबाई याद आ गई थी लेकिन कृपानदन इतना सजीदा था कि बिल्कुल अभी वह रुबाई सुना देना मुनासिब नही लगा.

कृपानदन उसे पिछवाडे की तरफ ले गया मौलश्री के नीचे उधर का हिस्सा आमतौर पर सुनसान ही रहता है किसी भी तरह की भूमिका के बगैर कृपानदन बोल ही पडा—मालूम हे जनार्दन बाबू ने आज ज्वाईन कर लिया तीन महीने की छुट्टी ली थी न, सवा महीने बाद बाकी छुट्टी कैंसिल कराकर वापस आ गए अम्बादत्त तक को पता नही चला था सुना है, कल शाम को सात बजे उनके यहा चुगी दफ्तर से चिट्ठी पहुची थी सुबह साढे नौ बजे आकर बेचारे जनार्दन बाबू को चार्ज हेण्ड ओवर कर गए है

—कोई सरप्राईजिंग बतात, यह नही है

—नही है ? कृपानदन झुझलाया—तो क्या हीरोशिमा-नागासाकी की तरह

हवाई जहाज आकर बम गिराए ? वह होगा सरप्राईजिंग ?

विनायक को लगा, कृपानंदन भावुक हो रहा है. कभी-कभी डायरी में कविता-बविता भी लिखता है. सो, ऐसा आदमी भावुक हो ही सकता है.

—देखना, जनार्दन बाबू ने ऐसे ही ज्वाईन नहीं किया. इस सवा महीने में काफ़ी रगड़-पट्टी की होगी, अपना रास्ता बुहार कर ख़ूब साफ़-सुथरा बनाया होगा फिर वापस आया है सनीचर.

—सोचेंगे. विनायक बोला.

कृपानंदन, ज़ाहिर है, इस संक्षिप्त उत्तर से ख़ुश नहीं हो सका. ना-ख़ुशी का यह भाव चेहरे पर भी उभर आया था.

विनायक हंसा—ख़ामख़्वाह परेशान क्यों हो रहे हो. हम लोग क्या कोई जेब-कतरे हैं, जो पुलिस के डर से नींद हराम हो जाएगी.

कृपानंदन ने सोचा, कह दे—इतनी बार समझाया कि टीचिंग डिप्लोमा लेकर कन्फर्मड तो हो लो. तब तक थोड़ा ख़ामोश ही रहते तो क्या हर्ज था ? सोचा लेकिन बोला नहीं. कह दिया—वैसे कोई बात नहीं. आख़िर हम लोग भी तो चार जने हैं. कोई बात ऐसी-वैसी थोड़े ही होने देंगे.

विनायक ने गर्दन हिलाई—हु. इस बार वह और नहीं हंसा. बल्कि पहले के मुक़ाबले कुछ संजीदा ही हो गया.

—रिश्ता निकालने में जनार्दन बाबू बहुत माहिर हैं. सुना है, चुंगी में कई बड़े बाबू, पी. ए. वगैरह उनके गांव के हैं. यह भी एक अच्छा तरीका हुआ. कृपानंदन ने संक्षिप्त-सा एक ठहाका मारा. ठहाके में जनार्दन बाबू के लिए जितना व्यंग्य हो सकता था, वह तो था ही, माहौल को हल्का बनाने की भी कोशिश थी.

घंटी लग गई थी.

विनायक ने अपनी कलाई पर घड़ी देखी और वापस मुड़ा. कृपानंदन ने घड़ी की तरफ़ नहीं देखा.

●●

शाम को आख़री पीरियड चल रहा था. विनायक पांचवें दर्जे को गणित बता रहा था. दफ्तरी चरनदास एक स्लिप लेकर हाज़िर हुआ. हेडमास्टर का स्लिप था. चरनदास बोला—फौरन बुलाया है.

इस तरह पीरियड ख़तम होने से पहले बुलाना मुनासिब नहीं लगता लेकिन बुलाया जब है, जाना ही पड़ेगा. ख़ैर, विनायक ने क्लास छोड़ दिया और बच्चे यहां आनंद में शोर मचाते हुए निकल गए. अचानक वक्त से पहले ही छुट्टी मिल गई, इस अप्रत्याशित प्राप्ति के लिए मास्टर के प्रति वे कृतज्ञ थे.

चिक उठाकर विनायक जनार्दन बाबू के कमरे में घुसा तो वह कुछ लिख रहे थे. फिर पान की पीक उगल दी—भई, बहुत अफसोस है. ऊपर से डायरेक्टिव आया है कि विदआउट डिप्लोमा वाले स्टाफ को 'रिट्रेंच' किया जाए. छुट्टी में जाने से पहले भी मैं नोट भेजकर गया था कि आपके केस को स्पेशल ट्रीट करके 'एडहॉक' पीरियड को थोड़ा और बढ़ा दिया जाय. लेकिन अफ़सोस है, उन लोगों ने 'टर्नडाउन' कर दिया यह रिक्वेस्ट. जनार्दन बाबू ने फिर नौकरी समाप्त होने की चिट्ठी बढ़ा दी—यहां ज़रा दस्तख़त कर दीजिए.

विनायक ने दस्तख़त कर दिये.

दस्तख़त कर दिये और बाहर आकर स्टाफ़ रूम में बैठ गया. इस वक्त यहां कोई नहीं है. कुछ कुर्सियां बिखरी पड़ी हैं, एक लड़खड़ाती-सी मेज है. इधर-उधर फैले

अख़बार के पन्ने है और अभी-अभी नौकरी से निकाला हुआ विनायक है.

कमरा बहुत बड़ा नही है लेकिन विनायक को लगा, यह छोटा तो हर्गिज नही है. इसके बीच जब तक घंटी नही लग जाती, तब तक वह पूरे एकांत के साथ कुछ भी सोच सकता है.

फर्श पर ज्यादातर हिस्सों में सीमेंट नही थी. विनायक को अचानक लगा, ये हिस्से उसके अपने है. ये जगह-जगह से टूटी हुई कुर्सियाँ और लड़खड़ाती-सी मेज़ भी उसी की है.

बीच पीरियड में क्लास छोड़ देने की वजह से लड़के ख़ुश हो सके थे, यह सोचकर उसे सुख मिला. उसे आश्चर्य हुआ कि इन छोटी-छोटी बातों पर बच्चे कैसे ख़ुश हो सकते है !

घंटी बजी.

आज के लिए स्कूल यही ख़त्म हुआ.

स्टाफरूम एकदम से भर गया फिर. कृपानदन को ताज्जुब हुआ था—यहां कैसे बैठे हो ?

विनायक ने मुस्कराने की कोशिश की. फिर थोडी देर पहले जनार्दन बाबू से मिली चिट्ठी जेब से निकालकर कृपानदन को पकड़ा दी.

कृपानदन ने चिट्ठी पढ़ ली और चेहरा एकदम काला हो गया. इससे पहले उसका चेहरा ऐसा कभी नही हुआ हैं. विनायक को अब समझ में आ गया कि यह आदमी सचमुच कवि न सही, आधा-कवि जरूर है.

फिर बलभद्र ने भी चिट्ठी पढी. आख़िर मे भगवती बाबू ने भी.

बलभद्र दांत निपोर कर रह गया. जनार्दन बाबू अगर किसी काम से इधर आते तो वह शायद एक कुर्सी ही उनकी तरफ उठा फेंकता. आख़िर मे विनायक पर उसे गुस्सा आने लगा. लेकिन जे. टी. सी न करने की गलती का ममला फिर से शुरू नही किया. पिछले लगभग साल-भर मे कम-से-कम पचास बार उससे यही बात उसने कही होगी. बलभद्र कुर्सी पर पीठ टिकाकर एकदम से ख़ामोश हो गया. आख़िर मे लगा, विनायक से जे टी सी का आग्रह करके उसने गलती ही की है. रात बारह बजे तक जो आदमी दस तरह के कामो मे यहा से वहा भटकता है, उसके लिए डिप्लोमा लेने की फ़ुर्सत है कही से ? बलभद्र को लगा, एकाएक उन सब मे विनायक बहुत बडा हो गया है. इतना बड़ा कि अब शायद उसे छुपाना भी मुमकिन नही होगा.

●●

स्टेशन पर कादिर मिया भी पहुंच गया था. विनायक को ताज्जुब हुआ. फिर समझ गया, बलभद्र की करतूत है.

भगवती बाबू नही आए थे. उन्हे बुख़ार था.

कृपानंदन, बलभद्र और दफ्तरी चरनदास इकट्ठे थे.

विनायक ने सन्नाटा तोड़ने की कोशिश की—मुझे किसी लाश-गाड़ी पर थोड़े ही बिठाने आए हो तुम लोग जो इतने चुप खड़े हो.

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया. सिर्फ कादिर मियाँ थोड़ा-सा हंसा था.

कृपानंदन ने अब आख़िरी बार मनाने की कोई कोशिश नही की. इससे पहले कम-से-कम पच्चीस बार कहता रहा है कि कोई-न-कोई रास्ता जरूर निकल आएगा. विनायक सिर्फ मुस्कराता रहा—रास्ता अब सीधा 'कौशल्या-भवन' मे जाएगा.

भगवती बाबू ने भी समझाया था—इतनी जल्दी इलाहाबाद छोड़ने की कोई

वजह नही है दोड-भाग की थोडी जरूरत है, बस महीना-पन्द्रह दिन म कुछ-न-कुछ इतजाम हो ही जाएगा

लेकिन विनायक जानता ह, कुछ भी नही होगा जनार्दन बाबू एक नही है इर्द-गिर्द बहुत-सारे जनार्दन बाबू खडे है वे एडी-चोटी एक कर देगे कि इस आदमी का कुछ भी न हो

वह जानते है, बरेली का 'कौशल्या भवन' दुबारा खडे होने के लिए थोडी-सी ज़मीन तो देगा ही. इलाहाबाद और झूसी न सही, बरेली ही सही कोई फर्क है इन अलग-अलग जगहो के दरमियान ? विनायक ने अपने आप से ही सवाल किया लेकिन जवाब नही दिया जरूरत ही नही है

कादिर मिया विनायक का टीन का, कई जगहो से टेढा हुआ, सदूक और दरी मे लिपटा बिस्तर लेकर खडा था विनायक खुद ही यह करता लेकिन मिया ने यह मौका किसी और को नही दिया

सदूक को देख कुछ देर पता नही क्या सोचता रहा कादिर फिर एकबारगी बोल गया—एकदम फकीर हो, फकीर

स्टेशन के शोरगुल म मिया की बात किसी ने सुनी ही नही सुनाई पडने से भी शायद फकीर' शब्द का मतलब कोई नही समझ पाता.

गाडी आ गई थी

विनायक पीछे की तरफ के एक अपेक्षाकृत कम भीड वाले डिब्बे मे जा घुसा. कादिर मिया ने ऊपर चढकर सामान रख दिया सोने की तो खैर नही, बैठने की जगह मिल गई थी

चरनदास, कृपानदन और बलभद्र चुपचाप खडे थे

पाचक मिनट मे गार्ड ने सीटी बजाई इजन ने भी सीटी दी और गाडी चल पडी विनायक थोडा हसा और हथेली उठाई—खत वगैरह लिखत रहना···

किसी ने जवाब नही दिया था शायद कोशिश की थी लेकिन कुछ भी कह पाना मुमकिन नही था.

सिर्फ चरनदास आहिस्ते-आहिस्ते अपनी हथेली हिला रहा था

●●

वापसी

ख़बर

वापसी

•

बरेली का आदर्शवादी युवा
विनायक इलाहाबाद के
एक जूनियर हाई स्कूल में अध्यापन
और झूसी के गांवों में
जाकर उत्पीडित किसानों के
लिए संघर्ष शुरु
करता है।
अन्ततः उसे नौकरी से
निकाल दिया जाता है।
निम्नमध्यवर्ग का विनायक
फिर बरेली लौटता है।
यहां अब है
नक्सलवादी केदार भट्टाचार्य
और तमाम पुराने बाशिंदे—
दामोदर लुहार, जगदम्बा
नैनामेम, बाबू लाल
पंडित विद्यानिवास
और भइयन बदमाश
जैसे अनेक पात्र और
घटनाएं।
इन सबके बीच
विनायक क्रान्तिकारी तरीकों से
मनुष्य के लिए
नई सम्भावनाएं लगातार
खोजता रहता
कथाकार प्रणवकुमार ने
तलहटी में बैठे
समाज के लोगों को
जिस व्यापक आधार पर
रेखांकित किया है
हिन्दी कथा-साहित्य के लिए
यह एक
गौरव की गाथा है।

भगीरथ के 'होटल' में अरसे बाद फिर से वह छूटा हुआ किस्सा शुरू हुआ. नैनामेम और विनायक का मसालेदार किस्सा. इसके अलावा चाय का स्वाद एकदम फीका लगता है, चाय के कप में तैरती हुई मलाई खाकर भी 'पेशल' चाय का मजा नहीं आता.

जगदम्बा ने जेब में से निकालकर एक शेर छाप बीड़ी मुलगाई और बाकी बचे बण्डल को लापरवाही से मेज पर फेंक दिया. पियो जित्ती मर्जी.जगदम्बा के यहां बनिए की तरह कोई हिसाब-किताब नहीं है.

जोर से एक कश खींचकर जगदम्बा ने कुर्सी पर पैर उठा लिए. इत्मीनान से अगर बैठा ही नहीं तो कहानी कहां से निकलेगी ? भगीरथ जानता है, जगदम्बा अब कुछ बोलने ही वाला है.

कश खींचकर जगदम्बा आधे मिनट तक आंखें बन्द किए बैठा रहा. पुराने जमाने में ऋषि-मुनि भी कंदराओं में बैठकर शायद ऐसे ही ध्यानस्थ होते रहे हैं. भगीरथ ने कैलेण्डरों में ऐसी कई तस्वीरें देखी हैं लेकिन जगदम्बा की इस क्रिया का ताल्लुक आज तक नहीं समझ सका.

फिर जगदम्बा ने धीरे-धीरे आंखें खोलीं—फिर लौट आए न तुम्हारे नेताजी महाराज ! हीरो बनके आए हैं. अबकी देखना, ऐसा गुल खिलाएंगे कि यहां बिलायत-अमरीका का मजा मिलेगा सबको.

जगदम्बा ने इस तरह कहा, जैसे बिलायत-अमरीका वह अक्सर जाता रहा है. वर्ना बिहारीपुर के साथ तुलना कैसे करता !

बाबूलाल ही-ही करने लगा.

कभी-कभी भगीरथ को तरस आता है. बिचारा एक कप चाय के लिए घंटा-भर मालिश कर सकता है. पुराना जमाना होता तो शायद राजे-महाराजे उस पर अशर्फियां फेंकते.

बाबूलाल के साथ शंकर बैठा था. वह ठहरा व्यायामशाला वाला आदमी. दण्ड-बैठक की बात हो तो बाल की खाल निकाल के रख देगा. नौरंगी वकील की बरसों शागिर्दी की है, मजाक थोड़े ही है. पिछले साल कटरा मानराय में परचूनी वालों ने दीवाली के बाद व्यायाम का जलसा बुलाया था. शंकर ने हिस्सा लिया और एक कप जीतकर लौटा. तब से नौरंगी वकील के साथ-साथ उसके सीने की चौड़ाई डबल हो गई और वह तंदरुस्ती पर लोगों को अक्सर कुछ-न-कुछ बता दिया करता है.

लेकिन उसने जगदम्बा की मिर्च-मसालेदार बात सुनी तो नैनामेम की अदाए याद आ गइ ऐसी ज़ालिम औरत पर बात हो तो शायद बड़े-बड़े हनुमान छाप आदमी भी अपने लाल-लगोट की मौजूदगी भूल जाए

छह महीने पहले नैनामेम का फिरगी मर गया था उस वक्त जगदम्बा ने कहा था—मरा नही बिचारा आखिर पूरा हट्टा-कट्टा था, खूब खाता-कमाता था रेलवे मे गार्ड होने का मतलब सिर्फ खाने-कमाने से है, यह तथ्य कोई भी जानता है

सब मास रोककर चुप बैठे थे जैसे जगदम्बा के अगले वाक्य पर ही उन सब का ज़िन्दा रहना निर्भर करेगा

—मेमने, असल मे, सखिया देकर गार्ड को मार डाला जगदम्बा ने बात खत्म की और खखार कर गला साफ किया गले मे शायद बलगम अटक गया था

बाबू शायद यकीन करता है जगदम्बा के पास जो सूचनाए है, वे पूरी न सही, नब्बे-फीसदी ज़रूर सही है

—पुलिस वालन को पता नाय है ? बाबूलाल ने बेवकूफ की तरह पूछ लिया

—अबे तेरा बाप है पुलिस वाला समझा कुछ ?

इतनी देर मे बाबूलाल को अपनी बेवकूफी समझ मे आई समझ मे आ गई तो फिर ही-ही करने लगा

—साली पुलिस क्या करेगी ? जगदम्बा ने पिच्च से थूक डाल दी—रडी का क्या जाता है ? दरोगा को बैठाय लो तो वह भी चुप्प, तेरा भी काम बन गया हमे तो फिरगी के लिए तकलीफ होती है

—वैसे साला था एकदम लपाडू शकर बोला

—लपाडू था ? कुछ नाय समझे तुम भई डायन के चगुल मे कोई फस जाए तो बडे-बडो की धोती गदी हो जाती है हा अब देखो, नैना के ठाठ फिरगी का सब-कुछ लूट लिया, लूट की कमाई मे राज करेगी लुहार की लौंडिया

—लेकिन देखना, लूट का पैसा नाय रहने का फिरगी भूत बनके सब वसूल कर लेगा, हाँ बाबूलाल बोला

बाबूलाल को इस भूत-प्रेत के मामले पर पता नही कैसा डर-सा लगने लगता कई कहानिया वह सुन चुका है कि आदमी मर कर भूत हुआ फिर दुश्मन से बदला लिया एक दफा तो सुना था गर्दन मरोड कर भूत ने दुश्मन का खून तक पिया है

खैर, उसके इस भूत वाले प्रसग पर किसी ने भी जोर नही दिया

—फिरगी का सुना है, बिलायत मे काफी पैसा था जगदम्बा बोला—लेकिन हिन्दुस्तान मे इत्ती मुहब्बत थी बिचारे की कि हियई रिया मरते दम तक जगदम्बा की इस सूचना से भगीरथ को लगा, मरने से पहले गार्ड जगदम्बा को बुलाकर सब-कुछ बता गया है उसे हसी आ गई थी लेकिन नही हसा रेडियो मे खबरे आ रही थी, सो पद्रह मिनट के लिए बन्द कर रखा था अब फिर से चालू कर दिया था.

—देखना लुहार की लौण्डिया इस की ए पास लौडे को भी एक दिन चूस कै फेक देगी मदारिन है, मदारिन बाबूलाल बोला

यह निष्कर्ष शायद जगदम्बा निकालना चाहता था बाबूलाल के इस वक्त से पहले कहे गए वाक्य पर वह जरा भी खुश नही हुआ, बोला—मदारिन कै लो चाहे जादूगरनी, जब ठुमक कै चलती है न···

बाबूलाल ने बात पूरी नही करने दी 'हाय' कहकर अपना सीना पीट लिया

बाबूलाल की यह बेअदबी जगदम्बा बिल्कुल नही सहन कर सकता इससे पहले कई बार दो-चार बार चाटे भी मार चुका है लेकिन बाबू को शायद चाटा खाना

भी बुरा नही लगता

इस दफा जगदम्बा एकदम संजीदा हो गया और भौंहें सिकोड लीं कोई आधे मिनट तक इसी तरह बाबूलाल को देखता रहा.

बाबूलाल चुप

—सुन बे साले, अपने बाप से करियो ऐसी मसखरी आगे फिर बात की तो गू ठूस दूगा तेरे मुह मे. पहले जगदम्बा जुबान खीच लेने की धमकी देता था इधर कोई महीनाभर से 'मल निक्षेप' की यह चेतावनी देने लगा है.

बाबूलाल का बाप नही है वह बीस बरस का था, तभी मलेरिया से तपकर वह खत्म हो गया था. उस बात को हुए भी कोई पन्द्रह बरस हो चुके है इतने दिनों बाद बाप की याद दिलाई थी जगदम्बा ने

शकर अखबार के पांचवे पन्ने पर एक अजूबा खबर पढ रहा था. पढ लिया तो मेज से उठाकर चाय की आखिरी चुस्की ले ली. यह भगीरथ का बच्चा भी दिन-ब-दिन कजूस होता जा रहा है माना कि शक्कर महगी है लेकिन जगदम्बा ने पैसे फीकी चाय पिलाने के लिए तो नही दिए है इस बात पर पहले भी भगीरथ से कई बार कह चुका है लेकिन हर बार वह महगाई की कोई-न-कोई दुहाई दे ही देता इस दफा शक्कर वाले मामले मे वह कुछ नही बोला. इसके बजाय अभी-अभी पढी हुई खबर को उछाल-सा दिया—अमरीका मे एक औरत का चूमते-चूमते सामने का दात हिल गया है सो उसने अपने हर आशिक से हर्जाना वसूल करने के लिए कचहरी मे मुकदमा दायर कर दिया लो। यकीन न हो तो पढ लो शकर ने अखबार को फिर सामने की तरफ यू खिसका दिया जैसे वह सामने बैठे लोगो को किताब के पन्नो मे लिखे राजे-महाराजो की तरह, कोई दान दे रहा हो.

इतनी जोर से ठहाका लगा कि रेडियो का गाना देर तक सुनाई नही पड़ा

—ये रही अमरीका की बात. शंकर ने जगदम्बा से कहा इस सूचना से वाह-वाही लेने की जो कोशिश थी, जगदम्बा को वह अच्छी नही लगी. आखिर चाय के पैसे वह खामख्वाह तो नही भर सकता

जगदम्बा को अपने को सभालने मे दस सेकेण्ड लगे थे. बोला—साली रडी रही होगी.

—ये नाय लिखा है अखबार मे शंकर की आगे सूचना दे पाने की असमर्थता के लिए जगदम्बा बहुत खुश हुआ. थोडी देर पहले हुआ नुकसान अब इससे पूरा हो गया था शायद.

—अखबार वाले सब थोडे ही लिखेंगे ? जगदम्बा के होठो पर बहादुरी वाली एक मुस्कान थी खैर चलो, रडी न सही, गिरस्तिन भी हो सकती है लुहार की लौंडिया भी तो गिरस्तिन है

बाबूलाल जोर से हस पडा

जगदम्बा ने इस दाद के लिए उसकी पिछली गलतियाँ माफ कर दी. बात कहने का मजा तभी है, जब दाद देने वाले भी हो. इस रहस्य को औरो से ज्यादा जगदम्बा जानता है

—खूब कैते हो. बाबूलाल गदगद हो रहा था.

जगदम्बा समझता है, इसका मतलब क्या है एक-एक प्याला और हो जाए तो क्या बुरा ? लेकिन नही बच्चू, यह कोई राजा हरिश्चन्द्र का खजाना नही है जो डोम-चमार जो भी आया किसी को खाली हाथ नही लौटाया. हिसाब की फिक्र अमूमन वैसे जगदम्बा को होती नही, जबतक यह जगदम्बा परशाद जिन्दा है, चाय भी पियो.

बीडी भी पियो, लेकिन तुम साले जिस थाली मे खाते हो, उसी मे हगते हो जगदम्बा ने बाबूलाल को माफ तो कर दिया था लेकिन भूल नही पा रहा था कि एक खासा मजा उसी ने किरकिरा कर दिया है ऊपर से शकर है कि पटाखे छोडे जा रहा है दण्ड-बैठक लगाओ जित्ती मर्जी लेकिन दुनियादारी की बात जगदम्बा को सिखाने मत आना बडे सुना रहे हो बिलायत-अमरीका के किस्से !

रामधनी ने अब तक कुछ नही कहा था उसका पाजामा फटा हुआ था और अन्दर का गदा लगोट जब तक वह सामने की तरफ खडा था, दिख रहा था फिलहाल उसके हाथ मे कोई काम नही था लेकिन भगीरथ के होटल मे बैठकर पचडो मे पडने की तबीयत नही हो रही थी

जगदम्बा ने आवाज़ दी—खडे-खडे किसका इन्तजार हो रिया ? मेम का तो नाय ?

रामधनी मुडा मन-ही-मन गाली दे दी साले मेम होगी तेरी महतारी

—लो बीडी पियो जगदम्बा ने बडल बढा दिया

रामधनी ने तीन निकाल ली दो जेब मे रख ली, एक सुलगायी जगदम्बा के सामने माचिस भी पडी थी लेकिन उसका इस्तेमाल नही किया भगीरथ की भट्टी मे कागज का एक टुकडा डाला और बीडी सुलगा ली

जगदम्बा ने सजीदा होने का नाटक किया—सुना है, दामोदर की लौडिया शिरी रामधनी जी पर मर रही है यह शगूफा छोड पाने के लिए जगदम्बा बेहद खुश हुआ.

इत्तफाक से नैनामेम दिखाई पड गई थी

जगदम्बा एकदम मे चुप हो गया वह चुपचाप आखे बन्द किए बीडी का धुआ अन्दर-बाहर कर रहा था बाकी लोग नैना को सामने से गुजरते हुए देख रहे थे

●●

कोई छह-एक महीने पहले फिरगी मर गया था और इस बात को लेकर मुहल्ले वाले काफी-कुछ निष्कर्ष निकालते रहे

कासगज से गाडी लेकर लौटा था फिरगी जब भी ड्यूटी से लौटता झोली जरूर भरी होती दस तरह की सब्जियाँ होती, मौसम के फल होते और बटुए मे ऊपर से दस-बीस पत्ते भी होते यह न हुआ तो आदमी रेलवे का गार्ड क्या हुआ, बढई या राज जैसा ही कुछ हुआ ! गार्ड का यह हक है, देने वाले इतना मानते है लिहाजा देने के बाद उनके दिलो मे कोई मलाल नही रहता वे स्टेशन मास्टर को, मालबाबू को, खलासी को, छोटे बाबू को, सबको पीछे से गाली देते है लेकिन फिरगी गार्ड की भलमनसियत पर किसी ने कभी कोई धब्बा नही लगाया जो कुछ भी दे दो, ले लेता है पसारी की तरह रुपए-आठ आने के लिए कभी भी घुमा फिराकर झक-झक नही करता

फिरगी जितना भी लाता, लाकर सब-कुछ नैना को थमा देता जब एक बार तू यहाँ आ ही गई, सब-कुछ तेरा फिरगी फिर नैना को बाहो मे भरकर विलायत की कहानी सुनाता विलायत वैसे वह कभी गया तो नही है लेकिन वहा की कहानिया काफी मालूम है पहले जब अग्रेज थे, कितने ही लोग आते-जाते भी थे अब इतना तो नही होता लेकिन सुनी हुई बाते याद रह गई हैं

नैना को किस्से-कहानिया कोई खास पसन्द तो नही आती, लेकिन वह सुन जरूर लेती मेहनत करके आया है बिचारा, थोडा कह-सुन लेगा तो हल्का हो जाएगा नैना कहानी सुनती फिर फिरगी को हाथ पकड के उठा देती—चलो नहा-धो के रोटी

खा लो

फिरगी भी उठ जाना घर लौटने पर कोई रोटी बनाके खिलाए तो मर्द को और क्या चाहिए ! यह 'हैवन' है 'हैवन' इस खास शब्द का मतलब क्या है, नैना ने आज तक नही समझा लेकिन यही एक लफ्ज नही है, जिसका मतलब उसे नही आता फिरगी जब रगीन मिजाज मे होता तो पता नही क्या-क्या सब बोल जाता आधी बाते भी उसे समझ मे नही आती न आए समझ मे ! नैना का दिमाग इसलिए नही दुखता सिर्फ एक बात वह पूरी तरह समझ गई कि फिरगी उसे बहुत चाहता है

इस आदमी की तरफ देखने से पता नही दिल इतना पसीज क्यो जाता है ! लगता है, इतने दिनो तक चुपचाप रूखा-सूखा खाकर दिन काटता रहा है बिचारा जब बीवी गुजर गई तब भी जवान ही था दूसरी शादी करके कायदे का घर बसा ही सकता था लेकिन वह फिर नही हुआ सगाई तक मामला बढा था वह चुडैल फिर उसकी अगूठी भी पहने घूमती रही लेकिन महीने-भर बाद अगूठी वापस करके लोको के एक मिस्त्री से शादी कर ली थी फिरगी को बस, शादी की मर्जी ही फिर कभी नही हुई

नैना ने दो-चार बार उस चुडैल के बारे मे पूछा भी था पूछने से फिरगी जवाब तो देता है लेकिन कही-न-कही से चोट खाकर सजीदा भी होने लगता आगे फिर नैना ने कभी कुछ नही पूछा इतने बरस जरूर हो गए लेकिन दिल की गहराई मे कही-न-कही से जख्म आज भी वैसा-का-वैसा ही बना है पूरी तरह न सही इसको काफी कुछ नैना समझती ही है कई दफा गुस्सा भी आता कि वह कलमुही मिले तो गर्दन पकड ले

एक लडखडाती-सी मेज है इस घर मे पायो की सारी चूले ढीली हो गई है और थोडा हिलाने से घुन लगी सफेद बुकनी गिरती है फिरगी इस मेज पर थाली रखकर रोटी खाता है नैना पहले रसोई मे चूल्हे के पास बैठकर खाती थी मर्दों के सामने बैठकर निगलने मे शर्म तो आती ही है, ऊपर मेज-कुर्सी पर विलायती मेम बनकर रोटी खाने की आदत नही है लेकिन फिरगी कहाँ से मानता ? एक दफा बाहो मे उठाकर नैना को कुर्सी पर बैठा दिया था तब से नैना मेज-कुर्सी पर रोटी खाती है.

कभी-कभी नैना अपने बारे म सोचती है दामोदर लुहार की लडकी कैसे-कैसे वक्त के बदलने के साथ नैना मेम बन गई लोग थूकते है ऐसी औरत पर. वह जानती है लेकिन जब आदमी हर तरह से थक जाता है तो करे भी तो क्या करे ? सामने फिरगी न होता, कोई और होता आखिर औरत बने रहने के लिए जो कुछ चाहिए, लुहार की बेटी को वह सब कोई लाकर देता क्या ? नैना जानती है, इस सवाल का जवाब न सोचना ही अच्छा है वर्ना फटाक से दिमाग गर्म हो उठेगा

फिरगी मिला तो जो होना था वही हुआ अपने पास जो कुछ था, किसी बात की परवाह किए बिना सब लुटा दिया उसकी कीमत इससे कही ज्यादा हो सकती थी बल्कि होनी जरूर चाहिए थी लेकिन फिरंगी को देकर भी दिल मे कोई मलाल नही है आज तक जिसकी कोई चाह पूरी हुई ही नही, उसके लिए तो सारे मर्द बराबर हैं हर मर्द को एक औरत चाहिए ताकि रात अच्छी तरह गुजरे औरत को भी रात गुजारनी पडती ही है लेकिन सिर्फ मर्द ही नही, कुछ और भी उसकी जरूरत रहती है. नैना को भी जरूरत थी. पर अब जमाना बदल गया, नैनामेम समझ गई कि वह औरत ही नही है सब-कुछ वह हो सकती है लेकिन औरत हर्गिज नही.

फिर भी शुक्र है, फिरंगी सामने था वर्ना कोई और होता तो काटकर-चूसकर सब-कुछ निकाल लेता और थूक या बलगम की तरह नैना जमीन पर पडी होती.

फिरगी कम-से-कम लिहाज तो करता ही है इज्जत करता है कि नही उसने सोचकर नही देखा. ऐसी औरते उसकी उम्मीद नही करती, नैना जानती है

शीशे पर अपना चेहरा देखकर कई बार वह डर-सी जाती लेकिन कभी जमाना था, जब अपनी ही सूरत पर फिदा थी वह दामोदर की सदूकची मे से पैसे चुराकर पाउडर और लाली खरीदती थी बोतल से लाली निकालकर पहले होठो पर फिर पैरो मे लगाती और उछल-सी पडती अपनी जानलेवा खूबसूरती पर

अब पैसे चुराने की जरूरत नही पडती फिरगी के मारे पैसे उसके पास रहते है ऊपर से वह बाजार से विलायती पाउडर भी लाकर देता है लेकिन सज-सवरकर निकलने को अब जी नही चाहता

कभी-कभी सिर्फ मरने को जी चाहता है इच्छा होती है एकदम से कभी दिल का धडकना बद हो तो राहत मिले कई बार रात को जब नीद नही आती, बिस्तर मे चुपचाप वह इसी बात के इतजार मे सुबह तक बैठी रहती है

कई दफा फिरगी का जिस्म देखकर भी मन उल्टी करने लगता सिर्फ एक मर्द की तरह लगता यह आदमी, जिसके लिए रडी, रखैल, बीवी सब बराबर है जैसे जिस्म के अलावा और कुछ यह आदमी कभी समझ ही नही सकता इसके बावजूद जब यही आदमी उसके जिस्म मे खुद को खोजना शुरू करता तो नैना मना नही कर पाती कभी उसने आज तक सुना ही नही कि किसी रडी ने आज तक मना किया हो

पहले अपने बाप पर गुस्सा आता था दामोदर लुहार पर अब नही आता इतना कमजोर आदमी कैसे हथौडा चला सकता है, साम ले सकता है और बच्चे पैदा कर सकता है, यह समझ मे नही आता आखिर मे और कुछ नही दामोदर का कम-जोर चेहरा-भर याद आया है जैसे अपनी मर्जी से नही, किसी और के हुक्म से आहिस्ते-आहिस्ते साम ले रहा है बिचारा

कभी-कभी लगता है, दामोदर लुहार और फिरगी गार्ड के बीच कोई फर्क नही है दोनो ही रोटी खाते है काम करते है, सो जाते है जिन्दगी जैसी भी है मजूर कर ली कभी अगर अपनी अपाहिज जैसी हालत मे दिल भारी भी हुआ, शिकवा-शिकायत किसी से की ही नही

फिरगी कभी अगर इतवार के दिन घर ही रहा, गिरजा चला जाता है नैना को लगता है, गिरजा जाकर उदास हो जाता है बेचारा नैना ने कभी कुछ नही पूछा लेकिन फिरगी की आखे बताती है कि अदर वही पुरानी तकलीफ है

उस दिन दुपहर को कासगज से गाडी लेकर लौटा तो आखो मे ऐसी ही तक-लीफ थी चेहरा एकदम काला-सा हो रहा था नैना देखते ही डर गई थी जो आदमी बिल्कुल दूध जैसा न सही, गेहू जैसा हो, अगर चौबीस घटे बाद स्याह होकर लौटे तो कौन नही डरेगा ?

फिरगी अदर आया और तुरत बिस्तर पर लेट गया ऐसा कभी नही होता अदर आकर सबसे पहले नैना को बाहो मे भर कर होठ, आखे और गला चूमता रहेगा कई बार चूमने की सीमा लाघकर वहा तक भी पहुचता रहा है, जिसका वक्त बिल्कुल तभी नही होता नैना मना करती रह जाती लेकिन कौन किसकी सुनता ? आखिर मे वही सब होता, जिसके लिए फिरगी बेताब था

इस दफा ऐसा कुछ नही हुआ बिस्तर पर पड गया तो नैना ने माथे पर हाथ लगाया. बुखार थोडा-सा जरूर है लेकिन फिक्र करने लायक कोई ऐसी बात नही. लेकिन चेहरे की स्याही को देखकर लगता है, अदर की तकलीफ बेचारा बयान भी नही कर पा रहा है साम लेने मे भी तकलीफ हो रही थी.

नीचे मकान-मालकिन रहती है बुढ़िया को नैना ने रुपए का एक नोट थमाया और मुरारी डाक्टर को बुलाने भेज दिया. रिक्शे से जाओ और उसी से वापस आओ. वैसे परमेश्वरराम बैद का नाम भी याद आया था लेकिन उस पर फिर कोई ध्यान नही दिया आजकल के जमाने मे बैद-वैद पर भरोसा करना थोडा मुश्किल ही पडता है

मुरारी डाक्टर दस मिनट के अदर आ गया था तब तक फिरगी औधा होकर कराहने लगा था पावो मे जूते थे लेकिन नैना का ध्यान ही नही गया था उस तरफ नीचे वाली बुढिया ने फिर जूते उतार दिए थे

मुरारी डाक्टर कान मे नली लगाकर सीना, पीठ, पेट सबकुछ देखता रहा दो-चार सवाल भी फिरगी से किए लेकिन तब तक वह होश मे नही था नैना ने जितना मालूम था, बता दिया

फिर मुरारी ने साबुन और पानी मगवाकर कायदे से हाथ धोए और साफ तौलिए मे पोछ लिए आखिर मे बैग मे कागज निकालकर नुस्खा लिख दिया—फिकर नाय करना रात तक आराम पड जाएगा हर आधे घटे मे दवा देते रहना.

नीचे वाली बुढिया को नैना ने फौरन नुस्खे वाला कागज देकर बिहारीपुर ढाल भेज दिया था—रिक्शा लेकर दौडो और दस मिट मे वापिस आओ

बुढिया ने देर नही लगाई थी वह लौट आई और नैना ने फौरन एक खुराक फिरगी के मुह मे डाल दी सामने घडी रखकर बैठी रही कि ठीक आधे ही घटे बाद अगली खुराक दे सके सिर्फ तीन बार खुराक दी थी उसने चौथी बार का मौका ही नही आया था मुह मे साबुन के झाग-जैसा लार निकल रहा था साम बहुत तेजी से चलने लगी थी फिर जैसे एकदम से सबकुछ ठप्प हो गया था झाग कुछ और निकल नही रहा था और साम की तेजी भी खत्म हो गई थी नैना ने फिरगी के सीने मे कान लगाया पूरा सीना छान डाला लेकिन पता ही नही चला कि अदर कुछ धडक भी रहा है या नही. कलाई उठाकर नाडी देखी थी फिर वहा कोई हलचल नही थी फिर एक-दम से दहाड मारकर वह रो पडी थी

फिरगी चला गया तो महसूस हुआ था, दुनिया मे यकीन नाम की कोई चीज ही नही है जिस आदमी को अपना सबकुछ दिया वह बगैर कुछ बताए अगर जा सकता है तो कोई किस भरोसे पर जिन्दा रहे ?

अब यकीन नही आता कि इस नैना मेम ने फिरगी को कसकर पकड कर कुछ बरस बडे यकीन से गुजार दिए. आज जब पुरानी बाते याद आती है तो कई बार लगता है, फिरंगी नैना के उस हिस्से को बखूबी समझता था, जहा वह कजूस रही है. आखिर तक जो गार्ड को दे नही सकी नैना फिरगी से प्रेम नही करती है, शायद वह समझता था समझता था और इस लाचार औरत पर रहम करता था जिस नैना से पूरा मोहल्ला डरता है, उस पर रेलवे का एक मामूली गार्ड रहम कर चला गया

नैना कई बार रोटी नही बनाती और चूल्हे के पास घटो चुपचाप बैठी रहती आजकल भूख भी नही लगती फिरगी की टोपी दीवार पर उसी तरह टगी है यह टोपी लगाने अब कोई नही आएगा फिर भी लगता है, गार्ड कभी और किसी वजह से न सही, यहाँ लगाने जरूर आएगा.

घर में ईसा की एक तस्वीर है फिरगी का खुदा. डयूटी पर जाने से पहले वह उसके सामने खडा होता और दाहिने हाथ की एक उगली पहले माथे पर फिर गले और दोनों कंधों पर छुआ देता. एक दिन बताया था, खुदा को इन्ही जगहों पर कील ठोंक कर राजा ने मरवा दिया था इसलिए खुदा की याद मे अपने जिस्म की इन्ही जगहों को वह छूता है.

नैना ने अपने लिए किसी ख़ुदा की तस्वीर नहीं रखी. दामोदर लुहार के घर राधाकृष्ण से लेकर शिव-पार्वती तक पांच-सात तस्वीरें हैं. चाहती तो वह एक ख़रीद कर ले आती या लुहार के घर से उठा लाती. लेकिन कोई चाहे तो चाहे कैसे ? कोई तो बुनियाद होनी चाहिए चाहने के लिए ! नैना को बस बुनियाद ही नहीं मिली.

एफ दफ़ा नीचे वाली बुढिया ने कहा था—भगवान में यकीन रख, दिल को चैन मिलेगा.

नैना को हंसी आ गई थी लेकिन हसी नहीं थी. चैन हलवाई की दुकान का लड्डू नही है जो मांगा और मिल गया.

इस बुढ़िया की भी एक कहानी है. रामपुर के एक ठेकेदार की रखैल रही है. ठेकेदार ने ही यह मकान बनवा दिया था. ठेकेदार का काम बदायू, शाहजहांपुर यहां तक कि हरदोई तक होता था. कुली-मजूरों के साथ काम होता था. एक दफ़ा बदायू में पैसे के लेने-देने पर झगडा क्या हुआ कि ठेकेदार की जान ही चली गई.

ठेकेदार गया तो उसकी रखैल को गुरुद्वारे से लाकर रोटी कौन खिलाता ? वैसे मकान था लेकिन जिसे अब तक हर आराम अपने आप ही मिलता रहा है, वह एक छोटे-से चार कमरों के मकान के भरोसे कभी रह सकती है ? पन्ना बाई को तब तक कितने ही लोगों की तरफ़ से दावतें मिलनी शुरू हो गई थीं. पशोपेश में थोड़ा अरसा जरूर गुज़रा लेकिन आखिर मे उसने फैसला कर ही लिया, किसी एक के साथ बंधकर अब नही रहना है. किसका क्या भरोसा ? ठेकेदार वैसे नेक आदमी था लेकिन हर आदमी नेक नही भी तो हो सकता है. कही फिर कोई चकमा देकर निकल गया तो उसे ढूढने कौन से जहन्नुम में जाएगी वह ?

जवानी में यह औरत वाक़ई ख़ूबसूरत रही है, इतना आज भी पता चलता है. ऐसी किसी औरत पर शौकीन मिज़ाज के लोग फिदा होते ही रहेंगे, पन्नाबाई ने ठेकेदार के गुजरने के बाद इस सच्चाई को महसूस किया था. इसके बाद जो-जो सामने आए, सबको अपनी शर्त सुना दी. तांगे पे बिठा के ले जाओ मगर सिर्फ़ एक रात के लिए. सोना-चांदी देकर महारानी भी बना दो, तो भी इससे ज्यादा रुकना मुमकिन नही होगा.

यह है पन्नाबाई की कहानी.

यह कहानी पूरा बिहारीपुर मुहल्ला जानता है. जितना नही जानता है, इतना भी नैना को मालूम है. अब वही औरत जिन्दगी की आख़री ड्योढ़ी पर आकर अगर भगवान और चैन की बात करती है तो किसी को भी ताज्जुब ही होगा. नैना को ताज्जुब नही होना. लगता है, पन्नाबाई चालाकी से बदला ले रही है.

●●

फिरंगी जाने से पहले जो बच्ची छोड़ गया, नैना उसकी तरफ देखती है तो अब लगता ही नहीं कि इसे नौ महीने तक जिल्लतें उठाकर पेट के अंदर रखा था. पूरा मुहल्ला थूकने लगा था. कई दफ़ा सामने वाले नीम की तरफ लोग ढेला फेंकते और दो-चार भद्दी गालियां देकर जता देते कि इस मुहल्ले में आलमगिरीगंज के कोठे नहीं हैं. फिर वे कहकहे लगाकर कोई मज़ाकिया गाना नाक से गाने लगते.

नैना को एक-एक का नाम पता है. लेकिन दरवाज़ा खोलकर खड़े होने की हिम्मत जैसे गायब हो गई थी. होगा भी क्या इन लोगों से कुछ कह-सुन कर. सिर्फ़ सामने के छज्जे पर फेंके हुए ढेलों को वह ग़ौर से देखती रहती.

लड़की पेट में थी तो पन्नाबाई ने भी वही सलाह दी थी. हकीम को बताकर पुड़ियां ले आओ और खलास करो. बाई को शायद समझ में आ गया था, नैनासेम की

चांदनी अब, बस, ख़त्म ही होने वाली है. लेकिन नैना जानती है, उसके लिए नौ महीने तक जिल्लतें उठाने के अलावा अब कोई रास्ता नहीं है.

फिर लड़की पैदा हुई.

नैना लड़का चाहती थी. पैदा ही अगर होना है तो लड़का ही हो. औरत की ज़िन्दगी और कुत्ते के बदन से चिपके कीड़े के बीच फर्क नहीं होता है, इस बात को उसने अच्छी तरह यकीन कर लिया था. लड़की पैदा हुई तो वह समझ गई, एक और नैनामेम आई है. अपनी मां की तरह यह लड़की भी किसी गार्ड या खलासी की नैनामेम बनेगी. लड़की के मुकद्दर पर नैना को हंसी आ गई थी.

हंसी जरूर आई थी लेकिन जब पैदा किया है, अपने जिस्म का खून दिया है, उसके लिए ज़िम्मेदारी हो ही जाती है. नैनामेम लड़की के नसीब पर तरस खाती और ज़िम्मेदारी संभालती.

आज फिरंगी नहीं है. होता भी तो मुकद्दर की मारी इस लड़की के साथ उसका शायद कोई रिश्ता नहीं होता. दो जोड़ी कपड़े और खिलौने ले आने से ही रिश्ता नहीं बन जाता. रंडी-रखैल की बेटी किसी मर्द की बेटी नहीं होती. हो ही नहीं सकती.

अब इस लड़की की तरफ़ देखने से नैना को लगता है, यह उसकी भी बेटी नहीं है. लड़की के जिस्म में उसीका दिया खून बह रहा है, वह अब इसका जैसे यकीन नहीं कर पाती.

लड़की धूप में पड़ी-पड़ी चीख़ रही थी.

नैना उस तरफ देखती है और चुपचाप बैठी रहती. अंदर में कहीं खुशी का ज्वार भी आता है कि यह बदनसीब लड़की चीख मारे जा रही है. जिसको ज़िन्दगी-भर चीखते ही रहना है, वह अगर अब ज़रा चीख ही रही है तो इससे इस मुहल्ले में भूचाल नहीं आने का. नैना को धीरे-धीरे बहुत मजा आने लगा था. लड़की की इस चीख के अंदर ही इतने दिनों बाद जैसे वह अपनी ख़ुशियों का खजाना ढूंढ पा रही थी.

नीचे से पन्नाबाई ऊपर आ गई थी.

उसने नैना का चेहरा देखा तो डर-सी गई. सुनने में आता है, घड़ियाल की भूख कई दफ़ा इतनी हो जाती है कि ख़ुद अपने बच्चों से ही मिटानी पड़ती है. बुढ़िया को लगा, नैना के अंदर एक घड़ियाल की भूख जाग उठी है.

वह आगे बढ़कर लड़की को धूप से उठाने लगी तो नैना को जैसे झटका-सा लगा—रहम करती हो मौसी ? बस कुछ और कर लो मगर रहम नाय करना

पन्नाबाई ने झिड़की दी—तू डायन है डायन.

नैना खिलखिला कर हंस पड़ी. जैसे डायन हो पाने के लिए उसकी ख़ुशियां दूनी हो गई हैं—रंडी डायन भी होती है कभी ?

बाई लड़की को उठाकर छाया में आ गई थी.

—मारना था तो पैदा काहे को किया था ? पन्नाबाई लड़की को चुप कराने की कोशिश में दुलरा रही थी.

—पैदा नहीं किया, मौसी. नैनामेम औरत नाय है जो बच्चे पैदा करेगी. जे लौण्डिया घुस आई इस घर में.

बाई को कुछ सूझ नहीं रहा था. जो औरत कभी शेरनी की तरह घूमती थी, आज अपाहिज-सी गड्ढे में पड़ी हुई है. पन्नाबाई जैसे नैना का यह रूप बरदाश्त कर ही नहीं पा रही थी.

—इस लौण्डिया को तुम ले जाओ. नैना ज़िन्दगी की सारी नफ़रत से अब भी चीख़ रही बच्ची को घूर रही थी.

पन्नाबाई समझ गई कि लडकी भूखी है

नैना की छाती की तरफ देखा तो लगा, अब वहा दूध नही है दूध की बजाय कोई पत्थर भर गया है

भूख के मारे लडकी थककर सो गई थी सामने, रसोई मे दूध का भगोना रखा ह लेकिन बाई की हिम्मत नही हुई कि कटोरे मे दूध और चम्मच लेकर बैठे और बच्ची को पिला दे नैना शायद सचमुच घडियाल की तरह टूट पडेगी

नैना उसी तरह बाल खोले बैठी थी शरीर पर कपडे सक्षिप्त-से थे पेटीकोट हटा हुआ था और दोनो जाघे काफी ऊपर तक खुली हुई थी ऊपर के ब्लाउज का सिर्फ एक बटन लगा था उम खुले हुए हिस्मे से उसकी छातिया लगभग पूरी की पूरी दिखाई पड रही थी बाई को लगा, लडकी को दूध न पिलाने की वजह मे य मूजी हुई भी है ऐसे मे औरत का मन बच्चे के लिए बहुत मचलता है छाती मे एक चिन-चिनाहट-सी महसूम होती है नैना को भी हो रही होगी लेकिन पन्नाबाई को लगा, इस बात का भी होश उसे नही है

पन्नाबाई ने लडकी को बिस्तर पर सुला दिया फिर मुडकर नैना के सामने आई— चल उठ नैना, नहा ले

नैना खुले दरवाजे म सामन के पीपलघर की तरफ देख रही थी शाम को मुहल्ले के लोग यहा इकट्ठा होते है कमानी खीचकर, दण्ड-बैठक लगाकर सहत बनाते है और नैनामेम का नाम जबान पर लाकर थूक देत है नैना के दिमाग म वही सब कौधता है

— चल उठ बाई ने उसका कधा छुआ

नैना की आखे अब बुझ-सी आई नीद की खुमारी जैसे पलको म आ गई थी

—चल नहा-धोय के रोटी खा ल

नैना ने आखे नही खोली

पन्नाबाई ने झुककर उसकी तरफ देखा थोडी देर पहले यही नैनामेम खूखार लग रही थी अब घायल चिडिया की तरह ब-मुश्किल साम ले रही है

बाई समझ गयी, शाम म पहले नैना यहा से उठेगी नही फिर लडकी की चीख मे चौकेगी और छाती निकालकर उसे दूध पिलाना शुरू करेगी दूध पिलात हुए लडकी का माथा चूमेगी और उसे सीने मे भीच लेगी थोडी देर पहले क्या हुआ था, नैना को याद ही कहा रहेगा ? फिरगी के मरने के बाद यही सब पन्नाबाई देखती आ रही है

उसके हाथ म कुछ भी तो करने लायक नही रखा है पन्नाबाई चुपचाप एक लम्बी सास लेकर आँखे बन्द कर लेती ह.

●●

विनायक बरेली वापस आया तो फिर मे नैनामेम का किस्सा भगीरथ के 'होटल' मे गूज उठा फिरगी के मरने के बाद गोबिन्द को थोडी फिक्र भी हुई थी कि अब इस लौण्डिया के साथ नैना जाएगी कहा लेकिन यह सिलसिला बहुत लम्बा नही हो सका था फिरगी गले मे फाँसी लगाकर मरता या गाडी से कूदकर किसी दरिया वगैरह मे डूबता तो जगदम्बा कुछ कह सकता था फिर भी इतने दिनो बाद हो सही, फिरगी के मरने के पीछे सखिया का सूराग उसने निकाल ही लिया

गोबिन्द को इस सूचना पर यकीन शायद नही आया था लेकिन डोरीलाल की चाय हजम करने के बाद कुछ कहना मुनासिब नही लगा गोविन्द को जब से मूलचन्द ने कपडे उतरवाकर भट्ठी म निकाल दिया था, भगीरथ ने उसे देवरहा बाबा कहना शुरू कर दिया पिछली मर्तबा वह कुभ नहाने इलाहाबाद गया वहाँ बहुत-सारे नग-धड़ग

साधु-महात्मा दिखे थे. लेकिन नजदीक कौन जाए ? हाथ में त्रिशूल और कटार. लगता था, पास गए नहीं और त्रिशूल से बेध लिया. वहीं रेत पर समाधि लगाए एक और दाढ़ी वाले नंगे बाबा दिखे थे—देवरहा बाबा. भक्त लोग भीड़ लगाकर खड़े थे उनके गिर्द. क्या मालूम किसी पर बाबा की कृपा हो ही जाए. भगीरथ ने भी भीड़ के अंदर झांककर दर्शन किया था. गोबिन्द को मूलचन्द ने नंगा कर दिया तो उसने उसका नाम ही बदल दिया. इस देवरहा बाबा का मतलब किसी ने भगीरथ से नहीं पूछा. गोबिन्द ने भी नहीं. अगर गोबिन्द को पता हो जाए कि इसके पीछे की वजह सिर्फ उसका नंगा लौटना है तो कम-से-कम एक-आध कुर्सी बिना तोड़े वह वहां से नहीं निकलता.

गोबिन्द बोला, मेम ने साहब को तार देकर बुलाया और साहब चले आए. साहब शब्द का इस्तेमाल उसने विनायक के लिए किया था, सब समझ गए.

—जाकर गू चाटो साहब का. मुहल्ले को चकला बना दिया और हीया बैठके तमाशा देखते हो. जगदम्बा ने शायद जताना चाहा कि मुहल्ले की फिक्र उससे ज्यादा किसी को नहीं हो सकती.

गू चाटने वाली बात सुनकर बाबूलाल बहुत खुश हुआ.

डोरीलाल ने सबको समझाना चाहा—देखो, अब भी टैम है. अपनी भलाई समझो और कुछ करो.

डोरीलाल ने नहीं बताया कि कुछ क्या करना है. किसी ने उससे पूछा भी नहीं.

—बी.ए. पास क्या हो गए, नेता बन गए. दिल्ली, लखनऊ जाओ तो पता चले नेता किसे कहते हैं. पतलून के अन्दर पेशाब कर दोगे. हां, डोरीलाल अपनी बात खत्म कर जगदम्बा की तरफ देख रहा था. जैसे उसके 'हां' कहने के ऊपर ही एक आदमी का पतलून के अन्दर पेशाब करना निर्भर करता हो.

गोबिन्द अपनी पीठ खुजा रहा था. जगदम्बा को इस वक्त यह बुरा लगा. इसके बावजूद उसने कोई नसीहत या गाली नहीं दी.

—भैन बनी है रंडी, नचैय्या मास्टर अब पैरों में पायल बाँध के खूब ऐश करेगा. नाचो राधाबाई, छमछम छमिया बनके खूब नाचो. गोबिन्द बोला, और भाई साला है पक्का हरामी. क्रिश्चियन को उड़ाएके अब मौज करेग्या.

—क्रिश्चियन एक दिन चकमा दै के भागेगी. देखना, उसे कौन-सी पिल्ला-छाप आदमी के संग जिन्दगी गुजारनी है. क्रिश्चियन है, सो कम-से-कम चार खसम तो होंगे ही. शंकर के कहने से लगा, क्रिश्चियन बने रहने के लिए चार खसम जरूरी है. आखिर में उसने अपनी बेसुरी आवाज में गाया—'छमकछल्लो नाचे छमछम'.

आवाज इतनी बेसुरी थी कि कोई हंसा तक नहीं.

डोरीलाल बोला—तू सिरफ दण्ड-बैठक ही मारता रहेगा. कोई रंडी भी भड़वा तक नाय बनाने की तुझे···

अब सब ठठाने लगे.

शंकर ने बनावटी गुस्से में मेज पर मुक्का मारा—देखो, डोरी उत्ता फालतू नाय समझना इस शंकर-महादेव को. राधाबाई से पूछ के देखना··

बैठकी में खासा मजा आ गया था. वे सब जानते हैं, भगीरथ का होटल अगर न हो, इस बिहारीपुर में फिर रहने की तबीयत नहीं करेगी.

—तू साला, रंडीबाजी में ही खतम कर लेगा अपने को. पूरा गबरू जवान है. ब्याह-शादी करके घर बसा. डोरी ने शंकर के लिए कहा.

शंकर की शादी पक्की हो चुकी है, सब जानते हैं. डोरी ने जो कुछ कहा,

उसका वह मतलब नहीं है जो उसने कहा. दरअसल इस महफिल में कुछ भी कोई किसी से भी कह सकता है, वक्त कट जाता है, मजा भी कम नहीं आता. इस हंसी-मज़ाक में सात पुरखों तक गाली दी जा सकती है, कोई बुरा नहीं मानने का.

शंकर बोला—अभी कोई जल्दी नाय है शंकर महादेव को, अब तलक तो सिरफ नैनामेम ही बिहारीपुर में कमर मटकाए कै फिरती रही है. अब राधा बाई इसी मुहल्ले में कूल्हे मटकाएगी, छम-छम नाचेगी, तब होगी शंकर-महादेव की शादी.

बात मसालेदार थी. इसके बावजूद आगे बढ़ नहीं पाई. नैनामेम थोड़ी देर पहले यहां से होकर सिटी स्टेशन की तरफ़ गई थी. अब कनस्तर-भर आटा लेकर वापस लौट रही थी.

वे सब चुपचाप रेडियो का गाना सुनने लगे.

●●

ढाल में जिस जगह विनायक का 'बरेली होम्यो क्लीनिक' का बोर्ड था, वहां अब पंसारी की एक दूकान है. बचऊ हलवाई का रिश्ते में साला लगता है टेकचंद पहले उसका शाहजहांपुर में साझे में लोहे का व्यापार था. तीन साझेदार थे. दो बाप-बेटे और वह. बाप-बेटे ने तिकड़म में ऐसी चाल चली कि टेकचंद सब-कुछ गवांकर बरेली चला आया. बचऊ ने फिर यह दूकान दिला दी थी. दूकान अब मज़े में चल रही है.

विनायक ने सबसे पहले बचऊ से ही कहा—कहीं कोई कमरा-वमरा ख़ाली दिखे तो बता ज़रूर देना.

यह साले का मामला न होता तो बचऊ शायद किसी-न-किसी बहाने खाली करवा ही लेता. आजकल दूकान लायक कमरा खाली मिलता ही कहां है ? अब तो बरेली में भी लोग दो-दो हज़ार की पगड़ी मांगने लगे हैं. बचऊ के ध्यान में एकदम से तो कुछ नहीं आया लेकिन चार-छह दिनों में कुछ ढूढ़ निकालने का दिलासा फिर से दे दिया.

—थोड़े दुबले लगते हो. बचऊ के इस झूठ में कोई वज़न नहीं है, कहने के बाद खुद वह भी समझ गया.

—हालचाल सुनाओ मुहल्ले का. इतने दिनों बाद बरेली वापस आकर विनायक को ढाल की यह सारी भीड़, भीड़ में गुज़रते हुए रिक्शे, दूकानें और सड़क के दोनों तरफ़ के मकान बहुत निजी लग रहे थे.

—मालूम है न, फिरंगी गार्ड गया ?

—हां मालूम हो गया.

—जे थोड़े ही मालूम होगा कि फिरंगी गया कैसे ? बचऊ ने मुरारी के इलाज की पूरी कहानी बता दी—जो आदमी लुहार बनने लायक नाय है डाक्टर बन बैठा. 'गोरमिंट' के कानून का तो कुछ पता नाय है. वर्ना जेल जाकर सड़ता मुरारी. अन्त में बचऊ ने तालू के साथ जीभ लगाकर 'च्च च्च' की आवाज़ की. यह सहानुभूति शायद गार्ड से ज्यादा नैनामेम के लिए थी.

—और तुम्हारी दूकानदारी ?

बचऊ ने इस दूकानदारी के सिलसिले को छुआ ही नही—नैना कभी मिलती तो तुमारी बात जरूर पूछ लेती. तुम मिले तो नाय ?

विनायक ने गर्दन हिलाई यह अस्वीकृति थी

बचऊ ने पूछा जरूर था लेकिन उम्मीद नही थी कि मेम से मुलाकात हुई ही न होगी. थोडा निरुत्साहित ही हो गया वह

—और सुनाओ इलाहाबाद मे कैसे रहे ? बहुत बडा सहर है, सुना है. बचऊ दूध की कडाही मे करछुल चला रहा था

—बरेली से बडा हे

—सारे दिन मोटर चलती होगी सडक पर ! बचऊ मोटर के चलने से शहर का आकार समझने की कोशिश कर रहा था. लेकिन जवाब की जरूरत उसे नही थी बोला—इलाहाबाद का रग ही और है कभी हम भी जागे, गगाजी मे डुबकी एकबार जरूर लगा के आगे तुम तो रोज नहाते रहे होगे.

विनायक शुरू मे चुप रहा समझ गया कि सच बोलने से बचऊ हलवाई हवा निकले गुब्बारे जैसा एकदम ठडा हो जाएगा. वह बात को इलाहाबाद मे खीचकर बरेली मे ले आया--बरेली मे भी तो गगा है

—सो है इस बात पर बचऊ बहुत आनदित हो सका. आखिर बरेली अपना शहर है इलाहाबाद के मुकाबले कोई इसकी बडाई करेगा तो सीना फूल ही तो उठेगा !

बचऊ ने फिर काशी चमार वाला वाकया सुनाया था इस दफा इतना पिटा कि गर्दन की हड्डी मे अब भी दर्द है बचऊ अब समझ गया, काशी जब तलक जिन्दा रहेगा अपने रास्ते म हटेगा नही

—आक् ! थूह ! बचऊ ने बगल के कूचे मे थूक दिया था--चमार की हसरत तो देखो, बेल-बूटेदार शेरवानी पहनेगे, इत्र लगाएगे, जूता पहनेगे फिर शाम का अधेरा हुआ नही कि निकल पडेगे चलो मरद जात है थोडा-बहुत इधर-उधर चलता है सभी करते है कोई छुपके करता हे, कोई खुले आम

बचऊ कडाही उतारकर चूल्हे मे कोयला डाल रहा था एक कोयला शायद थोडा कच्चा रह गया था, धुआ निकल रहा था उसने गाली दी—धस्साली कोयले को या उससे निकलते धुए को ? गाली दे पाने के बाद तसल्ली-सी महसूस करने लगा

विनायक को याद आया कि काशी खलासी की इससे पहले भी भईयन ने खासी खबर ली थी

बचऊ ने अब कडाही चढा दी -कुत्ते की दुम को चाहे दस साल नली मे बद रखो, निकालोगे तो टेढी ही निकलेगी चमार का शौक तो देखो गू खाने वाली कुतिया होती हे न, वह भी बेहतर होती है इसमे रडी के ह्या जाकर धुत्त पडे रहो, कोई कुछ नाय कैता मर्द हे तो जे सब ठीक है लेकिन चमार की औलाद भूड मुहल्ले के कब्रिस्तान मे बैठ के चिलम लेकर दम मारेगा फिर किसी और मर्द को चूमेगा, चाटेगा फिर कपडे उतार के · अब समझ लो काशी चमार का मिजाज

इस दफा कोई बाजे वाला था बैड मे बाजे बजाता और खाली 'टेम' हुआ तो कब्रिस्तान मे बैठ के दम मारता मुसलमान हे वो कोई नसीम जाने क्या नाम है मिया की पाच लौडिया है घर म लुगाई है, लुगाई की एक भैन भी रैती है साथ लेकिन उधर को देखने को फुर्सत कहा है मिया को

हमने तो कभी देखा नाय लेकिन लोग कैते है मिया है लौडिया छाप ही कमर

मटकाय के बैंड के साथ चलता है. सुना है, काशी कई दफ़ा चौधरी तालाब की तरफ भी उसके साथ जाता रहा है. वहा जगह सुनसान है. तालाब और अमरूद के पेड़ के अलावा वहाँ और है क्या ? बस दोनो को मौका मिल गया और लगे कपड़े उतारने.

इस दफा नसीम मियाँ की घरवाली भईयन के ह्यां जाकर ड्योढी पे सर धुनती रही. पैले समझाया भी होगा अपने मर्द को. लेकिन जो मर्द ही नाय है, वो क्या समझेगा ? ख़ैर, भईयन ने उस औरत को तो फटकार दे भगा दिया लेकिन शाम को पहुंचा अड्डे पे. दोनों गुत्थमगुत्थी कर रहे थे. भईयन को शुरू मे काशी का पता नाय चला था. फिर टार्च जलाकर पुराने असामी को देखा तो हाथ की छड़ी उसकी पीठ पर ही तोड डाली. तब तलक नसीम मिया कपडे पहन के भागने की सोच रिया था लेकिन भागे कहा ? शेर की माद मे कोई आदमी भाग सका है कभी ?

बचऊ ने फिर थूक दिया लेकिन जे साला आदमी कहा है ? खैर, भईयन ने ऐसा झापड़ रसीद किया कि दाहिने कान का पर्दा ही फट गया. नाक से खून निकलने लगा . काशी तब तलक नगा ही था.

भईयन ने पैर से उसकी तरफ कपडे फेंक दिए—ले चमार की औलाद.

काशी ने सोचा था, छुट्टी मिल गई ? लेकिन भईयन बदमाश इतने सस्ते मे किसी को छोड सकता है ? दोनो को पकडा और खोपडी से लड़ाता रहा. नसीम मियां बेहोश होने को आ गया था फिर पीछे से जमाकर एक लात मारी और थूक दिया लात खाकर मिया मुह के बल गिरा था आंखो के नीचे पत्थर के टुकडे शायद लग गए थे काफी गहरा घाव हो गया था उसे फिर छोड दिया था.

भईयन जब काम करता है, बोलता नाय. नसीम मिया को चाहता तो थूककर चटवा सकता था, धमकी दे सकता था लेकिन ऐसे हिजडो से बोलना भी क्या ? कुछ बोला जरूर नाय लेकिन मिया समझ गया कि आईन्दा कभी पकडा गया तो एक और कब्र खोद के फौरन वही दफनाय देगा भईयन

नसीम मिया घर पहुंचा तो समझ गया, किसकी करतूत हो सकती है. जे बस चारपाई का एक खुला हुआ पाया था उसे उठाया और लगा बीवी पर जमाने साली आकर न पकडती तो बिचारी की खोपडी साबुत नाय बचती भईयन ठैरा पुराना खिलाड़ी अपने टैम मे बड़े-बड़ो के छक्के छुड़ा दिए आदमी देख के पैचान सकता कि किसकी रग मे कौन-सा खून है रात को नसीम के ह्या पहुंचा उसकी घरवाली के सर पर पट्टी बधी थी. ऐसे आदमी को मामला समझने मे देर नहीं लगती मिया अन्दर की कोठरी मे घुसा हुआ था कुछ पूछा नाय उससे, सिर्फ दो झापड और रसीद कर दिए उसकी बीवी भी देखती रह गई थी आखिर अपने ही सामने घर मे घुस के कोई घर-वाले पे ऐसा करे तो कौन बीवी चुप रहेगी ? नसीम मिया की साम फलने लगी तो उसकी घरवाली ने भईयन को सुना दिया —घर मे आन के जे तुमने ठीक नाय किया पैलवान. मेरा घरवाला मेरा सर फाडे तो फोडे···तुम्हारे सामने रोने तो नाय गई थी मै !

भईयन को गुस्सा आ गया था लेकिन आदमी है अपने असूल का एकदम पक्का. औरत जात पे कभी आंख उठायके बात नाय करता गुस्से मे निकलने लगा तो हाथ लगकर मियाँ के दरवाजे पे लगा टाट का पर्दा फटके आधा हो गया था पुराना सडा हुआ था शायद मिया के बाप के जमाने मे कभी लगा होगा. धूप है, पानी है, टाट तो टाट, लोहा भी खराब हो जाता है खैर भईयन ने झट से जेब मे से एक दस का पत्ता निकाला और ड्योढी पे फेंक दिया—नया लगाय लेना

बचऊ एक सरिया लेकर फिर भट्ठी का कोयला गिराने लगा. लेकिन इस दफा

उसने कोयले को या उसके धुए को कोई गाली नही दी. सिर्फ माथे को थोडा सिकोड लिया था.

थोडी देर बाद उसने सिर उठाया और नवाबी लहजे मे पूछ लिया जे बरेली है बरेली ह्या जे ही होता है, हाँ उसके कहने के अदाज से लगा वह विलायत का नाम जुबान से निकालते-निकालते 'बरेली' बोल गया. इस गलती के लिए उसे बेहद अफसोस है

—जे तो सिरफ नसीम मिया की बात हुई ! बचऊ अब इत्मीनान से बैठ गया —चमार की बात तो अभी शुरू ही नाय हुई

विनायक को लगा, अगर अभी तक शुरू ही नही हुई तो शायद कभी खत्म नही होगी हलवाई फिर हसकर कह देगा—जे बरेली है, भाई ऽऽऽ···

—तो भईयन ने मुट्ठी मे काशी के बाल पकड लिए और दूसरे हाथ स लगा झापड रसीद करने पैलवान का झापड भी क्या होता, समझ लेव एक खाओ तो हफ्ते-भर के लिए हो गई छुट्टी फिर बाल छोड दिए और काशी के मुह पर थूक दिया

इस अधेरे मे कयामत की तरह कोई आ जाएगा, काशी को अगर पता होता तो शायद घर मे ही नाय निकलता पिछली दफा जो मार खाई थी, उसी का जखम अब तलक नाय भरा था. बिचारा हाफने लगा था फिर.

लेकिन भईयन को अगर गुस्सा आ गया तो भूड वाले जानते है कि जे है क्या चीज ! उस वखत अगर सामने शेर भी आ गया भईयन नाय रुक सकता

झापड खाकर काशी गिर पडा था गिर पडा तो पेट मे एक लात जमा दी —अब बोल हिजडई करेगा या···

काशी ने पैर पकड लिए थे गले मे आवाज नही निकल रही थी निकलने लायक हालत थी भी कहा ? आखिर मे भईयन ने जमाकर एक लात मारी और छोड दिया.

काशी समझ गया, भईयन बदमाश के इलाके मे उसकी मर्जी के बगैर एक पत्ता तक नही हिल सकता. खैर, जान बची लाखो पाए लेकिन गर्दन की हड्डी मे अदर से ऐसी चोट है कि सीधी तरहा चल भी तो नाय सकता खलासी

पहले कई दफा विनायक से भी सर्दी-जुकाम की दवा लेता रहा है काशी जगत नारायण उसके बडे बाबू रहे है, हर बार वह यह बात एकबार जरूर सुना देता. पहले वह लोको मे हेड खलासी था लेकिन मनमौजी आदमी है वहा से निकला और माल-गोदाम मे अपनी बदली करा ली मालगोदाम म आ गया था लेकिन लोग हेड खलासी ही कहते काशी भी अदर से खुश होता चलो लोग पुराने ही कायदे से हेड कहकर इज्जत तो करते है

मालगोदाम मे रेलवे कुलियो का मेट था वह हुक्म देता तो कोई माल उठता या उतरता. चार पैसे की आमदनी हो जाती, ऊपर से मौका लग गया तो हाथ भी साफ कर लिया. जगतनारायण ने काशी की इस कमजोरी की बात काफी बाद मे जानी थी फिर एक दफा चीनी की एक बोरी पार करते हुए रगे हाथो पकड लिया तो काशी ने जमीन पर नाक रगडकर आईदा ऐसी गलती न करने के लिए कसम खाई थी.

बाद मे जगतनारायण समझ गए थे कि काशी लोको छोडकर मालगोदाम म इसलिए नही आया कि हथौडा मारते-मारते अब बाहो की हड्डिया खोखली हो गई है उसकी निगाह है सिर्फ मालगाडी मे चढते-उतरते बोरो, टोकरियो मे

इसके बाद जगतनारायण को खबर मिली और फिर जाकर काशी को पकड़

लिया. इस दफा चावल का एक कट्टा पार कर रहा था. पकडा गया तो मुह बनाकर ही ही करने लगा ख़ुद ही अपने कान पकडे और दुबारा क़सम खाई.

जगतनारायण को नफरत हो गई थी लेकिन सिर्फ़ उसके बच्चों का ख्याल करके छोड दिया था.

जगतनारायण ने तो छोड दिया था लेकिन काशी समझ गया था कि यह किस की करतूत हो सकती है. आखिर मालबाबू को सपना नही आया था कि जाकर देखे, काशी हेड कर क्या रहा है ? वह तैयार हुआ और एक लकड़ी उठाकर लालचद को लगा दनादन मारने. लालचद टेम्परेरी कुली है. मालबाबू को ख़ुश करने के लिए इत्तिला दे आया था लेकिन हेड यह समझ जाएगा, इस बात का पता उसे नही था.

उस दिन इन्सपेक्टर आए हुए थे. उसने लालचद को ख़ून में लथपथ देखा और बडे बाबू से सारी बाते पूछकर हेड आफिस मे रिपोर्ट कर दी. हफ्ते-भर बाद चिट्ठी आई और काशी सस्पेण्ड कर दिया गया.

उधर बच्चे बिलखते थे.

कोई जमापूजी तो थी नही. जितना कमाया, उससे डबल खा-पी लिया. पैसा अगर हाथ मे है तो ख़ूब मुर्गा खाओ, कच्ची पियो, सिनेमा देखो और हाथ ख़ाली है तो फाके करो बनियो से लेकर धोबी-नाई तक से इतना उधार कि आगे माल कौन देता ?

काशी मालगोदाम जाता और जगतनारायण के पाव पकड लेता. ज़मीन से नाक रगडकर दिन मे तीन बार कसमे खाता कि आगे कभी ऐसा नही होगा लेकिन बात जब हेड ऑफिस वालो तक पहुंच चुकी, जगत नारायण करते भी क्या ?

यह मामूली-सी बात काशी नही समझता वह जगत नारायण के पैर छोडता ही नही—आप चाहो तो हेड आफिम वाले छोड देगे

बच्चो की हालत देखकर जगतनारायण के मन मे दया भी आती है लेकिन हेड ऑफिस वालो को इस बारे मे सिफारिश लिखने से कही वे बडे बाबू को ही न फसा दे ! जगतनारायण बदले हुए वक्त की बात मोचते है तो कुछ करने की हिम्मत नही होती.

बाद मे वही इन्सपेक्टर जब मुआयने मे आया, जगतनारायण ने काशी के लिए न सही, उसके बच्चो के लिए रहम मॉगी काशी भी इन्सपेक्टर के दोनो पैरो को पकड कर बैठ गया था और जमीन पर नाक रगडी थी तब जाकर कही मामला निबटा था उसके बाद से काशी जैसे बडे बाबू का गुलाम हो गया था पुरानी आदत, कहते है, अर्थी के निकलने के साथ ही छूटती है काशी फिर बोरा, कट्टा उडाने के जुर्म मे पकडा ज़रूर नही गया लेकिन ऊपर से दो-चार रुपयो की जो आमदनी होती थी, उसे नही छोडा रेलवे वाले इसे, वैसे भी, रिश्वत नही मानते है पार्टी बिना मागे ही ख़ुश होकर चाय के लिए दो-चार रुपए छोड जाती है

काशी खलासी की इतनी लम्बी कहानी सुनने के बाद विनायक उठ खड़ा हुआ. इस वक्त हाथ मे काम था नही, सो ढाल की तरफ निकल आया था बचऊ मिल गया तो इतनी देर तक घुमा-फिरा कर एक ही बात होती रही. बचऊ के हाथ आने का मतलब हुआ, जब तक उसे तसल्ली नही हो जाती, छुटकारा नही मिलने का विनायक जानता है, हलवाई आदमी वैसे बुरा नही है लेकिन एक ही आदत उसे ले डूबी जिस आदमी से मुहब्बत होगी, उसके सामने चबा-चबा कर शहर-भर का पुराण सुनाएगा.

विनायक उठा तो बचऊ ने फिर से आश्वस्त कर दिया—फिकर नाय करना. हफ्ते-भर के अंदर ढूढ ही देगे कोई कमरा-वमरा.

••

थोडी दूर पर खतियान वाले नुक्कड पर परसो राम खडे थे

—कहो बरखुरदार, आय गए फिर बरेली ! परसोराम के बात करने का तरीका ही यह है विनायक की बजाय अगर लुक्का पहलवान या छेदी होता, तो भी वह इसी तरह बोलते

—हाँ साब, बरेली आखिर खीच ही लाई

—जे बात तो तुमारे आते ही मालूम हो गई थी परसोराम के मुह मे शायद पान की पीक भर गई थी वह बिल्कुल अभी फेकना नही चाहते थे लिहाजा बात करने के लिए उसे गले मे किया और गर्दन ऊपर कर ली -लेकिन बरखुरदार, इलाहाबाद ठैरा हिन्दुस्तान-भर मे एक मशहूर शहर बडे-बडे नेता वहाँ पैदा हुए है इतना बडा हाईकोर्ट है, दफ्तर हे, कचहरी हे, जाने क्या-क्या है तो उत्ती अच्छी जघा छोडकँ ह्याँ दुबारा चले आए ?

विनायक अगर कहता कि इलाहाबाद ने उसे धक्का देकर निकाल दिया तो शायद परसोराम बहुत खुश हो पाते

—कहा न, बरेली खीच ही लाई.

परसोराम ने अब पीक उगल दी—जे वैसे बिल्कुल असली बात है हमे तो खुशी हे मुहल्ले का लडका मुहल्ले म ही रहे हम तो जे ही चाहगे

विनायक ने सामने देखा, परसोराम की दूकान की तरफ हण्डिया और मर्तबान उसी तरह रखे है मरीज के अभाव मे उन्ही से दूकान का खालीपन थोडा-बहुत कम हो रहा है

—हा भई·· परसोराम को एकदम से बालेश्वर की बात याद आ गई थी —तुमे छुटपन से देखा. हमारे सामने ही बडे हुए बी ए पास कर लिया, मुहल्ले के नाम को रोशन किया

विनायक को मुहल्ले का नाम रोशन करने वाली बात बिल्कुल फालतू लगी बगैर जरूरत घसीट कर कही हुई-सी

—अब तुम बडे हुए, दस जने इज्जत करते है कही भी जाते हो, लोग नाम से अब पैचानने भी लगे है परसोराम ने मुह के अन्दर का पान फिर नाली मे थूक दिया—भई तुम्हारे घर की इज्जत पे धब्बा लगे तो इस परसोराम बैद का कलेजा बहुत दुखता है सुना है, तुम्हारा भाई बाकायदा गिरजे मे जाकर ईसाई बना और एक क्रिश्चियन छोकरी से शादी कर ली हे परभु ! क्या हो गया जमाने को ?

••

बरेली लौटने के बाद बालेश्वर की जो कहानी मालूम हुई, उससे कोई और चौंक सकता है लेकिन विनायक को लगा, यह पहले भी हो सकता था इस घटना के बाद से कुंती बुआ एकदम चुप-सी हो गई है जो औरत पहले सुबह के पौ फटने से लेकर रात तक आसमान को सर पर चढाए रखती थी, वह बालेश्वर नाम के लडके की एक मामूली करनी पर एकबारगी चुप्पी कैसे साध सकती है, यह समझ मे नही आया उसने कहने की सोची लेकिन आखिर मे नही बोला कि चुप्पी साधने के लिए तो और बाते भी थी !

बालेश्वर, लोग बताते है कि सुबह से रात तक क्रिश्चियन के साथ कम्पनी बाग से लेकर ढाल, बजरिया और सिनेमाहालो तक कही भी घूमता रहता. कई दफा बाहर से ताला लगाकर अन्दर क्रिश्चियन के साथ तब तक जी भर कर मस्ती करता, जब तक कि फायरमैन के आने का वक्त नही हो जाता. फायरमैन की ड्यूटी भी दफ्तरी बाबुओ

जैसी तो है नहीं. कई बार हफ्ते-भर तक रात की ड्यूटी में भी जाना पड़ता है. बालेश्वर उन दिनों घर नहीं लौटता और फायरमैन के घर में उसकी बेटी के बिस्तर पर पड़ा रहता.

बाहर से वैसे ताला ही लगा होता लेकिन मुहल्लेवाले आख़िर आंखों पर पट्टी बांध कर तो नहीं रहते हैं. रेलवे के लोको में काम करने वालों का मुहल्ला है. एक-एक को यहां तक मालूम है कि दूसरों के घर के पतीलों में कौन-सी दाल या सब्जी रखी है. बाहर से ताला भी लगाओ तो क्या हुआ ? पूरा मुहल्ला जानता है कि फायरमैन की लड़की की रगों में कौन-सा खून बह रहा है.

यह छोकरी अगर पहली बार किसी लड़के के साथ खुले आम भी बिस्तरबाजी करती, शायद मुहल्ले वाले इंतजार करते और कुछ नहीं कहते. इंतज़ार इसलिए करते कि आजकल शादी से पहले इश्क-मुहब्बत वग़ैरह कुछ तो चलता ही है. चलो यह इश्क-बाज़ी से भी थोड़ा और आगे का मामला सही.

पूरा मुहल्ला जानता है कि फायरमैन की लड़की पहले एक कंपाउंडर के साथ इसी तरह बिस्तरबाजी करती थी. कपाउडर बिचारा सीधा-सादा आदमी था. गांव में शायद जमीन वगैरह भी थी. कई दफ़ा अपने खेत का अनाज और घी भी लाता रहा है.

कंपाउंडर के साथ कोई साल-भर तक वह रिश्ता जोड़े रही और उसी के पैसे पर इतनी मटरगश्ती करती रही कि बिचारा कर्ज़ से लद गया था. बरेली में मामूली नौकरी थी. तनख्वाह के पैसे तो महीने के पहले ही हफ्ते में ख़त्म हो जाते. इसके बाद वह उधार लेना शुरू करता या अपने पास की अंगूठी या हार जैसी कोई सोने की चीज़ हुई तो सुनार के पास जाकर बेच आता

एक दफा कंपाउंडर के साथ क्रिश्चियन नैनीताल भी गई थी. फायरमैन को हफ्ते-भर के लिए पीलीभीत लोको में जाना पड़ा था. हफ्ते की बजाय दस दिन लग गए थे. और इस बीच क्रिश्चियन कंपाउंडर को लेकर नैनीताल की सैर कर आई.

इस रेलवे-कालोनी में जो लोग रहते हैं, नैनीताल जाने का मौका उनमें से किसी को नहीं मिला लेकिन बस-अड्डे पर क्रिश्चियन को कंपाउंडर के साथ नैनीताल वाली बस पर सवार होते घासी खलासी ने देख लिया था. घासी की उम्र ज़रूर हो गई है लेकिन आंखों की इस जोड़ी में जो रोशनी है, उसे कोई धोखा नहीं दे सकता. दस साल पहले भी कोई मिला हो तो उसकी शक्ल हू-ब-हू याद रहेगी और घासी उसे सिर्फ़ पहचान ही नहीं लेगा बल्कि दस साल पहले की वे सारी बातें याद दिला देगा, जिन्हें अमूमन कोई याद नहीं रखता.

खैर, घासी ने कालोनी में आकर यह बात चुपके-चुपके बताई और नैनीताल पहुंचकर फिर क्या-क्या हो सकता है, सारी संभावनाओं पर एक ख़ाका-सा खींच दिया. घासी की यह चुपके-चुपके बताई हुई बात इसके बाद अगले दिन तक बच्चों की ज़ुबान पर आ गई थी. फायरमैन के घर में ताला बंद था. इसके बावजूद वे आंगन के लकड़ी के दरवाज़े की दरार के बीच से अंदर झांकने की कोशिश करते थे. आंगन में तार पर क्रिश्चियन का एक पेटीकोट पड़ा रह गया था. बच्चे उसे देखते और उन्हें ख़ूब मज़ा आता.

क्रिश्चियन चार दिन बाद लौट आई थी.

घासी की उम्मीद यह नहीं थी. वह सोच रहा था, कम-से-कम महीना-भर वे लगाएंगे और बतौर मियां-बीवी ही वापस आएंगे. फिर शायद कालोनीवालों को दावत देकर चाय, मिठाई वगैरह खिलाएंगे.

कपाउडर इसके बाद कभी इस तरफ नही दीखा

क्रिश्चियन की जिन्दगी म कपाउडर के बाद जो लोग आते रहे है, उनमें मिटी स्टेशन का ईसाई क्वाटरर, अखबार बाटने वाला कोई अठारह-एक बरस का छोकरा और चीनी मिल का एक मिस्त्री रहा है

इन सबके बाद बालेश्वर रहा है

फायरमैन से उसकी लडकी की करतूत पर अडोस-पडोस के लोगो ने कई दफा कहा भी है लेकिन फिर वे समझ गए थे कि जिसे अपनी मौत मरना है, उसे बचा ही कौन सकता है ?

सफेद लबादे म जब गिरजे से पादरी आता क्रिश्चियन उसके सामने यू चुपचाप बैठी रहती जैसे बाहर की दुनियादारी का कुछ पता ही न हो फायरमैन पादरी के सामने गिडगिडाता रहता कि इस उम्र म अब इतनी मेहनत नही होती लडकी की शादी हो जाए तो वह रिटायर होकर गाव चला जाए

पादरी के आते ही पूरी कालोनी म खलबली-सी मच जाती सफेद लबादे और दाढी मे कोई अग्रेज सायकिल पर इस मुहल्ले म आए यह एक अनहोनी बात तो है ही पादरी के बदन का कोई खास हिस्सा तो नही दिखाई पडता लेकिन चेहरे और हाथो से ही पता चलता कि यह आदमी बगुले की तरह सफेद है इतना गोरा आदमी कभी भी इस रेलवे कालोनी म नही आया

फिर पादरी आकर आगन मे होकर अदर घुसता तो बच्चे दरवाजे पर खडे हो जाते बच्चो के साथ-साथ कुछ औरते भी अदर झाककर देखने की कोशिश करती कि सचमुच का कोई अग्रेज साहब होता क्या है

पादरी की सायकिल बाहर की दीवार के साथ खडी होती और दो-एक बच्चे उसकी घटी टनटना देते यह घटी भी कुछ अजीब है ! किर ऽ ऽ ऽ से देर तक बोलती रहती बच्चो को बहुत मजा आता इसमे फिर फायरमैन उठकर बाहर आता और बच्चो को डाट देता लेकिन कालोनी के बच्चे फायरमैन का रोम-रोम शायद जान गए है बच्चे थोडी देर के लिए सायकिल से जरूर हट आते लेकिन एक मिनट बाद दुबारा वही करते उनके शायद मेहरबानी कर पान की वजह से ही फायरमैन पर हम नही पडते

लोग खडे होकर आध-पौन घटा अन्दर ताक-झाक करते और तमाशा देखते कि अंग्रेज पादरी गिलास मे भर कर चाय पी रहा है

रेलवे कालोनी के इन तमाम मकानो का नक्शा एक ही है लकडी का दरवाजा खोलकर घुसते ही आगन और बाए हाथ की तरफ सडास है सडास के सामने एक नल है. अलग से कोई बाथरूम नही है औरते इस नल के नीचे बैठकर कपडे वगैरह धोती है और नहा लेती है जो लोग कुलीन किस्म के है, बाहर से ईटे लाकर नल को दो तरफ से घेरकर बाथरूम जैसा कुछ बना लिया है पीछे की तरफ आगन की दीवार मौजूद है ही अब पुरानी साडी वगैरह से एक पर्दा बन गया तो मजे का बाथरूम बन गया. फायरमैन के यहा भी ऐसा ही इतजाम था उसने खुद नही बनाया था यह सब. उससे पहले कोई क्लीनर यहा रहता था, उसीने अपनी बीवी के लिए यह इतजाम कर दिया था.

आगन मे कोने की तरफ छोटा-सा कमरा है, जिसे ये लोग रसोई और स्टोर कहते है स्टोर शायद इसलिए कहते है कि एक टाड-सी भी बनी हुई है. इस कमरे के साथ दो छोटे-छोटे कमरे और एक लम्बा-सा बरामदा है कमरो मे जो खिडकिया है, उनसे होकर आगन तक देखा जा सकता है. खिड़की के पार रेलवे लाईन है. गाडिया

आती-जाती हैं या शंटिंग वगैरह कुछ होता है तो आंगन से साफ़ दिखाई पड़ता है.

कुछ लोग उधर की खिड़कियों पर भी खड़े थे. पादरी कभी किसी बच्चे की तरफ देखकर मुस्करा देता या चुटकी बजाता तो वह भाग जाता. मन मे उत्सुकता के बावजूद शायद डर की मात्रा भी कम नहीं थी. डर शायद इस बात पर होता कि मुमकिन है पादरी के लबादे के नीचे बच्चों को बन्द करने के लिए झोला-वोला जैसा कुछ हो.

आखिर में पादरी उठने लगता तो बच्चे दूर हट जाते. औरतें भी फिर अपने-अपने दरवाज़े पर चली जाती.

इस पादरीवाली उत्सुकता के साथ फायरमैन के इस क्वार्टर मे औरतों की उत्सुकता इसलिए भी बनी हुई है कि क्रिश्चियन का मिजाज एकदम 'फिल्म' की तरह रगीन है. रेलवे कालोनी वालों ने उसके साथ कंपाउंडर को देखा था तो सोच लिया था कि लड़की ब्याह-शादी करके 'गिरस्तिन' बन जाय.

आखिर मे जब बालेश्वर के साथ घासी ने क्रिश्चियन को फिरते देखा, सोचा था लडके के घर जाकर खबर कर दें. लेकिन बालेश्वर पर जैसे कुछ यकीन-सा नहीं आ रहा था. यानी इधर घासी खलासी अपने पहले के मालबाबू के भानजे के बारे में ख़बर पहुचाने उनके घर जाए और उधर यह छोकरा अपने चार यार-दोस्तों के साथ खलासी के कपडे तक भरे बाजार मे उतरवा ले. आखिर में घासी ने अपना इरादा बदल दिया था. दिल थोडा भारी तो हो गया था लेकिन किया भी क्या जाए. किसी का भला करने की सोचो तो बुरा ही होता है. घासी ने इस लड़के के नसीब पर एक लम्बी सांस ली थी और समझ गया था कि फायरमैन की लडकी मर्दों को फांस-फांस कर खिलौने की तरह सिर्फ खेलती रहेगी. आखिर ऊपरवाला अंधा तो नही है. ऐसा पाप करने वाला कोढ से गल-गल कर ही मरता है.

आखिर मे पासा ऐसा पलट जाएगा, कौन समझ सका था ? घासी खलासी अगर क्रिश्चियन को कोढ मे गलते हुए देखता, शायद सचमुच यकीन कर पाता कि 'ऊपर वाला' इन्साफ बरतने में कोई रियायत नहीं करता. वह रियायतें बरते या न बरते कम-से-कम खलासी को यक़ीन आ जाता कि 'ऊपर वाला' नाम का प्राणी वाक़ई कही आसमान के पार रहता है

क्रिश्चियन सफेद मलमल के कपडों में गिरजा गई और बालेश्वर से शादी कर ली. इससे एक दिन पहले बालेश्वर ईसाई बना था. शादी के दिन वह नीले रंग का एक कीमती सूट पहने था और वाकई खूबसूरत लग रहा था.

फायरमैन ने घासी से कहा था तो कुर्ता-पाजामा पहनकर भी वह ईसाईयों की शादी देखने चला गया कुर्ता अरसे से पहना नहीं गया था और संदूक की तलहटी मे पड़े-पड़े उसमें सलवटें आ गई थीं. दाल वगैरह के कुछ दाग भी उसमें लगे हुए थे. खैर घासी ने साबुन की एक नई बट्टी से कुर्ते को अच्छी तरह साफ किया और खुद बरेठा के यहा ले जाकर लोहा करा लाया. यह कुर्ता कभी-कभी खास मौकों पर ही पहना जाता है पिछले साल इसे पहनकर उसने दीवाली मनाई थी और बच्चों के साथ बाजार तक जाकर रोशनी की नुमायश देख आया था.

घासी ने देखा कि गिरजे का सारा इंतज़ाम ही अजीब है. कुर्सियां पड़ी हुई है. लोग जूता बिना उतारे अन्दर आ जाते हैं. अब उसे अच्छी तरह समझ में आ गया कि ईसाई लोग 'मलेच्छ' क्यों कहे जाते है ! वह सोच रहा था कि अपनी चप्पल बाहर ही उतार दे लेकिन जब हर कोई मोजे-जूते में अन्दर घुस रहा है तो एक और सही.

बालेश्वर के घर से कोई नही आया था. वह अपने चार-पांच यार-दोस्तों के

साथ बहुत खुश लग रहा था वे लोग आपस मे मजाक कर रहे थे और खिलखिला-कर हस-हसा रहे थे औरते भी थी कभी कोई औरत किसी मर्द के साथ लोटपोट हो रही थी, कभी किसी मर्द के साथ

फायरमैन यहा मे वहा चक्कर लगा रहा था वह भी आज धुले हुए और साफ कपडो मे था और लग ही नही रहा था कि यह आदमी इन्जन मे कोयला झोकता है. सर पर फायरमैन ज्यादातर रूमाल बाधे रहता है लेकिन इस वक्त उसकी चाद साफ दीख रही थी

फायरमैन के यहा जाने वाला पादरी भी दीखा वह वैसे अग्रेज है लेकिन घासी को यह देखकर ताज्जुब हुआ कि कुछ लोगो के साथ ठेठ देसी जुबान मे बात कर रहा है !

घासी खलासी को इतना मालूम है कि पादरी और पण्डित एक होते हैं पडित का वैसे जनेऊ होता है और मदिर मे जूता उतारे बिना नही घुमता लेकिन काम के लिहाज से ये दोनो ही ऊपर वाले के पुजारी है गिरजे मे वह पहली बार आया था और घुसकर शुरू मे उसे यही लगा था कि यह मदिर-वदिर जैसा कुछ हो ही नही सकता इस गिरजे से थोडे मे फासले पर एक हनुमान मन्दिर है कई बार जाकर वह सवा-सवा रुपये के लड्डू भी चढा आया है और बच्चो को मगलवार के दिन ले जाकर उसके सामने लगा हुआ मेला भी दिखा लाया है घासी को इस बात पर दिक्कत हो रही थी कि यहा घुसने के बाद मदिर-वदिर जैसा कुछ महसूस ही नही होता.

खैर, शादी होनी थी, सो हो गई

बालेश्वर क्रिश्चियन को लेकर खन्नो मुहल्ले के अपने दो कमरो के मकान मे चला गया कैंटोनमेट मे एक ईसाई डॉक्टर रहते है वह आए थे उनके पास एक गाडी थी उसमे चारो पहिए साबुत थे हालाकि 'हुड' का कैनवास एकदम बदरग और कई जगहो से फटा हुआ था गाडी का असली रग काला है, यह भी पता चल ही जाता है कुछ भी हो धक्का मारने पर गाडी चल ही जाती है बालेश्वर के दोस्तो ने धक्का मारा तो कुछ देर तक कराहते रहने के बाद गाडी चल पडी और पीछे से धुआ निक-लने लगा

फायरमैन चुपचाप देखता रह गया था घासी ने देखा, बिचारा बहुत कमजोर हो गया है अब क्रिश्चियन के लिए भी उसके मन मे कोई ऐसी बददुआ नही रह गई थी कि पाप करने के लिए उसे कोढ हो ही जाए

बालेश्वर अगले दिन क्रिश्चियन को लेकर फायरमैन के यहा पहुचा था. उस दिन मुहल्ले वाले और बिरादरी वालो के लिए चाय-पानी का इन्तजाम था. फायर-मैन की उम्र हो गई है इस उम्र मे आदमी दौड-भाग करे भी तो कितना करे ?

उस दिन घासी ने बहुत मदद की थी

वही चारो तरफ दौडता-भागता रहा और सिटी स्टेशन के सामने की दूकान से लाल और नीले रग के कागज लाकर बच्चो से लम्बे-लम्बे फीते बनवाए और पूरे आगन मे चिपका दिए.

सिटी स्टेशन के ही पास एक हलवाई की दूकान भी है जले हुए तेल के समोसो से लेकर दस पैसे वाले गुलाबजामुन तक कई तरह की मिठाईया मिल जाती है रेलवे कालोनी वाले अगर कभी लड्डू-पेडे खरीदने होते है, तो यही से खरीदते है कालोनी वाले मिठाई की किस्म नही देखते. भाव मे सस्ती हो तो उन्हे और कुछ नही चाहिए.

फायरमैन ने, वैसे, कहा था कि कुतबखाने से अच्छी मिठाई और नमकीन

वगैरह खुद वही जाकर ले आएगा और चाय यहीं बन जाएगी. लेकिन घासी ने फिर भाव की दुहाई देकर उसे रोक दिया था और स्टेशन वाले हलवाई को बुलाकर समझा दिया था कि ज्यादा हलवाईपना न करे और अच्छी मिठाई दे. हलवाई ने गर्दन हिलाई तो घासी के साथ फायरमैन को तसल्ली हो गई थी.

घासी फिर शाम को चार बजे जाकर एक 'लाउडस्पीकर' वाले को ले आया था कि बढ़िया से बढ़िया गाने बजें. फिर तो पूरी कालोनी मेले की तरह हो गई थी. गाने बज रहे थे और बच्चे खूब उछल-कूद रहे थे

हलवाई ने भी जोड़-तोड़ लगाकर एकदम से इतनी मिठाईयों का इन्तजाम कर ही दिया था. आधे से ज्यादा मिठाईयां शायद इधर-उधर से बटोरकर लाई हुई थीं लेकिन घासी खलासी या फायरमैन की तसल्ली को इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता.

घासी की बीवी तीन-चार औरतों के साथ बाहर ईंटों से चूल्हा बनाकर पतीले में चाय बना रही थी. वहां भी बच्चे भीड़ बनाकर खड़े थे.

साढ़े चार बजे बालेश्वर क्रिश्चियन को लेकर पहुंचा तो दंग रह गया था. दरअसल फायरमैन की शक्ल ही कुछ ऐसी है, उसे देखते ही आदमी को या तो पेचिश का ख्याल आता है या बुखार का. ऐसा आदमी इन्जन में कोयला-झोंकने के अलावा कुछ और कर सकता है, यह लगता ही नहीं. इस बात के सबूत में मुहल्ले वाले दलील पेश करते हैं कि इसी वजह से बीवी उसे छोड़कर चली गई थी.

फायरमैन की बिरादरी वाले कई लोग आए थे. कैंटोनमेंट का डाक्टर अपनी खड़खड़िया गाड़ी लेकर पहुंचा तो बच्चे गाड़ी को घेरकर खड़े हो गए. कुछ भी हो यह है तो मोटरगाड़ी ही. रेलवे कालोनी में वोट के वक़्त ज़रूर जीपें आ जाती है वर्ना रिक्शे या सायकिल के अलावा कोई और वाहन यहां नहीं आता.

दो घंटे तक खूब गहमा-गहमी रही और जोरों से बाजे बजते रहे. घासी पर पूरी जिम्मेदारी थी, फिर भी बीच-बीच में वह क्रिश्चियन के पास आता और कोई शगूफा छोड़ देता. एक-आध चुटकला उसने बालेश्वर को भी सुनाया तो वह देर तक हंसता रहा था.

फिर भीड़ छंट गई.

बालेश्वर, क्रिश्चियन और फायरमैन - तीन लोग रह गए थे.

क्रिश्चियन के बारे में पहले जैसी कहानियां बनती रही हैं, अब वैसा कुछ और नहीं होता था. हास्पिटल की आया की नौकरी से इस्तीफा देकर अब सिर्फ बालेश्वर की बीवी बनकर रह गई थी.

लेकिन बालेश्वर की कहानियां यहां तक आकर रुक गई. यह तो सिर्फ़ एक मोड़ था बालेश्वर की जिन्दगी का. खुद उसे ही कहां पता था कि इस मोड़ के बाद वह कहां और किस तरफ जाएगा.

'कौशल्या भवन' में कभी-कभी पूजा-पाठ के बाद उस पर भी एक-दो बातें नलिनाक्ष पूछ लेता था. लेकिन कुन्ती के पास कोई जवाब नहीं होता था.

●●

तिरानवे बरस की उम्र में जगतनारायण की बूढ़ी मौसी द्रौपदी ने आंखें बंद कर लीं. मरने से पहले कोई पन्द्रह-एक दिनों मे खाने-पीने की इच्छा बिल्कुल नहीं रह गई थी और थोडा-थोडा बुख़ार रहने लगा था. इसके अलावा भी द्रौपदी की कोई तकलीफ़ थी क्या ? द्रौपदी नाम की औरत 'कौशल्या भवन' मे पिछले तीसेक बरस से रहती आ रही है. यह बात मुहल्ले वालों मे कई लोग जानते नहीं थे. 'कौशल्या भवन' में रहने वालों ने भी तो कभी यह नही महसूस किया कि द्रौपदी के अन्दर भी सांस चलती है और वह वाक़ई एक जीवित प्राणी है. जगतनारायण थे, तब कभी-कभी, मौसी के पास बैठकर पुराने दिनों के दो पैसा सेर दूध और एक-डेढ़ रुपया मन गल्ले की बात करते थे. इतनी उम्र के बावजूद द्रौपदी को दूध-गल्ले और उस वक्त के लोगों की बातें खूब याद है.

द्रौपदी जगतनारायण की सगी मौसी नही है, मां की ममेरी बहन है. यह रिश्ता इतने नजदीक का नही होता कि कोई ऐसी किसी मौसी को घर उठा लाए, लेकिन जगतनारायण लाए थे. द्रौपदी को देखकर कुछ ममता-सी आ गई थी.

जगतनारायण दफ्तर के काम से हाथरस गए थे सिटी स्टेशन के बड़े माल-बाबू को कई दफा ड्यूटी मे बाहर जाना ही पड़ता है. इस दफ़ा हाथरस गए तो मौसी से भी मिलने चले गए. चारेक महीने पहले मौसा की मौत हैजे मे हो गई थी. यह ख़बर जगतनारायण के पास तो थी लेकिन दफ्तर और घर के झंझटो मे हाथरस हो आने का मौक़ा ही नही मिला था.

इस दफा जगतनारायण मौसी से मिलने पहुचे तो दंग रह गए. वह एक बिना रोशनी के कमरे में मलेरिया मे तपकर पडी हुई थी पडोस में कोई अहीर रहता था. उसकी बीवी अपनी समझ से देखभाल कर रही थी. दो-एक बोतलों मे लाल और पीले रंग की दवाइयां भी थीं जगतनारायण ने अंदाजा लगाया, अहीर की बीवी मरीज़ का हाल बताकर हर मर्ज़ का इलाज करने वाले डाक्टर से आठ आने या रुपये खुराक की दवा ले आई होगी.

जगतनारायण ने देखा, बुढिया लगभग हड्डियों का ढाचा बनकर रह गई है. ऐसी हालत में बहुत हुआ तो हफ्ते-भर तक कोई जी सकता है. मौसी की बेबसी पर जगतनारायण समझ नहीं पा रहे थे कि क्या किया जाए. मौसी की एक छोटी-सी बिसाती की दूकान थी लेकिन मुहल्ले वाले भी वहा से कुछ नही खरीदते थ. फिर भी दो लोगों के रोटी-पानी का इन्तजाम उसी से हो जाता था.

मुरादाबाद में एक बेटी रहती है लेकिन जगतनारायण को भी मालूम है कि उसके ससुराल वाले यहा से कोई मतलब नही रखते. साल-डेढ़ साल में लड़की की तरफ़ से एक-आध चिट्ठी-भर आ जाती है मौसा दो-एक बार बेटी को लेने भी जाते रहे हैं लेकिन ज़लील होकर ही लौट आते थे. लड़के वालों ने दहेज में कुछ नहीं मांगा था और मौसा भी अपनी मजबूरी से कुछ नही दे पाए थे. शादी के बाद बरसों गुज़र गए और लडकी अब चार बेटे और दो बेटियों की मां है लेकिन उसकी ससुराल वाले इस बात को भूल नहीं पाए कि उन लोगों ने भिखारी जैसे आदमी से रिश्ते का हाथ बढ़ाया था. ख़ैर, यह गलती जब हो ही गई, बहू को उन लोगों ने कबूल तो कर लिया लेकिन उसके मां-बाप से सारे रिश्ते वहीं ख़त्म हो गए थे. मौसा बेटी को लाने गए तो अपनी औकात के मुताबिक कुछ कपड़े-लत्ते और मिठाई का एक डिब्बा लेकर पहुंचे.

समधी ने तो कुछ नहीं कहा था लेकिन समधिन ने सिर पीट लिया. हाय री दईया ! कैसे भुक्खड़ों से नाता जुड़ गया. मौसा खाली हाथ ही लौट आए थे.

इसके तीन साल बाद एक बार और वह गए थे. समधिन जितना मुमकिन था, चीखती-चिल्लाती रही, समधी ने भी कह दिया था—लगता है हाथरस के बाज़ार में आग लग गई. मौसा वापस आ गए थे.

इसके बाद लड़की दो मर्तबा यहां आई थी. एक बार तीसरा बच्चा पैदा हो गया था, तब. और दूसरी बार अपने बाप की मौत की ख़बर पाकर.

हाथरस अक्सर तो ख़ैर जगतनारायण कभी भी आ-जा नहीं सका लेकिन यहां-वहां के रिश्तेदारों से मौसी की ख़बर मिलती रही है. कभी किसी शादी-ब्याह में गया तो मौसा-मौसी से भेंट भी होती रही है. मौसी हर बार अपनी फुफेरी बहन की याद में एक लम्बी साँस भरती. कई बार वह यह भी कहती रही है कि जगतनारायण भी अपनी की ही तरह लगता है.

इसके बाद मौसा-मौसी एक बार आकर कोई महीना भर जगतनारायण के पास रहे थे. मौसे की आदत शुरू से ही हंसी-मज़ाक की रही है. वह पोते-पोतियों के साथ बैठते और सब हसते-हसते लोट-पोट हो जाते. मौसी का स्वभाव शुरू से ही चुप रहने का रहा है. जब तक वह यहां रही, ज्यादातर वक्त रसोई में ही घुसी रही.

इस दफा जगतनारायण मौसी के यहां पहुंचे तो यक़ीन ही नहीं आया कि चार-पाई पर बुख़ार से स्याह पड़ी हुई औरत वाकई उसकी मौसी है. कमरे में अंधेरा तो ख़ैर था ही, सीलन भी थी. सीलन की वजह से एक बदबू-सी भी थी. मकान वैसे पक्का ही है लेकिन फर्श कच्ची है. ऊपर एक छोटा-सा जंगला भी है लेकिन वह शायद ज्यादा-तर बन्द ही रहता है. बगल में एक और कमरा भी है लेकिन उसकी कुंडी पर ताला लगा हुआ था. मौसी को शायद उसके इस्तेमाल की जरूरत नहीं पड़ती.

मकान की छत लिंटर डालकर बनाई हुई नहीं, लकड़ीवाली थी. यानी लकड़ी रखकर ईंटें रखी हुई. कोने की तरफ़, जहां जंगला है, एक लकड़ी काफी टेढ़ी हो गई थी. छत का रखाव वहां से इतना कमजोर हो गया था कि दुर्घटना घटने का पूरा अंदेशा था. जगतनारायण को लगा यही था कि अगली बरसात में ही छत का वह हिस्सा ढह कर नीचे आ जाएगा.

पिछली बरसात में मौसी ने शायद गोबर के कंडे दीवार पर ही सुखाए थे. शायद पहले की बरसातों में भी यही करती रही है. उनके निशान तो ख़ैर जितने थे, उतने थे ही, कमरे में जैसे गोबर की बदबू जम-सी गई थी. जंगले के नीचे एक रस्सी टंगी हुई है. मौसी के कपड़े-लत्ते उसी पर पड़े हुए थे.

अहीर की बीवी द्रौपदी को दवा पिला रही थी. जगतनारायण को देखा तो घूंघट काढ़ लिया.

जगतनारायण ने गले को खंखार कर आवाज़ दी और बोले—मैं जगत हूं मौसी. दफ्तर के काम से इधर आया था…

वाक्य पूरा होने से पहले ही अहीर की बीवी ने संक्षेप में सबकुछ बता दिया और चली गई.

जगतनारायण नज़दीक गए और मौसी के माथे पर हथेली रखी. हथेली लग-भग जल उठी थी.

इसके बाद जगतनारायण ने तार देकर मोहिनी को बुला लिया था और अर्जी भेजकर दफ्तर से छुट्टी ले ली थी.

कोई दस दिन लगे थे इसके बाद.

द्रौपदी फिर जगतनारायण के साथ 'कौशल्या भवन' में आ घुमी तो यहीं रह गई थी. शुरू में एक-आध बार हाथरस वापस जाने की इच्छा जाहिर की तो जगतनारायण ने कोई अहमियत नही दी थी. घर में सास नही थी, लिहाज़ा मोहिनी को भी शायद द्रौपदी की मौजूदगी सास के रहने की ही तरह लगी थी.

यह रही तीस बरस पहले की घटना.

इन तीस बरसों मे 'कौशल्या भवन' की दीवारें कितनी ही तब्दीलियों की गवाही देती रही हैं. यह घर कितने ही लोगों से भरा, उजड़ा और कितने ही तरह के तमाशे होते रहे. दीवारो की तरह सिर्फ गवाही देने के लिए ही जैसे द्रौपदी यहा रह गई थी. जगतनारायण के बाद किसी ने न तो कुछ पूछा, न अपनी तरफ से द्रौपदी ने ही यहा के लोगो से कुछ जानना चाहा.

तिरानवे बरस की उम्र के बावजूद द्रौपदी आखिर के पद्रह दिनो के अलावा लगभग चलती-फिरती रही और कोई खास बीमार भी नही पड़ी दुपहर को नीचे, रसोई मे जाकर दो रोटी खा आती और शाम को आधा-एक कटोरा दूध. बाद में दूध नही मिलता था लेकिन चाय वगैरह उसने नही पी. एक-आध बार रानी ने जबरदस्ती पिला दी तो उसे न तो स्वाद अच्छा लगा था न इसकी कोई ज़रूरत ही कभी महसूस हुई थी. दोपहर की रोटी के बाद शाम को कुछ और खाने की जरूरत शायद उसे रह भी नही गई थी.

तीस बरस गुज़ार द्रौपदी ने आँखें मूद ली-तो 'कौशल्या भवन' के लोगों को लगा कि अब तक वह जिन्दा रही है. कुती दहाड़-सी मार रही थी. मोहिनी सुबक रही थी.

जगतनारायण के ममेरे भाई सतीश और मुकुद जमीन पर घुटनो मे सर छुपाए बैठे थे. सतीश की आखो मे शायद आसू थे लेकिन मुकुद पत्थर की तरह खामोश था.

कस्तूरी के चेहरे के भाव से पता नही चल रहा था कि इस मौत मे उसे वाकई कुछ फ़र्क पड़ा या नही. वह खिड़की के पास खड़ी थी.

नलिनाक्ष अपनी कोठरी से नही निकला था. उसकी कोठरी का दरवाजा बन्द था और अन्दर से पूजा-पाठ की आवाज़ नही निकल रही थी.

विनायक अपनी दवा का बैग समेट रहा था. कुती ने विनायक की बाँह पकड़ ली—थोड़ा और देख ले लल्ला···

विनायक को बुआ का यह विलाप अटपटा-सा लगा. बुढ़िया को जैसे दुबारा जिन्दा होने पर यहाँ स्वर्गसुख मिलने लगेगा. उसने लाश के चेहरे की तरफ देखा तो लगा, तिरानवे बरस बाद आज जाकर एक औरत सुख न सही, दुख-तकलीफ़ो मे ज़रूर मुक्त हो सकी है.

कुंती बालेश्वर की शादी के बाद से लगभग खामोश-सी रहने लगी थी. इतने दिनों बाद आज जैसे अन्दर लावा फूट पड़ा था और मौसी के मरने के बहाने वह खुद को हल्का कर रही थी. इस वक्त अगर बालेश्वर अपनी दुल्हन को लेकर 'कौशल्या भवन' में आ जाता तो शायद मरी हुई बुढ़िया के लिए न सही इस विलाप करती औरत के लिए उसका दिल पसीज उठता.

●●

द्रौपदी की मौत के बाद हफ्ते-भर तक जरूर 'कौशल्या भवन' का माहौल भारी-भारी-सा रहा. लेकिन फिर किसी को खास कुछ याद ही नही आया कि तिरानवे बरस की एक औरत अब यहाँ कभी नहीं दिखाई पड़ेगी. श्राद्ध हो गया तो जैसे याद जैसी

चीज़ का दरवाज़ा भी गाजे-बाजे के साथ बन्द कर दिया गया. सिर्फ़ विनायक को कभी-कभी लगता था, अब दादी नहीं है. फिर तारा की और जगतनारायण की याद आने लगती.

कुंती फिर चुप रहने लगी थी.

सुनने में आता है, विनायक के बरेली वापस आने से पहले बालेश्वर एक बार अपनी क्रिश्चियन को लेकर आया भी था लेकिन उस दिन आगन के पीछे वाली दीवार पर कुंती सर फोड़ती रही थी. क्रिश्चियन हक्की-बक्की रह गई थी लेकिन बालेश्वर जैसे ऐसा कोई दृश्य न देखने मे ही चौंक जाता. गलियारे में वे लोग कुछ देर खड़े रहे और कुंती सर धुनती रही. दसेक मिनट बाद बालेश्वर ने बैठक में से एक स्टूल लाकर क्रिश्चियन के सामने रख दिया था लेकिन वह खड़ी ही रही. मोहिनी ऊपर थी और नीचे नहीं उतरी थी. रद्दो ने जाकर सूचना दी थी तो खामख्वाह उस पर झाड पड़ गई.

रानी ने चाय बनाई और रद्दो जाकर बाहर से चार समोसे और दो कलाकंद ले आई थी. समोसे और कलाकंद खरीदने के पैसे उसे अपने पास नहीं मिले तो उसने नलिनाक्ष की संदूकची में से कुछ रेजगारी निकाल ली थी. नलिनाक्ष को पहले बालेश्वर ही कभी-कभी रुपए-आठ आने दिया करता था. जितने पैसे उसे मिलते वे रखे ही रहते. न तो वह ख़र्च करता न कभी बैठकर गिन ही लेता कि कितने पैसे जमा हो गए हैं.

नलिनाक्ष वैसे नीचे उतर आया था और क्रिश्चियन की बगल में खड़ा था. बालेश्वर समझ गया था कि क्रिश्चियन को नलिनाक्ष क़तई पसद नही आया और इस घर का तमाशा देखकर उसका दम घुट-सा रहा है.

फिर रानी प्लेटो में रद्दो की लाई हुई चीजें और चाय लेकर सामने आई और क्रिश्चियन के सामने पडी स्टूल पर रख दिया. बालेश्वर ने एक कप उठा लिया था लेकिन क्रिश्चियन ने कुछ भी छुआ तक नही था.

रद्दो ने मजाक किया — तुम खिलाओगे तभी खाएगी भाभी.

क्रिश्चियन रद्दो को जलती हुई आंखों से घूरने लगी थी. यह बात वैसे कोई ख़ास हंसी-मजाक की तो नही थी लेकिन मुकुंद खूब खिलखिला पडा था

कुंती के विलाप के बावजूद मुकुंद हंसता रहा, इस बात पर क्रिश्चियन को शायद ख़ासी दिक्क़त हो रही थी. वह इंतज़ार कर रही थी कि बालेश्वर की चाय ख़त्म हो तो यहां से निकल चले.

रद्दो ने दुबारा मजाक किया—भाभी को शायद चाय की आदत नही है. कहो तो गिलास भर कर दूध ले आऊं.

—चुड़ैल कहीं की. बालेश्वर बोला.

इस दफ़ा मुकुंद के साथ रद्दो देर तक हंसती रही.

नलिनाक्ष ने बालेश्वर से कोई ख़ास बात तो नही की लेकिन जाहिर हो गया कि बहू को देखकर वह ख़ुश है.

फिर चाय पीकर बालेश्वर ने कप नीचे रखा ही था कि क्रिश्चियन निकलने के लिए दरवाज़े के पास पहुंच गई. रद्दो और नलिनाक्ष भी दरवाज़े तक आए फिर दरवाज़ा खोला तो देखा, बहुत-सारे बच्चे और औरतें बालेश्वर की क्रिश्चियन को देखने के लिए दरार में से ताक-झांक कर रहे थे. क्रिश्चियन बाहर निकली तो औरतें सपकपा कर एक तरफ़ हो गई थी. वह चूंकि साड़ी-ब्लाउज में थी, देखने वालों को कोई ख़ास ताज्जुब नही हुआ था. दरअसल उन लोगों का ख्याल था कि क्रिश्चियन देखने में गोरी मेम-सी होगी.

उस दिन के बाद बालेश्वर कई बार और 'कौशल्या भवन' आता रहा है.

लेकिन क्रिश्चियन फिर कभी नही आई. सतीश ने बताया, एक-आध दफा वह रिक्शे पर बैठकर यहाँ से गुजरी भी है लेकिन इधर देखा तक नही एक बार बालेश्वर और क्रिश्चियन के साथ उसकी भेंट कुतबखाने मे हो गई थी उस दिन क्रिश्चियन बहुत अच्छी लगी थी. वह सतीश को पकडकर घर ले गई थी और रात के खाने मे चार-पाच सब्जियां और गोश्त बनाए थे सतीश गोश्त-वोश्त तो नही खाता लेकिन सब्जियो के स्वाद उसे 'कौशल्या भवन' की सब्जी मे कही बेहतर लगे थे उसने लौटकर वह बात सिर्फ रद्दो को बताई थी रद्दो ने शायद रानी को बता दिया था इसके अलावा और किसी को कुछ भी मालूम नही हुआ था पता होने से जात चली जाने के इल्जाम मे शुरू मे तो कुती चीख-चिल्लाकर आसमान सर पर उठाती फिर उसे शायद घर से ही निकाल देती या कम-से-कम मामा को सारी बातो की इत्तिला देकर लिखती कि वह अपने बेटे को ले जाए

इसके बाद बालेश्वर जब भी आया, ऊपर नही गया शादी के बाद उसमे जैसे विवेक-सा कुछ जागृत हो गया था उसके ऊपर जाने मे वैसे कोई रोकथाम जरूर नही थी लेकिन घर से निकलते ही कुती बाल्टी मे पानी लेकर जहा-जहा से वह गुजरा होगा, धोती रहेगी—इतना वह समझ गया था नलिनाक्ष को कई दफा उसके आने की खबर ही नही होती लेकिन अगर उसे पता चलता तो वह नीचे आकर बालेश्वर को ऊपर चलने के लिए कम-से-कम एक बार जरूर कहता.

बैठक का यह कमरा थोडा अलग पडता है यहाँ जो चार-छह कुर्सियां रखी हुई है वे शायद 'कौशल्या भवन' के गृहप्रवेश के दिन खरीदी गई थी मुमकिन है, यह तथ्य सही न हो लेकिन कुर्सियो की हालत और आकार-प्रकार से 'गृहप्रवेश' वाले दिन का ही ख्याल आता है

नलिनाक्ष इस कमरे मे कभी नही घुसता है इस तरह के लोग आकर यहा उठने-बैठते है, यह उसके कमरे मे घुसने के प्रतिबन्ध का कारण रहा होगा नीचे भी वह तभी आता है, जब नहाना होता है या बाथरूम वगैरह जाने की जरूरत होती है बालेश्वर आता है तो उससे नलिनाक्ष दो-चार मिनट कुछ बात कर लेता या कुछ भी नही बोलता फिर ऊपर वापस आ जाता

बालेश्वर फिर बैठक मे रद्दो और रानी के साथ बैठकर चाय पीता और दुनिया-भर की कहानियाँ सुनाता

मुकुद और सतीश भी यहा एक-आध बार आते रहे है लेकिन पहले भी बालेश्वर के साथ इनकी कभी नही पटती थी दोनो भाई इस बार भी हाईस्कूल मे फेल हो चुके थे और इससे पहले कोई दो बार और पास होने की कोशिश की थी

एक बार बालेश्वर ने बता दिया कि वे हज्जाम की एक दुकान खोल ले तो कुछ कमा जरूर सकते है इस बात पर मुकुद बहुत नाराज हो गया था और बालेश्वर को 'लोफर' जैसा कुछ कहा था बालेश्वर यह पहला मौका है कि इतनी बडी गाली सुनने के बाद चुप था और सिग्रेट का धुआँ उडेल रहा था इसके बाद मुकुद और सतीश मे से कोई बालेश्वर के सामने आया ही नही.

बालेश्वर जब भी आता, कुती को देने के लिए रानी के हाथ कुछ रुपए जरूर थमा देता कुती को यह बुरा नही लगता बल्कि, देर मे सही, लडके मे अकल आ गई, यह देखकर उसे सुख मिलता मोहिनी को वह बालेश्वर के बारे मे फिर कुछ बताने लगती. लेकिन मोहिनी जानबूझकर ही नही पूछती कि बालेश्वर करता क्या है दो-एक बार जो उडती हुई बाते कानो तक आई थी, उन पर उसका शायद यकीन हो गया था.

रद्दो को उसने एक बिलायती घडी और एक कीमती जॉर्जेट की साडी दी थी.

रानी को एक ट्रॉजिस्टर और कई तरह के कपडे वगैरह दिए थे. नलिनाक्ष को एक टेप-रिकार्डर दिया तो अपनी ही आवाज सुनकर दग रह गया था विचारा उस दिन कुती फूली न समायी थी.

बालेश्वर ने रद्दो से कहा भी था कि वह फीस भर देगा, वह हाई स्कूल जरूर कर ले. लेकिन रद्दो ने मना कर दिया था किताबे लेकर बैठने की तबीयत अब होती ही नही है.

मोहिनी खुद तो खैर बालेश्वर से बोलने नीचे कभी नही आई लेकिन एकदफा कस्तूरी से पुछवाया था कि वह करता क्या ह.

इस सवाल पर वह जवाब की जगह देर तक हसता रहा था

कस्तूरी को इस हसी की न तो वजह समझ मे आई थी न मतलब. वह चुप थी.

यह सवाल रद्दो के दिमाग मे अभी तक आया ही नही था उसने तभी जिद की—हा मैने तो पूछा ही नाय, कौन-सी नौकरी करते हो भैया ?

बालेश्वर कलाई पर बधी घडी देखकर उठ खडा हुआ था. जैसे उसे याद ही नही था कि कोई बहुत जरूरी काम रह गया है.

वह अपनी मोटर सायकिल पर आया था बाहर जाकर स्टार्ट किया और सिटी स्टेशन की तरफ चला गया

इसके बाद मोहिनी ने इलाहाबाद मे विनायक को खत लिख दिया था कि उसका फुफेरा भाई एक दिन इस 'कौशल्या भवन' की दीवारो को गिराकर ही दम लेगा एक दफा नैना मेम ने मोहिनी से आकर चुपचाप जब खबर दी थी तो वह न तो ठीक-ठाक यकीन कर पाई थी, न यकीन न करने लायक ही कुछ दीखा था. फिर बाद मे जब विलायती साडियाँ, घडियाँ और सौ-सौ के नोट इस घर मे आने लगे तो उसे यकीन आ गया था कि बालेश्वर नेपाल और बम्बई से माल मगवाकर तस्करी करता ह.

●●

विनायक बरेली मे वापस आ गया तो बालेश्वर सिर्फ एक बार आया था वह नलिनाक्ष और रानी से मिलने आया था. लेकिन विनायक सामने पड गया तो अचकचाने लगा. बोला—बहुत दुबले होकर लौटे हो भैया

—हुह. विनायक बोला

बस और कोई बात नही हुई थी

बालेश्वर उस दिन दो-तीन मिनट के अदर यहा से चला भी गया था बाद मे रानी ने बताया था कि क्रिश्चियन का बच्चा होने वाला है

यह खबर पाकर कुती ने सिर्फ एक लम्बी सास ली थी मोहिनी को किसी ने यह सूचना जरूर नही दी थी लेकिन उसे पता हो गया था यह सुनने के बाद उसने अपनी तरफ से कुछ भी नही कहा था

मोहिनी ने नैनामेम से सुनी हुई बाते सक्षेप मे सुनाई तो विनायक ने कोई जवाब नही दिया था मोहिनी की भी अब ज्यादा बोलने की न तो शक्ति ही रह गई है न इच्छा ही होती है खास तौर पर जगतनारायण के चले जाने के बाद मे बोलने की इच्छा होती ही नही है

हरबन्ससिह मिल गया तो शुरू मे तो वह रद्दो के बारे मे बाते करता रहा फिर बालेश्वर के बारे मे

—तुम्हारा भाई वह ह, ऐसा कोई नही मानेगा. हरबन्ससिह ने कहा.

विनायक की रगो मे क्या कोई नमक घुसेड रहा था ?

—खैर बचेगा कब तक ? जिस दिन भी पकडा गया, कम-स-कम पाँच साल के लिए ससुराल की रोटी तोडनी पड़ेगी ससुराल शब्द की वजह से हरबन्ससिह हसता रहा.

विनायक हस नही सका

हरबन्ससिह ने फिर एकदिन उसे दूकान आने के लिए कहा और एक रिक्शा पकड कर बैठ गया.

विनायक कोई आधे मिनट तक बिजली के खभे की तरह चुपचाप खडा रहा.

●●

अब रद्दो चूकि नही है, रसोई की पूरी जिम्मेदारी रानी पर है कुनी पहले भी रसोई मे कभी नही घुसती थी. जब तक तारा थी, रानी, रद्दो का इतनी परेशानी कभी नही हुई. अब मोहिनी भी अपनी कोठरी से बहुत कम निकलती है और रानी के लिए जैसे सब कुछ भारी पड गया था

एक दिन विनायक रसोई के सामने चुपचाप दसेक मिनट तक खडा था रानी एलम्यूनियम के तसले पर आटा गूथ रही थी पहले एक पीतल का तसला था. जगत नारायण ने एक दफा दीवाली के वक्त खरीदा था मोहिनी ने उसके नीचे दामोदर लुहार से लोहे के गुटके लगवा लिए थे इस वजह से तसला घिसता ही नही था. विनायक ने अन्दाजा लगाया कि उसके इलाहाबाद जाने के बाद मोहिनी ने उसे बेच दिया होगा.

लकडी के [illegible] की वजह से रसोई बहुत काली हो गई थी कोई पाचेक साल पहले एकबार सिर्फ रसोई की सफेदी हुई थी पूरे घर की सफेदी के लिए जितने पैसो की जरूरत थी,जगतनारायण ने हिसाब लगाकर देखा था. उनका इतजाम नही हो सकता था फिर उन्होने सिर्फ रसोई की सफेदी करवा ली थी अब इसकी दीवारे इतनी काली हो गई है कि आसानी से शायद सफेद हो भी नही पाएंगी.

रानी पानी का लोटा उठाने के लिए मुडी तो विनायक को देखकर चौक उठी. कुछ शायद कहने को हुई थी लेकिन आखिर मे कुछ नही बोली.

विनायक ही बोला—तुझे कामो के बीच पस्त देख रहा था.

—हु

इतने सक्षेप मे रानी कोई बहुत बडा व्यग्य कर सकती है, पहले विनायक को कभी नही लगा था. वह झेप गया बोला—बर्तन वगैरह साफ करने के लिए जल्दी ही कोई मेहरी-वेहरी तय कर दूगा.

—चाय पियोगे ? रानी ने बिना मुडे पूछा

—चाय ? खैर रहने दे

चूल्हे पर सब्जी बन रही थी रानी ने उसे उतारा और एलम्यूनियम की एक छोटी-सी देगची मे चाय का पानी रख दिया.

—तू बहुत दुबली हो गई रानी विनायक जैसे चोरी करते हुए पकडा गया और सारे शब्द गडुमडु हो गए

तुमे बाजार मे कोई कमरा मिला ?

—मिल जाएगा.

—मामी जी तुमे याद कर रई थी सीने मे दर्द-सा था

—हु तू तो एकदम चगी है है न ?

रानी ने चाय का कप पकडा दिया.

विनायक ने घूंट ली.

चाय खत्म हो गई लेकिन करने लायक कोई बात याद ही नहीं आई आई भी तो रानी के साथ करने के लिए जैसे हिम्मत ही नहीं हुई

●●

ऊपर बरामदे मे एक चारपाई पर कुती आंखे बन्द किए पडी है चारपाई के पास एक फटी हुई दरी को तहो मे बिछाकर कस्तूरी नलिनाक्ष की कमीज का कधो की तरफ का फटा हुआ हिस्सा सिल रही है नलिनाक्ष के पास वैसे एक साबूत कमीज भी है लेकिन उसका रग अब निकलकर मटमैला-सा हो गया है.

विनायक ऊपर आया तो कुती ने आंखे खोली — आ गया लल्ला ?

—हूह विनायक ने फिर अपनी कमीज उतारकर कस्तूरी ... दी माभी यानी बटन के नीचे के हिस्से की सिलाई थोडी-सी खुल गई थी

नलिनाक्ष की कोठरी खुली थी और वह लेटा हुआ था वह लेटा होता है तो पता लगाना बहुत मुश्किल होता है कि साँस ले भी रहा है या नही ऊपर अगर मक्खी भी भिनभिनाए या मच्छर काटे, वह हथेली तक नही हिलाता

—कैसी हो बुआ ? विनायक ने कुती से पूछा और खुद ही महसूस करने लगा कि इस सवाल की कोई जरूरत नही थी यानी कुती अगर जवाब मे यह कहे कि वह भली-चगी है तो भी इस 'कौशल्या भवन' की दीवारो की सीलन कम नही हो जाएगी.

—अब मेरा रैना, ना रैना एक ही बात है

विनायक जानता था कुती यही जवाब देगी जैसे उसने बटन दबाया और चाबी लगी गुडिया ने बधा-सा जवाब दे दिया

—वो घुटनो का दर्द कुछ कम हुआ ?

कुती हसी — अब कहाँ-कहाँ से दर्द कम होगा लल्ला···

—शाम का वक्त है. ऊपर छत पर जाकर भी तो बैठ सकती हो

कुती चुप रही आखे खोलकर आसमान की तरफ देखने लगी थी सिर्फ

— अगले हफ्ते से थोडा-सा दूध बधवा दूगा विनायक ने कह लिया तो लगा, उसके इन शब्दो का इतजार किसी को भी नही था

उस वक्त सुबह सिर्फ पाव-भर दूध आता है भगोने मे चाय बनती है जिन्हे पीनी होती है रात की एक-एक बासी रोटी के साथ नीचे, रसोई मे जाकर पी आते है इसके बाद अमूमन दूध बचता ही नही है कभी अगर बच गया तो रानी शाम की चाय के लिए रख देती है शाम को वह नकद पैसे से कोई आधा पाव दूध ले आती है और थोडी-थोडी चाय सबको मिल जाती है आज शायद दूध थोडा ज्यादा आया था जिस वजह से एक कप और मिल गया था वैसे बिल्कुल इस वक्त चाय पीने की जरूरत नही थी. थोडी देर मे रोटी खानी थी और मौसम भी गर्म सा हो रहा था फिर भी उसने सोचा था कि चाय के बहाने रानी से कुछ बात कर लेगा प्याला हाथ मे आया तो फिर लगने लगा कि फिलहाल करने लायक कोई बात ही नही है इस लडकी पर पहले ध्यान देने की फुर्सत अक्सर नही मिली और अब, जैसे वह सबको पछाडकर बहुत आगे निकल गई है

विनायक को आज पहली बार महसूस हुआ कि घर-भर मे इतने लोग है लेकिन यह 'कौशल्या भवन' नही है जैसे रात गुजारने के लिए ये सब किसी धर्मशाला वगैरह मे ठहर गए है और सुबह तक यहा से चले जाना पडेगा. 'कौशल्या भवन' की दीवारों पर सफेदी हर साल जरूर नही होती रही है लेकिन ऐसा कभी नही हुआ, जब इनके बीच साँस लेने मे घुटन का अहसास हुआ हो

सतीश और मुकुद बाहर के छज्जे पर दो मूढे डालकर बैठे थे. सतीश के हाथ

मे शायद कोई रगीन फिल्मी पत्रिका थी. गल मे रूमाल बधे नायक की तस्वीर वह बहुत बारीकी से देख रहा था

मुकुद तल्लीन होकर कोई जासूसी किताब पढ रहा था

सतीश और मुकुद की जोडी ऐसी है कि कई बार लोगो को इनके जुडवा होने की गलतफहमी हो जाती है उम्र मे वैसे सतीश साल-भर बडा है लेकिन शक्ल तक से दोनो भाई हम उम्र लगते हैं अक्सर ही वे इकट्ठे रहते और आपस मे कभी झगडा-फसाद नही होता.

इस दफा भी हाई स्कूल के इम्तहान मे दोनो फेल हो गए सतीश छह विषयो मे से सिर्फ हिन्दी मे पास हो सका था और मुकुद ड्राइग मे बाकी विषय मे दोनो भाइयो मे से किसी को भी पन्द्रह नम्बर से ज्यादा नहीं मिले थे सतीश का इरादा था कि वह इन्जीनियर बनेगा और मुकुद वकील दोनो के पास साइस के विषय थे और वे इन्जीनियरिग और वकालत मे एडमीशन लेने से पहले बी एस-सी कर लेना चाहते थे

विनायक ने एक-आध दफा दोनो भाइयो से पूछा भी था जवाब उन लोगो ने आश्वस्ति के साथ दिया था कि खामख्वाह फिक्र करने की कोई जरूरत नही है बेफिक्र तो विनायक नही हो सका था लेकिन उन लोगो मे पढाई वगैरह के बारे मे आगे जरूर कुछ नही पूछा गॉव मे उनके घर एक चिट्ठी डाल दी थी तब जगतनारायण जीवित थे चिट्ठी पाकर मामा, मामी दोनो आए और सात दिन तक घर मे कोहराम मचा रखा. मामी ने जगतनारायण को इन दो ममेरे भाइयो के लिए कुछ खास इत-जाम करने को हुक्म-सा दे दिया था उन्हे यह बात कतई पसन्द नही आई थी कि उन के बेटो के नुक्स बताकर इस तरह कोई खत लिखता रहे. आखिर दोनो बच्चे ही है प्यार-मुहब्बत से समझाओगे तो सुधर जाएगे उस वक्त विनायक भी वहा था जगतनारायण ने अपनी मामी से कुछ नही कहा था. और विनायक वहाँ से निकल गया था

मामा की उम्र जगतनारायण से भी छोटी है बचपन मे वे इकट्ठे खेला करते थे बाद मे भी वह दोस्त-से ही रहे. लेकिन बच्चो के पैदा होने के बाद मामी को जैसे पुराना सारा हिसाब याद आता रहा है कि उन लोगो ने किस-किस के लिए अपने सुख-चैन तक की परवाह नही की

इस दफा दोनो भाई फिर से फेल हो गए तो स्कूल मे दाखिला ही नहीं मिला. वे सोच रहे थे कि प्राइवेट पढाई करके इम्तहान पास किया जा सकता है लेकिन गॉव से चिट्ठी आ गई थी कि अब वे घर वापस आ जाए और खेती-बाडी मे मन लगाए चिट्ठी मे इस बात की भी सूचना थी कि दो और भैसे खरीद ली गई हैं

गांव जाने की इच्छा सतीश और मुकुद मे से किसी की भी नही थी लेकिन अब शायद उन्हे यकीन-सा आ गया था कि वे इजीनियर और वकील नही बन सकेगे यहाँ रहते हुए सिनेमा देखने का खासा चस्का लग गया था और गॉव जाकर बिना बिजली वगैरह के रहने मे कितनी घुटन होगी, वे सोचते रहे थे

फिर घर से एक और चिट्ठी आई कि वे खत पाते ही फौरन आ जाए मोहिनी का एक अलग खत आया था, जिसमे सतीश और मुकुद के लिए रिश्ते के पक्के होने की सूचना थी लडकी वालो की तरफ से क्या-क्या मिलेगा, उसकी एक लम्बी फेहरिस्त थी.

सुबह तक सतीश और मुकुद को यहाँ से निकल जाना है. विनायक ने उन

लोगों की तरफ देखा और तय नही कर पाया कि एकदम से *जगतनारायण* की याद कैसे आ गई ? आख़िर मे वह उठकर छत की तरफ चला गया.

●●

सब लोग खाना खा चुके तो रानी ने आवाज़ दी. विनायक पल-भर को चुप रहा लेकिन यह कहने की तबियत नही हुई कि बिल्कुल भूख नही है. कहने से रानी कोई जवाबदेही जरूर नही करती लेकिन इस तरह चुप्पी साध लेती कि उसका सहना नामुमकिन-सा हो जाता.

छत से उतर कर उसने मोहिनी की कोठरी मे कोने की तरफ रस्सी पर टंगी अपनी एक पुरानी-सी धोती लुंगी की तरह लपेट ली और अंगोछे से बदन का पसीना पोंछ लिया. सारी बनियानें गंदी थी. फिर भी उनमें से एक बदन पर डाल ली थी. मोहिनी अधलेटी-सी कोई किताब पढ रही थी. वह कपड़े बदल कर बाहर निकलने को हुआ तो मोहिनी ने किताब बन्द कर दी—सुबह सतीश, मुकुंद जाय रहे है.

—हां. वह समझ गया कि मोहिनी आगे क्या कहना चाहती है. कोई सोना-चांदी देने के लिए नही कहती लेकिन पैसे होते तो शायद किलो-डेढ किलो लड्डू मंगवा कर इनकी डोलची में रख देती.

विनायक ने इन्तजार किया लेकिन मोहिनी कुछ और नही बोली. जैसे इसी वक्त यह जरूरी सूचना दे देनी थी. फिर वह चद्दर तानने लगी.

विनायक ने एक बार और सोच लिया. थोडी देर पहले यही बात सोची थी. अब जैसे तय-सा हो गया कि मोहिनी को एक और लम्बी साँस लेनी ही पडेगी

रानी चूल्हे के पास बैठकर इंतजार कर रही थी. वह पीढ़े पर बैठ गया तो रोटी सेकने लगी.

—तू कभी सिनेमा वगैरह नही जाती ? विनायक ने रोटी तोडी और पूछा.

—क्यो ?

—यूंही पूछ रहा था, तू तो कही निकलती ही नही है ! ख़ैर, एक दिन मैं टिकट ले आऊगा और सब लोग चलेगे.

रानी चुप रही. जैसे इन मामूली और गैर मतलब के शब्दो मे उसे कोई दिलचस्पी नही है. कोई और बात कहने के लिए नही थी तो चुप भी तो रह सकते थे.

—सुना है, माचिस फैक्ट्री मे तुम्हें नौकरी मिल रही थी लेकिन नही ली.

विनायक ने एकदम गर्दन सीधी की—तुझे किसने कहा ?

—बल्लू भैया थोडी देर पहले आए थे, कह गए. कहने के बाद रानी को लगा, बल्लू भैया यानी बालेश्वर का जिक्र न करती अच्छा होता

विनायक ने यह नही पूछा कि बालेश्वर को यह बात मालूम कैसे हुई.

—नौकरी अच्छी नही है क्या ?

—अच्छी है लेकिन मेरे लिए ठीक नही है

—क्यों ?

—तुझे सारी बातों का जवाब चाहिए अभी ? विनायक की आवाज एकदम से चढ़-सी गई थी.

रानी ने फिर कुछ नही पूछा. एक लम्बी सांस लेने-लेते भी नही ली थी. सिर्फ चेहरा थोडा स्याह हो गया था.

विनायक उठा और नल पर चला गया. पांच मिनट तक कुल्ला करता रहा. रानी रसोई की सफाई कर रही थी. बर्तनों के खनकने की आवाज़ आ रही थी. कभी-

कभी रानी के सामने इतना छोटा हो जाना पड़ता है कि दिनो तक कुछ चुभता-सा रहता. वह मुडा और रसोई के दरवाजे पर आ खडा हुआ रानी अब शायद कुछ नही पूछेगी. यह भी नही कि खामख्वाह वह पाच मिनट तक कुल्ला ही क्यो करता रहा.

—रानी, सुन इधर विनायक को अपनी आवाज बेहद हल्की लगी

—हु वह तमले पर लगा आटा एक चम्मच मे कुरेद रही थी बिना मुडे ही उसने जवाब दिया

—इधर आ

दो पल तो वह नही उठी थी, फिर सामने आ गई

—माचिस फैक्ट्री की नौकरी क्यो नही ली, सुनेगी नही ?

रानी के होठ बिल्कुल स्थिर थे

विनायक ने उसके कधे पर हथेली रखी रानी बेहद चौकी थी उसके कधे पर आज तक किसी ने हथेली कभी नही रखी है वह सिकुडती-सी रही

—खासी अच्छी नौकरी मिल रही थी पाच सौ रुपए तो तनख्वाह ही थी और अलाउस वगैरह मिलाकर साढे छह सौ, सात सौ बन जाते

रानी ने 'हु' भी नही कहा

—वहा माचिस फैक्ट्री म दरअसल दो यूनियन है एक मे लाल झण्डे वाले यानी कम्यूनिस्ट लोग है उनकी ताकत बहुत बडी है और दूसरा यूनियन है फैक्ट्री के मैनेजमेण्ट के पिट्ठुओ का उनका कोई झण्डा-वण्डा नही है लाल झण्डा वाले अगर किसी बात पर आदोलन करते है तो दूसरी यूनियन लोगो को झूठे रास्ते मे गुमराह करने की कोशिश करती है अनपढ और गरीब लोग ही आखिर काम करते है उनमे से कुछ छोटे-छोटे लालच मे अपने ही साथियो के भी खिलाफ चले जाते है या कम-से-कम आदोलन मे हिस्सा नही लेते समझ रही है तू ?

रानी ने सिर्फ गर्दन ऊपर उठा ली

—मुझे टाइम-कीपर की नौकरी मिल रही थी असल मे दूसरी यूनियन को मजबूत बनाकर लाल झण्डे वालो को कमजोर बनाने का काम करना पडता फैक्ट्री वाले कम-से-कम एक बात म ईमानदार है कि अपने बडे बाबू से मशा जाहिर करवा दी मै फिर वहा से निकला तो दुबारा घुसा ही नही

रानी ने वाकई एक लम्बी सास ली

—अब सोच रहा हू, जमकर डाक्टरी करूगा कुछ मरीज तो, खैर, ऐसे भी मिल जाएगे, जिनमे रोटी-पानी लायक पैसा निकल ही आएगा विनायक हसा—तेरे ऊपर घर का बहुत बोझ है वर्ना मै तुझे अपना कम्पाउडर ही बना लेता. विनायक ने फिर रानी के गाल पर एक हल्की-सी चपत लगाई—लेकिन तुझे तो डोली पर बिठाकर अब जल्द ही विदा करूगा

बाते कह ली तो लगा, सीने का बोझ बहुत हल्का हो गया है कम-से-कम अब इतना हल्कापन जरूर आ गया कि रानी से मागकर पानी पिया जा सकता है या भूख न होने पर रोटी नही खाई जा सकती है

विनायक फिर ऊपर आ गया

बाकी सब लोग सो रहे थे

कस्तूरी ने उसकी कमीज का फटा हुआ हिस्सा सिलकर बाहर वाली रस्सी पर पडे अगोछे के साथ रख दिया था विनायक ने कमीज की तरफ देखा तो लगा कस्तूरी की हालत और इस कमीज मे कोई फर्क नही है. फट वह भी गई है लेकिन बस किसी तरह अपने को सिल-सिलाकर काम चला रही है. लेकिन इस तरह रस्सी सासे

कोई बहुत दिनों तक नही ले सकता. विनायक के माथे पर पसीना आ गया था.

रानी थोड़ी देर में ऊपर आई तो हाथ में एक डिब्बा था. कभी शायद इसमें मिठाई वगैरह कुछ आई थी—सतीश और मुकुंद की डोलची में रख देना. दोनों भाइयों के साथ तेल-कंघी से लेकर शीशा इस्तेमाल करने तक के मामलों पर कई बार झगड़े हो चुके हैं. रानी अब अपनी तरफ से उन लोगों से नहीं बोलती. कुंती जरूर कभी-कभी मौका मिलने पर, नसीब की दुहाई देकर रोना नही भूलती.

—क्या है ? विनायक अंदाजा नहीं लगा पा रहा था.

—कुछ नहीं. थोड़े से आटे के लड्डू बनाए थे…ठीक से शायद बने भी नही हैं. उसने फिर डिब्बे को विनायक की बगल में पड़े स्टूल पर रख दिया.

विनायक दंग-सा रह गया. जैसे सामने रानी नही, एक पूरी औरत खड़ी है. एक ऐसी औरत, जो हर हालत में करुणा कर सकती है.

रानी फिर अंदर चली गई. कमरे में चारपाई पर कुंती सोती है, वह ज़मीन पर कुछ बिछाकर सो जाती है. पहले तारा भी उसकी बगल मे सो जाया करती थी. अब उस खाली जगह पर एक मुडा-तुड़ा टीन का संदूक रखा हुआ है, जैसे 'कौशल्या-भवन' के लिए तारा और इस चीज के बीच कोई फर्क ही नही है.

विनायक सोचता रहा कि छत पर चला जाए और थोड़ी देर टहलता रहे. आख़िर में नहीं गया.

वह सतीश और मुकुंद के बंधे हुए सामानों की तरफ गया और डोलची के ऊपर रानी का डिब्बा रख दिया.

बगल के कमरे में से कुंती के कुनमुनाने की आवाज आ रही थी. लेकिन रानी शायद सो गई थी. उसके जगे होने की कोई आवाज़ नही आ रही थी.

विनायक चुपचाप अपने बिस्तर पर आकर बैठ गया.

●●

बमनपुरी की बजरिया में पहले डाकखाने के पास एक रुई धुनने की दूकान हुआ करती थी. दूकानदार मुसलमान था और दंगे में बुरी तरह जख्मी होकर तीन महीने तक अस्पताल में पड़ा रहा. इसके बाद दिमाग की नसों से बहुत ज्यादा खून निकलने की वजह से उसकी मौत हो गई थी. दंगे के दरमियान मुहल्ले वालों ने उसकी दूकान का ताला तोड़कर अंदर से रूई, कपड़े वगैरह उठा लिये थे. आग इसलिए नहीं लगा दी थी कि इससे पड़ोस के हिन्दुओं का बहुत नुकसान हो जाता. वैसे भी मकान का मालिक हिन्दू था.

वह जगह विनायक को मिल गई. किराया भी आजकल बाज़ार देखते हुए ख़ास ज्यादा नहीं है. तीस रुपए. ढाल में जो कमरा था उसका किराया इससे आधा ही था फिर भी जब महीने-भर तक गली-मुहल्ला छान डालने के बावजूद कुछ नहीं मिला तो विनायक ने मकान मालिक से किराया घटाने की बात की ही नहीं.

इलाका भी जाना-पहचाना है. बिहारीपुर के बाद मलूकपुर आता है और

मलूकपुर पार करते ही बमनपुरी की बजरिया शुरू हो जाती है. डाकखाना होने की वजह से बिहारीपुर वालो को भी खत वगैरह डालने यही आना पड़ता. वैसे सिटी स्टेशन के सामने भी एक लेटरबॉक्स है लेकिन बिहारीपुर वाले ज्यादातर इधर ही चले आते हैं. खत वगैरह भी डाल लेते और बजरिया मे अगर धनिया, मिर्च वगैरह लेनी होती, वह भी ले लेते.

बचऊ हलवाई के पास 'बरेली होम्यो क्लीनिक' का पुराना बोर्ड रखा हुआ था. जगह मिल गई तो हलवाई बोर्ड को लाकर यहां दरवाजे के ऊपर टाँग गया. अलमारी, कुर्सियां, बेंचें और मेज इसरार के पास रखी हुई थी अपने रिक्शे पर वह इन सामानों के साथ एक कैलेण्डर भी ले आया था कैलेण्डर पर एक मूछो वाले आदमी का चेहरा था और कोने मे बीडी के बण्डल की एक छोटी-सी तस्वीर. तस्वीर के नीचे बीडी कम्पनी का नाम, पता भी लिखा था. विनायक इस कैलेण्डर के साथ बाकी सामानों का ताल-मेल खोजता रहा लेकिन कोई फैसला कर नही पाया. इसरार का जोश-खरोश देख-कर फिर वह चुप हो गया. खैर, इसरार की वजह से बीडी कम्पनी का एक कैलेण्डर ही सही.

जिस कमरे में यह दवाखाना शुरू हुआ है, उसकी दीवारो पर पलस्तर कभी हुआ ही नही ईंटों के ऊपर दो-तीन साल पहले एक बार सफेदी जरूर हो गई थी. अब जगह-जगह पर रुई चिपकी हुई है और बरसात की सीलन की वजह से छत के एक हिस्से में पानी का दाग काला होकर जम-सा गया है उस दाग के ऊपर सफेद--सफेद फफूदी-सी भी जमने लगी थी विनायक ने मकान मालिक से एक बार कहा तो था लेकिन वह टालने-सा लगा था और 'तथास्तु' की मुद्रा मे हथेली उठा दी थी

मकान मालिक है लच्छीलाल गुप्ता. बड़े बाजार मे, सरागी दरवाजे के पास एक बर्तनों की दुकान है. लच्छीलाल हर सुबह नहाकर आधे घंटे तक सूर्य पूजा करता, माथे पर चंदन की लकीरें खींचता फिर एक घी-चुपडा पराँठा और मट्ठे का एक बड़ा-सा मुरादाबादी गिलास खाली करके पौने नौ बजे तक दूकान का हिसाबों वाला खाता लेकर बैठ जाता. इसके बाद दूकान जाना होता है.

विनायक ने सफेदी की बात कही तो लच्छीलाल बाजार की महंगाई वगैरह के बारे में कोई पंद्रह मिनट तक बोलता रहा. विनायक इसका मतलब समझ गया था वह चलने लगा तो लच्छीलाल ने बत्तीसी दिखाकर अपनी दाहिनी उठा ली थी. याने जब चलकर आए ही हो तो अगली दीवाली तक कुछ सोचेंगे. इसके बाद लच्छीलाल से इस मामले में कभी बातचीत नही हुई. किसी और मामले पर भी कहना-सुनना शायद ही होता है लेकिन इधर से निकलते हुए लच्छीलाल अंदर झांक ही लेता है मरीज वगैरह नही हुए तो जमाने पर थोडा रो-गा लेता और चलते-चलते पसलियों और घुटनों के दर्द के लिए खुराक-दो खुराक दवा भी ले लेता. यह लच्छीलाल की पुरानी आदत है. डाक्टर देखते ही लगने लगता, जिस्म में कही-न-कहीं दर्द ज़रूर है. और दवा की पुड़ियां अगर जेब से नामा निकाले बगैर ही मिल जाए तो लेने में हर्ज भी क्या है ?

बमनपुरी का यह इलाका कुलमिलाकर बिहारीपुर से कहीं अलग है. यहाँ लच्छीलाल की तरह बर्तन वाले, पंसारी, लोहा और सीमेंट के व्यापारी से लेकर वकील, मास्टर जैसे लोग भी रहते हैं. दो-दो विलायती इलाज करने वाले डाक्टर और एक डाक्टरनी की भी दुकानें हैं. कुछ पंसारी वगैरह के बच्चे ऐसे भी जरूर हैं जो हाईस्कूल में दो-चार बार फेल होने के बाद दूकान पर ही बैठने या खाली रहने लगे हैं. लेकिन ज्यादातर बच्चे स्कूल और कालेज जरूर जाते हैं. विनायक के दवाखाने

के ठीक सामने वकील साहब रहते हैं, जिनका एक बेटा दिल्ली में ऊंचे ओहदे की सरकारी नौकरी करता है.

दवाखाने से थोड़े फासले पर एक चबूतरा है. म्यूनिसीपैलटी ने जो नल लगवा दिया, ठीक उसके साथ चबूतरे पर शायद कोई मंदिर-वंदिर बनना था लेकिन मुहल्ले वालों के आपसी झगड़ों की वजह से चबूतरे के बाद कुछ नहीं बन पाया था. यह बात बहुत पुरानी है और अब उस मसले पर कोई मगजपच्ची करता ही नहीं. चतबूरे का इस्तेमाल अब बिहारी करता है. उसके गोलगप्पे इधर के घरों की औरतों और लड़कियों में बहुत मशहूर हैं. बिहारी दुपहर को कोई बारह बजे एक घड़े में गोलगप्पे का खट्टा पानी और एक शीशे के बक्से में सूजी और आटे के गोलगप्पे लेकर हाजिर होता और रात के नौ बजे तक दूकानदारी करता. सामने ही बिजली का खंभा है. उसे ढिबरी तक जलाने की जरूरत नहीं होती और दिनभर में बीस-पच्चीस रुपए कमा लेता है. लाईन पार मढ़ीनाथ की तरफ उसने एक दो सौ गज़ की जमीन भी ले ली है. कहता है सर छुपाने के लिए आखिर अपना एक छप्पर तो चाहिए ही. होली तक शायद मकान का काम भी शुरू हो जाएगा.

चबूतरे के बाद अंदर की तरफ गली जाती है. वहां सबसे पहले गियानीसिंह का मकान है. जात से वैसे सिख है लेकिन बाल कटे हुए हैं और सिग्रेट वगैरह बराबर पीते रहने की आदत है. गियानीसिंह की दूकान सरकारी अस्पताल के बाहर वाले गेट के साथ है. कई अख़बारों की एजेंसी है और तीसेक अख़बार बांटने वाले उसके यहां काम करते हैं. गियानीसिंह सीना ठोंक कर गर्व से कहता है कि पढ़ाई उसने कभी जरूर नहीं की लेकिन ऊपर वाले ने रोज़ी-रोटी जुटाने में इतनी इनायत बरती कि चार-छह पढ़े-लिखे भी इतना कमा नहीं सकते. गियानीसिंह की चार बेटियां और एक बेटा है. तीन बेटियों की शादी हो चुकी है और बेटा दिल्ली में कहीं कटपीस की दूकान चलाता है. साथ बीवी और सबसे छोटी बेटी रहती है— जुगिन्दर.

गियानीसिंह के मकान के सामने, यानी लगभग नुक्कड़ पर रेलवे के चार्जमैन बांकेलाल का मकान है. बांकेलाल के तीन बेटे हैं और तीनों ही हाईस्कूल में दो-दो बार फेल होने के बाद रेलवे कारखाने में खलासी की नौकरी के लिए उम्मीदवार हैं. बांकेलाल नें भी जब नौकरी शुरू की थी, खलासी था. फिर धीरे-धीरे चार्जमैन तक पहुंच गया है.

इस मुहल्ले में दवाखाने के इर्दगिर्द बांकेलाल और गियानीसिंह की तरह लगभग हर पेशे के कुछ लोग मिल जाएंगे. पिछवाड़े की तरफ खन्नो मुहल्ले से पहले सब्जी बाजार लगता है. वैसे इस रास्ते पर भी एक दर्जी की दुकान है, एक परचूनी की और एक पतंगसाज़ की भी.

बांकेलाल और गियानीसिंह का रिश्ता सांप और नेवले का-सा है, यह बात मुहल्ले का हर कोई जानता है. लेकिन यह कहना मुश्किल है कि इन दोनो में सांप कौन है और नेवला कौन ?

गियानीसिंह को अपने पैसे का थोड़ा घमण्ड तो हो ही सकता है. चोरी नहीं की, डाका नहीं डाला, मेहनत-मजदूरी करके पैसा कमाया है ! पहले एक पुरानी सायकिल खरीदकर अखबार बांटता था. अब अपने यहां के अख़बार बांटने वालों को वह नई साइकिलें ख़रीद कर देता है. इसी बात को वह बिहारी गोलगप्पे वाले से लेकर मोती पतंगसाज तक कुछ नहीं तो पचासेक बार बता चुका होगा. बिहारी और मोती को इस इत्तिला से कोई सरदर्द नहीं होता. नई साईकिल तो क्या वह चाहे

मोटरगाड़ी भी अगर खरीदकर देते हो तो दो, हम पूछने नहीं आएंगे कि कैसे दिया ?

लेकिन बांकेलाल पूछता है. गियानीसिंह से तो खैर नहीं पूछता लेकिन मोती ऐसे सुनाता है कि सारी बातें गियानीसिंह के कानों तक आएं.

गियानी सिंह अगर गुरुद्वारे नहीं जाता है, शराब और सिग्रेट पीता है और किला मुहल्ले की किसी सरदारनी के यहां कभी चला जाता है तो इसके लिए बांकेलाल से भीख तो नहीं मांगता.

गियानीसिंह की उम्र साठेक साल की हो गई है. बांकेलाल मालूम कर आया कि किले की वह सरदारनी तीस-बत्तीस की होगी. बेवा है बिचारी. पढ़ी-लिखी है और चुंगी के स्कूल में मास्टरनी है.

बांकेलाल को रेलवे में चार्जमैन होने की बजाय पुलिस में जासूस होना चाहिए था. पतंगसाज़ को कम-से-कम यही लगा था. वर्ना कारखाने में हथौड़ा मारने के बाद इतनी ताकत या फुर्सत कहां रह जाती है कि गियानीसिंह की बेटी जुगिन्दर कालेज के किस-किस लड़के के साथ यारी कर रही है, यह सब पता करे ? बांकेलाल ने फिर आखिरी इत्तिला दी कि सरदार की लौण्डिया ने मुंह काला कर लिया.

यह बात लोगों को गलत नहीं लगी थी. लोगों ने जुगिन्दर को पिछले पन्द्रह-एक दिनों से सायकिल लेकर कालेज जाते नहीं देखा था.

बांकेलाल ने सरदारनी वाला किस्सा सुनाया था. गियानीसिंह चुप था. वैसे चुप रहने की आदत नहीं है लेकिन इस बांकेलाल पर थूकने की भी तबीयत नहीं होती. पिछले पन्द्रह सालों में कम-से-कम हजार बार ऐसे झगड़े हुए हैं कि पूरा मुहल्ला इकट्ठा होता रहा है. गियानीसिंह की आदत है कि खून खौल जाने के बाद पंजाबी में ऐसी गालियां देना शुरू करता है, जो दूसरी जुबान से दी ही नहीं जा सकतीं. मुहल्ले के लोग पंजाबी तो खैर नहीं समझते लेकिन गालियां जरूर समझ लेते हैं. बल्कि इससे सबको खासा मजा भी आता है.

इस दफा गियानीसिंह निकला और बांकेलाल के कुर्ते का गर्दन के पास वाला हिस्सा पकड़कर झटका-सा मारा. लेकिन ऐसे झटकों से बांकेलाल का कुछ नहीं बिगड़ता है. पिछले तीस सालों से लोहे और हथौडों के बीच रहते हुए यह आदमी जैसे फौलादी हो गया है.

बांकेलाल भी जैसे तैयार ही था. उसने गियानीसिंह के दाहिने कंधे पर मुक्का-सा मार दिया. इससे सरदार को पीछे ज़रूर हटना पड़ा लेकिन बांकेलाल का कुर्ता ही फट गया. बांकेलाल के नथुने फूल गए—ओय गियानीसिंह, किला जायके मास्टरनी का कुर्ता फाड़ियो. ह्यां तो तेरे बाप को जे सिलके देना होगा.

गियानीसिंह पंजाबी में गाली बकने लगा. लोग खासा तमाशा देख रहे थे. उस की सरदारनी अपने छज्जे पर उसे बुला रही थी.

बांकेलाल जोरों से सांस ले रहा था. उसका सीना इस वजह से तेज़ी से उठ-गिर रहा था. आंखें लाल हो गई थीं. बांकेलाल के तीनों ही लड़के बरामदे पर खड़े होकर गियानीसिंह को घूर रहे थे. उसकी बीवी शायद घर पर नहीं थी. वर्ना गियानी सिंह इतनी आसानी से पंजाबी में गालियां न दे पाता.

बिहारी लगभग पकड़कर विनायक को ले आया था—अब देखो बुड्ढन का तमासा. कुछ तो शर्म करो तुम लोग अपनी-अपनी उमर का ख्याल करके.

नहीं, उम्र वगैरह का ख़याल गियानी और बांकेलाल में से किसी को आता ही नहीं है. बांकेलाल का वश चलता तो मुहल्ले में भी चार्जमैनगिरी पर उतर आता

और सरदार के भेजे पर दो-चार हथौड़े कुर्ता फाड़ने के एवज मे मार ही लेता. उसने मुह बिचकाया और हथेली हिलाई—बडा बनता है सरदार का बच्चा. बाप-बेटी मिल के मुहल्ले को बदनाम कर रिये···

बाँकेलाल की बात खत्म होने से पहले ही सरदार गुर्राने लगा था. बिहारी ने बांहो मे पकड़ रखा था वर्ना शायद आकर कम-से-कम दो-चार मुक्के जमा ही देता.

विनायक ने जोर से कहा – खामोश फिर बिहारी से बोला—जरा वकील साब को बुला तो ला.

बिहारी कुनमुनाने-सा लगा था.

मोती पतंगसाज ने बात समझा दी—इस टैम वकील साब जरा मस्ती मे होते है. आठ बजे बोतल खुलती है तो चाहे घर मे आग भी लग जाए, वो बाहर नाय निकलने के.

बिहारी दूकानदारी पर वापस चला गया था. नौ बजे से पहले खामख्वाह के पचडो मे पड़ने की फुर्सत कहाँ होती है ? यहाँ तो मजदूरी करो तो पेट भरे.लेकिन कई दफा यह चार्जमैन मुहल्ले मे गियानी के संग ऐसी चार्जमैनी झाडता है कि उठना ही पडता है.

विनायक को आगे खास कोई बात करने की जरूरत नही पडी थी. सर्दारनी की आवाज से गियानी सिंह कभी वापस तो नही जाता लेकिन इस दफा चला गया. जाते-जाते सिर्फ मा के नाम एक दुर्बोध्य पंजाबी गाली बाँकेलाल को सुना गया

जवाब मे बाँकेलाल ने जैसे एक गीदड को माफ कर दिया गियानी चला गया तो उसने विनायक को थोडा-सा घूर कर देखा और घर के अदर चला गया.

इतनी जल्दी मामला दफा हो जाएगा, किसी ने सोचा नही था. मोती को बहुत ताज्जुब हो रहा था —सरदार को बुखार रिया होगा, जभी बोल नाय पाया. उसके गिर्द खड़े लोग खिलखिलाने लगे थे सरदार और बुखार के बीच जैसे कोई ताल-मेल बैठता ही नही है.

विनायक दवाखाने मे वापस चला गया

●●

रात के नौ बजे थे

दिनभर मे सिर्फ तीन मरीज आए थे उसके अलावा इसरार आया था और डोरीलाल शाम को यू ही टहलते हुए आ गया था. अंधेरा हो जाने के बाद दवाखाने का यह कमरा जैसे बिल्कुल काला हो जाता है बिजली वैसे पहले थी लेकिन बिल अदा न करने की वजह से कट गई थी इसके बाद दूकान कई दिनो तक बन्द पडी रही और लच्छीलाल ने तब से दुबारा कोई इनजाम किया ही नही. विनायक घर मे पडी लालटेन ले आया था. लालटेन की पीली रोशनी मे दीवारे खदक-सी लगती है. विनायक निकलने से पहले लालटेन बुझा ही रहा था कि गियानीसिंह आ गया इस दफा एक चुन्नटदार कुर्ते और पाजामे मे था. पैरो मे लखनवी चप्पले थी. घंटा-भर पहले कोई फसाद भी हुआ था, गियानीसिंह को देखकर यकीन नही आता.

—जरा एक मिंट ठैरो, पापे···.गियानी सड़क के ऊपर से लगभग एक छलांग मारकर ऊपर आ गया—वाह, सारा मामला फिट्ट कर लिया तुमने. कुर्सियां, बेंचें, अल्मारी और मेज़ देखकर गियानीसिंह को खासा ताज्जुब हो रहा है वैसे उसके पास पूरी जानकारी थी कि पहले ढाल की बजरिया मे अच्छा-खासा शफाखाना था और दूर के मुहल्लों से भी लोग आते थे. 'बरेली क्लाथ मर्चेन्टस्' के हरबन्स सिंह के साथ गियानी की रिश्तेदारी तो खैर नही है लेकिन कभी-कभी मुलाकात हो जाती है. उसी ने सारा

बता दिया था.

गियानीसिह आकर आराम से बैठ गया—अच्छा है, मुहल्ले मे अब एक 'होमोपैत' डाक्टर भी आ गया विलायती दवा लोगबाग आजकल पसद जरूर करते हैं लेकिन इस गियानी को बैद-हकीम की दवा लेनी है ना 'होमोपैत' की. साठ बरस की उमर हो गई लेकिन देखो पूरा गबरू हू. गबरू होने के प्रमाण मे गियानीसिंह ने अपनी बाह की पसलियों पर एक मुक्का मारा और खिलखिलाने लगा

खिलखिलाने के तुरत बाद कोई आदमी बेहद सजीदा भी हो सकता है, गियानी सिंह को देखकर यकीन करना पडा

गियानी फिर जैसे अचकचाने लगा—वो, मेरी एक लडकी है जुगिंदर. बी ए मे पढती है, काफी सयानी भी है लेकिन आजकल के बच्चे कई दफा ऐसी गलती कर बैठते हैं कि बस्स, कुछ पूछो मत.

गियानी को जैसे लफ्ज नही मिल रहे थे

—हा तो पापे, मामला जरा टेढा है एक लडका है. हमारे घर मे भी कई मर्तबा आता रहा है लेकिन सिर्फ इतनी-सी बात मे उसके साथ लडकी की शादी तो नही कर सकते यह तीसरा महीना चल रहा है

विनायक जैसे इस आखरी वाक्य की ही उम्मीद मे बैठा था

गियानी ने एक सिग्रेट सुलगाई—फिर भी हमने सोचा, चलो कुदरत को यही मंजूर है तो उसी लडके के साथ शादी कर देगे लेकिन लडका मुकर गया बोर्डिंग मे रहता है मै गया था बात करने उसके बाप की उमर का हू लेकिन हमी को लगा खरी-खोटी सुनाने लडकी का मामला है, बदनामी हो जाएगी इसलिए चुपचाप चला आया गियानी ने फिर विनायक की हथेली पकड ली थी—लेकिन मेरी इज्जत का ख्याल रखना. चार्जमैन इसी बात पे गाली जरूर देता है लेकिन मैंने अपनी तरफ से किसी से कुछ नही कहा अब बोलो तुम्हारे पास कोई इलाज है ?

— आपरेशन से अच्छा कोई इलाज नही है लडकी की सेहत भी इसमे बची रहेगी इस बात के लिए कम-से-कम किसी नीम हकीम के पास मत जाइएगा.

विनायक की समझ मे आ गया कि इस जवाब मे गियानीसिह बुरी तरह निराश हुआ है हम उपदेश सुनने थोडे ही आए थे आखिर इतना बडा शहर है. डाक्टरों की कोई कमी तो नही है ! तुम्हारे पास इसलिए आए थे कि ऐसी कोई दवा बाध दो कि आराम से काम भी निकल जाए और छुरी-कैंची का फसाद भी न हो. गियानी ने एक लम्बी सास ली—यहा तो रात की नीद हराम हो गई मास्टर कुछ भी समझ मे नही आता.

वह फिर बाहर निकल गया.

इसके बाद गियानीसिह को दवाखाने के अंदर आने की जरूरत कभी नही पड़ी या तो वह बीमार ही नही पडा या इस 'होमोपैत' मे यकीन ही उठ गया. एक दिन बिरजू आकर बता गया था कि सरदार ने अपनी लडकी को दिल्ली मे बेटे के पास भेज दिया था. विनायक ने कुछ पूछा तो नही था लेकिन उसने किले वाली मास्टरनी के बारे मे सक्षेप मे बता दिया था कि सर्दार को चूसकर उसका सारा पैसा वह हजम कर रही है. गियानी की सर्दारनी सीधी-सादी आदत की औरत है और अक्सर ही उसे अपने शोहर से मार खानी पडती है.

●●

एक दिन वकील साहब कचहरी से लौटने के बाद दवाखाने मे आ गए. फौजदारी के पुराने वकील हैं और बहुत मशहूर न सही, लोग कुछ तो जानते ही हैं. बमनपुरी

मुहल्ले में सबसे ज्यादा इज्जतदार आदमी हैं वकील साब. रंग सांवला और बदन छरहरा-सा. नाक के नीचे पतली-सी मूछें हैं. चेहरे पर एक आभिजात्य और घमण्ड का-सा भाव चिपका हुआ-सा है.

वकील साहब ने दवाख़ाने को देखा और गर्दन हिला दी—लाईफ़ में स्ट्रगल किए बिना तिनका भी तो नही मिलता है, जनाब. कहने का ढंग कुछ ऐसा था, जैसे इतनी क़ीमती बात वह पहली बार किसी को सुना रहे हों. उन्होंने फिर अपनी ज़िन्दगी की कहानी सुनाई थी— किसान का बेटा हूं. किसान भी क्यों, मज़दूर कह लीजिए. मेरे बाप के पास नवाबगंज तहसील में बीघा-भर जमीन जरूर थी लेकिन पेट पालने के लिए औरों के खेत में मज़दूरी करनी होती थी. मेरी मा एक तरफ तो घर संभालती, दूसरी तरफ़ खेतों में जाती. एक दफा सांप ने काटा और पांच मिनट के अंदर वह औरत तड़प कर खत्म हो गई. मरने के बाद तो सारा जिस्म एकदम नीला हो गया था. सांप काटे तो लाश को जलाया नहीं जाता. तीन मील दूर नदी थी. हम लोगों ने लाश पानी में बहा दी.

मैं भाईयों में सबसे छोटा हूं. तब मैं स्कूल जाता था और वजीफे के पैसे से पढ़ाई करता था. बाप के साथ मेरे ऊपर के चारों भाई खेत में जाते थे. अपनी जमीन पर सब्ज़ी वग़ैरह कुछ लगाई तो जाती लेकिन इतने सारे लोगों के लिए उससे बनता भी क्या है. लेकिन मेरा सबसे बड़ा भाई, डट गया कि मुझे तो पढाई करनी ही है. वह आदमी अनपढ तो था लेकिन इरादों मे था बिल्कुल पक्का. गांव मे मिडिल कर लिया तो सोचा, अब यहीं कुछ करना है. लेकिन भाई ने हौसला बढ़ाया और बरेली चला आया. बरेली आया तो शहर देखकर दंग रह गया. मोटरगाड़ी चलती है, चमचमाती बिजली की रोशनी है, आलीशान कोठियां है. उन दिनों मानराय के कटरे में एक चौधरी साहब हुआ करते थे मशहूर रईस थे. अंग्रेजी हकूमत ने रायबहादुर तक का ख़िताब दिया था. खुद वैसे मिडिल पास भी नही थे लेकिन किताबें बहुत पढते थे और कोई गरीब लडका अगर सामने आता तो पढाई के खर्चे के लिए कुछ-न-कुछ रकम दे देते थे. मैं भी पहुचा. लेकिन मैं तय कर चुका था कि ख़ैरात का पैसा लेना ही नहीं है. रायबहादुर ने सौ रुपए के चांदी के सिक्के देने का हुक्म दिया तो मैने हाथ जोड लिए—अपनी हवेली में कोई काम दे दीजिए, कैसा भी काम हो कर लूगा

चौधरी हुक्का गुडगुडा रहे थे. मेरी बात सुनी तो होठों पर से नली हटाई और मुझे घूरने-से लगे. शायद इस तरह का प्रस्ताव लेकर अमूमन कोई पढने वाला लड़का नहीं आता है.

घूर चुके तो पूछा— अभी उमर ही क्या है तुम्हारी ! क्या काम कर सकते हो ?

—कुछ भी हिसाब मुझे खूब आता है घर के बच्चों को पढ़ा भी सकता हूं.

चौधरी ने गर्दन हिलायी—बच्चों को पढाने के लिए बी. ए. पास मास्टर है. खैर, तुम दो काम कर सकते हो. घर मे रसोई के लिए जितना सामान आता है, उसका हिसाब रखा करना. रसोई का महाराज खुद जाकर सब्जी-वब्ज़ी खरीद लाता है. अब से तुम भी साथ जाकर भाव वगैरह खुद तय करना. और दूसरा काम है मुझे अखबार पढकर सुनाना.

मैंने गर्दन हिलाकर आभार जता दिया—बड़ी मेहरबानी की आपने.

लेकिन चौधरी को यह मुसाहिबी पसंद नहीं आई थी. कुछ कहा तो ख़ैर नही था लेकिन चेहरा देखकर मैं समझ गया था कि रईस जरूर हैं लेकिन ख़ामख़्वाह मक्खनबाजी नहीं चलेगी.

मुझे फिर पिछवाड़े की तरफ़ एक कोठरी मिल गई थी. हवेली का जितना काम

कुलमिलाकर था, उसमें सिर्फ घटे-डेढ़ घटे की जरूरत भर थी. फिर वहा रहकर मै बी. ए. तक पढ़ता रहा. बी. ए. कर लेने के बाद एक स्कूल में जूनियर मास्टर हो गया. स्कूल के मैनेजर चौधरी खुद थे. लिहाजा नौकरी पाने के लिए भागदौड करनी ही नही पड़ी. बी.ए. का इम्तिहान देकर गाव जाने लगा तो चौधरी ने कह दिया था कि नतीजा निकल आए तो मास्टरी दिला देगे.

जब नसीब खुलता है न, रास्ते के पत्थर अपने आप ही कोई हटा देता है. वर्ना मागने से पहले ही नौकरी तो क्या राख भी कहां मिलती हे ? लेकिन जनाब, नसीब भी हरेक का नही खुलता. इसके लिए मेहनत करनी पड़ती है, खून-पसीना एक करना होता है. तब जाके कही अधेरा छटता है.

खैर, मास्टरी मिल गई तो मैंने लॉ का कोर्स भी ज्वाइन कर लिया दिन-भर स्कूल में पढाता और रात को वकालत की पढाई करता. वकालत की पढाई खत्म होने से पहले ही मेरे दो बच्चे हो चुके थे. दिल्ली मे जो बडा लड़का है, वह तो बी. ए. में आते ही हो गया था.

तो जनाब यह रही मेरी स्ट्रगल की कहानी. आपका यह दवाखाना बिल्कुल घर के दरवाजे पर देखा तो सोचा चलकर थोडी बातचीत ही कर लू

वकील साहब को उम्मीद थी कि उनकी कहानी सुन चुकने के बाद यह छोकरा दाद जरूर देगा.

विनायक शुरू मे तो चुप रहा फिर आदमी की सत्ता मे कानून की हैसियत पर एक छोटा-सा सवाल किया.

इस वक्त वकील साब अगर नीम का काढा भी पी जाते तो भी शायद सवाल सुनने के बाद का-सा हाल नही होता. असा, आदमी-वादमी की सत्ता कुछ होती जरूर होगी लेकिन यह शाम का वक्त है, कुछ हल्की-फुल्की बाते सोचा करो वह फिर अपना चमडे का बैग उठाकर नीचे उतर गए —फिर कभी बैठेंगे फुर्सत मे इन शब्दों को वह ऐसे बोले जैसे कभी फुर्सत मे बैठकर इस छोकरे पर कोई बडी न सही एक छोटी-मोटी मेहरबानी तो कर ही देगे.

●● .

वकील साब अगले हफ्ते फिर आए

मैंमिया टोले मे दवा लेने दो-तीन लोग आए थे किसी खास बीमारी की वजह से नही, मामूली सर्दी-जुकाम के लिए बचऊ हलवाई के रिश्तेदार है बचऊ ने शायद डॉक्टर के बारे मे कुछ ज्यादा ही तारीफ कर दी थी. वर्ना इलाज के लिए आए लोग विनायक को कम-से-कम जादूगर जैसा कुछ नही समझते दवा लेकर वे निकल गए तो वकील साब सामने खिसक आए फिर ठीक-ठाक चल ही रहा हे.

विनायक ने गर्दन हिलाई - ठीक-ठाक नही है. सुबह कसगरान से एक मरीज आया था और शाम को ये लोग आए.

वकील हंसे—इट इज ए स्ट्रगल, मैन···.

विनायक ने लालटेन की बत्ती थोडी और बढा दी. तेल भी शायद घट गया था और चिमनी काली-सी हो रही थी जितनी रोशनी इसके बावजूद निकल रही थी. इस कमरे के लिहाज से नाकाफी थी.

—लेकिन एक दिन देखना, लक्ष्मी चरण चूमेगी तुम्हारे. आदमी का चेहरा देखते ही मैं इतना जरूर बता सकता हूं कचहरी मे पचास तरह के लोग आते हैं और कई दफा बडे-बडे फौजदारी वकीलों तक को झांसा देकर चले जाते हैं. लेकिन मुझे आज तक कभी भी धोखा हुआ ही नही. अपनी तारीफ़ में एकसाथ इतनी बातें कह पाने के

लिए वकील साब बहुत ख़ुश हुए.

विनायक को उनकी आंखों की पुतलियां उस पीली रोशनी मे भी साफ़ और नाचती-सी दिखाई पड़ रही थी.

—पीने-वीने का तो शौक नही है ? यहा सारा इंतज़ाम मौजूद है. कोई दिल्ली-लखनऊ जैसा शहर तो यह है नही कि और कुछ नही तो शाम को हवा ही खाने निकल गए. यहां तो गलिया और नाले है. आठ बजने के बाद फिर अपनी तो बोतल ही चलती है.

विनायक ने गर्दन हिलाई यानी आदत नही है.

—अमां, कभी चखकर तो देखो, ज़िन्दगी का लुत्फ आ जाएगा. किसी ज़माने मे अपना शौक शायरी वगैरह का भी हुआ करता था. अपने ज़माने मे सिर्फ दो ही ज़ुबानें थी—उर्दू और अंग्रेज़ी. मेरा वश चलता तो यहा अरबी ज़ुबान ले आता. कभी बैठो तो दो-चार शेर भी सुना देगे.

इतनी बडी दावत के बावजूद विनायक गदगद नही हुआ.

वकील साब ने होंठ बिचकाए—तुम तो मिया, एकदम रूखे हो. शादी के बाद बीवी बिचारी सर धुनती रहेगी फिर एक ठहाका मारा. एक बहुत बडी बात कह पाने के लिए जैसे ख़ुशी हो रही थी.

विनायक ने अदाज़ा लगाने की कोशिश की कि वकील साहब की उम्र क्या हो सकती है. आख़िर ठीक-ठीक कुछ भी समझ पाना मुमकिन नही हुआ. पचपन और पैंसठ के बीच कुछ भी उम्र हो सकती है.

—ख़ैर एक बात मै तुमसे पूछने की सोच रहा था जब आज़ादी नही थी, हज़ारों लोगों ने खून बहाया, कुर्बानिया दी और अंग्रेज को यहा से दुम दबाकर भागना ही पड़ा. वकील साब शायद विस्तार से बताना चाह रहे थे, हालांकि आठ बजने मे सिर्फ़ बीस ही मिनट बचे थे.

—दुम दबाकर कहां भागे ? लेकिन दुम दबाकर ही भागते अगर सशस्त्र क्रांति को अपने ही यहां के लोग हिकारत की नजर से नहीं देखते दरअस्ल टोपीछाप नेताओ की वजह से ही हिन्दुस्तान का यह हाल हो गया.

वकील साब एकदम से दूसरे सिलसिले पर आ गए—वो गियानीसिंह की लडकी है न, एकदम प्रॉस्टीच्यूट है. सुना है उस दिन आप झगडा सुलझाने गए थे. आपको इस मुहल्ले की नब्ज़ पता नही है, इसीलिए गए होंगे मै तो कभी भिडता ही नही. मरो, खपो—जो मर्ज़ी करो, मुझे किसी से लेना-देना है ही नही. वकील साहब अपने होंठों को इस तरह उलट रहे थे जैसे गियानीसिंह के नाम से उन्हे एकबारगी उल्टी आ जाएगी.

विनायक को उनके होंठों का यह उलटना मजेदार लगा.

—ख़ैर, हम लोग इण्डियन पॉलीटिक्स पर बात कर रहे थे. दरअस्ल, इस वक्त जो हाल है, उसमे कुछ पुख्ता और ज़बरदस्त लोगों की ज़रूरत है क्या ख्याल है ? वकील साहब की जिन्दगी का एक बहुत बड़ा मसला जैसे इस सवाल के जवाब पर ही अटका हुआ है.

—हूं.

इतने सक्षिप्त जवाब से वकील साहब की प्यास नहीं बुझती. बोले—आपने ट्रेड यूनियन मे काम किया है, यह मुझे पता है. आख़िर सोचिए कि देखते-देखते इस मुल्क का क्या हो गया. कही भी जाइए करप्शन और गरीबी मिलेगी.

विनायक को लगा इतनी देर से बोलते रहने की वजह से उनका गला सूख गया होगा. पूछा—सुराही का पानी है पिएंगे ?

वकील साब हंसे—देख रहे हैं, टाइम क्या हो गया ? अब तो सिर्फ़ एक ही चीज़ पी सकता हूं. वह उठ खड़े हुए —ख़ैर, किसी और दिन ज़रा फ़ुर्सत मे बैठकर जमूंगा आपके साथ.

बातों को अधूरा छोड़कर ही वह नीचे उतर गए.

●●

अगले दिन सुबह लम्बे क़द का छरहरा-सा एक लड़का आया. विनायक कपड़े का एक टुकड़ा उठाकर अलमारी की सफ़ाई कर रहा था. चेहरा देखकर समझ गया, वह मरीज़ नहीं है और दवा लेने नहीं आया.

उसने अपना नाम बताया —द्वारिका. सामने वाले वकील साहब का बेटा है. बरेली कॉलिज में बी. एस-सी. के फाईनल ईयर में है.

विनायक ने उसका चेहरा हर तरह समझ लेना चाहा. गालों पर दाढ़ी है. सर के बाल कुछ लम्बे ज़रूर है लेकिन बुरे नहीं लगते. आंखों पर मोटे लैंस का एक चश्मा चढ़ा है. यानी आंखों की रोशनी बहुत ही नाज़ुक हालत में पहुंच गई है. पांवों में मामूली कोल्हापुरी चप्पलें हैं और खद्दर की एक मामूली पैंट और कुर्ता पहने है. कुर्ते और पैंट पर लोहा काफ़ी दिन पहले शायद किया गया था. चेहरा गोरा होने की वजह से कुर्ते का जामुनी रंग बहुत अच्छा लग रहा था.

—बैठिए, विनायक ने सफ़ाई का काम स्थगित रखा.

द्वारिका बैठ गया। आपके बारे में काफी सुना है. एक दिन मिलने भी गया था. तब पता चला आप इलाहाबाद चले गए है.

—चला गया था. अब वापस आ गया हू

—अब क्या सोच रहे है ? यहीं रहेंगे ?

विनायक ने सोचा और 'हूं' कहा.

—पापा शाम को आपके पास एक ख़ास मक़सद से आए थे. नवाबगंज तहसील मे उनकी थोड़ी-सी ज़मीन है, एक दुमंजिला घर भी बना हुआ है. पूरे गांव में सिर्फ़ वहीं पर बिजली है.

विनायक हंसा —ज़मीन उनकी है, आप लोगों की नहीं ?

ऐसा कुछ कोई पूछ लेगा, द्वारिका ने सोचा नहीं था.

—घर भी तो आप ही का है. विनायक बोला.

—ख़ैर यह सिलसिला बहुत ज़रूरी नहीं है. द्वारिका बोला—अगली बार विधानसभा का चुनाव पापा वहां से लड़ना चाहते है. कई पार्टीज़ से टिकट पाने के लिए कोशिश करते रहे हैं, और अब फ़ैसला किया कि निर्दलीय उम्मीदवार की हैसियत से चुनाव लड़ेंगे. इसी सिलसिले में आपके पास आए थे.

—मुझे यह सब तो नहीं कहा.

—कहेंगे. कोई जल्दी तो नहीं है. अगली बार शायद बताते.

विनायक चुप हो गया.

—आपको ताज्जुब हो रहा होगा? द्वारिका ने पूछा—वैसे आप क्या सोचते हैं?

—क्यों ? कुछ भी नहीं.

—मैं सोचता हूं. इस वजह से पापा से सालभर से बोलचाल बन्द है. दर-अस्ल, यहां जो लोग जनता को बेवकूफ़ बना रहे है, उनमें से बहुतों को हिन्दुस्तान की हिस्ट्री ही नहीं मालूम है. कुछ लोगों को शायद हिस्ट्री मालूम है लेकिन वे 'हिपोक्रेटस' हैं. लोगों को आराम से धोखा दिए जा रहे हैं.

—आप बी. एस-सी. के फाईनल ईयर में हैं न ?

—आपको शक हो रहा होगा ! द्वारिका हंसा—हम चार-छह दोस्त है, जो कोई सालभर से यह सोच रहे हैं कि मौजूदा हालात का विकल्प क्या हो सकता है. भूखा आदमी रोटी को पहचानता है, वोट का मतलब नही जानता.

—विकल्प आप लोगों ने सोच लिया ?

—यह एक लम्बा प्रॉमिस है. कोई एक ही फैमला तो नही होता. वैसे मै चाहूंगा कि आप हमारे दोस्तों से जरूर मिले.

—मिल लूगा. आप लोग इस प्रॉमिस को लाए गे कैसे ?

—बहुत सीधा सवाल कर दिया आपने.

—नवाबगज तहसील के गावो के अलावा और गाव देखे हे आपने ?

—मै समझ गया कि आपका इशारा क्या है.

—दो सौ वरस की गुलामी के बाद कोई आदमी हक की बात करता ही नही है. कुछ सफेदपोश लोग हैं, जो कहते है. जनता जड नही है···

द्वारिका ने विनायक की बात छीन-सी ली—हिपोक्रेटस हे वे. फिलहाल तो हाल यह है कि जनता जड़ ही है गाव के चौधरियों के अलावा भी जनता होती है, जिन्हें भूख और पेट के अलावा और कुछ मालूम ही नही है.

—दिमाग का यह जो जकडापन है, अग्रेज दो सौ साल तक यही देता रहा है. अब इसे उखाड फेकना शायद पहले से और भी मुश्किल हो गया.

—क्यो ?

—निहित स्वार्थ. जो स्वाथ एक बार कायम हो गया, वह अपना घर इतने आराम से छोड तो नही देगा. फिर भी लोग, जो आग की तरह है, कुछ-न-कुछ कर ही रहे है. एक बार वाकई आग बन सको तो फिर पीछे मुडकर घर की तरफ मत देखना. मुमकिन है, घर फिर कभी लौट ही न सको. या तुम्हारे जिस्म से सारा खून निकाल लिया जाए.

—दरअस्ल, यह लोग दिमाग की ऐय्याशी के लिए रिवोल्यूशन की पासीबिलिटी पर धुआधार भाषण देगे फिर किसी नेता को माला पहनाकर उससे भी साठ-गांठ जोड़े रहेगे. कलकत्ता हो या दिल्ली या बरेली—कही भी शायद कोई बुनियादी फर्क नही है.

—दैट्स राईट. पहले बरेली कालेज मे एक प्रोफ़ेसर बैनर्जी हुआ करते थे. हम लोग कुछ लडके इन्ही मामलों पर उनसे लगातार बहस किया करते थे. वे सब दोस्त डिस्ट्रिक्ट बोर्ड मे या म्यूनिसीपलैटी मे या बैंक वग़ैरह मे नौकरी कर रहे है और बीवी-बच्चों के साथ मौज मे रह रहे हैं.

द्वारिका हसा—यह होता ही है. अब कभी शायद उन्हे रोमांटिसिज्म की तरह याद आएगा कि वे पालीटिक्स, क्रांति वगैरह के बारे मे सोचा करते थे.

- शायद आपके दोस्तों मे से भी कुछ बाद मे ऐसी ही मौज मे डूब जाएं.

द्वारिका शायद थोडा आहत हुआ.

—आपको इसकी सभावना पर यकीन नही आता होगा ? विनायक ने पूछा.

—ऐसी बात नही है यकीन आता है और मुमकिन है कभी ऐसा हो ही जाए. लेकिन कुछ और नए दोस्त भी बाद मे शरीक होंगे, जिन्हें हम फिलहाल जानते ही नही है. हो सकता है, दो या दस या बीस साल तक इसके लिए इतजार करना पड़े. इतनी बडी बात के लिए यह इतजार छोटा-सा ही होगा.

—एक्सलेंट! विनायक लगभग उछल-सा पडा—कलकत्ते के कुछ अडरग्राउंड लड़कों से इलाहाबाद मे एक दफा मेरी मुलाकात हुई थी. वे सारे के सारे लड़के कम्प-

टीशन मे बैठकर आई. ए. एस. बन सकते थे. लेकिन जो रास्ता उन लोगो ने अपनाया था, उसमें किसी भी वक्त बगैर कोई निशान छोडे गुम हो जाने के चान्सेज थे.

मैंने उन लोगो से कुछ सवाल किए थे. आखिर सडक के किनारे जो पत्थर की मूर्तिया है, वे तोडी क्यो गई ? विवेकानद या भगतसिह की मूर्तिया तोडकर आखिर जनता को आप लोग समझा क्या रहे है ?

इसका बडा सीधा-सा जवाब एक लडके ने दिया था—विवेकानद और भगत-सिंह से हमे इन्सपीरेशन मिलता है और ऐसे लोगो के लिए हमारे मन मे पूरा आदर है. लेकिन जिस शहर मे आदमी के रहने के लिए जगह नही है, वहा पत्थर की मूर्तियों के लिए इतनी जगह क्यों हो ? जनता भावुक है. ऐसी मूर्तिया देखकर उसे याद ही नही रहता कि घर मे शायद शाम के लिए आटा या चावल नही है. स्यालदा स्टेशन मे जो बच्चा पैदा हुआ, वह देखता है कि उसके सर के ऊपर कोई छप्पर नही है और पेट पालने के लिये जिस औरत ने उसे पैदा किया, उसे हर रात किसी-न-किसी के साथ सोना पडता है. उनके लिए ये पत्थर आखिर क्या कीमत रख सकते है ?

दरअस्ल, हम लोगो को याद ही नही रहता कि इस सेटअप के साथ हमारा अपने से, घर मे, दोस्तों से, मा-बाप से क्या रिश्ता होना चाहिए ! हमे याद इसलिए नही रहता कि इसे भूल जाने मे ही मौज है. एक दफा एक लडके ने अपने जमी-दार बाप की गर्दन काटकर घर के सामने टाग दी थी यह खबर अखबारो मे छपी तो तहलका-सा मच गया. इससे पहले किसी को यकीन नही आया था कि सचमुच क्रांति मे यकीन रखने वाला कोई लडका अपने जुल्मी बाप का कत्ल इस बात पर कर देगा कि औरो के लिए वह दहशत है

—विनायक ने अपनी आखे द्वारिका की आखो मे मिलाई—यू नो, क्राति के लिये रिश्ते का, निजी बातो का कोई महत्त्व नही होता क्राईस्ट और हिन्दुस्तानी योगियों की जिन्दगी का वह हिस्सा बहुत इन्सपायर करता है. जब हम देखते है कि लोकमगल के लिए वे कण्डेमनेशन सहते है, कई तरह की तकलीफ़ें उठाते है लेकिन रास्ते से हटते नही है

द्वारिका सजीदा हो गया

—दरअस्ल, क्राति के लिए कोई हद नही होती है. किसी भी हद तक उसे जाना पड सकता है और जरूरी नही है कि वह कामयाब होकर ही लौटे. बहुत मुम-किन है, आप लोग भी नाकामयाब हो जाए और वापस लौट भी न सके. ऐसे नाका-मयाबी के साथ लौटने की जरूरत कोई क्रातिकारी महसूस ही नही करता.

—हम लोग अक्सर गाव जाते है. कोई खास रिस्पास तो नही मिलता लेकिन दो-चार सालों मे उम्मीद है, कुछ फर्क जरूर पडेगा.

—गुड. जो आदमी आज जड है और जो अपने और गाव के नाम के अलावा खास कुछ और नही बता सकता, उसके जहन मे अगर यह बात बैठ गई कि हक उस का भी कुछ है, पूरा मुल्क बाढ के पानी की तरह एक बार अपने को ही तोड-मरोड कर रख देगा. आदमी के अदर ताकत है, सिर्फ इस बात का अहसास होते ही देखना कैसी आग लगती है ये बाते लोग, दरअस्ल, समझना नही चाहते. दिमाग की गुलामी इतनी जबरदस्त है कि फटा हुआ कच्छा पहनकर जमीन जोतते रह सकते है लेकिन एक बार नगे होकर एक नया कच्छा पाने की हिम्मत नही कर सकते.

—एक दफा हम लोग एक ठाकुर के यहा गए इलाके का मशहूर लठैत किस्म का आदमी है. बहुत बडी खेती है. खेती के अलावा गाय-भैसे भी पचासेक है हर सुबह उसके आदमी बरेली आकर दूध बेच जाते है. खैर, हम लोग ठाकुर के यहा गए

थे. अंदर की हवा का पता करने. देखा, वहां जो इन्तज़ाम है, उससे किसी एक आदमी का तो क्या, पूरे खानदान का अगर कत्ल हो जाए, लाशों का पता तक नही चलेगा. कई-कई लठैत जमे हुए थे. ठाकुर ने उन लोगों की बड़ी तारीफ़ की—लोग कहते है, कुत्ते पर यक़ीन करो लेकिन मै आदमी पर भी करता हूं.

मैं तो दंग रह गया था.

हम लोग पाँच लड़के थे. हम मे एक लड़का था नंददास. नंददास ने मेरे कान में फुसफुसाया—भूखे भेड़िए से भी ज्यादा ख़तरनाक है ये. नंददास की जानकारी गांव के ही आदमी होने की वजह से हम लोगों से कहीं ज्यादा थी.

ठाकुर को हम लोगों पर शक पड़ गया था. कुछ कहा तो नहीं लेकिन हम समझ गए. जहाँ भी गए, कोई-न-कोई पीछा करता-सा लगा. हम लोगों ने वैसे अपनी आईडेण्टिटी नहीं छिपाई थी. कहा था, शोशल-वर्कर है और कालेज में पढ़ते हैं.

चौधरी ने गर्दन हिलाकर क्या जताया. कुछ समझ नहीं पाए हम लोग. घंटा-डेढ़ घंटा बातचीत हुई थी. निकलकर बाहर आए तो तय नही कर पा रहे थे कि अब कर क्या सकते है. सामने ही ठाकुर का खेत था. जमीन जोती जा रही थी एक आदमी को बुलाकर कहा, यह जमीन तुम्हारी हो सकती है.

थोड़ी देर बाद एक और आदमी को बुलाया और वही बात कही. यह आदमी चेहरे-मुहरे मे थोड़ा चालाक-सा लग रहा था. वह पंप चलाने का काम कर रहा था. इस वजह से चेहरे पर एक घमण्ड की छाप-सी थी.

बिचारा मेरा चेहरा देखता रहा फिर चला गया. अगर मैं उसे अफ्रीका के जंगल के किसी नए जानवर का नाम बताता तो भी शायद मुझे ऐसे ही घूरता रहता.

वह भी हम लोगों को घूरता रहा लेकिन उसका तरीका अलग था. खोद-खोद कर जैसे वह एक-एक के अंदर की सारी बातें उघाड़ लेना चाहता था. मैं समझ गया, वह हम लोगों का यकीन क़तई नही कर रहा है. शुरू में शायद उसे लगा था कि हम लोग चकबन्दी वाले है और कुछ ले-देकर थोड़ा-बहुत हेरा-फेरी कर भी सकते है. लेकिन बाद में वह समझ गया कि उसका ख्याल गलत था.

मैंने पूछा, यक़ीन नही आ रहा होगा तुम्हें ?

वैसे यह सवाल पूछने की जरूरत नही थी. उसे सिर्फ यकीन ही तो नही आया था.

खैर, वह बोला— वोट माँगने आए हो ? लेकिन जे जमीन ठाकुर की है. बड़े-बड़े मलीस्टर आते हैं ह्यां.

—कोई बात नहीं. मैं बोला.

—तुम्हारे पास भी तो गुजारे लायक जमीन हो सकती है. आख़िर ठाकुर के पास बीस साल पहले सिर्फ़ एक लगोटी-भर थी. तुम्हारे पास जो लगोटी थी, आज तुम्हारी दौलत भी उतनी है. ठाकुर के पास आख़िर इतना खेत आसमान से टपककर तो नहीं आया. छीन के ले सकोगे अपने हिस्से की जमीन ?

छीनने की बात पर उस आदमी को लठैतों के क्रूर चेहरे शायद याद आ गए थे. मैं समझ गया था कि वह बुरी तरह डर गया है.

खैर, जाते-जाते बोल गया था—पूरी बरेली-भर में मशहूर है ठाकुर. लेकिन तुम शायद कुछ जानते ही नाय इनके बारे में.

—दिस वाज अवर फर्स्ट एक्सपीरिएंस. द्वारिका बोला—हम लोग जितना कुछ कैलकुलेट करके गए थे, वहाँ जाने के बाद लगभग माहौल वैसा ही मिला.

विनायक हंसा—इसे तो मैं एक मीठा तजुर्बा ही कहूंगा. वकील साहब को मालूम

है यह सब ?

—सब तो ख़ैर नहीं मालूम, कुछ मालूम ज़रूर हो गया. वह चुनाव लड़ने की सोच रहे है और हम लोग लोगों से कहते हैं, चुनाव वग़ैरह की बात बाद में देखी जाएगी पहले अपने हक़ छीनो. वह कहते हैं, यह जवानी का जोश है. थोड़े दिनों में ठंडा पड़ जाएगा.

—यही तो समझना बहुत मुश्किल है कि कुछ पेशेवर टोपी-छाप नेता हैं जो प्रजातंत्र और अतीत की परंपरा और देश की महिमा की बात करके लोगों को असली मसले से दूर हटाते हैं. यह बात हम लोग समझते हैं, अपने-अपने हिसाब से कुछ कर रहे हैं लेकिन लगता है, वजह चाहे जो भी हो, हम लोगों ने बहुत लम्बा खींच लिया यह सब.

—जो लोग चालाक हैं, संशोधन की बात करते है, यानी मौजूदा हालत में कोई सिस्टम अगर सड़ गया है, उसका संशोधन कर लो. बी.ए., एम. ए. पास जनता इतनी-सी बात से बाग़-बाग़ हो गई कि कैसा क्रांतिकारी ख्याल है. हम अगर इसे पूरी तरह उखाड़कर नए सिस्टम की बात करते हैं तो मज़ाक सूझता है उन्हें. कहते है—माउत्से तुंग और लेनिन का ताऊ पैदा हो गया.

विनायक एकदम से संजीदा हो गया.अचानक द्वारिका से कैसे मुलाक़ात हो गई. वह समझ ही नहीं पा रहा था. जैसे इसी लड़के के लिए वह बरसों से इन्तज़ार में गली-कूचों की धूल-मिट्टी छानता रहा है.

बाहर, बिहारी के चबूतरे पर दो रिक्शे वाले ताश के पत्ते फैला रहे थे. बिहारी बारह बजे के बाद अपने सौदे के साथ आता है. तब तक के लिए इस पर बैठकर लोग ताश खेलते है या आती-जाती जवान लड़कियों के उभारों को घूरते रहते है. कोई ज्यादा मस्त किस्म का आदमी हुआ तो सीटी भी मार लेता है बाँकेलाल का एक बेटा सुबह के वक्त यहां अक्सर नज़र आता है. आज वह नहीं है और सिर्फ़ दो रिक्शे वाले होने की वजह से चबूतरा एकदम सूना-सा लग रहा है.

—कुछ सोच रहे हैं आप ? द्वारिका ने पूछा.

—हां, अपने इर्द-गिर्द के कंट्रास्ट का सोच रहा था. कभी-कभी लगता है, आग लगने में अभी काफ़ी वक्त है. शायद सौ बरस तक भी इन्तजार करना पड़ जाए.लेकिन कभी-कभी लगता है, आग अगर लग गई तो एक-एक पत्ता उसमें अपने को जला डालने के लिए बेचैन हो जाएगा.

द्वारिका हंसा—अब लगता है, आग लगेगी. हम लोगों को ताज्जुब नहीं होना चाहिए अगर देखें, गियानी सिंह या बांकेलाल चार्जमैन जलने के लिए तैयार खड़े हैं. लेकिन कोई ज़रूरी नहीं है कि ऐसा हो ही.बिहारी के गोलगप्पे उन्हें कहीं ज्यादा आकर्षक भी लग सकते हैं, बनिस्बत हम लोगों के इरादे के.

विनायक बोला—मैं भी लगभग यही सोच रहा था. ऐसा कीजिए कि एक स्टडी सर्कल बना लीजिए. हम लोग आपसी समझ के लिए इतिहास और इकोनॉमिक्स पर बहस कर सकते हैं. लोगों तक पहुंचने से पहले एक-एक आदमी को सामने का सब-कुछ अच्छी तरह मालूम होना चाहिए.

द्वारिका सहमत हुआ—मैं भी सोच रहा था.

—दर अस्ल, इस रास्ते पर बढ़ने से पहले आदमी को अपने आपको ही जाँच लेना होता है. हज़ार तरह के लालच बाद में आ सकते हैं. बीच रास्ते में इन्हीं में से किसी वजह के लिए बैठ जाने से तो अच्छा यही है कि मैच्योर होने तक आदमी इन्तज़ार करे.

द्वारिका बोला—पहले हम दसेक लोग थे. छह लोग बरेली कालेज मे पढ़ते थे, एक लेक्चरार थे, एक लड़का टाउनहाल मे एक केमिस्ट के यहाँ काम करता था और दो लोग रेल्वे के दफ्तर मे क्लर्क थे. अब सिर्फ पाच लोग रह गए है.

— साल-भर मे अगर फिफ्टी परसेंट लोग ड्राप कर गए है, तब तो आप लोगो का अचीवमेंट बहुत अच्छा है. अक्सर बाद मे सिर्फ दो लोग रह जाते है या दो भी नही रहते बिहारीपुर के ढलाव के बाद भगियो की जो बस्ती है, वहाँ एक लड़का है—बालक राम थोडा उसे भी ट्रेन-अप कर लीजिए, अच्छा कैडर बन सकता है वह लडका.

द्वारिका उठ खडा हुआ जल्दी ही एक दिन आपके घर आएगे हम लोग अपने यहा आपको बुला तो नही सकता

—वकील साब दावत दे गए है.

द्वारिका समझ गया. पूछा—बोतल वाली ?

विनायक हस पडा.

द्वारिका हस नही सका. होठ पहले खुले-से थे, अब बन्द हो गए. चेहरा बहुत गभीर हो गया.

मलूकपुर की तरफ से दो-तीन मरीज आ गए थे

द्वारिका नीचे उतर कर सडक पर चला गया

●●

मूलचद का कत्ल हो गया

मूलचद जैसे आदमी का कोई बाल भी बाँका कर सकता है, ऐसा और तो और मलूकपुर थाने वाले भी कभी नही सोचते थे पहाड जैसा आदमी था हिन्दू हो या मुसलमान, मूलचद के नाम से हरेक के चेहरे पर हवाईया उडने लगती थी ऐसा कभी नही हुआ कि उसने खामख्वाह किसी को परेशान किया हो. लेकिन उसकी आखे जैसे हमेशा आग उगलती-सी रहती और सामने वाला आदमी नजर मिलाने तक की हिम्मत नही करता. देसी ठर्रे का ठेका है, सो पीने वालो मे जनखा भी होता है और मशहूर बदमाश भी. लेकिन बदमाशो की भी क्या मजाल जो मूलचद के ठेके पर आकर कोई फसाद करे !

एक दफा बजरिया पूरनमल से जमाल उस्ताद आया था. यह इलाका वैसे उसका नही है लेकिन मूलचंद के ठेके की मकबूलियत इतनी फैली है कि दूर-दूर से लोग पीने आते है दूसरे ठेको मे लोग कम या ज्यादा पानी जरूर मिला देते है, लेकिन मूल-चद का ठेका है कि सारे काम खरे. बोतल लेने के बाद चाहे उसमे पेशाब मिलाकर पियो लेकिन ठेके मे जो माल मिलेगा उसमें बूँद-भर भी मिलावट निकाल दो तो मूलचद से झाडू लगवा लेना.

जमाल उस्ताद का इलाका है बजरिया पूरनमल से लेकर गुलाब नगर, गदा नाला तक गंदे नाले की तंग गली मे उसने ऐसे-ऐसे कारनामे किए है कि लोग दिन मे भी दूसरी गलियो से निकल जाना बेहतर समझते है लेकिन जमाल उस्ताद भी है

अजीब आदमी. सामने मिलो तो कमर झुकाकर, हाथ जोड़कर 'राम-राम' कहेगा. माथे पर पीले चंदन का एक टीका भी लगाता है. गंदे नाले के साथ जो घण्टे वाला हिन्दुओं का मंदिर है, उसमे हर सुबह जमाल फूल लेकर पहुचता और आधा घण्टा चुपचाप आंखें मूंदे बैठा रहता यह मदिर वैसे है हनुमान का लेकिन घण्टे वाला मदिर इसलिए कहलाता है कि इसके ऊपर गिरजे की तरह एक ढाई मन का पीतल का घण्टा टगा है. जमाल उस्ताद को कोई मदिर मे देखता तो यक़ीन नही करता कि औरतो के साथ बेइज्ज़ती से लेकर छुरा दिखाकर जेब खाली करवाना उसके लिए मामूली बात है. पहले यह काम जमाल खुद ही करता था. अब शागिर्द लोग करते है नई बस्ती मे रेल लाईन के किनारे किसी जमींदार का तीन कमरों का एक छोटा-सा मकान और बगीचा पड़ा था. उसने खरीद लिया और पिछले पांचेक साल मे वही रह रहा है.

गदे नाले के इस इलाके से लेकर नई बस्ती का फासला दो मील से कम का नही होगा लेकिन हर सुबह मदिर के सामने या अन्दर वह दिखाई ज़रूर पड़ जाता. कभी किसी ने नही देखा, जब औरतों की तरफ उसने नजर भी उठाई हो या मर्दों के साथ बदसलूकी से पेश आया हो. लेकिन पूरा इलाका जानता है कि जमाल उस्ताद के कार-नामों की कोई मिसाल ही नही है

सुनने मे आता है, बड़े बाजार के जो दुकानदार है, वे हर महीने भेंट की तरह कोई बधी हुई रकम उसके यहां पहुँचा देते है. जमाल उस्ताद वैसे किसी के सामने हाथ नही फैलाएगा लेकिन भेंट पहुँचाने वालों को मालूम है कि यहां अगर कोई कंजूसी कर गया तो बाद म चाहे उसके सामने जिस्म मे हड्डियां भी निकालकर रख दो, वह बीड़ी का धुआं उडेलकर सिर्फ हँसता रहेगा जमाल उस्ताद की यह हसी ही सबसे ज्यादा खतरनाक है. कुतबखाने वाले यह बात अब अच्छी तरह जान गए है. कोई बेव-कूफ से बेवकूफ दूकानदार भी कम-से-कम इस मामले मे अब इतना होशियार हो गया है कि महीने की पहली तारीख आई नही और भेट पहुचा आया.

ऐसे रुतबे वाला आदमी अव्वल तो किसी ठेके तक जाकर लल्लू-पंजू के साथ गटकता नही है और अगर वह खुद चलकर पहुचता है तो उसकी आवभगत तो आखिर की ही जाती. जमाल उस्ताद मलूकपुर की भट्ठी मे घुसा और एक किलो तली हुई मछली और बोतल का आर्डर दे दिया. शाम का वक्त था. दूकानदारी इसी वक्त सत्तर फीसदी होती है. मूलचंद कोने में बैठकर ट्रांजिस्टर बजा रहा था. यह उसकी आदत है. ठेके में आने के बाद दस मिनट तक तो अन्दर-बाहर सब-कुछ देखता-भालता रहेगा फिर एक कुर्सी उठाकर आराम मे बैठ जाएगा. ट्रांजिस्टर उसके साथ लगभग हमेशा ही लटका रहता है. यहां आकर उसकी आवाज़ ऊँची कर देगा और आराम से सुनता रहेगा.

जमाल उस्ताद आया तो थोड़ी-सी खलबली ज़रूर मच गई थी लेकिन मूलचंद कुछ इस तरह बैठा रहा जैसे मक्खियां तो आती ही रहती हैं. जमाल ने उसकी तरफ देखा और आंखें घुमा लीं. फिर कुर्सी खीचकर बैठ गया. जेब में से महंगी सिग्रेट का डिब्बा निकाला और सिग्रेट सुलगा ली. यहां ज्यादातर लोग बीड़ी पीते हैं, बहुत हुआ तो चारमीनार तक पहुंचते हैं. इससे आगे कोई नहीं जाता. जमाल की भी आदत बीडी की ही है लेकिन शाम को कभी अगर सैर के लिए निकलता तो सिग्रेट का एक डिब्बा जेब में डाल लेता.

मछली की पकौड़ियां सामने आ गई तो उसने सिग्रेट फेंक दी. इतनी महगी सिग्रेट कोई फेंक दे तो लालच देखने वालों के मन में आ ही सकता है. सामने जहा

सिग्रेट गिरी थी, गोविन्द खड़ा था. वह झुका और उठाने लगा.

लेकिन जमाल उस्ताद ने रोक दिया—क्या करते हो मास्टर ? सिग्रेट पीनी है तो शौक से पियो. उसने फिर पूरा डिब्बा उसकी तरफ फेंक दिया.

कनखियो से मूलचद ने यह देख लिया.

जमाल उस्ताद ने प्लेट मे से मछली का बेसन म डुबोया हुआ एक टुकडा उठाया और उलट-पलटकर देखने लगा. जैसे सोच रहा था, इसका इस्तेमाल वाकई खाने के लिए किया भी जा सकता है या नही.

इस बीच उसने मूलचद को भी घूर लिया था. बच्चू, ठेके मे बैठ के चाहे जित्ती मस्ती कर लेव लेकिन जिस दिन जमाल उस्ताद से पाला पडेगा, लगोटी खोल कै भागोगे.

आखिर मे उसने मछली का टुकडा मुह मे डाल ही लिया. डाल लिया तो मुह ऐसे बिचकाने लगा, जैसे अभी उल्टी कर पाने से थोडी तसल्ली होती. प्लेट को उसने तलने वाले की तरफ खिसका दिया. ले भई, कुत्तन को हमारी तरफ से खिलाय देना. आदमी नाय खा सकता जे सब.

जमाल तय नही कर पा रहा था कि ये बाते मूलचद से कही जा सकती है या नही. आखिर मे गर्दन मोडकर उसे थोडा-सा देख जरूर लिया था. लेकिन बात आगे नही बढाई. आखिर मे बोतल को हाथ मे उठाकर उसी तरह देखता-भालता रहा, जिस तरह थोडी देर पहले मछली की पकौडी देखी थी. गिलास भी एक जरूर साथ था. लेकिन जमाल को कभी पीते वक्त ऐसी बाबू मार्का चीजो की जरूरत पडती ही नही. उसने बोतल का ढक्कन अलग किया और मुह म थोडी-सी उडेल दी. पफ्हा···फिर सारा-का-सारा मुँह बिचकाकर बाहर निकाल दिया.

खिडकी पर बैठकर जो आदमी बोतले बेच रहा था, वह जमाल की दाहिनी बाजू की तरफ था. जमाल ने अपनी गर्दन थोडी-सी मोड ली. क्यो मास्टर, घोडे का मूत बेचते हो, हा ?

खिडकी वाला आदमी हक्का-बक्का रह गया था. शायद समझ गया था कि मूलचद ठेकेदार अब उठने ही वाला होगा. और एक बार अगर उठ गया तो तब तक नही बैठेगा, जब तक दूसरे आदमी का पेशाब न निकल जाए.

जमाल अब उठने लगा. जेब से डिब्बा निकालकर एक और सिग्रेट सुलगा ली—अच्छा धन्धा है मास्टर. लोगन को खूब बेवकूफ बनाय लेव. मैं वैसे घोडे का मूत कल्ली की जगह कभी नाय खरीदता लेकिन तू भी खूब याद करेगा कि कोई बोतल छोड गया और पैसा नाय लिया.

अब वह निश्चिन्त हो सका था कि उसकी आवाज असली जगह पहुच सकी है.

मूलचद उठ खडा हुआ. ट्राँजिस्टर हाथ मे था, उसे कुर्सी पर रख दिया और कुर्ते की बाहे चढा ली. ज्यादा बातचीत करने की आदत उसकी कभी नही रही है. वह सामने आया और जमाल के गाल पर एक झापड उतार दिया. इतनी बडी तौहीन तो थाने का दरोगा भी नही कर सकता.

झापड खाकर जमाल थोडा हिल तो गया था लेकिन अपनी जगह पर ही डटा रहा. चेहरा पत्थर का-सा जरूर हो गया था.

— अब से घोडे का मूत ही पीते रहियो ! मूलचद ने इत्मीनान से कहा था.

इत्तफाक है कि जमाल के पास इस वक्त छुरा तो क्या एक चाकू भी नही है. बिना छुरा साथ रखे वह कही भी नही निकलता. लेकिन आज इतनी बडी गलती

कैसे हो गई, वह समझ नहीं पा रहा था. छुरा हाथ में होता तो मूलचन्द को अपने चौदह पुरखों तक के लोगों के नाम अपने आप ही याद आ जाते. जमाल उस्ताद के हाथ में छुरा होने का मतलब क्या हो सकता है, इतना कोई कमर नचाने वाला मिरासी भी बता देगा.

ख़ैर, छुरा न सही, बाजुओं में जंग नहीं लग गया. जमाल ने सामने की कुर्सी उठाई और मूलचन्द की तरफ़ उछल पड़ा कुर्सी के कोने का एक टीन थोड़ा निकलता हुआ था. उससे मूलचंद के गालों पर थोड़ी खरोंच आ गई थी. खून कोई खास तो नहीं निकला था लेकिन चमड़ी ज़रूर छिल गई थी

मूलचंद ने हाथ से कुर्सी थाम ली और जमाल के पेट पर लात जमा दी. नतीजे में जमाल गिर पड़ा. मूलचंद ने इसके बाद उसके सर पर एक भारी-सी ठोकर लगा दी. बस, कुछ और नहीं किया. दस मिनट तक जमाल आंखें बन्द किए चुपचाप पड़ा रहा. दिमाग की सारी परतें एकदम से झनझनाने लगी थी.

मूलचंद फिर वापस अपनी कुर्सी पर आकर ट्रॉजिस्टर सुनने लगा.

आख़िर में जमाल उठा और बाहर निकलकर रिक्शे पर बैठ गया. जो लोग अब तक तमाशा देख रहे थे, समझ नहीं पा रहे थे कि यह सब हो क्या गया.

●●

पहाड़-जैसे उस आदमी के कत्ल होने की खबर फैली तो मलूकपुर थाने वालों ने भी यकीन नहीं किया था. थाने का दरोगा पिछले तीन सालों से यहाँ है और ठेके के अन्दर या बाहर सौ-दो सौ तमाशे देख चुका है तमाशे इसलिए कि यह मूलचद ठेकेदार अपने आगे किसी को भी मक्खी से ज्यादा कुछ और नहीं मान सकता. दरोगा बुजुर्ग आदमी है रिटायर होने में कोई डेढ़ेक साल और बाकी है. एक-आध दफा उसने मूलचद को समझाने की भी कोशिश की लेकिन वह ऐसे घूरता रहा कि जैसे उम्र का ख्याल करके माफ कर रहा है दरोगा फिर चुप हो गया था.

कई दफा शाम को जानकी को लेकर मूलचद हवाखोरी के लिए चौधरी तालाब की तरफ निकल जाता है उधर का इलाका बिल्कुल अलग-सा है शहर का शोर-शराबा नहीं है और जब बगल की पटरियों से रेलगाड़ी गुजरती है या कलट्टरबकगंज की फैक्ट्री का भोंपा सुनाई देता है तो लगता है बाजार के बीच पेड़-पौधों का एक झुरमुट-सा है.

चौधरी तालाब में एक तालाब जरूर था लेकिन अब सिमटकर पोखरा-सा रह गया है. बरसात के वक्त थोड़ा पानी इकट्ठा हो जाता है लेकिन होली के बाद बस घुटनों तक पानी रह जाता दिन के वक्त अहीर लोग इधर भैंस चराने आते तो कीचड़ में भैंसें गोता लगाती रहतीं.

शाम होने के बाद अंधेरा हो जाता और इधर कोई आता नहीं है. तालाब से पश्चिम की तरफ अमरूद का बाग है सर्दियों में फिर भी बाग की पहरेदारी में लोग रहते हैं. लेकिन गर्मी में तो एकदम सन्नाटा रहता है. कोई मालगाड़ी गुजर जाती तो थोड़ी-सी रोशनी फैलती और लगता चौधरी तालाब किसी जगल के बीच का इलाका नहीं है.

रेलवे के लोगों में से जो लोग इजन का कोयला इकट्ठा कर लाते है, उन लोगों का ड्राइवर के साथ हिसाब-किताब रहता और गाड़ी जब चौधरी तालाब से होकर गुजरती है, ड्राइवर भट्ठी का पेंदा थोड़ा अलग कर देता. ढेर-सारे कोयले फिर पटरियों के बीच आ जाते. कनस्तर में भरकर तालाब का पानी लाकर वे लोग फिर उन जलते हुए कोयलों को ठंडा करके अपने बोरों में भर लेते है. लेकिन यह सब हमेशा नहीं होता

है. ड्राइवर को भी आख़िर नौकरी करनी है. दो-चार रुपयों के लिए कहीं अफ़सर ने चार्जशीट थमा दिया तो बचाने कोई नहीं आएगा. जब-जब मौका मिलता है, तभी ऐसा करता है.

मूलचद को इन कोयला बटोरने वालों पर जैसे रहम-सी आ जाती. आदमी न हुआ जैसे जानवर हो गया. लेकिन मूलचंद भी अपने गुज़रे हुए दिन याद करता है तो अब यकीन नहीं आता. कायदे से उसे भी कोयला बटोरने वाला एक आदमी होना चाहिए था. लेकिन उसने तो अपनी तक़दीर खुद अपने ही हाथों से बना ली थी. जहां भी गया सीना तानकर गया और भिखमंगों की तरह मिमियाकर किसी से नहीं बोला. मेहनत-मज़दूरी की, खून-पसीना एक किया लेकिन इज्ज़त नहीं बेच दी. मूलचद एक बात जानता है. हर आदमी को मौक़ा कम-से-कम एक बार ज़रूर मिलता है. हौंसला दिखाकर जिसने उसका इस्तेमाल कर लिया, बाज़ी मार गया. वर्ना सडक पर खोंमचा लगाकर मुंगफली बेचो या स्टेशन जाकर भीख माँगो.

मेहनत-मजदूरी से जितना पैसा इकट्ठा किया था, सब लगाकर साझे मे एक चक्की ले ली. यह रामपुर की बात है. चक्की चल निकली लेकिन जिसके साथ साझा था, उसका हार्टफेल हो गया. आदमी वैसे दमे का मरीज था. सुनने मे आता है कि दमे का मरीज तक़लीफ झेलता है लेकिन आसानी मे मर नहीं जाता. खैर, वह मर गया तो दूर-दूर से रिश्तेदार हक मागने आने लगे. बूढा दुनिया मे अकेला आदमी था, मूलचद को सिर्फ इतना ही मालूम था. रिश्तेदार वैसे आदमी के होते ही हैं लेकिन उसने कभी किसी को आते-जाते नहीं देखा था.

शुरू में उसने सोचा था, जो भी आएगा सौ-दो सौ दे-दिवाकर विदा करेगा. लेकिन बाद मे इरादा बदल दिया और कोई भी सामने आता तो गालियो मे बात शुरू करता. शुरू मे सिर्फ चार लोगो को सौ-सौ रुपए दिए थे. अब अफसोस होने लगा कि खामख्वाह इतने सारे पैसे निकल गए. गालियों का ऐसा असर हुआ कि लोग फिर नही आते थे. पूरी चक्की का ही मालिक वह बन गया था.

अब मूलचंद को रुपए का ज़ायका पता हो गया. अक्सर बरेली आना-जाना होता था. मलूकपुर के ठेके की नीलामी हुई तो बोली में एक मोटी रकम देकर उसने ठेका ले लिया. इस वजह से चक्की जरूर बेच देनी पडी थी और यार-दोस्तों से क़र्ज़ में कुछ पैसे लेने पड़े थे लेकिन मूलचद समझ गया था कि साल-भर का ठेका इतनी रक़म तो खैर बटोर ही लाएगा कि दस चक्की भी उसके सामने कुछ नहीं होंगी. हुआ भी वही. मूलचंद ठेकेदार के सामने अब झुकने के लिए दुनिया हाज़िर है.

कभी-कभी मूलचंद जानकी से अपने गुज़रे हुए दिनों की कहानी सुनाता है. जानकी को जैसे यह सब यकीन नही आता. फिक्क से वह हंस पड़ती और मूलचंद तालाब के किनारे बैठकर उसे चूम लेता.

चौधरी तालाब पर ही मूलचंद की लाश मिली थी. इस हादसे के साथ एक और हादसा जुड़ गया था. जानकी का कहीं पता नहीं चल रहा था. तांगा जब खन्नो मुहल्ले से बाहर निकल रहा था, लोगों ने देखा था कि मूलचंद के साथ जानकी भी बैठी है. उसने माथे पर बड़ी-सी बिंदिया लगायी थी और कमर में चांदी की करधनी पहन रखी थी. होंठ पान की पीक से रंगकर लाल थे. कई दफ़ा लोगों ने देखा है कि मूलचंद के गालों पर उन होठों के दाग हैं.

चौधरी तालाब का इलाका कठघर थाने के हिस्से में आता है. इधर ज्यादातर लोग मुसलमान हैं और बढ़ई, राज, मोची वग़ैरह का काम करते हैं. कुछ लोग बीड़ी फैक्ट्री में बांधने का काम तनख्वाह पर भी करते हैं. तनख्वाह पर काम करने की वजह

से वे औरों से कुछ बेहतर समझे जाते हैं. थोड़े-बहुत झगड़े-फसाद जरूर यहां होते रहते हैं लेकिन कोई बहुत बड़ी वारदात कभी नहीं हुई. तिस पर यहां कत्ल हो गया तो दरोगा घबरा गया.

शिनाख्त के लिए मलूकपुर थाने का दरोगा विनायक को लेकर पहुंचा. दरोगा ने भगीरथ को भी चलने के लिए कहा लेकिन खून-खराबे की बात सुनकर वह अचकचाने लगा. उस वक्त गोबिन्द वहां बैठा था. दरोगा के सामने तो खैर वह चुप रहा लेकिन थोड़ी देर में बहुत खुश हो गया था. मूलचंद ने उसके कपड़े उतरवा लिए थे, यह बात बहुत दिनों बाद उसे याद आई. दरोगा चला गया तो वह जानकी का नाम लेकर देर तक अश्लील बातें करता रहा.

दरोगा बिद्यानिवास को साथ ले चलने की सोच रहा था लेकिन विनायक ने मना कर दिया. आखिर में दरोगा के साथ विनायक और तीन सिपाही पहुंचे थे.

जमा हुआ खून देखकर लगा, कत्ल रात हुआ है. अभी सुबह के आठ का वक्त है, मक्खियों की वजह से लाश काली हो गई थी. मूलचंद की एक आंख बाहर निकल आई थी और जबड़े खुले थे. गले के अन्दर जो साँस की नली है, वह बाहर की तरफ़ कटकर लटक रही थी.

कोतवाली से इन्स्पेक्टर भी आया था. वह अपनी कापी में जितना हो सका लिखे जा रहा था.

खासी भीड़ जमा हो गई थी.

कटघर थाने का दरोगा और सिपाही भीड़ संभालने में ही लगे हुए थे. थोड़े फ़ासले पर एक बाजार है. वहां से आधे से ज्यादा दुकानदार झांकने चले आए.

मूलचंद का चेहरा भयावह-सा लग रहा था. जबड़ों के बीच से जीभ खासी निकल आई थी. मक्खियों की वजह से उसका भी रंग एकदम काला था. सिल्क का कुर्ता और लुंगी पहने, पैरों में चमड़े की बढ़िया चप्पलें थीं. कुर्ता दोनों बांहों और बटनों की तरफ से फट गया था. लुंगी जांघों तक उठी हुई थी. और दोनों चप्पलें थोड़ी दूरी पर, पानी के पास पड़ी हुई थीं. कम-से-कम आधे घंटे तक छीना-झपट चलती रही होगी. लाश को देखने के बाद कोई भी अन्दाजा लगा सकता है.

लाश शिनाख्त कर ली गई तो विनायक वापस लौट आया. भट्टी के सामने एक लकडी का फाटक-सा बना है. बंद था. यहाँ अमूमन इतना सन्नाटा कभी नहीं रहता. इस वक्त सिर्फ थाने के बरामदे पर दो-तीन सिपाही ताश खेल रहे थे, दो खेल रहे थे, एक देख रहा था. कोने की तरफ़ बैठा एक बूढ़ा हवलदार बेसुरी आवाज में रामायण पढ़ रहा था. ताश खेलने वालों को या उसे किसी बात की दिक्कत नहीं हो रही थी.

मूलचंद के ठेके के ऊपर एक कौआ बैठा था. उसकी आवाज अब विनायक को वाक़ई कर्कश लगी. आज तक कभी ध्यान देने की फ़ुर्सत ही नहीं मिली थी कि कौए की आवाज़ से भी दिक्कत हो सकती है. ठेके के लकड़ी के फाटक के सामने एक तीन टांगों वाली गाय बैठकर जुगाली कर रही थी. उसकी चौथी टांग घुटने के नीचे से टूटी हुई थी और गाय उस टूटे हुए हिस्से को घसीटकर चलती थी. यह गाय पिछले दो-तीन सालों से बिहारी, कमगरान, मलूकपुर मुहल्लों में घूमती नजर आती थी लेकिन आज पहली बार महत्त्वपूर्ण लगी. विनायक उसकी आंखों की निरीहता रुक कर देख रहा था.

थोड़े से फासले पर नासिरुद्दीन की दुकान हुआ करती थी. कई दफ़ा वह हारमोनियम बजाकर गाना शुरू करता था. अड़ोस-पड़ोस के बच्चे तब भीड़ लगाकर दूकान

के सामने खड़े हो जाते थे. नासिरुद्दीन का खून हो गया, यह अरसा पहले की बात है. तब से दूकान बन्द है.

विनायक अपने दवाखाने में आ गया.

लगभग हफ्ता-भर पहले इसी वक्त मूलचद ठेकेदार एकदम से दवाखाने के अन्दर आया था. उसका जिस्म देखकर विनायक को लगा नही कि उसे सर्दी-जुकाम की भी कोई तकलीफ़ हो. इससे पहले दो-चार बार सड़क पर दुआ-सलाम के स्तर तक मुलाकातें ज़रूर हुई थीं. लेकिन बस, इससे आगे कुछ नही हुआ. विनायक ने जब भी देखा, समझ नहीं पाया कि आख़िर यह आदमी है क्या चीज़ ?

मूलचंद एक सफेद चुन्नटदार कुर्ते और सिल्क के गहरे पीले रग की लुगी मे आया था. कुर्ते का कपड़ा इतना बारीक था कि गर्दन मे लटकती सोने की चेन साफ़ दिखाई पड़ रही थी. उसने कुर्ते की बांहें ऊपर उठा ली और दोनों हाथ जोड़ दिए—नमस्कार साब. फिर अपने आप ही कुर्सी पर बैठ गया था. बोला—कभी आपसे दवा-दारू लेने का मौका नाय मिला था, लेकिन अबकी मिल गया. फिर ज़ोरों से अपने ही कहने पर हंस पड़ा था—दारू तो अपने ही पास भौत है, दवा दे दो आप.

मूलचंद हंसने लगा तो पूरा कमरा गूज उठा था. कोई आदमी इतने जबर्दस्त तरीके से ठहाका लगा सकता है, जिसने नही देखा, यक़ीन नही करेगा. विनायक ने अब यक़ीन किया.

मूलचंद फिर गंभीर-सा हो गया था. जैसे बात कैसे शुरू करेगा, तय नही कर पा रहा था. यह पहला मौका होगा, जब उसे किसी वजह से सकपकाहट महसूस हो रही थी.

फिर थोडा तनकर बैठ गया और बात कह दी—वो बिद्दा पंडत की लौंडिया है न, जानकी. उसका बच्चा होने वाला है. हमे जे सब अंग्रेजी दवा-पानी बिल्कुल नाय पसंद. जानकी ने तुमारा नाम लिया, वैसे मैं भी सोच ही लिया था कि तुमी से कोई बढ़िया दवा ले लू.

—कौन-सा महीना है ? विनायक ने पूछा

मूलचद थोड़ा शरमा गया. फिर बोला—पैला. थोड़ी देर रुककर बोला—जानकी ज़रा शर्मीली है नाय तो—आयके दिखाय देता. तुम समझ कै कोई अच्छी ताकत वाली दवा दे दो.

विनायक की जान मे जान आई. मूलचद ने पेट खाली कराने की अर्ज़ी पेश नहीं की है.

—भूख नहीं लगती होगी ? विनायक ने पूछा.

—कुछ नाय खाती बिचारी विनायक को इस बात पर आश्चर्य होना चाहिए था कि कम-से-कम किसी एक के लिए उसके मन मे करुणा तो है. अब जैसे मूलचद इतना ख़तरनाक नही लग रहा था.

मूलचंद अपनी हथेलियाँ मसल रहा था—अब हम शादी कर लैंगे. कह लेने के बाद वह झेंप-सा रहा था.

विनायक यक़ीन नहीं कर पा रहा था.

—क्यों साब, कोई गुनाह तो नाय होगा इसमे ? मूलचद की जिन्दगी का बहुत-कुछ जैसे सामने बैठे आदमी की 'हाँ' मे लटका हुआ था.

विनायक ने गर्दन हिलाई—नही, गुनाह क्यों होगा ?

—मूलचंद ठेकेदार को लोग रामपुर, मुरादाबाद, बदायूं तक जानते हैं लेकिन सिरफ जिसम की खाल का रंग भर जानते है. जे किसी को नाय मालूम,

ठेकेदार का भी एक दिल है. दिल में तकलीफ भी होती है.

उस दिन वही हुआ था, जो कभी आज तक नहीं हुआ. मूलचंद ने जैसे जेब से एक चाकू निकाला और सीने के ऊपर की चमड़ी काटकर हटा दी—अब देख लो, ये है मूलचंद ठेकेदार का दिल.

मूलचंद ने अपनी जिन्दगी की कहानी शुरू की.

कहानी मुरादाबाद से शुरू होती है.

तेरह बरस की उम्र में मूलचंद ने जाना, सरकारी अस्पताल की मेहतरानी उसकी मां है. अस्पताल के पीछे कुछ कोठरियाँ-सी बनी हुई थीं. मूलचंद पैदा वहीं हुआ था. अस्पताल के भंगी-मेहतरों को रहने के लिए सरकारी तौर पर ये जगह दी जाती हैं.

जो औरत मूलचंद की माँ थी, वह कुआंरी नहीं थी. शादी से पहले भी वह कुआंरी नहीं रही. इस बात का यक़ीन जैसे उसके पति को आ गया था. जिस आदमी ने इस औरत की ख़ूबसूरती पर फ़िदा होकर उससे शादी की थी, वह कचहरी में झाड़ूदार था. शादी के साल-भर बाद झाड़ूदार को शायद यक़ीन आ गया था कि जो कुछ ख़्वाब उसकी आंखों में थे, वे बुरी तरह टूटकर बिखर गए है. अपनी औरत के जिस्म में जैसे उसे अस्पताल के कई कम्पाउण्डरों तक के पसीने की बू मिलने लगी थी. एक दिन वह दुपहर को छुट्टी लेकर आया और पुराने सामान के गोदाम के साथ वाले बरगद के पास पहुंच गया. वहां उसकी बीवी अस्पताल के एक अधेड़ कम्पाउण्डर की जाँघों पर सिर रखकर लेटी हुई थी. होठों पर एक ख़ास किस्म की खिलखिलाहट थी.

कचहरी में झाड़ूदार को किसने एक-एक दिन की कहानी बता दी, यह तो नहीं मालूम लेकिन, उसने स्टेशन के पास उसी दिन ख़ुदकशी कर ली थी. शाम को सिग्नल के पास उसकी गर्दन से कटी हुई लाश मिली थी.

अस्पताल की मेहतरानी उस लाश को पकड़कर इस तरह रोती रही कि पुलिस वालों तक को ख़ासी मुसीबत हो गई थी. तब उसके पैर भारी थे. कुछेक महीने बाद मूलचंद पैदा हुआ था.

मूलचंद को भी फिर इधर-उधर से सारे किस्से मालूम हो गए थे. कई दफ़ा अपने ही ऊपर नफरत होने लगती और कभी जी में आता कि उस औरत का ही सफाया कर दिया जाए तो कुछ बुरा नहीं होगा. आख़िर में उसे यक़ीन आ गया था कि उसका बाप कचहरी का झाड़ूदार नहीं था, दस-पन्द्रह लोगों में से बाप कौन हो सकता है, यह पता नहीं चल पाया लेकिन इतना समझ में आ गया था कि अब उसका ही ठिकाना बैरंग ख़त की तरह हो गया है. अपने ऊपर नफ़रत बढ़ती जा रही थी और मेहतरानी के ऊपर बदला लेने की चाह सांप की तरह रेंगने लगी थी.

अपनी माँ का जिस्म मूलचंद गौर से देखता और जैसे पता हो जाता कि इस औरत के एक-एक जोड़ से कई-कई मर्दों की साँसें बही हैं. अपनी उम्र के हिसाब से मूलचंद को इतना सब शायद नहीं समझना चाहिए था. लेकिन वह समझता रहा. वह औरत फिर भाँप गई थी और यह कोठरी छोड़कर कहीं और किराए पर कोई कमरा लेकर रहने की सोच रही थी. बेटे को वह शायद किसी भी कीमत पर अलग नहीं करना चाहती थी.

बदला तो ख़ैर मूलचंद ले नहीं सका था लेकिन घर छोड़कर स्टेशन चला गया था. उस वक्त जो गाड़ी छुटने वाली थी, उसी पर सवार हो गया. उतरा अमरोहा जाकर. गाड़ी वहीं ख़त्म हो गई थी.

कुछेक दिन ढाबे में प्लेटें वगैरह धोता रहा फिर एक बीड़ी फैक्ट्री में काम मिल गया था. मूलचंद ने फिर कभी मुड़कर भी नहीं देखा कि मुरादाबाद की उस

कोठरी में मेहतरानी कर क्या रही है.

अमरोहा में कोई दसेक बरस रहा वह. छोटा-सा कस्बा है लेकिन यहाँ का माहौल मुरादाबाद से अच्छा लगा. यहाँ मूलचंद को कोई उसके बाप-माँ के किस्से बताने नहीं आता, इससे बढ़कर सुख कुछ और हो सकता है क्या ? बीड़ी फैक्ट्री में पाँच बरस काम किया था उसने. बीड़ी के कश खींचने की भी आदत तब से पड़ी हुई है. मालिक की तरफ़ से हर रोज़ मुफ्त में दो बण्डल मिलते थे. दिन भर काम करता, शाम को कभी सिनेमा वगैरह देख लिया, कभी इधर-उधर थोड़ा घूम-फिर लिया. फिर खाना खाकर फैक्ट्री के बरामदे में सो जाता.

पांच साल बाद जिस दिन फैक्ट्री छोड़ी, हाथ मे बहुत पैसे थे. एक दफ़ा सोचता रहा कि जब तक यह खत्म नहीं हो जाते, दिल्ली-कलकत्ते की थोड़ी सैर ही हो जाए तो क्या बुरा ? लेकिन बाद में इरादा बदल दिया था. अमरोहा में ही एक लकड़ी काटने की मिल में तनख्वाह पर नौकरी कर ली थी. बीड़ी फ़ैक्ट्री वाले के साले की मिल थी. उसने मूलचंद की ईमानदारी के बारे में कहा तो वहाँ तनख्वाह पर काम मिल गया. बीड़ी फैक्ट्री का पैसा बंधी हुई बीडी की तादाद पर निर्भर करता था. तनख्वाह पर काम मिला तो दिल्ली-कलकत्ते का इरादा उसने छोड दिया.

वहाँ भी उसने पांच साल गुज़ारे. उसके हाथों से हज़ारों का लेन-देन होता था. कभी चाहता तो थोड़ा-बहुत इधर से उधर भी कर सकता था. लेकिन इस तरह के गिद्धपने के लिए कभी जी हुआ ही नहीं. साथ के यारों में से कोई आंख मार के इशारा भी करता तो वह उसे घूर-सा लेता.

पांच साल वहां नौकरी कर ली तो मन उचट-सा गया. अमरोहा जैसे बहुत छोटा होकर सिमट आया था. एक दिन मालिक के सामने जाकर हाथ जोड़ लिए और अपना हिसाब लेकर रामपुर चला आया.

रामपुर में अंग्रेजों ने एक खाद का कारखाना लगाया था. अंग्रेज चले गए तो उसके मालिक इतनी दफा बदले कि कारखाना लगभग बन्द-सा पडा रहा आखिर में रामपुर के नवाब साहब के एक रिश्ते के दामाद ने कारखाना खरीद लिया था. मूलचंद को वहाँ नौकरी मिल गई. जो आदमी मैनेजर था, वह बीस-पचास रुपए चाय-पानी के लिए माँग रहा था. मूलचन्द बीस-पचास तो क्या देता सौ-दो सौ भी आराम से दे सकता था लेकिन तय कर लिया कि फूटी कौडी भी देनी नही है. एक दफा नवाब साहब अपने दामाद के साथ फैक्ट्री के सामने मिल गए तो मूलचद ने अपनी अर्ज़ी मैनेजर के चाय-पानी वाली बात के साथ सामने रख दी बस इतने से ही काम बन गया. नवाब साहब के दामाद ने बिल्कुल तभी मैनेजर को फटकार तो नहीं दिया था लेकिन मूलचन्द समझ गया था कि अब बिचारा हाथ यूं ही नही फैलाता फिरेगा.

अपने काम की वजह से फिर मूलचंद को कई बार नवाब साहब की हवेली से इनाम मिलते रहे हैं. फैक्ट्री के साथ रहने के लिए एक कमरा और रसोई मिल गई थी. किराए में हर महीने तीन रुपए देने पड़ते थे, लेकिन बिजली-पानी मुफ्त. फैक्ट्री में भी काम कुछ भारी नहीं था. बड़ा मिस्त्री जहाँ-जहाँ जाता, उसके साथ रहना पडता था. मिस्त्री ने कहा तो कभी हथौड़ा मार दिया, कभी पेंच कस दिया—बस इतना भर काम था.

लेकिन मूलचंद ने एक काम और किया था. फैक्ट्री के फाटक पर जो दरबान रहता था कई दफा उसके साथ मिली-भगत में सामान बिना चालान के निकल जाते थे. मूलचंद ने उसे तीन बार पकड़ा था. तीनों ही बार दरबान बदल दिया गया. यह

खबर हवेली तक भी पहुचती रही है नवाब साहब के दामाद ने फिर मूलचद को अपने खास आदमियो मे मान लिया था

फैक्ट्री मे ज्यादातर लोग मुसलमान ही थे हिन्दू सिर्फ दो लोग थे मूलचद और हिसाब-किताब लिखने वाला मुन्शी मैनेजर को मूलचद का यह तरीका रास तो नही आया था लेकिन मालिक की इनायत जिस पर हो, उमसे कहा भी क्या जा सकता हे !

खुद मूलचद भी महसूस कर रहा था कि वह दिन-ब-दिन बदलता ही जा रहा है मन फिर झूम-सा उठता झूम उठता और आखिर मे वही पुराना काँटा चुभने लगता

तब एक दिन सत्तर के आसपास की उम्र का एक आदमी अपनी लडकी के लिए रिश्ता लेकर आया था जब अग्रेजी हुकूमत थी, तब वह नवाब साहब के यहा हवलदार था जात मे बाल्मीकि है लेकिन पाखाना साफ करने का काम उसने कभी किया ही नही अब जमाना बदल गया अग्रेज चले गए और नवाब साहब की नवाबी नही रही वर्ना हालत ऐसी नही हो जाती बहरहाल मूलचद जैसे कद्दावर आदमी को बतौर दामाद पाकर वह आदमी जाहिर है बहुत खुश हो जाता पहले जमाना जरूर नही रहा लेकिन जरूरत के वक्त कोई पुराना खिदमतगार हवेली मे हाजिर होता तो नवाब साहब एकदम खाली हाथ नही लौटा देते उसी भरोसे पर बूढे हवलदार ने मूलचद को यकीन दिलाया था कि शादी बिल्कुल ही मामूली नही होगी अब हवलदारी जारी नही रही लेकिन दसक हजार तक वह खर्च कर ही सकता है

खर्च वाली बात हवलदार बार-बार घुमा-फिरा कर कर रहा था उसे शायद तसल्ली नही हो रही थी कि सामने वाले आदमी को यकीन आया भी है या नही

आखिर मे मूलचद ने वही काँटे वाली बात कह दी यह बात वह छिपा भी सकता था लेकिन लगा था, फिर जिन्दगी भर सामने गुनहगार बनकर रहना पडेगा आदमी की सबसे बडी तकलीफ यह होती है कि वह खुद को माफ न कर पाए अपने बैरग पैदा होने की कहानी सुनाई तो हवलदार चेहरे को सिकोडकर एकदम उठ खडा हुआ था

इसके बाद मूलचद एकबारगी बदल-सा गया चाहे हवलदार हो चाहे मुशी या गू उठाने वाला, वह समझ गया कि सब एक है ऐसा नही कि जिन्दगी मे झूठ का सहारा कभी उसने लिया ही नही लेकिन शादी करने के लिए सच को छिपाना एक और काँटा जैसा लग रहा था पहले से ही एक चुभन थी अब एक और हो गई तो आखिर कोई कैसे जिए ! लेकिन सच बोलने के बाद हर कोई हवलदार की तरह मुह सिको-डता रहेगा, इतना वह समझ गया था

फिर उसने तय कर लिया था कि चकलो मे जाकर रडीबाजी करेगा वही गलियो मे पडा रहेगा लेकिन अगर कोई रिश्ते लेकर आया है तो उसे कसके झापड रसीद कर देगा फिर उसने रडियो मे इनाम बाँटे कई बार किसी को लाकर बाहर से भी सैर-सपाटा कर आया और सिंदूर लगाने वाली औरतो को देखकर थूकता रहा

रामपुर के हवलदार के बाद रिश्ते लेकर कई और लोग भी बाद मे आते रहे है मूलचद ने किसी के भी गाल पर चाँटा जरूर रसीद नही किया था लेकिन आधे मिनट से ज्यादा बात भी नही की थी

रामपुर के बाद वह बरेली आया ठेका ले लिया और मकान खरीदकर ऐश के साथ रहने लगा दूर-दूर से रडियो को बुलाकर रखता और जब वे लौटती तब मेहन-

ताना के अलावा सोने का एक तोहफा भी पेश करता. एक दफ़ा लखनऊ से एक रंडी आई थी, मुसलमान घराने की बेहद खूबसूरत लड़की थी. नवाबी खानदान से दूर का एक रिश्ता था और उसके चेहरे की चमक मे मूलचंद को लगा था कि इस औरत का मर्दों पर मेहरबानी करने का पूरा हक है. इससे पहले औरत जात को उसने कभी इतना बड़ा दर्जा दिया ही नहीं था. लड़की चलती तो मूलचंद उसके पाँवों को, बिछवों को गौर से देखता रहता. इतना खूबसूरत किसी का चलना भी हो सकता है, इससे पहले कभी पता नहीं चला. उस लड़की ने मूलचंद ठेकेदार मे क्या देखा था. उमे ही मालूम है लेकिन वह जैसे मुहब्बत करने लगी थी.

मुहब्बत !

यह एक ऐसी चीज़ है, जिस पर मूलचद नाम का आदमी मिर्फ़ थूक सकता हे. मुहब्बत वैसे लोग करते होंगे, मूलचंद यकीन भी करता है लेकिन जानता है कि वह खुद ऐसी कोई चीज सच बोलकर पा नहीं सकता. और जहां तक रंडियों का सवाल है, वे मुहब्बत कर ही नहीं सकतीं. अगर कोई करती है वह रंडी नही है. फिर ऐसी मामूली औरतों पर ठेकेदार थूकता भी नही है.

आख़िर में उसने उस औरत को सात दिन की बजाय पांच ही दिन मे टिकट कटाकर गाड़ी में बैठा दिया था. लेकिन ऐसा हादसा इसके बाद कभी नही हुआ. रडियां यहां आकर ऐशो-आराम करती और भूल नही जातीं कि उनके साथ सौदा हुआ है. मूलचंद भी सिर्फ़ सौदे की ही बात याद रखता.

फिर जानकी से मुलाकात हुई थी.

ऐसा नही हुआ कि बिद्दा पण्डित की लड़की को देखते ही मूलचंद की नींद हराम हो गई थी लेकिन दिल मे हलचल-सी ज़रूर होने लगी थी. अपनी इस बेवकूफी पर उसने काबू पाना चाहा था लेकिन बाद मे अदर-ही-अदर कुछ जैसे होने लगा था. आख़िर में वह जानकी के लिए कई दफ़ा इतजार भी करता रहा है.

एक दिन जानकी ने ही शादी की बात उठाई थी. मूलचंद का चेहरा उतर गया था. लगा था, एक अदना-सी लडकी ने बेइज़्ज़त कर दिया है. वह कुछ कहने की सोच रहा था लेकिन चुप था. हफ्ते-भर बाद जानकी ने फिर से वही बात दुहराई थी. इस बीच हर रोज़ घटे-आधे घंटे के लिए वह ठेकेदार से आकर मिलती रही है. औरत कभी किसी के लिए वाकई छटपटा सकती है,मूलचंद ने करीब से जानकी के अदर यह देखा था.

मूलचंद ने फिर शादी से इन्कार कर दिया था.

अपने पैदा होने की कहानी सुनाई, जात बताई. जानकी सुनकर कुछ दंग तो रह गई थी लेकिन फिर उसकी आंखों में आंसू थे. मूलचंद उस वक्त थर्रा-सा रहा था. जिस शख्स ने औरत को रंडी से ज्यादा कभी नही समझा, वह किस कदर हारा हुआ लग रहा था !

अगले दिन एक गठरी में कुछ कपड़े लेकर जानकी मूलचद के घर आ पहुंची थी. आंखे बुरी तरह सूजी हुई थीं और चेहरे पर झाइयां उभर आई थी. मूलचद समझ गया था, यह लड़की रात-भर न सोई होगी, न एक गिलास पानी ही पिया था. उस दिन से जानकी यही रहने लगी थी.

इस घटना से बिद्दा निवास लगभग बुझ गए थे. लेकिन जानकी को शायद जिन्दगी में सबसे बड़ा सुख इसी मुकाम पर मिला था. खन्नो मुहल्ले से लेकर बमन पुरी, बिहारीपुर तक सैंकड़ों किस्से लोगों की जुबान उठने-गिरते रहे हैं लेकिन जानकी ने इनकी परवाह नहीं की. धीरे-धीरे इसे लगा था कि उसका सबकुछ ख़ुशियों के सैलाब

से भर गया है.

लेकिन उस दिन के बाद जानकी ने शादी की बात कभी की ही नहीं. कभी मजाक मे मूलचद कर देता तो कुछ उदास-सी हो जाती मूलचद भी जैसे थोड़ा और समझ लेना चाहता था. जानकी से शादी की बात उसने सोच तो ली थी लेकिन मजबूती से फैसला नही कर पा रहा था. थोडा आगे बढ़ता तो लगता, हवलदार की तरह जानकी भी एक दिन बेइज्जत करके कही निकल आएगी.

●●

मूलचंद ने विनायक को गौर से देखा—जो बाते पैलीबार किसी से कै गया. अब समझ लेव कि मूलचद ठेकेदार का ज़खम कित्ता बड़ा है कोई नाय समझेगा जे सब ! उसने एक गहरी सांस ली—अब हम शादी कर लेगे. मूलचद को तसल्ली हो गई कि जानकी उसे कम-से-कम बेइज्जत नाय करेगी. खैर तुम दवा दै दो अब.

विनायक ने चार दिन के लिए दो-दो खुराक के हिसाब से आठ पुड़ियां दे दी.

मूलचद ने दस का एक पत्ता सामने रखा

—अभी खुले नही है. फिर कभी दे जाना. विनायक नोट वापस कर रहा था.

मूलचद ने हाथ जोड़ लिए—जे सिरफ आपका है.

फिर वह एकदम से बाहर निकल गया था.

●●

उस दिन मूलचद को दवाखाने मे घुसते और निकलते हुए कई लोगो ने देखा था. उनमें बिहारी गोलगप्पे वाले से लेकर मोती पतगसाज तक कई लोग थे.

लोग देर तक खुसर-पुसर करने लगे थे.

मूलचद का कत्ल हो गया तो मलूकपुर थाने मे दरोगा कई बार आता रहा है. फिर यह खबर बमनपुरी से निकलकर मलूकपुर कसगरान होकर बिहारीपुर तक पहुंच गई.

जानकी का पता नही लग पाया था

पुलिस ने सैसियटोले से बिल्लू को गिरफ्तार कर लिया था लेकिन जमाल उस्ताद फरार हो गया था. पुलिस ने वैसे बदायू, रामपुर, मुरादाबाद तक खोज-बीन कर ली लेकिन वह नही मिला था

मोती पतगसाज ने भगीरथ के 'होटल' के सामने के कुए के चबूतरे पर खडे होकर जानकी के बारे में रसीली बातें बताई और कनखियो से 'कौशल्या भवन' की तरफ इशारा कर दिया—समझ लेव अब···

सबसे पहले यह बात जगदम्बा ने समझ ली—अब देखना, पीछे से दरोगा पेल देगा डंडा.

मोती बहुत खुश हुआ था.

जगदम्बा सजीदा था. गुप्त रहस्य उजागर करते हुए जासूस लोग भी इसी तरह सजीदा होते हैं शायद.

—अब जे समझ लेव, बमनपुरी गई. गोबिन्द बोला. वैसे मूलचंद का कत्ल हो गया, इस खबर से वह खुश था.

—आय हाय ! मोती ने अपना सीना पीट लिया—मूलचद की ठेकेदारनी जलाय के रख देगी पूरा मुहल्ला.

भगीरथ चूल्हे की आग सरिया से ठीक कर रहा था. चाय का आर्डर नहीं था.

लोग सिर्फ़ खिक-खिक कर रहे थे.

मोती फिर कसगरान के अंदर से बमनपुरी की तरफ चला गया.

विनायक बालकराम के साथ बंगाली टोले की तरफ आता हुआ दिखाई पड़ गया था. जगदम्बा फिर एकदम से चुप हो गया.

भगीरथ ने भी कोई आवाज नहीं दी.

विनायक कुछ दूर निकल गया तो जगदम्बा ने कमर लचकाई —बिद्दा पंडत की लौण्डिया तेरे जैसे को जलाय सकती है. यह फिकरा कहते वक्त वह दांत निकाल कर होंठों को बिचकाता रहा.

इस वक्त वहां सिर्फ दो ही लोग थे. गोबिन्द और जगदम्बा. भगीरथ ने दोनों को एक बार और गर्दन उठाकर देखा और कुछ नहीं बोला.

●●

द्वारिका का जख्म कुछ गहरा-सा था. कंधे के पास काफी बड़ा घाव था और खासा खून निकल चुका था. इस वजह से चलने में अंदर की नस फटती हुई-सी लग रही थी. विनायक की दोनों बांहों में थोड़ी चोट थी. लेकिन इतनी नहीं कि चला न जा सके. बालकराम का दाहिना घुटना थोड़ा छिल जरूर गया था लेकिन ऐसी मामूली बात की परवाह उसने कभी की ही नहीं. बाकी लोगों में अरुण, धनंजय, संतोष और सुरिंदर को या तो चोट लगी ही नहीं, या बहुत मामूली लगी थी.

सर्दी न होती तो शायद चलने में इतनी दिक्कत भी नहीं होती. दिसम्बर में वैसे सर्दी होती ही है लेकिन कुमाऊं के पहाड़ों में हवा रोज नहीं बहती. जब कभी बहती है रुहेलखण्ड का पूरा इलाका एकदम सर्द हो जाता है.

विनायक के पास एक पुलोवर जरूर था लेकिन इतना मामूली कि सर्दी लगने में कोई फर्क नहीं पड़ रहा था. बालकराम लम्बा कोट पहने था. उसने उतारना चाहा था लेकिन विनायक ने मना कर दिया था

सिटी स्टेशन से जो लाईन आईजटनगर, बहेडी, रुद्रपुर होकर काठगोदाम तक जाती है, उस पर एक छोटा-सा स्टेशन आता है—कीछा. आबादी ज्यादातर मुसल-मानों की है लेकिन कुछ हिन्दू भी रहते है. मुसलमान लोग या तो खेतों में मजदूरी करते हैं या बहेडी जाकर चीनी मिल में तीन रुपए रोज पर जो भी काम मिलता, कर लेते. वैसे कुछेक मुसलमानों के पास खेत भी है लेकिन उनकी तादाद यहां कभी भी बहुत नहीं रही.

मुल्क के बटवारे से पहले कोई बहादुर खान हुआ करता था. उसके पास जरूर बहुत जमीनें थी. लेकिन सन सैंतालीस में जो दंगे हुए, उससे घबरा कर वह पाकिस्तान चला गया था. उसके बाद एक दफ़ा आकर अपनी जायदाद कौड़ी के मोल बचकर वापस वहीं चला गया था. वे जायदाद शायद कीछा के मुसलमान भी खरीद सकते थे लेकिन तब तक हरद्वारी यादव का प्रताप बहुत बढ़ गया था. जो जायदाद हरद्वारी खरीदना चाहे, उसे पाने की हिम्मत कीछा वाले कम-से-कम नहीं कर सकते. सन् सैंतालीस के दंगे के बाद तो मुसलमान यह हौसला कर ही नहीं सकते थे. इलाका चूंकि

मुसलमानों का है, बहेड़ी या रुद्रपुर के हिन्दू लोग भी जमीन-जायदाद के मामले में इस इलाके पर कोई दिलचस्पी नही ले पा रहे थे.

हरद्वारी ने फिर अपना नाम चौधरी हरद्वारी कर लिया था. गांव मे दसक घर अहीरों के थे. एक दिन उन लोगो को बुलाया और सबको लगान पर थोडी-थोडी जमीन बाट दी. ये लोग थे गाय-भैंस पालकर गुजारा करने वाले. लगान पर ही सही, थोडी-थोडी जमीन खेती के लिए मिल गई तो हरद्वारी को चौधरी तो खैर जरूर ही, देवता भी समझने लगे.

उसके बाद चौधरी हरद्वारी की जमीनें हर तीसरे महीने बढ़ती रही और बरेली शहर में उसने एक चावल मिल भी खरीद ली. जक्शन स्टेशन के पास स्टेशन मास्टर का निजी मकान था. रिटायर होकर वह जाने लगा तो हरद्वारी को बेच गया.

इसके अलावा चौधरी ने कीछा मे ही एक तेल निकालने की मशीन लगा ली, जो पेट्रोल से चलती है. अभी तक यहा बिजली नही आ पाई है, वर्ना बिजली से चलने वाली एक बडी मशीन खरीद लेता. फिर भी खासा काम होता है और कोई तीसेक लोग वहा काम करते है. ज्यादातर मजदूर मुसलमान है तीन रुपया रोज के हिसाब से रोजी मिलती है.

जो लोग चौधरी के खेतो मे काम करते है, उन्हे भी इतने ही पैसे मिलते है. लेकिन खेत की बजाय तेल की मशीन मे काम करना लोगो को ज्यादा पसद है.

आज के जमाने म तीन रुपए रोज की मजदूरी कामगरो के साथ मजाक के बराबर है, यह बात लोगो ने समझी थी नसीबन मिया बहेडी की चीनी मिल मे काम करने जाना ... लगा तो खैर वह भी नही है लेकिन दूसरे लोग इज्जत करते है. कहते है, नसीबन मिया जैसी अक्ल हरेक को नही मिलती.

बहेडी के कारखाने मे और कुछ न सही, आदमी की ताकत क्या होती है मिया समझ गया था बरेली मे लीडर लोग आकर जो बाते भोपा लगाकर कहते, वे खास कुछ समझ मे तो नही आती लेकिन वह फिर अपने को बिना वजह सिकुड़ा हुआ और कमजोर नही महसूस करता.

नसीबन की उम्र हो चुकी है और आदमी ठडे मिजाज का है. कोई मुह पर गाली भी अगर दे जाता है एकदम मे वह आखे लाल-पीली नही करता. इस वजह से भी लोग इज्जत करते है गाली देने वाला फिर बाद मे आकर माफी माग जाता और मिया कोई-न-कोई लतीफा सुनाकर उसकी झेप खत्म कर देता.

नसीबन मिया ने कीछा मे एक-एक के घर जाकर मजदूरी की रकम बढाने के लिए हडताल का रास्ता सुझाया था तब गेहू की बोआई होनी थी. गेहू के साथ सरसों भी लगनी थी.

एक दिन लोग काम पर नही आए तो चौधरी खुद चलकर खेतो तक चला आया एकदम वीरानगी-सी थी ऊपर दो-चार कौए जरूर काव-काव कर रहे थे. बगल मे होकर रेल की पटरी गुजरती है एक रेलगाडी उस पर से होकर गुजर गई तो लगा, आदमी का न होना कितना खतरनाक लगता है चार-छह अहीर भी चौधरी के साथ थे उन्ही लोगों ने सारी बात चौधरी को समझा दी थी असूलन हरद्वारी को गर्म होकर आग का बबूला हो जाना चाहिए था. लेकिन मूछों की आड मे होंठों को खोलकर वह सिर्फ मुस्कराता रहा जैसे खास कुछ भी न हुआ हो.

इसके अगले दिन रेल लाइन के पास पक्की सडक पर नसीबन की लाश मिली थी नसीबन के नसीब ऐसी मौत बदी थी —किसी के जेहन मे यह बात कभी आई भी थी क्या ?

अगले दिन से सब काम पर आने लगे थे.

वैसे रुद्रपुर से दरोगा आया था. कीछा मे छोटी-सी एक पुलिस चौकी जरूर है, लेकिन उसका खास कोई काम होता ही नही. चौकी का दरोगा दरोगाई के अलावा गल्ले का थोक व्यापार भी करता था. जिस दिन यह हादसा हुआ था दरोगा माल पहुंचाने बरेली की किसी आढ़त में गया था. एक दिन की छुट्टी भी ले रखी थी. लेकिन लौटने में दो दिन लग गए थे. और जब तक वह लौटा, नसीबन मियां की लाश चीर-फाड़ के लिए मुर्दाघर में पहुंच चुकी थी.

इस बात का वैसे कोई सबूत तो नही है लेकिन रुद्रपुर के दरोगा को शक हुआ था कि चौधरी के कहने पर ही दरोगा एक दिन की बजाय बरेली मे दो दिन रुक गया था. दरोगा गांव के लोगों से मिलकर तहकीकात कर रहा था. खबर पाते ही हरद्वारी भी आ पहुचा. जितनी हमदर्दी जतायी जा सकती थी, उसने जताई थी और मियां की ग़ैरमौजूदगी को गांव के लिए खालीपन जैसा कुछ कहा था.

खैर, कीछा का दरोगा रुद्रपुर जाकर सब ठीक-ठाक कर आया था और नसीबन की मौत के इस हादसे को लेकर और ज्यादा जांच-पडताल नही हुई थी.

नसीबन के बाद तीन और लोग गुम हो गए थे. लेकिन फौरन ही नही, एक साल के दरमियान. तीन मे से दो खेत मे ही काम करने वाले थे और एक तेल निकालने वाली मशीन पर मिस्त्री वगैरह कुछ था.

ये तीन नसीबन की तरह इज्जतदार तो खैर नही थे, लेकिन कई दफ़ा मजदूरी बढ़ाने के मामले को लेकर आपस मे मशविरा करते रहे है. मिस्त्री को सात रुपए रोज के हिसाब से मिलते थे यानी बाकी लोगों मे उसकी कमाई कही ज्यादा थी. फिर भी इस मामले का अगुआ वही बना था.

इसके बाद एक-एक करके ये तीन गुम हो गए थे. इनके घर वाले, जब वे नही ही लौटे तो थोड़े दिन जरूर रोते-धोते रहे लेकिन बाद मे इन बातों को नसीब समझ कर खामोश हो गए थे.

●●

सबसे पहले द्वारिका को खबर मिली थी.

सुरिन्दर की जानकारी कीछा के बारे मे तो खास कुछ नही थी लेकिन रुद्रपुर चूंकि नजदीक था, उसने पता लगाने की कोशिश की थी. रुद्रपुर मे बगाली और पजाबी शरणार्थियो को सरकार की तरफ से बसाया गया है. सुरिंदर के बाप को लाहौर छोडने के दस साल बाद यहा थोडी-सी जमीन मिल गई थी. सुरिन्दर ने कोशिश की थी लेकिन चौधरी के बारे मे इससे ज्यादा कुछ और पता नही हो सका कि वह जबरदस्त लठैत क़िस्म का आदमी है.

द्वारिका के लिए इतनी-सी सूचना नाकाफी थी एक दिन वह कीछा चला गया और जब रात को लौट आया तो वहाँ का पूरा इतिहास उसके पास था.

इसके अगले दिन सुरिंदर के हॉस्टल के कमरे मे सब लोग इकट्ठे हुए थे. अनूप, धनंजय, सतोष, बालकराम और विनायक.

अनूप ने सुरिंदर से मजाक किया—वार्डन को यह सब पता चला तो सरदार सुरिंदरसिंह को गुरुद्वारे मे जाकर डेरा जमाना होगा.

सुरिंदर के पहले बाल बडे थे लेकिन अनूप और धनजय हाथ धोकर पीछे पड़ गए तो उसने कटा लिए थे. इसके बाद भी मजाक का मूड होता तो सुरिंदर को अनूप सरदार जी कहकर ही पुकारता.

सुरिंदर ने जवाब नही दिया. कमरे के कोने मे पड़े स्टोव पर चाय बना रहा था.

स्टोव जलने की 'सूSSS' आवाज धनंजय को फालतू-सी लग रही थी. वह अखबार उठाकर पन्ने उलटता रहा हालांकि यही अखबार सुबह पढ़ चुका था.

द्वारिका ने सुरिन्दर के बिस्तर के नीचे से खींचकर दरी निकाली और जमीन पर बिछा दी. अब तक संतोष कुर्सी पर बैठा था, धनंजय मेज पर और बाकी लोग सुरिन्दर के बिस्तर पर.

सुरिन्दर ने गिलास में डालकर चाय बीच में रख दी.

संतोष ने चुटकी ली चाय का धुआं तो देखो, जापानी बम लगता है.

धनंजय ने उसकी पीठ पर हथेली मारी —ईडियट. फिर चाय का घूंट भर कर बोला -इट इज वॉल्केनो.

उसने इतनी संजीदगी से कहा कि सब हंस पड़े.

चाय खत्म हो गई तो द्वारिका ने बात शुरू की. पहले वह बताता रहा कि चौधरी हरद्वारी का डीलडौल क्या है और कीछा वालों के दिल में उसके नाम पर अब तक कितना डर इकट्ठा हो चुका है. इस बीच कितने लोग गुम हो गए और चौधरी बिजली पाने के लिए कितनी कोशिश कर रहा है, इसकी भी एक संक्षिप्त सूचना द्वारिका ने दी.

ब्यौरा सुनने के बाद दो मिनट तक सब चुप रहे

विनायक आंखें बन्द किए कुछ सोच रहा था. फिर धीरे-धीरे गर्दन ऊपर उठाई और छत की तरफ देखने लगा—खैर ताज्जुब होने लायक बात कुछ भी नहीं है लेकिन मुझे ताज्जुब इस बात पर होता है, जो लोग बहेड़ी जाकर चीनी मिल बन्द करवा सकते हैं, वे कीछा पहुंच कर नसीबन मियां की मौत को एक बहुत बड़ी वजह समझकर क्यों नहीं कुछ करते हैं?

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया.

विनायक ने फिर आंखें खोलीं—कीछा का मालिक ही नहीं, नेता भी चौधरी ही है. जो लोग लगातार गर्म-गर्म बोल सकते हैं, जानते हैं कि चौधरी को पछाड़कर नेता होना उतना आसान नहीं है. चौधरी वैसे जिन्दगी-भर में कभी चुनाव नहीं लड़ेगा. लेकिन जो लोग चुनाव लड़ेंगे और लड़कर जीतेंगे, चौधरी की मंजूरी के बिना नहीं कर सकते.

सुरिन्दर बोला फिर हम लोग क्या करें ?

—सोचो.

आखिर गुण्डागर्दी की हद तक तो हम लोग जा नहीं सकते.

तुमने असली मसला ही नहीं समझा है. गुण्डागर्दी क्या होती है ? आप साफ़ कपड़े पहन कर खाते-पीते हैं, इसलिए शरीफ हैं. और जो आदमी गंदे कपड़ों में 'शरीफों' की बदसलूकी का बदला ले ले, वह गुण्डा हो गया ?

—लेकिन हमेशा ऐसा नहीं होता है.

- बहुत बार सिर्फ ऐसा ही होता है.

—वेल, चौधरी जैसा आदमी है, बातचीत का कुछ असर तो होगा नहीं. वैसे भी जिसके हाथ में कोई चीज है, वह आसानी से छोड़ ही क्यों देगा ? हम लोग फिर उसे खत्म करने के बारे में कुछ सोच सकते हैं.

सुरिन्दर की इस बात पर सन्नाटा-सा छा गया.

द्वारिका बोला—लेकिन इस एक्सट्रीम तरीक़े से पहले दूसरी कोशिशें की जा सकती हैं….

विनायक ने द्वारिका को वक्तव्य पूरा करने नहीं दिया—बच्चों का खेल है क्या ? चौधरी हरद्वारी के हाथ लड्डू थमा कर कहना चाहते हो कि लेट अस सेलीब्रेट

इट एण्ड मेक ए डिसीजन ?

द्वारिका जवाब में कुछ और बोल नहीं सका.

—यह तुम्हारी रिपोर्ट है कि चौधरी संगम की तीसरी नदी की तरह है. ऊपर से बिल्कुल ही पता नहीं चलता कि अंदर यह शख्स सोच क्या रहा है. वैसे मैं सोचता हूं, हर चौधरी सिर्फ़ ऐसा ही होता है. वर्ना वह चौधरी बन ही नहीं सकता.

धनंजय थोड़ा डरा. चौधरी से वह कभी मिला तो खैर नहीं था लेकिन लगा, पूरी तरह उसे समझ गया है. बोला—ऐसे आदमी के सामने जाने से पहले दो-एक छुरे-चाकू चलाने वालों को भी, मेरा ख्याल है, अपने साथ रखा जा सकता है.

—ह्वाट ? तुमने शायद समझा ही नहीं कि कितनी बुजदिली की बात कह दी. किराए के लोगों के सहारे आजतक कोई बड़ा काम हो सका है ? विनायक धनंजय को समझा रहा था.

धनंजय थोड़ा झेंप गया.

द्वारिका ने कहा ठीक है. लेकिन यह तय है कि कीछा में कुछ मदद के बिना हम बिल्कुल ही कुछ नही कर सकेंगे.

—आई एग्री विद यू. विनायक बोला—लेकिन रास्ता ढूंढ़ो कि वह मदद बाहर से नहीं, कीछा के अंदर से ही मिले.

—कुछेक लोगो से मिलकर चौधरी के बारे में कुछ समझा सकते हैं. वे ही फिर मदद भी करेंगे.

—यह कोई रास्ता ही नहीं हुआ. कीछा वालों से चौधरी की कौन-सी नई बात कहनी है ? नानी को ननसार की कहानी सुनानी है क्या ? तुम चौधरी के बारे में हर बात नहीं जानते हो लेकिन उन्हें बहुतकुछ पता है.

—मेरा मतलब था कि किसी भी ऑपरेशन से पहले लोगों को आगाह तो किया ही जाना चाहिए. वर्ना उन्हें पता भी क्या चलेगा कि हम कौन है ?

—आगाह करने का तरीका, दरअस्ल, सुविधावादियों का एक रास्ता है. यानी क्रांति करने का स्वांग भी रचो और दुश्मन को बचने का मौका भी दो. अगर हम लोगों ने आगाह वाला रास्ता अपनाया, नसीबन मियाँ जैसा ही सबका हाल होगा. अच्छी तरह समझ लेना सबकुछ. सच्चे अर्थों में 'रैडीकल' नही बन सकते ?

द्वारिका मतलब समझ गया.

विनायक ने अपनी बात की व्याख्या की —दरअस्ल, बहुत कम वक्त होता है कुछ करने के लिए. जो लोग वक्त के आने का इंतज़ार करते हैं, उन लोगों को नींद की गोलियाँ खाकर सो जाना चाहिए.

द्वारिका चुप था.

बालकराम बोला - चौधरी को हम लोग ख़त्म करके अगर पकड़े जाते है तो सारा मिशन ही चौपट हो गया.

—और ख़त्म न कर पाए तो ? धनंजय ने पूछा.

—तो ? तुम्हीं सोचो, क्या हो सकता है. फिर विनायक थोड़ा मुस्कराया.

धनंजय दुबारा झेंप गया.

—यहां दरअस्ल हारने का सवाल जब तक है, हम लोग इंतज़ार करेंगे.

—लेकिन कब तक ?

—इंतजार से मेरा मतलब यह नहीं है कि इंतज़ार ही करते रहेंगे. लेकिन थोड़ा-सा वक्त लेकर स्ट्रैटेजी एकदम बेनुक्स बनानी पड़ेगी. आपरेशन की तैयारी शुरू होते ही पता चल जाता है कि कहाँ रुककर अगले पड़ाव का इंतज़ार करना है.

द्वारिका ने गर्दन हिलाई. यह स्वीकृति थी.

कुछ देर तक फिर चुप्पी छायी रही. द्वारिका शायद तय नहीं कर पा रहा था कि इस बारे में फौरन ही कौन-सा फ़ैसला लिया जा सकता है.

विनायक ने मुंह खोला - यह सवाल तुम लोगों के ज़ेहन में आया होगा कि एक चौधरी को मारने से ही पूरे हिन्दुस्तान का शोषण ख़त्म तो नहीं हो जाएगा. मैं निजी तौर पर मारने की राय तब तक नहीं देता, जब तक कि उसके अलावा भी काम चल सकता है. चौधरी और कीछा वालों का मामला अब इतना पेचीदा बन गया है कि किसी-न-किसी को ख़त्म होना ही पड़ेगा. अब तुम्हीं लोग सोचकर देखो कि किसका ख़त्म होना ज़्यादा मुनासिब है. जहां तक दूसरी बात का ताल्लुक है कि एक चौधरी को मारने से ही क्या होगा, मसले को थोड़ी गहराई से ही समझना है. एक दफ़ा लोगों को पता हो जाए कि चौधरियों की भी मौत हो सकती है तो वे ही आगे से बाक़ी काम कर लेंगे.

बालकराम को सिलसिला वक्त की तरह लगा. वह अंदर से लगभग तय भी कर चुका कि चौधरी की मौत के अलावा कोई और रास्ता नहीं है.

—एक प्लस प्वाइंट है कि कीछा या उसके आसपास कोई हम लोगों को जानता ही नहीं है. लेकिन चौधरी की एक और जगह है. भोजीपुरे में उसकी एक आटे की चक्की है जो एक नेपालिन चलाती है. नेपालिन ही उसकी रखैल है. चौधरी ने चक्की को तो ख़ैर अपने ही नाम रखा है लेकिन उसकी कमाई का एक पैसा भी नहीं लेता. नेपालिन इस मेहरबानी का बदला हर मुमकिन तरीके से चुकाती है. चौधरी का चक्कर उधर हफ्ते में दो-एक बार लग ही जाता है. द्वारिका ने नया रहस्य खोला.

नेपालिन वाली बात पर सुरिंदर मुस्कराया—रखैल के बग़ैर कोई चौधरी कहां से होगा ? शायद एक-आध और भी हो.

अनूप, संतोष और बालकराम इकट्ठे हंस पड़े.

—कीछा से वैसे छिपकर निकलना हम लोगों के लिए कहीं आसान होता. विनायक बोला—लेकिन दिक़्क़त यह है कि वहां चौधरी के लठैत ही इतने होंगे कि उसके पास पहुंचने से पहले ही लठैत हमारे पास पहुंच जाएंगे. भोजीपुरे में बरेली से लोग अक्सर जाते रहते हैं. इसी बात की दिक़्क़त है ज़रा. लेकिन आदमी की तक़दीर बदलने वाले इन बातों से बहुत परेशान नहीं होते हैं. ऐम आई राइट ?

बालकराम ने हाथ उठाया—बिल्कुल गलत. हम लोग तक़दीर-वक़दीर में यक़ीन ही कहां रखते हैं.

विनायक हंसा—ग्रैण्ड. बात ज़रा ज़ुबान से फिसल गई थी. वी रादर कंट्रोल दा फ्यूचर राइट ?

—परफेक्टली राइट, सर. सुरिन्दर सिंह ने फ़र्श पर थपकी लगाई.

—जो लोग 'मिडिलिस्ट' किस्म के लोग होते हैं, कहेंगे, ऐसे कामों से पहले जनता की राय लेनी चाहिए और उनसे पूरा समर्थन हासिल करने के बाद ही कोई कदम उठाना चाहिए. देखो, यह एक गहरी चाल होती है. जनता से जब तक आप समर्थन हासिल करेंगे, चौधरी अपनी सारी तैयारियां पूरी कर चुकेगा. मुमकिन है, उस तैयारी में आपका भी सफ़ाया हो जाए. अगर आपका कदम गलत नहीं है, जनता अपने आप ही साथ आ जाएगी. आख़िर हर आदमी अपना स्वार्थ तो पहचानता ही है.

—चौधरी के साथ अगर कोई दूसरा आदमी हुआ तो ? सुरिंदर ने पूछा—

उसकी जान भी तो जा सकती है

—हां, और कोई रास्ता नहीं हुआ तो जा भी सकती है. लेकिन हम लोगों का मंजिल-ए-मकसूद है चौधरी हरद्वारी. उसके साथ लठैत हों या रखैल, आखिर वे सिर्फ इस सिस्टम के हारे हुए लोग ही तो हैं. कोशिश की जानी चाहिए कि किसी भी बेगुनाह आदमी को हम लोगों के किसी ऐक्शन से तकलीफ न हो.

अनूप अब तक चुप था. वह विनायक की तरफ मुखातिब हुआ—फिर मुमकिन है, कुछ इन्तजार भी करना पड़ जाए.

—क्वाईट पॉसिबल हो सकता है, आज की जगह हमें कल या परसों तक रुक जाना पड़े. इन्तजार भी हमारे अपने हक में ही होगा.

- और अगर हम लोग नाकामयाब होते हैं तो ?

—हो सकता है, नाकामयाब आखिर में हम हो ही जाएं लेकिन मैं सिर्फ कामयाबी की बात सोचता हूं किसी आदर्श की वजह से नहीं, क्रान्ति की शर्त ही यह है

—वैसे मेरा एक सवाल है. हम लोगों का मकसद बिल्कुल खरा है, इसमें कोई शक नहीं है. लेकिन हम लोग बिल्कुल अभी कुछ करने के काबिल हैं, इसका सबूत ?

सब विनायक की तरफ देख रहे थे

विनायक आंखें बन्द किए चुप रहा. आधे मिनट बाद फिर आंखें खोल ली—सबूत तो अपने ही अंदर है. क्या हममें से हर कोई बेचैन नहीं है कि कौछा के हर आदमी के घर रोज चूल्हा जलना भी इतना मुश्किल क्यों है ? क्यों हर कोई बुरी तरह डरकर ठिठुर रहा है ? विनायक थोड़ा हंसा—मेरे पास, दरअस्ल, लफ्ज है ही नहीं. जो कुछ कहना चाह रहा हूं, बोल नहीं पा रहा हूं. जो बोल रहा हूं वे तो सब रिपीटेड बातें हैं, हर जलसा करने वाला सिर्फ यही बातें कहेगा.

विनायक एकदम से चुप हो गया.

अनूप के दिमाग में शायद बहुतकुछ कुलबुला रहा था, बोला - बेचैनी मुमकिन है, सिर्फ जज्बात की वजह से हो यह तकलीफ अपनी सांस के साथ गुथ गई, उसके बारे में पहले ही तसल्ली हो जानी चाहिए.

द्वारिका कुछ कहने जा रहा था, लेकिन विनायक ने हथेली उठाकर रोक दिया.

—दरअस्ल, यह सवाल मैं ही करने की सोच रहा था. है कोई जवाब तुम्हारे पास ?

सुरिन्दर उंगलियां चटखा रहा था.

बालकराम बिल्कुल स्थिर बैठा था.

इन तमाम लोगों में संतोष सबसे कम बोलता है, अपने क्लास की लैला भार्गव के साथ उसका अफेयर है. कई दफा सुरिन्दर मजाक में कह देता ' एक दिन लैला को यकीन आ जाएगा कि उसका दीवाना गूंगा है. फिर शायद बिचारी पता काट दे

ऐसे मजाक सुरिन्दर अक्सर कर देता है. बाकी लोग हंस पड़ते और संतोष झेंप-सा जाता

लेकिन इस बार सुरिन्दर ने कोई मजाक नहीं किया.

अब तक संतोष एक कागज पर रुक-रुककर कुछ लिखता जा रहा था. फिर कागज को मोड़कर थोड़ा सामने की तरफ खिसक भी आया—जज्बाती तकलीफ अगर है तो हफ्ते-दस दिन में खत्म हो जाएगी.

—यस, दिस इज दा ऐंसर. विनायक बोला—नौटंकी में राम और रावण

बनने के लिए बहुत लोग तैयार हो जाते हैं. नौटंकी का राजा टीन की तलवार म्यान से निकालकर हवा में उछालता ही रहता है. इससे कई लोगों में जोश आ जाता है. राम-रावण की लड़ाई कितनी खतरनाक थी इस बारे में उन्हें पता ही नहीं होता. लोग लगभग इसी तरह रूसी और चीनी क्रांति की कहानियां सुन-सुनके बेताब-से हो उठते हैं. अगर हममें से कोई ऐसा है तो उसे सबसे पहले अपने संस्कारों के खिलाफ़ लगातार लड़ते जाना होगा.

द्वारिका बात समझ गया था. बोला—लेकिन संस्कारों की जड़ तो बहुत गहरी होती है.

—तभी तो उसके खिलाफ लड़ना पड़ता है. यह लड़ाई बहुत तकलीफ देती है. आखिर आदमी जिन मूल्यों के साथ अब तक जीता आ रहा था, एकदम से उन्हें छोड़ देना आसान तो नहीं है. लेकिन आदमी का रिफाइनमेण्ट सिर्फ़ यही है. मैंने तुम्हें अखबार की एक खबर पिछले दिनों बताई थी. बंगाल के एक जमीन्दार की गर्दन उसके बेटे ने ही काटकर घर के सामने टांग दी थी. जरूरत पड़ने पर संस्कारों को इस तरह ही जीतना पड़ता है.

अनूप दंग-सा रह गया था.

विनायक उसकी तरफ मुड़ा—यह बात आसानी से यक़ीन करने लायक नहीं है. लेकिन यह एक फैक्ट है. ऐसी हजारों बातें हैं, जो कभी अखबारों में नहीं छपतीं. जो लोग ऐसी खबरें बनाते है, अखबार की परवाह वे नहीं करते. अनजान रहकर भी आदमी कितना [illegible] हो सकता है, इसकी मिसालें इस हिन्दुस्तान में ही बहुत मिल जाएँगी. शायद कभी वक्त आए, जब अखबारों पर लोगों का उतना यकीन नहीं रह जाएगा, जितना आज है.

—मुमकिन है, हमारे संस्कारों का कोई हिस्सा चौधरी के संस्कारों के क़रीब हो. फिर ? अनूप ने पूछा.

—तुम्हें शक है ? हमारे कई संस्कार चौधरी के क़रीब होंगे. अनजान ही हम लोग कुछ ऐसे मूल्यों के आदी हो गए हैं कि अपने अन्दर बहुत-सारे सामंती संस्कार अब भी मौजूद हैं. एक-एक को बड़ी बेरहमी से काट-काटकर बाहर निकालना होगा, दोस्त.

अनूप के सर की नसें झनझना-सी रही थीं.

—दरअस्ल, बहुत बेचैन हुए बिना हम कुछ कर ही नहीं सकते. विनायक ने अनूप की बांह पर थपकी-सी दी.

—इट इज़ ऐन एण्डलेस बैटल. सुरिन्दर बोला.

—यस. एण्डलेस इसलिए है कि तमाम कोशिशों के बावजूद अंदर कुछ संस्कार आखिर बाकी रह ही जाते है. सारे संस्कारों को क्राइस्ट जीत सका था लेकिन दुनिया का सबसे बड़ा क्रांतिकारी भी नहीं. आदमी में ये परफेक्शन तो खैर कभी नहीं आएगा लेकिन जितना भी रिफाइण्ड वह हो सकता है, रास्ता उतना ही साफ़ हो जाता है.

संतोष ने अपनी चुप्पी तोड़ी—दरअस्ल, जिन्दगी का मतलब बहुत देर में हम लोगों ने समझा है. अब लगता है, बहुत-सारा वक्त बस यूं ही गंवा दिया.

—लेकिन यह कितनी बड़ी बात है कि हम लोग एक ग़लत बात को जिंदगी का असली मक़सद समझकर खुश नहीं हो रहे हैं. विनायक बोला.

—क्रांति शब्द अब जैसे अपना असली मतलब खो बैठा है. थानेदार से लेकर बीड़ी का व्यापारी या कॉलेजों का प्रोफेसर क्रांति के अलावा कोई और बात ही नही

करता और कुलमिलाकर वे सुख से गृहस्थी चला रहे हैं.

—इसके पीछे एक बहुत बड़ी वजह है. हमारे जेहन में ठूस-ठूसकर एक बात भर दी गई है कि अंग्रेज हिन्दुस्तान की अहिंसा से घबराकर वापस विलायत चला गया. छोटे दर्जे के बच्चों से लेकर, बूढ़ों तक हर कोई इस बात पर यक़ीन करता है. नई नस्ल में वैसे कुछ लोग ऐसे जरूर हैं जो हक़ीक़त समझते है. लेकिन उनकी तादाद ही कितनी है ?

—वैसे अहिंसा का जवाब क्या हो सकता है ?

—यह कोई सवाल ही नहीं है. अहिंसा कबूतरों या खरगोशों में होती होगी लेकिन जिन्हें धूप और बरसात में बाहर निकलकर रोटी का जुगाड़ लगाना पड़ता है, वे अपने को जिन्दा रखने के लिए 'हनुमान चालीसा' का पाठ नहीं करेंगे. आखिर अहिंसा की जड़ जिन लोगों में है उन्हें प्रवचन देकर गाय बना देंगे, ऐसा कोई 'हिपोक्रेट' ही कह सकता है. वैसे कई दफ़ा अहिंसा के रास्ते पर उतरने से पहले ही काम बन जाता है. आख़िर में विनायक ने बालकराम की तरफ़ देखा.

—मैं छुरे का इस्तेमाल कर लूंगा. बालकराम बोला.

बालकराम के चेहरे पर एक ऐसी निरीहता है कि द्वारिका को शायद यक़ीन नहीं आया था. पूछा—छुरा वग़ैरह है क्या घर में ?

—कोई आधे दर्जन तो होंगे ही. इनके अलावा भाले वग़ैरह भी उतने ही हैं. मेरे बाबा के जमाने से पड़े हैं. हम लोग कभी-कभी निकालकर सफ़ाई-वफाई कर लेते हैं.

विनायक ने द्वारिका को आश्वस्त किया लड़ाई में साथ वाले सभी होते हैं. बालकराम अगर छुरे चला सकता है तो हम लाश देने के लिए फूल तो नहीं बरसाएंगे. उस वक्त जैसा भी मौक़ा होगा, उसके मुताबिक हर किसी को अपना-अपना फ़र्ज़ अदा करना होगा. मुमकिन है बालकराम की जगह आख़िर में तुम्हीं को छुरे का इस्तेमाल करना पड़े !

द्वारिका कुछ नहीं बोला.

विनायक समझ गया कि अब वह अंदर काफी मजबूत हो गया है.

—यह कोई रोमांटीसिज्म नहीं है. संतोष बोला—बड़ा क्रूर है सब-कुछ लेकिन अब और कोई ऑलटरनेटिव भी नहीं है.

—आज़ादी की लड़ाई के दिनों सशस्त्र लोग दीए की लौ में अपनी-अपनी उँगली जलाकर क़सम खाते थे. विनायक बोला—अभी हम लोग उंगली नहीं जलाएँगे. क्योंकि फ़िलहाल इनकी बहुत जरूरत है. और क़सम खाने की भी कोई जरूरत नहीं है. लेकिन अगर हममें से किसी के भी दिल में थोड़ा-सा भी शक है, उसे इतना बड़ा जोखम नहीं उठाना चाहिए.

द्वारिका बोला —नहीं, अब हम लोग सिर्फ़ पांच ही रह गए हैं, पहले और भी दोस्त थे. रात-रात-भर हम लोग बहस करते थे. लेकिन कुछ लोग शायद सिर्फ़ बहस कर सकते हैं, बहस करने के बाद बात नवाबगंज तहसील जाने की हुई तो छंटनी शुरू हो गई. आख़िर में घटते-घटते हम सिर्फ़ पांच लोग रह गए हैं. इतने दिनों. बाद आप और बालकराम मिले हैं. कुल सात ही लोग तो हुए !…

द्वारिका शायद कुछ और भी कहता लेकिन विनायक बीच में ही बोल पड़ा—अगर हम लोग सिर्फ़ पांच ही होते, तो भी मैं यह नहीं समझता कि हम कम हैं. बात, दरअस्ल, यूं है कि हम पांच के पांचों चौबीस घंटों में चौबीस ही घंटे एक ख़ास मक़सद से अपना रास्ता तय करते हैं. लेकिन चौधरी हरद्वारी ऐसा नहीं करता. इन चौबीस घंटों

में नाटक करने हैं, व्यापार करना है, रखैल के पास जाना है, बीवी-बच्चों के साथ कुछ वक्त गुजारना है वग़ैरह···वग़ैरह. लिहाज़ा अब समझ सकते हो कि उसकी ताक़त बंटने के बाद कितनी छोटी हो जाती है.

संतोष को यह व्याख्या मज़ेदार लगी—ग्रैण्ड एक्सप्लेनेशन.

—लेट अस रीमेन ग्रैण्ड फॉर एवर.

सुरिन्दर के कमरे की मीटिंग वहीं ख़त्म हो गई.

●●

अगले दिन धनंजय कॉलेज नहीं आया.

अनूप आया था लेकिन द्वारिका से कोई ख़ास बात नहीं हुई थी. सुरिन्दर ने उससे बात करने की कोशिश की तो वह व्यस्तता के बहाने लाइब्रेरी की तरफ़ चला गया.

धनंजय इसके बाद भी दो दिन और कॉलिज नहीं आया.

जिस दिन धनंजय आया, अनूप कशमकश से मुक्त हो गया था. उसने द्वारिका और सुरिन्दर से कैण्टीन में बात की और इधर ही किसी दिन विनायक से मिलने के बारे में कहा.

सुरिन्दर कुछ पूछने को हुआ था लेकिन द्वारिका ने इशारे से रोक दिया. अनूप यह समझ गया—बहुत कशमकश में था अब तक. लेकिन कल शाम के बाद से लगा; जिस रास्ते पर बहस कर रहे थे. उसके अलावा कोई और चारा नहीं है.

संतोष कोने की एक मेज़ पर लैला भार्गव के साथ था. लैला किसी बात पर खिलखिला रही थी. संतोष आदत के मुताबिक चुप था.

अनूप ने संतोष की तरफ़ देखा—संतोष पता नहीं इतनी जल्दी सब-कुछ कैसे डिसाईड कर लेता है, ज़ुबान की ख़ामोशी में ही बड़ी ताकत है.

सुरिन्दर थोड़ा-सा हँसा. कोई ख़ास ज़रूरत नहीं थी, फिर भी.

तब तक धनंजय भी आ गया.

सुरिन्दर उसे देखते ही काउंटर पर जाकर चाय ले आया—इतने दिन घर बैठा-बैठा थक गया होगा, अब चाय पीकर थकान उतार ले.

धनंजय इशारा समझ गया और बिल्कुल नहीं झेंपा. चाय का घूंट भरकर सिग्रेट सुलगा ली —डिसाईड करने में थोड़ा वक्त लग गया. तू यार यक़ीन नहीं करेगा कि मैं उस दिन के बाद से रात को लगभग सोया ही नहीं.

सुरिन्दर फिर हँस पड़ा.

द्वारिका बहुत गंभीर था. इस वजह से सुरिन्दर जल्दी ही चुप हो गया.

—यह साईन वैसे पॉजिटिव है. द्वारिका बोला.

धनंजय मुस्कराया—शायद. लेकिन यह तो बता, मैंने फ़ैसला करने में बहुत देर तो नहीं लगा दी ?

—नहीं. हम लोग तेरा इन्तज़ार कर रहे थे. इसलिए तेरे घर भी नहीं गए थे, मैं श्योर था कि तेरा फ़ैसला हम लोगों से अलग नहीं होगा.

—विनायक जी, यार, ग्रेट हैं.

—हुं हैं.

—उनके पास दो चीज़ें बहुत बड़ी हैं. पहली चीज समझ और दूसरी चीज़ हारे हुए लोगों के लिए करुणा और प्रेम. पिछले तीन दिनों में मैंने इन बातों को डिस्कवर किया. दिमाग़ में एक हज़ार परेशानियां थीं लेकिन अब अपने को बहुत फ्री महसूस कर रहा हूं.

—आई न्यू इट. द्वारिका बोला.

सुरिन्दर संतोष को घूर-सा रहा था—फँसा है बेचारा. बुलाऊँ ? फिर अपने आप ही जवाब दे दिया—लैला फिर इसी बात पर शायद उसका पत्ता काट दे.

सब एक साथ हँस पड़े थे.

●●

बूंदा-बांदी-सी हो रही थी. बादल बरस तो खैर ज्यादा नहीं रहे थे, गरज रहे थे. मौसम एकदम सर्द था. कुमाऊँ की पहाड़ियों की हवा की वजह से दिसम्बर की यह रात एकदम बर्फीली बन गई थी.

भोजीपुरा में नेपालिन का जहां मकान है, वह दरअस्ल आम का एक पुराना बगीचा है. बगीचे में तीन कमरों का एक छोटा-सा मकान बना है. रास्ते के उस पार आटे की चक्की है. शाम होते ही नेपालिन चक्की के दरवाज़े पर अपने हाथ से ताला लगाती और घर आ जाती.

वे सात लोग बगीचे के पास एक झुरमुट के बीच शाम से ही बैठ गए थे. पहले पता नहीं था कि भोजीपुरा के सारे मच्छर यहाँ रहते होंगे. सुरिन्दर मच्छरों की वजह से झुंझला तो रहा था लेकिन चांटों से उन्हे मारने की बेवकूफी नहीं की.

यहां से नेपालिन का घर सीधा दिखता है.

बिलायती शराब की बोतलें और भुना हुआ मुर्गा एक छोटी-सी मेज़ पर था. चौधरी मुर्गे की टांग तोड़ रहा था और अधेड़ नेपालिन चहक-सी रही थी. उसके माथे पर एक बड़ी-सी बिन्दी भी थी. थोड़ी देर में वह पीने भी लगी. चौधरी शायद कुछ ज्यादा ही पी गया था. उसके झूमते रहने से यही अन्दाजा लगा. फिर वह नेपालिन के साथ वे हरकतें करने लगा, जिनके लिए पहले ही दरवाजा बन्द कर लेना होता है. लेकिन वह शायद इतना पी गया था कि दरवाज़ा बंद करने का ख़याल ही नहीं था. वैसे भी बगीचा होने की वजह से पूरा एकान्त है ही.

नेपालिन ने अपना जिस्म उसके हवाले कर दिया. चौधरी फिर वहशी हो गया और जानवर का-सा बर्ताव करने लगा. लेकिन नेपालिन ने कोई एतराज नहीं किया. उसे शायद यह बर्ताव अच्छा लगा. या कम-से-कम इस बर्ताव की आदत जरूर पड़ गई थी.

इसके बाद की घटना बहुत संक्षिप्त है.

सुबह दूसरे कमरे में नेपालिन लगभग नंगी हालत में बेहोश पाई गई थी और चौधरी सामने वाले कमरे में एक नंगी लाश की शक्ल में पड़ा था.उसके चेहरे या जिस्म पर कोई ख़ास खरोंच तक नहीं थी. सिर्फ़ कलाई और पैरों की नसें कटी हुई थी. मुंह से गाढ़ा पानी-सा कुछ निकलकर फर्श पर जम गया था. मक्खियां भिनभिना रही थीं.

इस हादसे के बारे में बरेली के अखबारों में काफ़ी कुछ छप गया था. समाचारों में चौधरी की रंगीन ज़िन्दगी के बारे में गढ़ी हुई कहानियां थी. कुछ दिनों बाद सब-कुछ ठण्डा हो गया. वैसे पुलिस की फाईल में बतौर खानापूरी मामला दर्ज था. एक दफ़ा सुनने में आया था कि पुलिस कप्तान खुद जाकर तहक़ीकात करेगा. लेकिन आख़िर में कुछ नहीं हुआ और लोग भूल-से गए. सिर्फ़ कीछा वालों को ही याद रह गया था कि इस इलाके में एक चौधरी हुआ करता था.

●●

लुक्का पहलवान महीने-भर से बिल्कुल नहीं दिखा था.

अनीस की सायकल-स्टोव मरम्मत की दुकान भी बन्द थी. मक्खन पहलवान भी इधर कई दिनों से बिल्कुल नजर नहीं आया. ऐसा होना कोई नई बात नहीं है. कई बार ऐसा हुआ भी है कि लुक्का पहलवान और उसके शागिर्दों में से कोई भी चार-चार महीने तक गायब रहा है. सिर्फ छेदी ही हमेशा इधर-उधर चहल-कदमी करता हुआ दिखाई पड़ जाता है.

छेदी को मुहल्ले वालों ने औरतों जैसा कोई दर्जा दिया है. कई बार शंकर उसके गाल चूम भी लेता—हाय मेरी जानी !

छेदी को ऐसी हरकतों से गुस्सा तो आता है लेकिन ज्यादा बोलने की हिम्मत नही होती. कुछ बोला नही कि सब इकट्ठे हो-हो करने लगे.

छेदी से जगदम्बा ने कई दफा लुक्का की खबर पूछी भी थी. वैसे जगदम्बा को मालूम है, छेदी लुक्का के पांव वगैरह दाब देने के अलावा अगर कुछ कर सकता है तो वह है थैला लेकर बाजार जाना और वहा से लौकी और टिंडे लेकर लौटना. खाना वैसे परमेसरी ही बनाती है. लेकिन कई दफा वह चारपाई पर पड़ी रहती और छेदी टिंडे की सब्जी और परांठें बनाता. पीछे की तरफ उसकी अपनी कोठरी है.घुसने का जो दरवाज़ा है, वह खिडकी से थोडा ही बड़ा होगा. यानी गर्दन और कमर मोड़ कर अंदर घुसना पडता है. जिसने यह मकान बनाया था, उसने कबाड़ इकट्ठा करने के लिए खाली बची थोड़ी-सी जगह का यह इस्तेमाल किया होगा तब अगर उसे यह मालूम होता, छेदी अहीर पहलवानी के सिलसिले में यहां आकर रहेगा तो कोठरी की शक्ल ऐसी जरूर नहीं होती.

अन्दर घुसने के बाद एक चारपाई है. बाँस की पुरानी चारपाई. सर के ऊपर का छप्पर इतना नीचा है कि सीधा खड़ा नहीं हुआ जा सकता. लिहाज़ा चारपाई का इस्तेमाल मजबूरी में ही करना पडता है चारपाई के साथ जो दीवार है, उसमें एक आला-सा बना हुआ है. वहां हनुमान जी की एक रंगीन तस्वीर है. हनुमान दोनों हाथों से सीना चीरकर दिखा रहे हैं कि दिल के अंदर राम-सीता बसे हैं तस्वीर के सामने कुछेक फूल भी पडे हैं. छेदी अपने भक्तिभाव की वजह से तीन-चार दिनों में एकबार कहीं से गेंदे के चार-छह फूल लाकर डाल देता है. यह अलग बात है कि नसीब के मारे ये फूल सूखने रहने के अलावा कुछ और नहीं कर पाते.

तस्वीर के बाद कुछ हटकर एक कैलेण्डर टंगा है. एक खूबसूरत लड़की चोली और कच्छे में किसी झील के किनारे बैठी हुई है. झील के ऊपर चाँद उग आया है और एक तरफ़ देवदार के पेड हैं. दूसरी तरफ पालदार नाव दिखाई पड़ रही है, कुल मिलाकर एक रोमैंटिक और एकान्त माहौल है,जहां सिर्फ फिल्म की कहानी की तरह एक लडकी किसी की इन्तजार में बैठी हुई है. छेदी कई दफा कैलेण्डर को देर तक घूरता रहता, लड़की के जिस्म के उभारों को देखकर एक सनसनी-सी भी कई बार महसूस होती है. तस्वीर का मुआयना करते वक्त वह उदास होता या खुश, यह कहना तो मुश्किल होगा लेकिन इतना ज़ाहिर है कि तस्वीर की यह अधनंगी लड़की छेदी की एक खामी जरूर है. तस्वीर के नीचे सातेक बरस पुरानी तारीखें छपी हैं. छोटे-छोटे बारह खाने बने हैं, जिनमें महीनों के नाम और उसके हिसाब से तारीखें छपी हैं.

दाहिने हाथ की तरफ एक छोटी-सी संदूकची में पहनने के कुछ कपड़ों के अलावा कचहरी के सामने दो रुपए देकर एक खिंचाई हुई तस्वीर है. पीछे हवाई जहाज का कपड़े के ऊपर बनाया हुआ एक नक्शा था. फोटो खिंच जाने के बाद कम-से-कम छेदी को यही लगता है कि हवाई जहाज बिल्कुल असली है.फोटो खिंचाते वक्त वह तनकर खड़ा हो गया था और सांस रोककर छाती थोड़ी चौड़ी कर ली थी. आंखें भी अच्छी तरह खुली हुई थीं, उस वक्त उसे महसूस यही हुआ था कि थोड़ी-सी कोशिश करने से अखाड़ेबाजी में वह कईयों को पछाड़ सकता है.

इसके अलावा संदूकची में एक बांसुरी है. एक दफ़ा रामगंगा के मेले में खरीदी थी. खरीद जरूर ली थी लेकिन बजाने की कोशिश की तो सब बेसुरा हो गया था. लुक्का भी शायद देर तक सुनते रहने की वजह से झुंझला उठा था. उसने डांट दिया तो आगे कभी उसकी मौजूदगी में छेदी ने बांसुरी में फूंक नहीं मारी. कभी अगर पहलवान घर नहीं हुआ तो दस-पांच मिनट कुछ भी बजाकर उसे वापस संदूकची में रख देता है.

इसके अलावा छप्पर का कोना और दीवार की कील के साथ एक रस्सी बंधी हुई है. उसमें अंगोछा, कच्छा वगैरह चार-छह कपड़े पड़े रहते हैं.

इस मकान में वैसे बिजली तो है लेकिन छेदी की कोठरी में ढिबरी ही जलती है. उसने कभी लुक्का से कहा भी नहीं कि चार गज तार और एक बल्ब आ जाय तो यह कोठरी भी जगमगा सकती है. अब ढिबरी की रोशनी की शायद आदत भी पड़ गई है. जहां ढिबरी जलती है वहां दीवार का एक हिस्सा काला हो गया है. छप्पर पर भी ठीक उस हिस्से से स्याही पुत गई है लेकिन छेदी ने पुताई वगैरह कराने की बात कभी सोची ही नहीं.

लुक्का जब घर में होता तो पता नहीं क्यों वह अपने को बहुत आजाद महसूस कर ही नहीं पाता.एक तरह से सिकुड़ा-सिकुड़ा-सा काम निपटाता रहता.हुक्म हुआ तो जाकर पहलवान के पांव दबा दिए, बस, न पहलवान कुछ अलग से बोलता है न उसे ही बात करने की हिम्मत होती. पहलवान घर पर न हुआ तो परमेसरी से ज़रूर कभी-कभी हंसी-मजाक हो जाती है.

इस दफ़ा लुक्का दिखाई नहीं पड़ा तो मुहल्ले में किसी को सिरदर्द तो नहीं हुआ लेकिन जगदम्बा को कुछ दाल में काला नज़र आया था. छेदी से पूछा तो बता दिया—हल्द्वानी गए हैं.

जगदम्बा ने मज़ाक किया— हल्द्वानी की ससुराल में तो नाय ?

लुक्का को लेकर ऐसी मज़ाक कोई नहीं करता. कर लिया तो जगदम्बा थोड़ा डर हीं गया था. आख़िर में उसने छेदी के सामने चाय का एक प्याला रखा और अभी-अभी की बात की गहराई खत्म करने की कोशिश की—मैं तो मजाक कर रिया था.

छेदी ने घूंट भरा. कुछ नहीं बोला.

जगदम्बा ने बीड़ी सुलगाई और जबरदस्ती हंसने लगा—वैसे छेदी, तू अब पूरा पहलवान लगने लगा.

शंकर ने उसकी कमर में हाथ डाल दिया—जे तो मेरी जानी है.

छेदी ने शंकर का हाथ हटा दिया.

शंकर ने फिर उसका गाल चूम लिया—कित्ते मक्खनी गाल हैं. जी करता है, खाय जाऊं अपनी जानी को.

गोबिन्द हंस पड़ा.

जगदम्बा ने धुंआ उगला और शंकर को फटकार-सा दिया—अमां, तू भी पूरा

लौण्डेबाज ही रिया.

यह गाली शंकर के लिए मीठी थी.या शायद गाली थी ही नहीं.बोला—ओय होय ! छेदीलाल को तू क्या समझेगा ?

इस दफ़ा रामधनी भी गोबिन्द के साथ हंसा. डोरीलाल भी बैठा था लेकिन वह सिर्फ़ अख़बार की तस्वीरें देख रहा था.

छेदी ने चाय पी ली और उठ खड़ा हुआ.

जगदम्बा ने सूखी औपचारिकता से पूछा—अभी चले ?

छेदी ने गर्दन हिलाई और भगीरथ के 'होटल' से नीचे उतर आया.

वह कुछ दूर निकल गया तो गोबिन्द बोला—पैहलवान की जोरू की धोती साफ करने जारिया होगा.

इस वाक्य पर शंकर को बेहद मजा आया—लुक्का बड़ा समझदार है. लुगाई की खिजमत के लिए हिजड़ा बसा रखा है घर में.

—तुझे लगाय दूं उसकी जघा ? जगदम्बा ने कश खींचकर पूछा.

शंकर ने मेज पर थपकी-सी मारी—ह्यां एक चा.हूं तो दस-दस लौंडियां माला लैके आ जांगी. वह फिर अपनी बांहों की मछलियां घुमाने लगा.

जगदम्बा खिक-खिक करने लगा.

डोरीलाल शायद ऊब रहा था. वह बाहर चला गया.

●●

मलूकपर थाने का दरोगा चार सिपाहियों के साथ लुक्का के घर पहुंचा था. पूरे मुहल्ले में यह ख़बर फैलने में शायद मिनट-भर का वक्त लगा. पहलवान के घरके आस-पास जो छते थीं, भर गई, उन पर बच्चे और औरतें ही ज्यादा थीं वैसे कुछ मर्द भी थे. गली के मुंह पर एक सिपाही खड़ा था और पच्चीसेक लोग उसके गिर्द में थे.

छेदी हड़बड़ा रहा था और लुक्का की जोरू परमेसरी रो रही थी. दरोगा घर के अंदर घुसकर कपड़े-लत्ते वगैरह बाहर आंगन में फेंक रहा था. दो सिपाही उन्हें फाड़-फाड़ कर देख रहे थे. उन्हें शायद उम्मीद थी कि इनके अंदर सोने-चांदी की कुछ कीमती चीजें छिपी हैं.

आख़िर में सब लोग जान गए थे कि लुक्का पहलवान कल रात तिलहर में मारा जा चुका है. शाहजहांपुर जिले का छोटा-सा कस्बा है तिलहर. किसी जमाने में कालीन वगैरह का खासा व्यापार यहां से होता था. लेकिन आजकल वह व्यापार यहाँ नहीं होता और छोटी-सी एक अनाज मण्डी है, जो इस कस्बे का सब कुछ है.

शांहजहांपुर के इस इलाके में चने की खेती अच्छी होती है. चना है तो गेहूं भी होना चाहिए लेकिन देखा जाय तो चने के हिसाब से गेहूं की पैदावार बहुत कम है. पहले लोग गेहूं के खेत में ही चना बोते थे. फिर यहां के चने की मांग बाजार में बढ़ी तो लोग अलग से चने की ही खेती करने लगे. इसके अलावा दालें कई तरह की होती हैं.

स्टेशन के पास बिरियागंज मुहल्ला है. एक तरह से वही इस कस्बे का सबकुछ है. पहले ज्यादातर मकान खपरैल के ही होते थे. इधर पक्की छत वाले भी बनने लगे हैं.

इस बिरियागंज में ही अनाज मण्डी भी बन गई. वैसे बरेली-शाहजहांपुर के सामने यह मण्डी कोई हैसियत जरूर नहीं रखती लेकिन कई लोग ऐसे हैं, जो यहीं से माललेना पसंद करते हैं.माल और जगहों के मुकाबले काफी सस्ता मिल जाता है और

अगर थोड़ी-बहुत वाकफ़ियत हुई तो कई दफ़ा उधार पाने में भी ख़ास दिक्कत नहीं होती.

तिलहर में ये दो ही जगह है जहां थोड़ी गहमा-गहमी रहती है—स्टेशन और बिरियागंज. स्टेशन पर पहले गाड़ियाँ कम ही रुकती थीं. अब एक-आध मेल गाड़ी को छोड़कर बाकी गाड़ियां लगभग मिनट-दो मिनट के लिए रुक ही जाती है. गाड़ी आती है तो बिरियागंज तक उसका पता चल जाता है. इन्जन की सीटी की आवाज़ तो खैर सुनाई पड़ती ही है, खड़-खड़-खड़ाक से गाड़ी के पहिए बदलने की भी आवाज़ मिल जाती है. बिरियागंज के बाज़ार के अख़िर में बजरंगदास का पुश्तैनी मकान है. उस तरफ काफी खुला-खुला-सा है सब. बजरंगदास के मकान के बाद काफी दूर तक खेत ही खेत हैं.

पहले पुलिस मे हवलदार था बजरंगदास. लेकिन हवलदारी कम और जेब गर्म ज्यादा कर रहा है. हर साल जमीनें बीघा-दो बीघा बढ़ जाती और वह डंके की चोट पर पूरे तिलहर पर राज करता. बीच-बीच मे ऊपर वाले के यहा भेंट भिजवा देता था. शाहजहांपुर की कचहरी मे उसका दामाद वकील था.बजरंगदास पढ़ा-लिखा जरूर नहीं था लेकिन लड़की की शादी में पूरे पचास हजार खर्च कर वकील दामाद ले आया था. शादी के वक्त दामाद बी. ए. करने के बाद वकालत पढ़ रहा था. जब तक उसकी पढ़ाई खत्म हो नहीं गई, हर महीने बजरंगदास पूरा खर्चा भेजता था. पढ़ाई खत्म होने मे उसे छह साल लग गए और जब तक चार बच्चे हो चुके थे.

जिस दिन दामाद का नतीजा आया, बजरंगदास ने मुहल्ले-भर मे देसी घी के लड्डू बंटवाए थे. अगले दिन फिर पण्डित बुलवाकर घर में कथा कराई थी. उस दिन से कोई भी मिलता तो वह जिक्र करना न भूलता कि दामाद वकील बन गया है.

दामाद फिर शाहजहांपुर की कचहरी मे काला कोट पहनकर आने-जाने लगा. सुनने में आता है, दामाद के वकील बनते ही, बजरंगदास की तकदीर ही फूट गई. हवलदार चोरी और राहजनी के इल्ज़ाम मे लोगों को पकड़ता और दामाद मुकदमा लड़ कर छुड़वा देता. ससुर-दामाद—दोनों मजे मे बसर कर रहे थे.

इसके अलावा बजरंगदास की दूसरी आमदनी भी थी. मण्डी का मामला है. हर बात यहां सही तो हो नहीं सकती. चकलेबाजी से लेकर रिश्वतखोरी, सभी कुछ अपने-अपने रंग में चलता है. चलता इसलिए है कि बजरंगदास चलने देता है. यहां दरोगा हर तीसरे साल बदलता रहा है. लेकिन हवलदार वही है. नया दरोगा आकर फ़जीहत नहीं करता. हवलदार पुराना आदमी है. वह जैसी सलाह देता, वैसा ही कर देता. बजरंग की कई बार तरक्की होने को हुई लेकिन तरक्की का मतलब है कहीं और तबादला हो जाना. वह ऊपर वाले का पांव पकड़ लेता. गिड़गिड़ा कर कुछ कहता भी लेकिन ऊपर वाले को यह सब सुनने की जरूरत नहीं पड़ती. मुट्ठी गरम होते ही वह तरक्की रुकवा देता.

बजरंग ने फिर बेटे के नाम से अनाज मण्डी में एक आढ़त खरीद ली थी.अपने पास भी जितने खेत थे, उनकी पैदावार अगर मण्डी में ले जाकर खुद बेचें, खासा फायदा हो सकता था. ऊपर से दूसरों से भी चने, दाल, गेहूं वगैरह खरीद कर मण्डी मे बेचे जा सकते थे. बजरंग समझ गया था कि रुपए तो धूल, मिट्टी की तरह बिखरे पड़े हैं. बेवकूफ़ों को दिखाई नहीं पड़ता. जिनके जेहन मे अकल है, पूरा खजाना बटोर सकते हैं.

इसके अलावा हवलदार ने सूद का कारोबार भी खासा चला रखा था. इस रुपए के लेन-देन में ही कई खेत पानी के भाव मिल गए थे. आखिर में वह एक कोल्हू

लगान की मोच ही रहा था कि शाहजहांपुर म कोतवाल ने बुला भेजा. बजरंग समझ गया. तरक्की का ही मामला होगा. सुन चुका था, नया कोतवाल उम्र मे लड़का-सा है और फर्राटे से बात करता है. शायद तरक्की करके शाहजहांपुर की कोतवाली मे तैनात कर देगा. खैर जाने मे पहले उमने मनौती मानी कि इस दफा तरक्की रुक जाए तो घर मे चौबीस घण्टे का कीर्तन करवाएगा खुद पुलिस कप्तान ने बुलाया है, यह कोई मामूली बात तो नही है बजरग ने एक नई नेकर और कमीज सिलवाली और भारी-सा एक बूट खरीद लिया. फिर बाजार मे निकल कर कई तरह के फल खरीदे. साथ मे डोलची लिए एक सिपाही था हवलदार को लोग जितना अन्यायी समझते है, उसका पूरा-का-पूरा सच नही है. फल डोलची म डलवाकर वह जेब मे पर्स भी निकालता है, लेकिन दुकानदार हाथ जोड लेता था जे छोटी-सी भेट है.

बजरग हः हः करके हंसता और अगली दुकान की तरफ बढ जाता वहाँ भी यही घटना दुहराई जाती आखिर मे जब तीनेक बेत की डोलचिया भर गई, बजरग स्टेशन की तरफ बढने के लिए रिक्शे पर बैठ गया

कप्तान के कमरे के सामने पहुच कर अर्दली को सलामी दी और मिलने की इजाजत मागी. समझ गया था, इसकी इजाजत के बिना आदमी तो क्या, मक्खी भी घुस नही सकती अर्दली ने बगल म पडे बैंच पर बैठ जाने का इशारा किया था. बजरग दास पूरे डेढ घटे कप्तान साहब से मिलने की ख्वाहिश मे भेट वाली डोलचियों के साथ बाहर बैठा रहा तय नही कर पा रहा था कि भेट कप्तान के ओहदे के मुताबिक है भी या नही नकद भी कुछ पकडाया जा सकता था लेकिन दामाद ने आगाह कर दिया था कि बडा सख्त आदमी है

डेढ घटे के बाद अर्दली ने अदर घुसने की इजाजत दी बजरग अन्दर घुसा और खटाक से सलामी दी फिर डोलचियों को घसीट कर उन्हे अन्दर तक ले आया.

कप्तान अट्ठाइस-एक बरस का एक गोरा-चिट्टा लडका था डोलचियाँ देखी और वह तुनक उठा—क्या है यह सब ?

—आ रहा था, घर वाली ने हुजूर के लिए जबरदस्ती पकडा ही दिया. छोटी-सी भेट है, सरकार. बजरग विनय से विचलित हो रहा था

—स्काउंड्रल. यही सब इससे पहले ऊपर वालो को भिजवाते रहे हो. तुम्हारे खिलाफ खुफिया इन्क्वायरी हुई थी कप्तान ने फिर एक फाईल खोल ली—हूं, खूब खा-पी रहे हो···

बजरग को काटो तो खून नही इस वक्त अगर कडक कर आसमान से बिजली भी गिरती, वह इतना बेचारा नही बनता क्या कहना चाहिए, समझ मे नही आ रहा था साहब का चेहरा इतना सुर्ख था कि आँखे मिलाने की भी हिम्मत नही हो रही थी

कप्तान ने रिपोर्ट का एक हिस्सा दुबारा पढ लिया और भौहे सिकोड ली—अपनी तरफ से इस्तीफा भेज देना यहा से जाकर वर्ना हम अगर बर्खास्त करते है तो सिर्फ बर्खास्त ही नही, अदर भी कर देगे

साहब ने फिर फाईल बन्द की और निकल जाने की इजाजत दे दी—गेट आउट

बजरंग निकलने लगा तो पीछे से पुकार लि ।—इन डोलचियो को उठाओ, दफा हो जाओ.

वह हड़बडाया और डोलचिया उठाकर बाहर निकल आया.

अर्दली उसी तरह खड़ा था. बजरंग के जी में आया था, उसी को एक चपत जमा दे. ख़ैर, चपत उसने नहीं मारी और नल तक जाकर पेट भरकर पानी पी लिया. गला अब उतना सूखा-सा नहीं लग रहा था लेकिन आँखों के सामने जैसे खासा अंधेरा जमा हो गया था. सिर में चक्कर भी आ रहा था.

ख़ैर, बजरंगदास ने तिलहर की बस पकड़ ली और शाहजहांपुर से निकल आए. अगले ही दिन इस्तीफा लिखकर भिजवा भी दिया. पूरे तिलहर में घण्टे-भर में बात फैल गई. बात आख़िर फैलने ही लायक थी. बजरंगदास जैसा आदमी पैदा ही होता है हवलदारी के लिए. ऐसा कोई शख्स अगर नौकरी के दो साल बाक़ी रहते ही इस्तीफ़ा दे दे, तो ताज्जुब तो ख़ैर लोगों को होगा ही, कुछ लोगों को ख़ासी दिक्कतें भी उठानी पड़ेंगी. ले-देकर कुछ लोग अपना-अपना धन्धा चलाते रहे थे. अब नया हवलदार आएगा तो उसका मिज़ाज कैसा होगा, कौन जानता है.

लोग पूछने आए तो बजरंग ने मुस्कान बिखेर दी. कलेजा जब जलकर ख़ाक हो रहा हो, मुस्कान बिखेरने की तकलीफ काश ! ये लोग समझ पाते. लोगों को समझा दिया — उमर भी तो हो गई. अब बस पूजा-पाठ में टेम लगाऊंगा और फ़ुर्सत मिल गई तो थोड़ी-सी जो खेती-बाड़ी है उसे देखता रहूंगा. भई, इत्ते बरस सरकार की गुलामी की. अब तो आजाद होने को परान चाह ही सकता है. और वैसे भी गठरी बांध कै ऊपर जे सब थोड़े ही ले जाना है ? ऊपर वाले का नाम नाय लिया तो ऊपर जाय कै जवाब देगा क्या जे बजरंगदास हवलदार ?

तीन दिन के अन्दर इस्तीफा मंज़ूर भी हो गया.

बजरंग अब आदमी बन गया. बन गया तो लगा, हवलदारी के मुकाबले यह काम भी बहुत बुरा नहीं है. सूद का जो कारोबार चल रहा था, उसे थोड़ा और जमा लिया.

लेकिन बजरंग मंजा हुआ खिलाड़ी है. अच्छी तरह जानता है कि लक्ष्मी की इस माया का कोई भरोसा नहीं है. आज तिजोरी भरी हुई भी अगर है, कल सूखे के वक्त के खेत की तरह एकदम खाली भी हो सकती है. उसने बहुओं और बहुओं की सास के लिए भारी-भारी सोने के जेवर बनवा लिए. औरत की जात ही ऐसी है कि सोना-चांदी देखते ही फूलकर कुप्पा हो जाती है. एक पंथ दो काज. घर में सब खुश भी हो गए और बुरे दिनों के लिए पूरा इन्तजाम हो गया.

●●

लुक्का पहलवान इस बजरंग हवलदार के घर ही मारा गया. बजरंग अब हवलदार ज़रूर नहीं है, लेकिन पूरा तिलहर पुराने दिनों की इज्ज़त ही बखशता है. मुलाकात होने पर हवलदार साब कहकर ही लोग हाथ जोड़ते हैं.

लुक्का को शायद कुछ गलतफ़हमी हो गई थी. हवलदार की तिजोरी में खजाना भरा पड़ा है. इतना तो मालूम हो गया था लेकिन उसकी बांहों में अब तक घुन नहीं लग गई, यह पता नहीं था. उसने सोचा होगा कि आढ़त की गद्दी पर जिस दिन से वह बैठने लगा, बांहों की ताक़त भी उसी दिन चली गई.

बजरंग का मकान जहां है, उस तरफ़ काफ़ी-कुछ एकान्त-सा ही है. पीछे की तरफ़ तो खेत ही खेत हैं. रात-बिरात कोई अगर चीखे भी तो आवाज़ बहुत दूर तक नहीं जाएगी.

जिस वक्त हमला हुआ, रात के डेढ़ बज रहे थे. बजरंग ऊपर सो रहा था. आंख खुलते ही समझ गया कि डाका पड़ा है. छज्जे पर आया तो देखा चेहरे पर पट्टी बांधे आठेक लोग तैयार होकर आए हैं. दो के पास पिस्तौल भी थे. बाकी लोगों में से

हरेक के पास चमकते हुए छुरे थे. चांदनी रात होने की वजह से छुरों की चमक का पता अच्छी तरह चल गया था.

बजरंग के वैसे नौ बेटे हैं लेकिन उसे यक़ीन है, ये लोग बहुत हुआ तो चींटा मार सकते हैं. इस वक्त वे मारे डर के थरथरा भी रहे थे. चिल्लाने से आवाज़ पड़ोसियों तक पहुंचने की संभावना भी नहीं थी. वैसे भी जाड़ों की रात रज़ाई ओढ़कर सोने के बाद दीन-दुनिया की खबर ही किसे रहती है ?

बजरंग के पास वैसे एक पुरानी बंदूक है. बरसों से पड़ी हुई है और कभी उसका इस्तेमाल ही नहीं हुआ. उसका हुलिया देखकर कोई भी अंदाज़ लगा सकता है कि पहले महायुद्ध के वक्त की है. पांच-सात कार्तूस भी पड़े थे. वह कोने वाली कोठरी में गया और बंदूक लाकर आसमान में फायर करने लगा. तिलहर में बन्दूक चलने की नौबत अक्सर नहीं आती है. आवाज़ हुई और देर तक गूंजती रही. इसके बाद उसने तीन फायर और किए.

लुक्का दीवार की आड़ में चला गया था. समझ गया था, आढ़ती के यहां अगर दस भी गोलियां हुईं तो बहुत है. दस गोलियां ख़त्म होने में ज़्यादा देर नहीं लगती.

बन्दूक की आवाज़ सुनकर अड़ोस-पड़ोस के लोग भी जमा हो गए थे. कुछ लोग जो मामला भांप गए थे, जाकर बल्लम ले आए थे. थाने वाले शायद सो रहे थे. कोई फिर दौड़कर खबर करने चला गया था. चार सिपाहियों के साथ दरोगा आ गया था.

लुक्का की मौत फिर बजरंग की गोली से हुई थी. मक्खन के हाथ में भी पिस्तौल तो था लेकिन उसका इस्तेमाल नहीं हो सका था. लुक्का गिर पड़ा तो उसने भागने की कोशिश की लेकिन पीछे से किसी ने बल्लम फेंक दिया था. उसे मरने में कोई दो घण्टे लगे थे. बाकी लोगों में से सिर्फ एक खेतों से होकर भाग सका था. वर्ना सब-के-सब बुरी तरह ज़ख्मी होकर बेहोश-से पड़े थे.

●●

लुक्का की कहानी यहीं ख़त्म हो गई.

लेकिन परमेसरी और छेदी की ज़िन्दगी में यहीं पर जबरदस्त मोड़ आ गया. बिहारीपुर के उस मकान के दरवाज़े पर ताला लटक गया. इसके बाद परमेसरी को किसी ने फिर कभी इस मुहल्ले में नहीं देखा.

चौपला में एक रेलवे क्रॉसिंग है. क्रॉसिंग के उस पार शुरू में चीनी मिल है. उसके बाद गांव शुरू हो जाते हैं, चीनी मिल के सामने से होकर यह सड़क बदायूं तक जाती है. पक्की चौड़ी सड़क है और सामान से लदे ट्रक रफ्तार से गुज़र जाते हैं. कई बार बीच सड़क पर डकैती भी हो जाती है. लेकिन अब चाहे कुछ भी हो जाय लुक्का पहलवान के नाम लेने का सवाल नहीं पैदा होता. पहले इस इलाके में कुछ भी हो जाने से लोग सिर्फ लुक्का पर ही शक करते थे.

चौपला से एक सड़क सिटी स्टेशन की तरफ, दूसरी कुतबखाने की तरफ़, तीसरी अय्यूब खां के चौराहे की तरफ़, चौथी बड़ी जेल की तरफ़ और आख़िरी बदायूं की तरफ़ जाती है. जो रास्ता बड़ी जेल की तरफ़ जाता है, उधर दिन के वक्त भी ख़ासा सन्नाटा रहता है. रेलवे के दो-तीन मकानों के बाद वहां सिर्फ मैदान है. एक गहरा नाला कुछ आगे जाकर मिलता है. नाले के ऊपर पुल बना हुआ है. पुल के नीचे कई बार कई हादसे हो चुके हैं. पिछले साल भी दो मर्तबा दो औरतों की इज्ज़तें वहां लूटी गई थीं, बिहारीपुर में सुनने में आया था कि एक में अनीस मियां शरीक रहा है. लेकिन इस बात का कोई सबूत नहीं था.

परमेसरी कई दफ़ा पुल के पास देखी जाती रही है. जब तक वह बिहारीपुर में थी, उसकी शक्ल के बारे में मुहल्ले वालों का ख़्याल नहीं के बराबर था. लुक्का की शक्ल ज़रूर कतई आबनूसी और डरावनी रही है लेकिन इसका यह मतलब नहीं होता कि उसकी जोरू उससे अलग नहीं हो सकती.

गोबिन्द ने उसे पहली बार देखा था. परमेसरी रंगीन कपड़ों में होठों को पान की पीक से लाल किए पुल के साथ के आम के पेड़ से सूखी लकड़ियां तोड़ रही थी. गोबिन्द उसका भरा हुआ जिस्म देखता रह गया था. पूरा बदन इतना गठा हुआ था कि उसे यकीन करने में थोड़ा वक्त लगा कि यही औरत लुक्का की जोरू रही है.

इसके बाद परमेसरी के नाम से बिहारीपुर में कितने ही क़िस्से बनने लगे. लुक्का की मौत के बाद क़िस्से गढ़ने का तरीका ही बदल गया था. भगीरथ के 'होटल' को गुलज़ार करने वाले पहली बार बेफ़िक्री से कुछ भी बोल पा रहे थे.

लेकिन परमेसरी को कभी कोई पुलिस की हिरासत में देख लेगा, यह कौन जानता था ? आख़िर में बिहारीपुर तक खबर फैल गई थी कि लुक्का की लुगाई कोतवाली में बन्द है. परमेसरी के साथ दो मर्द और थे. छेदी और पीपलघर वाला बाबा.

छेदी को वैसे कई लोगों ने मिरासियों के साथ देखा था. साड़ी पहनकर ताली बजाते हुए वह नाचता ज़रूर नहीं है लेकिन कभी उन लोगों का हारमोनियम उठाकर साथ चलता, कभी ढोलक उठाकर. मुहल्ले वालों ने समझ लिया था, छेदी अहीर अपने असली मुकाम पर ही चला गया है. मिरासियों के साथ चलता तो छेदी की कमर भी जैसे लचकने लगती. हारमोनियम बजाने वाला आदमी कभी उसकी ठुड्डी पकड़कर पुचकार देता तो वह जैसे पिघलने-सा लगता. लेकिन यही हरकत अगर बिहारीपुर में शंकर करता तो उसे बेहद गुस्सा आता. ख़ैर, उसने अपनी आंखों में सुरमा भी लगाना शुरू कर दिया था.

●●

पीपलघर वाला बाबा कहां गया, इसके बाद पता ही नहीं चला था. लुक्का ने कभी ज़िक्र नहीं किया और मुहल्ले वाले भी भूल-से गए थे. यह यहां का दस्तूर ही है कि बाद में कोई कुछ याद नहीं रखता. गाली-गलौज से लेकर मारपीट तक हो जाती लेकिन दूसरा दिन आते ही कोई कुछ याद नहीं रखता.

इतने दिनों बाद बाबा को पहचान लेना आसान नहीं था. वैसे भी दाढ़ी-मूछों के जंगल में चेहरा इस क़दर छिपा है कि आंखों का ही सिर्फ़ पता चल रहा था. जब तक बाबा मुहल्ले में रहा, दिन के उजाले में शायद ही कभी बाहर निकला हो. भगीरथ ही चारेक बार जाकर मिल आया था.

चार बार पांच-दस मिनट के लिए मिलना कोई ज़्यादा नहीं होता फिर भी भगीरथ ने कोतवाली में देखा तो पहचान ही गया. इस बीच बाल ज़रूर सफ़ेद हो गए थे और हथेलियों में झुर्रियां पड़ गई थीं. दाढ़ी-मूछ के बावजूद ग़ौर से देखने से पता चलता है, बाबा का एक कान कटा हुआ है और दाईं आंख के नीचे ज़ख़्म का एक गहरा दाग़ है. ये निशान बिहारीपुर रहने के दिनों में भी थे. शायद सालों से हैं.

छेदी कोने की तरफ़ पालथी मारे बैठा था.

परमेसरी दीवार से पीठ टिकाए बीड़ी पी रही थी. माथे पर बड़ी-सी बिंदिया थी और कमर में चांदी की करधनी. साड़ी घुटनों तक सरकी हुई थी लेकिन वह जैसे सबकुछ उतारकर जिस्म का सारा भेद भी खोल सकती है. बीड़ी पीने का अन्दाज़ ही कुछ ऐसा था कि देखने वाला चाहे दरोगा हो चाहे हवलदार या तमाशबीन, जनखे से ज़्यादा क्या होगा ?

बाबा अपने कम्बल मे सबकुछ ओढ़े बैठा था आखे बन्द थी, एकदम से देखने मे लगता है, समाधि मे बैठा है कम्बल मे कई छेद थे उनमे होकर पैर की उगलिया दिखाई पड रही थी जो बेहद गदी थी और नाखून बढ़ हुए थे

थोडी देर मे मलूकपुर का दरोगा भी दिखाई पड गया उसी ने सारा किस्सा बताया था

किस्सा होने के बावजूद यह सब किस्सा नही है कम-से-कम परमेसरी जिन्दगी को महज एक किस्सा मानने के लिए तैयार नही है लुक्का की मौत की खबर मिली तो शुरू मे उसे यकीन ही नही आया था बाद मे यकीन आया तो कुछ भी समझ नही पा रही थी दिल धक्-धक् कर रहा था फिर वह जैसे बिखरने-सी लगी थी कितनी देर तक रोती रही थी, यह पता ही नही चला था जब होश आया, देखा, अधेरा घिर आया है. छेदी अपनी कोठरी के सामने चुपचाप बैठा हुआ था

फिर अधेरा घिरता रहा और परमेसरी महसूस करती रही कि अधेरे के मैदान मे वह आजाद खडी है जिन्दगी मे उस दिन पहली बार आजादी महसूस हुई थी

बस, बिहारीपुर का रास्ता फिर वही खत्म हो गया था छेदी को साथ लेकर फिर परमेसरी रात के अधेरे मे बाहर निकल पडी निकल पडी तो लगा, साथ वाला अगर मर्द होता तो उसके हवाले भी अपने को किया जा सकता था आजाद होने के तुरन्त बाद ही वह जैसे अपने को कैद करने पर तुली थी

काफी परेशानी के बाद फिर असली ठिकाने पर पहुची थी

चीनी मिल के बाद कुछ झोपडे-से बने है उनके बाद ही खेत शुरू होता है ईट की दीवारो के ऊपर घास-फूस के छप्पर छप्पर की ऊचाई इतनी कम कि अगर आदमी कद्दावर हुआ तो गर्दन या कमर झुकाकर ही खडा होना पडेगा यहा ज्यादातर लोग चीनी मिल मे काम करने वाले है मिल साल-भर मे पाचेक महीने चलती है तब ये लोग गाव से आकर इन छप्परो मे रहते और दिन-भर काम करके पैसा जोडते बाबा इन्ही मे से एक है फिलहाल है हमेशा ही यहा नही रहता, कभी-कभी तो चार-चार महीने तक कोई पता नही चलता फिर एक दिन अचानक धूनी जलाकर सामने बैठा हुआ दिखाई पड जाता

परमेसरी अदाजा लगाकर पहुच ही गई तो रात काफी गहरी हो चुकी थी बाबा की आखे आग की तरह जल रही थी कायदे से चौकना चाहिए था लेकिन नही चौका. छेदी ने फिर सारा हाल सुनाया तो वह हसा. परमेसरी समझ गई थी कि तिलहर की एक-एक बात मालूम है

उसके बाद उसने कच्ची बनाने का काम शुरू कर दिया चीनी मिल के इस इलाके मे खास ग्राहक भी मिल जाते है रेलवे के लोको मे जो लोग काम करते है, उनमे से कई तो ऐसे है कि कच्ची के बिना काम बिल्कुल नही चलता

परमेसरी को कभी-कभी लुक्का का ख्याल वैसे आता है कच्ची बनाने का तरीका लुक्का से ही मालूम हुआ था कई दफा आबकारी वाले आकर पूरा घर तहस-नहस कर देते थे दिखावे के लिए इतना करना ही पडता था लुक्का जानता था कि उसका कौडी-भर का भी नुकसान कोई कर नही सकता पहले-से ही ले-देकर मामला इतना साध-सा लेता कि जब आबकारी वाले आकर हुडदग मचाते, वह आगन मे चारपाई पर बैठकर बीडी का कश लगाता रहता परमेसरी जरूर डर के मारे कापती-सी रहती फिर खाना-पूरी की ड्यूटी खत्म हुई और वे खाली हाथ लौट जाते तो अनीस मिया के यहा से लुक्का अपना साजो-सामान ले आता. काफी बाद मे

परमेसरी समझ गई थी कि पहलवान को अबगारी वाले ही छापे के बारे में ख़बर कर देते हैं.

बाबा के यहां काम शुरू हुआ तो खासा चल भी निकला. उसने भी समझदारी से काम लिया था. अपने रहने की जगह को दूकानदारी का अड्डा नहीं बनाया था. ज्यादातर वैसे छेदी ही जाकर माल पहुंचा आता है. कभी कोई नया ग्राहक अगर आता तो जब तक कि उसके बारे में पूरा यक़ीन नहीं हो जाता, परमेसरी माल देने का वादा नहीं करती. यक़ीन आ जाने के बाद उसका पता समझ लेती और पूरी क़ीमत पहले ही लेकर शाम के बाद छेदी के हाथ बोतल भिजवा देती. भाव में बोतल इतनी सस्ती थी कि एक बार जो यहां आता, आगे भी यहीं चला आता, माल भी खरा मिलता. पानी की एक बूंद भी परमेसरी ने कभी नहीं मिलाई. लुक्का भी इस मामले में अव्वल दर्जे का ईमानदार था.

कई दफ़ा परमेसरी नाले के पुल के पास खुद भी सामान पहुंचा देती. छेदी जबसे मिरासियों के साथ घूमने लगा है, कभी-कभी काम के वक्त मिलता नहीं. परमेसरी ने उसे कई बार समझाया भी लेकिन ज्यादा कहने की हिम्मत नहीं होती. लगता है यहां अब ज्यादा दिन रहने वाला है ही नहीं. साल-छह महीने में जब भी मौका मिला छू-मतर हो जाएगा.

परमेसरी माल पहुंचाने जाती तो एकान्त पाकर कोई दिलदार ग्राहक छेड़ भी देता. थोड़ी-बहुत छेड़खानी वह बर्दाश्त कर लेती है लेकिन कोई ज्यादा हरकत करने लगता तो वह यूं घूरने लगती कि बिचारा माल लेकर चुपचाप खिसक जाता.

परमेसरी के आने के बाद बाबा अच्छी तरह रम गया था. कभी-कभी लुक्का के लिए दिल भर-सा उठता लेकिन उस बारे में ज्यादा बात उसने कभी नहीं की. छह महीने बाद एक दिन परमेसरी को पता चला कि उसके अंदर भी कोई और सांस ले रहा है. शुरू में उसने गिराने की बात सोची थी और बाबा पर, पूरी मर्द जात पर नफ़रत हो गई थी. लेकिन नफ़रत बहुत दिनों तक अंदर नहीं रही. उसने महसूस किया कि वह एक औरत है और लुक्का का उस्ताद यह बाबा एक पूरा मर्द है. कई दफ़ा यह आदमी अपनी उम्र के बावजूद इतना मर्द लगता है कि परमेसरी को महसूस होता है, लुक्का उसे बहुत-कुछ नहीं दे पाया था. कुछ पाने के लिए तब जैसे वह खूंखार शेरनी-सी हरकतें करने लगती.

धंधा इस तरह खत्म हो जाएगा, अगर पहले पता होता तो परमेसरी बचाव का कोई तो रास्ता सोचती. छेदी के साथ ढोलक बजाने वाला मिरासी कुतबखाने की एक बर्तनों की दूकान में एक गिलास चुराते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया तो दूकान वाले ने उसकी हजामत बनवाकर कोतवाली लाकर छोड़ दिया. पहले दरोगा खूब हंसता रहा और बाद में कसकर पेट में एक लात जमा दी. एक ही लात मे पेट के अंदर की सारी बातें उसने उगलकर रख दीं. परमेसरी के इस धंधे की बात का खुलासा करना जरूरी नहीं था लेकिन घबराकर बेचारे ने अपनी जनमपत्री के ग्रह···नक्षत्रों तक के खाने बना दिए.

●●

परमेसरी आराम से बीड़ी का धुंआ उगल रही थी. उसने शायद समझ लिया था, ऐसे कामों में अन्दर-बाहर लगा ही रहता है. उसकी आंखों में दुनिया को धूल के बराबर समझने का एक भाव उतर आया था.

●●

बालेश्वर बम्बई चला गया था.

उसके जाने के बाद भी क्रिश्चियन 'कौशल्या भवन' में कभी नही आई शुरू मे दो हफ्ते तो वह अपने खन्नो मुहल्ले वाले घर में ही रही थी लेकिन बाद में जी उचटने लगा तो फायरमैन के साथ रहने के लिए रेलवे कालोनी मे आ गई थी.

एक दफा रानी के साथ कुतबखाने की एक कटपीस की दूकान मे मुलाकात हो गई तो उसे यकीन करने मे थोडा वक्त लगा था कि यही औरत उसके भाई की बीवी है. जो साड़ी क्रिश्चियन पहने थी, उसकी कीमत के बारे में रानी कोई खास अन्दाजा नही लगा पाई. लेकिन इतना जरूर समझ लिया कि ऐसी साडियाँ रामपुर बाग की कोठियों में रहने वाली परियां ही पहन सकती है. साड़ी का सफेद रंग क्रिश्चियन पर फब भी खूब रहा था. उसके चेहरे का रंग कुछ सावला-सा ही है लेकिन आखे बहुत खूबसूरत है.

फिर एकदम से रानी को ख्याल आया था कि उसने जो धोती बाध रखी है, वह बेहद सिकुडी है. ब्लाउज भी बदरंग था लेकिन उसने धोती मे ढक रखा था. अब पल्लू को मुट्ठी मे कस भी लिया कि कही यह खिसक न जाए.

क्रिश्चियन इससे पहले सिर्फ एक ही बार बालेश्वर के साथ आई थी उस दिन वह बुझी-बुझी-सी लगी थी आज जैसे एकदम खुल गई है. चेहरे पर एक ऐसी चमक-सी है, जो हर चेहरे पर नही होती. कम-से-कम रानी को यही लगा कि क्रिश्चियन एकदम से बहुत खूबसूरत हो गई है

रानी को फिर बालेश्वर के बारे मे पता चला कि बम्बई मे अब वह मजे की जिंदगी बसर कर रहा है.क्रिश्चियन अगर यह इत्तिला नही भी देती, रानी को समझने मे दिक्कत नही होती.

रानी घर आने के लिए मुड रही थी लेकिन क्रिश्चियन ने उसे पकड लिया. कटपीस का कपडा खरीदे बगैर वह फिर क्रिश्चियन के साथ रिक्शे पर बैठ गई. बस अड्डे के पास एक मिठाई की दुकान है बरेली-भर मे तो खैर मशहूर है ही बाहर से भी लोग आते है तो यहा से बधवाकर मिठाई ले जाते है कुतबखाने से कोई खास फासला भी नहीं था. पैदल आने से बहुत हुए तो पन्द्रह मिनट ही लगते. रानी को पैदल चलने की वैसे, आदत भी है. लेकिन क्रिश्चियन ने रिक्शा बुला लिया था.

रानी सिकुडकर बैठी थी.

क्रिश्चियन के बदन से खुशबू आ रही थी.

बालेश्वर की बहुत याद आने लगी थी. इस 'कौशल्या भवन' मे क्रिश्चियन के साथ शादी होते ही उसका फ़ासला इतना बडा हो गया था कि कई बार यकीन करना मुश्किल हो जाता है कि वह बरसों यहाँ रहा है. जब वह यहा रहता भी था, रानी से जरूरत के बिना कभी कोई ख़ास बात नही हुई अब लगता है, बहुत-सारी बातें थी, जो कभी कही या सुनी ही नहीं गई.

शादी से पहले तक वह कुंती को कई बार रुपए वग़ैरह या जरूरत का कोई सामान थमा देता था. कुंती खुश होती थी. मोहिनी बालेश्वर के धंधे के बारे में समझ तो गई थी लेकिन मुंह खोलकर कभी भी कुंती से इस मामले मे बात नही की. दिल में हूक जरूर उठती रही है. गंगा के पानी के समान शुद्ध ससुर ने यह मकान बनाया

था. नसीब में गरीबी लिखी होती है तो मिटा ही कौन सकता है. लेकिन तस्करी का धब्बा भी अब इसकी दीवारों पर लग गया. मोहिनी को बाद में लगने लगा कि एक दिन पुलिस आकर सबकुछ तहस-नहस करेगी और बालेश्वर के हाथों में हथकड़ी डाल कर कोतवाली ले जाएगी.

कुंती ने भी तस्करी के बारे में सुना था. लेकिन मामला उसे समझ में नहीं आया था. बालेश्वर कुछ कमाने लगा है, इस बात से वह खुश थी. हाई स्कूल में तीन-तीन बार फेल हो गया तो उसे यही लगा था कि रेलवे वग़ैरह में चपरासी का काम भी मिल जाए तो ठीक है. सरकारी नौकर की इज्जत के बारे में शुरू से ही उसके मन में एक बड़ा ख्याल रहा है. कई दफ़ा जब बेटे ने बदनामी के काम किए, कुंती को डूब मरने की इच्छा होती थी. दिन-भर वह बकती रहती लेकिन बालेश्वर सामने आता तो चुप हो जाती. उसके सामने बोलने की हिम्मत होती ही नहीं है.

इसके बाद बालेश्वर ने कमाना शुरू किया तो कुंती फूली न समायी. मोहिनी से तभी से उसके लिए एक अच्छी लड़की देखने की बात कहती रही है. कुंती को शायद यक़ीन था कि बालेश्वर ही अब इस घर की नैया पार लगाएगा. कई दफा वह रानी से भी भविष्य के दिनों की बात करती और उसका मन गुब्बारे की तरह उड़ने लगता. रानी ने कभी भी अपनी मां की बातों का जवाब नहीं दिया है. वह कुछ नहीं बोलती तो कुंती को लग जाता कि अपने भाई की लायकी से औरों की तरह वह भी जलती है.

कुंती को दुख सिर्फ इस बात पर है कि मोहिनी के मन में भी जलन-सी है कि बालेश्वर भी कुछ करने लायक आखिर हो ही गया. जब घर के अन्दर ही लोगों का यह हाल है तो बाहर वाले दस बातें बना ही सकते हैं दुनिया की रीत ही यह है. आज तक कोई किसी का भला सह नहीं सकता. सामने वाला अगर लूला-लंगड़ा होकर सड़क पर भीख मांगने के लिए बैठ जाए तभी शायद लोग खुश हो सकते हैं. खैर, चाहे जला, चाहे राख हो जाओ—ऊपर वाला भी आखिर सुनता ही है देर से सही. बालेश्वर लायक हो ही गया कुंती के मन में इस बात पर बेहद खुशी थी कि आजकल के जमाने में लोग जहां बी. ए. पास कर लेने के बाद भी नौकरी की तलाश में जूते चट-खाते फिरते हैं, वहां बालेश्वर अपने बल-बूते पर जो कुछ कर रहा है, मामूली बात नहीं है.

कुंती के हाथ में बालेश्वर जब भी कभी रुपए देता, उसकी छाती घमण्ड से दूनी हो जाती. लेकिन बाद में इस मामले को लेकर मोहिनी के सामने कुछ भी इजहार नहीं करती. जो जल रही है. उसे सुनाना भी क्या ?

लेकिन बालेश्वर ने क्रिश्चियन से शादी कर ली तो कुंती जैसे एकदम बेसहारा हो गई. अब तक जिस आस पर सांस ले रही थी, वह रेत की दीवार की तरह एक-बारगी ढह जाएगी, पहले थोड़ा भी अंदाज़ा लग गया होता तो दिल इस तरह फटकर चिंदियों में नहीं बंटता. इसके बाद उसके हाथों से कुछ लेना तो दूर, कुंती ने सामने आकर कभी बात भी नहीं की. कई बार लगता है, बालेश्वर ने सरेआम अपनी मां के कपड़े उतार लिए.

बाद में वह आकर नीचे से रानी और रद्दो से मिलता और आधे-पौने घण्टे बाद वापस चला जाता. कभी बहनों को रुपए थमा देता, कभी साड़ी वग़ैरह जरूरत की कोई चीज. लेकिन एक दफा मोहिनी ने इसी बात को लेकर रद्दो को थप्पड़ मार दिया तो वह तीन घण्टे तक फूट-फूटकर रोती रही. अगली दफा बालेश्वर आया तो मोहिनी रद्दो को जोर से फटकारती रही. बालेश्वर रानी के साथ नीचे चुप

बैठा था हाथ में एक डिब्बा था. लेकिन उसने रानी को नहीं थमाया और उठ खड़ा हुआ.

कुंती दहाड़ मारकर रोने लगी थी

मोहिनी अमूमन ज्यादा बात नहीं करती बालेश्वर के साथ वैसे भी बैठकर कुछ कहने-सुनने का मौका आया ही नहीं. जब वह छोटा था तब कुंती ही अपने बेटे का सबकुछ करती थी. बालेश्वर को कुछ इस तरह हिफाजत से रखती, जैसे किसी का हाथ लगने से बेटा घिस जाएगा मोहिनी को इस तरह के नाज-नखरे कभी पसंद तो नहीं आए लेकिन इस बारे में कभी वह बाली भी नहीं कहने में जाहिर है कुंती अपना नसीब फूट जाने पर कम-से-कम घण्टा-भर सर धुनती रहती जगतनारायण को यह सब हो-हल्ला कभी रास नहीं आया. कभी अगर ननद-भावज में खटपट हो जाती. जगतनारायण मोहिनी से ही विनती करता कि वह चुप हो जाए इसके बावजूद कुंती का विलाप कम-से-कम पौन घण्टा बाद ही जाकर थमता.

बालेश्वर फिर बहुत कम आने लगा था महीने में एक-आध बार से ज्यादा नहीं बाद में रद्दो सामने नहीं आती थी सिर्फ रानी होती थी और कभी-कभी नलिनाक्ष होता था. लेकिन नलिनाक्ष बैठक के इस कमरे में घुसता ही नहीं है. इस तरह के लोग आकर बैठते है, किसकी क्या जान है, लिखकर तो नहीं छोड़ जाते नलिनाक्ष बाहर, दरवाजे के पास खड़े होकर ही पाँच-दस मिनट बोल-सुन लेता रानी सामने जरूर होती लेकिन सिकुड़ी-सी बैठी रहती.

एक दफा विनायक मिल गया था

बालेश्वर को अगर किसी से डर है तो सिर्फ विनायक से शाम के वक्त कायदे से उसे दवाखाने में होना चाहिए था लेकिन घर में रखी दवा की कुछ भरी हुई शीशियाँ लेने दुबारा आया तो बालेश्वर से मुलाकात हो गई बहुत दिनों बाद यह मुलाकात हुई थी

हसकर बात करने की आदत विनायक की नहीं है लेकिन वह मुस्कराया कैसा है तू ? दिखाई ही नहीं पड़ता

बालेश्वर ने गर्दन हिलाई—ठीक हूं वह उम्मीद करने लगा कि अगला सवाल उसके काम-धंधे के बारे में होगा

— थोड़ा मोटा हो गया लगता है, विनायक हसा

बालेश्वर झेंप गया.

—और इधर रानी को तो देख, डायटिंग कर रही है शायद विनायक ने रानी के कंधे पर एक धौल-सी जमा दी—क्यों मैडम ?

वह चुप रही.

—तुम्हारी डाक्टरी ठीक-ठाक चल रही है ? बालेश्वर ने पूछा वैसे पूछने लायक कोई सवाल यह था ही नहीं. विनायक को अपने दवाखाने के बारे में जितना पता है, बालेश्वर की जानकारी भी उससे कम नहीं है

—डाक्टरी ? विनायक पांच सेकेंड के लिए चुप होकर शायद जवाब सोचने लगा. बोला—नीम-हकीमों को पूछता है कोई ? फिर इस तरह हसने लगा जैसे यह कोई मजेदार बात हो.

—वैसे तुम्हारे इलाज की तारीफ तो कुछ लोग करते है···

—हूं, करते हैं. वे बेचारे शायद गाली-गलौज करना नहीं जानते.

इस बात पर नलिनाक्ष हस पड़ा. वह कब चुपके-से आकर दरवाजे पर खड़ा हो गया था, पता नहीं चला था. नलिनाक्ष कभी अगर हंसता है तो विनायक को

लगता है, इस घर में अब भी लोग सांस ले रहे हैं.

—वो कह रही थी, छाती की जलन के लिए तुमसे दवा लेने आएगी.

विनायक यह झूठ समझ गया. मर्ज के बारे मे उसने कुछ नही पूछा, न मरीज के बारे मे सवाल किया. सिर्फ गर्दन भर हिला दी—भेज देना. इसके बाद और कोई बात नही हुई. डाक से आई हुई दवा की शीशिया उसने बैठक की अलमारी खोलकर निकाली और चला गया.

उस दिन के बाद बालेश्वर फिर कभी नही आया. एक दिन विनायक से ही सबको पता चला था कि वह बम्बई चला गया है. इसके आगे न तो उसने कुछ पूछा था, न कुंती या रानी मे से ही किसी ने कुछ और जानना चाहा था.

●●

रानी को क्रिश्चियन के साथ रिक्शे पर बैठकर चलते हुए पिछले दिनो की सारी बाते याद आ गई थी.

क्रिश्चियन ने उसे फिर पर्दा लगे हुए केबिन मे बैठा दिया था बैठाकर पांच मिनट के लिए वह सामने की तरफ चली गई थी लौटी तो हाथ मे मिठाई का एक बडा-सा रंगीन डिब्बा था—तुम्हारे और नलिनाक्ष के लिए

रानी को अपना नाम सुनकर झटका-सा लगा था. बालेश्वर क्रिश्चियन से नलिनाक्ष के बारे मे सोच सकता है लेकिन किसी और के बारे मे कभी उसने खास जिक्र किया होगा, रानी को कभी नही लगा.

सामने दो प्लेटों मे कुछ मिठाइया, नमकीन काजू और चाय के दो प्याले रखे थे. रानी को जैसे पसीना आ रहा था.

—मैं भी बम्बई जा रही हू, क्रिश्चियन बोली

रानी ने गर्दन उठाई

—अगले महीने चली जाऊंगी' अरे तुम तो कुछ ले ही नही रही हो ?

रानी चौंकी थी—ले रही हूं उसने एक काजू उठा लिया.

—बालेश्वर का लेटर पिछले हफ्ते आया था. बम्बई की ढेर-सारी बाते लिखी थी. गजब का शहर है .

—हु रानी ने चाय का घूट लिया

—भैया अच्छे है ?

—ग्रैण्ड हैं. लिखा है, किराए की मोटर लेकर घूमते हैं.

रानी को यह बात बेहद पसंद आई.

—वो बम्बई से गोआ और गोआ से बम्बई चक्कर लगाते रहते हैं. लिखा है, एक दफ़ा समंदर के रास्ते जहाज़ पर बैठकर भी गए थे. जहाज़ के नाम से ही क्रिश्चियन के जिस्म मे झुरझुरी-सी फैलने लगी थी.

रानी हसी—अब तो तुम भी जहाज़ पे ही चला करोगी.

—बरेली से अब मन भी भर गया. क्रिश्चियन ने चाय की चुस्की ली—तुम्हारा नही भरा.

रानी के सिर पर स्याही-सी पुत गई थी. गले में काजू का टुकड़ा भी शायद अटक गया था. लेकिन उसने धीरे से गर्दन हिला दी—नही भरा.

क्रिश्चियन ने कुछ कहा तो नही लेकिन होंठ उलट लिए थे. जैसे कहने जा रही थी—फिर मरो यहां घुटकर.

रानी ने एक लम्बी सांस भर ली.

—मैं बम्बई पहुंच जाऊं, फिर कभी तफरीह के लिए उधर आना. समंदर

देखोगी तो दंग रह जाओगी. क्रिश्चियन ने चाय ख़त्म कर ली थी.

रानी दरवाज़े में टंगे पर्दे को घूरती-सी रही.

उसे याद आया, इस दूकान से दो-एक बार मिठाई 'कौशल्या भवन' तक भी गई है. पहले कभी वह यहां आई तो नहीं है, लेकिन बालेश्वर कई बार यहां का ज़िक्र करता था. रानी ने क्रिश्चियन से नहीं पूछा कि शादी से पहले वे लोग और कहां-कहां जाते रहे हैं. पूछने मे मज़ाक में थोड़ा वक्त कट सकता था लेकिन अब जैसे इस तरह के मज़ाक अच्छे नहीं लगते. वह फिर उठ खड़ी हुई.

प्लेटों में कई चीज़ें अब भी पड़ी हुई थीं लेकिन उसकी उम्मीद के मुताबिक क्रिश्चियन ने इस बारे में कुछ नहीं कहा. सिर्फ मिठाई के डिब्बे को उठाकर पकड़ा दिया—बड़ी भुलक्कड़ हो. शादी के बाद देखना, मियां नाराज़ हो जाएगा.

मामूली-सा चुटकुला था. हंसने की ज़रूरत नहीं थी. क्रिश्चियन फिर काऊंटर पर पैसे चुकाकर बाहर आई और कुतुबखाने की तरफ दुबारा जाने के लिए रिक्शा बुला लिया—अब बोलो, क्या लेने आई थी.

क्रिश्चियन पर अब गुस्सा आ गया था. पैसे की गर्मी से आदमी शायद दूसरों पर मेहरबानी करना ही सबसे ज्यादा पसंद करता है. रानी को लगा, क्रिश्चियन पैसा पाकर अब हर तरह से खुश है.

उसने गर्दन हिलाई—यूं ही आई थी, कुछ खास लेना नहीं था. वैसे भी बहुत देर हो गई है, अब तो घर ही वापस चलती हूं. क्रिश्चियन के उत्तर की परवाह किए बिना रानी फिर चौराहा पार कर बिहारीपुर की तरफ़ बढ़ गई थी.

●●

कुंती की तबियत बहुत ज्यादा बिगड़ी-सी रहने लगी. आजकल भूख बिल्कुल नहीं लगती और रात को नींद नहीं आती. दुपहर को बहुत हुआ तो एक रोटी खा ली और शाम को सिर्फ पानी पीकर बिस्तर पर पड़ गई. कभी-कभी मोहिनी साबूदाना उबालकर देती है. एक-आध बार दूध में उबालकर दिया था तो कटोरा-भर आराम से पी गई थी. लेकिन दूध में हर बार उबाले भी तो कैसे उबाले? अब तो चाय के लिए भी रोज़ दूध नहीं आता. रानी गुड़ डालकर काली चाय बनाती और एक-एक कप लेकर हर कोई चुपचाप पी लेता. कभी कोई कटोरा या गिलास बिक जाता तो चार दिन सब्जी में ठीक से तेल भी पड़ जाता है. वर्ना ज्यादातर तो बस चार दिन सब्ज़ी में ठीक से तेल भी पड़ जाता है. वर्ना ज्यादातर तो बस चार-छह बूंद तेल में छोंक लगाकर रानी टिण्डे या करेले की सब्जी चूल्हे से उतार देती. कुंती से अब यह निगला ही नहीं जाता. लेकिन साबूदाने का भाव इतना तेज है कि रोज़-रोज़ दूध न सही पानी मे उबालकर देने के लिए भी तो अपने पास कुछ होना चाहिए. फिर भी मोहिनी कोशिश करती है. कटोरा-भर न सही, कभी-कभी आधा कटोरा उबालकर उसमें काला नमक छिड़क कर देती है तो कुंती तृप्ति से पी भी लेती है.

विनायक ने वैसे दवाई दी है लेकिन कुंती को अब ये सब खाने का जी बिल्कुल नहीं करता. तकिए के नीचे पुड़ियां रखी रहती हैं और कभी अगर मन हुआ तो एक-आध खुराक वह ले भी लेती है लेकिन इससे ख़ास कोई फ़र्क नहीं पड़ता.

विनायक ने फिर कहा था कि शाम को वह रानी या कस्तूरी को साथ लेकर मढ़ीनाथ तक घूम ही आया करे, तो सेहत में काफ़ी फर्क पड़ सकता है.

कुंती सिर्फ़ सुनती है. कहने के लिए बचा है कुछ ? कभी-कभी लगता है. पूरे घर में सिर्फ नलिनाक्ष ही सही है. बाकी लोगों में हर कोई जैसे मरा हुआ सांप गले में डालकर घूम रहा है.

कभी-कभी कुंती जगतनारायण की बात करती और मोहिनी के सामने फूट-फूट कर रोने लगती. मोहिनी की आंखों से अब आंसू नहीं निकलते. सिर्फ़ दिल थोड़ा भारी हो जाता है और गले से आवाज़ नहीं निकलती.

जब से बालेश्वर ने शादी कर ली, कुंती को जगतनारायण की याद काटती रहती है. रिश्ते में भाई था लेकिन बड़प्पन में दर्जा था बाप का. जब तक इस घर में रहा बड़ी बहन को यहां का एक जरूरी हिस्सा बनाकर ही रखा था. लेकिन उसके चले जाने के बाद से ही जैसे सारी गड़बड़ शुरू हो गई है. कुंती रोना शुरू करती तो कस्तूरी की भी आवाज़ रुंधने-सी लगती, समूचे 'कौशल्या भवन' में फिर एक वीरानगी-सी फैल जाती.

कभी-कभी कुंती विनायक के पास आकर कुछ कहना चाहती है लेकिन होंठ सिर्फ़ कांपकर रह जाते हैं. कहने के लिए बातें आपस में गडमड होकर पता नहीं कहां पहुंच जाती हैं.. फिर भी एक दफ़ा कुंती विनायक के सामने जाकर खड़ी हो ही गई. दुपहर का वक्त था. विनायक रसोई में पीढ़े पर बैठ कर रोटी खा रहा था. रानी लकड़ी के चूल्हे में फुल्का सेंक रही थी. थोड़ा धुआं भी हो गया था. लेकिन इतना धुआं तो होता ही रहता है.

विनायक ने गर्दन उठाई—रानी बता रही थी, तुम रोटी बिल्कुल नहीं खातीं. कोई खास खाने का मन हो तो कहना.

कुंती धीरे से मुस्कराई—जिन्दगी-भर सिर्फ़ खाती ही रही लल्ला. आखिर में उसने एक लम्बी सांस भर ली. विनायक के लिए उसके मन में ममता की बाढ़-सी आ गई थी—तू बहुत दुबलाय गया लल्ला.

विनायक ने ठहाका लगाया—सच ?

—तेरा बाबा भी तेरे जैईसा बडा था. तू अपने बाबा पर ही गया.

—बुआ तुम तो तारीफ कर रही हो ! विनायक फिर हंसा.

—अब तेरे लिए बहू लाऊंगी. मैं लाऊंगी देख के. यह बात कहने के लिए बहुत तैयारी करनी पडी थी.

—तो यही बात कहने के लिए इतनी देर से लल्ला की तारीफ़ का पुल बांधे जा रही थीं ?

—समझ ले, तू नाय कर नाय सकता. इस घर में अरसा हो गया, न तो कोई त्योहार आया, न खुसी. हम अब जाने ही वाले हैं. दो दिन खुस रै लैंगे तेरी बहू के संग तो तेरा कोई घाटा नाय हो जावेगा.

—रानी के लिए लड़का ढूढ रहा हूं. तब खूब ढोलक बजाना.

कुंती एकदम से चुप हो गई. जैसे लल्ला ने जान-बूझकर कोई कड़वा मजाक कर दिया.

—क्यों ? रानी की शादी नहीं होगी क्या ? विनायक ने गर्दन उठाए बिना ही पूछ लिया.

कुंती की आंखों से आंसू टपक पड़े. लेकिन उसने सिसकियां नहीं भरीं.

कौर निगलकर विनायक ने गर्दन ऊपर उठाई—तुम रो रही हो बुआ? सोचती होगी, तुम्हारा लल्ला अपनी बहन की शादी कर नहीं सकता.

कुंती ने फिर पल्लू से आंखें पोंछ लीं –जब भी इसका ब्याह होगा, होगा. तू ही करैगा.

—लड़का ढूंढ़ रहा हूं. किसी ऐसे-वैसे के हाथ इतनी अच्छी लड़की सौंप तो नहीं सकता. थोड़ा वक्त लग सकता है लेकिन देखना, शादी इसकी बहुत अच्छी

होगी.

—तेरी बहू आ जाए तो हमें भी कुछ चैन मिले. कुछ हमारी उमर का भी तो ख्याल कर.

विनायक चुप रहा. फिर एकदम से बात बदलने की कोशिश की—रानी खाना बनाती बहुत अच्छा है. उसकी ससुराल वाले तो इसी बात पर फ़िदा हो जाएंगे. हमें भी तब उसकी याद बहुत सताएगी.

विनायक ने गिलास-भर पानी पिया और उठने लगा.

रानी पीछे की तरफ मुड़ी — मट्ठा है तुम्हारे लिए.

विनायक को समझ में नहीं आया कि अचानक आज मट्ठा आ कैसे गया.रानी का चेहरा देखकर उसने भांप लेने की कोशिश की. फिर बोला—बुआ को पिला देना. मेरा तो पेट एकदम भर गया है.

कुंती और कुछ नहीं बोली थी.

दिल में पत्थर का बोझ महसूस होता है लेकिन बातें या तो कुछ भी कहने के लिए नहीं मिलतीं या इतनी मिलती हैं कि कुछ भी कह पाना मुमकिन होता ही नहीं·

कुंती फिर ऊपर चली गई थी.

विनायक ने दुबारा उसकी तरफ़ देखा तो नहीं था लेकिन लगा था,अभी ऊपर जाकर बुआ बिना आवाज़ किए कुछ देर रोती रहेगी.

उसने कुल्ला किया और आंगन में टंगी रस्सी पर से ____ खींचकर हथेलियां पोंछने लगा. रानी एकदम से सामने आ गई थी. इस तरह वह कभी नहीं आती. विनायक थोड़ा चौंका था.

रानी ने गर्दन उठाकर ऊपर की तरफ देखा और आश्वस्त हो गई कि मां की चारपाई के साथ वाली खिड़की बन्द है—-एक बात कैनी थी भैया.

—तू सरकारी कायदे से कब से बोल कभी !

—आगे से तुम मेरी शादी की बात नाय करना.

विनायक को जैसे बिजली छू गई थी.

रानी को क्या कहते हुए कुछ भी फर्क नहीं पड़ा ? विनायक को लगा, यह वाक्य कह पाने की वजह से रानी बहुत ख

-–यह घर एकदम खाली लगत भईया.

—तू सोचती होगी, तेरा भाई कमाता ही कितना है जो तेरी शादी करेगा.

—तुम तो औरों से कितने अलग इतनी ! -सी बात का मतलब नाय समझते ? अम्मा को तकलीफ़ होती है इससे.

—अब तक वाकई नहीं समझा था. बुआ को तकलीफ देने के लिए मैं भला कुछ कह सकता हूं ?

—मैं पढ़ी-लिखी जरूर नाय हूं लेकिन तुम्हें कुछ तो समझती ही हूं.

—मुझे भी यह लगता है कि तू मुझे ठीक-ठाक समझ रही है.

—तुम हो, सो लगता है इस घर में रहने के लिए अब भी ऊपर एक छत है, चार दीवारें हैं. कभी-कभी तकलीफ़ होती है कि मैं पढ़ी-लिखी क्यों नाय हुई ? रद्दो की भी बहुत याद आती है भईया. उसका कुछ पता चला ?

विनायक ने एक गहरी सांस ली और खामोश रहा.

—सुना है, मास्टर की बीवी गांव चली गई. रानी बोली.

विनायक ने नहीं पूछा कि इतना सारा पता कैसे कर लिया ? नैना आई थी ?

— इस घर में अब रद्दो का नाम भी कोई नहीं लेता. रानी की आवाज बहुत भारी हो गई थी.

विनायक देर तक बुत-सा खड़ा रहा. सीने में पत्थर का बोझ महसूस हो रहा था. फिर आहिस्ता से बोला—रद्दो बहुत याद आती है, न ? आखिर में एक गहरी सांस ले ली पता लगाने की सारी कोशिशें कर रहा हूं.

—तुम औरत को नाय समझते, भईया. औरत ने अगर एक बार गलती कर ली तो उसे ही जिन्दगी-भर निभाना चाहती है.

—तू बहुत सयानी हो गई है···विनायक ने कहना चाहा. लेकिन कुछ भी कहे बग़ैर चुप रहा.

रानी रस्सी पर पड़े हुए अगोछे की तरफ देख रही थी. उसके फटे हुए हिस्सों की तरफ.

—तुम ब्याह करोगे, भईया ? रानी एकदम से कुछ ऐसा पूछ लेगी, विनायक ने नहीं सोचा था.

—क्यों ?

—शायद तुमें फुर्सत भी नाय मिलेगी. मैं पढ़ी-लिखी होती तो तुम्हारे साथ बाहर निकलती. अब तो सिर्फ रोटी ही बनाय सकती हूं···

—पगली कहीं की. विनायक ने रानी की ठुडी पकड़ी और पुचकार दिया.

रानी रसोई में वापस चली गई थी. विनायक ने देखा था, उसकी आंखें भरी हुई हैं और चेहरा स्याह-सा हो गया है.

नलिनाक्ष घंटी बजाकर शायद आरती उतार रहा था. मुंह से कुछ शब्द भी निकल कर यहां, नीचे तक आ रहे थे

विनायक को यह सब एक अचानक हुई घटना लगी ऊपर कोई कौआ मुंडेर पर बैठकर कांव-कांव कर रहा था. सारी बातें जैसे एक-दूसरे के साथ गुंथी हुई थी.

●●

फायरमैन मिलने के लिए आया था.

रानी ने उसे बैठक में बिठाकर कुंती को खबर कर दी. विनायक घर पर नहीं था. शाम के वक्त वह रहता भी नहीं है.

फायरमैन के कपड़े खास अच्छे थे. नीले रंग की एक पतलून और सफेद कमीज पहने था. कमीज शायद हफ्ते-भर से लगातार पहना गया था. जगह-जगह से गंदा हो गया था. उतना ही गंदा पतलून भी रहा होगा लेकिन गहरे रंग की वजह से पता नहीं चल रहा था. पतलून की नाप पहनने वाले की कमर के हिसाब से कुछ बड़ी थी. इस लिए उसने एक पेटी बांध रखी थी. इस वजह से पतलून ऊपर से काफी सिकुड़ गई थी. पेटी भी शायद दसेक बरस की पुरानी थी. कई जगह से उसमें खरोंचे थी और वह फट-सी रही थी. फायरमैन के पांवों में रबड की चप्पलें थी हवाई चप्पल की तरह सस्ती चप्पलें. रबड़ की चप्पलें टूट जाने से दुबारा जुड़ती नहीं हैं लेकिन उसने मोची से चमड़ा लगवाकर अंगूठे में फंसने वाली जगह को सिलवा लिया था दोनों पांव धूल से सनकर सफेद हो गए थे बीच-बीच में एक-आध कीचड़ का छींटा भी था वह इत्मीनान से कुर्सी पर पांवों को उठाकर बैठ गया था.

रानी बाहर जाकर पन्द्रह पैसे का दूध ले आई थी. ये पैसे उसने नलिनाक्ष से मांग लिए थे. फिर चाय बनाकर फायरमैन के सामने रख आई. वैसे सोचा यही था कि दो-चार बातें भी कर लेगी लेकिन आखिर में चाय रख कर वह बाहर आ गई थी.

आधे घंटे तक कुंती नही आई.

रानी दुबारा ऊपर गई और देखा कि उसकी मां आखे बन्द किए पड़ी हुई है. आंखों की कोरे गीली थी कुछ देर वह चुप खडी रही, फिर नीचे उतर आई. उसके उतरते ही मोहिनी भी चली आई थी.

मोहिनी फिर बैठक के दरवाजे तक जाकर खड़ी हो गई. इससे पहले पल्लू को अच्छी तरह सर के ऊपर कर लिया था

फायरमैन हडबडा कर खड़ा हो गया. आधे घटे तक इन्तजार करना पड़ा इस वजह मे कोई मलाल नही था शायद आधा घटा गुजर जाने का अहसास भी उसे नही था.

—बालेश्वर की मा की तबियत ठीक नाय है. मै मामी हू उसकी. मोहिनी ने आहिस्ते मे कहा.

फायरमैन ने हाथ जोड़ लिए थे. मोहिनी की आँखे जमीन की तरफ थी.

इसके बाद जैसे कोई और बात रह ही नही गई थी. रानी आकर मोहिनी के बगल मे खडी हो गई. मोहिनी को सहारा-सा मिला था.

—वो मेरी लड़की बम्बई जाय रही है.

मोहिनी को लगा, फायरमैन ने जान-बूझकर 'मेरी लड़की' कहा वर्ना 'आपकी बहू' भी कह सकता था.

—अच्छा है. काफ़ी देर बाद मोहिनी बोली

—इधर कोई सदेसा भेजना हो तो कै दो.

—हम लोग सब ठीक है.

—एक कमरे का एक मकान ले लिया बालेसर ने बम्बई मे. वहा तो लागन को हवा-पानी तक खरीदना पड़ता है

मोहिनी ने कोई जवाब नही दिया.

—लडकी को छोडने मै जाय रिया हू रेलवे का पास है लेकिन कभी काम मे आता ही नाय, सोचा, इस दफा बम्बई ही देख लू बात कह चुकने के बाद फायरमैन थोड़ा हँसा. बम्बई के नाम मे ही उसका जी उमडने-सा लगा था.

फायरमैन फिर रानी की ओर मुखातिब हुआ—तुमारी भाभी बड़ी तारीफ़ कर रही थी तुम्हारी.

रानी समझ गई कि फायरमैन झूठ बोल रहा है.

- कै रई थी कि मेरे सग मिलने को आवेगी लेकिन सामान वगैरा जरा ठीक मे लगाने थे. सो आ नाय सकी फायरमैन अपनी गर्दन नचा रहा था.

रानी की समझ मे नही आया कि यह आदमी लगातार क्यो झूठ बोल रहा है. वैसे चेहरे से ही फायरमैन इतना गौ लगता है कि उस पर गुस्सा भी नही आता.इजन मे कोयला झोकते-झोकते जैसे उसे याद ही नही रहा कि दुनिया कहाँ से कहां पहुंच गई है !

—बालेसर की मा को क्या हुआ ? फायरमैन ने बहुत देर बाद यह सवाल किया तो मोहिनी को खासा ताज्जुब हुआ था. रानी को ताज्जुब नही हुआ. अब पूरा यकीन आ गया कि यह शख्स वाकई जरूरत से ज्यादा भोला है.

—कोई खास बात नाय भूख नाय लगती और कमजोरी है. मोहिनी बोली.

मोहिनी फिर सामने से हट आई थी.

फायरमैन ने सहानुभूति से गर्दन हिलाई.

रानी ने फायरमैन के चेहरे का भाव पढ़ने की कोशिश की. पता नही चला कि

मोहनी के इस बर्ताव से वह दुखी हुआ भी या नहीं.

—तुम तो भैन हो बालेसर की. मैं देखते ही समझ गया. फायरमैन बहुत खुश हो रहा था.

रानी नहीं बोली कि फायरमैन के बारे में भी उसने अंदाजा नहीं लगा लिया था.

—बालेसर खत में तुम्हारी बात जरूर लिखता है.

झूठ समझ लेने के बावजूद फायरमैन इस दफ़ा उतना बुरा नही लगा.

वह फिर घूर-घूर कर बैठक का सबकुछ देखता रहा और आख़िर में कलाई में बंधी घड़ी देख ली—फिर चलता हूं अब.

फायरमैन चला गया तो रानी रसोई में लौट आई, जैसे झटके के साथ कुछ हो गया था. फायरमैन को समूचे घर ने सरे-आम इस तरह बेइज्जत क्यो कर दिया ? वह समझ नहीं पाई. लगा, सब-कुछ सुन लेने के बाद क्रिश्चयन आग-बबूला बन जाएगी. फिर बालेश्वर की याद आने लगी थी. बालेश्वर और रद्दो की.

वह उठी और फायरमैन का छोड़ा हुआ प्याला लेकर नल तक चली गई. ऊपर से कुंती की सिसकियाँ भरने की आवाज आ रही थी. बीच-बीच मे फायरमैन के बारे में मोहिनी शायद कुछ बता भी रही थी. लेकिन सारी बाते यहा तक पहुंच नही रही थीं.

कभी-कभी रानी को कुंती का यह बर्ताव बरदाश्त से बाहर लगता है उसकी आदत-सी बन गई है, बात-बात पर अपने नसीब फूटने की दुहाई देना और आँसू बहाना. कई दफ़ा रानी की एकदम से कुछ कहने की तबियत होती है लेकिन अंजाम का ख्याल आ जाता है और बोल नहीं पाती.

थोड़ी देर में मोहिनी की आवाज आनी बन्द हो गई थी. सिर्फ कुंती की सिसकियों की आवाज नीचे आंगन तक आ रही थी.

●●

कस्तूरी की ससुराल से खत आया था. उसकी सौत हैजे मे मर गई थी और वे लोग कस्तूरी को वापस ले जाना चाहते थे.

ख़त विनायक के नाम था. एक पोस्टकार्ड था. कस्तूरी के ससुर ने लिखा था कि गलती आख़िर इंसान से ही होती है. और पुरानी बातों को भूल जाना ही अक्लमद आदमी का फ़र्ज है.

विनायक ने फर्ज वाला लफ्ज पढ़ा तो कुंती बड़बड़ाने-सी लगी—उनें बहू नाय नौकरानी चाहिए.

कस्तूरी का चेहरा एकदम काला हो गया था.

रानी उससे सटकर बैठी थी. हाथ में एक फटा हुआ ब्लाउज था. वह सिलने की कोशिश कर रही थी.

विनायक ने कस्तूरी से कुछ नहीं पूछा.

मोहिनी बोली—जवाब नाय देना इस खत का.

—जवाब खूब झाड़के लिख दे, लल्ला. कुंती बोली.

नलिनाक्ष भी अपनी कोठरी से निकल आया था. वह कुछ नही बोला. उसके लिए शायद यह कोई अहम सवाल था भी नहीं.

रानी ने कस्तूरी को कुहनी से धक्का दिया—तू भी तो कुछ बोल.

कस्तूरी कुछ नही बोली.

कुंती ने डपट दिया—वो क्या बोलेगी ? बिचारी अच्छी-ख़ासी गई थी,

लेकिन लौटी, तो था कुछ जिसम में ? लल्ला, तू समधी को बुलाय ले तो मैं ही सीधा कर दूं.

—तो कुछ तय तो कर लो कि लिखना क्या है ? विनायक झुंझला रहा था.

—तू ही बता. मोहिनी बोली.

—कस्तूरी को सोचने दो. तय सिर्फ़ वही कर सकती है. विनायक बोला.

कुंती को यह जवाब क़तई पसंद नहीं आया था—आख़िर भैन तो तेरी ही है. तू नाय सोचेगा तो पड़ोस वाले थोड़े ही सोचने आवेंगे ?

—क्यों कस्तूरी ? विनायक ने पूछा.

नलिनाक्ष हरेक का चेहरा निर्विकार भाव से घूर रहा था.

—वैसे मैं सोचती हूं, एक दफ़ा जीजा को बुलाय के बात तो कर लेव. रानी ने विनायक को सुझाव दिया.

—तू चुप भी रैती है कि नहीं ! कुंती बोली.

अक्सर ही वह इस लहजे का इस्तेमाल करती है. रानी पर अब ख़ास असर नहीं होता. वह ब्लाउज की फटी हुई बांह लगभग सिल चुकी थी.

—जल्लाद हैं कस्तूरी के ससुराल वाले. कुंती जल रही थी—अब कैते हैं पुरानी बातें भूल जाओ. आ फिर तेरी खोपड़ी तोड़ती हूं, तू भूल जईयो.

कुंती की इस बात पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई.

मोहिनी एकदम ख़ामोश बैठी थी. पीछे कमर पर हाथ धरे नलिनाक्ष खड़ा था. गले में रुद्राक्ष की माला पहने था. रानी को वह घूर-सा रहा था.

कस्तूरी ने फिर घुटनों के बीच सर छुपा लिया था.

रानी ने उसकी पीठ पर हाथ रखा. वह कुछ भांप गई थी, कस्तूरी की पलकें शायद गीली थीं.

रानी ने ब्लाउज को नीचे रख दिया और कस्तूरी को दोनों हाथों से पकड़ लिया—इसे वहीं जाने दो भईया.

मोहिनी दंग रह गई.

इस दफ़ा कुंती भी कुछ नहीं बोली.

विनायक ने कस्तूरी की तरफ़ देखा और पहली बार महसूस किया कि कस्तूरी एक औरत है. रानी की वजह से वह इतना समझ पाया था, उसके प्रति कृतज्ञता का अहसास हो रहा था.

—मैं भी यही सोच रहा था. विनायक बोला—वैसे मैं उन लोगों से इस दफ़ा पहले ही बात करके समझा दूंगा, बहू का ही दर्जा देना होगा. वैसे भी आजकल की लड़कियां अपना हक़ तो छीन ही लेती हैं.

कस्तूरी ने घुटनों के बीच से छुपा सर ऊपर उठाया. वाक़ई पलकें गीली थीं. वह विनायक की आंखों की तरफ़ देख रही थी. उन निगाहों में भाई के प्रति एक अनकही कृतज्ञता थी.

●●

सामने के छज्जे की दीवार में दरार आ गई थी.

होली के वक्त जो कीचड़ फेंका गया था, उससे दीवार लगभग पूरी-की-पूरी रंग गई थी. कीचड़ के अलावा पिचकारी के रंग भी थे.

कौशल्या भवन की ऊपर वाली मंजिल कभी-कभी एकदम जीर्ण-सी लगने लगती है. विनायक को लगता यही कि कोई बहुत बड़ा चमत्कार ही है जो मकान अभी तक ढह नहीं गया. हर बार बरसात आती है तो छत चूने लगती और मन

कांपता-सा रहता.

छज्जे पर जो रेलिंग थी, वह हिल रही थी. विनायक ने हाथ लगाकर देखा तो पता चल गया, एक लात-भर जमा देने से चार-छह ईंटें निकल जाएगी. मोहिनी भी छज्जे पर आ गई थी.

—यह तो एकदम ही खत्म हो गया. विनायक बोला.

बात इतनी मामूली थी कि मोहिनी ने कुछ नही कहा.

विनायक को ऐसे मे घुटन-सी लगती है. एकाएक बचपन के दिन याद आ जाते है. यही औरत तब इस तरह उदास नही रहती थी. तंगी यहा शुरू से ही रही है लेकिन तब पूरा घर बहुत भरा हुआ लगता था. विनायक को याद है, एक दफा मोहिनी ने बहत्तर घंटे तक उपवास रखकर कोई व्रत किया था. उपवास के बाद घर मे कथा हुई थी. वह कौन-सा व्रत था, यह तो नही मालूम लेकिन यह औरत उतने लम्बे व्रत के बावजूद बिल्कुल मुरझाई नही थी.

—किसी राज को बुलाकर बात करूंगा, विनायक बोला.

—मेरे पास चादी की एक करधनी है. कित्ते पैसे मिल जागे ?

—अभी रखे रहो. रानी के लिए लड़का ढूढ रहा हू, तब काम आ जाएगी.

मोहिनी ने आगे कुछ नही पूछा.

विनायक समझ गया कि उसकी मा को यकीन आ गया, रानी के हाथ अब पीले नही होंगे. जबसे रद्दो घर छोड़कर चली गई है, मोहिनी शादी-ब्याह का जिक्र ही नही करती. रानी को अपनी लड़की की तरह ही समझती रही है. दिल अब जलता तो है लेकिन मोहिनी जानती है कि उसकी अपनी हालत किसी अपाहिज से बेहतर नही है.

—बालेश्वर की कोई चिट्ठी तो नाय आई तेरे पास ? मोहिनी ने पूछा.

विनायक को ताज्जुब हुआ था मेरे पास ? मेरे पास कैसे आती ?

—नैना आई थी. कै रई थी, फायरमैन बम्बई से लौट आया है, बालेश्वर सुना हैं, काफी कमाने लगा है.

विनायक चुप रहा.

कहने के बाद मोहिनी समझ गई, उसने खामखवाह एक निहायत गैरजरूरी बात कह दी है. कम-से-कम बिल्कुल अभी इसे कहे बिना भी काम चल सकता था एकदम मे फिर उसने बात मोड दी—रानी पे बहुत बोझ है

विनायक ने गर्दन हिलाई—पढने-लिखने का इतना शौक था लेकिन तंगी की वजह से स्कूल ही नही जा पायी बिचारी. वैसे रद्दो के साथ जा भी सकती थी

इस बात का कोई जवाब नही है. कुन्ती ने इस मामले मे कभी कुछ नही कहा और जगननारायण को भी उसका स्कूल जाना उतना जरूरी नही लगा था वैसे रद्दो जाती थी और कभी-कभी वह स्कूल जाकर मास्टरनियो से पूछ भी आते थे. विनायक ने सारी बाते नही बताई लेकिन मोहिनी समझ गई थी

—कम-से-कम सर छुपाने की एक जघा तो है. अब जे भी खतम हो रई है. मोहिनी दीवार के चितकबरे दागो को खोद-खोदकर देख रही थी.

विनायक हसा—खत्म कहा हो रही है ?

मोहिनी ने एक गहरी सांस ली.

छज्जे के कोने मे बिजली का खभा है उसके तारो मे एक उलझी हुई पतंग थी. नीचे से बच्चो ने इसे उतारने की काफी कोशिश की होगी लेकिन डोर की उलझन इतनी थी कि यह मुमकिन नही हुआ था और पतग फट गई थी. मोहिनी उस तरफ

ग़ौर से देख रही थी.

- अब की पुताई होगी तो पीला रंग करवाऊंगा. विनायक बोला. सफ़ेद रंग खराब बहुत जल्द हो जाता है. उसने बात इस ढंग से की जैसे फ़िलहाल रंगों की समस्या ही बहुत बड़ी हो.

मोहिनी पतंग से आंखें हटाकर चौराहे की तरफ देख रही थी.

जगतनारायण कभी-कभी शाम को एक स्टूल डालकर यहां बैठ जाया करते थे. उनकी तमन्ना थी कि फ़ुर्सत के वक्त यहां इत्मीनान से बैठकर अखबार पढ़ा करेंगे. लेकिन न तो कभी फ़ुर्सत मिली न अखबार ही खरीदे जा सके. कुतब-खाने में चुंगी वालों की एक लाइब्रेरी है. वहां जाकर वह अखबार उलट-पलट आते थे.

अखबार के साथ न सही, कभी अगर वक्त मिला तो जगतनारायण हुक्के के साथ यहाँ, छज्जे पर बैठ जाते थे. बातचीत ज्यादा करने की आदत उन्हें शुरू से ही कभी नहीं रही. फिर भी आते-जाते लोगों से दुआ-सलाम से बढ़कर दो-चार बातें भी हो जाती थीं. जगतनारायण यहां बैठे होते तो मोहिनी छज्जे पर कभी नहीं आती थी. कभी-कभी कुंती भाई के साथ बात करने के लिए, बिल्कुल सामने तो ख़ैर नहीं, दर-वाजे के अंदर बैठ जाती थी. एक दफ़ा विनायक को बुलाकर जगतनारायण 'कौशल्या भवन' के मरम्मत के बारे में काफी बातें कर रहे थे. वह सोच रहे थे कि छत पर दो कमरे और बन जाएं तो जगह की कोई दिक्कत नहीं रहेगी.

मकान वग़ैरह के बारे में विनायक को कभी दिलचस्पी तो नहीं हुई लेकिन जगतनारायण की बातें वह ध्यान से सुनता था. अब अरसा हो गया, ऐसी बातें कौशल्या भवन में और होती नहीं हैं.

विनायक को अब समझ में आता है कि आख़िर के दिनों में जगतनारायण काफी कुछ नलिनाक्ष की तरह हो गए थे. शाम-सुबह आंखें बन्द किए देर तक बैठे रहते और जब आंखें खुलतीं तो पुतलियां लाल दिखतीं. बातचीत भी फिर नहीं के बराबर करने लगे थे. कई दफ़ा ऐसा होता था कि विनायक कोई बात करता और वह कोई जवाब नहीं देते.

विनायक ने अपनी नजर पतंग पर से हटा ली थी. तारा की भी याद आई थी और गला रुंधने-सा लगा था.

अरसे बाद इस छज्जे पर कोई आया है, उसने अंदाजा लगाया. इस दौड़-भाग में इधर-उधर आकर दो घड़ी-भर खड़े होने की फ़ुर्सत महीनों से नहीं मिली. अब अगर छज्जा ढह भी गया, कायदे से कोई फ़र्क पड़ना नहीं चाहिए. लेकिन उसे अपने आप पर ही ताज्जुब हुआ कि जिस चीज का इस्तेमाल होता ही नहीं है, उसे भी पकड़ कर रखने की इच्छा होती है.

मोहिनी अंदर चली गई थी.

विनायक ने दीवार की दरार को अंगुलियों से छूकर देखा फिर आहिस्ते-से अंदर आकर दरवाजा बन्द कर दिया.

●●

कुंती मोहिनी की चोटी कर रही थी, हर शाम वह मोहिनी की चोटी कर देती है और मोहिनी उसकी. ऊपर पीछे की तरफ जो बरामदा है, उस पर चटाई डालकर दोनों बैठ जातीं और चोटी कर लेने के बाद भी अन्धेरा होने तक बैठी रहतीं.

कुंती ने बहुत दिनों बाद फिर से बालेश्वर का प्रसंग छेड़ा—सोचती थी, बाले-

श्वर कुछ कमाने-धमाने लगे तो एक बार बनारस जायके गंगाजी में डुबकी लगाय आऊंगी. लेकिन सोचने से ही क्या बनता है ?

---लल्ला को थोड़ा जम जाने दे, फिर इकट्ठे चलेंगे. मोहिनी ढाढस बंधाने के लहजे में बोली. लेकिन बोल चुकने के बाद यह जुमला बिल्कुल मामूली-सा लगा.

—हम लोगन के लिए लल्ला भी सूख कै कांटा होय गया. जो खेलने-खाने की उमर है और ह्यां घण्टा-भर आराम करने तक की भी फुर्सत नाय मिलती बिचारे को.

नीचे, रसोई से दाल में छौंक लगाने की आवाज़ आ रही थी. दाल रोज़ नहीं बनती. सिर्फ़ एक सब्ज़ी और रोटी बनती है. जिस दिन दाल बनती है, मोहिनी को लगता है, ख़ासी दावत हो रही है.

जगतनारायण थे, तब कभी-कभी रायता वग़ैरह भी बन जाता था. रायता बनने से, उस दिन, विनायक सब्जी या दाल लेता ही नहीं था. रद्दो को रायता बनाने का शौक था. बूंदी का गाढ़ा-सा रायता बनाती और जगतनारायण के लिए कटोरे में भरकर अलग से रख देती. उसके जाने के बाद शायद रायता कभी बना ही नहीं है. रानी एक-आध बार दही ज़रूर ले आई थी लेकिन रायते की बजाय मट्ठा बनाकर सबको थोड़ा-थोड़ा बांट दिया था.

मोहिनी को इसी 'कौशल्या भवन' में अपने शुरू के दिन याद तो हैं लेकिन जैसे अब यक़ीन नहीं आता. शादी के बाद वह ससुराल आई तो घर में हर रात पांच-पांच सेर दूध जमा दिया जाता था. चार सब्जियां बनती थीं और रसोई में सिर्फ़ देसी घी का इस्तेमाल होता था. ससुर को खाने-पीने का शौक था. ख़ुद खाते थे और दूसरों को भी पकड़कर लाते थे. वैसे भी कचहरी में पेशकार थे, सो जान-पहचान सैकड़ों लोगों से थी. सास को रामायण वग़ैरह पढ़ने की आदत थी. दिन-भर रसोई में घिचपिच करते-करते जैसे वह थक गई थी. बहू आयी तो उसे छुटकारा मिला था. उसके बाद बाहर के बहुत-सारे काम करती थी लेकिन रसोई में बिना किसी ज़रूरत घुसती भी नहीं थी.

एक दफ़ा काफी रात गए गांव से कुछ लोग आए थे. उनमें चारेक लोग शायद रिश्तेदार थे लेकिन आठ-नौ लोग रिश्तेदारों की जान-पहचान वाले भर थे. कचहरी में कोई मुक़दमा था. मुक़दमा लड़ने आए तो पेशकार के ही घर टिक गए. रास्ते में बस की कोई गड़बड़ी हो गई थी. इतने सारे लोग जब पहुंचे, रात के बारह बज रहे थे. ऊपर से सर्दियों की रात थी.

सास झुंझला रही थी.

लेकिन मोहिनी उठी और घण्टे-भर में खाना तैयार कर दिया. उसके बाद विश्वेश्वर प्रसाद जब तक ज़िन्दा थे बहू की तारीफ करते नहीं थकते थे. पहले मोहिनी की सास के पास ही तिजोरी की चाबी रहती. एक दिन सास ने अपने आप ही उसे चाबी का गुच्छा थमा दिया था. विश्वेश्वर प्रसाद मूछों के पीछे से उस दिन देर तक मुस्कराते रहे थे.

विश्वेश्वर प्रसाद का रोब तो ख़ैर था ही, घर-भर में हर कोई आदर भी करता था. उन्होंने मोहिनी को इस घर में आते ही बहू की बजाय बेटी का दर्जा दे दिया था. कभी कोई अच्छी चीज़ लाते तो मोहिनी को आवाज़ देते और उसके हाथ में थमाते. इस पर कोई बुरा भी नहीं मानता था. बहू ने जिम्मेदारियां समझ ली हैं, यह देखकर ही सास खुश हो गई थी.

ससुर-बहू में बातचीत न तो होनी थी, न ख़ास होती ही थी लेकिन घर-भर में हर कोई जानता था कि विश्वेश्वर प्रसाद की तरफ़ से मोहिनी को हर तरह की छूट मिली हुई है. अख़बार पढ़ने की आदत उनकी शुरू से ही थी. सुबह उठकर वह अख़बार को उलट-पलटकर आधा घण्टे तक देखते फिर बहू के पास भिजवा देते. उस वक्त मोहिनी के हाथ इस क़दर बधे होते कि सांस लेने तक की फ़ुर्सत नहीं मिलती. इस मामले को लेकर सास कई दफ़ा मज़ाक भी कर देती—बहू को अख़बार पढ़ाय कै कचैरी ले जाना है होंआ मजिस्टर बनैंगी बहू. सास कहती तो जगतनारायण भी हंस पड़ते थे. लेकिन विश्वेश्वर प्रसाद करते वही, जो उन्हें जायज़ लगता.

मोहिनी को जैसे एक-एक दिन याद आ जाता.

मोहिनी जब शादी के बाद यहां आई थी, कुंती की तब उम्र ही क्या थी? उसके दो साल बाद उसकी शादी हुई थी. कुंती को मोहिनी के साथ एक थाली में खाने का शौक था. उसकी नाक बहती रहती और वह अलग खाने के लिए तैयार ही नहीं होती. तब मोहिनी पहले उसमें नाक साफ करवाती फिर सबके खा लेने के बाद रसोई में उसके साथ बैठती थी. ननद-भावज फिर देर तक ज़मीन-आसमान की कहानियाँ सुनाते हुए रोटी के कौर निगलती. एक दफा कुंती ने ऐसा मज़ाक किया था कि मोहिनी जोरों से ठहाका मारकर हंस पड़ी थी. छाती में रोटी का टुकड़ा अटक गया था और उसकी साँस रुकने-सी लगी. खैर, ऊपर से सास दौड़ आई थी और थोड़ी देर के लिए सास बन्द करवा के मामला सभाल लिया था. उस दिन कुंती पर बहुत डांट पड़ी थी.

शुरू से ही मोहिनी और कुंती में रिश्ता गहरा हो गया था. शादी के बाद दसेक साल वह सुहागिन रही है अच्छा-खासा घर था मुरादाबाद के पास गजरौला में हेडमास्टर था नन्दोई. जब शादी हुई थी, सिर्फ़ मास्टर था लेकिन बाद में तरक्की हो गई थी. आदमी अगर बीमारी से मरे तो कोई दिल को तसल्ली भी दे सकता है. लेकिन बिना बीमारी के ही वह आदमी ख़त्म हो गया. स्कूल से लौटकर बिस्तर पर लेट गया था. सुबह से ही तबीयत कुछ सुस्त-सी थी. कुंती दूध का गिलास लाने रसोई में गई थी. दूध गर्म करके वापस आने में दसेक मिनट लगे थे. जब वह लौटी तो मामला आधा ख़त्म हो चुका था. गजरौला में उस ज़माने में डाक्टर-वैद्य भी तो बहुत नहीं होते थे. बाजार में एक मुसलमान हकीम की दूकान थी. ख़बर भिजवाने के बाद उसे आने में घण्टा-भर लग गया था. तब तक करने के लिए बाकी कुछ भी नहीं रह गया था.

कुंती यक़ीन नहीं कर पाई थी. ख़बर पाकर जगतनारायण दौडकर गए थे लेकिन इतनी जल्दी सबकुछ हो गया था कि वह दंग रह गए थे. हकीम ने कुछ समझा भी था या नहीं, वही जानता है, लेकिन कहा था—हार्टफेल.

कुंती फिर बच्चों के साथ यहा आ गई थी ससुराल में वैसे कोई था भी नहीं. ससुर-सास पहले ही गुजर चुके थे. एक देवर था वहा. लेकिन दो साल पहले उसकी शादी हुई तो ससुराल की तरफ से छह कमरों वाला खपरैल की छत का एक मकान मिला था, वह फिर अपनी बीवी के साथ वहीं रहने लगा था.

कुंती जब आई, रानी की उम्र दो महीने की थी.

मोहिनी उसे पकड़कर उस दिन बहुत रोई थी. विश्वेश्वर प्रसाद पर इस सदमे का झटका शायद कुछ ज्यादा ही पड़ा था. इसके बाद वह थोड़ी देर पहले कही हुई बातें भी भूलने-से लगे थे. पहले कचहरी से निकलने में कई दफ़ा रात भी हो जाती थी.

काम का बोझ ही कुछ ऐसा था कि सबकुछ निबटाकर ही आना पड़ता था लेकिन कुती के आने के बाद वह पाच बजते ही दफ्तर से बाहर निकल आते थे. ऊपर के लोग तब अ ग्रेज हुआ करते थे. अ ग्रेज साहब ने कभी भी विश्वेश्वर प्रसाद की तौहीन नही की. बल्कि हमेशा ही उनकी सज्जनता की कद्र की कभी अगर काम का बोझ रहता तो औरो पर डाल देते लेकिन विश्वेश्वर प्रसाद को मजबूर नही करते कि वह काम निपटाकर ही जाए

पुराने दिनो की याद मे मोहिनी एकदम खामोश हो गई थी छाती जैसे फटने लगी थी पहले उसे कभी-कभी काशी और वृन्दावन, मथुरा जाने की इच्छा होती थी अब अन्दर से यह इच्छा नही होती ह बस किसी तरह आखे बन्द हो जाए तो छुट-कारा मिले !

रानी के बर्तन खडकाने की आवाज रसोई से आ रही थी हाथ से शायद कोई कटोरा छूट गया था कुती ने ऊपर से झाककर नही देखा बिना देखे भी कुछ पूछ सकती थी लेकिन नही पूछा रानी अगर किसी दिन जल भी गई, तो भी कुती को बहुत फर्क शायद नही पडेगा.

बालेश्वर की याद दिमाग की नसो को मथ-सी रही थी अब कुती को यकीन आया था कि आदमी के रास्ते का कोई ठिकाना नही होता कौन कहा पहुचेगा, यह सब शायद कुछ भी तय नही रहता

अधेरा हो गया था

नलिनाक्ष अपनी कोठरी मे बत्ती बगैर जलाए चुपचाप बैठा था पीठ दीवार से टिकी थी इस मुद्रा म वह कभी नही बैठता उसकी आखे शायद बन्द थी या खुली ही रही होगी मोहिनी को पता नही चल रहा था उसने हाथ का रूधा सभाला और उठ खडी हुई

कुती वही बैठी रही अधेरे मे घुलते रहने के अलावा जैसे उसका कोई और विकल्प अभी था ही नही.

●●

अप्रत्याशित रूप मे एक घटना घटी

एक दिन सुबह-सुबह रद्दो लौट आई

यह रद्दो है ? दरवाजा रानी ने खोला था उसे यकीन करना बहुत मुश्किल लगा था रद्दो का प्रेत भी अगर आता, वह इस कदर अवाक नही रह जाती

रद्दो जैसे बहुत धीरे-धीरे सास ले रही थी हाथ मे सिर्फ एक बेत की कडिया थी और कुछ नही रद्दो जैसे इतना भी उठा नही पा रही थी फिर रानी ने उसे बाहो से पकडा और सुबकने लगी

तब तक विनायक उठ गया था

रानी के सुबकने की आवाज सुनकर नीचे आया तो रद्दो को देखकर यकीन ही नही आया था दोनो पैर लोहे जैसे जड हो गए थे इन्हे घसीटने मे भी ताकत की जरूरत होती ह

रद्दो अब तक चुप थी रानी जरूर सुबक रही थी लेकिन गलियारे की दीवार पर पीठ टिकाने के अलावा उसने कुछ और नही किया अब विनायक सामने आया तो जैसे बाध टूट गया दीवार मे चेहरा गडाए वह रोने लगी.

विनायक ने उसका चेहरा देखा

रद्दो की बजाय एक काला ढाचा लौट आया था. आखे गड्ढो मे घुस गई थी. उनके गिर्द काली पट्टी-सी जम गई थी.

विनायक का गला रुंधा हुआ था. वह थोड़ा आगे बढ़ा और रद्दो के माथे पर हथेली रख दी. रद्दो कभी इस तरह रो सकती है, उसने पहली बार जाना. कभी किसी वजह से कोई डपट देता तो सिर्फ चुप हो जाया करती थी.

उसका सबसे बड़ा अभिमान का रिश्ता जगतनारायण से था. दुनिया चाहे कुछ भी कह दे, वह सह लेती थी लेकिन जगतनारायण ने कुछ कहा नहीं कि तीन दिन के लिए चेहरा ही उतर जाता था.

इस बात को जगतनारायण भी जानते थे. अपने सारे बच्चों में सिर्फ रद्दो से ही उनका इतना गहरा रिश्ता था. कई दफा रद्दो के ससुराल जाने की बात कहकर मजाक-मजाक में ही उदास भी हो जाया करते थे.

एक मर्तबा स्कूल की छुट्टी के बाद किसी सहेली के घर उसकी भाभी का बच्चा देखने चली गई तो लौटने में रात हो गई थी. जगतनारायण परेशान-से कभी दरवाजे पर खड़े होते कभी चौराहे तक जाकर देख आते. उस दिन रद्दो लौटी तो वह बरस पड़े थे. जगतनारायण इतनी ऊंची आवाज में कभी किसी से नहीं बोलते. पूरा घर सहम गया था. इत्तफाक से बालेश्वर उस वक्त घर ही पर था. उसने कभी किसी बात की परवाह ही नहीं की. वह भी डर गया था.

रद्दो ने कोई सफाई तो खैर नहीं दी लेकिन सुबकियां जरूर भरने लगी थी. इसके बाद जगतनारायण भी इस घटना को लेकर बहुत आहत हुए थे. रद्दो के लिए अगले दिन एक चिकन की साड़ी खरीद लाए थे.

इस तरह की एक-आध घटनाओं के अलावा रद्दो कब रोयी है, विनायक को नहीं मालूम. रद्दो के माथे पर हथेली रखी तो लगा, बाल आपस में बहुत ज्यादा उलझे हुए हैं. साड़ी में गहरे लाल और नीले रंग के फूल थे. लेकिन कई जगह सफेद खाने भी बने थे. उसी से पता चल रहा था, वह काफी गन्दी भी हो चुकी है.

विनायक अपनी हथेली उसके माथे से हटाकर पीठ तक ले आया —चल, ऊपर चलते हैं.

रानी अब साड़ी के पल्लू से अपनी आंखें पोंछ रही थी.

ऊपर के बरामदे से मोहिनी ने झांककर देखा था. उसने भौंहें सिकोड़ ली थीं. नीचे नहीं उतरी थी. कुंती को शायद मोहिनी से ही पता हुआ था लेकिन उसने झांका भी नहीं था.

●●

कुंती और मोहिनी अंदर से गुम-सी हो गई थीं. विनायक से कुछ कहा तो नहीं लेकिन एकदम से यह 'कौशल्या भवन' अंधेरी खोह की तरह हो गया था. विनायक ने मोहिनी से रद्दो की सेहत के बारे में एक-दो बातें की थीं लेकिन कोई जवाब नहीं मिला था.

कस्तूरी ससुराल चली गई थी. विनायक को लगा, इस वक्त वह होती तो रद्दो को थोड़ी सहूलियत मिलती. वैसे बहेड़ी में ही दुर्गा भी है. बुलाया उसे भी जा सकता था लेकिन थोड़ा-सा सोच लेने के बाद किसी को भी बुला भेजना मुनासिब नहीं लगा. इतने बड़े हादसे को लोग खासी दिलचस्पी से देखेंगे और मौका मिल गया तो फब्तियां कस लेंगे. विनायक ने दो दिन तक काफी सोचा और आखिर में किसी को न तो आने के लिए लिखा न इस बारे में इत्तिला ही दी.

सामने वाले दरवाजे पर अक्सर औरतें आ जाती हैं. जब कभी दरवाजा खुलता तो वे झांकने की कोशिश करतीं. रद्दो को रिक्शे से उतरते हुए एक-आध लोगों ने देखा था और यह खबर घण्टे-भर में पूरे मुहल्ले में फैल गई थी.

'कौशल्या भवन' के पीछे हुकमचन्द का घर है रोडवेज मे वह ड्राइवर है जात म ब्राह्मण है. विद्यानिवास से दूर का कोई रिश्ता भी है. बचपन मे स्कूल भी जाता रहा है लेकिन ज्यादातर लोगो पर स्कूल जाने के बहाने इधर-उधर की मटरगश्ती करता फिर कभी जब स्कूल पहुचता, मास्टर मे पिटाई हो जाती थी और घर पर बाप से खैर किसी तरह मिडिल तक हुकमचन्द पहुच तो गया लेकिन इम्तहान पास नही हो सका तब तक उम्र बीसेक साल की हो चुकी थी और लडका बडा होने वाला था. बाप ने फिर कोशिश करके रोडवेज मे लगा दिया था हुकमचन्द तब क्लीनर था दो-तीन साल क्लीनर ही बना रहा और बीच-बीच मे छुट्टी लेकर ड्राइविंग सीखता रहा बाद मे फिर ड्राइवर बन गया

हुकमचन्द को हमेशा याद रहता कि वह ब्राह्मण है और बिहारीपुर वाले लुहार, कहार मे लेकर कायस्थ, बनिए तक ही है इस वजह से मुहल्ले वालो मे उसने एक दूरी बना ली थी कोई खास जरूरत पड गई तो बात कर ली वर्ना ड्यूटी के बाद घर लौटकर कोई जासूसी किताब पढ ली या छत पर थोडा टहल लिया.

हुकमचन्द जब तक घर मे रहता, कोई खास इधर आता भी नही है लेकिन उसके घर से बाहर निकलते ही उसकी मा चौखट पर बैठकर हुक्का गुडगुडाती और गली की औरतो की हर समस्या का समाधान बताती अन्दर बहू है लेकिन उसे इतने काम निबटाने रहते है कि सास के साथ बैठने की फुर्सत नही मिलती सास को यह पसद भी नही है कि बहू बराबर होकर साथ बैठे वह शायद औरत की जात को अच्छी तरह समझ गई थी. कई दफा कह भी देती कही अगर ढील दी तो औरत सर पर जा बैठेगी गली की बुजुर्ग और सासनुमा औरते इस नुस्खे का इस्तेमाल करती और पण्डिताइन की समझदारी की दाद देती

'कौशल्या भवन' वाली बात फैल गई तो ऐसे नुस्खो मे ज्यादा दिलचस्पी जरा एक बार उस तरफ झाक पाने के लिए हो गई पडोस वाली कहारन ने पण्डिताइन से कहा तो वह एकदम से मना भी नही कर पाई और अचकचाने भी लगी उसकी छत से 'कौशल्या भवन' के अन्दर का सबकुछ दिखाई जरूर पडता है लेकिन बाहर वाले ऊदर से होकर छत तक जाए, यह उसका बेटा नही चाहेगा पण्डिताइन सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में अगर किसी से डरती है तो सिर्फ अपने बेटे से बेटे का दिमाग अगर गरम हो गया तो न तो मा का ख्याल रहता है, न बीवी-बच्चो का उसे यह पसन्द भी नही है कि मुहल्ले के ऐरे-गैरे लोग बराबरी जताकर यहा आए-जाए

पण्डिताइन ने काफी-कुछ सोचा और बेमन से औरतो को छत तक जाकर मिनट-भर के लिए झाकने की इजाजत दे दी कोई सात औरते फिर छत पर चढकर परम जिज्ञासा से 'कौशल्या भवन' के अंदर की तरफ देखने लगी थी

रानी ने यह तमाशा देखा और रसोई मे घुस गई. रद्दो कमरे के अन्दर थी और उसके होने का कुछ भी पता नही चल रहा था कुती को थोडी देर बाद ही इस मजमे के बारे मे पता लगा था शायद मोहिनी ने खिडकी से देखकर उसे बताया था कुंती बाहर निकलकर बरामदे तक आई और पण्डिताइन की छत खाली हो गई इसके बाद घण्टे भर तक वह चीखती रही है एक-एक का नाम लेकर वह बिना रुके कहती जा रही थी उधर से जवाब मे किसी ने कुछ नही कहा था पण्डिताइन शायद कुछ कहती लेकिन उसे डर था कि कही बेटे को यह सब पता हो गया तो लेने के देने पड़ जाएगे वह चुप बैठी दात निपोरती रही.

इसके बाद कुती मोहिनी के पास जाकर बैठी और सर पीटना शुरू कर

दिया. रद्दो नलिनाक्ष के साथ वाली कोठरी में थी कुंती अगर न भी चीखती, उसे सुनाई पड़ता. बहुत दिनो बाद वह नसीब की दुहाई देकर रोने लगी थी.

विनायक ने रद्दो के मामले को लेकर कुंती से कभी कोई जिक्र जरूर नही किया था लेकिन कुंती को लगता रहा है, एक दिन रद्दो ही फिर शेरनी की तरह गरजने लगेगी. कभी अगर वह नल के पास या जीने मे दिखाई भी पड जाती, कुंती चुपचाप निकल आती खाने का वक्त होता तो रानी थाली मे रोटी-सब्जी लगाकर खिला जाती. यह सब देखकर बदन मे आग तो लग जाती है लेकिन कुंती गहरी सांस लेने के अलावा और कुछ नही करती उसे बार-बार याद आता कि जिस औरत का नसीब ही फूट गया, उसकी मर्जी भी क्या मायने रखती है ?

●●

विनायक सुबह-शाम रद्दो की कोठरी मे आकर जीभ, आंखे वगैरह का मुआयना करके कोई हिदायत दे देता दवा की दो-तीन पुडिया पहले दी थी लेकिन वह समझ गया था कि रद्दो ने खाई ही नही है आखिर मे वह हर सुबह उसकी जीभ मे दवा की एक बूद डाल देता था

रद्दो ने अपनी तरफ से कोई बात नही की थी.

विनायक ने भी कुछ नही पूछा था दो-चार किताबे लाकर उसके पास छोड दी थी. किताबे दुनिया की सृष्टि के बारे मे थी रद्दो मे ऐसे विषयो की दिलचस्पी कभी नही रही है लेकिन विनायक को लगा, जब लडकी ही बदल गई तो दिलचस्पी भी आज पहले दिनो जैसी नहीं होगी किताबे खत्म करने मे थोडा वक्त तो लगा था और पढने मे दिमाग पर काफी दबाव भी डालना पडा था लेकिन विनायक समझ गया कि यह लडकी हर तरह से बदल गई है

रानी रसोई का काम निबटाकर रद्दो के पास आ बैठती थी एक दिन मे तो खैर नही, आहिस्ते-आहिस्ते कई दिनो मे रद्दो ने शुरू से लेकर आखिर तक की समूची दास्तान सुनाई थी

रानी सुनकर क्या कहेगी, समझ नही पाती.

कई दफा रद्दो की आखों मे पानी होता लेकिन ज्यादातर वक्त सिर्फ एक खालीपन-भर होता. उसे लगता है, यह खालीपन इतना गहरा है कि गहराई का पता शायद खुद उसे भी नही है.

इस गहराई के बीच चक्रधर कहां है, वह नही जानती चक्रधर की आंखों मे क्या है, उसने झाककर देखने की कोशिश की थी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के दफ्तर के सामने उसका जो स्कूल था, आज वहां क्या है, रद्दो नही जानती शायद आज भी वही पुराना बोर्ड बन्द दरवाजे के ऊपर लगा हो

पहली बार जब वह स्कूल में घुसी थी, पायल की झनकार सुनकर अवाक-सी रह गई थी. चक्रधर लड़कियों को नाच सिखाता और रद्दो बिछी हुई कालीन के एक कोने मे बैठकर महसूस करती कि हवा में खुशबू-सी आ गई है पायल के खनकने की आवाज के साथ-साथ चक्रधर जैसे फूल की तरह खूबसूरत लगने लगता. 'कौशल्या भवन' में नाच-गाने का रिवाज कभी भी नही रहा है लेकिन रद्दो को लगने लगा, कोशिश करने से वह भी नाच सकती है जिस सहेली के साथ पहली बार वह चक्रधर के स्कूल मे गई थी, बाद में उसने जाना बन्द कर दिया था रद्दो फिर अपने आप जाने लगी थी. कई दफा स्कूल से भागकर चक्रधर के यहां पहुची और शाम को जब स्कूल की छुट्टी होती है, घर वापस आ जाती.

दुपहर का वक्त चक्रधर के लिए भी खाली रहता था. जो लडकिया नाच

सीखने आती वे छुट्टियों के दिन जरूर दुपहर को आ जाती लेकिन बाकी दिन अमूमन शाम को चार के बाद ही आती थी

एक पूरी दुपहर गुजारकर रद्दो जब घर लौटती, अन्दर खुमारी-सी महसूस होती. घर-भर मे सिर्फ रानी को ही थोडा शक हुआ था उसने पूछा तो रद्दो शुरू मे इन्कार करती रही लेकिन बाद मे सबकुछ बता दिया था

रद्दो को पता था, चक्रधर की बीवी है, दो बच्चे है यह एक बहुत बडी सीमा थी लेकिन चक्रधर जैसे इन सीमाओ मे बहुत अलग लगा था रद्दो को लग गया था कि इस आदमी के बिना वह जी नही सकती

फिर एक दिन वह घर छोडकर निकल गई

बरेली छोडकर गाडी पर सवार होने तक मालूम नही था कि वह जा कहा रही है चक्रधर बगल मे बैठा था रद्दो की हथेली उसकी मुट्ठी मे थी लेकिन लगता यही रहा है कि सबकुछ छूटा जा रहा है चक्रधर भी जैसे किसी भी पल अलग होकर लापता हो जाएगा

वे फिर सण्डीला आकर उतरे थे

चक्रधर के किसी दोस्त का घर है वहा महीने-भर वहा रहने के बाद फिर सीतापुर सीतापुर के बाद प्रतापगढ और आखिर मे लखनऊ

लखनऊ आते-आते रद्दो को कुछ हो गया था अब तक उसने एक बार भी नही पूछा था कि उसकी हैसियत क्या है ? अब पूछ लिया

चक्रधर हसकर रह गया था

यह हसी उस दिन रद्दो को उतनी मोहक नही लगी थी उसने जिद की कि शादी करनी होगी

चक्रधर ने कोई तुडा-मुडा बहाना बनाया था लेकिन रद्दो ने कसकर उसकी बाह पकड ली थी चक्रधर को खासा ताज्जुब हुआ था आखिर मे आर्यसमाज मदिर मे जाकर उसने रद्दो की माग भर दी थी

रद्दो अब थक गई थी

घर अक्सर याद आने लगा था कई दफा जगतनारायण भी याद आती और छाती चिदियो मे बटने-सी लगती चक्रधर भी फिर जैसे एक निहायत मामूली आदमी बन गया था रद्दो जिसके साथ घर छोड कर, किसी भी बात की परवाह किए बिना निकल आई थी, वह जैसे कही स्टेशन पर ही छूट गया था

चक्रधर ने उससे जो कुछ भी मागा, वह देती रही है आखिर मे उसे लगने लगा, वह भिखारी बन गई है चक्रधर उसकी हर चीज लेकर जैसे गदे नाले मे बहाता रहा है बहाकर खुश होता रहा है

आखिर मे चक्रधर के लिए वह जैसे एक औरत का जिस्म-भर होकर रह गई थी चक्रधर उसे बिस्तर मे धकेलता और वे सब हरकते शुरू करता जो सिर्फ किराए की औरतो के साथ ही की जा सकती है

उस बीच चक्रधर के पास जितने पैसे थे, सब खत्म हो गए रद्दो के पास पैसे नही थे, सिर्फ हाथ मे कुछेक चूडिया थी आखिर मे उसने चूडिया भी उतारकर दे दी थी चक्रधर उस दिन नशे मे झूमते हुए घर लौटा था इससे पहले पीता वह कई बार रहा है लेकिन देसी शायद कभी नही पी थी पी भी होगी तो रद्दो को मालूम नही था रात-भर उस दिन वह बकता रहा है

रद्दो को सबकुछ समझ मे तो आ गया था लेकिन वह यह भी समझ गई थी कि इस भंवर से निकल पाना लगभग नामुमकिन ही है चक्रधर को उसने कई बार

समझाना भी चाहा था लेकिन पीने के बाद वह इस क़दर वहशी हो उठता कि रद्दो की पीठ में नीली धारियाँ जम-सी गई थी.

एक दिन शाम को रद्दो को लेकर निकला और गोमती के किनारे पुल से कुछ फासले पर, जहाँ एक मंदिर-सा खंडहर है, जाकर बैठ गया. अन्धेरा था लेकिन दूर की रोशनियों की चमक दरिया के पानी पर थी रद्दो चुप बैठी थी. चक्रधर सिग्रेट पीते हुए बीच-बीच में खाँस रहा था. थोड़ी देर बाद वह उठा और पुल की तरफ चलने लगा. अन्धेरा था ही. पता नही चला कि कितनी दूर चलकर वह किधर मुड़ गया.

रद्दो फिर कुछ समझ नही पा रही थी और एकदम से चौंक उठी थी. साँस की रफ्तार तेज हो गई थी.सामने जो मूछों वाला आबनूसी आदमी खड़ा था, उसकी शक्ल तो वह ठीक से देख नही पाई लेकिन समझ गई कि उसकी ताकत एक जवान सांड से कम नही होगी.

रद्दो सिकुड़ने लगी थी.

वह आदमी नजदीक आया और उसकी ठुड्डी पर हथेली रख दी. रद्दो ने झटका दे दिया इस पर उस आदमी ने एक अश्लील मजाक किया था. रद्दो फिर खड़ी हो गई कि चिल्लाएगी और दौड़ना शुरू करेगी वह आदमी मुस्कराता रहा. ज़ाहिर है कि वह मतलब बखूबी समझ गया था. आखिर में उसने रद्दो को पकड़ लिया था—माल खाकर गिरस्तिन बनती है साली !

—मैंने कुछ नही लिया तुमसे. रद्दो हाँफने लगी थी

—तेरे यार ने लिया है. उसने बहुत इत्मीनान से कहा था.

उसके बाद रद्दो को सिर्फ इतना याद है कि खंडहर के अन्दर ले जाकर वह आदमी उसके कपड़े फाड़ता रहा कपड़े चिथड़े हो गए थे वहां कुछ चमगादड़ लटके हुए थे. उस छीना-झपटी में वे इधर-उधर पंख मारने लगे थे आखिर में वही सब हुआ था, जो रद्दो की बेहोशी के लिए जरूरी था

जब होश लौटा रात कितनी बीत गई थी, पता नही चला था. बदन में एक अनकहा दर्द उतर आया था प्यास के मारे गला सूख रहा था वह उठी और कपड़े ढूंढने लगी दूर से जितनी रोशनी आ रही थी काफी तो नही थी लेकिन इधर-उधर फैले हुए कपड़े मिल गए थे.

रद्दो ने किसी तरह अपने बदन को लपेट-भर लिया था. सारे जिस्म में धूल लग गई थी और उबकाई-सी आ रही थी. थोड़े फासले पर एक अंधेरी-सी आकृति दिखाई पड़ी. चक्रधर था अगर वही आदमी दुबारा आकर अपना सलूक दुहरा भी देता, रद्दो अपने को इतना बेसहारा महसूस नही करती. उसकी साँस फूलने लगी थी. चक्रधर शायद कही से पीकर आया था और बीड़ी के कश खींच रहा था. रद्दो फिर सीढ़ियाँ उतरकर बढ़ने लगी थी. चक्रधर सामने आ गया उस आदमी से भी कही ज्यादा बदसूरत लग रहा था. रद्दो ने कसकर एक चांटा मारा और भागने लगी. लेकिन भाग नही पाई. चक्रधर चाहता तो चांटे का बदला फौरन ही ले सकता था लेकिन कुछ भी किए बगैर ठोकर खाकर गिर पड़ी रद्दो के जिस्म को उठाया और इन्तजार करते तांगे पर लाकर डाल दिया.

हुसैनगंज की कोठरी तक जब वे पहुंचे, शायद रात के दो बज रहे थे. रास्तों पर सिर्फ चंद मरियल कुत्ते फिर रहे थे. रद्दो को महसूस हुआ कि दुपहर को डेढ़ रोटी खाने के बाद अब तक पेट में बूंद-भर पानी भी नही गया है. भूख के मारे अंतड़ियां तक दर्द करने लगी थीं.

इसके बाद चक्रधर ने चांटे का बदला लिया था. रद्दो की पीठ पर पहले ही नीली धारियां थीं, अब समूचे जिस्म पर उभर आईं. इतनी मार खाने के बावजूद आंखें बिल्कुल सूखी थीं, सिर्फ बुखार मे जिस्म जलने लगा था.

तीन दिन बाद बुखार उतरा तो नही था लेकिन वह निकल सकने की हिम्मत कर पाई थी. चक्रधर घरपरनही था. वह स्टेशन आकर बिना टिकट गाड़ी पर सवार हो गई.

अपनी कहानी खत्म करने के बाद रद्दो एकदम से ठहर-सी गई और रानी को घूरकर देखने लगी. रानी के गालों पर आंसू थे. उसने एक गहरी सांस ली और कुछ भी बोल नहीं सकी.

●●

कुल्हाड़ापीर के इलाके में ज्यादातर लोग मुसलमान हैं. पहले सिर्फ़ मुसलमान ही इधर रहते थे. बंटवारे के बाद सिन्धी और पंजाबी भी इधर बस गए. उस वक्त बहुत-सारे मुसलमान जान बचाने पाकिस्तान चले गए थे. आख़िर तक वे पाकिस्तान तक पहुंच भी पाए थे या नही, कोई नहीं जानता. लेकिन लोगों का ख्याल यही है कि वे फिर वहीं जाकर बस गए हैं. यहां उनके घरों में ताले बन्द थे. पंजाबी और सिन्धी शरणार्थी ताला तोड़कर अंदर घुस गए और तब से इत्मीनान से रह रहे हैं. सरकार द्वारा इन लोगों को कर्जा दिया गया और नौकरी-चाकरी के फेर मे न पडकर लगभग हरेक ने कुछ-न-कुछ व्यापार शुरू कर दिया. आहिस्ते-आहिस्ते मुसलमानों के हाथ मे जो व्यापार था, वह भी पंजाबियों के पास आ गया था. बाकी बचे मुसलमान लोग फिर या तो रिक्शे चलाने लगे या मजदूरी वग़ैरह कुछ करने लगे. वैसे कुछेक लोग ऐसे भी थे, जो पुश्तैनी धंधे दर्जीगिरी मे ही जमे रहे. गोश्त वग़ैरह की दुकानें भी मुसलमानों के ही हाथों रह गई.

किस जमाने में यहां एक मुसलमान फ़कीर होता था. उसके बारे में किसी को भी बहुत ज्यादा तो मालूम नहीं हो सका था लेकिन बरेली-भर के काफ़ी लोग उसके पास आते थे. उनमें मुसलमान तो खैर होते ही थे, हिन्दुओं की तादाद भी कम नहीं थी. फ़कीर था बहुत गुस्सैल क़िस्म का आदमी. उसका नाम क्या था, किसी ने न तो कभी पूछा था, न पता ही लग पाया था. गुस्से की वजह से लोग कुल्हाड़ापीर कहने लगे थे. दूर-दूर से मुसीबतजदा लोग फ़क़ीर से दुआ मांगने आते थे.

आज वहां एक मजार है. साल में एकदफ़ा वहां मेला लगता है और लोग मजार को चादर उढ़ाते हैं. मेले के दिन इतनी भीड-भाड़ रहती है कि बाजार की जो चौड़ी सड़क है, उससे होकर गुजरना मुश्किल-सा हो जाता है. सुबह से लाउड-स्पीकर पर गाना चलता रहता और लोग लाईन में लगकर मजार तक जाकर दुआ मांगते, बताशा लुटाते.

कुल्हाड़ापीर के बाद ही भूड़ मुहल्ला है. बरेली का सबसे पुराना मुहल्ला शायद यही है. लोग कहते हैं, पहले यहां से रामगंगा बहती थी. भूड़ की मिट्टी में रेत का हिस्सा कुछ ज्यादा है. शायद इसी वजह से यहां के लोग रामगंगा से रिश्ता जोड़ते हैं.

भूरा मुहल्ला जितना पुराना है, भईयन बदमाश भी उतना ही मशहूर कुनबखाना पहुचकर भी अगर किसी ने भईयन का नाम ले लिया तो कोई भी बडे आराम से उसके घर तक पहुचने का रास्ता बता देगा आजकल जमाना बदल गया है. ऊपर से कोतवाली है, कचहरी है, थानेदार, सिपाही—सभी कुछ है, लेकिन भईयन के नाम से आज भी डर-सा ही महसूस होता है ऐसा बहुत कम सुनने म आता है कि भईयन ने इधर किसी को परेशान किया हो लेकिन पुराने दिनो की बाते लोग भूल नही पा रहे है. उसके खूखारपन के बारे मे बहुत-सारी बाते लोगो के जेहन मे आज भी ताजा हैं

अब भईयन हाथ मे एक छडी जरूर रखता है, उसका इस्तेमाल शायद ही कभी होता है सिर्फ कच्ची का एक धधा है, जिसके लिए न तो लाइसेंस है, न उसकी परवाह ही उसे है इस कच्ची के मामले मे कोई रियायत वह नही करता एक दफा उसके इलाके मे इसरार मिया ने भी लाख रुपए कमाने का सपना देखकर यह धधा शुरू किया था. फिर भईयन ने इतनी पिटाई की थी कि आज भी सर्दियो मे रीढ की हड्डी और पसलियो मे दर्द होता है

इसरार तो एक मिसाल-भर है ऐसी मिसाले लोगो को और भी मालूम है आबकारी वालो से लेकर कोतवाली तक सबको सब पता है उनके हिस्से का जितना बनता है, भईयन वक्त पर भिजवा देता है वे भी फिर कोई खास फसाद नही करते एकदफा सीतापुर से तबादला होकर एक नया आबकारी अफसर आया था बरेली का उसूल उसे खास मालूम नही था भईयन के पीछे पड गया दफ्तर वाले काफी समझाते रहे लेकिन आदमी थोडा अडियल किस्म का था उम्र नयी थी, जोश मे आकर सबको तिनके के बराबर समझता था सीतापुर मे उसका रोबदाब भी खासा जम गया था और बगैर लाइसेंस के धधा करने वाले मुसीबत मे पड गए थे बरेली आकर जब वह भईयन के पीछे पड ही गया, एकदिन उसकी बीवी ही गायब हो गई नई-नई शादी थी अफसर एक तरफ तो गुस्से मे लाल हो गया और दूसरी तरफ बीवी के लिए बेहाल भी

जिस दिन यह हादसा हुआ उस दिन भईयन कोतवाली जाकर दरोगा और कोतवाल को सलाम भी कह आया था. बल्कि जब यह घटना घटी, वह दरोगा के सामने बैठकर उसकी खैरियत पूछ रहा था हाथ मे कोई खास काम अगर नही हुआ, इधर से गुज़रते वक्त रिक्शे से उतर कर मिनट-दो मिनट के लिए उसने दुआ-सलाम कर लिया और कोई नयी ताज़ी खबर हुई तो सुना दी

आबकारी अफ़सर पुलिस मे रिपोर्ट लिखाने को जा ही रहा था लेकिन दफ्तर के बडे बाबू ने आख़री बार कोशिश की कि शायद साहब को हकीकत समझ मे आ ही जाए. साहब के सामने एक खत भी रखा था नसीहत थी—और भी ज्यादा फजीहत की तो बीवी की लाश ही मिलेगी

अगला दिन भी पशोपेश मे गुज़रा उसके अगले दिन बडे बाबू की बात साहब ने मान ली थी. दफ्तर से एक आदमी भईयन के यहा सदेशा लेकर पहुचा था और शाम तक आबकारी अपसर की बीवी घर पहुच गई थी उस औरत को यह तो मालूम नही हो सका कि वह किन लोगो के कब्जे मे थी लेकिन उसके साथ किसी ने बदसलूकी नही की थी खाने-पीने का अच्छा इतजाम था और जिस कोठरी मे वह कैद थी, उसका बिस्तर बाकायदा साफ-सुथरा था वह जगह कहा है, उसे कुछ नही मालूम सिर्फ इतना पता था कि उसे ले जाने वाले छह-एक लोग थे, जिन्हे उसने कभी नही देखा था

बाद मे यह कहानी कोतवाल को भी मालूम हुई थी आबकारी अफसर ने तो खैर नही बताई थी लेकिन कई लोग इस हादसे के बारे मे जान गए थे कोतवाल ने इसके बावजूद भईयन से कुछ नही पूछा था.

तीन साल बाद उस आबकारी अफ़सर का तबादला हो गया था. वह आगे कभी किसी के साथ इस तरह हाथ धोकर पड़ा या नहीं, यह तो नहीं मालूम लेकिन जब तक बरेली में था भईयन को आगे नहीं छेड़ा था. उसके बाद कितने ही अफ़सर आए और गए लेकिन बहुत ज़्यादा कानून की पट्टी, भईयन को पढ़ाने की कोशिश किसी ने नहीं की. ज़्यादातर लोग अपने हिस्से की चांदी पाकर ही चुप रह जाते. जिसे इसके बावजूद चुप रहने में दिक्क़त होती, उसे पुराने अफ़सर की कहानी कोई दफ्तर वाला ही सुना देता. मामला फिर वहीं दफ़ा हो जाता.

भईयन का बाप बढ़ई था. आख़िर में बेटा इतना मशहूर हो गया तो उसने बढ़ईगिरी छोड़ दी. दिन-भर चारपाई पर बैठकर नारियल वाला काला हुक्का गुड़-गुड़ाता रहता और शाम को साफ़ कपड़े पहनकर थोड़ा घूम-फिर आता. बेटे के रोब की वजह से मुहल्ले वाले बाप को भी सलाम करते थे. लेकिन पहले यही आदमी इतना मरियल था कि फटी हुई बनियान पहनकर जब गली से गुजरता तो भंगी-चमार भी ध्यान नहीं देते थे.

बढ़ई का बेटा इतना ज़बरदस्त बन जाएगा, जानता था कोई ? जिस पण्डित ने पत्रा बनाया था, कहा था, लडका पढ-लिखकर दफ्तर का बाबू बनेगा. बढई इस बात पर बेहद ख़ुश हो गया था. पण्डित को ढाई सेर आटे के साथ चार आने की दक्षिणा भी दी थी.

भईयन ने बाद में अपना पत्रा अपने ही हाथों से फाड़ डाला था. पत्रा या ज्योतिषी में उसे इसके बाद भी कभी यक़ीन नहीं आया. लोग रोज न सही तीज-त्योहार पर मंदिर जाकर सर झुकाते ही हैं लेकिन भईयन कभी नही गया. रामनवमी पर मुहल्ले मे झांकी निकलती है. आधा मील लम्बा जुलूस उसके माथ चलता है. जुलूस में मूंग-फली वालों मे लेकर बैण्ड-बाजे वाले, नच्चैया सभी तरह के लोग होते है. नगाड़े की आवाज़ के साथ जुलूस आगे बढता और लोग दरवाज़े से निकलकर थाली में फूल, दीए और मिठाई चढाते. भईयन अगर उस वक्त घर पर होता, बाहर नही निकलता. उसकी बीवी एक-आध बार मिन्नत जरूर करती लेकिन ज़्यादा कहने की हिम्मत उमे भी नहीं होती.

लेकिन यही आदमी एकदिन कुल्हाड़ापीर की मजार पर चला गया. फूल और बताशे वग़ैरह लोग जाकर मज़ार के सामने रख देते हैं, भईयन ख़ाली हाथ ही था. शायद घंटा-भर आंखें बन्द किए वहां बैठा रहा. मज़ार का वह हिस्सा अंधेरा ही रहता है. कुछ फ़ासले पर चुंगी की तरफ से एक मिट्टी के तेल वाली बत्ती वैसे लगी हुई है लेकिन उसकी रोशनी यहां तक नही आती. शाम को लोग मोमबत्ती जला जाते हैं. थोड़ी देर तक उसी वजह से मज़ार रोशन रहती है. लोगो ने भईयन को देखा तो दंग ही रह गए. पुलिस, दरोगा जिस आदमी की मुट्ठी में हो, उसे खुदा की भी ज़रूरत नहीं पड़ती. मोमबत्ती की रोशनी से ही दिखाई पड़ा था कि भईयन के गालों पर आंसू की धार है. वह उठकर गली से बाहर आया और रिक्शा बुलाने लगा तो यासीन दर्ज़ी ने मलाम किया था. यासीन की उम्र अब इतनी हो गई कि दर्ज़ीगिरी सभलती नही है. फिर भी बुड्ढा सुबह से लेकर शाम तक कुछ-न-कुछ सिलता ही रहता. उम्र की वज़ह मे ही शायद भईयन ने कभी उसकी तौहीन नही की.

यासीन का सलाम सुनकर वह मुड़ा और दूकान के सामने खडा हो गया. बहुत दिनों बाद किसी दोस्त से मिलने पर चेहरे का भाव जैसा होता है, भईयन का भी वैसा ही था. इतना ज़रूर है कि भईयन के बाप मे यासीन की दोस्ती न सही, अच्छी मुला-क़ात थी. बढ़ई के यहां अगर कुछ सिलना हुआ तो यासीन दर्ज़ी ही सिल देता था. दोनों

की उम्र में कोई पन्द्रह-एक बरस का फ़र्क़ था. बढ़ई को इस फ़र्क़ के लिए यासीन बड़ा भाई कहकर ही पुकारता रहा है.

फिर बढ़ई मर गया और यासीन दर्ज़ी का सिलने का तरीका भी बहुत पुराना पड़ गया. बरेली शहर में अब एक-से-एक होशियार दर्ज़ी है. भईयन अब कपड़े सिलाने के लिए पुराने दर्ज़ी को तो ख़ैर कभी नहीं बुलाता लेकिन कुल्हाड़ापीर के बाज़ार में अगर मुलाक़ात हो गई तो दो मिनट रुककर ख़ैरियत ज़रूर पूछ लेता है.

—दुरुस्त हो ? मियां ने पूछा.

भईयन ने गर्दन हिलाई— बस दुरुस्त ही नही हूं.

यासीन को समझ में नही आया था. ठिठोली करने की आदत भईयन की नहीं है. इस तरह मायूस भी शायद ही कभी नज़र आया हो.

—वाक़या क्या है ? मियां ने चश्मे के अन्दर से झांककर भईयन के चेहरे की लकीरें देख लेनी चाही थी.

—भतीजी बीमार है. पीली हो गई है लड़की. कै नाय सकता, कित्ते दिनों की मेहमान है !

—मर्ज़ ?

—सभी कुछ हैं. कित्ता बताऊं.

यासीन ने सीताराम कूचे के हकीम का नाम बताया. यह नाम बरेली में बहुत मशहूर तो नही है लेकिन कुछ लोग कहते हैं कि कुछ लाइलाज बीमारियां भी उसने ठीक की हैं.

भईयन ने गर्दन हिलाई और लम्बी सांस ली—लखनऊ से भी डाक्टर बुलाय के दिखाय दिया लेकिन लडकी वैसी की वैसी है. मूख कै काटा होय गई अब. बदन पे हाथ धरो तो हथेली जल जाएगी···.

●●

इसके बाद ही लोगों को पता हुआ था कि भईयन की भी सचमुच कोई परेशानी हो सकती है.

नए आए पंजाबी-सिंधियों को यह बात मालूम नही है लेकिन पुराने लोग जानते हैं, इस भतीजी के पीछे भईयन ने कितनी ज़िल्लतें उठाई हैं. इस लड़की को अपनी बेटी के अलावा उसने कुछ और कभी समझा ही नही.

शादी के नौ बरस बाद उसकी बीवी ने एक लड़की जनी थी. बढ़ई तो तब ज़िन्दा नहीं था, लेकिन भईयन की मां थी. पांच बरस तक जब कुछ नहीं हुआ, उसने बेटे के लिए लोगों से रिश्ते की बात करनी शुरू कर दी. भईयन को पता तब चला जब उसकी बीवी रात-भर रोती रही थी. मारे गुस्से के वह आग का बबूला हो गया था. ऐसा नहीं था कि बीवी की मुहब्बत की वजह से उसने कोई क़ुर्बानी की हो, लेकिन दूसरी शादी की बात उसके ज़ेहन में कभी आई ही नहीं थी. बुढ़िया ने सोचा था, बेटा खुश होकर कुप्पा हो जाएगा लेकिन हुआ बिल्कुल उल्टा. रो-गाकर वह आख़िर में चुप हो गई थी.

उसके चार बरस बाद भईयन की बीवी ने एक लड़की जनी थी. लड़की होने की वजह से सास बहुत खु़श तो नहीं हो पाई थी लेकिन तसल्ली हो गई थी कि बहू कोखजली नहीं है. इस बार लड़की सही, कोख अगर खुल गई तो आगे लडका भी हो सकता है. बहू को मज़ार तक हर जुम्मे के दिन ले जाकर वह मनौतियां मना आती थी.

यह लड़की सिर्फ़ दो साल ज़िन्दा रही थी. दो ही साल में इतनी बड़ी हो गई थी कि देखने वाले चार-पांच साल की समझते. दो साल बाद एक दिन निमोनिया से उसकी

मौत हो गई. भईयन की बीवी वैद्य के पैर पकड़ कर रोती रही थी. उसे शायद यक़ीन-सा था कि लड़की अभी तक मर नहीं गई और वैद्य चाहे तो उसे बचा सकता है.

भईयन चुपचाप यह सब देखता रहा.

फिर उसे उठाकर श्मशान तक पैदल गया और लकड़ी के बीच बच्ची को लिटाकर अपने हाथों से आग लगा दी. इतनी छोटी बच्ची के लिए ऐसी पारलौकिक क्रिया कोई नही करता. साथ जो लोग गए थे, आख़िर तक समझाते रहे लेकिन भईयन ने अपना इरादा नही बदला.

आग जलती रही और वह चुपचाप बैठा रहा.

फूल चुनने का काम अगले दिन होना था. साथ वाले उठने के लिए बगले झांक रहे थे लेकिन भईयन जैसे इत्मीनान से बैठ गया था. लोग डोम के हाथ चिता सौंपकर आ जाते हैं और अगले दिन जाकर फूल चुनकर दरिया मे बहाते है. लोगों ने उसे समझाया तो उसने इशारे से कह दिया कि सब चले जाए. सब तो ख़ैर नही चले गए थे लेकिन जो दो लोग भईयन के साथ रह गए थे, उन्हें समझ मे नही आ रहा था कि दो बरस की एक बच्ची के पीछे इतने बड़े जलसे की जरूरत भी क्या हो सकती है ! श्मशान का सरकारी डोम बगल मे खडा था लेकिन जितना कुछ करना था, भईयन ने अपने हाथ से ही सब किया.

इसके कोई साल-भर बाद छोटे भाई के यहा लडकी हुई थी. भईयन को लगा, उसकी अपनी बेटी ही लौटकर आई है. इस बात का जिक्र उसने खास किसी से किया तो नही लेकिन सभी जानते थे कि भतीजी के लिए उसका दिल भरा हुआ है.

भईयन का जरूर पढाई मे कभी मन नही लगा लेकिन भाई मदरसा जाता था. हर साल पास भी होता रहा ह वह. फिर मैट्रिक तक पढकर बिजली के दफ्तर मे बाबू हो गया था. उसकी यही लडकी सबसे बडी है उसके बाद चार और लड़किया और एक लड़का है. महगाई की वजह से तगी रहती थी भाई की बहू वैसे ठीक ही थी सिर्फ़ जेठानी के साथ हर वक्त कुछ लगा ही रहता था आखिर मे अपने पति और बच्चो को लेकर वह थोडे फ़ासले के एक दूसरे मकान मे चली गई थी वहा जाने के बाद भाई पर इतना बोझ आया कि बेचारे का कधा ही लगभग टूटने को हुआ. कुल-मिलाकर सवा दो सौ रुपए मिलते थे. खाने वाले थे आठ लोग.

इसके बाद भईयन ने तो कुछ नही कहा था लेकिन उसकी बीवी मायूस रहने लगी थी. देवरानी लड़कर गई थी, सो अपनी इज्जत का भी तो सवाल था. बच्चो के लिए दिल जलकर राख़ होता रहा है.

भईयन दिन मे कम-से-कम दो बार जाकर बच्चो को देख आता था. लेकिन असली मुसीबत तो उसकी बीवी की है. घर जैसे काटने लगा था. आखिर मे वह बीमार पड़ गई थी.

बड़ी भतीजी को भईयन तब अपने यहां ले आया था वैसे भी उसे ताई ही पालती रही है. दूसरे घर मे जाने के बाद वह खिड़की पर खडी हो जाया करती थी कि शायद ताई दिखाई पड़ जाए.

उसदफ़ा भतीजी यहां आई तो ताई ने अपने देवर से कहकर लड़की को यही रख लिया था. सुनकर देवरानी कुछ गुर्राई जरूर रही थी लेकिन ज्यादा चू-चपड़ नही की. घर की तंगी ही इसकी वजह थी.

वैसे उस घर की तंगी का ख़्याल भईयन को बराबर रहा. जब भी वहा पहुंचता, हाथ की थैली ख़ाली कभी नही होती. एकदफ़ा छोटे भाई ने झिझक कर कुछ कहा था तो जवाब में भईयन थोड़ी देर के लिए इतना ख़ामोश हो गया था कि भाई ने फिर

माफ़ी मांग ली थी.

भतीजी का वैसे एक नाम भी था लेकिन भईयन ने उसे स्कूल मे दाखिल करा दिया और बढ़िया-सा एक नया नाम लिखवा दिया—कुसुम. दूसरी भतीजियों और भतीजे का भी स्कूल का खर्चा हर महीने वह नक़द दे आता था. वैसे चुंगी का स्कूल मुहल्ले में है और वहां मुफ्त में तालीम मिलती है लेकिन सारे बच्चों को उसने अच्छे स्कूलों में भर्ती करवा दिया. कुसुम के लिए ख़ास इंतज़ाम था. वह रिक्शे पर स्कूल जाती थी और रोज के हिसाब से उसे आठ आने चाट-पकौड़े खाने के लिए मिलते थे. तली हुई चीजें भईयन को कभी पसद तो नही आईं लेकिन इस लडकी ने कभी अगर छोटी-से-छोटी जिद भी की, भईयन ने कभी इनकार नही किया. उसकी ताई भी उसे पलकों पर बिठाकर ही रखती. लेकिन भईयन का बढ़-बढ़कर करना उसे कई दफ़ा खल भी जाता था. यहां तक कि जब कुसुम छोटी थी, कई बार उसने टट्टी-पेशाब तक साफ किए हैं. उसकी ताई ऐसी ही बातों पर झुंझलाती रही है. मियां-बीवी में कई बार चक-चक भी हुई है लेकिन भईयन अपनी बीवी के प्रभाव मे कभी नहीं आया.

तब से लेकर अब तक भईयन ने कुसुम को हवा-पानी तक से बचाए रखा. कभी अगर उसे छीक भी आ जाती, वह हकीम-वैद्य बुला लाता. वही लडकी अब बी.ए. पास हो गई है. उसकी ताई जो भी मिलता, उससे एक अच्छा-सा लड़का ढूढ देने के लिए कहती. लड़की का मामला है. बोझ जितनी जल्दी उतर जाए, उतना ही अच्छा. यह बोझ वाली बात भईयन को शुरू से ही नापसंद रही है. आखिर लड़की है कोई गट्ठर नहीं जो कंधे से उतार दिया और बोझ हल्का हो गया. शादी आखिर जिन्दगी में एक ही बार होती है. किसी भी लल्लू पंजू को पकड़कर लड़की सौंपी तो नहीं जा सकती है.

भईयन लडका ढूढ जरूर रहा था लेकिन ढूढने-ढूढने मे भी फर्क होता है. उसे जैसे हमेशा डर-सा लगा रहता, कुसुम यह घर छोडकर चली ही जाएगी. और वही चली गई तो फिर रह क्या जाएगा ? इस डर की वजह से वह बीसेक लड़के नापसंद कर चुका था.

आखिर एक दिन कुसुम ने खाट पकड ली.

घण्टे भर के अदर बुख़ार इतना चढ गया कि बदन भट्ठी-सा बन गया. अंदर अतड़िया जैसे मरोड़ी जा रही थी. अस्पताल भेजकर इलाज कराया जा सकता था लेकिन भईयन को अस्पताल वालो पर भरोसा नही है. वैसे भी अग्रेजी इलाज का जो तरीका है उसे कभी रास नही आया. कुसुम के लिए शुरू मे उसने सिर्फ हकीम-वैद्यों को ही बुलाया था. बरेली शहर में एक-से-एक तजुर्बेकार हकीम है, वैद्य हैं, उनकी दवाओ का कमाल भी जादू की तरह होता है. लेकिन कुसुम का इलाज शुरू हुआ और बगैर किसी फर्क के महीना-भर गुजर गया. उसके बाद अंग्रेजी इलाज वाले डाक्टरों को भी भईयन ले आया था. तीमारदारी खुद तो करता ही था, आठ-आठ घटे की ड्यूटी के लिए तीन नर्सें भी रख ली थीं कई दवाएं तो ऐसी थी, जो बरेली में मिलती ही नही थी. भईयन किसी को तब दिल्ली भेजता और दवा हाजिर करता.

कुछ दिनों बाद डाक्टरों ने कैंसर बताया था. आँतों में शुरू में मर्ज़ था अब ख़ून में भी आ गया है.

भईयन सुनकर गिरते-गिरते बचा था. दीवार पकड ली थी.

फिर खुद लखनऊ चला गया और टैक्सी पर बिठाकर एक मशहूर और तजुर्बेकार डाक्टर को ले आया. काफी पैसे खर्च हुए थे. लेकिन अगर जान ही चली

गई तो ये पैसे किस काम आएंगे ? उस डाक्टर ने भी वही सब कहा, जो बरेली के डाक्टरों ने कहा था. आराम के लिए एक-आध नई दवा जोड़ जरूर दी थी. कायदे से इससे थोड़ा-बहुत फ़र्क भी पड़ना चाहिए था लेकिन फायदा रत्ती-भर का भी नहीं पहुंचा था.

डाक्टर अगले दिन अपनी फीस की रकम लेकर लौट गया. भईयन समझ गया कि यह लड़की अब बहुत हुआ तो महीने-भर की मेहमान है. तब से जैसे हर तरह से कमजोर पड़ गया था वह.

कुसुम के सिरहाने एक चटाई बिछाकर वह ज़मीन पर बैठ जाता और घंटों लड़की के बाल सहलाता रहता. कभी-कभी उसे लगता कि अगर शादी हो जाती तो शायद लड़की अपने नसीब से बच ही जाती. उसे यकीन आता कि उसके साए में कोई बच्चा बहुत ज्यादा दिनों तक सांस ले ही नहीं सकता है. दिल फिर लोहे की तरह जकड़कर भारी होने लगता.

रात को वह बगल के कमरे में सोने की कोशिश करता था. लेकिन नींद जैसे उड़ गई है. बिस्तर पर जाने के बाद एक हज़ार बातें दिमाग में कीड़ों की तरह किलबिलाती रहतीं. फिर बहुत हुआ तो आधे-पौने घंटे के लिए आंखें बन्द होतीं. लेकिन कुसुम के कराहने की एक छोटी-सी आवाज़ से ही एक दम खुल जातीं बस, इसके आगे नींद आती ही नहीं. भईयन फिर आंगन में टहलना शुरू कर देता.

जिस कमरे में कुसुम की खाट है, वह पूरब की तरफ है. सुबह होती तो सबसे पहले धूप इसी कमरे में आती. मकान बहुत पुराना है, लिहाजा दीवारें भी पसीज गई हैं. बारिश के दिनों में कमरे में एक बासी महक भी भर जाती है. इतने दिनों तक यह कभी भी नहीं खला लेकिन अब लगा कि कुसुम को इससे बेहतर कमरे में रखना चाहिए था.

फूल शायद बाज़ार से इस घर में कभी नहीं आए. कभी तीज-त्योहार में अगर ज़रूरत पड़ गई तो अगल-बगल से आते हैं. गंदे नाले में मंदिर के सामने अब फूलों की कई दुकाने लगती हैं. पहले सिर्फ गेंदे या बहुत हुआ तो गुलाब ही बिकते थे. बाद में रजनीगंधा की सलाइयां और चमेली भी मिलने लगी. शौक़ीन लोग मंदिर से निकलकर घर जाते वक्त ये महंगे फूल ले जाते.

भईयन मंदिर के अन्दर तो कभी नहीं घुसा लेकिन उसके सामने वाले चबूतरे पर रोज शाम को पहुंचता और दसेक रुपए के फूल लेकर लौटता. लौटकर कुसुम के सिरहाने गुलदस्ते में रख देता. रजनीगंधा की सलाइयां रोज़ बदलने की ज़रूरत नहीं होती. एक बार लाने से कायदे से पांच-छह दिन निकल ही सकते हैं. लेकिन भईयन दुपहर ढलते ही बेताब हो उठता और नए फूल लाकर गुलदस्ते में रख देता .

कभी कुसुम आंखें खोलती तो फूलों की तरफ अवाक्-सी देखती रहती. इस घर में कभी इतने अच्छे फूल आ भी सकते हैं, यकीन ही नहीं होता.

इस कमरे में खिड़कियां हैं लेकिन पर्दे उनमें कभी नहीं लगे. लकड़ी के पलड़े जब खुलते या बन्द होते तो चूं-चू की आवाज़ होने लगती. ठीक-ठीक बन्द ये कभी पहले होते रहे होंगे लेकिन इधर कम-से-कम पन्द्रह सालों से पलड़े इतने टेढ़े और बेडौल हो गए हैं कि कुंडी लगाई ही नहीं जा सकती. अब मरम्मत होने की गुंजाइश भी नहीं है. वैसे खिड़कियों के बारे में भईयन का खयाल पहले भी आया था लेकिन आलस की वजह से बात टल गई.

इनकी मरम्मत ज़रूर कराई नहीं जा सकी लेकिन पर्दे टंग गए थे. बहुत कीमती कपड़ा लाकर भईयन ने दर्जी को बुला लिया. दो-चार घंटे बाद दोनों खिड़कियों पर

पर्दे टंग गए.

कुसुम ने आंखें खोलीं और पर्दे देखे. फूल देखने को तरह वह एक बार और अवाक् रह गई. कभी वह बात करने की कोशिश करती तो आवाज़ बहुत हल्की निकल पाती. इतनी हल्की कि उससे कुछ पता नहीं चलता. फिर उसकी आंखों से आंसू की धार निकलने लगती.

ऐसा जब भी हुआ, भईयन का सीना बुरी तरह रौंदा जाता रहा. जी में आता अपना गोश्त खुद ही नोचता रहे. फिर वह धीरे-धीरे बर्फ की सिल्ली की तरह ठंडा पड़ जाता. जैसे अब चाहे कुछ भी हो जाए, फर्क नही पड़ने का.

रात को जब नींद उखड़ती और वह बाहर आकर आंगन में टहलना शुरू करता, कुसुम का एक-एक दिन आँखों के सामने तैरने लगता. बल्कि उसके पैदा होने से भी पहले की तारीखें कभी-कभी एकबारगी सामने आ खड़ी होतीं.

जिस दिन दो साल की उम्र लड़की की मौत हुई थी और श्मशान में उसकी चिता की लपटें काफ़ी ऊपर तक उठी थीं, उस दिन भी सबकुछ इतना ख़ाली-ख़ाली नहीं लगा था. अब वही लड़की जैसे कोई कर्जा चुकाकर दुबारा वापस जा रही है.

कुसुम सोई होती तो वह आंगन पारकर बरामदे में उसकी बन्द पलकें देखता रहता. कभी-कभी लगने यही लगता कि पलकें अब खुलेंगी ही नहीं.

●●

एक दिन मन में आया और भईयन रिक्शा बुलाकर बमनपुरी की तरफ़ चला गया. विनायक उस वक्त मरीज़ देख रहा था. रिक्शे से उतर कर आवाज फेंद दी – कहो मास्टर हाल क्या है ? कह चुकने के बाद अरसे बाद मुस्कराया वह.

बिहारी गोलगप्पे वाला अचरज से उधर देख रहा था.

फिर भईयन अंदर आया और बेंच पर जमकर बैठ गया—कुछ हमारा भी ख्याल रखोगे कि नाय ?

—क्यों ! जुकाम हो गया क्या ?

भईयन हंस पड़ा

हंसने के बाद अपने को ही यकीन नहीं आ रहा था. कुसुम जैसे कहीं से आकर सामने खड़ी हो गई थी. भईयन चुप हो गया.

पाँचेक मरीज थे. विनायक को निपटाने में लगभग घण्टा-भर लग गया. तब तक भईयन आंखें बन्द किए खामोश बैठा रहा.

— अब बोलो पहलवान. विनायक ने कहा.

भईयन ने आहिस्ते-आहिस्ते आंखें खोलीं—जे भईयन अब भिखारी बन गया.

विनायक ने उसकी आँखों की तरफ देखा. गड्ढों के गिर्द कालिख बहुत गहरी हो गई थी. गालों पर दाढ़ी बेतरतीब होकर फैली थी.

—हुआ क्या ? विनायक ने पूछा.

— भतीजी अब चन्द दिनों की मेहमान है. फिर उसने जेब से निकालकर दवा के तमाम नुस्खों के कागज़ विनायक के सामने रख दिये.

विनायक ने उलट पलट कर देखा और चुप हो गया.

—तो जे रिया भईयन पहलवान का नसीब. भईयन बोला.

इस बात के आगे कहने के लिए रह जाता है कुछ ? विनायक के जिस्म की हड्डियां शायद चरमरा उठी थीं.

—मैं सोच रिया था, तुम कहोगे कि चलकर देख ही आते हैं···लेकिन अब

कैना भी तो कोई मतलब नाय रखता !

अब विनायक ने झूठ बोला—मैं सोच ही रहा था.

भईयन ने ठहाका लगाया—तुम भी झूठ कैने लग गए ? कोई खास बात नही थी लेकिन हंसता वह देर तक रहा.

विनायक ने अपना दवा वाला बैग उठा लिया—चलो, तुम्हारे घर चलते हैं.

भईयन चाहता तो शायद कोई करारा जवाब दे देता. लेकिन वह चुपचाप लड़खड़ाता-सा उठ खड़ा हुआ.

रिक्शे वाला बाहर बैठकर ऊंघ रहा था. यह भईयन की आदत है. बार-बार रिक्शा नही बदलता और आलू खरीदने की तरह मोलभाव भी नही करता. जिस रिक्शे से रवाना होता है, उसी मे वापस आता है और आबे के बाद जेब में निकाल कर कोई पत्ता सामने फेंक देता है. अमूमन वह रकम उम्मीद मे कहीं ज्यादा होती और रिक्शे वाला फटी-फटी निगाहों से घूरता रह जाता.

रिक्शा बमनपुरी से निकल कर डाकखाने के सामने होकर बिहारीपुर ढाल के रास्ते से गुजरा. बमनपुरी में इस मामले को लेकर काफी काना-फूसी होने लगी. शाम का वक्त था. बिहारी की दुकान के सामने भीड़ थी ही. बात फैलने में ज्यादा देर नही लगी. चार्ज मैन अपने बरामदे मे खड़ा होकर रसीले लहजे में मोती को कुछ सुना रहा था.

ढाल मे परसोराम बैद ने यह देखा और मुरारी की दूकान पर लाठी ठोंकते हुए हाजिर हो गए. इत्तफाक मे मुरारी के यहां एक मरीज था. इसकी उम्मीद परसों राम को नहीं थी. पाच मिनट मे भी कुछ ज्यादा उसे इतजार करना पड़ा था. वैसे मरीज़ देखकर अंदर नही घुसा था और बाहर खड़े होकर किसी जान-पहचान वाले की तलाश कर रहा था. जान-पहचान वाले तो खैर कई दीख गए थे लेकिन बात करने लायक कोई आदमी नही मिला था मिलता तो कुछ चैन जरूर मिलता. खैर, मुरारी का मरीज निकल आया तो परसोंराम ने उसे बाहर बुला लिया. पूरा आधा घंटा लगाकर फिर यह किस्सा सुनाता रहा कि भईयन बदमाश के साथ पेशकार का पोता दिखाई पड़ा है. उसने अपनी तरफ से आगे यह जोड़ दिया कि वे रिक्शे पर एक-दूसरे के कंधे पर हाथ डाले मस्ती से बैठे थे. परसोराम ने अपनी आंखें आखिर में माथे तक चढा ली थी .

●●

भईयन एकदम चुप है कम-से-कम बीड़ी ही पी सकता था लेकिन आंखें बिल्कुल सामने की तरफ किए जैसे आने-जाते लोगों को देख रहा था.

विनायक ने थोड़ा धक्का-सा दिया—पहलवान !

—बोलो-भईयन जैसे इस जवाब के लिए तैयार बैठा था.

विनायक ने सोच लिया लेकिन आगे कहने लायक कुछ मिला ही नही.

एक बात बोलो. भईयन ने अपनी गर्दन मोड़ी और कुछ सख्ती से बोला.

विनायक शायद समझ गया था, अब किसी भी बात का जवाब उसके पास नही है. तुड़ा-मुड़ा कोई जवाब शायद वह दे दे लेकिन भईयन फिर जोरों से ठहाका ही मारने लगेगा.

भईयन पांचेक सेकंड तो इंतजार करता रहा फिर सवाल पूछ लिया—आदमी पैदा क्यों होता है ?

विनायक नहीं चौंका. बोला—क्यों ?

—जे मेरे सवाल का जवाब हुआ ?

अब विनायक चौंक उठा—यह एक कुदरती मामला है.

—जे ही तो मेरा सवाल है. कुदरत ऐसी क्यों है कि आदमी पैदा होकर बीस या पचास या सौ साल बाद मर जाए ? आखिर में भईयन ने खुद ही कह दिया—जे बात कोई नाय जानता.

विनायक को जैसे, तसल्ली न सही, एक तिनका मिल गया.

भईयन फिर सामने की तरफ देखने लगा.

आते-जाते लोगों में से कई ने हाथ भी जोड़े. लेकिन देखने-सुनने के लिए तो आंख-कान चाहिए. भईयन ये शायद सब कहीं फेंक आया है. खामख्वाह बगैर जरूरत इन्हें ढोने से फायदा क्या है.

भूड़ की गलियां भी बहुत अजीब है. बेहद तंग और हर दस कदम पर मुड़ती हुई. इस वजह से कई बार रिक्शे-रिक्शे में टक्करें हो जाती है और आखिर में कोई ईंट उठा लेता, कोई पत्थर. दो-एक की खोपड़ी फूटने के बाद ही फिर मामला निपटता.

मोड़ की वजह से रिक्शा लगभग एक झटका मारकर रुक गया था. भईयन गिर तो खैर नही पड़ा, लेकिन सीट में काफी फिसल गया. विनायक ने अपने को पांवों से संभाल लिया था. यह हादसा भईयन के लिए अहमियत रखता है. इसके बाव-जूद वह कुछ नही बोला और खिसक कर अपनी जगह बैठ गया. रिक्शे वाला सकपका रहा था.

घर यहां से थोड़े ही फासले पर है. इस वक्त भईयन अकेला होता तो शायद उतरकर पैदल ही चला जाता. लेकिन विनायक की वजह से नही उतरा.

●●

भईयन के घुसते ही कुसुम ने आंखें खोली.

दाहिनी बांह पर डाक्टर सुई चुभो रहा था लेकिन उसने चेहरे को रत्ती-भर भी नही सिकोड़ा. भईयन के दिल में ऐसे वक्त कोई आकर जैसे भाला गड़ा देता है. उसे लगता है कि कुसुम बहुत-कुछ फैसला कर चुकी है. उसमें एक यह भी है कि अगर उसकी गर्दन भी कट गई तो वह आह !' तक नही बोलेगी.

इंजेक्शन देकर डाक्टर चला गया.

विनायक दरवाजे पर खड़ा था.

डाक्टर निकलते वक्त उसे घूरकर देख रहा था, विनायक समझ गया, कही अंदर से यह आदमी मजाक भी कर रहा है.

भईयन ने हाथ से इशारा किया.

विनायक अंदर घुस आया और शुरू में कुसुम की बन्द आखें, लगभग फिर हुई उंगलियां देखने लगा. भईयन ने नर्स से लेकर 'केस हिस्ट्री' दी तो उसे पढ़कर बगल के स्टूल पर रख दिया. अपना दवा वाला चमड़े का बैग बगल में उसी तरह रखा रह गया था.

कुसुम की ताई काफी लम्बा घूंघट काढे अन्दर आई थी. उसके हाथ में शायद गर्म पानी का एक कटोरा था. विनायक की वजह से कटोरा नर्स के हाथ में थमाकर वह वापस चली गई. वर्ना शायद इसमे ग्लूकोज घोलकर लड़की के मुंह में चम्मच से डाल देती.

खिड़की से हवा आ रही थी.

हवा की वजह से खिसकाए हुए पर्दे हिल रहे थे और कुसुम के बाल उड़ने लगे थे. चेहरे पर आकर वे उलझ रहे थे.

बगल में गुलदस्ता है. रजनीगंधा की खुशबू से पूरा कमरा महक रहा है. हल्की-सी महक है लेकिन बरामदे से ही पता चलता है.

खिड़की के पास कोने में एक छोटी-सी टेबल है. है यह पुरानी ही लेकिन ऊपर एक खूबसूरत मेजपोश बिछा दी गई है. उस पर कुसुम की एक तस्वीर है. जिस दिन उसे बी. ए. की डिग्री मिली, भईयन ने जिद करके यह तस्वीर अपने साथ खिचवाई थीं. जिद तो सिर्फ उसने कुसुम की तस्वीर के लिए ही की थी लेकिन फोटो खिचाते वक्त कुसुम ने उसे भी पकड़कर अपनी बगल में खड़ा कर लिया था.

उस दिन भईयन का सीना मारे खुशी के शायद गजभर बढ़ गया था. वह बात अब अक्सर याद आ जाती है. याद आने के बाद लगता है, गले के अंदर किसी ने एक गोल.सा पत्थर ठूस दिया है.

भईयन ने झटका-सा खाया और विनायक की तरफ घूरने लगा.

विनायक को फिर एकदम से कुछ करना जरूरी लगा था. उसने कुसुम की कलाई पकड़ी और नब्ज की रफ़्तार देखने लगा.

कुसुम ने आंखें खोल लीं.

नर्स को यह सब पसंद नहीं आया था. उसके चेहरे की लकीरों से इतना जाहिर हो गया.

कुसुम विनायक को बहुत बारीकी से देख रही थी. याद नही कर पाई कि इस चेहरे को पहले भी कही देखा है या नही.

विनायक ने हल्के से मुस्कराना चाहा लेकिन मुमकिन नही हुआ.

कुसुम ने फिर आँखें बन्द कर लीं. इतने से ही बहुत थक गई थी.

नर्स दूसरी तरफ से नजदीक आकर ग्लूकोज का पानी मुंह के अन्दर डालने लगी तो उसने मुंह नहीं बिचकाया था.

भईयन उठा और मेज के करीब चला गया. फोटो के करीब. पाचेक मिनट तक खोद-खोद कर शायद आगे-पीछे की तमाम बातें याद कर लेना चाहता था. इससे सीना फटता है, दिल जलकर राख हो जाता है लेकिन इसके अलावा जैसे कोई और चारा भी नही रह गया है.

—कोई दवा नही है तुम्हारे पास ?भईयन ने इस तरह कहा जैसे यह निहायत मासूम बात हो..

विनायक के ऊपर किसी ने बहुत-सारी गर्म रेत उंड़ेल दी थी,

आख़िर मे उसने दवा का बैग खोला और कुसुम की जबान पर शीशी से एक बूद डाल दी. यह ताकत की एक आम दवा है. कुसुम की जगह अगर भईयन या कोई और भी होता, विनायक इसी तरह एक बूद डाल देता.

भईयन खिड़की के सामने खड़ा था. बाहर की तरफ जो पाकड़ का एक पुराना पेड़ है, उसमें देखने लायक क्या है, वही जानना चाहता होगा. वह उस तरफ वैसे ही देख रहा था, जैसे थोड़ी देर पहले मेज पर तस्वीर का मुआयना किया था. विनायक को लगा, कुसुम की जबान पर दवा डालते हुए उसने देखा है. देखने के बाद समझ भी गया होगा कि यह बूद कुसुम के लिए कोई कीमत नहीं रखती. इसकी बजाय सिर्फ पानी भी अगर कोई डालता तो भी बात एक ही रहती.

भईयन फिर खिड़की से हट आया लेकिन कुछ नहीं बोला.

विनायक इंतजार कर रहा था कि वह कुछ बोले और माहौल का यह सन्नाटा टूटे. जैसे भईयन अगर इसी तरह खामोश रहा तो चारों दीवारें सिमटने-सी लगेंगी.

विनायक फिर निकलने की तैयारी में उठ खड़ा हुआ.

—अभी चलोगे ? भईयन के सवाल में एक निरीहता थी.

—फिर आऊंगा कभी.

भईयन ने नहीं रोका. कमरे से बाहर आकर आंगन पार किया और बाहर वाले दरवाजे पर खड़ा हो गया.

विनायक ने देखा, कुसुम की ताई रसोई के बाहर नल के नीचे ढेर-सारे कपड़ों पर साबुन लगा रही है. वे बाहर निकले तो उसने अपना घूंघट लम्बा कर लिया.

विनायक दरवाजे से निकल कर मुड़ा—दो-एक दिन में फिर आऊंगा.

भईयन ने जवाब नहीं दिया.

●●

एक दिन यासीन मियां चलकर आ गया था. कुसुम जब छोटी थी. उसके लिए जांघिए और फ्रॉक वही सिलता रहा है. कई बार कुसुम खुद ही कोई नई डिजायन बता देती थी. यासीन मियां ठहरा पुराने जमाने का दर्जी. जब उसने दर्जीगिरी शुरू की थी, तब कुछ भी काटकर सिल देने से काम चल जाता था. बड़े से बड़े लोग छाप समेत नए कपड़े पहने दफ्तर, कचहरी तक हो आते थे. दर्जी से कोई शिकायत नहीं करता था. लेकिन आज वह वक्त कहां है ? आज तो होश संभालने से पहले ही बच्चे दर्जी की सिलाई, कटाई पर नाक-भौंह सिकोड़ते हैं. यासीन मियां सिर्फ हंसते हैं. तब कुसुम का फ्रॉक सिलकर आता तो वह शिकायत करने लगती कि यह तो लबादा बन गया. यासीन मियां फिर वायदा करता कि अगली दफा लबादा नहीं बनेगा.लेकिन तब यह लड़की छोटी था. कुछ उम्र बढ़ी तो उसने अपना दर्जी बदल लिया था. कुसुम पैदा हुई थी तो यासीन जरी का एक फ्राक लेकर बढ़ई की पोती को देने आया था. ये सब अरसा पहले की बातें है. मियां के सामने ही यह लड़की कमल के डंठल की तरह बड़ी हुई. एक दिन जब सुनने में आया कि भईयन की भतीजी बी. ए. पास हो गई है, उसे यकीन नहीं आया था. खबर सुनकर वह आया और भईयन पर नाराज हुआ कि उसने इत्तला तक नहीं दी, फिर लड्डू खाकर देर तक दुआएं देता रहा.

इधर इस तरफ आना-जाना होता ही नहीं है. उम्र भी अब ऐसी हो गई कि खास हिला-डुला भी नहीं जाता. रोटी का सवाल है, सो दुकान खोलकर बैठना पड़ता है लेकिन यह उम्र शायद सिर्फ आराम करने की है.

अरसे बाद यासीन दर्जी भईयन के यहां पहुंचा था.

फिर कुसुम के बिस्तर के पास पहुंचा तो धक्का-सा खा लिया था. या अल्लाह ! यासीन अगर पहाड़ की चोटी पर चलते-चलते खड्ड पर गिर जाता तो भी शायद इससे भी ज्यादा धक्का नहीं खाता.

कुसुम आँख खोलकर मुस्कराई थी.

मियां का गला बन्द था.

यह लड़की पहले कम-से-कम सौ दफा नाराज हुई होगी. फ्राक को लबादा कहकर पता नहीं कितनी बार शिकायत करती रही है. और आज बगैर किसी नाराजगी या शिकायत के चुपचाप पड़ी हुई है.

यासीन की जेब में मजार का फूल था. निकालकर कुसुम के सिरहाने रख जरूर दिया लेकिन खुद उसे भी इसमें कोई मतलब नजर नहीं आया.

भईयन दरवाजे के पास चुपचाप खड़ा था.

यासीन इन्तजार करता रहा कि वह कुछ बोले. आखिर में इन्तजार के बाद वह अल्लाह मियां से दुआ मांगने लगा. दोनों हथेलियां ऊपर की तरफ उठ गई थीं और होंठ कुछ बुदबुदा रहे थे.

भईयन की बीवी दरवाजे के पास बाहर की तरफ खड़ी थी. उसे शायद यकीन करना अच्छा लग रहा था कि यासीन मियां की दुआएं दरिया के पानी की तरह बह कर निकल नहीं जाएंगी.

काफ़ी वक्त हो गया था.

यासीन उठने लगा तो अंधेरा हो गया था.

भईयन के कंधे पर हाथ रखकर तसल्ली के लिए कुछ शायद कहा जा सकता था लेकिन मियां हिम्मत नहीं कर पाया.

फिर वह चुपचाप बाहर निकल आया था.

भईयन अपनी जगह में थोड़ा हिला तो था लेकिन दरवाजे तक आकर छोड़ नहीं गया.

यासीन मियां को अब यकीन करना मुश्किल हो गया कि वह बढ़ई के बेटे भई-यन पहलवान के घर में आ रहा है. इतनी मायूसी शायद मामूली से मामूली आदमी के यहाँ भी नहीं छाती है.

अंधेरे की वजह से चलने में दिक्कत हो रही थी. एक-आध ठोकरें भी उसने खाईं लेकिन झुक कर नहीं देखा कि अंगूठे से खून निकलना शुरू हुआ है या नहीं. बल्कि यह एक राहत-सी थी कि अब अंधेरा है और इसमें अपनी शक्ल पह-चानी नहीं जाती.

●●

इसके बाद की कहानी खास लम्बी नहीं है.

विनायक दो बार जाकर कुसुम को देख आया था. तीसरी बार जब पहुंचा, दूर से ही भईयन के दरवाजे पर भीड़ देखी थी. ऐसी भीड़ की शक्ल ही अलग होती है. आदमी बिना पूछे ही सारी बातें आसानी से भाँप सकता है.

नज़दीक आया तो औरतों के विलाप की आवाज़ सुनाई पड़ी. थोड़ा-बहुत शक अगर मन में था भी, इसके बाद समझाने के लिए बाकी ही क्या रह जाता है ?

भईयन आंगन में कोने की तरफ एक स्टूल पर बैठा था. दाढ़ी की वजह से चेहरा बेहद उबड़-खाबड़ लग रहा था. बगल में, जमीन पर यासीन मियां बैठा था.

विनायक अन्दर घुसकर दरवाजे के पास ही खड़ा हो गया.

सामने के कमरे में कुसुम की लाश पड़ी हुई थी. पूरा कमरा औरतों से इस क़दर भरा हुआ था कि बाहर से एक भीड़ के अलावा कुछ और दिखाई नहीं पड़ रहा था. अन्दाज़ से लग रहा था, कुसुम की ताई फर्श पर अपना सर फोड़ रही है.

विनायक के हाथ में चमड़े का दवा वाला बैग लटक रहा था. इसकी ज़रूरत वैसे नहीं थी लेकिन आदत की वजह से ले आया था. अब इसकी कीमत सड़क के किनारे पड़े हुए चिथड़े से ज्यादा नहीं लगी.

यासीन मियां शायद भईयन से कुछ कहना चाह रहा था. दो-एक बार उसके चेहरे की तरफ़ देखा फिर उसी तरह बैठा रहा.

जो नर्स तीमारदारी कर रही थी, वह कुछ देर चुपचाप खड़ी रही फिर धीरे-से दरवाज़े से बाहर निकल गई.

भईयन को शायद बुख़ार था. नहीं भी होगा तो शक्ल से ऐसा ही लग रहा था. पूरा जिस्म तवे की तरह सुर्ख लग रहा था. विनायक सोच तो रहा था लेकिन आख़िर में नज़दीक जाकर उसे छूकर नहीं देखा कि वाक़ई बुख़ार है भी या नहीं.

जिन लोगो की यहा भीड है, सभी मुहल्ले वाले नही है कई लोग तो ऐसे हैं, जो सिर्फ बोतल के खरीदार-भर है बरसो का रिश्ता आखिर कीमत चुकाकर कच्ची की बोतल ले जाने मे भी आगे चला आया वे लोग शायद ईमानदारी के लिए भईयन की अन्दर मे इज्जत भी करते थे. लेकिन दूकानदारी के मामले मे वह कभी पडा ही नही. तनख्वाह पर लोग रखे हुए है वे ही रात तक की बिक्री के पैसे पहुचाकर कोई नई बात हो तो सुना जाते है या कोई हिदायत हो तो सुन लेते है

पूरी बरेली मे भईयन के छह अड्डे है सबसे बडा अड्डा है खन्ना मुहल्ले मे. बहुत हुआ तो हफ्ते मे एक बार शाम को उधर का चक्कर लगा आया. इससे ज्यादा डुबकी उसने कभी नही लगाई लेकिन इन छहो अड्डो मे काम सिर्फ उसी के नाम से होता है अड्डा चाहे छोटा हो या बडा, भईयन निगरानी रखता कि माल मे फर्क न आए काम करने वाले भी इतने ईमानदार है कि चाहे जान चली जाए, कोई अधेला भी इधर से उधर नही करेगा. अगर इस तरह की हरकत करने की कोशिश किसी ने की तो उसकी जान आखिर चली ही जाती ऐसे गद्दारो को भईयन ने कभी माफ नही किया इस तरह के मामले रोज ही नही बनते साल-दो साल मे अगर कुछ ऐसा होता भी है तो भईयन को मामला दुरुस्त करने मे बहुत ज्यादा वक्त नही लगता.

कच्ची का धधा शुरू करने के बाद वह बदल गया था वर्ना इससे पहले भईयन बदमाश कितना खतरनाक था, पूरी बरेली जानती है शेर की माद मे से कोई जिन्दा बाहर आ सकता है लेकिन भईयन की मर्जी के खिलाफ अगर कुछ हो गया तो बरेली मे बस भूचाल ही नही आता, बाकी सभी कुछ हो जाता आज जो आदमी बगैर जरूरत किसी स बोलता नही, वही कभी लाशे गिराता रहा है जिन्दगी मे कितने कत्ल उसने किए, जानने के लिए कोतवाली के पुराने कोतवालो को फिर से बुलाना पडेगा औरत से आज भईयन कभी निगाह मिलाकर बात नही करता लेकिन बदला लेने के लिए वही कुछ बरस पहले तक कितनी औरतो की इज्जत लूटकर चूसी हुई गुठली की तरह फेकता रहा है

भईयन को जैसे किसी ने कोडा मार दिया था, नाखून के अदर सूई चुभोने का-सा दर्द हो रहा था. फिर वह उठ खडा हुआ

तब तक कुसुम की लाश बाहर लाकर बाधी जा रही थी. विनायक बैरग चिट्ठी की तरह अपना दवा वाला बैग बगल मे दबाए खडा रहा.

●●

भूड मुहल्ले से श्मशान तक का रास्ता दो मील से कम का नही है पूरा रास्ता 'राम नाम सत्य है, हरि का नाम सत्य है' कहता हुआ जुलूस पैदल चलकर आया. भईयन ने अर्थी को कधा तो नही दिया लेकिन साथ-साथ चल रहा था बगल मे विनायक था.

फिर चिता तैयार हुई और नए कपडो मे कुसुम को दुल्हिन की तरह सजाकर भईयन ने आग जला दी लपटे आसमान को छूने लगी थी

साथ के लोग पेडो की छाया मे खडे थे बगल मे चुगी वालो ने एक टीन का छप्पर भी लाश के साथ आने वाले लोगो के लिए बनवा दिया था वह जगह पहले से ही भरी हुई थी.

विनायक चिता के पूरब की तरफ मौलश्री के नीचे खडा है भईयन ठीक चिता के सामने है. जैसे इस आग की पहचान उसके अलावा और किसी को हो ही

नहीं सकती. थोड़ी देर में वह विनायक की बगल में जाकर खड़ा हो गया. फिर मुस्कराया—देखा ! कुसुम भी चली गई.

विनायक को लगा, भईयन अब जोरों से ठहाका मारना शुरू करेगा. फिर शायद फूट-फूटकर रोता रहेगा. लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ. वह इस तरह लपटें देख रहा था, जैसे कुछ हुआ ही न हो. विनायक उसकी आंखों की पुतलियों मे सामने की चिता की परछाई देख रहा था.

●●

बिहारीपुर मे पीने की आदत बस एक-आध में ही नहीं है. लेकिन गोबिन्द की बात ही और है. शाम को अगर बोतल न मिली तो वह कुछ भी कर सकता है. जब जेब में पैसे नहीं होते, बीवी की नजर बचाकर कोई कटोरा या गिलास निकाल लेता और कुतबखाना ले जाकर किसी भी भाव बेच देता. इस मामले को लेकर गोबिन्द की बीवी बिमली पहले सर धुनती रही है अब गला फाडकर आसमान सर पर उठा लेती है.

बिमली जब शादी के बाद बरेली आई थी, अंग-अंग से रूप बिखरकर टपकता था. गोबिन्द की शक्ल तब भी हनुमान-जैसी ही थी. ऊपर से दो मूछें थीं. बिमली के रूप की चर्चा मुहल्ले-भर की औरतों में होने लगी थी. तब गोबिन्द की मां जिंदा थी. वह बहू को गुड़िया की तरह सजाकर रखती और चूल्हा-चौका अपने ही हाथों करती इस बात को लेकर भी मुहल्ले की औरतें मजाक करतीं, लेकिन गोबिन्द की मां को अपने शुरू के दिन याद थे. जब वह दुल्हन बनकर आई, सास ने आने के अगले ही दिन उसके बालों को मुट्ठी में पकड लिया था. गुनाह सिर्फ इतना था कि बहू के हाथ से दूध का भगोना गिर गया था. जब तक सास जिन्दा थी, वह मैके तक नहीं जा सकी थी. सास बात-बात पर ताने देती और हाथ उठ जाते. थोडा-बहुत गुनाह वैसे बहू के बाप का था. दहेज बहुत कम दिया था. शादी के बाद दहेज का सामान और बहू लेकर बेटा घर लौटा तो घर में महाभारत हो गया था.

गोबिन्द की मां को ये सारी बातें बहुत पुरानी नहीं लगतीं.

एक दफ़ा, याद है, जब गोबिन्द पेट में था, लगातार तीन दिन तक रोटी की जगह शकरकंद खाने पड़े थे. उसकी गलती यह थी कि दो रोटियां जल गई थीं. गोबिंद जब पेट में था, सास ने एक दिन कसकर ऐसी लात मारी थी कि वह गिरकर बेहोश हो गई थी.

गोबिन्द का बाप शुरू से ही अपनी मां से डरता रहा है. कलेजा शायद उसका भी दुखता था लेकिन मां के ख़िलाफ कहने की हिम्मत उसने कभी नहीं की. रात को दुल्हन अपने ख़ाविन्द के पास सोने आती तो आंसू से तकिया गीला हो जाता था.

शाम को रसोई में ढिबरी जलती थी.

चाहे ढिबरी के लिए मिट्टी का तेल हो या आटा या बर्तन मांजने की इमली, सास अपने कब्जे से ठीक जरूरत-भर का सामान निकालकर देती थी. उसे शाम को

रोटी खाने की आदत सूरज डूबने के फौरन बाद थी. रोटी खाकर वह निकल जाती और गाँव-भर का चक्कर लगा आती. जब वह लौटती, गोबिन्द का बाप रोटी खा रहा होता. रोटी का कौर निगलते हुए बीवी से एक-आध बात भी कर लेता था. लेकिन मा के कदमों की आहट मिलते ही वह चुप हो जाता था.

खाना खाकर वह उठ जाता तो मां आकर रसोई की ढिबरी बुझा देती. बहू के बाप ने पीपा भरकर मिट्टी का तेल भेजा तो नही है, जो उसकी बेटी महारानी की तरह झाड-फानूस जलाकर इत्मीनान से रोटी निगलेगी. फिर अंधेरे में खाना खाने की आदत बहू को पड़ ही गई थी. कई दफा, यह भी होता कि मुंह में कोई पतंगा भी घुस जाता. बस, थाली छोडकर घिन के मारे वह वही उठ जाती. थाली की बची रोटियां होशियारी से छिपाकर फेंकनी होती थी. कही अगर सास की नज़र पड़ गई तो चील-कौए के मुंह से छीनकर वे ही रोटियां बहू के मुंह के अन्दर ठूस देगी.

गोबिन्द के पैदा होने के बाद भूख इतनी लगती थी कि पेट के अन्दर की अंतड़ियां तक लगभग हजम होने लगती. लेकिन रसोई में सिर्फ़ बर्तन होते और चूल्हे के करीब लकडियां रखी होती. नमक तक का मर्तबान सास की हिफाजत में होता था. खाना बनाने का वक्त होता तो वह एक-एक चीज नापकर रसोई के दरवाज़े पर रख देती.

ये सब बातें याद आती हैं तो आज मन खट्टा-सा होने लगता.

गोबिन्द की बहू आई तो उसने शुरू से ही ठान लिया था कि बहू को बेटी बनाकर रखेगी. मुहल्ले की औरते मजाक करती तो गोबिन्द की मां हंसकर बात टाल देती लेकिन अपने बीते हुए दिन याद आ जाते. अन्दर से एक दबी हुई सांस निकल आती.

बेटे की शादी के बाद कोई पाचेक बरस गोबिन्द की मां जिन्दा रही थी, एक ही कसक रह गई थी कि पोते का मुह नहीं देखा था जब वह मरी थी, बहू के पांव भारी थे. मरने की इच्छा बिल्कुछ नही थी. लेकिन पेचिश की बीमारी से पन्द्रह दिन खाट पर पड़ी रहकर सोलहवें दिन मर गई.

बिमली की आंखें रो-रोकर सूज गई थी. यह बदनसीबी थी या संयोग, कौन जाने—बिमली का गर्भ गिर गया था.

गोबिन्द को इससे कोई फर्क नही पड़ा था लेकिन बिमली मुरझा-सी गई. चेहरे में पहले चमक-सी थी. अब स्याही पुत गई. पहले कभी कोई ख़ास बिमारी नहीं थी, अब बहुत ज्यादा कमजोरी महसूस होने लगी.

गोबिन्द ने मेहनत-मजदूरी की और यार-दोस्तों के साथ बैठकर पी-पिला आया. इससे ज्यादा किसी चक्कर में वह कभी नहीं पडा. चाहता तो आलमगिरीगंज जाकर चकलों में घुस्त पडा रह सकता था.

ऐसा नहीं है कि गोबिन्द हमेशा ही क़ायदे से मोटी रकम कमाता हो लेकिन कभी-कभी ठेके मे अच्छी कमाई भी हो जाती है. काम है रंग-रोगन का. दरवाज़े-खिड़कियों को चमकाकर रख देखा तो कराने वाला खुश होकर इनाम में भी कुछ थमा ही देता है. इसके अलावा सफेदी का काम भी कई दफ़ा कर लेता है. लेकिन रंग-रोगन का काम मिल जाता तो पुताई वगैरह के झंझट में अमूमन वह नहीं पड़ता. कई दफ़ा पन्द्रह-पन्द्रह दिन तक हाथ में कोई काम नही रहता और काम आते हैं तो रात-दिन जुटे रहना पड़ता है. ख़ास तौर पर दीवाली के दो महीने पहले से इतने काम आते कि सांस तक लेने की फ़ुर्सत नही मिलती.

हाथ में जब पैसा आता है, गोबिन्द न आगे की सोचता, न पीछे की. घर में तब

देमी घी से पुलाव-पकवान बनते जब हाथ मे कुछ नही रहता तो बिमली की चूडी, नथ तक बिक जाती. बिमली खुद निकालकर बेचने के लिए नही देती लेकिन गोबिन्द ही नजर बचाकर किसी-न-किसी तरह निकाल लेता

मिया-बीवी मे अब ऐसी बातो पर हाथा-पाई हो जाती है गोविन्द को गुस्सा अगर चढ गया तो उसका होश ही गायब हो जाता हाथ के पास लकडी या पत्थर जो कुछ भी रहता, आसानी मे उसका इस्तेमाल हो जाता बिमली का सर कई दफा फूटता रहा है. लेकिन महज इस वजह से ही अब वह माथा थामकर बैठ नही जाती कई-कई बार तो खून से कपडे तक रग जाते है लेकिन वह भी कुछ करके ही दम लेती है. घर मे इस कदर तहलका मचना शुरू हो जाता कि मुहल्ले वालो को आराम मे सारी बातो का अन्दाजा लग जाता पडोस के लोग फिर आकर बीच-बचाव करते तो जाकर मामला रुकता.

मूलचद ने जिस दिन गोबिन्द को कपडे उतरवाकर भट्ठी पर मे निकाल दिया था, बिमली आधे घटे तक अपने शौहर को लकडी के एक डडे मे पीटती रही गोबिन्द अपने वश मे नही था कच्ची शायद उसने डबल पी ली थी जब मुफ्त मे पीकर कपडे ही उतरवाने है तो कम क्यो पी जाय ? गोबिन्द शायद इसका अजाम समझ गया था इसलिए गले तक पी ली थी

घर आने के बाद बिमली ने मरम्मत इतनी की कि कई जगह से तो उसकी पीठ की खाल ही निकल गई थी पडोस की औरते आगन के साथ वाले दरवाजे की दरार मे से झाककर अदर का सारा नजारा देखती रही थी गोबिन्द मार खाकर बूढे गिद्ध की तरह उल्टा पडा था

उस दिन घर मे चूल्हा नही जला था

बिमली को शर्म जितनी लगनी थी, उतनी तो लगी ही थी लेकिन दुख के मारे कलेजा फटा जा रहा था जी कर रहा था, कही से थोडा-सा जहर मिले तो खाए और खाकर सारे काम तमाम कर ले

लेकिन अगले दिन लोगो ने देखा था कि मिया बीवी शाम को सज-सवरकर रिक्शे पर कही जा रहे है

बिमली का गर्भ उस दफा गिर गया तो बडी परेशानी और आखरी उम्मीद थी उसके बाद इतनी बार हकीम-वैद्य को दिखाया लेकिन बात ज्यो-की-त्यो ही बनी रही आखिर मे वह अपने भाई के एक बेटे को पालने के लिए ले आई थी

भाई के छह बच्चे थे एक अगर आ भी गया, घर सूना नही हो जाता ऊपर से घर मे इतनी तगी थी कि भावज को शुक्रगुजार होना चाहिए था भाई की एक बिसाती की दूकान थी लेकिन दूकान कभी चली ही नही आवला अब भी कस्बा जरूर है लेकिन दूकाने एक से बढकर एक बन गई है दो-तीन दूकाने तो बरेली के कुतबखाने की तरह न सही लेकिन छोटी-मोटी नही है ऐसे मे अधेरी गली के तग बिसाती की दूकान मे नकली माल खरीदने के लिए कौन जाएगा?

बिमली बच्चे को ले आई तो भाई ने कोई ऐतराज नही किया था. बल्कि अन्दर से खुश ही हुआ था कि एक बच्चा कम-से-कम आराम से ही रह लेगा. लेकिन भावज को यह रास नही आया उस वक्त खास कुछ कहा तो नही था लेकिन बाद मे अक्सर बरेली आ जाती और बच्चे के बहाने अपना नसीब रोना शुरू करती.

बरेली आकर बच्चा भी खुश था आवला मे बात-बेबात पर मार खानी पडती थी और कई दफा सिर्फ एक रोटी खाकर सो जाना पडता था. बिमली ने उसे बरेली लाकर इतना बदल दिया कि लडका काफी मोटा-ताजा भी हो गया था.

लेकिन भावज हर बार आती और बच्चे की सेहत पर ही आंखें माथे तक चढ़ा लेती. कोई-न-कोई बहाना मिल जाता और ननद-भावज 'तू तू मैं मैं' पर उतर आतीं. आखिर में हारकर बिमली ने बच्चे को उसकी मां के साथ वापस आंवला भेज दिया था. इसके बाद उसने कसम खाई थी कि कुत्ते का पिल्ला भी नहीं पालना है.

घर फिर सूना हो गया.

बिमली घर की एक-एक चीज़ शीशे की तरह चमका कर रखती लेकिन चौबीस घण्टे काटने के लिए कुछ और भी तो होना चाहिए. गोबिन्द दिन-भर बाहर रहता और शाम को नशे में धुत्त लौटता, फिर रोटी खाकर सो जाता. जिस दिन मिज़ाज थोड़ा अच्छा हुआ, आधी रात के बाद बिमली के कपड़े उतारकर थोड़ी देर मौज कर लेता. फिर चद्दर तानकर सो जाता और नाक बजाता रहता.

बिमली को घुटन-सी महसूस होने लगी थी.

कभी-कभी दुपहर को रोटी खाने के बाद वृन्दावन कुम्हार के यहां चली जाती थी. वृन्दावन जब लाठी से चक्का घुमाकर गिलास और घड़े बनाता, बिमली को बहुत मजा आता. जादू की तरह देखते-देखते मिट्टी का लौंदा कैसे घड़ा बन जाता है, वह समझ ही नहीं पाती.

वृन्दावन फिर एक बहुत अच्छा आदमी लगने लगा था. बिमली ने एक दफा गुजियां बनाई थीं. एक कागज में लपेटकर वृन्दावन के लिए ले गई तो कुम्हार हक्का-बक्का-सा रह गया था.

दुपहर का वक्त ही फिर कुछ ऐसा हो गया था कि बिमली उसी का इंतजार करने लगी थी. वृन्दावन अपना चक्का चलाता रहता और यहां-वहां की दस मजेदार बातें सुनाता. हंसते-हंसते बिमली फिर लोटपोट हो जाती. बिमली को फिर गोबिन्द याद आ जाता. उसके संग भी कभी हंसी-ठिठोली की होगी लेकिन यह अब पुरानी बात है. गोबिन्द को शायद इतने दिनों बाद यह सब याद भी नहीं होगा बिमली को ही कहा याद रह गया है ? दिमाग में जोर लगाने से याद ज़रूर आ जाता है.

वृन्दावन को फिर एक दिन बिमली लगभग पकड़कर अपने यहां ले आई थी. घर में थोड़ी-सी सूजी पड़ी थी. उसमें खूब-सारी चीनी डालकर हलवा बना लिया और गिलास में मलाईदार चाय बनाकर वृन्दावन की आवभगत की.

इस तरह से आवभगत किसने कब की, वृन्दावन को याद नही है.

वृन्दावन का रंग थोड़ा सांवला है लेकिन चेहरे में एक अजीब किस्म की मासूमियत है. कम-से-कम बिमली को वह मासूम ही लगता है. शराब-कबाब के चक्कर में वह कभी पडा होगा तो पड़ा होगा, लेकिन बिमली ने इस बारे में कुछ नहीं पूछा. वैसे भी मर्द है, कभी अगर इधर-उधर थोड़ा भटक भी लिया तो कौन-सा गुनाह हो गया ? बिमली अच्छी तरह जानती है, बिहारीपुर मुहल्ले का एक-एक आदमी रंडीबाज और जुआरी, कबाबी, शराबी तो है ही ऊपर से और भी बहुत-कुछ है. मौक़ा लग गया तो किलोभर आलू ही क्यों न हो, हाथ साफ़ कर लेगा. भले ही बाद में थानेदार के डंडे क्यों न खाने पड़ें.

लेकिन वृन्दावन को अपना चक्का घुमाने के अलावा किसी और बात की फुर्सत नही मिली.कभी-कभी बिमली को दया आ जाती. घर-भर के लोगों के पेट भरने के लिए सुबह से लेकर रात तक किस क़दर जुटे रहना पड़ता है बेचारे को.

रात को गोबिन्द जब बिमली के कपड़े उतारना शुरू करता, तब जैसे यह हरकत सही नहीं जाती. लगता है, बाजार से चलता हुआ कोई आदमी घर में घुसकर मौज-मजे के लिए एक औरत का जिस्म नोंच रहा है. गोबिन्द अब बाजार वालों से

ज्यादा कभी लगता ही नही है. जब वह कपड़े उतारने लगता, बिमली पत्थर-सी पड़ी रहती. फिर, गोबिन्द, जब तक मर्जी चलती, बिस्तरबाजी करता रहता. लेकिन जो कुछ भी करना होता, वह अकेले ही करता है. बिमली न हिलती, न डुलती उसकी जगह अगर किसी जवान औरत की लाश भी होती तो भी गोबिन्द ये ही हरकतें करता. जिस्म के अलावा उसे शायद कुछ चाहिए भी नही बिमली को उसने कभी मजबूर नही किया कि वह भी कुछ करे.

वृन्दावन सामने होता है तो बिमली को बार-बार गोबिन्द ही याद आता है ठीक-ठीक गोबिन्द याद आता है, कहना गलत होगा गोबिन्द और वृन्दावन के दरमियान जो फर्क़ है, वह उजागर होकर सामने आ जाता.

गोबिन्द एक दफा काम के सिलसिले मे नवाबगज गया था. दसेक दिन का काम था लेकिन लौटने में पन्द्रह दिन लग गए

इस बीच बिमली वृन्दावन को कई दफा बुलाकर अपने यहाँ ले आई थी. कायदे से वृन्दावन के पास हसी-ठिठोली की फुर्सत ही कहाँ है ? रोटी-पानी का जुगाड़ लगाने को घर में उसके सिवा कोई और है भी नही बीवी-बच्चे और भाई-बहन, मां-बाप मिलाकर कुल नौ लोगों का घर है बाप की उम्र इतनी हो गई कि अब किसी काम के लिए कहा भी नही जा सकता. लेकिन मा उम्र के बावजूद कुछ-न-कुछ करती ही रहती है. कई दफा टोकरी पर दीए वगैरह रखकर खुद ही बेच भी आती है. दीवाली का वक्त आता तो बढ़े हुए काम का एक हिस्सा वह सभाल लेती. ऐसे मे वृन्दावन कुम्हार हसी-ठिठोली मे वक्त जाया करेगा, यह मुमकिन भी तो नही है.

मुमकिन वाकई नही है लेकिन बिमली बुलाती है तो सीने के अन्दर जैसे तूफान-सा चलने लगता. अपने ऊपर वृन्दावन को ताज्जुब ही होता है, ऐसा तो कभी नही होता था. वैसे आज तक बिमली की तरह सामने आकर कोई औरत खडी भी नही हुई है लेकिन होती भी तो वृन्दावन पिघल थोड़े ही जाता ? जब से बिमली आने लगी है, वृन्दावन को लगता है कि पिघलने के लिए सीने के अन्दर बहुत-कुछ बाकी है.

एक दफा वृन्दावन आया तो बिमली नल के नीचे बैठकर नहा रही थी दुपहर के बारह के आसपास का वक्त रहा होगा उसे उम्मीद ही नही थी कि इस वक्त चक्का छोडकर वृन्दावन अपने आप ही आ जाएगा जब कभी वह आया है, बिमली ने जोर दिया, तब जाकर कही उसे फुर्सत मिली. आगन का दरवाजा ही ऐसा है कि बाहर का बहुत-कुछ दरार मे से दीख जाता है बिमली ने बाहर वृन्दावन को देखा तो बाल्टी हटाई और अंगोछे से बदन पोछने लगी ठीक से नहा नही सकी थी लेकिन अब नहाया भी तो नही जा सकता था फिर कपड़े बदलने मे कुलमिलाकर मिनट-भर लगे थे. बाल वैसे ही गीले थे. बालो से पानी की बूदे टपककर गिर रही थी

वृन्दावन ने बिमली को इस तरह से देखा, जैसे पहली बार देख रहा हो बिमली बहुत सकुचायी थी मारे शर्म के पूरे बदन मे सिहरन-सी दौड गई थी बिमली को लगा, ऐसी सिहरन शादी के बाद ही सिर्फ थोड़े दिन महसूस होती रही है. इतने बरस बाद अचानक उसको लगा कि अभी भी लेने और देने के लिए बहुत-कुछ है.

वृन्दावन की वैसे दो लड़कियाँ है.

बिमली वृन्दावन को देखती है तो लगता है गली मे घूमता हुआ कोई छोकरा ही होगा. उम्र में बिमली ही पाचेक बरस बड़ी होगी लेकिन उम्र का दायरा कुम्हार

के सामने याद ही नहीं रहता.

उस दिन वृन्दावन को भी लगा था कि उसकी सास बहुत तेज़ चल रही है. अपने आप ही फिर जैसे बाकी सब हो गया था.

बिमली ने बरामदे में पड़ी चारपाई पर उसे बैठने के लिए कहा और अन्दर घुस गई. कमरे में आले पर शीशा रखा है. वहां गीले बाल पोंछकर कंघा करके, माथे पर बिन्दी लगाकर वह दो मिनट के अन्दर निकल ही आती. लेकिन वृन्दावन में जैसे जिंदगी-भर की बेसब्री उतर आई थी.

वृन्दावन कमरे के अन्दर घुसा और बिमली के पीछे जाकर खड़ा हो गया. क़दमों की आहट थी लेकिन बिमली ने जैसे नहीं सुना था. बहुत डर लग रहा था. वृन्दावन पीछे आ गया तो शीशे पर उसकी परछाई आ गई थी.

बिमली की छाती तो धड़क रही थी लेकिन वह मुस्कराई—बड़े खुश हो.

वृन्दावन जवाब देता भी तो क्या देता ! गले तक सब-कुछ जैसे सूखकर फटने लगा था. गर्मी मे जब रामगंगा से मिट्टी लाने जाता है तो नदी के पाठ ऐसे ही लगते हैं.

वृन्दावन ने कोई जवाब नही दिया, बिमली के कन्धों पर अपनी बांहें रख दीं.

बिमली का सारा शरीर शुरू में जैसे बर्फ हो गया था.

आधे मिनट तक वह उसी तरह खड़ी रही थी. फिर मुड़ी और वृन्दावन के सीने पर अपना सर रख दिया.

वृन्दावन ने भी फिर उसे बाहों से कस लिया.

बिमली के अन्दर शायद वाकई बर्फ जमा हो गई थी. फिर उसे लगा कि अन्दर का सारा जमाव बहकर बाहर निकलने का रास्ता खोज रहा है. उसे जैसे बहुत-कुछ बिल्कुल अभी पा लेना है और वन्दावन इस घड़ी के बाद कहा चला जाएगा, कोई नहीं जानता.

वृन्दावन सिर्फ तेज़ी से सांस ले रहा था.

बाहर मुडेर पर एक कबूतर बैठा था. उसकी आवाज़ से यह दुपहर बिमली को बहुत गहरी लगी. गली से शायद एक-आध रिक्शा भी गुज़रा था. रिक्शे का गुज़रना एकदम कांटे की तरह लगा था.

आंखें बन्द किए वह खड्ड में लगातार गिरती जा रही थी. खड्ड में गिरना और गिरते रहना कभी-कभी कितना अच्छा लगता है !

वृन्दावन ने धीरे से पुकारा—बिमली.

बिमली ने जवाब नही दिया.

वृन्दावन ने फिर उसे पकड़ कर झकझोर दिया.

बिमली ने आंखें खोलीं.

कबूतर फिर गुटरगू-गुटरगूं करने लगा था. कबूतर की यह आवाज़ इतनी गहराई तक ले जा सकती है, बिमली ने पहली बार जाना.

बिमली ने फिर अपनी टांगें फैला लीं और वृन्दावन को ऊपर कर लिया. अग्निस्राव ज्वालामुखी के अलावा आदमी व जिस्म में भी आता है. लेकिन यह हमेशा नहीं आता. बिमली उस स्राव के साथ अपना सब-कुछ जला देना चाहती है.

बिमली सब-कुछ भूल गई.

जो नहीं भी भूली थी, भूल जाना चाहती थी.

वृन्दावन के जिस्म की ख़ुशबू रोम-रोम में बस-सी गई. सर से लेकर पांव तक

सिर्फ नशा छाया है. बहुत देर बाद बाहर से फिर कबूतर की गुटरगू सुनाई पडी तो वह सभली वृन्दावन एक मासूम बच्चा-सा लग रहा था.

●●

बहुत बाते फैल गई थी

पूरे मुहल्ले मे बिमली पर जितनी बाते होती, कही उसमे ज्यादा गोबिन्द पर शकर की मा का ख्याल था, गोविन्द मे अब मर्दानगी बाकी ही नही रही

कहानी सुनाने का हुनर पूरे बिहारीपुर मे शकर की मा से ज्यादा और किसी के पास नही है वह मुह के अदर तम्बाकू और चून का चूरा डालती, बगल म थूकती और एक-एक घर के अन्दर की कहानिया बताने लगती

शकर जब नौ बरस का था, उसका बाप सरकारी अस्पताल म हैजे म मर गया था उसके बाद कितनी ही मुसीबते आई, कितने ही तूफान आए, लेकिन शकर के अलावा उसने कुछ और सोचा ही नही अपने बडप्पन की कहानी सुनाने के बाद उसे अदर ही अदर खुशी की बाढ-सी महसूस होने लगती

डोरीलाल की बीवी कभी अगर हाथ खाली हुआ तो शकर की मा के पास आ जाती और आगन मे जो चबूतरा बना है उस पर थोडी देर के लिए जमकर बैठ जाती शकर की माँ की आदत हुक्के की है डोरी की बीवी आती है तो पोटले मे से बीडी का बण्डल निकालकर कश खीचती है

—अब देखियो, कुम्हार मरैगा शकर की मा यह भविष्यवाणी करने के बाद शायद बिमली के बारे मे सोच रही थी

— गोबिन्दा आन कै खत्म करैगा बिन्द्राबन का

—गोबिन्दा क्या करैगा ? बिमली नागन है, नागन खुद ही डस लेगी किसी दिन जे बात मै पैले ही दिन से जानती थी लेकिन मुह नाय खोली

डोरी की बीवी को यह बात बहुत यकीन करने लायक तो नही लगी थी लेकिन उसने ऐतराज नही किया

शकर की माँ सीना ठोक कर बात तो कर लेती है लेकिन अब एक अरसे से पहले जैसा दम नही महसूस होता शकर नैनीताल रोड पर एक ठेकेदार के यहा मेहनत-मजदूरी करने लगा है हर महीने पहली तारीख को ढाई सौ के करीब रुपए भी आ जाते है पहले तो कई दफा आटे का कनस्तर खाली रहता और पडोसन से भी फिर से मागने की तबीयत नही होती थी उस हिसाब स अब घर मे कम-से-कम खाने-पहनने की तगी नही है

औरत सब-कुछ सह सकती है लेकिन सौत की जलन नही शकर की मा को यह जलन सहनी पडी थी अच्छा-खासा घर था, बीवी थी, बेटा था. लेकिन शकर का बाप लड़कियो के स्कूल मे काम करने वाली एक चपरासिन स शादी कर बैठा ऐसा भी नही था कि पराई औरतो के पास जाना रहा हो या जुए-शराब मे ही कमाई उडाता रहा हो सिर्फ शकर की मा से मुठभेड होने की वजह थी लडाई-झगडे अगर मिया-बीवी के दरमियान नही हुए तो क्या समदर पार के लोगो मे होगे ? शकर की मा अपने शौहर को खरी-खोटी कुछ सुनाती, फिर वह या तो लकडी उठा लेता या बाल पकडकर अपनी बीवी को घसीटना शुरू करता शकर की मा के रोने-धोने की आदत पूरा मुहल्ला जानता है वह चीख-पुकार मचाती और ससुराल वालो के सात पुरखो को गालिया सुनाती

उस दिन भी ऐसा ही कुछ हुआ था शकर की मा ने शायद ताव मे आकर कह दिया था —लुगाई को रोटी नाय खिलाय सकते तो शादी क्यो की थी ?

यह बात कोई नई चीज नही है शकर की मा अक्सर ही कहती रहती है जिस आदमी को चापले की चीनी मिल म नौकरी करनी हो, उसके पास छह महीने के लिए तो तनख्वाह है, खुराक है, सब-कुछ है. लेकिन बाकी छह महीनो का क्या भरोसा ? जब भी जो काम मिल गया, कर लिया कई-कई बार हफ्ता निकल जाता और चवन्नी तक की आमदनी नही होती

शकर की माँ उन दिनो ताना कुछ ज्यादा ही देती रहती. कभी-कभी शकर का बाप अनसुनी भी कर देता था लेकिन गहने की भी तो कोई हद होती है ! यह औरत जैसे हद-बहद दोनो ही हालतो मे बाहर हो गई थी फिर अपनी बीवी पर उसे गुस्सा आता और वही चीख-पुकार शुरू हो जाती

उस दफा शकर की मा ने ताना दिया तो उसने कुछ नही कहा सदूक मे निकाल कर अच्छे कपडे पहने और घर से निकल गया तीन दिन तक घर नही लौटा था चौथे दिन खबर मिली कि शकर की मा का नसीब ही फूट गया है

शकर के बाप ने लडकियो के स्कूल की चपरासिन जमना स शादी कर ली थी जमना का भाई इस घर म कई बार आता रहा है चीनी मिल मे इकट्ठे ही शकर के बाप के साथ काम करता था दोनो मे शुरू मे ही दोस्ती खूब थी

जमना की इसस पहल एक और शादी हुई थी. उस शादी मे दो बच्चे भी है लेकिन पाच बरस मे वह विधवा है भाई ने समझा-बुझाकर जमना को राजी कर लिया और शकर के बाप ने भी कोई ऐतराज नही किया

स्कूल के पिछवाडे जमना को रहने का कमरा भी मिला है एक खासा बडा कमरा और रसोई, बरामदा

दूसरी शादी थी इसलिए कोई ढोल-धमाका नही हुआ पण्डित बुलाकर हवन करवा लिया और शकर के बाप ने जमना की माग म सिदूर भर दिया चार-छह पडोसियो का जमाव था जमना के भाई ने फिर दोने मे रखकर दो-दो मिठाईया और कुल्हड मे चाय बाटी थी

शकर का बाप इसके बाद हफ्ते मे पाच दिन जमना के पास रहता और दो दिन बिहारीपुर के इस घर मे आकर रहता रहता भी क्या, रात को सो भर जाता था वह भी शायद शकर था, इसलिए

मिया-बीवी के बीच पहले जिस तरह गोला-बारी चलती थी, एकदम से रुक गई थी शकर की मा रोटी की थाली सजाकर बरामदे मे रख देती और शकर के साथ बैठा उसका बाप आराम से खाता रहता कही कुछ हुआ है इस बात का पता ही नही चलता

एक दफा शकर की मा बीमार पडी तो जमना चली आई थी हाथ मे सतरे और मौसमी का किलो-डेढ किलो का थैला था शादी के दो बरस बाद की घटना है यह. इस बीच शकर की माँ मुहल्ले के लोगो से अपनी सौत के बारे मे सुनती तो रही थी लेकिन कभी शक्ल नही देखी थी

मियादी बुखार की वजह से सारा शरीर काला-सा हो गया था कुछ खाने की तबीयत ही नही होती थी जमना अपनी लडकियो को लेकर घुसी तो शकर की माँ देखते ही समझ गई थी छाती जलने-सी लगी थी वश चलता तो शायद वह उठकर उसकी बोटी-बोटी अलग कर डालती फिर आँखे बन्द कर ली थी उसने

जमना आकर चारपाई पर किनारे की तरफ बैठ गई और माथे पर हथेली लगाकर बुखार देखने लगी सतरे छीलकर फिर शकर की माँ के मुह मे एक फाँक डाल दी. शुरू मे जिस्म तो जल उठा था लेकिन अरसे बाद किसी चीज का जायका

अच्छा लगा.

पूरा घर फैला पड़ा था.

जमना उठी, झाड़ू लगाई और सब-कुछ करीने से रख दिया.

घण्टे-दो घण्टे में लौट जाने के लिए आई थी लेकिन फिर तेरह दिन के लिए रुक गई. छुट्टियां अब एक भी बाक़ी नहीं थी. वर्ना शायद थोड़े दिन और रुक जाती. वैसे तब तक शंकर की माँ लगभग ठीक भी हो गई थी.

पहले शंकर की माँ जिस तरह सोचती थी, जमना की इस तीमारदारी के बाद वैसा तो नहीं सोचती लेकिन सौत आख़िर सौत ही होती है.

जमना सुन्दर तो ख़ैर नहीं है लेकिन रंग काफ़ी उजला है और नक्श अच्छा है. दो लड़कियाँ जन चुकी लेकिन छोकरी-सी लगती है. शंकर की माँ समझ गई कि उसका मर्द कुछ देखकर ही फंसा है.

ये सब बातें याद आती हैं तो मन भारी होता है.

एक दफ़ा डोरी की बीवी ने जमना के बारे में कुछ पूछा था. बात मामूली थी. कोई भी पड़ोसन पूछ ही सकती है. लेकिन शंकर की माँ की छाती में जैसे कोई कंकड़ फंस गया था.

जमना के फिर दो बच्चे और हुए थे.

दोनों ही बार शंकर की माँ कुछेक दिनों के लिए उसके यहाँ जाने की सोचती रही थी लेकिन सोचने-भर से कोई कैसे चला जाएगा ? आख़िर में वह कभी जा ही नहीं सकी.

जमना ज़रूर चारेक बार और इधर आई थी.

आज यह सब यक़ीन करने लायक़ बातें नही लगतीं.

शंकर का बाप हैज़े से बरसों पहले मर गया और जमना की कोई ख़बर अब नहीं है. एकदफ़ा सुनने में आया था कि वह हरदोई मे अपने किसी मौसे के पास चली गई है. आगे की कोई ख़बर शंकर की माँ नहीं जानती.

डोरी की बीवी बीड़ी का धुआं उगल रही थी.

शंकर की मां उसकी तरफ़ देखने लगी —गोबिन्दा बिचारा ख़तम होय गया ! गोबिन्द के लिए फिर अंदर से एक लम्बी सांस निकल आई थी.

—ह्यां कोई ख़तम-वतम नाय होता.

शंकर की मां समझ गई कि असली बात डोरी की बीवी तक पहुची ही नहीं. उसने फिर प्रसंग बदल दिया—वैसे तेरा डोरी तो ठीक ही है !

—सो है. डोरी की बीवी कुछ सकुचा कर बोली.

कहने के बाद कहनेवाली को कुछ भी फ़र्क़ नहीं पड़ा. शंकर की मां ने भी नहीं पूछा कि इस जवाब का मतलब क्या है ? गली वाले आख़िर जानते ही है कि डोरी के यहां कम-से-कम महीने में एक बार कुछ-न-कुछ तमाशा हो ही जाता है. लेकिन यह सिर्फ़ डोरी की ही बात नहीं है. बिहारीपुर में ऐसा कौन-सा घर होगा, जहां लोग कबूतर-कबूतरी की तरह गुटरगूं न करते हों ?

शंकर के लिए अब दूर-दूर से रिश्ते आते हैं. जिस खरादिए के यहां वह काम करता है, वहां का मिस्त्री भी एकबार रिश्ता लेकर आया था. लेकिन अपने बेटे के लिए इस बारे में कुछ तय करना जैसे मुमकिन ही नहीं होता.

काफ़ी देर तक की चुप्पी के बाद डोरी की बीवी बोली—कुम्हार को ऊपर से देख कै पैचान नाय पाओगे. फिर वह हंसने लगी थी.

शंकर की मां ने गर्दन हिलाई —मो को पतो है सब. लेकिन कुछ नाय कैती.

मैं तो बस तमासा देखती हूं.

तमाशे की बात पर डोरी की बीवी फिर हसी फिर उसे याद आया कि बिमली तो नागन है. यह बात यकीन करने लायक तो नही लगती हे लेकिन अदर से जैसे यकीन भी आने लगता है.

●●

गोबिन्द के लौटने के बाद शाम तक उसे सारी ख़बर मालूम हो गई. वृन्दावन को तूफान का अदेशा हो गया था और वह सुबह से ही दिखाई नही पड रहा था.

गोबिन्द कोने मे खडा-खडा बिमली को देख रहा था बिमली रसोई मे बर्तन माज रही थी. दोनो हाथ कलाई से काफी ऊपर तक काले हो गए थे

— बिमली ! गोबिन्द ने पुकारा.

—बोल !

गोबिन्द ने मुलायम लहजे मे कहा—सुन तो ह्या

—फिर ठैर जा बर्तन धो लू .

—नाय. पैले सुन.

बिमली समझ गई थी. इतनी बेवकूफ वह नही हे जो गोबिन्द की बगैर जरूरत मुलायमियत को वह समझ ही न मके वह उठकर गोबिन्द के सामने खडी हो गई.

गोबिन्द घूर के उसकी आखो की पुतलिया देख रहा था

इतना खतरनाक वह इससे पहले कभी नही लगा.

आखिर मे गोबिन्द अपनी दाई हथेली पीछे ले गया और तडाक से एक चाँटा रसीद कर दिया वह गुस्से मे कापने लगा था गुस्सा उसे पहली मर्तबा ही नही आ रहा है इससे पहले बहुत बार आया है लेकिन इस तरह कापने की मजबूरी अक्सर नही होती

बिमली ने थप्पड तो खा लिया लेकिन चुप रही ऐसा भी अक्सर नही होता. गोबिन्द बिमली पर हाथ उठाता ही रहा है लेकिन पहल बिमली ही करती.

—रडी कही की गोबिन्द ने उसके मुह पर थूक दिया था.

बिमली कुछ नही बोली

गोबिन्द ने फिर उसके पेट पर एक लात जमा दी—बोल अब, कित्ते खसम है तेरे ?

बिमली को कायदे मे गिर ही पडना चाहिए था लेकिन पीछे दीवार थी दीवार की वजह से वह खडी रह पाई.

—अब मै समझा, तेरी कोख जल कैसे गई ! गोबिन्द आज पहली बार सतान की कमी महसूस कर रहा था

बिमली को रोना भी नही आ रहा था

—अब एक काम कर गोबिन्द थोडा रुका हाफ गया था

बिमली की आखे बन्द थी

—काम तेरे लिए बहुत छोटा हे कोई जहर दै दे मुझे लायकै गोबिन्द जबर-दस्ती खीचकर हसता जा रहा था

बिमली फिर जमीन पर बैठ गई थी सर मे चक्कर-सा आ रहा था

गोबिन्द दौडकर रसोई मे घुसा और एक लकडी लेकर वापस आ गया बिमली समझ गई थी, अब क्या होना है ! वह चाहती तो उस लकडी को गोबिन्द की पीठ पर भी तोड सकती थी लेकिन कुछ नही किया

गोबिन्द को शुरू मे शायद इसके इस्तेमाल की हिम्मत नही हो रही थी बिमली

इस कदर चुप रहेगी, उसने सोचा नही था.

आखिर म वह लकडी तो खैर नही टूटी थी लेकिन बिमली जमीन पर गिर गई थी बदन बुरी तरह छिल गया था और कई हिस्सो मे खून टपक रहा था.

दरवाजा खुला था

बिल्कुल गली के ऊपर ही यह दरवाजा खुलता है वहा पडौस की तमाम औरते इकट्ठी हो गई थी

गोबिन्द ने मुडकर भीड देखी तो सारा खून दिमाग मे चढ गया कदम पटक कर वह सामने गया और दरवाजे की कुण्डी चढा दी औरते कुछ देर तो यूँ ही खडी रही फिर दरवाजे की दरारो मे से झाकने लगी थी

●●

फिर अधेरा हो गया था

बिमली शायद काफी देर म होश मे नही थी आखे खोली तो सर के अन्दर की नसे झनझना उठी थी अब वृन्दावन की भी याद नही आ रही थी

गोबिन्द सामने नही था

सन्नाटा-सा था

कमरे का दरवाजा खुला था. बिमली न इधर-उधर घूर-सा लिया समझ गई, गोबिन्द बाहर निकल गया है

अब तक लालटेन जल जानी थी लेकिन यह घर ही किसका है, जो वह लालटेन जलाए ?

थोडी देर मे गोबिन्द लौट आया था नशे मे धुत

बिमली को अब उल्टी आने लगी.

गोबिन्द आकर उसपर झुक गया. आखो म वहशीपन था उनम सुर्खिया छा गई थी

—बिमली ! गोबिन्द उसका जिस्म टटोल रहा था

गोबिन्द के छूने से इससे पहले कभी भी वह इस तरह नही चौकी थी वह जमीन के साथ सिमटती-सी रही

गोबिन्द ने उसकी पीठ पर हाथ रखा

बिमली को लगा, एक आदमी रडी क पास आकर सोने की कोशिश कर रहा है यह गोबिन्द अब 'एक आदमी' भर हो गया है

कच्ची की बदबू से बिमली को उल्टी-सी आ रही थी

गोबिन्द फिर उसे घसीट कर कमरे के अदर ले आया ऊपर जो रोशनदान है, वहा का शीशा बरसो से टूटा हुआ है कभी शीशा था, इसका पता इसलिए चल जाता है कि अब भी एक टुकडा लगा रह गया वहा से बाहर की रोशनी थोडी-बहुत आ जाती है गोबिन्द के लिए उतना ही काफी था

—बिमली ! गोबिन्द उसकी ठुड्डी छूकर पुचकार रहा था शराब के सरूर मे आवाज गड्डमड्ड-सी निकल रही थी

गोबिन्द ने फिर उसे नोचना शुरू किया उसे जैसे बिल्कुल इसी वक्त एक बदला ले लेना है दो रुपए देकर थोडी देर के लिए किसी भी चकलेवाली औरत को खरीद सकता था लेकिन उसे तो इस वक्त सिर्फ बिमली चाहिए बिमली अगर बिहारीपुर छोडकर आलमगिरीगज चली जाती तो शायद वह बहुत खुश हो पाता

—आजा मेरी जानी ! गोबिन्द के होठ हिले.

बिमली को गोबिन्द से इतना डर हमेशा नही लगता

गोविन्द ने अपने सारे कपड़े उतार लिए. फिर वहशी हो गया. बिमली को लगा कि सामने खड़े इस आदमी को कोढ़ हो गया. इतना बदसूरत गोविन्द कब से हो गया, पता ही नहीं था.

गोविन्द झूम रहा था. बीच-बीच में डकारें ले रहा था. नाली के रुके हुए पानी की बू-सी निकल रही थी.

बिमली को इतना ताज्जुब कभी नही हुआ था. जिस मर्द के साथ खुशी से या मजबूरी से सोती रही है, इतने बरस बाद पता चला कि उसे कोढ़ का घिनौना मर्ज़ है. इतना घिनौना भी किसी का जिस्म हो सकता है ?

गोविन्द सामने बढ़ आया.

अब बिमली तैयार हो गई. पूरी ताक़त लगाकर एक थप्पड़ मार दिया. गोबिन्द गिर पड़ा और नीचे का होंठ थोड़ा कट गया. सरूर इस कदर था कि गिर पड़ने के बावजूद वह बिमली की तरफ़ हाथ बढ़ा रहा था.

बिमली ने उस पर थूक दिया—तेरे जईसे आदमी से तो हिजड़ा भी अच्छा है. उसके नथुने फूलने लगे थे. थोड़ी देर पहले ही गोबिन्द से मार खाकर बिमली बर्फ़ की तरह ठंडी पड़ गई थी. अब कोई आकर अगर गोबिन्द की गर्दन भी उड़ा देता तो वह चीखती नही.

बिमली फिर घर से बाहर निकल आई. निकलने से पहले एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा कि अन्दर जो आदमी पड़ा हुआ है, वह बोल क्या रहा है ?

सुबह से ही वृन्दावन गायब है, इसकी ख़बर बिमली को हो गई थी. पूरी मर्द जात पर ही फिर नफ़रत होने लगी थी. हर आदमी या तो डरपोक होता है या औरत से मौज-भर लेने वाला.

बिमली को याद है, बचपन में जब गुड्डे-गुड्डी का ब्याह वाला खेल खेलती थी, तभी से एक बहुत अच्छे आदमी स शादी करने की इच्छा उसे होती रही है. जब थोड़ी बड़ी हुई तो प्रेम करने और प्रेम पाने की एक ललक-सी होने लगी थी. गोबिन्द से शादी हुई तो शुरू से ही उसका दम घुटता था. लेकिन सास इतनी परवाह करने वाली थी कि उसने, नसीब समझ कर, तसल्ली कर ली थी. सास के मरने के बाद से गोबिन्द बहुत घिनौना भी लगने लगा था. कभी-कभी तो उसके लिए रोटी बनाने के वक्त दिल एकदम बुझ जाता था.

बिमली फिर दौड़ने-सी लगी. इस वक्त अगर वृन्दावन भी होता. उससे सहारा मिलता कुछ ? वह भी घोंघे की तरह अपने आप में सिकुड़ कर बेगाना-सा चक्का घुमाता रहता. हर आदमी सिर्फ़ खुद को या खुद की जरूरत को ही प्यार करता है. इस वक्त वृन्दावन भी अगर सामने मिल जाता तो शायद वह एक थप्पड़ जड़ देती.

रात के दस बजे जो दिल्ली पैसेंजर जाती है, वह मढ़ीनाथ वाले पुल के ऊपर रुककर लगातार सीटी दे रही थी.

बिमली की गर्दन धड़ से अलग होकर थोड़े फ़ासले पर पड़ी थी. इंजन के पहियों में खून का रंग दीख रहा था.

यह एक लम्बी कहानी है.

मढ़ीनाथ के जग्गू धोबी से ख़बर पाकर गोबिन्द वहां पहुंचा.

तब तक गाड़ी से बहुत लोग उतर कर तमाशा देख रहे थे. गोबिन्द की आंखों में जो सरूर था, बिमली को इस हालत मे देखकर उतर गया.

फिर पुलिस आई थी.

गोबिन्द को कई बार बयान वग़ैरह देने पड़े थे.

दो महीने तक इस हादसे को लेकर पूरे बरेली-भर में लोग बहुत-कुछ कहते-सुनते रहे हैं. भगीरथ के 'होटल' में तो इस मामले को लेकर कई बार हाथापाई तक होती रही है.

आख़िर में बात पुरानी हो गई और लोगों को ख़ास याद भी नहीं रहा.

लोग उम्मीद कर रहे थे कि गोबिन्द साल-छह महीने में दूसरी घरवाली ले ही आएगा. जगदम्बा इस बात का ज़िक्र भी उससे कई बार करता रहा है. लेकिन गोबिद चुप था.

चुप था लेकिन गांजे में दम मारना शुरू कर दिया था. पहले सिर्फ़ कच्ची की ही आदत थी. गाजे का धुआं अंदर जाता तो शुरू में तो दिमाग की नसें फटने-सी लगती थी लेकिन अब खुमारी छा जाती है. आंखें फिर अपने आप ही बन्द भी हो जाती हैं.

बिमली के मरने के तीसरे दिन वृन्दावन कुम्हार अपने चक्के के सामने दिखाई पड़ा था. गर्दन झुकाए वह सिर्फ़ चक्का ही घुमाता रहा.

गोबिन्द उसके सामने एक बार भी नहीं गया. वृन्दावन को बराबर लगता यही रहा कि बिमली का आदमी किसी भी कोने से कम-से-कम ईंट का एक अद्धा तो मार ही सकता है.

सिर्फ़ शकर की मा चीखती-पुकारती रही. पटसन की तरह उसके सफ़ेद बाल हवा मे उड़ने लगते तो चेहरा अपने आप ही डरावना हो जाता. वह गली मे किसी से बात कर रही थी. जिससे बात कर रही थी, उसकी शक्ल वृन्दावन को दिखाई नहीं पड़ रही थी.

वृन्दावन अन्दर से बहुत कमजोर हो गया था. जैसे यह औरत अब क़दम पटक कर सामने आएगी और नाली से कीचड़ उठाकर उसके मुह पर मार देगी.

लेकिन घंटे-भर बाद उसकी फटे बास-सी आवाज सुनाई नहीं पड रही थी.

आख़िर में शायद वृन्दावन कुम्हार या गोबिन्द को भी याद नही रहा कि कुछ दिन पहले एक हादसा हुआ था. उस हादसे से पहले सामने वाले छप्पर के नीचे कोई एक-बिमली भी रहती थी. वृन्दावन. कुम्हार भी अपने चक्के पर घड़े और सुराही बनाते-बनाते अब यह बात भूल ही गया था.

●●

लुक्का पहलवान के मारे जाने के बाद बिहारीपुर मे कभी नेताजी सुभाष की वर्ष-गांठ मनाई नहीं गई. बाल बाटिका वाले चबूतरे पर जो झूले और फिसलन लगी थी, अब वे कुछ तो टूट गए, कुछ लोग उठा ले गए. उठा लेने के बाद भी, खास काम आने लायक, इसमे से शायद ही कोई चीज निकले लेकिन मुफ्त में मिलने मे तो कोई जहर खाकर भी खुश हो सकता है.

लुक्का पहलवान की बातें किसी-न-किसी बहाने हो ही जाती हैं.

नौरंगी अब कचहरी का मुलाजिम जरूर नहीं है लेकिन काम वहां से लगा ही रहता है. ज़मीन-जायदाद की दलाली का सिलसिला ही कुछ ऐसा है कि रोज न सही,

हफ्ते-भर में एक-आध बार कचहरी ज़रूर जाना पड़ता.

आजकल इस धंधे में कुछ रह नहीं गया. नौरंगी को कभी-कभी लगता है कि उसने गलत रास्ता चुन लिया. इससे तो अच्छा शायद यह है कि स्टेशन के सामने एक बोरा बिछाकर कटे-फटे पुराने नोट ही बदलने का धंधा शुरू करता. लेकिन एक दफा कोई काम शुरू करो तो छोड़ देना इतना आसान तो नहीं होता. नौरंगी जैसे जाल में फंस-सा गया है.

इसके बावजूद शाम को कभी-कभी व्यायामशाला की तरफ चला जाता. आजकल सेहत बनाकर मर्द दीखने में किसी को दिलचस्पी भी कहां रह गई है ? सिर्फ एक शंकर ही है जो लगन से जुटा हुआ है. बाकी लोग तो बस यूं ही चले आते हैं. नौरंगी शंकर को ही तालीम देता है. वैसे जगदम्बा, धनीराम, जगन्नाथ वग़ैरह भी रोजाना आते हैं. कुछ दण्ड-बैठक वे भी लगाते हैं लेकिन अन्दर से जैसे चुस्ती आती ही नहीं है. कसरत अगर दस मिनट करेंगे तो आधे घण्टे तक कहकहे ही लगाते रहेंगे.

पहले नौरंगी समझा भी देता था. सेहत अगर बनी रही, आख़िर तक यही काम आएगी. कभी-कभी कसरत वग़ैरह के वक्त के बाद नौरंगी इधर-उधर की भी कोई-न-कोई मज़ेदार बात सुना देता है. अपने धंधे के सिलसिले में कहाँ-कहां नहीं भटकना पड़ता ? कभी कचहरी तो कभी सब्जीमण्डी.यहां तक कि कभी-कभी तो आलमगीरी गंज की बताशे वाली गली तक कई दफा जाना होता है.

बताशे वाली गली कह देने से कोई नहीं समझेगा.

बरेली का हुस्न बाजार है यह. जो औरतें यहां रहकर धंधा करती हैं, उन्हें भी शायद नहीं मालूम कि कभी इस गली में टेकचंद बताशे वाला बड़ी शोहरत के साथ रहता था. तब बरेली का नक्शा ऐसा था भी कहाँ ? कुतबखाना ज़रूर रहा था और अंग्रेजों का बनाया हुआ टाउन हाल भी था. उसमें सामने की तरफ ऊंचे-ऊंचे खंभे थे और कोई चालीस सीढ़ियां पार करने के बाद ही बरामदे तक पहुंचा जा सकता था. आलमगीरी गंज में दस-बीस दुकानें भर थीं उन दुकानों में टेकचंद की एक बताशे की दूकान थी. हर नाप के बताशे अलग-अलग रंगों में बनते थे. बताशे के हाथी, घोड़े वग़ैरह तो होली-दीवाली के दिनों में इतने बिकते थे कि टेकचंद को बाहर से कारीगर बुलाकर महीने-भर पहले से ही काम शुरू करना पड़ता था. पूरे रुहेलखण्ड में टेकचंद के बताशे मशहूर हो गए थे. आजकल बताशे के धंधे के बारे में कोई ये बातें यकीन नहीं करेगा लेकिन बुजुर्ग उम्र के लोगों से पूछने पर वे आज भी टेकचंद के बताशे की तारीफ करेंगे.

बदायूं, मुरादाबाद, शाहजहांपुर, नैनीताल तक से मण्डियों के महाजन थोक के भाव टेकचंद के बताशे ले जाते थे. फिर बताशे वाला बरसों पहले कब का मर-खपकर मुट्ठी भर राख में तबदील होकर रह गया, लेकिन गली का नाम वही रह गया है. आज बताशे की कोई दुकान यहां कभी थी, इसका पता तक नहीं चलता. बदनाम गली है. औरतों की अपनी-अपनी कोठरियां हैं और कुछेक मुसलमानों की कबाड़ी की दुकानें हैं. कबाड़ी और वेश्याएं बरसों से एक ही जगह पर हैं और कभी भी आपस में खास लड़ाई-झगड़े नहीं हुए.

बिहारीपुर वालों को नौरंगी वकील से ऐसी-ऐसी बातें सुनने को मिलती रही हैं जो शायद ही औरों को मालूम हों.

भोलानंद गिरी की कहानी भी नौरंगी ने पता कर ली थी.

जब से परमेसरी के साथ गिरी पकड़ा गया, मुकद्दमे में सरकारी वकील ने

उसे खोदकर रख दिया. नौरंगी को कचहरी में पूरा किस्सा मालूम हुआ तो उसी ने सर पीट लिया था.

●●

वैसे यह झूठ नहीं था कि भोलानंद गिरी भगवे कपड़े वाला था. गजरौले से अगर कभी कोई इधर आए तो वह बता देगा कि रामचौरा वाले मठ में एक दिन ख़ून का दरिया बहा था.

रामचौरा के मठ के महंत थे केशव गुसांई. लोग सिर्फ़ गुसाँई कहकर ही बुलाते थे. माघ मेले के वक्त जब सामने वाले पोखर में लोग नहाने आते, इतना चढ़ावा आता था कि मठ के नाम ख़ासी जमींदारी बन गई थी.

सुनने में आता है, गोरखपुर के नाथ संप्रदाय के एक नाथ को स्वप्न-दर्शन हुआ था और वह गोरखपुर छोड़कर गजरौला चला आया था. वह कनफटा बाबा कहलाता था. तबसे मठ के सारे गुसांई दीक्षा लेते ही सबसे पहले कान फाड़ लेते हैं, फिर जाकर गुरु के हाथ से भगवा लेते हैं.

केशव गुसांई की परवाह लखनऊ तक होती थी. गुसांई जिस पर खुश हो गया, वोट उसी को मिलता. चुनाव का वक्त करीब आता तो बड़े-बड़े ओहदे वाले लोग गुसांई के चरण छूकर घंटों बैठे रहते.

एक दफ़ा गुसांई ने भी चुनाव लड़ा था. गजरौले का जो एम० एल० ए० था, गुसांई की विशेष कृपा उस पर हमेशा रही है. पेशे से फौजदारी का वकील था लेकिन रोटी का गस्सा भी निगलना होता तो गुसाँई का नाम लिए बिना नहीं निगलता. बिन बादल बरसात की तरह वकील एक दिन कचहरी में ही हार्ट फेल होकर मर गया.

फिर लोगों ने ज़िद की तो गुसांई ने चुनाव लड़ लिया. तमाम पार्टियों से लोग आए कि अगर चुनाव लड़ना ही है तो पार्टी का टिकट ले लो और लड़ो. वे जानते थे कि केशव गुसाँई के लिए पार्टी-वार्टी का कोई मतलब होता ही नहीं है, न वोट डालने ही वाले पार्टी की मुहर देखकर गुसाँई के बक्से में वोट डालेंगे.

गजरौला, नजीबाबाद, बिजनौर के इलाके में मुसलमानों की ख़ासी आबादी है. केशव गुसाँई ने कभी अपनी जबान से कुछ कहा तो नहीं लेकिन लोग जानते है कि उसका बश चलता तो एक-एक मुसलमान को चुनवाकर रख देता.

इसके बावजूद जब चुनाव हुआ, गुसांई जीत गया. दूसरे नम्बर पर जो उम्मीदवार था, वह मुसलमान था. ज़मानत ज़ब्त होते-होते वह बच गया था. मुसलमानों के नेता समझ गए थे कि अगर गुसाईं हार गया तो ख़ासा बलवा हो जाएगा.

गुसाईं से पहले और भी महंत हुए हैं, मुसलमानों से मुहब्बत तो ख़ैर किसी ने नहीं की लेकिन ऐसा बैर भी किसी के मन में नहीं रहा है. जबसे केशव गुसाईं गद्दी पर बैठ गया, हिन्दुओं में स्फूर्ति-सी आ गई और तादाद में बिल्कुल मामूली न होने के बावजूद मुसलमान सिकुड़े-सिमटे ही फिरने लगे.

चुनाव में जीतने के बावजूद गुसाईं को लखनऊ जाकर हो-हल्ला करना ख़ास रास नहीं आया. गजरौला में गुसाईं अगर अपने फिटन पर बैठकर गुज़र जाए तो हिन्दू हो या मुसलमान बाज़ार-भर के लोग हाथ जोड़कर खड़े हो जाते थे. यह आदत बच्चों तक में पड़ गई थी.

लखनऊ का यह माहौल देखा तो गुसाईं को घुटन-सी महसूस होने लगी. बात-चीत उस हल्ले-गुल्ले के बीच क्या होती रहती है, यह न तो समझ में आया था, न

समझने के लिए मन में कोई उत्साह ही जगा था.

इसके बाद गुसाईं ने कभी चुनाव लड़ा ही नही.

मठ के भक्तों में बड़े-बड़े वकील और साहूकार वग़ैरह है. इन लोगों ने वहुत मिन्नतें कीं लेकिन गुसाईं ने अपना फ़ैसला नहीं बदला.

माघ संक्रांति का मेला जिस दिन होता है, केशव गुसाईं, एक ऊंचे मचान पर सुबह चार बजे से लेकर रात के ग्यारह बजे तक बैठता है. काफ़ी ऊंचा मचान बंधता. उसे रंगीन, मखमली कपड़ों से इस तरह मढ़ दिया जाता कि वह भी एक देखने लायक चीज़ बनती.

मचान के ऊपर गद्दे बिछाए जाते, बिजली की रंगीन रोशनी लगाई जाती और गुसाईं के सिर के पीछे एक चक्र-सा घूमता रहता. काफ़ी दूर से भी लोगों को यह सब दिखाई पड़ता था. दिल्ली से किराए पर हुनरमन्द लोगों को बुलाकर यह इंतजाम कराया जाता.

सामने एक पोखरा है.

गुसाईं का कहना है कि शुरू के कनफटा बाबा ने इसे बनवाया था. तब गजरौला था भी क्या ! छोटा-सा एक रेलवे स्टेशन था और स्टेशन के गिर्द दो-चार दूकानें थीं, बस.

कनफटा बाबा ने यहां जब रामचौरा का मठ बनाया, यहां सिर्फ़ रेत ही रेत थी.

एकदम सूखी और बंजर ज़मीन. घास भी तो नहीं उगती थी. फिर मठ बन गया तो लोगों का आना-जाना शुरू हो गया. पहले सिर्फ़ आस-पास के गांव वाले ही आते थे. बाद में कनफटा बाबा की शक्ति की कहानी लोगों में इतनी फैल गई कि दूर-दराज के इलाकों से भी लोग आने लगे. फिर ये बंजर ज़मीनें खेती लायक बनाई गई और अब ऐसा हो गया कि यहां का मक्का दूर-दूर तक मशहूर हो गया.

कनफटा बाबा के बारे में बहुत ज़्यादा तो नहीं पता चलता लेकिन उसके बाद के महंतों का कहना है कि शिवरात्रि के दिन वह यहाँ आए थे. इसके अलावा सिर्फ़ इतना-भर पता था कि वह गोरखनाथ मंदिर में पहले साधना करते थे और स्वप्न-दर्शन के बाद गुरु की आज्ञा से गजरौला आ गए थे.

इन बातों की सच्चाई पर छानबीन करके ठीक-ठीक बता पाना अब शायद ना-मुमकिन ही है. छानबीन की जरूरत भी किसी को नहीं हुई. लोगों के मन में यक़ीन है और इस वजह से यहाँ आकर जितना बन पड़ता है, चढ़ा जाते हैं.

शिवरात्रि के दिन भी यहाँ भारी मेला लगता है.

गजरौला स्टेशन के पास से झाँकी निकलती है और पूरा बाज़ार घूमकर जुलूस रामचौरा मठ तक आकर गुसाईं से आशीर्वाद लेता है. शिवरात्रि का मेला शायद इतना बड़ा न होता अगर लोग यह न मानते कि कनफटा बाबा शिवरात्रि के ही दिन पहली बार यहाँ आए थे.

मठ के नाम पर तब पत्थर का एक छोटा-सा मंदिर-भर था. कनफटा बाबा बगल की एक झोंपड़ी में रहते थे. अब आलीशान मठ खड़ा है. उसकी चोटी इतनी ऊंची है कि गर्दन टेढ़ी करके ही कोई देख सकता है. चोटी सोने की बनी है. एक साहू-कार की मनौती थी. उसका शायद एक ही बेटा था और पोते के अभाव में वंश ख़त्म होने के मुकाम तक आ गया था. पैसे बाढ़ के पानी की तरह आते थे. दिल्ली की अनाज मण्डी तक ख़ासा रुतबा था साहूकार का, लेकिन मन में रत्ती-भर का भी तो चैन नहीं था. साहूकार फिर ललाइन और बहू को लेकर यहाँ आया और मनौती मान गया. मनौती के चार साल बाद उसके यहाँ पोता तो ख़ैर नहीं, पोती ज़रूर हुई थी. वजह

चाहे जो भी हो साहूकार इसे कनफटा बाबा की ही कृपा समझकर अंदर ही अंदर खुश हो गया था. अगले साल फिर उसकी तरफ़ से मठ की चोटी को सोने से मढ़ दिया गया था.

सोने से मढ़ी उस चोटी के ऊपर भगवे रंग का एक झण्डा उड़ता है. तिकोना रेशमी झण्डा हवा से फहरता रहता तो दूर-दूर तक यह दिखाई पड़ता है.

मंदिर के पीछे महंत का महल है. केशव गुसाईं के रहने की जगह यही है. सामेने एक बहुत बड़ा-सा बगीचा है और बगीचे के सामने लोहे का फाटक. लोहे के फाटक पर बल्लम लिए दो कनफटे खड़े रहते हैं. लोगों का कहना है, महल के तहख़ाने में मटकियों में बस सोना-चाँदी और रुपए ही भरे हैं. तहख़ाना किस जगह पर है, यह तो कोई नहीं जानता लेकिन दूसरे कनफटे भी यही सोचते हैं.

केशव गुसाईं लोगों को अक्सर नहीं दिखाई पड़ता. कभी कोई तीज-त्यौहार हुआ तो दिख जाता या किसी काम से अगर फिटन पर बैठकर निकला तो बाज़ार वालों को नज़र आ जाता. इसके अलावा कभी-कभी शाम के वक्त बगीचे में टहलता हुआ भी दिखाई पड़ता है.

मुसलमानों ने कभी इस बारे में ज़ुबान तो नहीं खोली लेकिन उन्हें यक़ीन है कि गुसाईं ऐय्याश भी है. कई बार औरत वग़ैरह के बारे में गुसाईं को लेकर दबी-दबी बातें उड़ती रही हैं लेकिन वे जिस तरह उड़तीं, उसी तरह ख़त्म भी हो जातीं.

एकदफ़ा एक मुसलमान कोयले का व्यापारी गुसाईं के पास चलकर आया था. उसे शायद यक़ीन था कि महंत की ताक़त, चाहे कुछ भी कहो, मामूली नहीं है. पूरा हिन्दुस्तान ही फ़क़ीर और पीरों से भरा हुआ है. लेकिन कितनों को लोग पूछते हैं ?

कोयले का व्यापारी थैले में रुपए भर कर गुसाईं के पास आया था. ऐसी भेंटें आती ही रहती हैं. देने वाले के लिए यह कोई बड़ी बात हो सकती है लेकिन गुसाईं को याद भी नहीं रहता कि कौन क्या दे गया.

ख़ैर, गुसाईं ने मियां की बात सुनी और उसे यक़ीन दिला दिया कि वक्त आने पर उसकी जरूर सुनी जाएगी.

मियां ने कोई साल-भर पहले चौथी शादी की थी लेकिन यह बीवी शुरू से ही बड़े अजीब ढंग से पेश आती है. और भी तीन बीवियां हैं, इतने सारे बाल-बच्चे हैं लेकिन कभी किसी को हिम्मत ही नहीं हुई जो मियां का हुक्म टाल जाए.

गुसाईं कोयले के सौदागर की गंजी खोपड़ी देखकर मुस्कराया था. कोई दूसरा वक्त होता तो शायद कसकर एक लात ही जमा देता लेकिन अब मन में एक और ही ख्याल आ गया था.

अगले दिन मियां अपनी बीवी को लेकर गुसाईं के यहां पहुंचा. घण्टे-भर बाद अकेला निकल आया था. अगले दिन बीवी को वापस लेने पहुंचा तो गेट में खड़े कनफटों ने बाहर से ही विदा कर दिया था. मियां ने बहुत मिन्नतें की थीं लेकिन कनफटों ने फिर धौल जमानी शुरू कर दी. आख़िर में वह हारे हुए जुआरी की तरह लौट आया था. उसकी बीवी सुरंग के किस रास्ते से कहां चली गई, इसका पता आख़िर तक नहीं लगा

यह बात मुसलमानों में फैलने लगी तो हिन्दुओं ने यक़ीन नहीं किया था. बाद में, दबे तौर पर ही सही, लोग काफ़ी-कुछ जान गए थे. इसके बावजूद बलवा वग़ैरह कुछ भी नहीं हुआ था मुसलमानों ने समझ लिया था कि उन्हें इसी इलाके में रहना है और ऐसे मामलों को लेकर बतंगड़ खड़ा करने से फायदे की बजाय नुक़सान ही उठाना पड़ेगा.

बात फिर वहीं दबी की दबी रह गई थी.

केशव गुसाईं के गुस्से का पता सबको है. मर्जी के खिलाफ़ कुछ हुआ नहीं कि इलाके-भर का एक भी मुसलमान ज़िन्दा नहीं बचेगा.

गुसाईं की आँखें ही ऐसी हैं कि नज़र मिलाना आसान बात नहीं है. कनफटों में कोई बहुत पुराना और यकीनमन्द हो तो बात और है वर्ना लोग उसके क़दमों की तरफ़ ही निगाह बिछाते हैं सिर्फ.

गुसाईं को रेशमी कपड़ों की आदत है.

भेंट में लोग दिल्ली, बम्बई तक के सफ़ेद रेशमी कपड़े चढ़ा जाते हैं. वे सफ़ेद कपड़े भी रंग कर भगवे बनाए जाते और गुसाईं के लिए दर्ज़ी आकर लुंगी-कुर्ते सिल देता. सर्दियों में ज़्यादातर फर का एक लबादा-सा पहनकर गुसाईं कहीं निकलता है.

रामचौरे के इस मठ में पहले एक बकरी भी नहीं थी. अब हाथी भी है. मेला लगता है तो शाम के वक्त हाथी मचान के सामने आकर सूंड उठाकर गुसाईं को सलामी देता और लाल रंग के गुलाबों की माला सूंड से ही उसके गले में डाल देता. लोग तालियां पीटते नहीं थकते तब.

इसके अलावा यहाँ हरियाणा की गाएं हैं. एक-एक गाय आधा-आधा मन तक दूध देती है. गायों के बाद घुड़साल है. उसमें छह-सात कद्दावर घोड़े हैं. इनके अलावा कई तरह के कुत्ते, मोर वग़ैरह तो हैं ही.

शिवरात्रि के मेले के दिन घोड़ों का कमाल दिखाया जाता. शाम को दो घंटे लोग यह तमाशा देखते और खील-बताशे की तरह जेब से अठन्नी-चवन्नी से लेकर दस-दस रुपए के नोट तक सामने के दानपात्र में डाल देते. देने वाले वैसे सौ-सौ की गड्डी भी डाल जाते हैं. सोने की मोहरें भी अक्सर मिल जाती हैं.

केशव गुसाईं यह सब तमाशा देखता रहता.

मेले के दिन सुबह से ही गुसाईं का चेहरा जैसे गुलाल की तरह सुर्ख हो जाता. बातचीत वग़ैरह ज़रूरत से ज़्यादा वह शायद ही कभी करता हो. उस दिन तो उससे कुछ पूछने की हिम्मत तक कनफटों में नहीं रह जाती.

रात तक सब-कुछ एक-सा चलता रहता.

पूरा गजरौला मेले के वक्त इतना भर जाता कि बाज़ार तक में आराम से घूम-फिर लेना मुश्किल हो जाता. हलवाई की दुकानों में मिठाई की तादाद दस गुनी बनती लेकिन शाम से पहले एक कतरा भी बचा नहीं रहता. वैसे कुछ लोग गुसाईं से हुक्म लेकर मेले के अंदर भी दुकानें सजाते हैं. उसमें मुनाफ़ा ज़्यादा होता है लेकिन गुसाईं को भेंट में थैली भी पहले ही चढ़ानी पड़ती है. छोटे-मोटे दुकानदार, लिहाज़ा, मेले के अंदर घुसे बग़ैर बाहर से ही अपना धंधा करते हैं लेकिन बरेली, रामपुर तक से व्यापारी भेंट चढ़ाने के लिए आते हैं. जिनकी भेंट गुसाईं कबूल कर लेता, उन्हें मेले से पहले और बाद में सात दिन तक दुकानदारी करने का हुक्म मिल जाता. उतने में ही वे चार महीने की कमाई कर लेते.

रामचौरा के मठ में शुरू के कनफटे बाबा के बाद दस गुसाईं और बने थे. ग्यारहवें नम्बर पर केशव गुसाईं जैसा रुतबे वाला महन्त आज तक कोई और नहीं हुआ. गुसाईं की अब उम्र हो गई है. अभी जो उम्र है, अस्सी से कम की क्या होगी. जवानी की कई आदतें, बदनामियां वग़ैरह आज वैसी नहीं हैं. लेकिन रुतबा वैसा ही रह गया.

रामचौरा मठ की प्रथा है, महंत समाधि लेने से पहले अपने उत्तराधिकारी पद के लिए दो कनफटों का चुनाव करता है. दो नाम इसलिए तय किए जाते कि अगर किसी वजह से पहला आदमी गद्दी पर बैठने से पहले ही अयोग्य हो गया या गद्दी पर बैठने के बाद अपना उत्तराधिकारी चुनने से पहले ही समाधि ले लेता है जो गद्दी का

हक दूसरे कनफटे को मिल जाये.

केशव गुसाईं ने दो नाम चुन लिए थे. पहला नाम था भवानी गुसाईं का और दूसरा नाम शंभू गुसाईं का. केशव गुसाईं को ये दोनों ही गुसाईं शुरू से ही बहुत प्यारे रहे हैं. इन लोगों पर भरोसा भी इतना रखा कि तहख़ाने तक की चाबी कई बार इन लोगों के हाथ पकड़ा दी.

भवानी गुसाईं आदत से शांत स्वभाव का है. कनफटों में इतने शांत साधु कम ही होते हैं. मामूली से मामूली साधु भी बात-बात पर गाली देता और आँखें लाल करता है. केशव गुसाईं को अगर किसी पर गुस्सा आ गया तो चाबुक से पीठ की चमड़ी ही उधेड़ देता है.

भवानी शुरू से ही मठ के नीचे की गुफ़ा में घंटों बैठता रहा है. कई-कई बार तो दो-दो दिन तक बिना आंखें खोले लगातार ध्यान में रहता और बाद में बेहोश होकर गिर पड़ता. तब केशव गुसाईं पहुंच कर उसे पहले तो पैर से एक ठोकर मारता, फिर खींचकर गुफ़ा से बाहर लाता.

भवानी की बहुत ज़्यादा बोलने की आदत भी नहीं है. शाम को पोखर के पास कई दफ़ा चला जाता और चुपचाप घण्टों गुज़ार देता.

मठ में मेले वग़ैरह लगते है, और भी दस तरह के त्योहार मनाए जाते. भवानी के हिस्से में जितना कुछ करना होता, उसके लिए केशव गुसाईं को कभी फ़िक्र नहीं हुई. चाहे मजदूर हो, चाहे मठ ही में काम करने वाला कोई कनफटा, भवानी गुसाईं काम सभी से करवा लेता.

लेकिन शंभू गुसाईं ऐसा नहीं है. चेहरे पर एक क्रूरता का भाव-सा हमेशा चिपका रहता. एक दफ़ा एक नए कनफटे को इतना मारा कि तीन दिन बाद बिचारा मर ही गया. मठ का मामला था, लिहाज़ा पुलिस, दरोगा को भी आख़िर में चुप ही रह जाना पड़ा था.

मारने-पीटने की घटनाएं शंभू गुसाईं के साथ अक्सर ही घटती रही हैं. गुस्सा आने पर कोई केशव गुसाईं को शायद मना भी ले लेकिन शंभू गुसाईं को समझाना और नाग के सामने हाथ जोड़कर खडे होना, एक ही बात है.

भवानी गुसाईं अपने हिसाब मे मेले वग़ैरह के वक्त जितना करना होता, करता ही है लेकिन शंभू गुसाईं आख़िर मे एकबार खुद अपनी आंखों से सब-कुछ देखकर तसल्ली ज़रूर कर लेता है.

शंभू गुसाईं के जिस्म में कितनी ताक़त है, कोई नही जानता. जिसने कभी थप्पड़ या मुक्का खाया हो, वह सिर्फ़ इतना बता पाएगा कि यह उसकी समझ से बाहर की बात है. एक दफ़ा गौशाला की गायों के लिए बाहर से एक सांड मंगाया गया था. बिल्कुल काले रंग का कद्दावर जानवर था. अचानक पता नहीं क्या हुआ कि वह पिछवाड़े के खेत में घुस गया. मारे गुस्से के सांड लगातार फुफकारता रहा. जो भी सामने पकड़ने के लिए जाता, चार क़दम आगे बढ़ने के बाद पीछे लौट आता. सांड शायद पागल हो गया था. बहरहाल जब आख़िर तक कोई कुछ कर ही नही सका, हाथ में सिर्फ़ एक रस्सी और टाट लेकर शंभू गुसाईं बेफ़िक्री से आगे बढ़ गया. दूर खड़े लोग डर के मारे जम-से रहे थे. लेकिन चार-छह धक्के खाने के बाद शंभू गुसाईं ने सांड को क़ाबू में कर लिया था.

केशव गुसाईं ने इसके बाद कहा था कि सांड तो क्या शंभू गुसाईं चाहे तो बाढ़ भी रोक सकता है. इस तरह की बातें महंत कभी अगर औरों के बारे में करता भी है, कनफटों के बारे में कभी नहीं करता. शंभू यह इशारा समझ गया था.

लेकिन यह पता नही कैसे हो गया कि केशव गुसाईं ने जब अपने उत्तराधिकारियों का चुनाव किया तो भवानी का नाम पहले रखा. महंत के चुनाव को सिर्फ कबूल करना होता है. कोई इस बारे में सवाल कर ही नही सकता.

भवानी गुसाईं को इस चुनाव मे शायद कोई फर्क नही पड़ा था एक बार उसने सुन-भर लिया था, बस.

लेकिन शंभू गुसाईं का खून उसी दिन खौल उठा था. एकदफ़ा जी में आया था, तहखाने मे ले जाकर केशव गुसाईं को खत्म ही कर दे. लेकिन महंत को गुरु का पद मिलता है. शंभू के संस्कार आड़े आए थे.

उसे फिर सिर्फ एक ही बात का इंतज़ार था. केशव गुसाईं की समाधि का.

इत्तफ़ाक से जिस दिन केशव गुसाईं ने समाधि ली, गजब की सर्दी पड़ी थी. माघ मेले के कोई दस दिन बाद रात के वक्त गुसाईं ने आँखें बन्द कर लीं. पांच मिनट के अंदर खबर हो गई और पूरा गजरौला मठ के गिर्द उमड़ पड़ा. लेकिन अंदर आने का हुक्म सबके पास नहीं था. कोई बहुत बड़े ओहदे का आदमी होता तो सिर्फ़ उसे ही गेट पर बल्लम के साथ खड़े कनफटे अंदर घुसने देते. बाहर खड़ी जनता महंत के नाम का जय-जयकार कर रही थी.

भवानी गुसाईं थोड़ी देर मे मठ की गुफ़ा में चला गया था. कल दुपहर तक महंत की पारलौकिक क्रियाएं समाप्त हो जाएंगी और परसो उसे हुक्म के मुताबिक गद्दी पर बैठना है.

शंभू गुसाईं पागल हो उठा था.

चुपचाप वह भी एक झोला लेकर गुफ़ा के अंदर चला गया और सांस रोके इंतज़ार करता रहा. थोड़ी देर में उसे यकीन हो गया कि गुसाईं अब होश मे नही है. इससे अच्छा मौका इस ज़िन्दगी में और क्या मिलता ? झोले से उसने कुल्हाडी निकाली और भवानी की गर्दन पर दे मारी. कुल्हाडी की धार शायद तलवार से भी ज्यादा तेज थी. ज्यादा अपने आप ही शायद न रही हो लेकिन हफ्ते-दस दिन की मेहनत से उसे इस लायक बनाया गया था कि एक ही बार में सारे काम तमाम हो जाएं.

भवानी गुसाईं की गर्दन लटक आई थी.

लेकिन गुसाईं को शायद शंभू के कदमों की आहट मिल गई थी और कुल्हाड़ी के साथ उसे देखते ही उसने जबरदस्त चीख़ मारी थी.

चीख की आवाज बाहर भी आई थी.

यही शंभू गुसाईं धोखा खा गया. गुफ़ा के बाहर जो दरवाजा है, वह अगर बन्द होता तो अंदर चाहे भूचाल भी आ जाता, बाहर न तो तिनका ही हिलता, न किसी को पता ही चलता. लेकिन उस वक्त करीने से इतना सारा सोच लेने का वक्त ही कहाँ था ?

शंभू गुसाईं ने सोचा यह था कि गुफ़ा से सुरंग के रास्ते पोखर तक चला जायगा और वहां अपने कपड़े और कुल्हाड़ी दफ़ना कर नए कपड़े पहन लेगा तो मक्खी तक को कुछ मालूम नहीं हो पाएगा.

लेकिन सोचा हुआ सारा हुआ ही कहा ? बाहर गेट के पास खड़े लोगों में से बीसेक लोग गुफ़ा की तरफ़ आ गए थे. अंदर अंधेरा था. कुछ दिखाई नहीं दे रहा था. किसी ने माचिस जलाई तो उसकी रोशनी में तड़पते हुए भवानी गुसाईं को देखा. खून से फ़र्श रंग गई थी. शंभू गुसाईं फिर भाग खड़ा हुआ. सुरंग के रास्ते से पोखर तक गया फिर अंधेरे में किधर खो गया, पता ही नहीं चला. लोग चाहते तो पकड़ सकते थे लेकिन शंभू गुसाईं के बारे में सबको पता है. लिहाजा आगे बढ़कर पकड़ने की जुर्रत

किसी ने नहीं की.

मठ का मामला था. पुलिसवालों ने बस खानापूर्ति कर ली. ठीक से कोशिश की जाती तो शायद शंभू गुसाईं पकड़ा जाता लेकिन गजरौले का तहसीलदार ख़ुद मठ का भक्त था. ऊपर वालों से मिल-मिलाकर उसने मामले को आगे बहुत बढ़ने से रोक लिया.

●●

शंभू गुसाईं की जिन्दगी एक दिन ऐसे मोड़ पर आ जाएगी, सोच पाया था कोई ? शंभू को अपने बारे में ज़्यादा तो नहीं मालूम लेकिन केशव गुसाईं ने ही एक-दिन उसे उसके बचपन की कहानी बताई थी.

अल्मोड़ा में कोई एक खेमसिंह बिष्ट हुआ करता था. तम्बाकू का व्यापारी था. पहाड़ी इलाका है, सिर्फ़ तम्बाकू ही क्यों गांजे, भांग का भी खासा धंधा था. खेमसिंह शायद अपने ज़माने में कुमाऊं-भर में तम्बाकू का सबसे बड़ा व्यापारी था. इसके अलावा कौसानी और भवाली की तरफ़ ज़मीनें थीं. आलू की अच्छी खेती होती थी. दूसरी चीज़ें भी उगाई जाती थीं लेकिन खेमसिंह आलू के लिए मशहूर हो गया था.

पहाड़ी ठाकुर क़द्दावर अक्सर नहीं होता. ज़्यादातर गठे क़द का और छोटी आंखोंवाला ही होता है. लेकिन खेमसिंह पूरे छह फ़ुट का था. मूंछें कानों तक लिपटी हुई थीं. अल्मोड़ा बाज़ार में जहां उसकी दूकान थी, एक गद्दी पर बैठकर कभी हुक्का गुड़गुड़ाता, कभी बराबर के चार दोस्तों को बुलवाकर ताश के पत्ते बांट लेता. ताश के पत्ते के साथ नौकर प्लेट में भुना हुआ मुर्गा और महुए की शराब रख जाता. महुए की शराब बाहर से आती है. तराई इलाकों से इसका दाम थोड़ा ज़्यादा ज़रूर बैठता है लेकिन एक घूंट पीते ही जिस्म फड़क उठता. इस तरह ताश के साथ खेमसिंह कितनी बाज़ी हारता रहा है, ख़ुद उसे भी याद नहीं होगा. लोग कहते हैं, बम जान-बूझकर हार जाता था बिचारा. जीते भी तो किसके लिए ? घर में सिर्फ़ बीवी थी. खेमसिंह अगर आज भी मर गया, फिर भी अपने पीछे इतना तो छोड़ ही जाएगा कि बीवी चार जनम तक पांव पर पांव धरकर आराम से पेट भर सकती है.

कोई अगर खेमसिंह की बीवी को देखे तो पता चलेगा, जितना वजन उस औरत का है, लगभग उतना ही उसकी दोनों बांहों और गले में बंधी यंत्रियों का वजन भी होगा. हफ्ते में कम-से-कम तीन व्रत-उपवास रखती है कि इस घर में दीया जलाने वाला कोई तो आए. सैकड़ों साधु-संतों में कम्बल और कपड़े बांटती और यंत्री लेकर गले या बांह में बांधती रही है लेकिन कोख बन्द की बन्द ही रही. खेमसिंह को साधु-संतों में बहुत यक़ीन तो नहीं था लेकिन बीवी मिन्नतें करती तो कई बार वह साथ भी चला जाता.

आख़िर में किसी ने रामचौरा मठ के बारे में बताया था.

तब गद्दी पर बैंजू गुसाईं थे. केशव गुसाईं से ठीक पहले के महंत. खेमसिंह की बीवी ने गुसाईं के पांव पकड़ लिए और थैले में भरकर पांच सौ एक रुपए सामने रख दिए.

बैंजू गुसाईं की शर्त अनोखी थी. पहला बच्चा मठ को ही चढ़ाना पड़ेगा. वह बेबस औरत यह शर्त मान गई थी.

इसके भी पांच साल बाद उसने एक मरी लड़की को जन्म दिया था. खेमसिंह भी इस घटना से मुरझा गया था. इतने बरस बाद लड़की भी अगर पैदा हुई, मरी ही निकली. इसके ठीक सोलह महीने बाद एक लड़का जन्मा.

खेमसिंह ख़ुश हो गया. ख़ुशी मनाने को इतनी बड़ी दावत दी गई कि बड़े-बड़े रईस भी ऐसा इन्तज़ाम नहीं कर सकते थे. मन में तसल्ली भी थी. जब पहली औलाद

मरी ही पैदा हुई, इस बच्चे को मठ पर चढ़ाने की ज़रूरत नहीं होगी. मठ के गुसाईं पर बहुत यक़ीन तो लड़का पैदा होने के बावजूद नहीं था लेकिन बीवी ने ज़िद की तो उसे एक बार और गजरौला जाना ही पड़ा. लड़का तब एक साल का हो गया था. बैजू गुसाईं को सारा हाल सुना दिया और बीवी की दाईं तरफ़ हाथ जोड़े बैठा रहा. गुसाईं ने आंखें खोलीं और बगल में खड़े कनफटों को हुक्म दे दिया कि बच्चे को अंदर ले जाएं.

खेमसिंह दंग रह गया था.

बच्चे की मां दहाड़ मारकर रो पड़ी.

लेकिन गुसाईं को बरसों पहले की वह शर्त याद थी.

खेमसिंह ने समझाना चाहा कि पहली संतान तो पैदा ही मरी हुई थी. लेकिन गुसाईं चट्टान की तरह दृढ़ था. मरे हुए को क्या गिनना ? जो ज़िन्दा है, उसे गिनो. उस हिसाब से यही बच्चा पहला है.

गुसाईं ने एक और कड़ा हुक्म सुना दिया. आगे से मठ में तो ख़ैर नहीं ही, गजरौला भी आने की ज़रूरत नहीं है. आए तो महागुरु का शाप लगेगा.

खेमसिंह अपनी बीवी को लेकर वापस अल्मोड़ा लौट गया.

केशव गुसाईं ने शंभू को इतना ही बताया था. अपने बारे में गुरु ने अगर बता दिया तो ठीक है लेकिन पूछ-ताछ का निषेध है. जानकर करना भी क्या है ? साधु का अतीत और भविष्य तो सिर्फ़ भगवान के पास होता है. शंभू गुसाईं ने भी इससे आगे कभी अपने बारे में जानने की कोशिश नहीं की.

भवानी गुसाईं को ख़त्म करने के बाद शंभू गुसाईं बाहर आया तो शुरू में समझ में ही नहीं आ रहा था कि अब जाना कहां चाहिए ! क़ायदे से थोड़ा-बहुत पश्चात्ताप शायद होना चाहिए था. लेकिन गद्दी न मिली तो न सही, भवानी गुसाईं को ख़त्म कर पाने के लिए मन में बहुत ख़ुशी थी. और भी ज़्यादा ख़ुशी होती अगर यही कुल्हाड़ी केशव गुसाईं की गर्दन पर उतरती. ख़ैर जो होना नहीं होता है, उसे कोई कर भी कैसे लेगा ?

शंभू गुसाईं फिर अल्मोड़ा चला गया. यों मन में कोई ख़ास बात नहीं थी, फिर भी अपने पैदा होने की जगह देखने की थोड़ी-बहुत ललक तो थी ही. साधू को अपने कुटुम्बियों के बारे में पता करने का निषेध होता है. दीक्षा के साथ ही गुरु की आज्ञा होती है. कोई बहुत पूछ-ताछ तो शंभू गुसाईं ने नहीं की थी लेकिन पता चल गया था कि तम्बाकू का व्यापारी बरसों पहले मर-खप गया. जो लोग बचे थे, वे अल्मोड़ा छोड़-कर तराई में चले गए थे.

शंभू गुसाईं इसके बाद कोई छह महीने वहां रहा. कनफटों की दाढ़ी-मूछें नहीं होती हैं. सर के बाल मुड़े होते हैं. लेकिन कुछ भी हो, पुलिस का डर तो था ही. अल्मोड़ा से गजरौला, मुरादाबाद तक जाने वाले लोग कुछ तो होंगे ही. उनमें से कुछ रामचौरा के मठ में भी गए होंगे और महंत के साथ शंभू गुसाईं को भी देखा होगा.

फिर शंभू गुसाईं के गालों पर दाढ़ी-मूछें उग आई थीं. घुटे हुए सर में बाल आ गए और जटाएं बनने लगीं. एक पत्थर का खण्डहर बाज़ार के बाद आता है. शंभू गुसाईं वहीं जम गया. कनफटे से अवधूत बन गया. सामने लकड़ी जलाकर चुपचाप पद्मासन लगाकर बैठा रहता. अवधूत का कोई नाम तो होता है लेकिन उसके बिना भी काम चल ही जाता है.

इधर से जो भी गुज़रता, सर झुका कर ही आगे बढ़ता. उनमें कुछ लोग पैसे-दो पैसे से लेकर एक-एक रुपए का नोट तक सामने रख जाते. कोई अगर सामने आकर

बैठता तो शभू चुटकी-भर भभूत उठाकर उसे दे देता. वह महाप्रसाद समझकर उतना चाट जाता.

इस बीच रामचौरा मठ में गड़बड़ियां शुरू हो गई.

केशव गुसाईं ने जिन नामों का चुनाव किया था, उनमे से कोई होता तो मामला इस क़दर नहीं बिगड़ता. कनफटों में दो दल बन गए. गद्दी पर कोई बैठ नहीं पाया और मारपीट होने लगी.

गजरौला छोटा-सा क़स्बा है, लिहाज़ा यहां की हर बात का पता भी नही चलता. लेकिन एक कनफटे ने दूसरे कनफटे की बांह ही काट ली तो पुलिस को आना ही पड़ा. मामले की छानबीन के लिए एक ताजी उम्र का कलक्टर भी आया था. उसके साथ पुलिस कप्तान था और बड़े ओहदेवाले अफ़सर थे. कलक्टर ने पुलिसी जांच-पड़ताल का हुक्म दिया और तहखाने के फाटक के बाहर बन्दूकधारी सिपाही तैनात करवा दिए.

शंभू गुसाईं का मामला अब तक दबा पड़ा था.

लेकिन ख़ुद कलक्टर साहब ने ही हुक्म दे दिया तो तहसीलदार करता भी क्या ? उसे भी तो अपना पेट भरने के लिए नौकरी करनी थी !

आख़िर मे शंभू गुसाईं की फिर से तलाश शुरू हो गई. यह ख़बर मालूम हो गई तो गुसाईं अल्मोड़ा से भाग खड़ा हुआ. एक दिन सुबह लोगो ने देखा कि सामने एक जली हुई लकड़ी पड़ी हुई है और ढेर-सारा भभूत पड़ा है.

●●

गुसाईं फिर बहेड़ी आ गया.

अल्मोड़ा से काठगोदाम तक बस से आने पर छोटी लाईन की गाड़ी मिल जाती है. यह लाईन हल्द्वानी, काशीपुर, रुद्रपुर वग़ैरह होकर बहेड़ी से आगे बरेली, कासगंज तक निकल जाती है.

गुसाईं ने यहां आकर अपना नाम भी बदल दिया. कोई नाम पूछता तो पहले भौंहें सिकोड़ कर उसे घूर लेना. साधु-संतों के नाम पूछकर चाटना है क्या ? मन में शंका भी रहती कि पुलिस का जासूस भी तो हो सकता है कोई. ख़ैर, अब नाम हुआ भोलानंद गिरी.

इस बहेड़ी में ही लुक्का पहलवान से भोलानंद गिरी की मुलाकात हुई थी. लुक्का को इधर अक्सर आना पड़ता है. बग़ैर लाईसेंस की देसी कच्ची के बहुत-सारे शौक़ीन इधर रहते हैं.

इसके अलावा एक और धंधा है.

पुलिसवालों के खाते में बहुत-कुछ दर्ज है. डकैती के कई मामले हैं. जिनमें दो-चार क़त्ल तक शामिल हैं. लुक्का कई बार अंदर भी बन्द होता रहा है लेकिन उसका आज तक बहुत-कुछ कोई भी बिगाड़ नहीं पाया. यहां तक कि अंदर भी चला जाता है तो उसके अपने पड़ोसी तक को इससे ज्यादा पता नहीं होता कि पहलवान दिखाई नहीं पड़ता.

गिरी ने शायद देखते ही लुक्का पहलवान को समझ लिया था. कनफटे लोग गांजे की चिलम में दम नहीं मारते लेकिन अवधूत के लिए यह भी एक शर्त है. भोलानंदगिरी अपनी चिलम लुक्का पहलवान को थमाता और उसके चेहरे की एक-एक पर्त समझ लेना चाहता. जैसे इन पर्तों के नीचे रहस्य का एक ऐसा खजाना छिपा है, जिसे समझ लेना बहुत आसान नहीं है.

एकदफ़ा नोटों की एक थैली और ज़ेवर वग़ैरह लेकर लुक्का पहलवान आया

और गिरी को हफ्ते-भर के लिए रखवाला बना दिया. जोखिम का काम था. धोखा खा गया तो सभलना इतना आसान नही होगा, लेकिन बिना जोखिम के दुनिया मे कोई कब बढ ही सका है ?

हफ्ते-भर बाद भी नही, लुक्का ने अपनी थैली महीने-भर बाद वापस ली थी. दिक्कत ही कुछ ऐसी थी कि बहुत जल्द कही और छिपायी भी नही जा सकती थी. लेकिन महीने-भर बाद अपनी अमानत लेने आया तो थैली वैसी की वैसी उसे वापस मिल गई. लुक्का फटी-फटी आखो से गिरी को देखता रह गया था. तुम पहुचे हुए महात्मा हो परभु ! फकीर के लिए मिट्टी और सोने के बीच फर्क ही क्या होता है ?

भोलानद गिरी लुक्का के मन की हलचल समझ गया. आख खोलकर फिर कुछ देर बाहर आसमान की तरफ देखता रहा. बाद मे चुटकी-भर राख उठा ली.

लुक्का ने भक्तिभाव से प्रसाद ले लिया और जबान पर रख लिया.

यह शुरू के दिनो की बात है.

बाद मे लुक्का अक्सर आने लगा. बहेडी मे कोई काम भी न होता तो भी आकर 'परभु' का दर्शन कर जाता. गिरी की आदत सुनने की है, बोलने की नही. लुक्का अपनी परेशानी बताता तो सुनने के बाद अमूमन कुछ बोलता ही नही. लेकिन कभी अगर कुछ बोल देता तो लुक्का धन्य हो जाता.

आखिर मे एक दिन लुक्का ने सब-कुछ बता दिया.

गिरी सुनकर मुस्कराया. जैसे इस दिन के इन्तजार मे ही वह इतने दिनो से यहा बैठा हुआ था.

यह खतरनाक खेल था. लुक्का बोल चुकने के बाद डगमगा-सा रहा था. थोडा भी धोखा हो गया तो अजाम मामूली नही होगा.

गिरी ने एक चुटकी राख और उठाकर लुक्का को दी थी.

फिर एक दिन गिरी ने ही कई दाव-पेच बता दिए. जो हुनर बडे-बड़े पहलवानो मे नही है, कनफटे आराम से कर लेते है.

अवधूत का कोई असूल होता है क्या ? कुछ भी खा सकता है, कुछ भी कर सकता है और कही भी जा सकता है ! उसका कोई भरोसा भी नही होता. लुक्का यह इशारा समझ गया था. एक गढवाली औरत को वह लेकर आया था. गिरी प्रसन्न हुआ था. लुक्का अब इतने दिनो मे आते-जाते रहने की वजह से समझ गया था कि आखे कब-कब खुश होती है. उसके बाद रात के अधेरे मे और भी औरते आने लगी थी.

लुक्का छिपाकर विलायती बोतल भी ले आता था. लेकिन गाँजे की चिलम मे जो दम मारे, उसे विलायती और पानी के बीच कोई फर्क कैसे नज़र आएगा ? बाद मे वह अपना ही बनाया माल लेकर आता था.

लुक्का इस बीच दो बार रामचौरा मठ भी हो आया. वहाँ की जो ख़बरे मिलीं, उनमे कोई उम्मीद नही बधती. भोलानद गिरी अगर किसी भी सूरत मे एक बार शभू गुसाई बनकर गद्दी पर बैठ पाता, सारा मामला अपने आप ही सभल जाता. कप्तान, कलक्टर मक्खी मे बडे होते है क्या ? ऊपर से हुकम आता और वे चुपचाप अपने-अपने दरबे मे घुस जाते. इसी उम्मीद मे शभू गुसाई इतने दिनो तक भोलानद गिरी बनकर यहाँ-वहाँ की खाक छानता रहा. लेकिन अब लगता है, रामचौरा मठ मे सारे कनफटे आपस मे लड-भिड कर ही खत्म हो जाएगे और गद्दी के हकदार को जान बचाने को मारे-मारे फिरना पड़ेगा.

लुक्का रामचौरा मठ हो ज़रूर आया था. लेकिन गिरी असल मे जानना क्या चाहता है, इस बारे में कुछ सोचा नही. साधु-महात्मा, अवधूत के खयाल का कोई

ठिकाना भी कहाँ होता है ? एक-आध बार पहलवान को कुछ पूछने की इच्छा भी हुई थी लेकिन हिम्मत नही हुई. अवधूत आदमी किस बात पर कब नाराज़ हो जाएगा, कौन जानता है ?

रुद्रपुर मे पजाबियों की ख़ासी बस्ती बनी हुई है.

पाकिस्तान बनने के बाद जो लोग हिन्दुस्तान आए है, उनमे से कुछेक लोगों को सरकार की तरफ़ से रुद्रपुर मे जमीने दी गई हैं. तराई का इलाका है. ठीक-ठीक जुताई अगर हुई तो मिट्टी सोना-चादी उगलती है.

रुद्रपुर पहले मामूली-सा गाव था. रेलवे का एक स्टेशन था और बगल से नैनीताल जाने वाली एक सड़क थी. कभी उसमे कोई बस गुजर गई या काशीपुर, काठगोदाम से लकड़ियो से लदा कोई ट्रक बरेली की तरफ निकल गया, बस लेकिन अब बहुत बड़ा कालेज बन गया है. दूर-दूर से लड़के पढ़ने आते है. पढानेवाला म कई तो गोरी चमड़ी वाले भी हे. कुलमिलाकर रुद्रपुर अब इतना बदल गया कि पहचानना तक आसान नही है.

लुक्का पहलवान अपने शागिर्दों के साथ बहेड़ी से आगे कभी नही गया. लेकिन मक्खन ने सुझाया तो उसे सोचना पडा. रुद्रपुर मे तो सड़को पर खजाना बिखरा है. बस जाओ और बटोर लाओ.

इससे पहले रुद्रपुर मे होकर नैनीताल, रानीखेत की तरफ लुक्का वैसे कई बार जाता रहा है एक दफा रानीखेत मे जिस धरमशाले म ठहरा था, उसके पीछे वाली चाय की दुकान पर सर पर रुमाल बाधे एक औरत चाय-बिस्कुट का सौदा करती दिखाई पडी थी. लुक्का को तमाम बाते पता करन मे ज्यादा वक्त नही लगता. उस औरत ने रात को एक छोकरी पहुचा दी थी, अठारह-बीस बरस की एक पजाबन छोकरी. रडीबाजी के वक्त कुल-गोत्र पूछने की आदत लुक्का की नही हे. लेकिन उसने पूछा था और अपने कपड़े उतारते हुए छोकरी ने बताया था कि वह रुद्रपुर की हे.

लुक्का का रुद्रपुर से बस इतना ही रिश्ता है.

इसके बाद रानीखेत कितनी ही बार सैर-सपाटे के लिए गया है. कभी-कभी मक्खन और अनीस भी साथ हुए है. लेकिन वह पजाबन फिर आगे कभी नहीं मिली. चाय बेचने वाली औरत ने मुस्कराकर जवाब दिया था—दरिया का पानी एक ही जगह थोड़े ही रुका रहता है ? जहा भी ढाल मिल गई, बहकर आगे निकल गया

लुक्का ने अपने दिल की बात फिर गिरी के सामने रख दी थी.

गिरी को शायद गुस्सा आ गया था. औरत से जो मर्ज़ी करो लेकिन कभी गले मत लगाओ. लगाया तो बर्बाद हो गए. लुक्का समझ गया था.

गिरी ने ही फिर रुद्रपुर के खजाने उठाने की तरकीब बताई थी. मर्द हो तो चलो और बटोर कर, वापस आकर ऐश करो.

लुक्का खुद जाकर रुद्रपुर का सब-कुछ देख आया.

लेकिन आकर उसने जितनी खबरे गिरी को दी, उनमे भी कही ज्यादा सूचनाए गिरी ने दे दी. कहा क्या मिल सकता है, उस बारे मे एक ख़ासा नक्शा भी बनाकर सामने रख दिया.

लुक्का हक्का-बक्का रह गया था. धन्य हो 'परभु !'

लेकिन गिरी मिट्टी का लौंदा नही है जो थोड़ी-सी तारीफ की और उसी से घुल गया. ऐसे शब्दो का असर उस पर नही होता.

इसके बाद एक महीने का वक्त लुक्का ने सिर्फ तैयारी में लगाया. गिरी ने जो-जो हुक्म दिया, एक-एक बात याद रखी और समझ गया कि चूहा-छछुंदर मारकर

हाथ गदे करने मे फायदा भी क्या ? जब शिकार ही करना है, हाथी और शेर पकडो

●●

रुद्रपुर मे रेलवे लाईन मे आगे बाई तरफ पजाबी बस्ती है. पन्द्रह-एक साल पहले जब यह बस्ती बसने लगी थी, किसी ने सोचा भी न था कि थोडे दिनो बाद यह इलाका जगमग बन जाएगा चावल की अच्छी खेती होती है. इसके अलावा दूसरी फसले भी बुरी नही होती अब ट्रैक्टर भी चलने लगा है इन लोगो ने अपने आप ही कुआ खोद लिया और पम्प मे पानी खीच लेते है.

खेती सभी के लिए बुनियादी धधा है लेकिन जिन लोगो ने अच्छी कमाई कर ली वे बिजली वगैरह के सामान दिल्ली मे मगवा दुकानदारी करते है. कुछ लोगो के पास कपडो और बर्तनो की दूकाने है. पहले ये लोग साहूकार को फसल बेचते थे अब खुद ही मण्डी ले जाते है और ज्यादा भाव लगाकर बेचते है ट्रैक्टर होने की वजह से माल ले जाने मे भी खास दिक्कत नही होती

तराई का यह इलाका जैसे अब तक छिपा हुआ था

लुक्का पहलवान बरेली मे ही पैदा हुआ और यही की धूल-मिट्टी के बीच पलकर बडा हुआ लेकिन बहेडी मे आगे की कभी सोची ही नही भोलानद गिरी ने रास्ता बताया तो वह बाग-बाग हो गया था

लेकिन गिरी ने होशियार भी कर दिया था पजाबी औरत भी मर्द से कम नही होती इस दाव मे अगर कोई गलती हो गई तो वे फिर वही दफनाके रख देगी

गिरी ने तीन दिन तक लुक्का को वहा का सारा नक्शा समझाया था नक्शा समझकर पहलवान दो बार अपनी आखो से फिर से एक-एक गली देख आया था

एक ट्रक वाले के साथ इतजाम हो गया लुक्का और भोलानद गिरी के साथ-आठ-दस आदमियो को बरेली से रुद्रपुर पहुचाना और थोडी देर मे वहा से वापस आ जाने का ठेका था ऐसे ठेके अक्सर ही तय करने पडते है चार-छह ड्राइवरो से पुराना रिश्ता भी है

ट्रक तय हो गया तो बस उधर का कोई और काम बाकी नही था लुक्का बरेली से दस शागिर्दो को लेकर और बहेडी से गिरी को उठाकर गोली की रफ्तार से रुद्रपुर जा पहुचा

रात का सन्नाटा था

सबके हाथ अपना-अपना हथियार था दो लोगो के पास बन्दूके थी, तीन के पास पिस्तौल थे बाकी लोगो के पास तेज धार वाले छुरे थे भोलानद गिरी के पास एक कुल्हाडी थी कुल्हाडी के आगे उसे आज तक कोई भी हथियार जचा ही नही

इसके बाद सरदार हरविन्दर सिह के घर डाका पडा हरविन्दर सिह ने गेहू, चावल बेचकर जितना कमाया था, उससे कही ज्यादा बिजली के सामान की सौदागरी से अपने पास जमा किया था यह कारोबार ही ऐसा है कि दो ही नम्बर का धधा चलता है यह बात इनकमटैक्स वाले भी जानते है मेहनत-मजदूरी करके अगर सिर्फ दो वक्त की रोटी ही मिली तो लानत है इस धधे पर हरविन्दर सिह ने लोहे की मजबूत तिजोरी मे अपना सब-कुछ भर रखा है. कोई अगर आकर सरदारनी को उठा ले जाए, हरविन्दर सिह शायद उतना भी मजूर करले लेकिन तिजोरी की चाबी किसी को दे नही सकता

डाका पडा तो हरविन्दर सिह हडबडा कर उठ बैठा घर मे सिर्फ सरदारनी थी बेटो के नाम से अलग-अलग जमीने और मकान है अलाटमेट के बाबू को रिश्वत देकर सरदार ने यह इतजाम कर लिया था

आंख खुली तो सरदार शुरू में हड़बड़ाया ज़रूर था लेकिन ज्यादा देर तक घबराया हुआ नहीं बैठा रहा. घर में बन्दूक थी. आदमी क्या था, पूरा शेर था. कहते हैं, शेर की एक टांग भी अगर कट गई, उसी हालत में मीलों दौड़ता चला जाएगा. हरबिन्दर अंदर की तरफ भागने लगा तो मक्खन समझ गया कि बन्दूक उठाने जा रहा है. उसने अपने हाथ का छुरा घोंप दिया. इत्तफाक से छुरा पेट की बजाय जांघ पर लगा.

लुक्का ने इशारा कर दिया था कि कोई गोली न चलाए. गोली बचने के लिए आख़िर हथियार है. बग़ैर समझे अगर इसका इस्तेमाल हो गया तो लेने के देने पड़ जाते हैं. बन्दूक की आवाज़ सुनकर अगर मुहल्ला इकट्ठा हो गया तो बचकर निकलने का रास्ता नहीं मिलेगा.

जख्म के बावजूद सरदार पीछे वाले कमरे की तरफ भाग ही रहा था कि सरदारनी बन्दूक लेकर सामने आ गई. सरदारनी को शायद बन्दूक चलाना आता नहीं था, वह हरविन्दरसिंह को बन्दूक थमा रही थी.

भोलानंद गिरी अब तक चुपचाप खड़ा था, अब उसने वही किया, जो कभी भवानी गुसाईं पर किया था. हरबिन्दर की गर्दन धड़ से लगभग अलग हो गई थी. फौव्वारे की तरह खून निकल रहा था. सरदारनी पर फिर हमला करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी. ख़ून देखते ही वह बेहोश हो गई.

फिर लुक्का ने तिजोरी की चाबी ढूंढ़ने के बजाय ताला ही तोड़ दिया. नोट जितने थे, उतने तो थे ही, सोने की छोटी-छोटी ईटें भी रखी थी.

कुलमिलाकर पन्द्रह मिनट लगे थे.

वे बाहर निकलने लगे तो अड़ोस-पड़ोस मे चार-छह लोग निकल आए थे. लेकिन हाथ में कुल्हाड़ी और छुरे, बन्दूक देखकर बहुत ज्यादा हुज्जत किसी ने नहीं की. ट्रक पर बैठने के बाद लुक्का ने एक हवाई फायर भी कर दिया.

●●

रुद्रपुर वाली इस घटना के बाद लुक्का भोलानंद गिरी का भक्त हो गया था. वही फिर गिरी को पीपल घर के तहख़ाने तक ले आया था. जब तक गिरी यहां रहा, व्यायामशाला वालों के साथ लुक्का के शागिर्दों की कई बार मुठभेड़ होती रही है. असल में बात यह है कि सिपाहीलाल जैसे लोग गिरी को नेताजी सुभाष चंद्र बोस ज़रूर मानते रहे हैं लेकिन नौरंगी वकील को यह बात शुरू से ही झूठ लगी थी. इस वजह से सारे व्यायाम शाला वाले भी बात का यकीन नहीं कर सके थे.

●●

दामोदर लुहार की उम्र अब काम करने लायक तो नहीं रह गई लेकिन काम के बिना चलेगा कैसे ? काम आख़िर करना ही पड़ता है. जब खांसी उठती है, लगता है, कलेजा फट जाएगा. पड़ोस का बन्ने मिया कई बार कह भी चुका है लेकिन अब तो दामोदर को यह सब सहने की आदत-सी पड़ गई है.

आंखों के ऊपर जो निकल के फ्रेम का गोल चश्मा है, उससे कई दफा अब

काम नहीं चलता सामने का आदमी धुंधला-धुंधला-सा नजर आता है अपने लुहार खाने से घर लौटते हुए कभी-कभी रात भी हो जाती है सामने कोई गड्ढा हो या पत्थर, अब रात-बिरात दिखाई नहीं पड़ता कई दफ़ा दामोदर गिर भी चुका है.

लेकिन लुहार शायद नसीब के आगे कुछ और मान ही नहीं सकता यह आखिर नसीब ही है जो जिन्दगी गुजर-भर रही है वर्ना चार-चार दिन के लौंडे-लपाड़े मिलीभगत में 'गोरमिंट' का काम पटाते हैं और चुपड़ी रोटी खाकर हाथी-जैसे बन जाते हैं

दामोदर ने कब चुपड़ी रोटी खाई है, दिमाग में काफी जोर लगाकर सोचना पड़ता है जब फिरंगी जिन्दा था, वहां कनस्तर-भर देसी घी आता था उसकी महक दामोदर को आज भी याद है नैना उस घी में फिर कभी कचौरी तलती, कभी पूरी-उसका एक हिस्सा कई बार दामोदर के यहां भी आता रहा है, लेकिन इसके अलावा भी दामोदर के मांगे बिना नैना कई दफा कटोरा भर कर घी देती रही है. घर में घी रहता तो खाने का मजा ही कुछ और होता.

लेकिन दामोदर का यह सींकिया जिस्म देखकर कोई सोच नहीं पाएगा कि इस आदमी ने कभी घी सूंघा भी हो लगता यही है कि कब्रिस्तान में हड्डियों का ढांचा निकालकर किसी ने एक काली चमड़ी भर चढ़ा दी है उस काली चमड़ी में पीठ पर दाद के गोल-गोल चकत्ते हैं जब ज्यादा खुजली होती है खुजाने में खून तक निकल आता है इसके लिए दामोदर जरूर चुंगी के खैराती दवाखाने से कई मर्तबा दवा लाता रहा है, लेकिन कभी कोई फर्क नहीं आया फर्क शायद उस इलाज से किसी को पड़ता भी नहीं है फिर भी तकलीफ ज्यादा बढ़ जाती तो दामोदर लाईन में लगकर दवा ले ही आता है

बन्ने मियां कभी दुपहर के वक्त अगर हाथ खाली हुआ तो मजाक कर देता है—तुम ठैरे पीर-पैगम्बर आदमी···छोटी-मोटी तकलीफों का मलाल नहीं होता

दामोदर को शायद यह बात खास समझ में नहीं आती सीधी-सीधी बात करो तो दिमाग में कुछ घुस भी जाएगा लेकिन अगर घुमा-फिरा कर बात की तो कुछ भी समझे बगैर सिर्फ फिक्क-से हंस दिया

दामोदर हथौड़ा चला रहा था बन्ने मियां ने मजाक किया तो हथौड़े को रोक कर वह थोड़ा हंस पड़ा, बस

कई बार बन्ने मियां भी तरस खा जाता है दामोदर को खोद-खोद कर देखने के बावजूद उसे समझ में नहीं आता कि किस उम्मीद में यह शख्स हथौड़े की चोटों के साथ हांफ-हांफ कर सांस लिए जा रहा है !

शाम को कई दफा दो-चार टुकड़े गोश्त बच भी जाते हैं बचा हुआ माल बन्ने मियां अपने घर ही ले जाता है लेकिन कभी-कभार पत्ते में बांधकर दामोदर को थमा देता—भाभीजान को खिला देना.

अगले दिन दामोदर उस गोश्त की तारीफ दिन-भर करता रहता. जैसे डकार लेते ही उसकी खुशबू निकलकर इन लोहे-लक्कड़ों तक में छा जाएगी.

जिन्दगी, खैर, जैसी भी है, गुजर ही रही है उसके लिए ज्यादा कसमसाने से फायदा भी क्या ? लेकिन नैना को लेकर दामोदर की छाती बम फटी जाती है. कभी उसने किसी से जिक्र तो नहीं किया लेकिन नैना इतना समझती है

कभी भगीरथ के 'होटल' के सामने से गुजरना हुआ तो लगता है, मुहल्ले वाले जैसे अभी दामोदर को पकड़कर कपड़ा उतरवा लेंगे दामोदर इधर-उधर देखे बगैर चुपचाप गुजर जाता है

लेकिन कभी ज़माना था जब दामोदर के सीने के अंदर भी ढाईमन का कलेजा था. इस बिहारीपुर मे वह पैदा हुआ था. उसका बाप था ठठेरा. बदरी ठठेरा खुद ही कासे-पीतल के बर्तन चार कारीगर रखकर बनाता था, बड़े-बड़े पतीले, भगोने, तसले वगैरह बनते थे.

तब यह मुहल्ला ऐसा नही था. अब तो एक के ऊपर दूसरा मकान खड़ा है. सब जैसे छोटे-से छप्पर के नीचे किसी तरह सर ठूसकर खड़े भर है. तब कई घर तो कच्चे ही हुआ करते थे. मिट्टी की दीवारो के ऊपर खपरैल लगा लिया तो घर बन गया. सामने लकडी और टीन जोडकर एक दरवाज़ा भी लगा लिया. बस, और चाहिए भी क्या ? लेकिन बदरी ठठेरे के घर की दीवारे ईंटों की थी. मिट्टी से ईंटे जोड़ दी जाती और चार दिन मे बगैर सीमेंट और चूने के मकान बनकर तैयार हो जाता. लेकिन इस तरह के पक्के मकान तब इस मुहल्ले मे एक तो पेशकार का था और बस चार-छह ही थे. पक्का मकान जिसे बनाना होता, वह या तो खत्रियान मे बनाता या बमनपुरी, गुलाबनगर वगैरह मुहल्लो मे.

मकान की वजह से भी बदरी ठठेरे की इज्जत थी दो बीवियो के साथ ठठेरा राजे-महाराजो की तरह ठाठ से बसर कर रहा था. बडी बीवी से कोई बच्चा नही हुआ था और वह बीमार रहने लगी थी. उसकी छोटी बहन को फिर बदरी ब्याहकर ले आया था. सौत होने के बावजूद दोनो बीविया बहने थी, इसलिए लडाई-झगडे नही होते थे. पहले बडी ही घर का सारा हिसाब रखती थी. तिजोरी तक की कुजी उसके पास रहती थी ठठेरे को जब जरूरत पडी, माग लिया. छोटी जब यहा आई, तब भी साल-भर यही तरीका चलता रहा लेकिन बाद मे एक दिन बडी ने छोटी के हाथ चाबी का गुच्छा थमा दिया था

बदरी ठठेरा सुबह से शाम तक काम पर निगरानी रखता और रात को बैठ कर दिन-भर का हिसाब लिखता कई दफा हिसाब लिखते हुए रात के दो-दो बज जाते थे. फिर सुबह से वही काम. बडी की तबियत जिस दिन ज्यादा खराब रहती, बदरी शाम को थोडा पहले घर आ जाता दमे का मर्ज ही ऐसा है कि मरीज़ न मरता है न जीता है. कुतबखाने से हकीम बुलाकर बदरी कई बार बडी को दिखवा भी चुका लेकिन फायदा अगर हुआ भी है तो बस थोडे से अरसे के लिए ही कडवी-कडवी घुट्टिया पीते-पीते बडी को लगता है, अदर का खून भी अब कडवा हो गया तकलीफ के बावजूद अब वह हकीम की दवा पीना नही चाहती फिर भी छोटी पीछे पड जाती है और किसी-न-किसी बहाने पिला ही देती

छोटी की शादी के सालभर बाद ही दामोदर पैदा हो गया था इससे बदरी को शायद सिर्फ तसल्ली ही हुई थी लेकिन बडी अन्दर-ही-अन्दर खुश होकर कुप्पा हो गई थी. छोटी जिस दिन सौरी मे गई, हालत अच्छी नही थी दाई बहुत तजुर्बेकार थी कई निहायत गडबड मामलो को भी अपने हुनर से सभालती रही है लेकिन छोटी को आखिर के दिन देखकर वह भी थोडा घबरा-सी गई थी. बच्चा पेट मे उल्टा पडा था बडी ने उसका हाथ पकडा और मिन्नते करने लगी जैसे दाई चाहे तो बच्चा अपने आप सीधा भी हो सकता है ! खैर, कुछ मुश्किले जरूर पेश आई थी लेकिन आखिर मे बच्चा सही-सलामत पैदा हुआ था. छोटी को तदुरुस्त होने मे ज़रूर तीन महीने लग गए थे.

दामोदर को पाकर बडी फूल इसलिए उठी कि अब ठठेरे के आँगन मे कोई तो दीया जलाने वाला आया. बिना पूत जने अगर कोई मर गया तो उसकी आत्मा को शाँति नही मिलती.

अपनी बीमारी के बावजूद बड़ी ने फिर दामोदर को पालना शुरू किया. कभी छाती का दूध पिलाना होता, तो जरूर छोटी उठा ले जाती वर्ना बाकी जो कुछ भी करना होता, बड़ी ही करती रही है

इसके बाद ठठेरे की छह लड़कियां और पैदा हुई थी छह म मे दो तो गुजर गई और बाकी चार ससुराल मे है

बदरी ठठेरा ऊपर मे हमेशा ही संजीदा लगा है. कभी भी किसी मे ज्यादा हसी-मजाक नही किया, वैसे हसी-मजाक के लिए वक्त ही कहाँ था ? कभी फुर्सत मिल गई तो बेटे को थोड़ा लाड-प्यार-भर कर लिया, बस

उन दिनो बिहारीपुर मे कोई स्कूल नही था आजकल जो चुगी का स्कूल यहाँ है, वह तब नही था. तब कुतुबखाने मे एक सरकारी स्कूल था बदरी चाहता तो अपने बेटे को यहा भेज सकता था लेकिन उस झमेले मे वह पड़ा ही नही बड़ी की भी कोई खास मर्जी नही थी आखिर ठठेरे का बेटा है जिन्दगी-भर कांसे-पीतल के बर्तन बनाता-बेचता ही तो रहेगा. थोड़ा-बहुत हिसाब अगर आ गया तो बाकी किसी बात की परवाह नही रही बदरी भी आखिर सारा हिसाब-किताब खुद ही संभालता है और स्कूल-मदरसा कभी नही गया

दामोदर फिर शुरू मे ही स्कूल के बाहर रहा वैसे बदरी ने एक लकड़ी की फट्टी खरीद दी थी और कभी-कभी गिनती वगैरह बता देता था

दीवाली मे पहले रात-दिन काम होता था और कई-कई बार तो बदरी को रोटी तक खाने का वक्त नही मिल पाता था सारी निगरानी अकेले ही रखनी पड़ती ऊपर मे कभी बाजार भागना पड़ता कभी स्टेशन

रुहेलखण्ड के इस इलाके मे ठठेरो के काम और कांसे-पीतल पर नक्काशी के लिए मुरादाबाद कम-से-कम सौ बरस से मशहूर है पहले जब अंग्रेज थे, यहाँ के ठठेरे का काम देखकर वे भी कई दफा इनामात बाँटते रहे है आज वह पुरानी बात जरूर नही है लेकिन नाम अगर एक बार हो गया तो बीस-पचास साल तक गाड़ी उसी के जोर पर निकल जाती है

मुरादाबाद भी पड़ोस का इलाका है लेकिन बदरी ठठेरे के माल की माँग दूर-दूर से आती है नक्काशी का काम जरूर बदरी नही करता लेकिन जहा तक माल की मजबूती का सवाल है, वहाँ रत्ती-भर का भी धोखा आज तक किसी को नही मिला.

दिल्ली तक से थोक व्यापारी आते है और बयाना थमाकर चले जाते हैं आज तक बदरी ने किसी को धोखा नही दिया वक्त पर माल लकड़ी की पेटियो मे भर कर गाड़ी पर चढ़ा दिया जाता भाव भी बदरी दो पैसे कम ही लगाता. मुनाफा इससे थोड़ा कम जरूर होता लेकिन एक कटोरी भी फिर यहाँ पड़ी नही रहती.

बाहर, खैर जितना माल जाता है, वह तो जाता ही है लेकिन बरेली मे भी तो बाजार है. बदरी के यहाँ के कटोरे और गिलास इतने मशहूर हैं कि बर्तन वाले बाकी चीजे भले ही दूसरे ठठेरो से ले ले लेकिन ये दो चीजे जब तक बदरी मना नही कर देता, औरो को बयाना नही देते

दिल्ली का एक पंजाबी थोक व्यापारी एक दफा पीछे ही पड़ गया था कि बरेली छोड़कर वह भी वही चला चले बदरी ने पंजाबी को मना जरूर कर दिया था लेकिन इस प्रस्ताव पर सोच भी रहा था दिल्ली की बात ही और है, दुनिया-भर के लोग आते-जाते रहते है. काम वाला आदमी हुआ तो कई दफा उसे कोई-न-कोई मौक़ा दिया तो बर्तनों की एक दुकान भी वह खोल सकता है.वैसे ठठेरी भी अपनी जगह चलती रहेगी. दो-दो जगह से आमदनी होने लगे तो एक पक्की छत वाला

मकान भी कभी बन सकता है

बदरी की यही एक तमन्ना रह गई आठ-दस कमरो वाला एक दुमजिला मकान हो सामने जो पेशकार का मकान है, उसकी तरफ देखकर कई बार वह खर्च के बारे मे एक हिसाब भी लगा लेता, मकान का नक्शा तक दिमाग मे एकदम आईने की तरह साफ है जैसे राज को बुलाकर समझा-भर देने की देर है

इस तरह के सपनो की बाते अगर किसी से की तो सिर्फ बडी से छोटी वैसे अच्छी ही है लेकिन जैसे उसके अन्दर समझदारी बडी की तरह है ही नही कई दफा मामूली-सी बातो पर वह इस तरह नाराज या खुश हो जाती है कि या तो भौहे सिकोड कर बड-बड करती रहती या जोरो से हस पडती बदरी को ये दोनो ही बाते नापसद है लेकिन इन मामलो को लेकर उसने कभी फसाद नही किया कभी कुछ समझना होता तो बडी समझा देती सौत होने के बावजूद बडी आखिर बहन है छोटी फिर हुज्जत नही करती

दिल्ली जाकर बसने की बात पर बदरी लगातार दस दिन तक सोचता रहा लेकिन आखिर तक तय नही कर पाया कि करना क्या चाहिए आखिर मे बडी के सामने दिमाग की यह परेशानी रखी तो उसने सुनते ही मना कर दिया बडी की अक्ल का भरोसा उसे शुरू से रहा है पढी-लिखी वह जरूर नही है लेकिन कई दफा बदरी को ऐसे-ऐसे रास्ते बताती रही है कि कई मुश्किले आसानी से हल होती रही है बडी ने समझाया कि दरिया की मछली दरिया मे ही रह सकती है, आलीशान हवेली के पोखर मे लाकर उसे रख दो तो वहा वैसे सास वह लेती रहेगी लेकिन घुट-घुटकर हर पल मरती रहेगी

बदरी को जवाब मिल गया था

बरेली का एक-एक चप्पा अब अपना जाना-पहचाना है दिल्ली जाकर कही फिर वापस ही लौटना पडा तो न तो यहाँ का रह जाएगा, न कही और का ही वह पजाबी जब भी माल लेने आता किसी-न-किसी बहाने दिल्ली की कहानी जरूर शुरू करता

बदरी उसकी बाते सुनता और मुस्कराकर हाथ जोड देता.

बदरी ने फिर बरेली मे ही एक दूकान लेने की सोची थी कुतुबखाने मे अगर कोई कोठरी भी मिल जाती, साल-भर के अन्दर वह अपने आपको अच्छी तरह से जमा लेता वह समझ गया था कि मुनाफे का असली हिस्सा फुटकर बिक्री मे आता है वैसे उसके भी कुछ जानी ग्राहक है जो एक टोकरी भी अगर लेनी हुई, ठठेरे के पास से ही लेते इसमे लेने वाले और देने वाले दोनो को एक ही फायदा रहता लेकिन ऐसे लोग हैं ही कितने ?

यह बात भी बदरी ने बडी के सामने रखी

बस, पक्का दुमजिला मकान एक बार बन जाए तो बदरी ठठेरा समझ लेगा कि ऊपर वाला आँख बन्द किए नही बैठा है

प्रस्ताव को बडी ने ध्यान से सुना और कुछ सोचकर गर्दन हिला दी – दूकान मे गद्दी लगाय कै थाली-गिलास तौलते रहोगे तो कोई हमा नौकर सब उडाय कै हवा हो जांगे

यह बात वैसे बदरी ने भी सोची थी नौकर-चाकरो के सर पर खडे रहो तो काम होता है हिले नही कि वे भी आराम से बीडी का कश खीचने लगे अकेले होने की वजह से दौड-भाग भी खुद ही को करनी पडती है जब भी ऐसे मौके आए, काम का जरूर हर्ज होता रहा है ये सारी बाते बदरी को समझ मे तो आती हैं लेकिन दिल

फिर सिकुड़ कर रह जाता है

तब काम में भी मन नहीं लगता.

बड़ी किसी बहाने कुछ समझाती है फिर. उसको इस समझ की वजह से ही आज भी वह छोटी के सामने बहुत बड़ी है.

आखिर में बदरी ने बर्तन बनाने के अलावा दूसरी बातें सोचनी ही बन्द कर दीं. इसी में जितना हो जाता है, कोई कम नहीं है. खूब चुपड़ी रोटियाँ खाओ और मौज से पड़े रहो.

दामोदर को कई दफ़ा बदरी अपने साथ काम की जगह ले जाता रहा है. ठठेरे का बेटा जब ठठेरा ही बनेगा तो बचपन से ही सब-कुछ समझ ले तो अच्छा है. दुमंज़िला मकान न सही, लेकिन जब दामोदर सब-कुछ संभालने लायक हो जाएगा, बदरी सिर्फ पैर पर पैर उठाकर हुक्का गुड़गुड़ाता रहेगा . भविष्य की इस कल्पना से भी बदरी कई बार झूम उठता है.

कभी-कभी बदरी को शक होने लगता है. दामोदर की आखों में झाँककर वह तसल्ली कर लेना चाहता कि उसका शक झूठा निकले लड़का चार बरस का हो गया लेकिन अंदर से जैसे स्फूर्ति ही नहीं आती. जहाँ भी बैठा दिया वहीं बैठ गया. बहुत हुआ तो थोड़ा-सा रो-पीट लिया लेकिन ज्यादा उछल-कूद उसने कभी की ही नहीं. कहीं ऐसा न हो कि लड़का आखिर में गोबरदास होकर ही रह जाए.

एक-आध दफा बदरी ने बड़ी से इस बात का जिक्र किया था. बड़ी ने हंस कर समझा दिया—अपने नाना पर गया है दामोदर.

बदरी को इससे कुछ तसल्ली हुई थी.

दामोदर अगर अपने नाना पर ही गया है तो नसीब बहुत अच्छा है. अपने ससुर की हमेशा इज्जत ही की है बदरी ने. कामगज में बर्तनों का ही काम वह करता रहा है और जब तक जिन्दा था, पूरा शहर डरता था. अच्छा कारोबार था घर में कभी किसी चीज़ की कमी हुई ही नहीं. पूरा दुमंजिला मकान था और गाँव में खेती की ज़मीनें भी थीं. बाद में चुनाव लड़कर चुंगी का मेम्बर बन गया था. आज वह आदमी जिन्दा नहीं है लेकिन स्टेशन पहुंचकर किसी भी तांगे वाले को बताओ तो ठिकाने पर पहुंचा देगा.

बड़ी ने कहा तो बदरी को यकीन आ गया—दामोदर कभी अपने नाना की तरह बड़ा आदमी बनेगा. बदरी को पता नहीं क्यों लगता है कि बड़ी झूठ नहीं बोल सकती उसे अपने अंदर कुछ महसूस होता है तभी इस तरह की बात करती होगी.

बदरी दामोदर को बड़ी के पास सौंपकर निश्चिंत भी है. छोटी की आदत कुछ गुस्सैल किस्म की है. दामोदर के बाद जो लड़कियां हैं, सब किसी-न-किसी बहाने मार खाती रहती. बड़ी कितनी बार समझा चुकी कि आखिर बच्चों ने हुड़दंग न मचाया तो क्या बुड्ढे मचाएंगे ? बदरी भी कई बार टोक चुका है लेकिन छोटी अपनी आदत से बाज़ नहीं आती.

बहन मार खाती तो दामोदर बड़ी या बदरी से लिपटकर मजा लूटता. उसे इस बात पर बेहद खुशी होती कि पूरे घर में उसका दर्जा औरों से कतई अलग है. उस छोटी-सी उम्र से ही दामोदर सब समझने लगा था.

●●

लेकिन देखते-ही-देखते क्या से क्या हो गया ! बदरी ठठेरे का बेटा दामोदर आख़िर में लुहार-भर रह गया. कहां बाप का दुमंजिला मकान का सपना था और कहां दामोदर की यह फटेहाली कि चुंगी का जब टैक्स भरना पड़ता, तो नानी याद आ

जानी घर में सफेदी बदरी के मरने के बाद एक या दो बार जरूर हुई थी लेकिन अब तो दीवारों पर लगी ईंट की परतें भी निकलने लगी है.

फिर भी सर ही छुपाना है तो आदमी झोपडी मे भी गुजारा कर ही लेता है. लेकिन यहा तो साँस लेना तक दूभर हो गया. दामोदर अपनी चाल मे चलता है तो सामने कौन है—मर्द कि औरत, इतना तक भी तो नही देखता. ऐसे आदमी को भी कोई छेड़े तो यह कहां का तरीक़ा है ?

कुए के पास शंकर खडा था.

मगल के दिन कुतुबखाने से लेकर नैनीताल रोड तक का सारा बाजार बन्द रहता है, सो उसकी छुट्टी थी. सुबह से लेकर शाम तक यह इस गली से उस गली तक मटरगश्ती करता रहा और अब नवाब की तरह कुए के चबूतरे पर बैठकर मुहल्ले की कहानी बता रहा है. घटे-भर बाद व्यायामशाला मे जाने का वक्त होगा. तब तक के लिए वह खाली है

शकर के साथ जगदम्बा भी था वह बीडी पी रहा था. अंदाज था सिग्रेट पीने का. थोड़े फासले पर ढलाव से कुछ हटकर रामधनी और गेंदालाल भी थे वे शायद बम्बई के समदर या दिल्ली की कुतुबमीनार पर कोई बहस कर रहे थे.

दामोदर गुजरने लगा तो शकर ने आवाज से रोक लिया—मेल गाडी की तरह भागे जा रहे हो लुहार···

ऐसी बात के बाद रुकना ही पडता है. दामोदर रुका और अपने बचे हुए चार-छह दातों के बीच से हंसने लगा. हंसना शुरू किया तो खांसी आ गई थी. यह हंसी कृतज्ञता की थी या किसी और वजह पर, इसका पता शकर को नही चला

- तुम लुहार मालगाडी ही रह गए. शंकर बोला

—नाय समझे ? जगदम्बा ने पूछा.

दामोदर समझ नहीं पा रहा था कि क्या जवाब दिया जाए !

जगदम्बा ने समझा दिया - लौण्डिया तुमारी फिरंगी को खाय के पचा भी गई और अब भी देखो छम-छम छमिया बनकै नाच रई है.

दामोदर के होंठ खुले थे. अब बन्द हो गए. वह फिर चलने लगा.

शकर ने रोक लिया – जाते कहाँ हो ? बात नाय सुनोगे ?

दामोदर का चेहरा उतर गया. चेहरे की खाल काली है, वर्ना पता चलता कि रंग में भी फ़र्क पड़ गया है

—तुमें तो असली माजरा ही नाय मालूम ! शंकर फिर 'चचच्च' करने लगा.

तब तक रामधनी और गेंदनलाल भी सामने आ गए थे. आते ही गेंदनलाल खिक-खिक करने लगा. जैसे दामोदर से बढकर कोई और मजेदार मामला हो ही नही सकता.

जगदम्बा ने अपनी बांहें फैला लीं और समझाने लगा—पन्नाबाई को जानते हो कि नाय.

दामोदर ने स्वीकृति में सर हिलाया.

—चल, फिर तो तू आसानी से समझ लैगा. जगदम्बा बोला—पन्नाबाई के धंधे को मजे से चला रई है मेरी लौण्डिया.

दामोदर को ताज्जुब नही हुआ. ये लोग इसी तरह का कुछ कहेंगे, उसने लग-भग सोच ही लिया था न कहने से शायद दामोदर को अपनी समझदारी के बारे में शक पैदा होता.

शकर ने पूछा—सुना है, अब रामपुर बाग में दामोदर लुहार की कोठी बन

रई है ?

इस सवाल के पीछे इशारा इतना साफ़ था कि दामोदर की तरह के गौ आदमी ने भी समझा. समझने के साथ निहायत दयनीय हो गया.

जगदम्बाने जवाब दे दिया—मेम तो अब लाखों में खेलती है. आख़िर लुहार सही, बाप तो बाप ही होता है. कुछ उसका भी ख्याल रखेगी ही.

अब लुहार ने मुंह खोला—जे बात नाय कैना चाहे अपना गू चटाय लेव लेकिन ऐसी गाली नाय देना.

— गाली ? गेंदनलाल ने दामोदर की ठुड्डी पकड़ ली. मुह से मड़न की बदबू आ रही थी. बोला—दामोदर लुहार ठैरा बिहारीपुर मुहल्ले का इज्जतदार आदमी. कऊन माई का लाल गाली दे लेगा ?

सब कहकहा लगाने लगे.

दामोदर की बनियान मे अलग-अलग आकारों के कई छेद हैं. उनसे होकर जिस्म की काली खाल की परतें दिखाई पड़ रही है. घुटनों तक चढ़ी हुई जो धोती थी, वह भी लगभग तार-तार हो गई है. गेंदनलाल ने धोती का सिरा पकड़ लिया—अरे लुहार, कुछ तो शर्म करो.

दामोदर सकुचाने लगा. इस गेंदनलाल का क्या यकीन है ! मज़ाक-मजाक मे धोती तक खुलवा ले तो कौन रोक लेगा ?

—जे धोती बाँध कै घर से निकले ? च्चच्चच्च—गेंदनलाल ने पूछा.

रामधनी जोरों से हँसा.

—अब तो कोट और पतलून सिलाय लेव, जंचोगे खूब. कहकर गेंदनलाल बहुत दिनों बाद अंदर तक खुशी से भर उठा.

—लेकिन एक बात याद रखना. जगदम्बा ने बीड़ी का धुंआ उगल दिया—होंआ रामपुर बाग जाय कैं मुहल्ले वालन को भूल नाय जाना.

शंकर बोला—हम भी तुमसे मुहब्बत तो करते ही है, लुहार.

दामोदर को किसी ने कभी भी तिनका तक नही समझा. न समझे, इसके लिए रोना-गाना क्या ? लेकिन ऐसी बेइज्ज़ती भी किसी-किसी की ही होती है. दामोदर सोचता है लेकिन याद नही आता कि कब किसी का कुछ बिगाडा हो जो इतनी बडी सजा मिल रही है.

जब तक लुक्का पहलवान जिन्दा था, गेंदनलाल इन व्यायामशाला वालों से बहुत ज्यादा कभी भी घुलामिला नही. लुक्का की, कायदे की, शागिर्दी जरूर उसने नही की लेकिन मुहल्ले के मामलों में उसीका साथ देता रहा है. कई बार व्यायामशाला वालों से झगड़े-फसाद भी हुए हैं लेकिन पहलवान के गुजरने की ख़बर आते ही उसने अपना तरीका बदल लिया है. व्यायामशाला वालों से रिश्ता ख़ासा जुड गया और कभी-कभी वहाँ जाकर वह दण्ड-बैठक भी लगाने लगा है.

गेंदनलाल ने वही पुरानी गाली दुहराई—वो पेशकार का पोता है न, बिन्नू—सुना है, जो कुछ कमा कर लाता, नैना मेम के ही कदमों पर धर देता. उधर घर पर एक-एक आदमी आधी-आधी रोटी पर गुजारा कर रिया है. औरों के पेट पे ऐसे तो लात न मरवाओ, लुहार !

दामोदर की आंखों में ये लोग मिर्ची भी डाल देते या दो सलाखें चुभो देते, तो भी इतनी तकलीफ़ नहीं होती. यह शख्स धीरे-धीरे छोटा होता जा रहा है.

शंकर ने उसके सीने को उंगली से ठोंक दिया—इस सीने में जित्ता बडा कलेजा है न, उत्ता तो पूरे मुहल्ले का भी नाय होगा. क्यों लुहार, जे बात गाली तो

नाय है ?

आदमी का कद कभी घट कर एकदम खत्म भी हो सकता है, दामोदर ने अच्छी तरह महसूस कर लिया.

भगीरथ की दूकान का रेडियो बज नही रहा था. इस वक्त शायद फिल्मी गाने आते ही नही है. इसके बावजूद गेंदनलाल बहुत खुश था. उसकी दाई आख के नीचे एक गहरे जख्म का निशान है जब वह किसी बात पर खुश होता है तो गाल की चमड़ी सिकुडती है और ज़ख्म का वह दाग ताजा लगने लगता है कई दफा इतना भी लगता है कि इसमे अब खून टपक पडेगा.

दामोदर अगर इस वक्त आंखे बन्द कर लेना चाहे, तो कर पाएगा क्या? इतना यक़ीन या ताकत भी अब कलेजे मे कहा है ? नैना ने जैसे कलेजे को अपनी हथेलियों से भीच-सा लिया है.

●●

यह नैना आज सलाखे भोकती है लेकिन जब वह छोटी थी, मोम की-सी लगती थी. दामोदर को अपनी लडकी के रूप-रग पर थोडा-बहुत गुमान तो था ही कभी भी उसके पास खाने-पहनने की बेफिक्री जरूर नही रही लेकिन इस तगी के बावजूद नैना के लिए अच्छे कपडो का इन्तजाम वह हमेशा ही करता रहा है एक दफा होली पर उसे एक लाल रग का रेशमी फ्राक ले दिया. नैना पहनकर निकली तो राजकुमारी-जैसी लगने लगी थी दामोदर को लगा था, लडकी अपनी बे नसीबी से इस घर मे पैदा हुई है. किसी खाते-पीते घर मे पैदा होती तो राजकुमारी ही होती

उस बार होली के अगले हफ्ते वह बीमार पड गई थी. दामोदर को लगा, किसी की नजर ज़रूर लग गई है वर्ना अच्छी-खासी खेलती-कूदती लडकी थी, एकदम मे तोड़े हुए फूल की तरह मुरझा कैसे सकती है ! बुखार इतना चढा कि गोरी-चिट्टी लड़की तीन ही दिन मे काली पड गई.

दामोदर बेहद घबरा गया.

परसोराम वैद की दुकान तब भी ढाल पर उसी जगह थी दामोदर कभी भी वैद्य-हकीम के पास नही गया कभी बहुत ही जरूरत पड गई तो चुगी के खैराती दवा-खाने से कोई लाल पीला पानी ले आया और पी गया. वैसे पैसे की भी बात इसके पीछे है ही खैराती दवा मे फायदा क्या होता होगा, यह दामोदर नही जानता लेकिन मुफ्त मे इलाज होता है, इसमे बहुत तसल्ली मिलती है वर्ना आज का जमाना ऐसा है कि किसी डाक्टर के पास पहुचो तो वह लूट कर लगोटी तक निकाल लेगा.

दामोदर के पास पैसे का खास इतजाम नही था, फिर भी परसोराम के पास पहुंचा और लडकी का हाल बता दिया. वैद्य खाली बैठा था दामोदर जैसे आदमी मे दिलचस्पी होने की कोई वजह तो नही थी लेकिन, वक्त काटने के लिए ही शायद,वह उठ खड़ा हुआ था.

वैसे भी यह मुहल्ले का मामला है. परसोराम नही चाहता कि रुपए-पैसे को लेकर कम-से-कम मुहल्ले वाले कभी, पीछे से ही सही, कोई फब्ती कसे आदमी जहाँ रहता है, कुछ तो समझकर ही चलना पडता है. कभी अगर नुकसान ही हो गया तो वही सही लेकिन फायदा भी इस नुकसान से ही निकलेगा. तब परसोराम का इतना तजुर्बा तो नही था फिर भी यह मोटी बात वह समझ गया था

वैद्य अपना झोला लेकर दामोदर के यहा पहुचा था. दामोदर ने झोला अपने हाथ ले लेना चाहा था लेकिन परसोराम ने उसे लुहार को नही थमाया. दवा-दारू का मामला है. कभी झोला हाथ मे छूटकर गिर गया तो कौन-सी जड़ी किस बूटी

के साथ गड्ड-मड्ड हो जाएगी, पता भी नहीं चलेगा. दामोदर दीन-हीन की तरह हाथ मलता हुआ पीछे-पीछे चल रहा था.

नैना चारपाई पर आँख मूदे पड़ी थी.

इस घर में किसी ज़माने में एक कुर्सी जरूर थी, लेकिन अब वह कुर्सी नहीं लगती. बदरी ठठेरे ने कुतुबखाने के बढ़ई से दो कुर्सियां और एक छोटी मेज़ खरीदी थी. अब सिर्फ एक कुर्सी कहने को रह गई है लेकिन पीछे की तरफ वजन डालने से उसकी चूलें अलग होकर निकल जाती हैं. दामोदर अन्दर से कुर्सी उठा लाया और दीवार से लगाकर रख दी. परसोंराम उस पर बैठे तो चूलें हिल ज़रूर उठी थीं लेकिन दीवार की वजह से निकल नहीं आईं.

वैद्य बहुत बारीकी से नैना को देखते रहे. यह म्यादी बुखार है या मलेरिया, तय नहीं कर पा रहे थे. लड़की की आंखें, जीभ वगैरह देख लेने के बाद भौहें सिकोड़ लीं.

दामोदर वैद्य का चेहरा देखकर डर गया.

नैना की माँ घूंघट काढ़े कुछ फासले पर खड़ी थी.

—टैम लगेगा थोड़ा. परसोंराम बोले.

दामोदर हाथ मलता रहा—ठीक तो हो जावेगी लौण्डिया? उसे शायद यकीन नहीं आ रहा था.

नैना की मां ने भी कुछ कहा लेकिन उसकी ज़बान इतनी दबी थी, परसोंराम सुन नहीं पाए. दामोदर ने शायद सुना था लेकिन उस बारे में उसने कुछ नहीं कहा.

वैद्य ने फिर झोला खोलकर चार-छह पुड़ियां बांधी और नुस्खा समझा दिया. बिल्कुल अभी पैसे की उम्मीद दामोदर से नहीं थी. घर का जो हाल दिखता है, उसी से परसोंराम समझ गया कि ये लोग बस किसी तरह सांस ही ले पा रहे हैं.

इसके बावजूद दामोदर ने कमर में खोंसी हुई अठन्नी निकाली और वैद्य को थमा दी. परसोंराम ने दो-एक बार फिर कभी देने की बात कही और आखिर सिक्के को लेकर जेब में डाल लिया.

दामोदर के लिए यह पहला मौका था, जब उसने दवा-दारू के लिए किसी वैद्य-हकीम को कुछ दिया था. नैना की जान खैराती दवा के मुकाबले कहीं ज्यादा कीमती लगी थी और वह मुहल्ले के वैद्य को बुला ही लाया था.

दवा तीन दिन की थी.

इन तीन दिनों में नैना बस आधी रह गई थी. जिस्म जैसे पिचककर चारपाई पर दरी से जा मिला था.

दामोदर फिर सारा हाल बताने परसोंराम के पास जा ही रहा था लेकिन बिद्दानिवास पण्डित ने मदारी दरवाज़े के एक यूनानी हकीम का पता बताया था. वह इस क़दर हड़बड़ा रहा था कि दिमाग में सब-कुछ गड़बड़ हो गया था और फैसला नहीं कर पा रहा था कि कहां जाने से फ़ायदा हो सकता है.

आख़िर में बिद्दानिवास ही दामोदर को लेकर हकीम के पास पहुंचे थे. उस इलाज से ही नैना महीने-भर और बीमार रहकर ठीक हुई थी.

उस दरमियान दामोदर को कई दफ़ा लगता रहा है, यह लड़की बस कोई पुराना कर्ज़ ही चुकाने आई है. कर्ज़ अदा किया और बस यहां से उड़ गई. तब रात-रात-भर वह नैना के सिरहाने बैठा रहा है. लड़की कभी आंख खोलती तो दामोदर उसके चेहरे पर झुक कर समझ लेना चाहता कि वह कहना क्या चाहती है.

इस घर में दूध तब आता रहा है, जब बदरी ठठेरा जिन्दा था. उसके बाद

दूध-दही सिर्फ तीज-त्यौहार पर ही कभी-कभी आए हैं. दामोदर को तब चाय की आदत नहीं थी. कभी मन हुआ तो काली चाय बनाकर पी ली, बस. नैना की माँ को यह बनानी भी नही आती थी. कभी-कभी शाम को लौटने के बाद वह लोटे में चाय बनाकर खुद पी लेता था और शक्कर थोड़ा ज्यादा डालकर एक गिलास नैना को पिला देता था.

नैना बीमार पड़ी. तब से दामोदर खुद ग्वाले के यहाँ जाकर पाव-भर दूध भी लाने लगा. पाव-भर दूध कोई ज्यादा नहीं होता. लेकिन इतना भी यह लड़की जैसे पी नहीं पाती. दामोदर चम्मच में दूध भरकर नैना के मुंह के अन्दर डाल तो देता लेकिन उतना भी निगलने की ताकत उसमें रह नही गई थी.

बिद्दानिवास पण्डित तब रोज़ आते थे.

पूजा-पाठी आदमी है. जिस-तिस के घर वह जाएंगे, इसकी उम्मीद कोई नही करता. तब उनके सर के बाल इस तरह सफेद नही थे. बात करने का तरीका लगभग यही था लेकिन आँखों पर तब चश्मा नहीं चढा था. बिद्दानिवास संस्कृत के श्लोक दुहराते थे. क्या कहते थे, दामोदर कभी भी यह तो समझ नही सका लेकिन हाथ जोड़े वह हमेशा ही खड़ा रहा है.

कभी-कभी बिद्दानिवास एक फूल भी नैना को थमा देते थे, फूल में चदन के छींटे और दाग होते. फूल लेने के बाद नैना के पीले पड रहे होंठ कुछ खुलते थे. बिद्दानिवास को मज़ाक करने की आदत तो नहीं है लेकिन कई दफा वह मज़ाक ही कर बैठते थे—उपवन में चमेली और गुलाब के बीच राजकुमारी खडी है. नैना के हाथ का फूल देखकर यह उपमा सोचने में उन्हें कोई दिक्कत नही होती.

दामोदर कई बार दरी भी बिछाता रहा लेकिन बिद्दानिवास कभी नही बैठे. खड़े-खड़े गीता या उपनिषद में से कुछ पंक्तियों का पाठ करते, फिर धीरे-धीरे बाहर निकल जाते.

बिद्दानिवास से दामोदर की मुलाकात-भर है, कभी भी ऐसा नही हुआ, जब किसी बहाने घंटा-आधा घंटा कुछ कहने-सुनने का मौका मिला हो. रास्ते में या गली में कभी बिद्दानिवास मिल गए तो दामोदर ने गर्दन झुकाकर हाथ जोड़ लिए. बस.इससे ज़्यादा रिश्ता कभी नही बना.

बिद्दानिवास को जब नैना की बीमारी का पता चला था, अपने आप ही चले आए थे. हकीम-वैद्य वह ज़रूर नहीं हैं लेकिन हिन्दू पुराण का खजाना जिसने एकबार भी छू लिया, वह बहुत-कुछ अपने आप ही सीख गया था. माथा देखकर रोग के कई लक्षण बिद्दानिवास भी समझ लेते है. नैना को देखते ही समझ गए थे कि लड़की की हालत मामूली ढंग से नहीं बिगड़ी है.

इस बात से परसोंराम खासा नाराज़ हुए थे. बिद्दानिवास को एक दिन ढाल के बाज़ार में पकड कर उन्होंने मज़ाक कर दिया था—अब तो तुमीं धन्वंतरी बन गए पण्डितजी···

बिद्दानिवास ने जवाब नही दिया था. किसी के मरने-जीने का सवाल था, और उनकी थोडी-सी सलाह से कुछ हो सकता था. जब हो गया तो क्या चाहिए ? बिद्दानिवास सब्जी के थैले को लटकाकर चले आए थे.

लेकिन इसके बाद भी कई लोगों से परसोंराम बिद्दानिवास की इस ज्यादती की चर्चा करते रहे हैं. तब मुहल्ले का नक्शा ऐसा नहीं था. चंद घर होते थे. एक पक्की सड़क थी, बाक़ी सिर्फ ईंटों की, ज़्यादातर रास्ते बिल्कुल मिट्टी के थे. कोई भी बात होती तो मुट्ठी-भर लोगों में फैलते देर नहीं लगती.

एक दफा दामोदर को भी रोककर वैद्य ने घंटा-भर खरी-खोटी सुनाई थी. वश चलता तो शायद एक-आध थप्पड़ ही रसीद कर देते. लेकिन बाजार का मामला है. दूकानदारी आख़िर यहीं बैठकर करनी है. आख़िर में परमोंराम दांत निपोरकर रह गए थे.

नैना की तबियत कुछ सुधरने लगी तो दामोदर को अन्दर से लगा था, सिर्फ़ बिद्दानिवास की वजह से लड़की इस दफा मरते-मरते भी बच गई है. पण्डित के लिए कृतज्ञता से दिल भर गया था.

नैना अच्छी हो गई तो बिद्दानिवास ने दामोदर को आरोग्यस्नान का तरीका बताया था. इस घर में ऐसी रस्में कभी भी अदा नहीं की गई, इससे पहले भी लोग बीमार आख़िर पड़ते ही रहे हैं. बीमारी के बाद कितने ही लोग गुज़र भी गए. दामोदर भी बचपन में बीमार पड़ता और चंगा होकर पहले की तरह दाल-रोटी खाता, मुहल्ले की गलियों में धूल-मिट्टी के साथ खेलता.

आरोग्यस्नान के बाद दामोदर को लगा, नैना फिर से पुरानी नैना बन गई है. चेहरे और होंठों पर पीलापन ज़रूर था. लेकिन दामोदर को लगा था, हफ्ते-भर के अन्दर वह बिल्कुल पहले जैसी बन जाएगी. हफ्ते-भर के अन्दर तो नहीं, डेढ़ेक महीने बाद वह उसी तरह बन गई थी. तब एक दिन बिद्दानिवास ने खाने-पीने का तौर-तरीका बता दिया था.

ये सब पुरानी बातें याद आ जातीं और दामोदर का कलेजा फटने लगता.

और तो और अब दामोदर को ही यकीन करने में दिक्कत होती है कि अपने जिगर का टुकड़ा समझकर वह नैना को सीने से चिपकाए रखता रहा है.

एक दफा रामगंगा के मेले में नैना खो गई थी.

मेले वगैरह जाकर तफरीह करने की फुर्सत दामोदर को आसानी से कभी नहीं मिली. जिसे मजदूरी करके पेट भरना है, वह घड़ी-भर के लिए बैठकर दम ले ले तो वही बहुत है फिर भी नैना ने ज़िद की तो दामोदर टाल नहीं सका.

रामगंगा का मेला ही ऐसा है कि ओर-छोर नहीं मिलता. मेले में पहुंच ही गया तो दामोदर को भी यह भीड़-भाड़ भा गई. चलो लड़की के बहाने थोड़ा 'पुन्न' ही हो जाएगा.

मुहल्ले के और भी कई लोग दिखे थे.

एक बिद्दानिवास ही हैं जो कहीं नहीं जाते. इतने तीज-त्यौहार बरस-भर में होते हैं लेकिन बिद्दानिवास को किसी ने मंदिर जाकर सर नवाते नहीं देखा. दामोदर को थोड़ा ताज्जुब ही होता है. पूजा-पाठी आदमी हैं लेकिन अपने घर के अलावा कहीं और जाकर सर नहीं झुकाते.

मुहल्ले वाले दिखे ज़रूर थे लेकिन उनसे दामोदर को क्या ? दामोदर लुहार को कोई लुहार मानकर आदमी समझ ले तो वही बहुत. दामोदर भी अपनी तरफ से किसी से बात करने की हिम्मत नहीं करता. किसी ने कुछ पूछ लिया तो जवाब-भर दे देता है.

नैना का हाथ पकड़े दामोदर मेले में घूम रहा था. रामगंगा की यह रेत भी गजब की है. चलते वक्त पैरों के नीचे सरसरी-सी होने लगती. नैना जैसे चहकने-सी लगी थी. दामोदर ने दो लड्डू ले दिए थे. वह आहिस्ते-आहिस्ते खा रही थी. चार बार में चाहती तो दोनों लड्डू खत्म कर सकती थी लेकिन खत्म करने से तो सब-कुछ खत्म ही हो जाता ! फिर बचा ही क्या रहता है ? आहिस्ते-आहिस्ते खाकर नैना देर तक स्वाद लेना चाहती थी.

इतना बड़ा मेला कि कहां क्या है, कुछ पता नही चलता. कही गुब्बारे वाला है तो कही भोपू वाला. दामोदर को अच्छा तो लगता है लेकिन दिल थोड़ा गिर भी जाता है. लोग मेले मे आते है तो इत्मीनान से खर्च भी करते है. दिन-भर घूमते-फिरते और पूड़ी-कचोडी खाते. शाम को जब लौटते है तो झोले मे खिलौने से लेकर मिठाई तक चार तरह की चीजें पड़ी होतीं.

दामोदर जेब मे हाथ डाल नही पाता.

नैना इस तरह फुदकती है, जैसे पूरे मेले को ही झोले मे भरकर लौटेगी. दामोदर ने फिर एक भौंपू भी ले दिया था. लेकिन इसके बाद अगर नैना ने कुछ और लेना चाहा तो एकदम से चुप होजाने के अलावा वह कुछ और नही कर पाएगा. भोपू पाकर नैना खुश हो गई. लेकिन मिट्टी के खिलौनों की दूकान के सामने से वे गुज़रने लगे, तो वह फिर मचल उठी. जेब मे अब गाडी से घर लौटने का किराया-भर रह गया था. एक दफा सोचा था कि बिना टिकट भी जाने से कौन पकड लेगा ? बीच मे सिर्फ एक ही स्टेशन आता है, बरेली जक्शन उसके बाद गाड़ी छूटते ही सिटी स्टेशन आ जाता है लेकिन आखिर मे हिम्मत नही कर पाया था.

नैना इस बीच कब छूट गई है, पता ही नही चला था. दामोदर को होश तो तब आया, जब वह पुल के करीब आ गया था. पुल से होकर एक मालगाड़ी गुज़र रही थी. गुम-गुम-गुम की आवाज़ हो रही थी. इसी चीज़ को दिखाने के लिए वह पीछे मुड़ा तो पाया, नैना नही है.

दिल धक्क से रह गया.

इतना बडा मेला. कोई खोजे तो कहा खोजे.

दामोदर ने मेले मे बच्चे उडाने वाले साधुओ के बारे मे जो बाते सुन रखी थी वे याद आ गई. पता नही क्यो, लगता रहा कि किसी साधु ने उसे बेहोश करके उडा लिया है. ये लोग वैसे ही बडे-बडे लबादे पहने होते है अगर एक-आध बच्चा अन्दर भी पडा है तो आसानी से पता नही चलने का.

दामोदर पीछे मुडा और उसी रास्ते पर बढने लगा, जहां से होकर यहा तक पहुचा था. लेकिन कोई रास्ता हो तो कोई याद भी रखे कि कैसे-कैसे आगे बढा था. चारो तरफ सिर्फ आदमी ही आदमी है. जहां से भी थोडी जगह मिल गई, आगे बढ लो. इस धक्का-मुक्की मे कहा से कौन आगे की तरफ़ गया है, याद रखना नामुमकिन-सा है.

दामोदर बढता ही रहा.

मिट्टी के खिलौनो की जो दूकान थी, वहा भीड लगभग वैसी ही थी लेकिन नैना नही थी. उससे कुछ फासले पर भोपूवाला था. नैना को जब भोपू ले दिया था, वहां खास लोग थे अब भोपूवाला वहा नही था. लोग लगभग वैसे ही थे लेकिन वे आ या जा रहे थे.

दामोदर को पसीना आ गया. कधे पर अगोछा पडा था उससे चेहरा पोछ लिया तो लगा, आखो के गिर्द रेत की पर्त-सी बिछ गई है. फिर वह साप की तरह दाए, बाएं, बिना किसी तरतीब के फिरने लगा. आधे घटे बाद एक गुब्बारे वाले के साथ नैना दिखाई पडी थी.

दामोदर ने नैना को सीने से चिपका लिया.

मेला खत्म होने मे तब भी काफी वक्त बाक़ी था. लेकिन उसने झोले से रोटी निकाली और नैना के साथ बैठकर खा ली. और ज्यादा रुकने की तबियत अब बिल्कुल नही हो रही थी.

लेकिन ताज्जुब है कि इतनी देर से गुब्बारे वाले के साथ फिर कर भी नैना ने दामोदर को नहीं ढूढ़ा था. कभी-कभी दामोदर को लगता है, सिर्फ उसे ही नैना की ज़रूरत है, नैना को शायद हवा-पानी की भी ज़रूरत नहीं है. पिछली बार बीमारी के बाद वह अच्छी हो गई थी लेकिन दामोदर के मन में यह खयाल बैठ-सा गया था.

उस दिन नैना मेले में हाथ से छूट गई तो लगा था, अब शायद यह लड़की छूट ही गई है. गुब्बारे वाले के साथ वह दिखाई पड़ी तो दामोदर बुरी तरह हांफने लगा था. आधा घंटा फिरकर कोई अमूमन इस तरह तो नहीं ही हाँफता है.

घर आने के बाद उस दिन दामोदर थक कर चूर हो गया था.

रात को नैना सो गई तो वह देर तक ढिबरी की रोशनी में उसकी बन्द पलकें देखता रहा है. दीवार में उसकी अपनी जो छाया बनी थी, वह बेहद बदशक्ल और डरावनी लग रही थी. लग रहा था, नैना-जैसी लड़की दामोदर की शक्ल देखकर ही डरकर कहीं और चली जाएगी.

यह इतनी पुरानी बात है लेकिन दामोदर को आज भी हू-ब-हू याद है. इतने बरस बीत ज़रूर गए लेकिन कई चीज़ें भुलाई नहीं भूलतीं.

आखिर में दामोदर को ताज्जुब होने लगा था कि बरसों पहले का वह अहसास आज भी किस क़दर ताज़ा है ! उस दिन दामोदर को लगा था कि नैना उसे छोड़-कर कहीं चली जाएगी और आज वह देख रहा है कि नैना अब क़रीब नहीं है. बाप-बेटी का रिश्ता ज़रूर बना हुआ है लेकिन बीच का फ़ासला हज़ारों मील का है. नैना इस बीच सिर्फ चलती ही रही है. और दामोदर आज भी सिर्फ़ उसी जगह ज्यों-का-त्यों खड़ा है.

बदरी ठठेरे की मौत अचानक हो गई थी.

दामोदर भी अचानक ही जैसे अच्छी-खासी हवेली से निकल कर सड़क पर आ पड़ा था. बदरी ने कर्ज़ लेकर कारखाने को बढ़ा लिया था. लेकिन कर्ज़ की शायद पहली ही किस्त दे पाया था. उसके बाद अचानक मौत हो गई तो कर्ज़दारों ने सब-कुछ नीलाम करवा दिया था. दामोदर की उम्र तब सत्रह-एक साल की थी. और इक्कीस तक आते-आते बड़ी और छोटी भी चली गई.

एक झटका खाकर दामोदर अकेला हो गया था उसके बाद कितने साल गुजर गए लेकिन अकेलेपन का यह अहसास खत्म ही नहीं हुआ. और आज जब नैना कभी सामने आती है, दामोदर जैसे मैदान के बीच अंधेरे में घिर जाता है.

●●

शकर गेंदनलाल के साथ सुर मिलाकर ही ही कर रहा था. दामोदर का सीना तैश में जलता है लेकिन खुद उसे भी नहीं मालूम, जल कर राख क्यों नहीं हो जाता.

—तो फिर लुहार ! गेंदनलाल बोला—अब कम-से-कम धोती तो एक नई पहन लेव लोग आखिर कहेंगे क्या ? इतनी मशहूर नैनामेम के बाप हो···

रामधनी ने जबान की बात छीन ली—नैना मेम अब बरेली में नाय रैने की. बिलायत जाएगी—हवाई जहाज़ पे बैठके. फिर उसने अपनी दाईं हथेली से हवाई जहाज़ की चाल बता दी.

दामोदर इतनी देर से खड़ा है लेकिन कभी भी उसे नहीं लगता कि इन बातों का भी कोई जवाब हो सकता है. लोहे पर हथौड़ा मारते-मारते उसके जिस्म का एक-एक रोम जैसे भोथरा होकर फैल गया है. लेकिन अचानक जैसे कुछ हो गया था. तन कर तो वह जिन्दगी-भर में कभी खड़ा हुआ ही नहीं लेकिन आहिस्ते से इस दफ़ा जवाब ज़रूर दे दिया —खामख्वाह मेरी इज्जत पर कीचड़ उछाल रहे हो···

जगदम्बा ने फटे ढोलक की तरह ठहाका मारा. फिर एकदम से सिनेमा के हिजड़े की तरह सजीदा हो गया—जे बात लुहार तुमने एकदम ठीक कई. तुम ठँरे आख़िर एक इज्जतदार आदमी···

अब दामोदर हिम्मत बटोर कर चलने ही लगा था.

शकर ने कुए के चबूतरे से नीचे उतरकर उसकी बाहे पकड़ ली—इत्ती जल्दी भी क्या है लुहार ! इत्ते दिनों मे मिले हो कुछ कहो-सुनो भी तो

दामोदर बढ ही जाता लेकिन शकर ने बाहो को कसकर पकड़ रखा था. बलि के बकरे की तरह वह खड़ा रहा.

शकर ने फिर गेदनलाल को हुक्म-सा दिया--कुतबखाने जायकै एक माला तो ले आ. लुहार को पहिनाएगे.

—ओय होय ! गेदनलाल ने अपनी हथेली चूम ली—जे न हुई बात लेकिन माला तो नैना के यहा भीतेरी मिल जागी बडे-बड़े बी.ए. पास खसम आते है.

जगदम्बा यह सकेत समझ गया लेकिन इसमे उसे कुछ दम ही नजर नही आया यह बात किसी-न-किसी बहाने इतनी बार कही गई है कि अब इसमे नए सिरे से मजा ही नही आता. जगदम्बा ने पन्नाबाई का सिलसिला शुरू किया—-नैनामेम की मकान मालकिन जवानी मे घुघरू बाँधकै नाचती थी. और दिल वालो को नचाती भी थी. अब उम्र हो गई, सो नैनामेम को सारा नुस्खा बताय दिया. एक दिन हम भी नाच देखने चलगे लुहार.

दामोदर अब अपने को शकर के कब्जे मे छुडाने की कोशिश करने लगा.लेकिन इन मरियल बाहो मे जैसे खून तक बहता नही है उसने थोड़े जोर मे झटका मारा तो बनियान ही काफी-सारी फट गयी

दामोदर की आखे अब तक सिर्फ जलती रही थी अब आसू निकल आए दोनो गालो पर दो लकीरे सी बन गई.

जगदम्बा ने जीभ मे चचच्च की आवाज की.

बाद मे यही नाटक गेदनलाल ने भी किया.

रामधनी ने फिर दामोदर की पीठ मे थपकी-सी दी—जानदे भई, लुहार को जानदे.

दामोदर बडी मुश्किल से घर तक चलकर आया. मढीनाथ की तरफ जाना था लेकिन घुटनो मे अब ताकत ही नही रह गई है, घर आकर वह आगन मे लगे तुलसी के बिरवे के पास घुटनो मे सर छुपाए बैठ गया उस वक्त लुहारिन शायद पीछे की तरफ वाली कोठरी मे थी. वर्ना वह लुहार को चुपचाप देखती रहती और दामोदर रो नही पाता.

●●

झूमी मे क़ादिर मिया का पोस्टकार्ड आया था. विनायक ने पोस्टकार्ड को तीनेक बार पढा तो जाकर वक्तव्य के बारे मे कुछ धारणा बनी. नदू के बारे मे तीन-चार जुमले थे नदू अब घायल शेर की तरह फिरता रहता है. अहीर मे किसी दिन मुठभेड हो जाएगी

और उसके बाद कुछ हो ही जाएगा कादिर मिया ने अफसोस जाहिर किया था कि नट्टू समझाने से काटने को दौडता है !

खत के आखिर मे मुशी के पोते की तारीफ थी कादिर मिया को खुशी थी कि गॉव का ही एक लडका पढ-लिखकर समझदार होकर वापस आया है लेकिन मुशी को लकवा मार गया और वह चारपाई मे अपने आप उठ नही सकता

कादिर मिया की याद आती है तो मन चगा हो उठता है बरेली आने के बाद उसके बारे मे खास सोचने की फुर्सत तो नही मिली थी लेकिन विनायक जानता है, झूसी के गाव के उस बूढे शख्स की इतनी भी चाह नही है कि कोई उसे याद भी कर ले. विनायक अपने सामने ही शर्मिंदा हुआ कि बहुत दिनो से मिया की बात दिमाग मे आई ही नही थी एक दफा कादिर ने ही बताया था—यादो की भी रस्म होती है, मास्टर बडी नाजुक रस्म है यह ऊपर थोडी भी धूल मिट्टी पडी तो सब खत्म ही हो गया समझो उस बात पर तब किसी ने गौर तो नहीं किया था लेकिन आज उसकी हकीकत जैसे मुरली के बहाने कादिर मिया बताने आ गया था

विनायक एकदम ठहरा-सा रह गया था

झूसी के एक राहगीर ने अचानक जैसे रास्ता रोक लिया है रास्ता रोककर अब वह अपनी उम्मीदो की कहानी बताएगा उम्मीद कितनी बडी चीज हो सकती है, कादिर मिया को देखकर विनायक ने यकीन किया था

अब उम्र हो गई है, कितनी ? पूछने से आज तक कभी भी वह ठीक ठीक बता ही कहा सका है ? लेकिन खून की आग उसी तरह बरकरार है जवानी मे भागते वक्त जिस्म की पेशियो मे चुस्ती थी आज उन पर वक्त की छाप जरूर है लेकिन खून की गर्मी वैसी ही बनी हुई है

बरेली मे विनायक ने द्वारिका, सुरिन्दर, बाबूराम वगैरह से उसका जिक्र वैसे कई बार किया है लेकिन यह खत पढने के बाद लगा, कादिर मिया-जैसे तूफान के लिए जिक्र करना तो एक मामूली बात है

हर खत के आखिर मे मिया उम्मीद की बात लिखता है उम्मीद की बात लिखता है लेकिन इतजार करने को कभी नहीं कहता जैसे नछत्तर अहीर के सामने वह लाठी लेकर इत्मीनान से डटा है और उसे मालूम है कि वह हारकर वापस नही लौटेगा.

खत मे जरूर कादिर उम्मीद के बारे मे एक-आध फिकरा लिख देता है लेकिन इस बारे मे उसकी जबान कभी भी बहुत नही खुली है झूसी मे मुरली कई दफा ऐसा कुछ बोल जरूर देता था लेकिन मिया जवाब मे सिर्फ मुस्कराता ही रहा है

आज जैसे सारी बातो का मतलब एकदम साफ हो गया

विनायक ने तय कर लिया कि इस खत के जवाब मे बरेली की सारी कहानी बताकर एक लम्बा खत लिखेगा. कादिर को पढने मे दिक्कत तो होगी लेकिन किसी-न-किसी तरह पढ ही लेगा आखिर मे उसे यकीन हो जाएगा कि बरेली और झूसी के बीच फासला अब कोई खास रह भी नही गया है

●●

द्वारिका आया था

उसके साथ एक लडकी थी अजना जिस तरह कोई भी आम लडकी होती है, देखने मे उसमे कोई फर्क है कम-से-कम विनायक को ऐसा नही लगा

द्वारिका ने सक्षेप मे उसका परिचय करा दिया शुरू मे विनायक को लगा था, द्वारिका के साथ पढती है उम्र द्वारिका जैसी ही होगी ऐसी उम्र तक लड़किया अमू-

मन शादी कर लेती हैं और एक-आध बच्चा भी हो जाता है. ख़ैर इतना ज़रूर लगा था कि द्वारिका अजना को बहुत चाहता है.

लेकिन जो परिचय अजना का मिला वह काफ़ी-कुछ अलग है. प्राईमरी स्कूल में अंजना चौहान एक मास्टरनी है. उसका तीन बरस का एक बेटा है, जिसका बाप दो बरस से जिन्दा नही है.

ज़ाहिर है कि कहानी लम्बी थी. द्वारिका को सारा मालूम भी होगा लेकिन इससे ज्यादा कुछ और नही बताया. विनायक ने अंजना को परखने की कोशिश की. अतीत का दर्द ढूंढने पर चेहरे पर मिल ज़रूर जाता है लेकिन आँखों में जैसे कहने के लिए बहुत-कुछ इंतजार मे है.

थोड़ी देर में बाकी लोग भी आ गए थे. बालकराम, अनूप, सुरिंदर, धनंजय और संतोष. 'कौशल्या भवन' मे इतनी कुर्मिया नही है. द्वारिका ने आकर बैठक मे एक बड़ी-सी दरी बिछा दी. रानी एक-आध दफा चाय के लिए पूछने आई लेकिन विनायक ने थोड़ी देर और रुकने का इशारा कर दिया.

रानी रसोई मे चली गई थी. लेकिन कई दफ़ा निकलती और दरवाजे के पास खड़ी हो जाती. रद्दो को ऊपर जाकर सब बता आई थी. वह नीचे नही उतरी थी.

—सुना है, 'युग-प्रताप' मे मेरे बारे मे कुछ छपा है. विनायक बोला

सुरिदर हंसा — मैंने पढ़ लिया. लिखा था, सेठो से पैसा खाकर किसी को पिटवा दिया, किसी को पिटने मे बचा लिया. वगैरह-वगैरह. यानी आपके हाथ मे दर्जन-डेढ़ दर्जन गुण्डे है, उनमे कुछ-न-कुछ करते ही रहते है.

—ग्रैण्ड स्टोरी. संतोष बोला.

बिचारा ब्रजपाल सक्सेना करे भी तो क्या करे. विनायक को थोडी हमदर्दी होने लगी थी —जयनारायण जब तक एम. एल. ए. है, उससे कुछ-न-कुछ ऐंठते रहना है लिहाजा एम. एल. ए. साब जो कुछ चाहेंगे, छापना पड़ेगा. मुझे ताज्जुब होता है कि इतना बडा इलाका है रुहेलखण्ड का लेकिन एक भी अख़बार ऐसा नही है, जो ब्लैकमेल करने के अलावा वाकई बुलन्दी से ख़बरें छापे.

रानी फिर दरवाजे के पास दिख गई.

विनायक ने मजाक किया—लगता है, चाय पिलाए बगैर मेरी बहन बातचीत शुरू करने ही नही देगी. ला भई, ले ही आ.

रानी झेपकर चली गई.

विनायक के इस मज़ाक पर थोड़ा गुस्सा भी आया था. वह दरवाज़े पर सिर्फ़ उत्सुकता की वजह से खडी थी. बिल्कुल अभी चाय की वजह थी भी नही. कभी-कभी लगता है, इस रसोई के बाहर एक बहुत बड़ी दुनिया है. यहा घुटन-सी लगने लगती है तब.

आख़िर मे वह हटी और रसोई मे आ गई.

—ब्रजपाल सक्सेना पापा के पास भी कई दफ़ा आ जाता है. द्वारिका बोला —बाते क्या होती हैं, यह तो कह नही सकता लेकिन लगता यही है कि दोनों ही दोनों से बहुत खुश है. ख़ास तौर पर जब से पापा चुनाव लड़ने की बात सोच रहे है, 'एडीटर साब' हफ्ते मे कम-से-कम दो बार आ जाते है. 'एडीटर साब' को उसने इस तरह कहा कि सुरिंदर हंसते-हंसते बस किसी तरह रुक ही गया था.

—और इसके विपरीत आज़ादी की लड़ाई के वक्त कितने अख़बार निकलते रहे हैं जो ख़तरों की परवाह किए बिना सच्ची ख़बरें लोगों के सामने पेश करते रहे है. कभी-कभी तो मुझे लगता है, अख़बार पढ़ू या रेडियो की ख़बरें सुनू, एक ही बात है.

दरअसल मामला बड़ा ख़तरनाक हो गया है, दिल्ली और लखनऊ से जो अख़बार यहाँ आते हैं, कैपीटलिस्ट ही उनके मालिक होते हैं. लिहाज़ा जो ख़बरें छपती हैं, उनमें सिर्फ़ इतना भर होता है कि किस मंत्री ने क्या कहा ! लेकिन इसमें ख़बर नहीं बनती है. पता करो कि किस मंत्री ने क्या किया ? ओनली दैट कैन बी ए न्यूज़. ये लोग आम आदमी की बात न तो कभी छापते रहे हैं, न छापेंगे. लेकिन छोटे-छोटे शहरों और क़स्बों से जो अख़बार निकलते हैं, उनके मालिक कौन हैं ? हमारे-तुम्हारे जैसे लोग ही हैं. लेकिन ये लोग अख़बार को ब्लैकमेलिंग के अलावा कुछ और करने का ज़रिया समझते ही नहीं है. वर्ना इस मुल्क की हालत इससे कुछ बेहतर तो हो ही सकती थी.

—सुना है, कलकत्ते में कुछ लड़कों ने कविता का एक दैनिक अख़बार निकाला था. सुरिंदर बोला—काफ़ी एक्साईटिंग न्यूज़ है.

—हां है, लेकिन थोड़े ध्यान से सोचो तो बात है मामूली ही. आप सिर्फ़ हफ़्ते-भर के लिए ही सही एक ऐसा अख़बार निकालने की क्यों नहीं सोचते कि सही ख़बरें छापने के लिए जो बन्द कर दिया जाएगा. उसका एक्साईटमेंट कविता के अख़बार से कम तो नहीं होगा.

—लेकिन अगर बन्द ही हो गया तो फ़ायदा ही क्या ?

—फायदा अगर है तो सिर्फ़ इसी में है. इस तरह से अगर चार भी अख़बार बन्द हुए, बन्द करने या कराने वालों की परेशानी तो बढ़ेगी ही. दफ़्तर का बाबू या कचहरी का मुंशी जो आज निर्विकार-सा है, शायद सोचेगा कि ख़बर और ख़बर के बीच फ़र्क़ क्या है ! आदमी सिर्फ़ अपनी ख़बर जानना चाहता है. अमेरिका में कौन-सा मेला लगा है या फ्रांस ने ब्रिटेन के साथ मिलकर कौन-सा जहाज बनाया है, उसमें कुछ खाते-पीते लोगों की दिलचस्पी तो हो सकती है लेकिन ज्यादातर लोग सिर्फ़ अपनी ख़बर देखकर ही ख़ुश होते हैं. सवाल उनकी ख़ुशी का नहीं है. सवाल है, असली हालात की समझ का. यह समझ कविता छापने वाला दैनिक अख़बार दे सका है ?

अंजना को बात बहुत पसंद आई थी. उसने अपना सवाल किया — आज़ादी की लड़ाई के दिनों में तो अंडरग्राउण्ड प्रेस भी होता था. हम लोग फिर उस हद तक बढ़ें ?

विनायक को ताज्जुब हुआ कि अंजना चौहान नाम की कोई मास्टरनी अण्डर-ग्राउण्ड प्रेस के बारे में भी सोचती है. बोला—अगर कोई अख़बार सिर्फ़ इसलिए बन्द कर दिया जाता है कि उसमें सही ख़बरें छपती थीं तो अण्डरग्राउण्ड प्रेस की हद तक भी जाना पड़ सकता है. जर्नलिस्ट सिर्फ़ आग होते हैं, जो कई दफ़ा वक्त से पहले अपनी ही आग से जल भी जाते हैं.

अंजना हंसी—पिछले हफ़्ते अख़बार में तस्वीर छपी थी कि दिल्ली के चिड़िया-घर में सफ़ेद शेर ने पीले बच्चे पैदा किए हैं. अख़बार वाले बस इसीमें ख़ुश हैं.

—यह दरअस्ल एक कांसपिरेसी है. आदमी आदमी को किस हद तक अंधा बनाकर रख सकता है, उसकी मिसाल वह तस्वीर है. वर्ना दिल्ली में भी बिहारीपुर-जैसे मुहल्ले आख़िर हैं ही. उनकी कोई ख़बर छपती है कभी ?

—और इसका हल क्या सोचते हैं ?

—बड़ा सीधा-सा सवाल है. जवाब इतना सीधा नहीं है. कुलमिलाकर बात वहीं पर ख़त्म होती है कि अख़बार का गुनाह नहीं है, गुनाह है सिस्टम का ! यह सिस्टम अगर क़ायम है तो पीले अख़बारों के अलावा कुछ और निकलेगा, इसकी उम्मीद करना कोई मायने नहीं रखेगा. लेकिन जब तक ऐसे अख़बार हैं, वैसे ही स्कूल, मदरसे

और कॉलेज है यह सिस्टम टूट भी तभी सकता है, जब सिस्टम का एक-एक अग टूटे.

रानी एक थाली मे चाय के कप लेकर आ गई थी सबमे पीछे सुरिदर बैठा था, उसी ने थाली उतार ली.

—दरअस्ल हमारा मुल्क इतना बडा है कि यहाँ मौजूदा तरीके को बदलकर कुछ नया करने की हम लोग सोचते तो है लेकिन बस सोचते ही रह गए.

विनायक ने चाय का घूट लिया—चीन हममे भी बड़ा है और रूस कोई छोटा मुल्क नही है. उन लोगो ने लडाइ न करने के लिए किसी बहाने की तलाश कभी नही की

अजना इस दफा पहले के मुकाबले और भी दृढ लगी—बहाना हम लोग भी ढूढ नही रहे है. सिर्फ रास्ता समझ लेना चाहते है

—रास्ता पहले से तय नही किया जा सकता हम लोगो के पास एक जिद है, एक ताकत है और अदर की सच्चाई है, लेकिन सारी सूचनाए नही है. हो सकता है कोई रास्ता कुछ दूर तक तो सही मालूम हो लेकिन बाद मे उसे बदलना पड जाए. बकिम चन्द्र ने 'आनद मठ' मे सन्यासी-विद्रोह को आधार बनाकर एक बहुत गहरी बात कही है— सवाल है, मजिल का मजिल तक पहुचने के लिए किसी भी रास्ते का इस्तेमाल किया जा सकता है. लेकिन एक बात तय है कि किसी गलत रास्ते मे कोई बडी चीज हासिल की नही जा सकती

— आप हम लोगो के लिए क्या सोचते है ?

—ऐसे किसी सवाल का जवाब देना वाकई बहुत मुश्किल है.

— बट वी नीड द एसर

—आपको क्या लगता है ?

- मै नही सोचती कि किसी दिन खून बहाकर मर जाने-भर मे कोई हल निकल आएगा जिन्दा हम लोगो को रहना ही पडेगा

—यह जो आप कह रही है बडी पुरानी बात है इसके अदर जो सच्चाई और कुछ कर गुजरने की ललक है, मै उससे इन्कार नही करता लेकिन जिन्दा रहने का मकसद कई बार मर कर ही पूरा होता है

अजना चुप रही उत्तेजना की वजह से उसका चेहरा सुर्ख हो गया था

विनायक ने अपनी चाय खत्म की और प्याला सरका दिया— क्राईस्ट चाहता तो आसानी से भागने का तरीका निकाल सकता था भगतसिंह भी शायद बच सकते थे. लेकिन वे दोनो ही समझ गए थे कि मरने से बढकर जीने का कोई और रास्ता नही है. यही वजह है कि वे मरे नही है

—ये दोनो ही बाते सही है लेकिन इनके इतिहास और हमारे हालात के दरमियान बहुत फर्क है तब जो चीजे मुमकिन और सही थी, आज भी उनकी जरूरत रह गई है, इस बारे मे मुझे शक है

विनायक हसा—मुझे यकीन है चीजो का ऊपर का लबादा तो बदल जाता है लेकिन अदर की वजह कई दफा वैसी ही रह जाती है

—राइट अगर हम सब एक-एक करके मारे जाते है तो क्या होगा ? कलकत्ते मे सैकडो लडके मार डाले गए, बल्कि उनकी तादाद हजारो मे ही होगी. थोडा फर्क तब जरूर पडा था लेकिन वे अगर नही मरते तो आज मुमकिन है, वह फर्क बरकरार रहता

—यह बहुत लम्बी बहस का सब्जेक्ट है मुमकिन है किसी की मौत गैरजरूरी भी रही हो लेकिन यह कोई मामूली बात नही है कि मौत की परवाह उन लोगों ने की ही नही यह सच है कि यह फर्क बरकरार नही रहा लेकिन कल को वह इतिहास कुछ

और नए लडकों को रास्ता नहीं बनाएगा, ऐसा हम क्यों सोचे ?

— मै भी नही सोचती लेकिन मुझे लगता यही है कि भगतसिंह और क्राईस्ट के रास्तो के अलावा भी कोई सही रास्ता हो सकता है.

—मसलन ?

—नही जानती ढूढ कर शायद हम ही लोग निकाल ले

—हम लोग निकाल नही पाएगे, ऐसा मैने कभी नही कहा मैने सिर्फ एक बात कही थी कि मौत भी कई बार जिन्दगी मे बडी हो जाती है और यह मसला कतई अहमियत नही रखता कि हम किसी के मारे जाने या जिन्दा रहने मे अपनी हार-जीत का फैसला करे.

अजना चुप हो गई थी उसके माथे पर पसीने की बूदे आ गई थी उसने साडी के पल्लू मे पोछ लिया

मुरिंदर ने एक खबर दी आध्र के श्रीकाकुलम मे कुछ लडको को फासी की सजा दी जा रही है ऐसी खबरे अमूमन अखबारो मे नही छपती है लेकिन दिल्ली के एक अग्रेजी दैनिक ने एक बाक्स न्यूज मे खबर दी छापा था

अजना ने कुछ नही पूछा

धनजय बोला - कलकत्ते के बाद श्रीकाकुलम बहुत इम्पार्टेण्ट हो गया

—कल शायद बरेली भी होगा द्वारिका की बात कोरे आदर्श की तरह जरूर लगी थी लेकिन सुरिंदर ने विरोध नही किया सुरिंदर को द्वारिका की यही बात पसद नही आती सोचा किया नही और वह आईडियलिस्ट हो गया

—दरअस्ल पूरे मुल्क के हर हिस्से मे छोटी-छोटी क्रान्ति की जरूरत है. जब अग्रेज थे, तब यह काफी आसान था लोग आजादी पाने के लिए किसी भी हद तक जाते रहे है लेकिन अब इस रास्ते पर बढना मुश्किल जरूर है लेकिन कोई और तरीका हमारे पास है भी क्या ? विनायक ने पूछा

—मुझे यही लगता है

—लेकिन इस कशमकश मे वक्त को अगर गुजर जाने दिया तो सब बहकर निकल ही जाएगा क्रांति अपने आप नही आती जो लोग कहते है कि वक्त आने पर क्रान्ति अपने आप ही हो जाती है वे झूठ बोलते है वक्त को भी तो लाया जाता है ज्यादातर लोग गालिया और लात खाकर भी उस हगामे मे पडना नही चाहते लेकिन हमारे लिए सिर्फ इतनी ही बात अहम है कि हम लोग चाहते है

—वैसे बरेली की जनता तो भूसा है एकदम बालकराम इतनी देर मे पहली बार बोला वह दीवार के साथ पीठ टिकाकर बैठा था थोडे फासले पर अजना बैठी हुई थी.

—भूसा ? विनायक को थोडा ताज्जुब हुआ—भूसा अगर है तो क्यो है, सोच कर तो देखो. यह भी एक कामपिरेसी ही है यानी लोगो को इतना बेवकूफ बनाकर रखो कि उन्हें रोटी के अलावा किसी और बात की फिक्र ही न हो जिसने दो रोटिया कमा ली, अपने आपको खुशनसीब समझने लगा.

—अफ्रीका वालो को भी गोरी चमडी वालो ने पहले भूसा ही समझा था. अब वे आजाद हो रहे है. साउथ-अफ्रीका की जो हालत है गोरो को भागने का भी रास्ता शायद न मिले अंजना बोली.

विनायक को एकबार और इस लडकी पर ताज्जुब हुआ.

बालकराम को बात खास समझ मे नही आयी. वैसे अखबार पढ़ने की उसे आदत जरूर है और अफ्रीका की ख़बरें भी वह देखता रहा है लेकिन बहुत बारीकी से

कभी भी पढ़कर नहीं देखा. उसने इस मसले पर कोई और सवाल नहीं किया.

—मैंने एक कविता पढी थी कही. लाइनें ठीक मे याद तो नहीं हैं लेकिन बात शायद ऐसी थी कि हिन्दुस्तान और चिली और यूगाण्डा या ग्वेटामाला के बीच अब कोई फ़र्क नहीं रह गया है. हर जगह ऊची लपटों वाली एक ख़तरनाक आग जल रही है.

बात संजीदा थी लेकिन अनूप हस पडा, जैसे सरदार सुरिन्दरसिंह और कविता के बीच कोई तालमेल बैठ नही सकता है.

सुरिन्दर अनूप के हसने की वजह समझ तो गया था लेकिन चुप रहा. इससे पहले भी अनूप मज़ाक करता रहा है. सुरिन्दर को यह अच्छा तो ख़ैर, कभी भी नहीं लगा लेकिन हर बार हसकर टालता रहा है.

बिनायक ने फिर से सिलसिले को जोडा—हम लोगो के लिए सबसे पहला सवाल है कि बदलाव के लिए किस रास्ते का हम अख्तयार करे ? मेरा मतलब है, रास्ता कहां से शुरू हो.

अजना ने जवाब दिया—जहा हम खड़े हैं, वही से.

—एक्सलेंट एन्सर लेकिन क्या हम लोग जानते है कि हम लोग कहा खड़े है ?

अंजना चुप हो गई.

—यह सबसे पहले जानना बहुत लाज़िम है. विनायक बोला.—वर्ना मुमकिन है, मुगालते में ही रह जाए, कही और ही पहुंच जाए.

—यह सवाल शायद आदमी के अन्दर का सत्य है धनजय बोला.

—सत्य अगर है, शायद-वायद मत जोडो. लेकिन अन्दर का सत्य अगर बाहर के सत्य से भिन्न है तो हम टोपीछाप नेता तो बन सकते है, बदलाव के लिए कोई बात नहीं कर सकते.

—अपनी जगह के बारे मे अंदर से हम समझते है कि हमारे पाव कहाँ खड़े हैं.

—इस तरह से सोचने का तरीका धोखा भी दे सकता है. आदमी अगर समझ ले कि उसके परिवेश का रूप-रग क्या है तो अपने बारे मे धोखा खाने की गुजायश काफी कम हो जाती है.

—लेकिन परिवेश कोई कांक्रीट चीज नही है.

—इसीलिए उसे समझना इतना आसान नही है

—अगर हम समझने मे गलती कर जाएं ? मेरा मतलब धोखा तो परिवेश को समझने मे भी खा सकते हैं.

—हम लोग जिस तरीके से सीख और समझ रहे है, फिर तो धोखा कायदे से खाना नही चाहिए. फिर भी अगर खाते हैं तो उसका मतलब सिर्फ़ एक ही होगा—हमारे अंदर मैच्योरिटी नही आई है

बालकराम ने याद दिलाया—आपने रास्ते के बारे में सवाल किया था. मैं समझ नही पा रहा हूं कि यह पॉलीटिकल और सोशल सिस्टम के बीच कहां है ?

—गहराई से सोचो तो देखोगे कि इनके बीच सही मायने में दीवार है ही नहीं. लेकिन तुम्हारा सवाल यह होना चाहिए कि इस पॉलिटिकल सिस्टम का ऑलटरनेटिव हमारे पास क्या है ? यानि जहाँ तक कि सोशल जस्टिस नहीं आ जाता, क्या इस वोट की दूकानदारी पर हम यक़ीन रख सकते हैं ? यहां आदमी सिर्फ़ पेट-भूख और रोटी के मसलों पर ही उलझा हुआ है. वोट के बारे में यानी उसके मतलब के

बारे में सिर्फ़ चन्द लोग सोचते हैं.

—लेकिन तोप जिनके पास नहीं होती या तो वे घटकर ख़त्म हो जाते हैं या हर रोज धीरे-धीरे मरते रहते है.

विनायक झुंझला उठा था—तुम कौन-सी मौत चाहते हो ?

बालकराम खामोश हो गया.

—इस तरह की बातों से यह मिशन फेल हो जाएगा. श्रीकाकुलम के जिन लड़कों को फांसी की सज़ा हुई है, क्या उनके पास तोपें थी ? यह उम्मीद क्यों रखते हो कि सारी बातें मैं बोलकर ही समझाऊंगा.

बालकराम झेंप गया.

अंजना ग़ौर से बालकराम की तरफ़ देख रही थी. उसे शायद कष्ट भी हो रहा था.

पूछा—वकील, डाक्टर से लेकर बनिया या दफ्तर के बाबू तक जो भी शख्श सोशली क्राईम करता है, सजा देने का कोई जरिया हमारे पास है ?

बालकराम को यह बात समझ में नहीं आई. वह चुप ही रहा लेकिन अंजना समझ गई उसने समझा दिया—वकील, डाक्टर गरीब-अमीर सबसे एक ही भाव फीस लेता है. गरीब अगर अनपढ़ हुआ तब तो सोने में सुहागा. बनिया धनिए के चूरे में घोड़े की लीद मिलाता है और दफ्तर का बाबू अपनी कुर्सी पर टोपी या मफलर रखकर जता देता है कि वह गैरहाजिर नहीं है. फिर कहीं ताश खेलने और चाय पीने में ही पूरा वक्त गुजर जाता है. ये सब क्राईम नहीं है क्या ?

विनायक बोला—बहुत अच्छा सवाल है.

—आप क्या सोचते है ? अंजना ने पूछा.

—सोशल जस्टिस के लिए हम लोग इन्हें शुरू में समझा सकते है. मुमकिन है, कुछ लोग डर जाएं और अच्छा असर हो. कुछ लोग शायद नहीं डरेंगे. उन्हें किसी भी हद तक सज़ा देने का हक पब्लिक इन्टरेस्ट में हमारे पास है जरूरत पड़े तो किसी का मर्डर भी कर सकते हैं.

—कलकत्ते के लड़कों ने भी यही किया था. लेकिन ये बातें अखबार में नहीं छपतीं. इतने बड़े मुल्क में एक भी जर्नलिस्ट ऐसा नहीं जो बेपरवाह होकर इन ख़बरों को अपने अख़बार में सही तरीके से छापता.

—दरअस्ल, सोशल जस्टिस से ही हम लोग पालिटिकल जस्टिस की तरफ बढ़ सकते हैं.

—लेकिन यह रास्ता छोटा नहीं है.

—बड़े काम के छोटे रास्ते हो सकते है क्या ?

—एक प्रॉब्लेम इसमें और भी तो पैदा होती है. इस सोशल जस्टिस का शिकार होकर अगर कोई वकील खत्म होता है तो उसके घर के लोगों का क्या कसूर है ?

—मुमकिन है कुछ भी न हो. लेकिन हमारे लिए सवाल है कुछ लोगों की परेशानी या ढेर-सारे लोगों की तकलीफ़ें. ज़ाहिर है. किसी लालची डाक्टर के मरने की वजह से अगर उसकी फैमिली के चार-छह लोगों को तकलीफ़ भी होती है, एक बहुत बड़े स्वार्थ की वजह से उतना हमें कबूल करना ही पड़ेगा. सिर्फ़ एक आदमी की मौत दूसरे हमपेशेवरों को ख़बरदार करके छोड़ देगी. यही एक मुल्क इतना बड़ा न होता तो हम शायद दूसरा रास्ता भी सोचते लेकिन फिलहाल इसके अलावा कोई और रास्ता नहीं है.

—अभी चुंगी का चुनाव होने वाला है. सुरिंदर बोला—-इस मौके का फायदा हम लोग लोगों से यह कहकर उठा सकते हैं कि चुनाव एक धोखा भर है.

—इससे क्या होगा ? तुम सोचते हो, लोग वोट डालने नहीं जाएंगे ? धनंजय ने पूछा.

—शायद दो या चार नहीं जाएंगे लेकिन अगली बार के चुनाव तक कम-से-कम कुछ और लोग समझ जाएंगे कि चुनाव वाक़ई एक धोखा है. आज तक ये लोग यह नहीं सोचते रहे हैं कि यहां अंग्रेजों के जाने से पहले से ही चुनाव होता रहा है और फटी हुई कमीज़ तक तो बदल नहीं पाई. इस हकीक़त को शायद अब सोचने लगें. सुरिन्दर बोला.

विनायक बहुत खुश हुआ.

—ये सब बहुत लम्बी योजनाएं हैं···अंजना अपनी बात ख़त्म नहीं कर पाई थी.

विनायक ने पूछ लिया—हम लोगों को बिल्कुल आज ही रिजल्ट देने वाली कोई योजना चाहिए, क्यों ?

—यह सोचना गलत है ?

—हमेशा यह सोचना सही नहीं होता. कई दफा रास्ता लम्बा ही होता है. लम्बे रास्ते का छोटा सफर हम सोचें भी क्यों ?

अंजना ने कुछ और नहीं पूछा.

लगता है, रात होती है, दिन होता है और अपने अन्दर हर शाम एक खंडहर उतरकर आता है. उन खंडहरों में केदार कहां खड़ा है ? कहीं वह खड़ा जरूर है लेकिन अंजना जैसे सिर्फ धुंधलके में भटक कर लौट आती है.

ये सब बहुत पुरानी बातें तो नहीं हैं लेकिन लगता है, केदार भट्टाचार्य से कभी ज़माना पहले मुलाक़ात हुई थी. बातें उसी तरह याद हैं लेकिन अंजना अपने अंदर जैसे एक लम्बी उम्र जी चुकने के बाद सोनू की नन्हीं उंगलियां पकड़कर सड़क पर कहीं खड़ी है. वह सड़क कहां है, इतना भी तो पता नहीं है !

इन सबके बावजूद केदार जैसे कहीं से एकदम से निकलकर सामने आकर बोलेगा—हलऽऽलो. जैसे छुप जाना और एकबारगी निकल आने से ज्यादा सरप्राईजिंग कुछ और हो ही नहीं सकता.

जिस दिन पहली बार केदार मिला था, चेहरे पर सातेक दिन की बढ़ी हुई दाढ़ी और बिखरे हुए बाल थे. चेहरा सूखकर काला हो रहा था. लगा यही था, कम-से-कम तीनेक दिनों से रोटी का एक गस्सा भी पेट के अंदर नहीं गया होगा.

यह कलकत्ते से फरार होकर किसी तरह बरेली पहुंचने वाले केदार भट्टाचार्य से पहली मुलाक़ात की कहानी. स्कूल के दफ्तर के जिन अविनाश भट्टाचार्य ने केदार को कुछेक दिन सर छुपाकर रहने के लिए अंजना के यहां पहुंचाया था, वह शुरू से ही सदगृहस्थी ब्राह्मण रहा है. स्कूल लड़कियों का है, कोई ऐसा-वैसा आदमी यहां हुआ तो बदनामी भी हो सकती है. लेकिन अविनाश भट्टाचार्य ने अपने चश्मे के अंदर से स्कूल के हिसाब-किताब की संख्या देखने के अलावा किसी लड़की या मास्टरनी की तरफ शायद ही कभी देखा होगा. फुर्सत भी कहां मिलती है ? सुबह से लेकर शाम तक यहां दफ्तर में मगजपच्ची करने के बाद शाम को घर पहुंचकर थैला लेकर बाजार के लिए भी निकलना पड़ता है, ऊपर से तीन-तीन लड़कियां हैं, उन्हें कॉपी-किताब थमाकर पढ़ने-पढ़ाने के लिए बैठना पड़ता है. इसके बाद आदमी को अगर फुर्सत मिलती है तो सिर्फ़ सोने के लिए.

अविनाश भट्टाचार्य से केदार का एक रिश्ता भी था. रिश्ता वैसे बहुत नज़दीक का तो नहीं था लेकिन केदार पता नहीं कैसे ढूढ-ढ़ाँढकर यहां कैसे पहुंच ही गया था. अविनाश के फुफेरे भाई थे केदार के पिता जब हिन्दुस्तान-पाकिस्तान नहीं बने थे, ढाका जिले में रहने वाले दोनों परिवारों के दरमियान काफी घनिष्टता थी. केदार को इन बातों के बारे में खास, वैसे कुछ नहीं मालूम लेकिन कलकत्ता में मां से अक्सर सुनता रहा है.

फिर बंटवारे के बाद अविनाश छह महीने कलकत्ता में गुज़ार कर काम-धंधे की तलाश में बनारस आ गया था. कलकत्ते मे ऐडी-चोटी एक कर ली थी लेकिन काम नहीं मिला था. बनारस मे कोई रिश्तेदार था. उसी ने इंतज़ाम कर बरेली भेज दिया था. पन्द्रह दिन के अंदर फिर लड़कियों के स्कूल में बाबू का काम मिल गया था.

हिन्दुस्तान-पाकिस्तान का यह तमाशा न होता तो अविनाश भट्टाचार्य ऐसे कामों की परवाह कभी करता ? वहाँ अच्छी-खासी जमीनें थी, पक्की छत का मकान था, पाँच-सात गाएं थी, बगीचे थे. और यहाँ आकर तो पानी भी खरीदना पड़ रहा है. कलकत्ता आकर ये सब तमाशा देखकर शुरू में अविनाश दंग रह गया था. लेकिन तब उम्र कम थी, सो किसी तरह इतनी भारी चोट बरदाश्त कर गया. आज अगर उन दिनों की तरह भिखारी बनकर गाँव छोड़कर निकलता है तो शायद अविनाश रास्ते में ही दम तोड़ देता.

अविनाश भट्टाचार्य के पास पिछले दसेक सालों से कलकत्ते की कोई खबर थी ही नहीं. किराया खर्च कर जाने की हिम्मत नही होती और इस महंगाई के ज़माने में बरेली तक कलकत्ते से आता भी कौन है ? दुर्गापूजा के बाद एक-आध खत कोई लिख देता है और अविनाश तसल्ली कर लेता है, बंगाल से रिश्ता अभी ही खत्म नहीं हो गया. उन्हीं चिट्ठियों के जरिये पता चला था. फटीक भट्टाचार्य का लड़का केदार एक तरह से खूनी-डकैत जैसा बन गया है.

खत पढ़कर अविनाश ने एक गहरी साँस ली थी.

देश-गांव अगर रहता तो इस भट्टाचार्य कुल की कितनी इज्ज़त होती. अविनाश को अभी तक अच्छी तरह याद है, फूफा नृसिंह भट्टाचार्य धूमधाम से अपने यहाँ दुर्गापूजा करते थे. कहते थे—मा की पूजा के बिना शक्ति नही मिल सकती. उतनी बड़ी पूजा उस इलाके के दसेक गांवों में भी कहीं नहीं होती थी. दूर-दूर से लोग पूजा देखने आते थे.

नृसिंह भट्टाचार्य पेशे से पुरोहित थे. लेकिन उन्हें हमेशा यह याद रहा है कि सम्मान के सामने व्यक्ति की कोई भी सम्पत्ति छोटी होती है. वे सिर्फ ज़मीदारों के यहाँ जाते रहे हैं और बदले में जितना कुछ उन्हें प्राप्त होता रहा है, उसका कुल जोड़ एक छोटी-मोटी ज़मीदारी से कम नही होगा.

नृसिंह भट्टाचार्य का बदन दूध की तरह सफेद था. लाल रेशमी वस्त्र पहन कर रोज वह स्नान के बाद सूर्यप्रणाम करते थे. संस्कृत के स्तोत्रों का इतना शुद्ध और प्रभावशाली उच्चारण और कौन कर सकता है, अविनाश को नहीं मालूम.

नृसिंह भट्टाचार्य का रुतबा था, कोई यकीन नही करेगा लेकिन अविनाश ने यह सब देखा है. लोग ज़मींदार की तरह इज्ज़त करते थे. लेकिन वक्त आखिर पलटता ही है. अविनाश को आश्चर्य होता है कि उस कुल का एक लड़का वंश-गरिमा को खाक में मिलाकर खूनी-डकैत कैसे बन गया.

केदार आया तो अविनाश चौंक उठा. दो दिन अपने यहां ठहराया भी था

लेकिन बाद में समझ गया, मामला बहुत आसान नही है. पुलिस को अगर कही शक पड़ गया तो यह अविनाश भट्टाचार्य बेमौत मारा जाएगा घर-गृहस्थी वाला आदमी है. कभी किसी का बुरा नही किया लेकिन मुसीबत अगर सर पर आ ही पड़ी तो इस परदेश मे कोई बचाने नही आएगा. नृसिह भट्टाचार्य का ऋण बहुत है अविनाश इस ऋण को स्वीकार भी करता है. वह महापुरुष थे और महापुरुष दूसरो को ऋणी बनाकर ही जाता है. ऐसी बात न होती तो अविनाश शायद केदार से हाथ ही जोड लेता.

स्कूल की मास्टरनी अजना चौहान के पास दो कमरो का एक मकान है. अविनाश ने अपनी गर्भवती बीवी की दुहाई देकर अजना के सामने हाथ जोड दिए थे—महीना-पन्द्रह दिन टिका लो, फिर बच्चा-बच्चा हो जाए तो भतीजे को वापस ले जाएंगे.

अंजना को यह प्रस्ताव अच्छा तो नही लगा था लेकिन एकदम से 'नही' कहते नही बना था. मकान दो कमरो का जरूर है लेकिन दूसरे मे भाई रहता है. कई बार गाँव मे माँ-बाप आ जाते है तो दो कमरो का यह मकान बहुत छोटा पड जाता है लेकिन अविनाश भट्टाचार्य के चेहरे की दयनीयता देखकर वह, बस मना नही कर सकी थी.

शुरू में जब केदार आया था, खद्दर के एक कुर्ते और पाजामे मे था, अंदर मे अंजना को डर-सा ही लगा था शुरू मे चार दिन तक कोई खास बातचीत भी नही हुई थी. केदार को देखकर नही लगा था कि बातचीत करने की कोई इच्छा भी उसके मन मे है अजना ने चारपाई दी थी लेकिन उसने जमीन पर चटाई लगाकर उस पर कम्बल बिछा लिया था. खिडकी से जितना दीख सकता था, उससे सिर्फ इतना पता चला था कि अविनाश भट्टाचार्य के भतीजे को किताबे पढने और सस्ती सिग्रेट पीने के अलावा कोई तीसरा शौक नही है

इस बीच अविनाश तो यहा नहीं आया था लेकिन केदार उधर का चक्कर जरूर लगाता रहा है अजना को थोड़ा आश्चर्य भी हुआ था लेकिन उसने झाक कर नही देखा था कि केदार भट्टाचार्य इन दो कामो के अलावा कोई तीसरा काम कर भी रहा है या नहीं.

आखिर में एक दिन केदार ने ही बात शुरू की थी—जबरदस्ती मेहमान बन कर रह रहा हूं.

कलकत्ते का आदमी इस तरह हिन्दी नही बोल सकता, अविनाश भट्टाचार्य को देखकर कोई भी समझ सकता है इतने बरस से अविनाश बरौनी म है लेकिन हिन्दी बोलता है तो सुनने वाले को लगता है, लगभग बगला जैसी ही कोई जुबान है.

केदार समझ गया था बोला—आपको डाउट हो रहा होगा कि हिन्दी कैसे बोल रहा हू. कई साल लगातार बिहार आना-जाना रहा हू, बिना कोशिश किए ही सीख गया. खैर छोडिए मेरी बाते आप तो टीचर है इट'ज ए नोबल प्रोफशन कभी मैं भी टीचर होने की सोचता था.

—क्या करते है आप ? अजना को शायद यह पूछना चाहिए था लेकिन नही पूछा. अविनाश ने भी सिर्फ इतना ही बताया था कि भतीजा है, थोड़ा घूमने-फिरने आया है. पूछने से कम-से-कम केदार को तसल्ली हो जाती

चुप्पी थी.

केदार ने चुप्पी तोडी—मै पटने मे आगे इससे पहले कभी नही आया था इस तरफ का यह मेरा पहला सफर है और इलाका बहुत पसन्द आ गया. यहाँ के

सारे तौर-तरीके पूर्वी इलाकों से बहुत अलग हैं.

और ज्यादा बातें नहीं हुई थीं.

अंजना को बस यही एक चीज़ है, जिससे कपकपी छूटती है. कोई नया आदमी हुआ तो गले से आवाज़ ही नहीं निकलती.

फिर यही केदार भट्टाचार्य बहुत मोहक लगने लगा था. दिमाग की नसें तनने लगीं तो वह होशियार हो गई थी. औरत-मर्द के बीच यह एक मामूली बात ही तो है. आज का केदार भट्टाचार्य कल कहां चला जाएगा. शायद अविनाश को भी पता नहीं चलेगा.

इसके बाद एक दिन केदार ने दुनिया की सभ्यता का इतिहास बताना शुरू किया था. सिग्रेट के धुएं के साथ वह जैसे इतिहास बताने के साथ-साथ समूची दुनिया को निचोड़ लेना चाहता था.

अंजना को सारी बातें समझ मे तो नहीं आई थी लेकिन केदार के लिए मन के अंदर आदर थोड़ा और बढ गया था. फिर केदार जैसे बहुत करीब का कोई हो गया था. इतने क़रीब का कि उंगलियाँ बढ़ाकर उसे छुआ तक जा सकता है.

एक दिन केदार ने शाम के धुंधलके में पूछ ही लिया—आपने तो जानना ही नहीं चाहा कि आपके स्कूल के हेडक्लर्क का भतीजा आख़िर है कौन ?

ऐसी पेचीदी बातों मे अंजना का दम घुटने-सा लगता है, कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि जवाब क्या दिया जाए. वह चाय का प्याला लेकर आई थी. थोड़ी सी चाय छलककर चटाई पर गिर भी पड़ी थी.

—बैठिए. केदार बोला. उसकी आवाज़ मे सौजन्यता रही ही होगी लेकिन अंजना को इसमे हुक्म जैसा कुछ लगा था.

आखिर में सकुचाने के बाद वह बैठ गई थी.

केदार ने एक सिग्रेट सुलगाई. माचिस की तीली के जलने की आवाज़ पूरे कमरे में फैल गई.

●●

अंजना को लगता है, केदार कितनी ही देर तक बोलता जाए, उसकी कहानी कभी खत्म ही नहीं होगी. दिमाग मे जैसे बन्दूक से निकली गोलियाँ आकर सब-कुछ तोड़फोड़ करने लगी थीं.

इकोनॉमिक्स एम. ए. फाईनल ईयर का लड़का केदार भट्टाचार्य पिछले कितने ही बरसों से सिर्फ भाग ही रहा है. इम्तिहान पास कर कॉलेज मे प्रोफेसर बनने की तमन्ना थी. लेकिन एक दिन जतीन मजूमदार से कॉलेज स्ट्रीट के किताबों के मुहल्ले में ऐसी मुलाक़ात हो गई कि केदार भट्टाचार्य का रास्ता ही बदल गया.

पूरा बंगाल तब जलने-सा लगा था. अख़बार वालों को वे लपटें दिखाई नहीं पड़ती थीं लेकिन जतीन मजूमदार ने केदार को दिखाया था कि आग का नक्शा कैसा होता है. कालीघाट के पास डेढ़ कमरे का एक छोटा-सा किराए का मकान था. केदार के ऊपर तब पूरे घर की उम्मीदों का एक खासा महल था. फणिभूषण बड़े बाज़ार के आढ़तियों के यहाँ खाता लिखते-लिखते चूर-चूर हो जाते लेकिन केदार का चेहरा याद आते ही सहारा-सा मिल जाता. लड़का पढ़ने-लिखने में शुरू से ही तेज़ है. वज़ीफ़ा पाकर पढ़ाई कर रहा है. वर्ना फणिभूषण अपने बेटे को शायद किसी आढ़ती के ही यहां कह-सुनकर लगवा देते.

केदार फणिभूषण की पांच संतानों मे सबसे बड़ा है. उसके बाद तीन लड़कियां हैं और सबसे छोटा एक लड़का है. पांच भाई-बहनों में पढ़ने-लिखने में गोबरगणेश

ज़रूर कोई नहीं है लेकिन केदार-सा नतीजा आज तक इम्तिहान में कोई बना ही नहीं पाया. छोटा लड़का परेश कभी फेल तो नहीं हुआ लेकिन पढ़ाई में हमेशा ही पीछे रहा है. स्कूल की फुटबाल टीम में खेलता है और उसी बहाने यहाँ से वहाँ घूमता रहता है. फणिभूषण ने कई बार समझाया भी कि आज के जमाने में फर्स्ट डिवीज़न पाकर भी लड़के क्लर्क की नौकरी तक के लिए जूते रगड़ते फिरते हैं···.

लेकिन परेश के पास हमेशा ही जवाब रेडीमेड कपड़ों की तरह तैयार रहा है —खेल अब कोई मामूली बात थोड़े ही रही. फुटबाल के मशहूर खिलाड़ी पेले के पास तो कई खानें और अरबों रुपए हैं.

फणिभूषण भट्टाचार्य को नीग्रो फुटबाल के खिलाड़ी का नाम सुनने की ज़रूरत कभी नहीं पड़ी थी. बड़े बाज़ार की आढ़तों में खाता लिखने का काम है. इतवार तक की छुट्टी वह नहीं लेते. इतने सारे खाने-पहनने वाले हैं. ऊपर से पांच-दस रुपए एक-दिन की मेहनत से अगर मिल सके तो फणिभूषण के लिए यह कोई मामूली बात नहीं है. लड़कियाँ अब बड़ी हो गई हैं. बड़ी दो लड़कियाँ मैट्रिक करके घर में बैठी हैं. कुछ रुपए-पैसे का इंतज़ाम हो तो दोनों की शादी इकट्ठे भी हो सकती है. इस चिंता से फणिभूषण को नींद भी नहीं आती.

लड़कियां वैसे देखने-सुनने में मेनका-रंभा-जैसी न सही, बहुत बुरी भी नहीं हैं. घर के काम-काज भी संभालती ही हैं लेकिन लड़के वालों को जब तक रुपए की थैली न दिखाओ, बात ही नहीं करते. लड़कियाँ बड़ी क्या हो गईं, फणिभूषण के सर पर जैसे खुली तलवारें लटकने लगीं. अब जो कुछ उम्मीद है, वह केदार की वजह से ही है. एम. ए. करते ही केदार प्रोफेसर बन जाएगा और फणिभूषण तब थोड़ी-सी चैन की सांस ले सकेंगे.

लेकिन जतीन मजूमदार ने एक झटका देकर सब बदल दिया था. कॉलिज स्ट्रीट में उस मुलाक़ात से पहले एक और संक्षिप्त-सी मुलाकात अंग्रेज़ी के लेक्चरार दीपेंदु बोस के घर हुई थी. आधे घंटे की उस मुलाकात में बातें कम और बहस ज्यादा होती रही है. केदार के पास वक्त कम था वर्ना वह सिलसिला वहीं ख़त्म नहीं हो जाता. जतीन मजूमदार ने श्याम बाज़ार की एक गली का नम्बर बताया था और कभी फ़ुर्सत से मिलने के लिए कहा था केदार ने सोचा भी था लेकिन वक्त नहीं निकाल सका था. उस दिन अचानक मुलाक़ात हो गई तो कॉफी हाउस में पूरे चार घंटे एक साथ गुज़रे थे.

जतीन मजूमदार जलपाईगुड़ी के एक कॉलेज में इतिहास पढ़ाते थे अब कलकत्ते में हैं और सोच रहे हैं कि जो आग कलकत्ते की गलियों में फैल गई है, वह पूरे मुल्क में किस तरह फैल सकती है.

बस, केदार का रास्ता बदल गया.

एक दफा पुलिस ने आकर घर का एक-एक कोना छान डाला और फणिभूषण भट्टाचार्य को थाने में ले गई. वह बेहोश तो ख़ैर नहीं हुए लेकिन समझ नहीं पा रहे थे कि सामने जो कुछ हो रहा है, वह सब सही ही है या आँखों का कोई भ्रम है.

केदार के नाम वारंट था.

कोई अगर आकर फणिभूषण के घर में आग भी लगा देता, उन्हें इसमें कम ही तकलीफ़ होती. तकलीफ़ जितनी होनी थी, उतनी तो हुई ही, लेकिन उससे बेइज़्ज़ती का जो एहसास हुआ था, उसमें मर जाना ही उन्हें बेहतर लगा था.

इससे पहले कई बार ऐसा हुआ है, जब केदार तीन-तीन दिन तक या कभी-कभी तो एक-एक हफ्ता भी बाहर रहा है. बाप को बेटे पर कभी शक नहीं हुआ.

केदार ने जो कुछ भी कारण बताया, फणिभूषण यक़ीन मानते रहे हैं. उनका बेटा कभी भी मामूली लोगों की तरह झूठ नहीं बोलता, यह विश्वास मन में था.

केदार के ख़िलाफ़ बिजली दफ्तर की कैश-गाड़ी लूटने का आरोप था. छह और लड़कों के नाम दर्ज थे. थानेदार का ख़याल था, बहुत न सही, फणिभूषण को कुछ अंदाज़ा होगा ही. लेकिन यह आदमी इस क़दर गौ क़िस्म का निकला कि आख़िर में थानेदार झुंझला गया था.

गली में जो पड़ोसी थे, किसी ने फणिभूषण से ख़ास कुछ नहीं पूछा. पुलिस-कचहरी का मामला है. कहीं लेने के देने न पड़ जाएं. फणिभूषण फिर पूरी गली से अपने आप कट ही गए थे. कोई एकदम से सामने पड़ ही जाता तो एक-आध बात बोलकर ही खिसक पड़ता. एक ख़ूनी के सामने पड़ जाने पर लोग जिस तरह कतराते हैं, फणिभूषण को देखकर गली के लोग उसी तरह सलूक करने लगे थे.

केदार के साथ फणिभूषण की इसके बाद कुल दो बार और मुलाक़ातें हुई थीं. एक बार दस मिनट के लिए और दूसरी बार आधे घंटे के लिए. रात के अंधेरे में केदार आया था.

दाढ़ी-मूछों के जंगल से बेटे का चेहरा इस तरह ढक गया था कि फणिभूषण केदार को शुरू में पहचान ही नहीं पाए थे. बेटे को देखकर केदार की मां फूट-फूटकर रोने लगी थी. फिर वह जिस तरह आया था, उसी तरह चला भी गया था. सब-कुछ बाद में बिजली चमकने जैसा लगा था

उसके बाद भी कालीघाट थाने का पुलिस का दस्ता आकर फणिभूषण का घर तहस-नहस करता रहा है फणिभूषण ने जाना, उनके बेटे ने बीरभूम ज़िले के एक तहसीलदार का ख़ून किया है. फिर कलकत्ते में भी एक बदनाम एस. डी. ओ. का क़त्ल हुआ था. इस सिलसिले में भी केदार की तलाश में दरोगा फणिभूषण से घंटों पूछ-ताछ करता रहा है.

कलकत्ता तब जंगली आग जैसा हो गया था. ओहदे वाले लोग जैसे लूटमार के लिए लाइसेंस-शुदा सिपाही थे. चीजों के भाव आसमान छूने लगे थे. स्यालिदा स्टेशन में बच्चे पैदा होते और वहीं ख़त्म भी हो जाते

जतीन मजूमदार ने केदार को एक-एक दृश्य दिखाया था. किस तरह कुछ लोग जोंक की तरह आदमी का ख़ून चूस रहे हैं और कुछ लोग बिल्कुल सफ़ेद कपड़े पहन कर गली-गली घूमकर वोट मांग रहे हैं. जनता की सेवा के लिए वोटों की याचना.

बाजार की एक-एक चीज़ नकली और उस पर इत्मीनान से बैठा हुआ सेठ. डकारें लेता है तो उसके मुंह से बदबू निकलती है. केदार रात-भर के अंदर बदल गया था.

जतीन मजूमदार बचपन से ही दमे के मरीज थे. दमा अमूमन बचपन में नहीं होगा. लेकिन जो शख़्स उल्टी धारा में ही सिर्फ़ चलता है, उसके मर्ज़ भी शायद उल्टे ही होते हैं. जेब में हमेशा ही दवा की गोलियां रहती थीं.

केदार जब बीरभूम जिले की रायपुरहाट तहसील गया था, तब जतीन मजूमदार पकड़े गए थे. थानेदार को इस बहादुरी के लिए एक तरक्की भी मिल गई थी. तरक्की के साथ चीतपुर थाने में बदली हो गई थी. ऊपरी आमदनी के लिहाज से यह इलाक़ा कहीं बेहतर है.

गिरफ्तारी के तीन दिन बाद जतीन मजूमदार के मरने की ख़बर अख़बारों में छपी थी. केदार तड़पकर रह गया था. फिर पता चला था, लावारिस लाशों के साथ जतीन मजूमदार की लाश का संस्कार कार्पोरेशन के डोम ने थोक के भाव कर दिया है.

जतीन मजूमदार की मौत ने साथियों को बहुत न सही, थोड़ा-बहुत छिन्न-भिन्न तो कर ही दिया था अखबारों मे इस मौत को लेकर कई टिप्पणिया छपीं, कुछेक खत प्रकाशित हुए. लगभग सबका लहजा एक ही था. यानी अखबार वाले अब उम्मीद कर पा रहे थे कि बगाल में से सत्रास की समाप्ति होगी.

केदार इसके बाद एक-एक साथी से घंटों बहस करता रहा है. जो बिखराव थोड़े अरसे के लिए आया था, वह फिर टिका नही. जतीन मजूमदार जैसे किसी अलादीन के चिराग के जादू से जिन्दा हो उठे थे.

उसी दरमियान बांकुड़ा और मेदिनीपुर जिलो मे कई जोतदारो का क़त्ल हो गया. जो सिर्फ खेतिहर मजदूर थे, अब तक जोतदारों के सामने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते ही रहे हैं. इन हादसों के बाद मे उन लोगो ने बकरो की तरह मिमियाना बन्द कर दिया था.

फिर केदार भट्टाचार्य की गिरफ्तारी या उसे मार पाने की बहादुरी के लिए पांच हजार रुपए का इनाम घोषित हुआ था. इस इनाम के बारे मे इश्तहार कलकत्ते के लगभग सारे अखबारों मे प्रकाशित हुए थे.

कलकत्ते मे रहना तब छुरे की धार पर चलना था और निकलने मे भी पकडे जाने का खतरा था. लेकिन केदार भट्टाचार्य को पता है इगलैड के चर्चिल और क्यूबा के ग्वेबारा किस तरह दुश्मन को धोखा देकर भागते रहे है मालगाडी के पैकिग बक्सो के साथ केदार फिर कलकत्ते मे निकल आया था.

इसके बाद की बाते बहुत थोडी है.

पूरी कहानी जानने मे अजना को महीना-भर लगा था जिस तरह मे जतीन मजूमदार ने केदार भट्टाचार्य को बदल दिया था, लगभग उमी तरह अजना भी बदल गई थी. शुरु मे जो शख्म डरावना-मा लगा था, वही आदमी महीना-भर गुजरने के बाद सफेद फूल की तरह कोमल और पवित्र लगने लगा

इसके बाद अजना ने शादी का प्रस्ताव किया था. ऐसा प्रस्ताव आमतौर पर लडकियां नही करतीं, सिर्फ प्रस्ताव की मजूरी-भर दे देती है लेकिन अजना को लगा था, केदार अब किमी भी दिन कधे मे झोला डालकर यहा मे निकल पड सकता है

मजूरी देने मे केदार ने दो दिन का वक्त लिया था इन दो दिनो मे अजना गहरे पानी मे जैसे डूबती और तैरती रही है. उसके बाद एक दिन अविनाश भट्टाचार्य को पता चला कि नृसिंह भट्टाचार्य के पोते केदार ने अपने कुल-गोत्र, मब-कुछ को तिलांजलि देकर एक आजाद लड़की को बहू बना लिया है.

जब तक बरेली मे रहना था, केदार अजना का होकर रहा अजना अगले छह महीनों मे भर-सी उठी थी. पति की ऊंचाई इतनी है कि कोई सिर्फ महसूस ही कर सकता है, कहने से यकीन नही करेगा. अजना ने रोम-रोम की गहराई, ऊचाई और फैलाव को छूकर देख लिया था.

इस तरह कोई साल-भर कटा था.

बहुत ज्यादा खबरे तो इस बीच नही मिली थी, फिर भी जितना पता हो मका था, उससे लगता रहा है, जतीन मजूमदार फिर कही खो गए हैं. केदार के लिए इससे बढकर मलाल और क्या हो मकता है कि पूरे हिन्दुस्तान-भर मे जतीन मजूमदार कही नही हैं. साथ के जो दूसरे लोग थे, अब वे कहाँ है, कौन आकर केदार भट्टाचार्य को बताएगा ? वह फिर वापम निकल गया था. अजना ने नही रोका. उम वक्त सोनू पेट में था. कलेजा फट रहा था लेकिन स्टेशन जाकर उसने केदार को गाडी पर बैठाया था. उसने कुछ बचन तो नही मागा था लेकिन केदार ने शायद बहुत जल्द लौटने की बात

कही थी. उस वक्त दिमाग की नसें इस तरह ठंडी हो गई थीं कि उसने कहा क्या था, अंजना ठीक से सुन भी नहीं पाई थी.

स्यालदा एक्सप्रेस के एक तीसरे दर्जे के डिब्बे में खिड़की के पास बैठकर विदाई में हथेली दिखाते हुए केदार को अंजना ने आखरी बार देखा था.

इसके पद्रह दिन बाद रामपुरहाट से अपरिचित हस्ताक्षर का एक ख़त आया था कि केदार भट्टाचार्य अब शहीद हो गया.

बस.

अब सिर्फ़ यादें हैं और सोनू है. अंजना का कलेजा कभी-कभी फटता तो है लेकिन केदार का चेहरा एकदम से फिर सामने तैरने लगता. तब लगता है, जतीन मजूमदार की तरह केदार भट्टाचार्य कभी मर ही नहीं सकता. शायद केदार की ही तरह उसका बेटा सोनू भी कभी नहीं मरेगा···.अंजना सोनू को सीने में भींचकर कुछ बुदबुदाने लगती है. लेकिन क्या कहती है, इसका पता किसी को नहीं है. अंजना को भी नहीं.

●●

कीमतों के आसमान छूने के प्रतिवाद में बरेली में हड़ताल हो गई.

द्वारिका ने कॉलेज यूनियन की मीटिंग में यह प्रस्ताव पास करवा लिया था. आख़िर में तय यह हुआ था कि सारी दुकानें और दफ्तर बन्द रहेंगे और शाम को तीन बजे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सामने से एक जुलूस निकल कर चौपला और सरकारी अस्पताल के सामने से होकर मोती पार्क तक पहुंचेगा.

यह ख्याल शुरू में विनायक के दिमाग में आया था. फिर चुनाव नजदीक होने की वजह से अंजना, सुरिंदर वग़ैरह को भी यह मौक़ा बहुत कीमती लगा था.

कॉलेज यूनियन की मीटिंग में द्वारिका की वजह से विनायक भी मौजूद था. ऐसी मीटिंग में अमूमन कोई बाहर का आदमी बुलाया नहीं जाता. लेकिन जरूरत के मुताबिक कई दफ़ा प्रथा तोड़ी भी जाती है. विनायक को बुलाया गया था.

गोपाल वर्मा विनायक के साथ ही पढ़ता था. अब वह यहां लेक्चरार हो गया है. छात्र यूनियन में दिलचस्पी की वजह से वह भी मौजूद था. विनायक के घुसते ही गोपाल ने हाथ मिलाया और गले लगा लिया—बहुत दिनों बाद मिल रहा हूं यार.

—प्रोफ़ेसर को फुर्सत ही कहां है ? विनायक ने मज़ाक किया.

—फुर्सत ? फ़ुर्सत तो यार वाक़ई नहीं मिलती. मेरी बीवी को तूने देखा हो कहां है ? उनके पास फर्माईश की एक फेहरिस्त हमेशा मौजूद रहती है. लेकिन तू यार ख़ामा लकी है. शादी-ब्याह के पचड़े में पड़ा ही नहीं. तुझे देखकर मैं जेलस फील कर रहा हूं.

—चालाक आदमी विनय करके भी अपना बड़प्पन जता ही देता है.

विनायक ने मज़ाक किया था लेकिन गोपाल वर्मा सजीदा हो गया—प्रोफ़ेसर बैनर्जी की याद अक्सर आती है. फिर तो बाद में हम जैसे बिखर ही गए. इस बात में बड़प्पन भी क्या है कि मौक़ापरस्तों की तरह जी रहा हूं. बीवी के साथ गृहस्थी निभा

रहा हू कॉलिज मे आकर क्लास मे वे सब बाते कहता हू, जिनकी कोई जरूरत नही है और फुर्सत के वक्त कार्लमार्क्स की दुहाई देकर क्रांति वगैरह की बात कर लेता हूं मुझे अब समझ में आ गया कि जो शख्स जितना नपुंसक होगा, वह उतनी ही क्रांति की कहानिया सुनाकर अपने को क्रांतिकारी साबित करने की कोशिश करेगा गोपाल फिर चुप-सा हो गया

विनायक ने बरसो पहले के दोस्त को देखा अब काफी फर्क आ गया है चेहरे पर नजर पडते ही लगता है, सावित्री बजाज के पीछे भौंरे की तरह मडराने वाले गोपाल वर्मा की आखो मे वक्त के बदलने की एक गहरी छाप है उस छाप मे व्यर्थता की एक ऐसी तकलीफ है, जो आदमी के अतीत और आज के बीच एक बहुत बडा फर्क ला देती है.

माहौल को हल्का करने के लिए विनायक ने मजाक किया—तू यार मोटा हो गया है लगता है, भाभी पुलाव-पकवान बडी मुहब्बत से बनाती है

गोपाल नही हसा

—तेरे बारे मे अक्सर सुनाई पडता था गोपाल बोला कई बार सोचा भी कि एक दिन पकड कर ले आऊगा तुझे बस, बूर्ज्वा आदमी के पास बहाने की कमी कभी नही होती हर बार बहाना ढूढ ही लेता

विनायक हसा—मुहम्मद पहाड के पास कहा गए थे ? पहाड ही मुहम्मद के पास आ गया

—तू सच पहाड ही है

यह सिलसिला शायद आगे और बढता लेकिन विनायक चुप हो गया था

●●

मीटिंग मे कुलमिलाकर दस लोग थे आठ यूनियन के कार्यकर्ता और गोपाल वर्मा, आखिरी आदमी था विनायक सबसे पहले द्वारिका ने बात शुरू की—कीमत की बढोत्तरी को लेकर हम लोग जो हडताल करने जा रहे है, वह आज के हालात मे एक अहम सवाल है मुझे या हम लोगो को यह यकीन नही है कि सिर्फ झण्डे उठाने से या नारे लगाने-भर से, हम लोग मकसद पूरा कर सकते है यह एक शुरूआत होगी बस्ती का छोटा दुकानदार हो या दफ्तर का बाबू या स्कूल मास्टर, सबके जेहन मे यह बात यह हडताल बैठा पाएगी कि भ्रष्टाचार की वजह से हम लगातार सिर्फ पिसते रहे है

—मेरा ख्याल है, जुलूस को ले जाने मे कोई दिक्कत नही होगी लेकिन अगर होती है तो हम क्या करेगे ? गोपाल ने पूछा

विनायक ने जवाब दिया—दिक्कत नही होगी, ऐसा मै नही सोचता बिल्कुल अभी उसके हल के बारे मे कुछ बताना मुश्किल तो है लेकिन यह तय है कि हमलोग जुलूस छोडकर भाग नही खडे होंगे यह काम पेशेवर पालीटिशियन्स के लिए ही रिजर्व्ड है.

—अभी सामने ही चुगी का चुनाव है . गोपाल वर्मा अपनी बात पूरी नही कर पाया.

विनायक ने रोक दिया—इस मौके की जरूरत हम लोगो को नही है हमारे लिए यह कोई अहम की बात नही है कि पीली टोपी जीतती है या सफेद टोपी गद्दी हथिया लेने के बाद टोपी-टोपी मे कोई फर्क रह नही जाता है यह बात बस्ती के लोगो को हम कितनी जल्दी समझा सकते है, उस पर सोचना होगा

छात्र यूनियन के सहायक मत्री ब्रजवासी ने टेबल पर थपकी दी—लेकिन इसमे एक खतरा है लोगों के जेहन मे गणतत्र की बात ठूस-ठूस कर भरी हुई है. यह गैर

गणतान्त्रिक तरीका उन्हे पसद आएगा, मुझे यकीन नही है

—चैलेज यही पर है विनायक बोला—बात अगर इतनी आसानी से समझ में आ जाती तो हम खामखाह यह मीटिंग बुलाकर मगजपच्ची नही करते मुझे मालूम है कि किसी भी आम आदमी के दिमाग मे यह बात धूप और पानी की तरह सच्चाई की हद तक बैठी हुई है कि यहाँ सब-कुछ गणतान्त्रिक है यह बात किसी किताब मे लिखी तो नही होगी कि गैरगणतान्त्रिक तरीके यहाँ जबरदस्त है हमारी चुनौती बस यही है कि लोगो को यह हकीकत सिर्फ बताए नही यकीन करा दे उसके बाद का रास्ता अपने आप ही निकल आएगा

दरवाजे पर दस्तक हुई थी

सुरिदर आकर बता गया कि आस-पास सफेदपोश जासूस भी है मुमकिन है कोई गिरफ्तार भी हो जाए

मीटिंग वही खत्म हो गई

●●

डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सामने सबसे पहले द्वारिका और विनायक पहुचे थे.

दिन-भर दूकाने बन्द रही है और कही कोई हगामा नही हुआ था जो लोग दफ्तर जाने वाले बाबू है, ऊपर से एक दिन की अप्रत्याशित छुट्टी की वजह से खुश थे और दुपहर का इस्तेमाल आराम से सोकर कर रहे थे

थोडी देर मे डेढेक-सौ लोग जमा हो गए करीब-करीब सभी छात्र थे और कुछ कर गुजरना चाहते थे लेकिन इसमे भी कुछ लडके थे, जिन्हे जबरदस्ती, एक तरह से घसीट कर यहा लाया गया था इस तरह के शोर शराबे और हडताल जैसी चीजो मे उन्हे कभी भी दिलचस्पी नही थी न घरवालो की तरफ से ही इस मामले मे शरीक होने की मजूरी थी और कुछ लोग ऐसे थे, जिन्हे उम्मीद थी कि जुलूस मे बरेली कॉलिज की हसीन लडकिया भी होगी जुलूस अगर रगीन है तो कोई दस मील पैदल चलकर भी नही थकता वे लोग आखिर मे बहुत निराश हो गए

अजना चौहान के अलावा कोई और लडकी नही थी

आखिरी तबके के ये लडके अगर मौका मिलता यहा से खिसक ही जाते

सुरिदर झुझला रहा था सब साले धोखेबाज है मै कहा सोच रहा था कि दसेक हजार का जुलूस होगा और यहा कुलमिलाकर डेढ सौ सिफर है

द्वारिका कुछ नही बोला

अनूप नही आया था कुछेक दिनो से वह अलग-थलग भी रहने लगा था. एक दिन सुरिदर से कहा भी था—शायद सब-कुछ सही नही हो रहा है

सुरिदर शाक्ड हुआ था

विनायक ने उसके कधे पर थपकी दी थी - यह बहुत छोटी-सी बात है हो सकता है, कुछ दिनो बाद यह 'शायद' वाली बात अनूप के दिमाग से हट जाए या उसे यकीन ही आ जाए कि वाकई अब तक वह गलत रास्ते पर चल रहा था

सुरिदर ने इस बात का कोई जवाब नही दिया था

इसके अगले दिन विनायक अनूप के पास पहुचा था—मन मे द्वन्द्व हो तो, हम यकीन के साथ कोई भी काम नही कर सकते है तुम्हे यह द्वन्द्व मिटाने के लिए थोडा इतजार करके खुद को परख लेना होगा

अनूप ने बहस नही की थी

इसके बाद उससे मुलाकाते भी बहुत नही हुई द्वारिका ने एक दफा कॉलिज की कैण्टीन मे उससे बात करने की कोशिश की थी लेकिन वह लगातार मौसमी फूलो

और उनके रंगों पर ही बोलता रहा था.

द्वारिका आहत हुआ था कि एक दोस्त काफ़ी लम्बा सफ़र तय करने के बाद किन्हीं कमजोरियों से अलग हो रहा है.

आज जुलूस निकलने को हुआ तो सुरिंदर को लगा था, अनूप आ भी सकता है.

विनायक ने उसे इतजार न करने के बारे में कोई शेर सुनाया. शेर मामूली था लेकिन सुरिंदर को उस वक्त बहुत कीमती लगा.

गोपाल हाथ में एक बैनर थामे अंजना से बातें कर रहा था.

लोगों की तादाद इतनी कम थी कि सुरिंदर को ही सबसे ज्यादा तकलीफ़ हो रही थी, बोला —मुहल्ले की शादी में भी इससे ज्यादा बाराती होते हैं.

कुछ मनचले क़िस्म के लड़के, जो अब तक चुपचाप बोर हो रहे थे, हंस पड़े थे. एक-आध ने इस शादी और बारात के मामले को लेकर आपस में मज़ाक भी किया.

विनायक ने सुरिंदर की पीठ पर थपकी दी—डोंट बी ग्लूमी.

—मैं बस समझ नहीं पा रहा हूं, बरेली के लड़के ईंट-पत्थर की तरह इतने जड़ क्यों हैं ? सुरिंदर के दिमाग में दर्द हो रहा था.

—तुम्हारा सवाल ही ग़लत है. सवाल यह होना चाहिए कि इस जड़ता को हम लोग ख़त्म कर कैसे सकते हैं ?

सुरिंदर मुस्कराया—आपने बहुत गहरी चोट की है.

—यह प्रॉब्लेम सिर्फ़ बरेली के लिए नहीं है. कलकत्ता भी जाओगे तो आम लड़कों में यही कैरेक्टर देखोगे. केदार भट्टाचार्य जैसे लड़के तादाद में बहुत ज्यादा कभी भी नहीं रहे हैं.

—राइट सर.

—अनूप के न आने की तकलीफ तुम्हे साल रही है, मुझे मालूम है. लेकिन मैंने शुरू में ही एक दफ़ा कहा था कि हम लोगों का रास्ता ही इतना काटेदार है कि आख़िर तक कई जिगरी यारों से बिछुड़ने की तकलीफ सहनी पडेगी.

इसके बाद जुलूस आगे बढ़ा.

माईक पर द्वारिका है. वह नारे लगाता और उत्तर में साथ चल रहे लोग आवाज़ बुलद करते. आवाज जरूर निकल रही थी लेकिन बुलन्दी नहीं थी.

चौपला तक पहुचते हुए कई लोग खिसक गए थे. कुतबखाने से जो सड़क चौपला तक जाती है, उसके दोनों तरफ़ गलियां इतनी है कि जुलूस से निकल कर किसी भी तरफ़ गायब हो जाने मे कोई दिक्कत नही थी.

द्वारिका उदास तो हो रहा था लेकिन माईक पर जोर से नारे लगा रहा था. रास्ते में चंद लोग खड़े होकर तमाशा देख रहे थे. उन लोगों के लिए यह एक मजेदार नज़ारा भी था कि कुछ लोग कतार बांधकर नारा लगा रहे है.

अंजना जुलूस के बिल्कुल शुरू में थी इस वजह से बगल में खड़े लोग खुसर-पुसर कर रहे थे. कुलमिलाकर औरत की मौजूदगी-भर मे मज़ा ज़रूर आ रहा था लेकिन मामला क्या है, लोग ख़ास समझ नहीं पा रहे थे.

औरतें खिड़कियो से झांकने लगी थीं.

इस रास्ते पर पक्की छत वाले कुछ मकान भी पड़ते हैं. उन पर कई लोग उत्सुकता के साथ खड़े थे. देखने वालों में ज्यादातर औरतें ही थीं, उन्हें पूरे जुलूस में सिर्फ़ एक औरत को देखकर ख़ासा ताज्जुब हो रहा है.

इंतजाम यह था कि जुलूस अय्यूब खां के चौराहे से होकर सरकारी अस्पताल के सामने से मोती पार्क तक पहुंचेगा. वहां पर सबसे पहले विनायक बोलेगा और

उसके बाद द्वारिका और गोपाल वर्मा भी कुछ कहेगे शुरू मे अजना भी कहने की तैयारी मे थी लेकिन बाद मे अपना नाम वापस ले लिया था समझ गई थी कि डायस पर चढते ही सब गड्डमड्ड हो जाएगा

सुरिदर और बालकराम, लाइने सीधी-सीधी चले, इस पर निगरानी रख रहे थे कई लोग ऐसे थ जो खिसक नही पा रहे थे और इस तरह चला भी नही जा रहा था आज हडताल की वजह से सिनेमा भी बन्द है वर्ना जुलूस सरकारी अस्पताल से पहले जब 'नावल्टी' के पास से गुजरता तो कुछ लोग उसके अदर भी घुस सकते थे

जुलूस नावल्टी' सिनेमा से कुछ आगे बढा ही था कि कोतवाली के सामने कुछ सिपाही खडे दिखाई दिए सिर पर लोहे का टोप और सीने मे पैड बाधे वे इतजार-से कर रहे थे फिर हवलदार किस्म का एक आदमी सामने आया और यहाँ से वापस चले जाने के लिए हुक्म-सा देने लगा

यह इलाका कभी इतना सूना नही रहता है, जितना आज है कोतवाली के सामने, दीवार से सटकर रोज सस्ती किताबो की दूकाने लगती है. किताबे या तो पन्द्रह पैसे मे बिकने वाली फिल्मी गानो की होती या तीन महीने के अदर अग्रेजी मे बात करने की कला की या नगी औरतो की तस्वीरो की कुछ जासूसी उपन्यास भी मिल जाते है किताबे बिकती तो है ही किराए पर भी मिल जाती है कॉलेज के लडको का एक छोटा-मोटा हुजूम लगभग हमेशा ही यहा चक्कर काटता मिल जाता है आज यहा एक लावारिस और बुरी तरह जख्मो स भरा कुत्ता पडा हुआ था

हवलदार ने गोपाल को हुक्म सुनाया जुलूस के शुरू म ही अजना के साथ वह था, इसलिए

सुरिदर सामने आया—हम लोग लौट जाने क लिए नही आए है

हवलदार उस बुरी तरह घूरने लगा

तब तक बन्द दूकानो के बरामदो पर कई लोग जमा हो गए थे उनम से कुछ दूकानदार थ कुछ तमाशबीन वे शायद दूकानदारो के लडके वगैरह थ जो स्कूल या कालेज मे कायदे स जाते तो थे लेकिन इम्तिहान कभी-कभी ही पास हो पाते थे आज खाली होने की वजह से वे घूमने-फिरने के इरादे से शायद इधर चले आए थे

विनायक पीछे की तरफ था अब सामने आया—यह जुलूस गैरकानूनी नही है हम लोग दगा तो नही कर रहे है

हवलदार झुझला उठा—लेकिन दगा नही करेगे, इसकी गारटी क्या ह ? हवलदार की मुलाकात इससे पहले भी विनायक स कई बार हुई थी और कभी भी वह इस तरह सीना तान कर बात करने वाले बित्ते-भर के छोकरे को पसद नही कर पाया यहा तो बडे-बडे कलेजे वाले आते है और जब लौटते है तो तिनके के बराबर भी नही रहते

—गारटी ? गारटी तो इस बात की भी नही है कि पुलिस वाले डकैत नही है सुरिदर गुस्से से तमतमा रहा था

हवलदार ने सुरिदर को कॉलर स पकड लिया—चल, अभी बताता हू, पुलिस वाले है कौन ? बाप का नाम भुला दूगा

सुरिदर के जिस्म का जो आकार है, उसके सामने हवलदार ठिगना-सा लग रहा था उसे शायद एकदम से याद आ गया था कि वह सरदार सुरिदर सिह है, जिसका घर कभी गुजरावाला मे हुआ करता था उसने कॉलर छुडाने की कोशिश की तो कमीज फट गई फिर उसने झटका-सा दिया तो हवलदार गिर पडा.

पीछे जो सिपाही खडे थे, दौड पडे और हवलदार को खडे होने मे मदद की.

हवलदार को जिन्दगी मे कितनी बार बेइज्जत होना पडा है, खुद उसे भी याद नही है. लेकिन खुले आम इस हद की बेइज्जती बड़े-बड़े खूनियो ने भी शायद ही कभी की हो.

हवलदार धूल झाड़कर खडा हो गया. तोंद इतनी बढी हुई थी कि कमर मे पेटी काफ़ी नीचे खिसक आई थी वह अपनी नेकर ऊपर उठा रहा था नेकर ठीक कर ली तो दुबारा आगे की तरफ बढने लगा.

विनायक सामने आ गया. फिर अजना और गोपाल भी बीच मे आ गए. विनायक बोला—देखिए, आप खामखवाह फसाद कर रहे है !

—अभी सब पता चल जाएगा कोतवाली के अदर तो चलिए हवलदार दात निपोर रहा था.

—क्या ? विनायक ने पूछा.

—यह तो वही पता चलेगा

—आपका इतना कहना काफी नही है. अरेस्ट आप कर सकते है लेकिन उसके लिए वारट चाहिए.

पीछे खडे सिपाही हुक्म के इतजार मे खडे थे.

विनायक ने फिर द्वारिका के हाथ से माइक लिया और लाउडस्पीकर लगे रिक्शे पर खडा हो गया—जो हम से टकराएगा

पीछे से आवाज उभरी— -चूर-चूर हो जाएगा

●●

जुलूस फिर आगे बढा और सरकारी अस्पताल से पहले लकडी की मेज़-कुर्सियो की बन्द दूकानो तक पहुचा ही था कि लाठीचार्ज हो गया उस वक्त जुलूस मे कुल-मिलाकर सौ-एक लोग रहे होगे. पुलिस के सिपाहियो के जत्थे मे शायद डेढेक सौ लोग थे जीप पर पुलिस का एक अफसरनुमा आदमी खडा था और जुलूस वाले एक के बाद एक सर थामकर बैठे रहे थे. कुछेक लडके लाठी खाकर भी भाग सके थे कुछ भागने की कोशिश मे और भी ज्यादा जख्मी हो गए थे

उस वक्त वह हवलदार कहा है, पता नही चल रहा था सब एक से लग रहे थे. पुलिस के जवान लडको को वे सब गालिया दे रहे थे जो नावल्टी सिनेमा के गिर्द शाम को जुटने वाले कुछ पियक्कड किस्म के छुरे-बाज आदमी एक-दूसरे को देते है

अजना बेहोश नही हुई थी. लेकिन सर के दोनो किनारो से इस तरह खून निकल रहा था कि साडी एकदम लाल हो गई थी

गोपाल बेहोश और औंधा पडा था उसका कुर्ता कई जगहो से फट गया था और आँखो का चश्मा पैरो के नजदीक पडा हुआ था उसका एक शीशा निकल कर बाहर आ गया था और दूसरा फ्रेम के अदर ही चटख गया था

सुरिदर की दोनो बाजुओ की हड्डिया शायद टूट गई थी कधो से लेकर उग-लियो तक बहुत सूजन थी

जीप पर खड़ा पुलिस का अफसरनुमा वह आदमी चिल्ला-चिल्लाकर हिदायतें दे रहा था.

द्वारिका और विनायक लगभग इकट्ठे थे द्वारिका को नाक से लगातार खून बह रहा था और दिमाग मे बहुत तेज दर्द था. विनायक को ज्यादा चोट पीठ पर आई थी. वैसे दोनो ही कुहनियां छिल भी गई थी. वहां से लाल-लाल गोश्त बाहर निकल आया था. जख्म पर धूल चिपक गई थी. कुर्ता चूंकि खद्दर का और मोटा था, पीठ पर नीली धारियों का पता बिल्कुल अभी नहीं चल रहा था.

बाजार बन्द जरूर था लेकिन यह खबर फैल ही गई थी आस-पास मजमा देखने के अंदाज में लोग मक्खी की तरह जम गए थे पुलिस सबको बहुत नजदीक आने से रोक रही थी.

कोतवाली से थोड़ी देर में एक ट्रक आ गया

जीप वाला आदमी छड़ी हिलाता हुआ नजदीक आया और हिदायत-सी देने लगा कि किसको-किसको गिरफ्तार किया जाए पुलिस वाले गिरफ्तार हुए लोगों को मुर्दों की तरह घसीट कर ट्रक पर चढ़ा रहे थे

पता नहीं कहाँ से बिल्कुल सफेद दाढ़ी-मूछों वाला एक फकीर लगने वाला आदमी पुलिसवालों को गालियां देता हुआ सामने आ खड़ा हुआ विनायक को काफी देर में याद आया कि यह हबीब मियां है और यहां एक असबाब की दूकान में वार्निश का काम करता है. एक दफा, बहुत पहले दसरथ के साथ बुखार और खांसी की दवा लेने आया था.

हबीब मियां की आंखें जिबह किए हुए बकरे की गर्दन जैसी लाल थीं एक हवलदार आकर उसे चुप हो जाने की सलाह दे रहा था लेकिन हबीब मियां शायद किसी की परवाह नहीं करता.

वैसे उसकी गालियों पर पुलिसवाले मुस्करा रहे थे. खून-खराबे के बीच जैसे कुछ गुलाब की पखुड़ियां मिल गई थीं

हबीब मियां की नाराजगी, विनायक के कानों तक तो पहुंची थी लेकिन उस वक्त दिमाग के दरवाजे जैसे बन्द-से हो गए थे रीढ़ की हड्डी में चुभन-सी महसूस हो रही थी

●●

इस घटना के बाद कोतवाली ले जाकर दसेक लोगों को बन्द कर दिया गया था इतने ही और लोग गिरफ्तार हुए थे लेकिन उन्हें वार्निंग देकर छोड़ दिया गया था जो लोग बन्द हुए थे, उनमें द्वारिका विनायक, अंजना वगैरह सभी थे सिर्फ सुरिंदर नहीं था खून से लथ-पथ सारे चेहरे आपस में इस कदर गड्ड-मड्ड हो गए थे कि सुरिंदर शायद पहचान में ही नहीं आया था.

जो लोग बन्द हो गए थे, वे रात को दस बजे हवालात भेज दिए गए. ट्रक में पड़ा हुआ हर कोई कराह रहा था अंजना के अलावा. सबसे ज्यादा गोपाल कराह रहा था. उसकी बीवी खबर पाकर कोतवाली आई थी और बुरी तरह रो रही थी गोपाल अब भी बेहोश जरूर नहीं था लेकिन पूरी तरह होश में भी नहीं था.

वहां दस दिन गुजरे थे

इस बीच बरेली कालेज के कुछ लड़कों ने वकील का इंतजाम किया था लेकिन मुकदमा शुरू होने से पहले ही एक अजीब-सी घटना घटी दस दिन बाद पता चला, पुलिस अब मुकदमा नहीं चलाएगी.

दस दिन बाद, ग्यारहवें रोज वे बाहर निकले

सबसे पहली खबर यह मिली कि गोपाल वर्मा को कॉलेज से बरखास्त कर दिया गया है उसने विनायक की पीठ पर धौल-सी जमा दी—चल यार, आजाद होने का खासा बहाना मिल गया

इस खबर से उसकी बीवी बहुत परेशान दीख रही थी

●●

इस घटना की खबर लखनऊ के एक अखबार के पांचवें पृष्ठ के सातवें कॉलम में पांचेक पंक्तियों में छपी थी. और कुछ नहीं हुआ था. दूकानें उसी तरह चल रही थीं.

कोतवाली के सामने पीले कागज मे लिपटी किताबे वैसे ही बिक रही थी और कोतवाली के हवलदार, सिपाही वगैरह पहले की ही तरह मस्त थे.

मुरिदर की दोनो बाहो पर प्लास्टर चढा था. हवालात मे बाहर निकल कर वे चुपचाप आगे बढ रहे थे

●●

फर्राशी टोले मे मुरिदर और द्वारिका को लेकर विनायक पहुचा इस मुहल्ले की गलिया मशहूर है. एक बार अदर घुस जाओ तो एक के बाद एक गली दाए-बाए मिलती जायगी और आखिर मे निकलने के लिए किसी-न-किसी की मदद जरूर लेनी पडेगी. जिस्म मे जिस तरह नसो का जाल होता है, उन्हे शायद कोई समझ भी ले लेकिन फर्राशी टोले के गली-कूचो को अनजान आदमी एक ही बार मे समझ नही सकता.

सुनने मे आता है, आजादी की लडाई मे यहा कई बार पुलिस वाले मारे जाते रहे है. लोग आकर किसी गली मे घुस पडते और कहा से कहा चले जाते, इसका पता पुलिसवालो को लग ही नही पाता.

विनायक को लगा यह महज इत्तफाक ही नही है कि कलकत्ते से फरार होकर केदार भट्टाचार्य को इन्ही गलियो म शरण लेनी पडी थी. अजना ने अपने पति के बारे में कभी कुछ बताया भी नही एक-आध दफा द्वारिका थोडा-बहुत जरूर कहता रहा है. विनायक की जानकारी सिर्फ उतनी ही है इतनी कम जानकारी मे किसी के बारे में कोई राय कायम नही की जा सकती राय भले ही कायम न हो विनायक एक अंदाजा लगा पा रहा था अजना को देखकर ही यह अंदाजा लग जाता है

द्वारिका ने दरवाजे पर दस्तक दी तो टीन का दरवाजा बजने सा लगा दरवाजे के साथ की दीवार मे से चूरे की तरह पलस्तर भी निकल कर थोडा-सा गिरने लगा. पहले एक खिडकी खुली उसके खुलने मे भी चूऽऽ की खासी आवाज हुई थी. खिडकी पर पुरानी साडी से बना एक पर्दा लटक रहा था. इसलिए पता नही चला कि खिडकी के उस पार कौन था ! फिर भी विनायक को लगा, अजना ही थी

उसके बाद दरवाजे की कुंडी हटाने की आवाज हुई दरवाजा खुला

सामने अजना थी. सर पर कस कर पट्टी बधी हुई थी साफ लग रहा था कि दिमाग मे बहुत तेज दर्द हो रहा है.

तुम्हे देखने चला आया विनायक बोला

अजना मुस्कराई और दरवाजे पर से हट गई. मुरिदर और द्वारिका जरूर आते रहे है लेकिन विनायक के आने की उम्मीद अजना ने नही की थी. मुरिदर आता है तो पिकी म उसकी उम्र का बच्चा बनकर इतना शोर-शराबा करता कि कई दफा तब ग भी अजना का सर दर्द करने लगता पिकी भी मुरिदर को देखने ही इस कदर लगूर बन जाता कि कोई यकीन नही करेगा, उसका बाप एक सजीदा आदमी था. बहुत ज्यादा बात करने की आदत उसे थी ही नही

दीवार पर एक बडी-सी तस्वीर लगी थी. छब्बीस-सत्ताईस बरस के एक छरहरे-से लड़के की तस्वीर चेहरे पर घनी दाढी-मूछे और आंखों पर काले फ्रेम का

चश्मा. विनायक खोद-खोदकर देख रहा था

द्वारिका बोला—केदार भट्टाचार्य हैं ये

अंजना एकदम चुप थी.

कमरे मे दो-तीन टूटी-फूटी कुर्सियां थी और एक स्टूल था वे बैठ गए.

—बहुत दुबली हो गई हो खाना वगैरह ठीक से नही खाती ? विनायक ने अंजना से पूछा.

अंजना सिर्फ धीरे से मुस्कराई.

—आज एकदम से आ गया, वर्ना दवा का बैग साथ ले आता.

—अब लगभग ठीक ही हो गई हूं सर मे दर्द जरूर रहता है लेकिन बुखार अब नही रहता. पसलियों का बोझ भी अब हट ही-सा गया.

अदर के दरवाजे से एक औरत ने झांककर देखा और अन्दर चली गई. अजना ने बताया—मेरी मा है.

— लगता है, लिट्ल डाकू आज घर पर नही है सुरिन्दर बोला.

—पडोस वाले ले गए है

—डाकू पडोस मे गया है ? सुरिन्दर हस पडा— बिचारो की शामत आई होगी !

—तुम्ही ने तो सर पर चढाया है उसे

—नो मैडम, इट'ज एब्सोल्यूटली इनकरेक्ट मै तो सिर्फ गेम पार्टनर-भर हू आखिर बेटा किसका है, यह तो देखना पडेगा सुरिन्दर दीवार पर लगी केदार की तस्वीर की तरफ देखने लगा था

अजना चुप हो गई

विनायक को लगा, केदार भट्टाचार्य यही कही आसपास बैठा हुआ है. चश्मे का शीशा पोछता हुआ, बगल के कमरे मे यहा एकदम से आ भी सकता है अजना की आखे देखने से कोई भी आदमी यही बताएगा

फोटो के नीचे एक शेल्फ है शेल्फ पर कुछ किताबे लगी हुई हैं ऐसी किताबें बरेली मे नही मिलती. अफ्रीका एशिया और चिली-क्यूबा की क्रांति पर कई छोटी और बडी किताबें विनायक ने पूछा तो नही लेकिन समझ गया, इन किताबो का मालिक केदार ही रहा होगा. अब कभी-कभी अजना शायद पढती है विनायक बोला—यू हैव ए गुड लाइब्रेरी

- चाय लाती हू. अजना बोली और उठ खडी हुई

विनायक या द्वारिका सुरिन्दर मे से किसी ने एतराज नही किया विनायक समझ गया, पिछले किसी भी प्रसग के जिक्र मे अजना आहत होती है ऐसी लडकियां अपनी तकलीफ शायद किसी के भी साथ बाट नही सकती···

—आज भी केदार से बहुत अटैच्ड है अजना. सुरिन्दर बोला.

द्वारिका कुछ कहने की सोच रहा था आखिर मे कुछ नही बोला.

विनायक सिर्फ छत की तरफ देख रहा था

●●

चाय खत्म करने के बाद अजना ने प्यालो को खिसका दिया—उसके बारे में क्या सोचा ?

—लगता है, मेरे अलावा सभी बीमार है विनायक बोला और सुरिन्दर के बाए बाजू के पलस्टर की तरफ देखने लगा दो दिन पहले दाए बाजू का प्लस्टर उतरा था.

यह मजाक था लेकिन अजना ने मजाक को गभीर बना लिया—बीमार ही सही लेकिन मुर्दे तो हम नही है

—अब अगली बार शायद खासा मुकदमा भी चलेगा सुरिन्दर बोला—पता नही क्यो इस बार उन लोगो ने मुकदमा वापस ले लिया ?

—अभी भी पता नही हुआ ? अजना हसी.

—बहुत भावुक है यह सुरिन्दर. विनायक बोला—क्यो सरदार जी, ठीक कह रहा हू ? सुरिन्दर झेप तो रहा था लेकिन समझ नही सका कि उसकी गलती कहा है ?

—नही समझे न ? विनायक ने खुलासा किया—यह एक वार्निंग थी डराने-धमकाने के लिए अग्रेज भी यही करते थे कई लोग इससे डरकर सुबोध बालक बन जाते है, बस

—चुगी का चुनाव वैसे बहुत इटरेस्टिग होता है सुरिन्दर बोला—दुनिया-भर के तमाम ईडियट्स कमर कसकर दगल मे लडते है कई तो ऐसे होते हैं, जिन्हे यह भी नही पता कि चुनाव जीतकर अपने चमचो को दावत खिलाने के बाद वे करेगे क्या ?

विनायक ने सुरिन्दर की बात का जवाब नही दिया वह अजना की तरफ मुखातिब हुआ—तुम अभी ठीक स तदरुस्त भी तो नही हो पाई

—बस ठीक ही हू

—मैं सोच रहा था, गोपाल वर्मा की तरह स्कूल से तुम्हारी भी छुट्टी हो जाएगी गोपाल अब शायद ट्यूशन वगैरह कुछ शुरू करेगा मैं शुरू मे सोच रहा था, नौकरी चली जाने से हिल जाएगा बिचारा लेकिन अब और भी ज्यादा बोल्ड देख रहा हू हम लोग बी ए मे क्लासफैलो थे तब इतना स्ट्राग वह था ही नही

—मैं भी यही सोच रही थी कि मुझ पर इतनी इनायत की वजह भी क्या है? निकाल भी दी जाती तो पूछने वाला कौन होता ?

—आज न सही, कल ही सही अवेट योर फेयरवेल फ्रॉम द स्कूल

—थोडा गलत बोल गए आप सुरिन्दर बोला—फेयरवेल टू द स्कूल होना चाहिए, 'फ्रॉम द स्कूल' से इज्जत घटती है

विनायक हसा—चलो, वही सही उसने सिलसिला बदला—रात को घर पर जयनारायण आए थे मैं घर पर नही था, इसलिए मुलाकात नही हुई लेकिन कह गए है एक-आध दिन मे आएगे

—बिहारीपुर हल्के से उनका कोई चमचा चुनाव लड रहा होगा पहले यह शख्स भी चुगी का ही मेम्बर था फिर बढते-बढते एम एल ए हो गया शुरू मे साबुन बनाने का एक छोटा-सा कारखाना था जयनारायण के पास अब एक रग का कारखाना है और पम्प की एजेन्सी है धुले हुए चूडीदार पाजामे, अचकन और टोपी मे यह शख्स, चेहरे से पता नही शुरू से ही क्यो मुझे, मक्कार लगता रहा है सुरिन्दर लगभग इकट्ठे बोल गया

—यू हैव ए गुड स्पीकिंग पावर, सरदारजी विनायक बोला

सुरिन्दर झेपकर किताबे देखने लगा सोनू की कमी खलने लगी थी इस वक्त वह घर पर होता तो आगन मे जाकर कुछ हुल्लडबाजी ही हो जाती

—जयनारायण शायद आज ही दुबारा आए ! अजना बोली

—घर मे इतजार करने भी मिल सकते है विनायक बोला

—क्या सोचा आपने ?

—सोचना क्या है ? बिहारीपुर ढाल में एक बचऊ हलवाई की दुकान है. वह भी उनसे ज्यादा समझदारी से बात करता होगा. हमारे मुहल्ले में एक लुक्का पहलवान था, जयनारायण कई दफ़ा पुलिस की हिरासत से उसे छुड़वाते भी रहे हैं.

अंजना ने विस्तार से इनके पीछे की कहानियाँ नहीं पूछीं.

इसके बाद वे लोग उठ खड़े हुए.

अंजना दरवाज़े तक आकर रुक गई.

मोड़ तक पहुंच कर विनायक एक बार पीछे मुड़ा—टेक केयर ऑफ योर हेल्थ.

अंजना ने सिर्फ सुन लिया, कुछ नहीं बोली.

●●

चुंगी के चुनाव के पोस्टर दीवारों पर लग गए थे. बिहारीपुर के टाल वाले मास्टर लक्ष्मीशंकर खड़े होने की सोच रहे थे. इस सिलसिले में कई लोगों से वह मिलते भी रहे हैं. लेकिन आखिर में सुनाई पड़ा, उन्होंने अपना नाम वापस ले लिया है. बालकराम खबर ले आया था कि जयनारायण ने रुपए देकर मास्टर को बैठा दिया है.

बिहारीपुर के हल्के से तीन मेम्बर चुने जाने थे. उम्मीदवारों की तादाद थी इक्कीस. एक मुसलमान था और एक बाल्मीकी. बाकी लोग कायस्थ, बनिए वगैरह. सुबह से लेकर रात के ग्यारह बजे तक तांगों और रिक्शों में लाउडस्पीकर लगाकर उम्मीदवारों के लोग घूमते और मुहल्ले वालों से वोट देने की गुजारिश करते. जो लोग पैसे वाले उम्मीदवार हैं, वे रात को कई दफा बैण्ड-बाजे के साथ निकलते और गैस की रोशनी में देखने वालों की आँखें चुंधिया जातीं बैण्ड में सफेद घोड़ी होती और साड़ी बांधे नाचने वाले कुछ जनखे होते. बैण्ड के साथ उम्मीदवार गले में गेंदे या गुलाब की एक माला डालकर रिक्शे पर हाथ जोड़े खड़ा रहता.

गोपाल और द्वारिका ने भगीरथ के 'हॉटल' के पास जो कुंआ है, वहाँ दो-तीन मेजें लगाकर एक मंच-सा बना लिया था बहुत ज्यादा लोग तो इससे जमा नहीं हुए फिर भी तादाद पचास के करीब थी.

जगदम्बा, शंकर, रामधनी, जगन्नाथ वगैरह नुक्कड़ के नीम के नीचे खड़े थे. परसोंराम भी पान चबाते हुए आ गए थे.

विनायक ने समझाना शुरू किया—आजादी से पहले से लेकर आज तक इतने चुनाव हुए हैं लेकिन आप ही सोचिए, सोचकर देखिए, आपकी हालत में इससे क्या फर्क पडा ? हमारी हालत में क्या फर्क पड़ा ? जिस आदमी को यह तक पता नहीं है उसे शाम की रोटी वाकई नसीब भी होगी या नहीं वह 'वोट' क्या देगा ? किसको देगा ?

गेंदनलाल ने आहिस्ता से शगूफा छोडा—हमारे हां से ले जाइयो शाम की रोटी. बात बहुत आहिस्ते से कही गई थी लेकिन विनायक सुन सका था. सुरिन्दर को गुस्सा आया था लेकिन द्वारिका ने उसे उस तरफ बढ़ने नहीं दिया.

एकदम से जीप लेकर जयनारायण आ गए. वह आए तो खलबली-सी मच गई. जयनारायण के साथ जीप में से चारेक आदमी और उतरे. उनमें टीकाराम खंडसारी भी था. टीकाराम इस हल्के से चुनाव लड़ रहा है. शुरू में वह जयनारायण की साबुन की फैक्ट्री में मुंशी था, अब तरक्की करते-करते वह बड़े बाजार में एक कटपीस की दूकान का मालिक बन गया है.

विनायक दसेक सेकंड के लिए रुक गया था, अब फिर से बोलना शुरू किया—

अंग्रेजों के खिलाफ मुल्क इसलिए लड़ता रहा कि आजादी आते ही, कम-से-कम दो वक्त खाने की रोटी तो मिलेगी.

—लीडरी मत झाड़ो ! पीछे मे रामधनी ने हथेलियों को कुप्पी बनाकर कहा—हम भी तुमारी पोल खोलकै रख दंगे.

गोपाल और सुरिंदर के दिमाग मे खून चढ़ गया था. लेकिन द्वारिका की वजह से वे कुछ कर नहीं पा रहे थे.

—मैं जो भी कुछ हूं, सामने हूं. विनायक बोला.

—लुहार की लौण्डिया से भी इश्क-मुहब्बत हमारे सामने ही करते हो क्या ? जयनारायण की मौजूदगी की वजह से गेंदनलाल को हौसला आ गया था

परसोंराम ने अपनी छड़ी उठाई और गेंदनलाल को खामोश हो जाने के लिए कहा.

विनायक ने फिर से कहना शुरू किया—मेरे पास सबूत हे कि कई जगह बगैर वोट पाए भी उम्मीदवार जीतता रहा है. कई जगह जबरदस्ती वोट डलवाए जाते हैं और कई जगह लिस्ट में नाम किसी का होता है और वोट कोई और डाल आता है.

जयनारायण मंच की तरफ बढ़े.

—उतर आओ वहा से. शकर ने पीछे से आवाज दी.

विनायक कुछ कहने जा रहा था लेकिन तब तक जयनारायण मच के ऊपर चढ़ आए—मैं सिर्फ़ एक बात पूछूगा. शुरू से लेकर अब तक मैं सिर्फ अहिंसा और शांति के रास्ते पर ही चला हूं. आजादी की लड़ाई मे मैंने जेल काटी है, यह आप लोग जानते हैं और नए सिरे से इस बारे में मुझे कुछ कहना भी नही है. मेरा सवाल यह है कि अगर जनतंत्र न होता तो विनायक जी क्या इस तरह जनसभा कर बोल सकते थे

गेंदनलाल को जयनारायण की यह दलील बहुत जोरदार लगी - हम तुमारेई साथ है. इस बात के समर्थन में लोगों ने ताली बजा दी.

—क्या जनतंत्र के लिए सिर्फ इतना ही काफी होता है ? यह सवाल आप लोग अपने आप से कीजिए ! विनायक बोला.

सामने बैठे लोगों में सिपाहीलाल भगीरथ के साथ खुसर-फुसर-सी करने लगा बाद मे कई और लोग भी इस बारे मे आपस मे पूछ-ताछ कर रहे थे

—जवाब मैं देता हूं. जयनारायण बोले—यह एक मामूली-सा सवाल है अभी हमने आजादी हासिल की है. देश का एक-एक आदमी जब तक खुशहाल नही हो जाता, हम चैन से नही बैठेंगे.

—क्या आप बता सकते है कि वह दिन कब आएगा ? अंजना नीचे खड़ी थी उसने बुलंदी से पूछा.

जयनारायण हसे—तुम्हारी उम्र की मेरी बेटी है. ऐसा सवाल उसने भी मुझ से पूछा था. जवाब देने की जरूरत मुझे पड़ी नही. आजकल के लड़के-लड़किया समझ-दार होते ही हैं. जहां हमने अपना सब-कुछ खत्म कर दिया, वहा से तो वे शुरू ही करते हैं. अब मेरी लड़की समझ गई है कि पहले कर्त्तव्य करो फिर जाकर अधिकार मांगो. वह दिन तभी आएगा, जब आप लोग लाएंगे.

—हम यह समझ गए इन ढकोसलों से वह दिन नही ही आएगा अंजना बोली

—यह ढकोसला है ? जयनारायण फिर हसे होंठो पर जो मुस्कान थी, वह करुणामय पीर-पैगम्बरों की मुस्कान से कम नही थी. बोले —आखिर क्या तुम यह कहना चाहती हो कि चीन-रूसियों की तरह हम हाथ मे हथियार लेकर मैदान में आ जाएं. अहिंसा से अंग्रेज जैसे दुश्मन को यहां से मार भगाया है, गरीबी भी भाग

जाएगी

—अंग्रेज अहिंसा से हारकर इस मुल्क से भाग गए, ये बातें स्कूल में पढ़ाई जाती है और भोले-भाले लोग यक़ीन भी करते हैं. लेकिन उतने भोलेभाले आप मेहरबानी करके हम लोगों को मत समझिएगा.

जयनारायण ने आंखों से चश्मा उतारा और अचकन की जेब से रूमाल निकालकर साफ करने लगे —आप ठहरे प्रोफेसर आदमी. आपको मैं बता भी क्या सकता हूं ? लेकिन पूरा बरेली जानता है कि यह जयनारायण अग्रवाल अहिंसा, सत्य और शांति के रास्ते पर चलकर पूरे शहर के लिए शुरू से ही लड़ता रहा है. आज भी किसी को अगर कोई भी तकलीफ है तो मेरा दरवाजा खुला है. बेधड़क घुस जाओ और सब-कुछ बता दो, जयनारायण खून बहाकर भी आपकी सेवा करेगा. आपके लिए लड़ेगा.

गोपाल तमतमा गया था, बोला—फिर अब तक लड़ते-लड़ते आप इस बीच चार बार शहीद हो चुके होंगे खैर, जिस खुशहाली की बात आप थोड़ी देर पहले कर रहे थे वह और कहीं भले ही न आई हो, आपके यहां जरूर पहुंच गई. पहले आपके पास सिर्फ साबुन का कारखाना-भर था. और अब आप यहां के रईसों में गिने जाते हैं.

परसोंराम की हालत बिगड़ती नजर आई थी. वह मौका देखकर खिसक भी गए थे.

—जे गुण्डागर्दी नाय चलने देंगे मुहल्ले में. गेंदनलाल चिल्ला रहा था. चिल्लाते ही उसकी आवाज फट जाती है कई किस्म के स्वर निकल रहे थे

—शांत रहिए. जयनारायण दोनों हाथ उठाकर प्रवचन देने की मुद्रा में खड़ा हो गए—मुझे चाहे जो मर्जी कह लीजिए. लेकिन खामख्वाह लड़िए नहीं.

आप यह मुहल्ला छोड़कर चले जाइए. यह हम लोगों का घरेलू मामला है, अपने आप ही निपट लेंगे सुन्दर बोला.

गेंदनलाल ने हथेली ऊपर की तरफ उछाली—जे मुहल्ला तेरी ससुराल है क्या जो अपना मुहल्ला कै रिया ?

चुनाव के उम्मीदवार टीकाराम की हालत काफ़ी बिगड़ती-सी नजर आई थी. पिछली बार वह इसी हल्के से चंद वोटों के लिए हार गया था. हल्के भर में महात्मा गांधी की तस्वीर के साथ अपनी एक करबद्ध तस्वीर छपवाकर एक-एक दीवार में चिपकवा दी थी, पच्चीसेक हजार रुपए भी खर्च किए थे लेकिन सौ वोटों के लिए हार गया था.

इस दफा जयनारायण ने यकीन-सा दिला दिया था कि इस हल्के से चाहे कुछ हो जाए जीतने वाले उम्मीदवारों में टीकाराम का नाम जरूर होगा। जयनारायण, वैसे लोगों को आश्वासन देता ही रहता है लेकिन हर आश्वासन एक-सा नहीं होता. टीकाराम बरसों से साथ है, वह उसका मतलब जानता है. टीकाराम, वैसे समझ भी गया था कि उसका चुनाव जीतना जयनारायण के हक में होगा. अगर वह जीतता है तो विधानसभा के चुनाव में मुहल्ले वाले फिर से जयनारायण नाम के आगे ठप्पा लगाएंगे. 'अहिंसक' आंदोलन के समर्थक दोनों को ही दोनों की कमजोरियां मालूम हो गई थीं.

लेकिन हल्लागुल्ला हो रहा था कि टीकाराम घबरा गया. उसने आखिर में हाथ जोड़ दिए—आप लोग कृपा करके शांत हो जाएं, मैं नहीं चाहता कि मेरे जीतने या हारने को लेकर कोई कड़वी बात हमारे अपनों में फैले.

बिनायक काफी देर की चुप्पी के बाद बोला-- हमें कोई दिलचस्पी नही है कि कौन जीतता या हारता है हमारे लिए अभी तो सभी एक-से हैं. हम इन ढकोसलों से आगाह कर रहे है. इससे हमें कोई खिताब नही मिल जाएगा. न ही इनकी हमें जरूरत ही है.

बहुत हल्ला-गुल्ला हो रहा था. आखिर मे पता ही नही चला कि विनायक क्या कह रहा है.

गोपाल अपनी जगह से चिल्लाया—हम लोग वोट के भिखारी नही है. जिस खुशहाली का सब्ज बाग जयनारायण दिखा रहे थे, वह एक धोखाभर है, इतना हम कह देना चाहते हैं. बहुत धोखा हम लोग खा चुके है, अब कम-से-कम समझने का वक्त तो आ ही गया.

गेंदनलाल ने अंजना की तरफ हथेलियों की कुप्पी मे एक गाली फेंकी—रंडी है साली. गाली देने के बाद वह चेहरे को बहुत भोला करने की कोशिश कर रहा था.

सुरिंदर उसकी तरफ दौड गया. भगीरथ और सिपाहीलाल ने उसे पकड़ लिया, उसके बाएं बाजू का प्लस्टर अभी उतरा नही था. इसके बावजूद वह घायल शेर की तरह गुर्रा रहा था.

अंजना का चेहरा काला हो गया था.

जयनारायण ने निहायत मुलायम लहजे मे प्रवचन-सा दिया—भई शाति रखिए. सिर्फ शाति से ही कोई रास्ता निकल सकता है. हम लोग अडोस-पडोस के है या मुहल्ले वाले ही है. दिमाग गर्म करने मे काम नही चलेगा. यह चुगी का चुनाव है भी क्या ? हम लोग अंग्रेजों के खिलाफ बरसों लडे है लेकिन हमेशा शांति मे ही काम लिया.

विनायक ने हाथ जोडे--जयनारायण जी, मेहरबानी करके इस वक्त आप इस मुहल्ले से चले जाइए.

जयनारायण परम विनय मे मुस्कराए—मेरे जाने मे कुछ लाभ होगा आपको? कुछ और भी वह कह रहे थे लेकिन हल्ले-गुल्ले की वजह से कुछ सुनाई नही पड़ रहा था.

इस बीच भीड़ काफी घनी हो गई थी. लोग गोलाई मे खड़े होकर मजमा देख रहे थे.

गंगू गुरु कही से हाजिर हो गया था.

गेंदनलाल विनायक या द्वारिका से कुछ कह रहा था लेकिन शोरगुल की वजह से उसकी आवाज यहाँ तक पहुच नही रही थी गंगू गुरु शायद सुन पाया था

वह फिर गेंदनलाल की तरफ बढने लगा.

गेंदनलाल बुरी तरह डरकर पीछे हटने लगा था. साथ मे रामधनी और जगदम्बा वगैरह जरूर थे लेकिन किसी ने बचाव नही किया. शायद सभी समझ गए थे. मगरमच्छ के जबडो से छुटकर निकल सकता है लेकिन गगू गुरु के हाथो से नही. गंगू गुरु ने फिर सिर्फ इतना किया कि सामने पहुचकर गेंदनलाल की पेट मे एक ढाई मन की लात जमा दी. गेंदनलाल गिर पड़ा था

किसी ने फिर कुए की तरफ से तीन-चार पत्थर फेंके थे. एक द्वारिका को लगा और एक गोपाल को, दोनो ही सर थामकर बैठ गए थे.

जयनारायण फिर अपनी जीप मे बैठकर मालगोदाम की तरफ निकल गए.

द्वारिका और गोपाल की तरफ़ कुछ लोग झुके हुए थे. उनमें गंगू भी था.

गेंदनलाल कब खिसक गया था, किसी को पता ही नहीं चला. जगदम्बा और

रामधनी नुक्कड वाले दरजी की दूकान पर खडे होकर सामने का नजारा देख रहे थे.
जलसा वही टूट गया था.

●●

बिद्दानिवास को पिछले डेढेक साल से कोढ हो गया है शुरू मे यह मर्ज सिर्फ पैरो मे था दाहिना पैर जख्म से भर गया था और तीनेक उगलिया गिर गई थी. इसके बाद बाए पैर मे भी यही सब हुआ आखिर मे हाथ की उगलिया भी गलने लगी

पण्डिताइन खुद ही बीमार रहती थी घर की जो हालत है, उससे किसी तरह गुजारे-भर के लिए रोटी-भर मिल जाती थी कुष्ट है राजरोग बिद्दानिवास मर्ज की तकलीफ के बावजूद अक्सर हसकर कहते—पण्डित बिद्दानिवास को छोटा-मोटा कोई रोग भला छू भी कैसे सकता था ? पण्डिताइन ही अपनी बीमारी के बावजूद जितना मुमकिन होता करती और कुछ न सही, दिन म एकदफा पट्टी जरूर कर देती

कुछेक यजमान कभी-कभी घर पर आटा-दाल वगैरह भिजवा देते थे आटे-दाल के साथ कई बार अठन्नी-चवन्नी के सिक्के तक मिल जाते दो लोगो के गुजारे की ही तो ..रत है इसी से किसी तरह पार लग जाता जब नही लगता तो घर की एक थाली या गिलास बिक जाता

दामोदर लुहार कई बार वैद्य-हकीमो से दवा वगैरह भी लाकर देता रहा है लेकिन बिद्दानिवास मुस्कराते—समय की माया है

दामोदर को ये सब बाते कभी समझ म आई ही नही उसकी लाई दवा का भी असर नही हुआ उसे यही बात समझ मे नही आती जिस बिद्दा पण्डित ने जिन्दगी भर किसी का बुरा सोचा तक नही, उसका यह हाल हो कैसे गया ? एक से एक शराबी-कबाबी इस मुहल्ले मे ठाठ से रह रहे है और जिसने जिन्दगी-भर पूजा-पाठ किया, वह आखिर मे कहा से कहाँ ढकेल दिया गया

बिद्दानिवास दामोदर के मन की तस्वीर जैसे देख पा रहे थे हर बार वह हस-कर सिर्फ समय और माया की ही बात करते आखिर मे आँखे बन्द कर ध्यानस्थ मे बैठे रहते.

कई बार विनायक आया है

कोढी से मिलने कोई नही आता जो लोग पहले आकर दुआ-सलाम करते थे, अब वे दिखाई नही देते एक दामोदर लुहार ही रह गया है, जो रोज कम-से-कम एक बार तो आता ही है और दूसरा आदमी है विनायक रोज तो मुमकिन नही होता लेकिन हर दूसरे दिन किसी-न-किसी वक्त पन्द्रह-बीस मिनट या आधे घटे के लिए अपने दवा के बैग सहित जरूर हाजिर हो जाता.

हर बार बिद्दानिवास ने देश या दुनिया की ही बाते की

विनायक को चुप रहने की इच्छा होती है सामने का आदमी जैसे कसम खाकर बैठा हुआ है कि अपनी तकलीफों का इजहार करेगा ही नही बिद्दानिवास के चेहरे की लकीरे देखकर फिर अन्दर एक कुलबुलाहट-सी महसूस होती है

बिद्दानिवास हसने लगते—देश के सामने व्यक्ति का कष्ट क्या होता है ? मै

मामूली पूजा-पाठी ब्राह्मण-भर हू, बहुत कुछ नही समझता, लेकिन आपको देखकर लगता है कि नीलकठ पुरुष का अवतरण हुआ है. वह एकदम से प्रसग बदलने लगे—इस राजनीति मे मेरा भी कोई विश्वास नही है. जो लोग अहिंसा का पाठ पढाते रहे है, वे ही आदमी को हलाल कर खुश भी होते रहे है. काफी देर से सही, अब यह बात मैं समझ गया.

राजनीति पर इस तरह सीधी बाते पहले बिद्दानिवास ने कभी नही की पहले जब भी मुलाक़ात होती थी, देश या काल, या समय पर ही बोलते रहे है इधर जब से कोढ़ हुआ है, वह जैसे बदल गए है दवा देने के बहाने विनायक आता तो शुरू मे बिद्दानिवास इधर-उधर की चर्चाए भी कर लेते थे अब सिर्फ राजनीति पर ही बोलते है

—मैने बहुत देर से महसूस किया ऊपर से यह राजरोग हो गया वर्ना मैं भी आपके साथ निकल ही पडता.

इस बात के पीछे जो दयनीयता महसूस होती, विनायक को कई बार बिद्दानिवास की आखों मे वह दिखाई पड जाती तब जवाब मे कुछ कहने के लिए शब्द नही मिल पाते.

तब वह देर तक मुस्कराते रहते और आखिर मे आँखे बन्द कर लेते

विनायक उठ पडता लेकिन दवा देने का यह बहाना बहुत फूहड और गैर-मतलब लगता इन दवाओ से बिद्दानिवास कभी भी ठीक नही होगे. इतनी बात वह भी जानते है लेकिन कई बार दर्द के वक्त थोडा आराम जरूर मिल जाता है आराम देने की बात ही अब विनायक को काटने-सी लगी. बिद्दानिवास जैसे कही अधेरे मे खडे होकर अपनी जिन्दगी-भर की तकलीफ छिपा लेते और हाथ जोडकर दवा-दारू के लिए कृतज्ञता जता देते

दामोदर कई बार डिस्ट्रिक्ट हास्पिटल तक ले जाकर पट्टी करवा लाया है काफी जबरदस्ती करने पर बिद्दानिवास चले जरूर जाते लेकिन अब जाना बहुत भारी पडता है घर से निकलना अब जैसे बहुत मुश्किल हो गया है उम्र खैर जितनी हुई है, वह तो हुई ही है, अन्दर से अब कोई जरूरत ही नही महसूस होती

पहले बिद्दानिवास, सस्वर गीता का पाठ करते थे कहते थे, शुद्ध उच्चारण से आस-पास की भूमि भी पवित्र होती है अब चुपचाप पढ लेते है आवाज निकालने मे दिक्कत होती हो, ऐसी बात तो नही लेकिन अब इच्छा ही नही होती. घटो वह गीता का पारायण करते फिर आँखे बन्द कर चुप बैठे रहते

एक दिन बैठे-बैठे बेहोश होकर गिर पडे उस वक्त दामोदर लुहार वही था. वह विनायक को बुला लाया.

विनायक ने आकर दवा दी लेकिन उदास हो गया मरीज के सामने हकीम कभी भी उदास नही होता लेकिन बिद्दानिवास के सामने विनायक इस वक्त बहुत लाचार हो गया.

बिद्दानिवास को लकवा मार गया था.

इस तरह दसेक दिन वह अचेत पडे रहे फिर एक दिन सुबह-सुबह सास रुक गई.

कोढ के मरीज के यहा कोई आटा-दाल भले ही भिजवा दे लेकिन उसके अतिम सस्कार के लिए आने वाले लोग अमूमन चुगी वाले ही होते है. खैर, चुगी वालो की जरूरत यहा नही पडी थी इनका इतजाम विनायक और द्वारिका ने दौड-भागकर कर लिया था. अर्थी के साथ दामोदर भी गया था बस, बिद्दानिवास की बात फिर मुहल्ले के लोगो को खास याद भी नही रही थी.

●●

लाश को जलाकर लौटते हुए, बहुत देर की खामोशी के बाद विनायक बोला—एक खरा आदमी चला गया. जब बातें बहुत साफ होकर दिमाग में बैठ रही थीं, तभी जाने का वक्त हो गया.

गोपाल विनायक के साथ था. वह कुछ नहीं बोला.

—तुम लोग यकीन नहीं करोगे, आखिर के दिनों में उनमें मेरी बातें होती तो लगता, अब कुछ भी समझाने की या एक्सप्लेन करने की जरूरत नहीं है. ही अण्डरस्टुड अस, फ्रॉम द रूट्स.

साथ में दामोदर नहीं था. वह शायद श्मशान में ही बैठा रह गया था. विनायक ने उसे ढूंढा लेकिन याद आया कि वापस आते समय उसका ख्याल ही नहीं आया था.

सुना है, भक्त-टाइप आदमी थे ? सुरिंदर ने पूछा.

विनायक की भौंह सिकुड़ गई. हां, थे लेकिन अहिमकों की तरह कभी किसी का खून नहीं चूसा.

सुरिंदर चुप हो गया. काफी झेंप भी गया था. दरअसल, ये सब पूजा-पाठ, मंदिर-मस्जिद जैसे शब्द ही ऐसे हैं कि उसे एक खालिस मजाक से ज्यादा कभी कुछ लगा ही नहीं. बस एकदफा विनायक ने कहा भी था कि कोई मस्जिद का मौलवी है या गया का पण्डा या गोश्त बेचने वाला कसाई, अहमियत सिर्फ इस बात की है कि हमारे साथ उसका रास्ता किस हद तक एक है ?

फिर वे लोग चुपचाप चलने लगे थे.

द्वारिका के गले में झुरझुरी-सी होने लगी थी. वह खांसने लगा, सन्नाटा-सा टूट गया. मार्शलिंग यार्ड में एक डीजल कुछेक मालगाड़ी के डिब्बों के साथ शंटिंग कर रहा था. कुछ आवाज उधर से भी आ रही थी.

सामने से एक जीप गुजर गयी.

जीप में गेंदनलाल, जगदम्बा वगैरह खड़े थे. टीकाराम कटपीस वाले के इश्तहारों से जीप ढक गयी थी. सामने एक झण्डा भी लगा था.

जीप में खड़े होने की वजह से गेंदनलाल सीना ताने अकड़ कर खड़ा था. जीप पर चढ़ते ही सीना जैसे अपने आप ही तन गया था. पहले लोग लुक्का पहलवान के पास ही आते थे, खातिर-तवज्जो करते थे. अब पहलवान मर कर भूत हो गया. लिहाजा टीकाराम कटपीस वाले को गेंदनलाल के पास ही आना पड़ा.

जीप सामने आई तो गेंदनलाल ने बिहारीनिवास पण्डित के दाह-संस्कार के बाद लौटते हुए लोगों को कोई गाली सी दे दी. हवा की वजह से गाली ठीक से सुनाई तो नहीं पड़ी लेकिन उसके खिंचके हुए चेहरे से इतना पता हो गया कि जुबान से निकला शब्द निहायत भद्दा था.

जीप आगे बढ़ जाने के बाद गेंदनलाल और जगदम्बा हथेली नचा रहे थे. कुछेक अश्लील शब्द कह पाने के लिए व खुश थे, यह जाहिर हो गया था.

द्वारिका पर इसका थोड़ा-बहुत असर तो हुआ था, लेकिन उसने परवाह ही नहीं की.

विनायक सिर्फ सामने की तरफ देख रहा था.

बालकराम और सुरिंदर तिलमिला रहे थे.

सिटी स्टेशन तक आते-आते टीकाराम भी दिखाई पड़ा था. रेलवे कालोनी की तरफ से आकर वह बिहारीपुर में घुस रहा था. साथ पच्चीस तीस लोग थे. ज्यादातर बड़े बाजार के दूकानदार थे. कुछेक बिहारीपुर के भी थे. आखिर में नौरंगी वकील और मुरारी डाक्टर भी दिखाई पड़ गए.

गोपाल ने घूरकर देखा और चुप रहा.

इस दफ़ा अजना साथ नहीं थी. साथ होने से शायद टीकाराम को पकड़कर कुछ सवाल-जवाब कर डालती. द्वारिका ने उसके बुख़ार की इत्तिला दी थी लेकिन फ़ुर्सत नहीं मिली और विनायक जा नहीं सका था.

टीकाराम अपने लोगों के साथ बिहारीपुर मे घुस गया तो रिक्शे पर जाते हुए ऋषिनाथ मिल गए. विनायक को देखते ही, वह रिक्शा रोक कर उतर पड़े.

—तुम्हारे घर मे ही आ रहा हूं. बड़ा अफसोस हुआ सुनकर कि बिद्दानिवास जी अब नहीं रहे. भई यह काम तुमने बहुत अच्छा किया कि एक ग़रीब ब्राह्मण का संस्कार अपने हाथों से किया. ऋषिनाथ गदगद हो रहे थे.

—कैसे कष्ट किया ? विनायक ने पूछा.

— कष्ट क्या है इसमें ? तुमसे मिलना-जुलना मुझे बुरा कब लगा ? ऋषिनाथ हें-हें करने लगे. हँसी मिनट-भर बाद रुक गई तो सिलसिला शुरू किया—इस हल्के मे चुंगी की मेम्बरी के लिए मैं भी खड़ा हूं, तुम्हें पता ही होगा. मेरे पास रुपए-पैसे न तो हैं न उनके बूते पर चुनाव लड़ूगा. बूता अगर कुछ है तो सिर्फ तुम लोगों की मुहब्बत. मैं तो खुले आम कहता हूं, मुसलमानों का वोट मुझे चाहिए नहीं. अगर कोई कटुआ मुझे वोट देता भी है, बक्से पर मूत के रामगंगा में बहा दूंगा. हां एकदम से ऋषिनाथ को ख्याल आ गया था, मुसलमान वाली बात वह बिल्कुल गलत जगह बोल गए है. लेकिन बोल गए तो फिर बोल ही गए. कभी-कभी इस कदर बेवकूफी हो जाती है, उसका ख़मियाजा देर तक भुगतना पड़ता. ख़ैर, ऋषिनाथ फिर हें-हें करने लगे थे.

विनायक इतना संजीदा दिखा कि आगे कोई और बात करने की हिम्मत नहीं हुई. ऋषिनाथ फिर रिक्शे पर वापस बैठ गए —एक-आध दिन में फ़ुर्सत से आऊंगा कभी.

ऋषिनाथ का रिक्शा आगे बढ़ गया तो सुरिंदर और धनजय बहुत जोर से ठहाके लगाने लगे. ठहाके की आवाज ऋषिनाथ के कानो तक भी गई होगी लेकिन उन्हे शायद मुड़कर देखना मुनासिब नहीं लगा था विनायक ने कुछ कहा तो नहीं था लेकिन आख़िर में वे दोनों चुप हो गए. चुप हो गए तो फिर सन्नाटा-सा तैरने लगा

●●

शाम को विनायक द्वारिका, गोपाल और धनजय के साथ निकला. दूसरी टोली मे बालकराम, अजना, सुरिंदर और सतोष थे. इस बार भी अनूप की कमी सुरिंदर को खल रही थी.

पहली टोली के लोग खास बिहारीपुर में रहे और दूसरी टोली वालों के जिम्मे मलूकपुर, बमनपुरी का इलाका था.

सबसे पहले सिपाहीलाल का मकान पड़ता है. सबसे पहले यानी 'कौशल्या भवन' से निकलते ही गली के उस पार सिपाहीलाल का मकान है. खपरैल का दो कमरों का एक मकान और छोटा-सा आंगन. एक बरामदा भी है. चाहे सर्दी हो, चाहे बरसात, सिपाहीलाल बरामदे में ही सोता है. कहता है—अन्दर सोने से दम घुटता है.

इतने सारे लोगों को एकसाथ अपने दरवाजे पर देखकर सिपाहीलाल घबरा-सा गया. सीधा-सादा आदमी है. रेलवे में खलासीगिरी करता और शाम को घर लौटकर रोटी खाकर चद्दर तान लेता है. मुहल्ले में दस तरह की बातें होती हैं लेकिन सिपाहीलाल कभी इन पचड़ों में नहीं पड़ा.

विनायक ने उसके कधे पर हाथ रखा —हम कुछ नई बात सुनाने नहीं आए हैं. उस दिन जलसे में जो कुछ हुआ, तुमने देख ही लिया. हमने सच बात ही तो कही थी. अब भी समझ लो और इन टोपी छाप नेताओं के धोखे में मत पड़ो.

सिपाहीलाल अब वाकई घबरा गया था —मैं ठैरा गोरमिट का नौकर कही नौकरी चली गई तो भूखो मर जाऊगा. गोरमिट का खाते हैं, वोट भी उसी को देंगे.

सिपाहीलाल पर अब कायदे मे गुस्सा आना चाहिए था लेकिन विनायक को दया-सी आने लगी. गोपाल को दिखाकर बोला—ये साहब खड़े है, कॉलेज मे प्रोफेसर थे. अब निकाल दिए गए. शुरू मे थोड़ी दिक्कत, खैर, होती है लेकिन थोडा कमर कस-कर उतर पडोगे तो लडने का मजा मिलने लगेगा.

सिपाहीलाल को ये बातें समझ मे नही आ रही थी.

इस बीच खासी भीड़ दरवाजे के बाहर इकट्ठी हो गई थी. अजना होती तो औरते मजे ले-लेकर खुसर-पुसर भी करने लगतीं.

शकर की मां कुए पर टोकरी मे दाल रखकर धो रही थी सिपाहीलाल के दरवाजे पर इतनी भीड़ देखकर वह दौडती-सी आ गई वह अन्दर घुसी और साडी के पल्लू से अपने गीले हाथ पोछने लगी—का भयो ?

सवाल सिपाही के लिए था. सिपाहीलाल लगातार हाथ मलता जा रहा था

विनायक ने जवाब दिया—हम समझाने आए है कि वोट की नौटकी मे अब मत फसो. जो कोई वोट मागने आए, उससे पूछो कि पिछले पाच सालो मे रिश्वत-खोरी और कालाबाजारी के अलावा उसने कुछ और किया भी है ? विनायक की आवाज आवेश की वजह से चढ गई थी

शकर की मा के सफेद, पटसन-जैसे लगने वाले बाल हवा मे उड रहे थे. वह बार-बार अपने बालो को सभाल रही थी बोली—तो चाहते क्या हो ?

द्वारिका हसा— हम कुछ नही चाहते लेकिन तुम तो चाहो.

बुढिया सर खुजाने लगी

सिपाहीलाल का बेटा प्यारे भी आ गया था कायदे से वह रिक्शा चलाता है. लेकिन अपने अन्दर इत्मीनान रखता है कि जब तक बाप जिन्दा है, दो वक्त कम-से-कम रोटी जरूर मिलती रहेगी इस इत्मीनान की वजह से रिक्शे को कही छाए मे खडा करता और नीद ले लेता नीद खुलने के बाद दो-तीन रुपए कमा भी लेता है. लेकिन मालिक को गाडी का किराया देने के बाद जितना बचता है, चाय-पानी मे ही खर्च हो जाता इस बात को लेकर बाप-बेटे मे कई दफा झगडे भी होते रहे हैं लेकिन प्यारे को इन बातो से कोई फर्क नही पडता उसकी बीवी को पडता है और वह रोना शुरू कर देती ससुर को बहू से कोई शिकायत नही है जब अपना ही बेटा बेसिर-पैर का निकला तो दूसरे की बेटी को क्या कहना ! सिपाहीलाल फिर मजबूर होकर चुप हो जाता

प्यारे आकर विनायक के पास खडा हो गया—बात क्या है ?

शकर की मा को मसला जितना समझ मे आया था, उतना उसने बता दिया प्यारे को कुछ पल्ले ही नही पडा.

शकर की मा को थोडा-बहुत शायद समझ मे आ गया था. बोली—तेरी अक्ल मे जे बात नाय घुसने की

प्यारे हसने लगा. जैसे बधाई मे उसे कोई बडी बात सुनाई गई हो

—मै पूछगी वोट वालन को शकर की मा बोली.

विनायक हसा—यह न हुई बात.

यह सब मामला शकर की मा की समझ मे तो नही आता है लेकिन पेशकार का यह पोता कभी भी उसे मुहल्ले के ठलुओ जैसा नही लगा. पेशकार के घर मे 'रमैन' बहुत हुई है लेकिन यह लडका इन सबके बावजूद पता नही क्यो, अच्छा ही लगा है

गोपाल बोला—पूछके देखना, लंगोटी छोड़के भाग खड़े होंगे ये बोट वाले. शंकर की मां को कुएं के पास रखी हुई अपनी दाल याद आ गई थी. फिर वह मसले को अधूरा छोड़कर भाग खड़ी हुई.

वे लोग फिर वापस मुड़े. पीछे की भीड़ देखकर गोपाल को लगा, अभी-अभी या तो किसी की मौत हुई है या फिर किसी की शादी होने वाली है. थोड़ा मजाक सूझा था. लेकिन कुछ कह पाने से पहले ही भगीरथ और बिहारी गोलगप्पे वाला हाँफते हुए आ गए थे. दोनों की सांसें बहुत तेज़ थीं और चेहरे पर पसीना आ गया था. भगीरथ लगभग इकट्ठे जितना कह गया उससे कायदे के मुताबिक कोई मतलब नहीं बनता. लेकिन मतलब समझने मे विनायक या द्वारिका मे से किसी को ख़ास देर नहीं लगी.

अंजना के साथ सुरिंदर और सतोष को कुछ लोगो ने पकड़ लिया है. बालकराम भाग गया है. वह किधर गया, यह तो पता नहीं चला, लेकिन बिहारी ने उसे मलूकपुर से होकर ख्वाजाकुतब की तरफ दौड़ते हुए देखा है.

बांकेलाल चार्जमैन वैसे कसे हुए जिस्म का है लेकिन सात-आठ लोगों को इकट्ठे देखा तो वह ज्यादा हिम्मत न कर सका था. छह-सात मुस्टण्डे किस्म के लोग एक पुरानी जीपगाड़ी लेकर आए और दस मिनट के अन्दर सब हो गया.

बिहारी का यह दूकानदारी का वक्त है. सौदा बेचते वक्त इधर-उधर आंखें दौड़ाना मुमकिन नही होता. जरा ढील दी नही कि माल खाकर ग्राहक खिसक गया. लेकिन बिहारी ने अपनी आखों से साफ़ देखा है कि जीप से कुछ लोग उतरे और तीनो लोगों को पकड़कर पलक झपकते ही मे ले भी गए. एक आदमी के हाथ मे बन्दूक थी. लिहाजा बांकेलाल चार्जमैन को मुठभेड मुनासिब नही लगी थी.

●●

विनायक जब पहुचा तो बाकेलाल और गियानीसिह खूब गरज-बरस रहे थे. बिहारी को इसी बात पर हसी आ गई थी लेकिन उस वक्त हंसा नही जा सकता था. ये दो आमने-सामने रहते है और मौका मिला नही कि लड़ने के लिए तैयार हो गए. पहली बार ऐसा हो रहा है कि दोनों ही किसी एक मामले को खूब खींचातानी कर रहे हैं और मामला आपसी लड़ाई का नही है

दोनों तरफ की दीवारों पर टीकाराम कटपीस वाले की गाधीजी के साथ वाली तस्वीर बेशुमार चिपकाई हुई है. गली सीमेंट की है, इस वजह से उस पर पडी हुई पान की पीक के दाग आंखों मे चुभ रहे थे

पूरा मुहल्ला बिहारी की दुकान के सामने उमड़ पड़ा था थोड़ी देर पहले यहां जो हादसा हो गया था, उस पर अब अलादीन के चिराग की कहानिया बनने लगी.

सबसे ज्यादा गियानीसिह चीख रहा था वह अण्डरवियर और बनियान मे था और सर पर बधने वाला साफा उतरा हुआ था

थोडे फासले पर ही विनायक की क्लीनिक है दरवाजे के सामने दो फुट चौडी जो बरामदे जैसी जगह है, वहा मुहल्ले के कई लड़के खड़े थे.

चौराहा पार करते ही मलूकपुर का थाना है.

बाकेलाल चार्जमैन को इतनी देर मे, अब लगा कि रिपोर्ट जरूर लिखवा देनी चाहिए थी. उसकी सबसे ज्यादा दिलचस्पी अजना मे थी लेकिन माहौल इतना तना हुआ-सा था कि बिल्कुल अभी विनायक से पूछना मुनासिब नहीं लगा. आखिर मे थाना जाने का ख्याल उसने रद्द कर दिया जब ज़माना ही बदल गया तो किसी का भरोसा क्या है ? भला करने जाओ और खुद ही कीचड़ मे फसकर दम तोड़ दो. वैसे भी

मामला असल में है क्या, कौन जानता है ? इन सब झंझटों में न फंसना ही चार्जमैन को अक्लमंदी लगी.

इस मामले को लेकर इतनी सनसनी नहीं फैलती और गियानीसिंह भी इतना उछलता-कूदता नहीं, अगर इस हादसे का रिश्ता एक लड़की से न होता. बिहारी की दुकान के सामने जितने लोग खड़े थे सब चटनी की तरह कल्पना कर मजे ले रहे थे. कुछ लोगों को सोचकर मजा आ रहा था कि अब तक लड़की की इज्जत उतार ली गई होगी

कुछ लोग हाय ! हाय ! कहकर अफसोस भी जता रहे थे. लेकिन अफसोस जैसा कुछ किसी के भी दिल में नहीं है, इतना मोती पतंगसाज भी समझ रहा था.

सामने वाले वकील साब अपने ऊपर के बरामदे पर खड़े थे. द्वारिका ने उस तरफ़ नहीं देखा.

कुछ ही देर मे थानेदार आ गया. यह थानेदार नया है. हफ्ताभर पहले बदली होकर यहां आया है.

थानेदार आया तो सारी खुसर-पुसर बन्द हो गई. गियानीसिंह, जो इतनी देर से हंगामा मचा रहा था, एकदम पत्थर की तरह खड़ा हो गया. बाकेलाल चार्जमैन ने थानेदार से कुछ बातचीत करनी चाही थी लेकिन वह शायद कुछ ज्यादा ही रोबीला है. ऐसे-वैसे को पूछता ही नहीं है.

बिहारी को उम्मीद बंधने लगी कि थोड़ी देर मे सही, अब कोई हल जरूर निकल आएगा

थानेदार ने विनायक को अपने आप ही पहचान लिया. वह नज़दीक आया और घूरने-सा लगा-- आपके यहां के लिए सर्च वारंट है. दुकान खोलिए.

—क्यो ? विनायक को कुछ भी समझ मे नही आ रहा था. द्वारिका और गोपाल भी हक्के-बक्के रह गए.

—यह तो कोतवाली से ही मालूम हो सकेगा. थानेदार अपनी जांघ पर छड़ी से मार रहा था. साथ में चार-छह सिपाही थे. वे पीछे खड़े थे.

—लेकिन यह तो हम पूछ ही सकते है कि अचानक इस तलाशी की जरूरत कैसे पड़ गई ? विनायक की भौंहे तन गई थी.

—मैं छोटा-सा आदमी ठहरा. ऊपर से हुक्म मिला, सो तामील-भर करने आ रहा हूं. आप चाहे तो कोतवाली पहुचकर सब-कुछ पता कर सकते है.

गोपाल झुंझला उठा था लेकिन द्वारिका ने उसे कुछ कहने नहीं दिया.

विनायक ने फिर जेब मे चाबी निकाली और ऊपर चढ़कर ताला खोलने लगा. पीछे शायद आधी बमनपुरी उमड़ आई थी. बिहारी की दुकान के गिर्द जो लोग खड़े थे, वे भी इधर ही सरक आए थे.

दरवाजा खुल गया.

थानेदार अन्दर आया और मेज-कुर्सियों पर हाथ की छड़ी पटकने लगा. जैसे इनके यहां होने पर कोई एतराज हो साथ के सिपाही अब तक बाहर ही खड़े थे. इशारा पाकर फिर अन्दर आ गए विनायक दरवाजे के पास खड़ा था. बगल म द्वारिका था. गोपाल नीचे, गली मे था.

इस कमरे मे तलाशी लेने लायक क्या है. बिहारी गोलगप्पा वाला आख़िर तक समझ नही सका मेज-कुर्सियां है, बेंच है, कुछेक किताबे है और एक अल्मारी— जिसमे दवा वगैरह रखी रहती एक पुरानी लालटेन भी है, जिसमे से रोशनी निकल- कर बहुत दूर तक नही जाती. बिहारी ये ही बाते मोती पतंगसाज को बता रहा था.

जो लोग भीड़ की शक्ल में खड़े थे, उन्हें उम्मीद थी, कमरा खोलते ही कोई लाश वगैरह जरूर मिलेगी. वर्ना थानेदार इतने रोब के साथ बात नहीं करता. लेकिन ऐसी किसी चीज़ की ग़ैरमौजूदगी की वजह से उन लोगों का उत्साह बहुत घट गया था. कुछ लोग मामूली मेज-कुर्सियां देखकर इतने निराश हुए कि यहां से खिसक ही गए.

थानेदार ने मेज-कुर्सियों के नीचे खुद तो झांककर देखा ही, सिपाहियों ने भी यही किया. लोग बहुत हताश हो गए. पहाड़ खोदकर चुहिया निकालने वाली बात बिहारी को याद आ गई. लेकिन यहां तो चुहिया भी नहीं निकली.

आखिर में थानेदार ने अल्मारी खोली.

ऊपर छोटी-छोटी शीशियां हैं. ज्यादातर सफ़ेद गोलियों से भरी हुई. कुछेक बड़ी शीशियाँ भी हैं, जिनमें पाउडर हैं. नीचे की तरफ़ कुछ किताबें और पुराने अख़बार पड़े हुए हैं. थानेदार ने अख़बार को खींचकर निकाला तो एक लकड़ी की पेटी निकल आई.

विनायक के ठीक सामने अगर अभी छत से एकबारगी ईंट ही खिसक कर गिरती, तो भी इतना ताज्जुब नही होता. द्वारिका भी समझ नहीं सका. गोपाल सिर्फ़ पेटी की तरफ़ देख रहा था.

थानेदार ने थोडा-सा दबाया तो पेटी खुल गई. अन्दर तस्करी से आई हुई कुछ शराब की बोतलें और घड़ियां थी. निर्वस्त्र औरतों की कुछ तस्वीरें बोतलों और घड़ियों के नीचे से निकलीं.

थानेदार मुस्कराया--बड़े होशियार स्मगलर लगते है! डाक्टरी का स्वांग भी आपने खूब रचा है. वह फिर ठहाकों में फटने-सा लगा. देर तक हंस लिया तो विनायक के पेट पर छडी से आहिस्ते से मार दिया--आप होशियार जरूर हैं लेकिन पुलिस भांग खाकर तो नहीं बैठी हुई है.

द्वारिका उत्तेजित हो गया—यह धोखा है···.

थानेदार ने द्वारिका को रोक दिया—यह धोखा हो न हो, अब तक हम धोखा जरूर खाते रहे हैं.

गोपाल अब ऊपर चढ आया. लेकिन थानेदार ने उसे कुछ कहने का मौका ही नही दिया—अब कचहरी में ही सब तय होगा. थानेदार फिर विनायक की तरफ़ मुड़ा—चलिए, सीधे कोतवाली चलना है. वैसे आप पर हथकडी नहीं डालेंगे.

यह इनायत कर पाने के लिए थानेदार बहुत खुश हुआ.

वे लोग फिर ढाल की वजरिया होकर कोतवाली की तरफ़ बढने लगे. पीछे-पीछे, आहिस्ते-आहिस्ते मजा लेते हुए बीसेक लोग चल रहे थे. द्वारिका और गोपाल विनायक के साथ चल रहे थे तीनों में से कोई भी कुछ बोल नही पा रहा था. थानेदार के बूटों की खट-खट आवाज हो रही थी. वह छडी को बार-बार अपनी जाँघ पर मारकर चल रहा था.



कोतवाली में विनायक को जिस सेल मे रखा गया, उसमें अधेड़ उम्र का एक और

लापरवाह क़िस्म का आदमी भी था, जो बलात्कार के जुर्म में पकड़ा गया था.

बालकराम को खबर हो गई थी. वह भी आ गया था. बाहर धनजय, गोपाल और द्वारिका के साथ बेंच पर बैठा था. इस बीच गोपाल ने कोतवाल से मिलकर पूछताछ की कोशिश की थी लेकिन कोतवाल के पास वक्त नहीं था.

थोड़ी देर में द्वारिका को पता चला कि सेल के अंदर माड मार्का एक हवलदार ने बात उगलवाने की कोशिश में विनायक के पेट पर लात जमाई है. यह खबर भी नहीं मिलती अगर दफ्तर का एक बाबू बुलाकर बता नहीं देता. फिर पता चला कि विनायक बेहोश हो गया है. जिस आदमी ने इत्तला दी, बमनपुरी के वकील साब से उसकी वाक़फियत थी, लिहाजा उनका बेटा होने की वजह से द्वारिका को खबर मालूम हो गई थी.

धनंजय बेहद रुआंसा हो गया था.

गोपाल जिस्म से इन लोगों से कुछ भारी-भरकम-सा है. वह बार-बार हथेलियाँ मल रहा था. कोतवाल फिर अपने कमरे से बाहर निकला और आसपास दर्जनभर सिपाहियों और हवलदारों ने बूटों से खट् की आवाज कर सलाम बजा दिया, बाहर जीप खड़ी थी. कोतवाल जाकर बैठ गया.

थोड़ी देर में दरोगा किस्म का एक आदमी इधर आया—अब आप लोग जाकर वकील वगैरह का इंतज़ाम कीजिए, यहां बैठने से कोई फायदा थोड़े ही होगा. दरोगा का लहजा बहुत मुलायम किस्म का था.

—लेकिन आप लोग मारपीट क्यों कर रहे हैं ? गोपाल की आवाज एकदम बढ़ गई थी. आंखें बिल्कुल सुर्ख थीं.

दरोगा ने जवाब नहीं दिया. जरूरत भी शायद महसूस नहीं की मुड़ा और वापस चला गया

गोपाल सेल की तरफ जाने लगा था लेकिन थोड़ा-सा बढ़ते ही एक मूछोंवाले सिपाही ने रोक लिया- उधर जाने का 'आर्डर' नहीं है.

गोपाल एकदम चुप हो गया. कुछ देर वह सिपाही के चेहरे का खुरदरापन देखता रहा फिर वापस आ गया.

सुरिन्दर और संतोष के साथ अंजना गायब कर दी गई है, यह बात अब काफी देर बाद द्वारिका को याद आई. फिर धनजय को भेज दिया कि वह मलूकपुर थाना जाकर रिपोर्ट तो लिखवा ही दे.

बालकराम अभी तक संतुलन में नहीं आ सका था

धनजय चला गया था.

गोपाल थोड़ा हंसा—रिपोर्ट चाहे लिखवा दो लेकिन इससे फायदा कुछ हो जाएगा. इतना यकीन मत करना. पुलिस वाले अभी आराम से सो रहे होंगे या शायद रोटी खाकर डकारें ले रहे होंगे

बालकराम घुटनों में सर छुपाए बेंच पर बैठा था

द्वारिका दीवार के साथ खड़ा था एक सिग्रेट सुलगाकर गोपाल कश खींच रहा था.

—कोई वकील वगैरह मिल जाए तो कोई काम भी बने ! द्वारिका बोला.

—मिल जाएगा. गोपाल ने कहा

—मिल तो सकता ही है लेकिन पहले कुछ न-कुछ बिना लिए, शायद ही कोई काम शुरू करे.

—कॉलेज के पुराने स्टूडेंटस में से किसी को पकड़ूंगा

द्वारिका पूरी तरह आश्वस्त तो नही हो सका था लेकिन इस बारे में ज्यादा कुछ और नही पूछा

●●

इस हादसे के पाचवे दिन गोपाल वर्मा और अजना चौहान के अलावा बाकी सारे लोग गिरफ्तार हो गए अनूप के बारे मे कोई खबर नही थी सिर्फ इतना पता हो गया था, वह बरेली मे नही है

सतोष और सुरिन्दर गिरफ्तारी के वक्त चौधरी तालाब के पास बुरी तरह जख्मी हालत मे एक पुराने मकान मे मिले थे अजना भी उन लोगो के साथ थी पुलिस को उन लोगो का पता पाच ही दिन बाद कैसे लगा, यह तो किसी ने नही पूछा लेकिन दरवाजा तोडकर जब थानेदार अदर घुसा तब लगा यही था कि इन पाच दिनो के दरमियान इनमे से हरेक की उम्र बीस-बीस साल बढ गई है अजना के बाल चेहरे पर बुरी तरह उलझे हुए थे कपडे कई जगह से फटे हुए थे और साडी पर खून के दाग थे आखो के नीचे स्याही जम-सी गई थी चेहरे-ठुड्डी के पास और गालो मे जख्म के निशान थे उसे तब बुखार भी था.

सतोष और सुरिन्दर बेहोश तो खैर नही थे लेकिन खडे होने की हालत मे नही थे. सुरिन्दर के बाए बाजू पर जो प्लास्टर चढा था, वह कई हिस्सो से कुचला हुआ था

सतोष की गर्दन के पास एक गहरा जख्म था, जख्म शायद सीने पर भी था कमीज के फटे हुए हिस्सो मे जितना दिखाई पड रहा था. उससे यही अन्दाजा लगता है बाई टाग की हड्डी शायद टूटी हुई थी पूरी टाग पर सूजन थी पतलून जगह-जगह से फट गई थी और बाई टाग का खासा हिस्सा दिखाई पड रहा था

सुरिन्दर के होठो पर पपडी जमी हुई थी वैसे कोने की तरफ अन्दर एक खाली सुराही पडी हुई थी टूटे हुए बाजू के दर्द से कायदे से उसे चीखना चाहिए था चीख तो खैर वह नही रहा था लेकिन चेहरा स्याह हो गया था पीठ की तरफ से शर्ट चिथडा बन गई थी वहा से जमे हुए खून के चकत्ते जैसे दाग और छिले हुए हिस्से दिखाई पड रहे थे

तीनो को पुलिस कोतवाली ले आई और आखिर मे तीनेक घटे बाद अजना को छोड दिया

अब मुजरिमो की तादाद बनी, उसमे विनायक तो शुरू से ही है, बाद के लोगो मे द्वारिका, सुरिन्दर, बालकराम, धनजय और सतोष है

कीछा के हरद्वारी हत्याकाण्ड के सिलसिले मे कोई छह महीने बाद ये लोग पकड लिए गए इसके अलावा विनायक के ऊपर स्मगलिंग का वह आरोप पहले ही से था

हवालात मे गोपाल मिलने आया था अजना आने की हालत मे ही नही थी

वकील ने जमानत पर इन लोगो को छोडने की माग की थी लेकिन माग मजूर नही की जाएगी, इतना वह भी जानता था

सुरिन्दर और सतोष जेल हास्पिटल मे थे

गोपाल को देखकर विनायक हसा —यह सिर्फ एक मोड है

गोपाल काफी देर से चुप था,

—चलो, अब तुम लोगो के दोस्त विनायक के नाम के साथ 'स्मगलर' की मुहर भी लग गई मैं शुरू मे शॉकड तो हुआ था लेकिन बाद मे नार्मल हो गया

गोपाल ने विनायक को गौर से देखा कोतवाली मे उस दिन जो लाते पडी थी उस वजह से चेहरे पर एक गहरी थकान-सी थी

विनायक जबरदस्ती हस पडा—तू यार एक दम खरगोश टाईप मर्द है

गोपाल ने नहीं पूछा कि क्यों···

●●

पूरी बरेली में इस घटना को लेकर सनसनी फैल गई. दिल्ली और लखनऊ के अख़बारों में ख़बर छपी कि खून के इल्ज़ाम में बरेली शहर के कुछ संभ्रांत किस्म के लोगों के कॉलेज में पढ़ने वाले लड़के पकड़ लिए गए. समाचार के अंत में विनायक के बारे में कई सूचनाएं थीं.

बाहर के अख़बारों में ऐसी ख़बरें रोज़ ही छपती रहती हैं, लिहाज़ा बरेली के लोगों के अलावा शायद ही किसी ने इस पर ध्यान दिया हो. लेकिन ब्रजपाल सक्सेना के अख़बार 'युग प्रताप' में चौधरी हरद्वारी के कत्ल को लेकर स्वादिष्ट ढंग से एक हुस्न और इश्क की कहानी भी सुर्खियों में छाप दी गई. कुछ लोगों ने कहानी पर यक़ीन किया और कुछ लोगों ने नहीं भी किया. कहानी के मुताबिक चौधरी की रखैल से बिहारीपुर के विनायक की मुहब्बत हो गई और वह इश्क के समंदर में तैरने-सा लगा. चौधरी को काफ़ी दिनों तक यह बात मालूम नहीं हुई थी. लेकिन एक दिन उसने विनायक को रंगे हाथों पकड़ लिया था. उस दिन किसी तरह भागकर उसने अपनी जान बचाई थी. इसके बाद बरेली कॉलेज के चंद आवारा क़िस्म के लड़कों को लेकर वह एक दिन रात को भोजीपुरा पहुंचा और चौधरी का कत्ल कर दिया.

इश्क और मुहब्बत की कहानियों के साथ सदियों से खून की भी कहानियां जुड़ी रही हैं. इसका गवाह इतिहास है. अखबार छापने वाले यह बात गवाहों से कहीं ज्यादा जानते हैं. ब्रजपाल सक्सेना को पता है, सिर्फ़ ऐसी एक कहानी के बूते पर 'युग प्रताप' की कम-से-कम पांच सौ कॉपियां बिक जाएंगी. वर्ना आज तक यह अख़बार तीनेक सौ कॉपियों से ज्यादा कभी छपा भी नहीं है, जिनमें लगभग आधे अख़बार बाद में रद्दी वालों को किलो के भाव बेच दिए जाते.

स्मगलिंग की बात इश्क-मुहब्बत के किस्से की वजह से दब गई थी. जैसे कोई एक बार देसी पी ले तो अंग्रेजी शराब का नशा चढ़ता ही नहीं है, इस बात पर ब्रजपाल सक्सेना के दिल में थोड़ा अफसोस भी था.

कीछा में भी इस घटना की जानकारी हुई तो लोगों में सनसनी फैल गई. चौधरी के बाद उसका तमाम कारोबार बेटों के ही हाथ में था लेकिन वे खास संभाल नहीं पा रहे थे. एक-दो बार मुसलमानों के साथ झगड़े भी हुए थे लेकिन पहले की तरह अकड़ने की हिम्मत चौधरी के बेटों में नहीं थी.

भोजीपुरे की उस नेपालिन का कोई पता नहीं लग सका था. वैसे पुलिस का ख्याल था कि वह घबराकर कहीं भाग गई है. आटे की चक्की शुरू में कुछ दिन तो बन्द रही, बाद में चौधरी के बेटों ने किसी को ठेके पर दे दी थी. चक्की उसी तरह चलने लगी थी. सिर्फ नेपालिन के दरवाज़े बन्द थे.

●●

इस बीच चुंगी का चुनाव हो गया और टीकाराम कटपीस वाला जीत गया. जीतने के बाद सबसे पहले उसने जयनारायण के चरण छुए थे. उसके बाद जुलूस निकला था टीकाराम मालाओं से लदा जीप पर खड़ा था. दोनों हाथ जुड़े हुए थे और होंठों पर मुस्कान थी. सामने बैण्ड बज रहा था. कई लड़के फिल्मी अदा में नाच रहे थे.

चुनाव में शंकर की मां और भगीरथ ने वोट नहीं दिया था. बमनपुरी में बिहारी गोलगप्पे वाला सुबह से ही, वोट के दिन, घर से गायब था और आख़िर में वोट देने से बच गया था. उसकी बीवी को अपने आदमी की यह बात पसंद नहीं आई

थी वह पड़ोसन के साथ मुफ्त मे जीप गाड़ी मे ठाठ से बैठकर वोट दे आई थी

●●

और आखिर मे मुकद्दमा शुरू हुआ तो खत्म होने मे साल-भर लग गया, इस बीच द्वारिका को दमे की बीमारी हो गई. सुरिंदर की बाह ऊपर से देखने पर ठीक ही लगती है, लेकिन कई बार हड्डी के अंदर चिनचिनाहट-सी महसूस होती

अंजना ने इस बीच अपनी सोने की आठेक चूड़िया बेच दी थी गोपाल को लगा था, इसके आगे उसके पास बेचने लायक कुछ भी नही

आखिर मे कोई नई बात नही हुई थी

सबको कत्ल और डकैती के जुर्म मे पाँच-पाँच साल की सजा हो गई थी, विनायक की सजा छह साल की थी ऊपर के एक साल की सजा स्मगलिंग के उस नाटकीय जुर्म के लिए थी

इसके बाद अखबारो मे इस बारे मे कुछ नही छपा बिहारीपुर मोहल्ला बिल्कुल पहले की ही तरह हो गया

गोपाल ने किताब-कापियो की एक दूकान खोल ली

अंजना को स्कूल से बरखास्तगी की नोटिस मिल गई

इसके अलावा बरेली मे शायद और कही कोई फर्क नही आया था

●●

कायदे मे यह कहानी यही खत्म हो सकती थी. इसके बाद और रह भी क्या जाता है ? घटनाए कई दफा अविश्वसनीय ढग से मोड लेती है और आखिर मे जो नतीजा सामने आता है, उसकी कल्पना भी शायद ही पहले कोई कर पाया हो

बरेली जेल से निकालकर विनायक को गोरखपुर जेल मे भेज दिया गया था, द्वारिका की दमे की तकलीफ बहुत बढ गई थी और जेल हॉस्पिटल के लाल-पीले पानी और गोलियों से कुछ भी राहत नही मिली थी

अंजना ने एक सिलाई-कढाई का स्कूल घर पर ही खोल लिया था स्कूल खास चलता तो नही था लेकिन रोटी का इतजाम उसी से करना पडता था गोपाल की दूकान कोई हजार रुपए का नुकसान उठाकर बन्द हो गई आखिर मे उसने एक प्रायवेट कोचिंग कालिज मे तीन सौ रुपए माहवार पर नौकरी कर ली इन झझटो मे उसकी बीवी सावित्री शुरू मे बहुत खिची-खिची रहती थी और बाद मे झगडे भी हो जाते थे, आखिर मे वह मुरादाबाद मे अपने बडे भाई के पास चली गई थी

विनायक को गोरखपुर जेल मे कई दफा कादिर मियाँ के खत मिलते रहे है चार-छह महीने मे मियाँ एक-आध चक्कर भी लगा जाते हैं जब भी आता अंगोछे मे चिवडा, गुड और कुछ केले जरूर बाँध लाता

कादिर मिया के चेहरे की लकीरो को विनायक देखता है तो कई दफा समझ मे ही नही आता कि उसकी हड्डियो मे वाकई हड्डिया है या दरिया के ऊपर पुल बनाने वाला फौलाद मुलाकात का वक्त खत्म हो जाता है तो जाते-जाते कादिर कोई-न-कोई मजाक कर ही जाता

अंजना भी एक बार आई थी

विनायक ने अरसे बाद उसे देखा तो पहचान तो लिया था लेकिन शॉक्ड-सा रह गया था. केदार भट्टाचार्य की उस तस्वीर के साथ अंजना चौहान का तालमेल है कहीं से ? उस दिन अंजना के चेहरे पर सर की नसों में तकलीफ के बावजूद एक चमक थी आज सिर्फ आंखों में ही वह चमक रह गई है

विनायक ने गोपाल की पीठ पर हथेली रखी—तू फिर लड़. गोपाली ही ठहरा कभी जेल में कैदी बनकर देख, मजा आ जाएगा

—हु, गोपाल मजीदा था

अगली दफा मुमकिन है मेरे खिलाफ 'रेप' का चार्ज हो फिर उस बात के लिए अभी से तैयार रहना विनायक फिर जोरों से हस पड़ा

अजना चौंक उठी थी

—हाउ इज योर मन ? विनायक ने पूछा

—ठीक है अंजना ने सक्षेप में जवाब दिया उस वक्त कुछ और कह पाने के बाद तसल्ली होती लेकिन मुमकिन नहीं था

—शेक्सपीयर ने एक बहुत अहम बात कही थी विनायक गोपाल की तरफ मुखातिब हुआ - और तू तो अंग्रेजी का प्रोफेसर ठहरा शो मस्ट गो ऑन'''हम लोगों का कैलकुलेशन जरा गलत हो गया लेकिन आईडिया गलत नहीं है अगली बार देखना कोई और ही बात बनेगी मुझे सिर्फ एक ही बात का डर है कभी कभी मुझे लगता है, जो कुछ सोच रहा हूं, ठीक-ठीक कह नहीं पा रहा हूं. कम्यूनिकेशन का एक जबरदस्त प्रॉब्लम-सा है यह और इसे से कोई मुझे या हम लोगों को कागजी आदर्शवादी भी समझ सकता है

अंजना सुन रही थी सामने की तरफ कुछ कैदी काम कर रहे थे वह उस तरफ देख रही थी

गोपाल की आखें विनायक के चेहरे की लकीरों पर टिकी थीं उन लकीरों की तहों में वह कोई अनचाहा रास्ता जैसा कुछ ढूंढ निकालने की कोशिश कर रहा था

विनायक ने उसकी पीठ पर एक धौल-सी जमाई—आजकल हर आदमी क्रांतिकारी हो गया ! चाहे गल्ले की आढ़त में खाता लिखने वाला बाबू हो या साबुन फैक्ट्री या तेल के कारखाने का मैनेजर, सभी क्रांति से कम बात ही नहीं करते टोपी लगाकर जो लोग नेतागिरी करते और तम्बाकू वगैरह बेचते थे, वे भी अब भगतसिंह बन गए है इससे फर्क यह पड़ता है कि हम लोगों के बारे में गलतफहमियां फैल सकती है, बल्कि फैल भी रही है

उसके बाद अंजना नहीं आ सकी थी महीने में एक खत जरूर मिल जाता था. गोपाल कभी-कभी चक्कर लगा जाता था अंजना से ही पता हुआ था कि सुरिन्दर के फेफड़े में कोई छेद निकल आया है और खून का दबाव इतना नीचे आ गया है कि उसके लिए उठ सकना मुमकिन नहीं है सरकार उसकी रिहाई के बारे में सोच ही रही थी कि गोपाल का खत उसकी मौत की सूचना के साथ मिल गया

सुरिन्दर का इस तरह चले जाना विनायक यकीन नहीं कर पा रहा था. यह सोचना बहुत तकलीफ दे रहा था कि अब सुरिन्दर कहीं भी नहीं है एक जिंदादिल और आग की तरह तेज आदमी कभी भी तो इस तरह खिसक नहीं सकता गोपाल की चिट्ठी हाथ में तुड़-मुड़ गई थी दीए की लौ में किसी ने जैसे जलाने के लिए अंदर से जिगर को निकालकर रख दिया था

गोपाल के ही खत से पता चला कि द्वारिका के दमे की तकलीफ इतनी बढ़

गई कि कभी-कभी तीन-तीन रात बिना सोए गुजार देता है

एक चिट्ठी फिर 'कौशल्या भवन' से मिली टेढ़ी-मेढ़ी लिखावट मे रानी ने पोस्टकार्ड पर लिखा था मोहिनी के हार्टफेल होने की खबर थी

विनायक ने खत पढ़ लिए लेकिन कुछ भी महसूस नही हो पा रहा था आखो के अदर पुतलियो मे पीली-पीली आग-सी जलने लगी थी.

'कौशल्या भवन' की कोई और ख़बर नही मिली. गोपाल ने एक-आध दफा लिखा था लेकिन उस सिलसिले पर वह बाद मे चुप्पी बरतता रहा है. अजना ने कभी भी अपने खेतो मे उस ढहते हुए घर का ज़िक्र नही किया

कई बार विनायक सोचता रहा है कि गोपाल से उस घर के लोगो के बारे मे कुछ लिखने के लिए कहेगा लेकिन बाद मे चुप्पी बरत जाता गोपाल का जो चिट्ठियाँ मिलती रही है,उन्हे पढकर एक आध बार जवाब भी दिया है लेकिन ज्यादा लिखने का कोई खास कारण कभी भी महसूस हुआ ही नही 'कौशल्या भवन की याद जब भी आई आखो के सामने इतिहास की किताबो पर बनी खडहर की तस्वीर खिच जाती थी. खडहर का इतिहास अगर मालूम है ही तो फिर ध्यान भी क्या करना है

जब भी कादिर मिया मिलने आता लगता था, ज़िदगी का मतलब वाकई गहरा है, इतना गहराकि उसकी तलहटी तक पहुचपाना अक्सर मुमकिन भी नही होता.

अजना चिट्ठी लिखती तो कई बार जतीन मजूमदार का जिक्र किसी बहाने कर देती बहुत खुले तौर पर कुछ लिखा नही जा सकता था लेकिन विनायक को लगता, जतीन मजूमदार जिन्दगी की आग के बीच एक प्रतीक पुरुष रहा है उस प्रतीक को फिर केदार भट्टाचार्य ने अपने सीने पर खोद लिया था

रात होने के बाद गेट बन्द हो जाता है तो कभी-कभी लगता है, आसमान बहुत नीचे उतर आया है विनायक को बचपन की वह आसमान छूने की ख्वाहिश भी याद आ जाती है लेकिन आसमान का नीचे उतरना कभी इतना डरावना भी हो सकता है, पहले कभी नही जाना था फिर पूरी रात गुजर जाती और नीद कतई नही आती.

●●

आखिर एक दिन जेल की चहारदीवारी से विनायक बाहर निकल ही आया पहले बरेली मे चिट्ठी लिख सकता था लेकिन लिखने लायक कुछ दिमाग मे आया ही नही.

अब बाहर आया और स्टेशन जाकर गोपाल के नाम एक टेलीग्राम दिया कादिर मिया की झूसी यहा से बहुत दूर नही है, शुरू मे सोचा भी था कि बरेली पहुचने से पहले दो-चार दिन कादिर मियाँ के साथ गुजारेगा, फिर इलाहाबाद मे एक दिन ठहर कर बरेली की गाड़ी पकडेगा. कादिर मिया जब भी मिलने को आता,झूसी आने की दावत हर बार जरूर दे जाता विनायक ने वायदा तो खैर नही किया था लेकिन अदर से झूसी आने की बात लगभग तय ही कर ली थी

अब जेल से निकलते ही फैसला बदल गया

●●

स्टेशन पर धनजय, द्वारिका और गोपाल थे.

पठानकोट एक्सप्रेस डेढेक बजे के आसपास बरेली पहुचती है. उस दिन लेट हो गयी थी और चार बजे के आसपास पहुची

गाडी रुकते ही विनायक उछलकर खिड़की के रास्ते ही उतर गया वे लोग फिर एकदम से लिपट गए थे.

विनायक ने स्टेशन को देखा.

कुछ फ़र्क ज़रूर थे लेकिन बुनियादी तौर पर बहुत ज्यादा तबदीली नहीं हुई. यहां तक कि वह दाढ़ीवाला बूढ़ा प्वांइट्समैन भी दिखाई पड़ा, जो पिछले बीसेक सालों से इसी स्टेशन पर है. विनायक को अपरिचय के बावजूद वह कोई अपना ही आदमी लगा.

स्टेशन के बाहर रिक्शे खड़े थे. शायद ढूंढ़ने से इन्हीं में से सिपाहीलाल का बेटा प्यारे भी निकल आएगा. दाहिनी तरफ़ वाली सड़क कंण्टोनमेण्ट को जाती है. उस रास्ते पर कुछ पाकड़ के पेड़ हैं. विनायक पेड़ों के नीचे निकलती हुई एक जीप की तरफ देख रहा था.

द्वारिका रिक्शा तय कर रहा था. विनायक ने रोक दिया—तांगे पर सब लोग इकट्ठे बैठकर जाएंगे. फिर वह थोड़ा हंसा—वैसे नवाबों की सवारी है यह.

गोपाल विनायक के साथ सामने बैठा था. धनजय और द्वारिका पीछे की ओर थे. तांगा चल पड़ा तो गोपाल ने संक्षेप में चार-छह बातें बता दीं. उनमें कौशल्या भवन के बारे में भी सूचनाएं थीं. कुंती रानी को लेकर मैमियाटोले में एक कोठरी लेकर रह रही है, इस बात की सूचना से लेकर रद्दो के शाहजहांपुर में बड़े भाई के पास चले जाने तक की सारी ख़बरें थीं. नलिनाक्ष के बारे में पक्का कुछ भी गोपाल नहीं बता सका. उसे कभी सुनने में आया था कि वह हरद्वार या वृन्दावन में किसी साधु के साथ रह रहा है. विनायक ने अपनी तरफ से कुछ नहीं पूछा.

तांगा बिहारीपुर में घुस कर भगीरथ के 'होटल' के सामने आया तो जगदम्बा और रामधनी आंखें फाड़कर देखने लगे. भगीरथ चूल्हे में कोयला डाल रहा था. उसने नहीं देखा था.

विनायक ने 'होटल' को देखा. यहां आख़िरी बार जाते हुए जैसा देखा था, आज भी लगभग वैसा ही है. सिर्फ दीवारें पहले से कहीं ज्यादा काली दीख रही थीं और उनमें मकड़ी के जाले झूलने लगे थे.

कुआं बिल्कुल वैसा ही लगा. बगल से जो सड़क मालगोदाम की तरफ जाती है, उसी तरह गर्द-गुबारों से भरी है. दोनों तरफ की कच्ची नालियां पहले की ही तरह बह रही थीं.

तांगा आकर 'कौशल्या भवन' के सामने रुका. दरवाजे पर भारी-सा एक लोहे का ताला लटक रहा है. दीवारें बेहद गंदी हो गई थीं और पलस्तर लगभग गिर चुका था. दाहिनी तरफ के कोने में दरार-सी उभर आई थी. जिस पत्थर पर दरवाजे के ऊपर 'कौशल्या भवन' लिखा था, अब उस पर होली के वक्त फेंकी हुई कीचड़ फैली हुई थी और उसके ऊपर मकड़ी के जाले लटक रहे थे. दीवारों पर दो-तीन जगहों से पीपल के पेड़ भी निकल आए थे. सारा मुहल्ला वैसा ही है. सिर्फ 'कौशल्या भवन' ही इतना बदल गया है कि विनायक को पहचान लेना सुखकर नहीं लगा. मोहिनी का चेहरा याद आ गया था और उसका चेहरा एकदम काला हो गया.

घोड़ा हिनहिना रहा था विनायक चौंका और संभल गया. फिर पीछे को तरफ मुड़ा, द्वारिका और धनजय की तरफ—अब इस 'कौशल्या भवन' से ही हम लोग अपना मार्च शुरू करेंगे. वे लोग कोई जवाब नहीं दे सके थे.

गोपाल दीवार पर उग आए पीपल की जड़ें देख रहा था.

फिर तांगा मुड़ा और बांस मंडी की तरफ चल पड़ा, गोपाल के घर की तरफ. नुक्कड़ पार करते ही 'कौशल्या भवन' ओझल हो गया. घोड़े की टापों की आवाज़ तेज होती चली गई थी.

●●●